NAV JEVAN 1912 G.K.V.

मर्दुमशुमारी और बालविवाह।

भारतवर्ष की कुल मर्दुमशुमारी इकतीस करोड़ और २५ लाख निकली। इनमें से पांच वर्ष तक के बच्चों की संख्या चार करोड़ तीस लाख थी, लड़कों से लड़कियों की संख्या ६३९००० अधिक थी। पांच से १० वर्ष के बच्चों में लड़कों की संख्या १०००००० अधिक थी परन्तु १०-१५ वर्ष के बच्चों में लड़के १८५००,००० और लड़कियां १५५०००० थीं। इसी आयु में विवाहित स्त्रियां अधिक मरती हैं। ५ वर्ष की आयु तक की लड़कियों में ३०२४२५ विवाहित हैं और उन में से १७७०० विधवा हैं। ५—१० वर्ष की आयु में २५००,००० कुमारियां विवाहित हैं और उनमें से ९४००० विधवा हैं। १०–१५ वर्ष की आयु में ६५००००० स्त्रियां विवाहित हैं और उनमें से २२०००० विधवा हैं। १६ वर्ष शास्त्रों में कन्याओं के लिये विवाह का समय बतलाया गया है और इस देश में ९४१२९४२ कन्याओं का १६ वर्ष की आयु से पहिले विवाह होचुका था। यह सब विवाह शास्त्र की दृष्टि में नाजायज़ (Illegal) हैं और यदि कुछ वीर स्त्री पुरुष इन विवाहों को नाजायज़ समझ कर तोड़ या तुड़वा डालें तो अनेक भारत की ललनाओं का कल्याण हो जाय मुसलमान भी इस रोग से नहीं बचे। मुसलमानों में १९५३००० कन्याएं ऐसी हैं जो अभी १६ वर्ष की नहीं हुई परन्तु उनके विवाह हो चुके। मद्रास के पंडितों ने तो व्यवस्था दे दी कि शास्त्रानुसार कन्या का विवाह १६ वर्ष से पूर्व न होना चाहिये। यदि कोई उद्यमी और दानी धनाढ्य निकल आवे और काशी के निर्दयी पंडितों की ज़ेब गरम कर दे तो काशी के पंडित भी हंसते २ व्यवस्था प्रदान कर देंगे। वेदों के अनुयायियों पर यह एक बदनुमा कलङ्क है कि हज़ारों शिक्षितों के होते हुए, लाखों पण्डितों की विद्यमानता और अनेक सुधारकों की उपस्थिति में अनुमान एक करोड़ कन्याओं के गले पर १६ वर्ष से कम आयु में और अनमेल विवाह की तेज़ छुरी चलाई जा रही है।

शुद्धि और पंडित शिवकुमार शास्त्री।

प्राचीन समय में एक महाराजा को वस्त्र पहिनने की बड़ी लग्न

थीं। दूर दूर देशों से लोग बहुमूल्य वस्त्र लाते और उसके मन को आह्लादित करते थे। इन्हीं दिनों दो धूर्तों को सूझी कि किसी प्रकार महाराज को वस्त्रों के बहाने ठगें। वे महाराज के सामने उपस्थित हुये और कहा राजन! हम वस्त्रों के बनाने और बहुमूल्य वस्त्रों के व्यापार करने में अत्यन्त निपुण और प्रवीण हैं, अमुक देश में हम व्यवसाय कर रहे थे आप की दूरव्यापी ख्याति और अतुल कीर्ति को सुनकर अपना हुनर दिखलाने के लिये आप की सेवा में उपस्थित हुए हैं। हम आपको ऐसा वस्त्र बनादेंगे और पहिना देंगे जो 'भूतो न भविष्यति' के कथन से चरितार्थ होगा। यदि उत्कण्ठा हो तो हमारी परीक्षा लीजिये। महाराज प्रसन्न वदन हो बोले, श्रेष्ठिन! यदि हमारी प्रसन्नतानुकूल वस्त्र बनेगा तो आपको बड़ा इनाम दिया जायगा। कल आकर खर्च का व्योरा बतलाना। दूसरे दिन वे दोनों वंचक हजारों रुपये का इस्टीमेट बनाकर पहुंचे और महाराज को कहा कि गोटा और रेशम खरीदकर हम राजभवन के किसी मकान में बैठकर वस्त्र बनावेंगे, परन्तु एक बात ध्यान में रख लीजिये कि हमारा वस्त्र दिव्य अस्त्रों से बुना जायेगा वह मनुष्य जो दुराचारी, पापी अथवा राजविद्रोही होंगे उन्हें वस्त्र दृष्टिगोचर न होगा। महाराज और भी प्रसन्न हुए और कहने लगे यह तो एक अद्भुत कसवटी मिल गई, राज्य के प्रत्येक कर्मचारी की परीक्षा लेंगे जिन्हें यह वस्त्र दिखाई न देगा हम समझ लेंगे कि वह पापी, दुराचारी और राजविद्रोही है और जो धर्म्मात्मा सदाचारी और राज्य के भक्त होंगे उन्हें हम पहिचान सकेंगे। अस्तु। उन्हें पुष्कल सामग्री प्रदान की गई। उन्होंने एक विशाल भवन में खड्डी बनाई और लगे ताना बाना हिलाने। जब कभी कोई मनुष्य आता तो वह खाली हाथ चलाना आरम्भ कर देते। एक दिन एक कर्मचारी को महाराज ने नियुक्त किया कि जाकर पूरे २ समाचार लाओ कि कपड़ा कितना बुना गया और कैसा बुना जारहा है। वह नियत स्थान पर पहुचा और जाकर देखा खाली हाथ चल रहा है न कोई तन्तु है, न कपड़ा, परन्तु मन में सोचा कि यदि मैं ऐसा समाचार महाराज को जाकर दूं तो मुझे पापी, दुराचारी और राज विद्रोही समझेंगे क्योंकि वस्त्र सामग्री से बुना जारहा है। उसने जाकर महाराज को सूच

भगवन ! ऐसा सुन्दर कपड़ा और उस पर भांति भांति के बेल बूटे, यह दिव्य और विचित्र लीला मन को लोभाय देती है। कुछ ही दिनों में तैय्यार होकर आप की सेवा में उपस्थित होता है। कुछ दिनों के अनन्तर महाराज ने अपने प्रधान सचिव को आज्ञा दी कि आप जाकर वस्त्र को देख आवें। मन्त्री ने भी वही लीला देखी। खाली खड्डी पर हाथ चल रहा है। वस्त्र ज्ञानेन्द्रियों द्वारा तो प्रत्यक्ष होता नहीं केवल धूर्तों का साहसमात्र जान पड़ता है परन्तु सत्य कह देने से संभव है महाराज को मेरी सत्यता पर सन्देह होजाय और मैं अपने उच्चपद से च्युत किया जाऊं अतएव उसने भी जाकर कहा, भगवन! "वस्त्र की शोभा अतीव प्रशंसनीय है, हमने जीवन भर में ऐसा दिव्य गुण युक्त वस्त्र नहीं देखा।" इसी प्रकार बहुत से कर्मचारियों ने प्रशंसा की। एक दिन महाराज सज धज कर निज दल बल के साथ स्वयम् वस्त्र विनता हुआ देखने के लिये पहुंचे। महाराज को भी कुछ दिखाई न दिया, दिखाई तो तब देता यदि वहां कुछ होता परन्तु अपने कर्मचारियों के समान महाराज भी सोचने लगे कि यदि मैं कहता हूं कि मुझे दिखाई नहीं देता तो यह सब तो पुण्यात्मा और मैं पापी समझा जाऊंगा। महाराज भी खूब प्रशंसा करने लगे। तब निश्चित हुआ कि महाराज को कल यह वस्त्र पहिनाया जावे। उस समय बड़ा दरबार हो और नगर भर में महाराज की सवारी निकाली जावे। दरबार हुआ। महाराज को नंगा किया गया, सभी कपड़े पहिनाये गये, उन्हें फिट किया सभी दरबारी प्रशंसा करने लगे, आहा! कैसा नरम, बारीक और सुन्दर वस्त्र है, शरीर के सभी बाल खाल और अङ्ग प्रत्यङ्ग तक दिखाई देते हैं। दो एक कर्मचारियों ने लटकते हुए कपड़े को उठाने का साहस कर अपने आप को झुका भी लिया। नगरकीर्तन होगया, नक्कारे की चोट ने सभी नगर निवासियों को दिव्य वस्त्र का दर्शन करा दिया परन्तु किसी साहसी ने रङ्ग में भङ्ग डाल दिया। उसने उच्च स्वर से चिल्ला कर कहा कि यह देखो धूर्तों की विचित्र लीला, न कपड़ा न कपड़े का निशान। सभी अन्धे अन्धों के पीछे चल रहे हैं। प्रजा ने इस साहसी पुरुष की निन्दा की। उस पर कीचड़ पत्थर फेंका। उसे बलात् हटा दिया गया और प्रतापशाली तथा विजयी महाराज सन्दिग्ध मन से अपने राज भवन को वापिस आया।

पाठक वृन्द ! विचारिये ! क्या ठीक यही दशा हमारे धर्म क नहीं हुई। पौराणिक धर्म को जिन धूर्तों, बंचकों और स्वार्थियों चलाया वह दिव्य गुण युक्त ऋषि मुनि कहलाए। आज देश में १ वर्ष से कम आयु की कन्याएं ६४००००० विवाहिता और विधवा विद्यमान हैं। १७७०० वह विधवाएं हैं जिन की आयु ५ वर्ष की भी नहीं। लाखों साधु देश पर वबाल बन रहें हैं जिस तालाब से पीते उसी को अपवित्र कर रहे हैं श्राद्धों के बहाने करोड़ों मनुष्य ठ जा रहे हैं। मन्दिर और देवस्थान दुराचार और व्यभिचार के केन्द्र बन रहे हैं। पण्डे, पण्डित और पुजारी माता के स्तन से स्वार्थ क शिक्षा लेकर जन्मते हैं। देश चाहें रसातल को जाय इन्हें अपने दक्षिणा से प्रयोजन। जो मनुष्य तर्कना शक्ति को प्रयोग में लाये वह पापी और नास्तिक कहलावे। पुराणों की पोलें खोले तो गाली और पत्थर खाये। खान पान की छूत छात तोड़े तो भ्रष्टाचारी, छोटे जातों के हितार्थ उन्हें पढ़ावे तो चमार बने। आनन्द कन्द भगवान दयानन्द ने लोगों के चितों को हिला दिया। उसने निःशङ्क और निर्भय होकर धूर्तजाल को उठा दिया। लोगों के मन हिल गये महर्षि ने सत्य के प्रचारार्थ जिस यज्ञ को रचा था उस में दिनों दिन सभ्यों की संख्या बढ़ती गई। विरोधी घटते गये और आज वह शुभ दिन आपहुंचा कि विरोधी आपस में लड़ने झगड़ने लगे और हृदय से इस यज्ञ की समाप्ति के लिये पूर्णाहूति देने के लिये आ उपस्थित हुए हैं। कौन सा विषय अथवा प्रश्न है जिस पर क्रमशः सनातन धर्मावलम्बियों ने ऋषि दयानन्द का अनुकरण नहीं किया। व व्यवस्था पर आज सनातनियों की वह व्यवस्था नहीं। स्त्री शिक्षा को बुरा नहीं समझा जाता। अछूत जातियों के उद्धार को तो बुरा नहीं समझते किन्तु उन्हें यज्ञोपवीत पहिनाने और सहभोज में सम्मिलित करने के विरोधी हैं। पंजाब में आजकल शुद्धियों की धूम मच रही है। हज़ारों मनुष्य उन्नत अवस्था को प्राप्त कर रहे हैं। पंजाब में पतित जातियों के उद्धार का मसला हल होगया और उसके साथ खानपान का भेद भी मिट चला। सहभोज के पश्चात परस्पर भिन्न भिन्न जातों में गुण कर्म और स्वभाव अनुसार विवाह करना होगा यद्यपि यह विषय भी नितान्त कठिन नहीं क्योंकि हल तो यह उसी दिन होगया जबकि आर्यसमाज स्यालकोट ने एक मेघ

कुलोत्पन्ना कुमारी का विवाह गुण कर्म और स्वभावानुसार एक जन्म के क्षत्रिय के साथ करवा दिया, परन्तु अभी ऐसे विवाहों की गिनती अंगुलियों पर की जा सकती है । ज्ञात होता है कि विकास सिद्धान्तानुसार अनुमान १० वर्ष तक यह पहेली भी हल होजायगी । शुद्धियां न्यूनाधिक अन्य प्रान्तों में भी होरही हैं। हमारी संयुक्त प्रान्त भी इस भूकम्प की अनुकम्पाओं से बचा नहीं परन्तु यहां अभी जरजरीभूत खण्डहर गिरा नहीं, हिल गया, नहीं नहीं इसमें स्थान स्थान पर दराड़ें भी पड़ गईं ऐसी अवस्था में कब सम्भव था कि काशी बची रहती काशी में चर्चा छिड़ी पुराने फैशन के पण्डितों ने भी हां तो भर ली परन्तु दबी आवाज़ और ठंडे सास के साथ महामहोपाध्याय पंडित शिवकुमार शास्त्री जी एक विचित्र दुग्धा में पड़े हैं उनकी आन्तरिक अवस्था को जतलाने तथा वर्तमान सनातन धर्म सभा की दशा दिखलाने के लिये हम केवल जौनपुर का उस ब्राह्मण सभा का संक्षिप्त वृत्तान्त लिख देते हैं जो गत रविवार ८ सितम्बर को गोमती नदी के तीरे महावीर के मन्दिर के सामने संगठित हुई थी। जौनपुर में ब्राह्मणों की एक सभा है। इस सभा के सामने शुद्धि का एक बड़ा टेढ़ा मसला उपस्थित है। सभा के सदस्यों में फूट पड़ गई । दो दल हो गये । एक शुद्धि के अनुकूल और दूसरा प्रतिकूल है । सभा के अधिकारियों ने इस मर्मभेदी विषय पर व्यवस्था देने के लिये ब्राह्मण सभा की। जौनपुर के रईसों तथा आर्य्य समाज के सभासदों को निमन्त्रित किया गया । सभा की कार्य्यवाही को श्री. महादेव विद्यार्थी ने प्रारम्भ किया । आप ने वर्तमान ब्राह्मणों में जो जो बुराइयां विद्यमान हैं उनका चित्र रचा और उन्हें सुधारने की ओर ध्यान दिलाया। इस समय बहुत से लोग उपस्थित हो गये । श्रीयुत जमुनादास महन्त सभा के प्रधान चुने गये । सभा पति ने बचनू अहीर को अपना कथन प्रारम्भ करने की आज्ञा दी बचनू अहीर कौन है. क्यों ब्राह्मण सभा ने उसे बोलने की आज्ञा दी इन और ऐसे ही प्रश्नों के लिये पाठक बचनू अहीर की राम कहानी को उसके कथन में से स्वयम निकालें ।

बचनू अहीर की वक्तृता।

एक बार कुछ समय व्यतीत हुआ मैं बीमार पड़गया मेरी दवाई कोई नहीं करता था, न मुझे कोई पूछता था। मेरे पास पूछने दवा करने के लिये मुसलमान आये उन्हों ने मेरी सेवा की। उन दिनों मुझे खून जाता था। मैं बेहोश भी हो जाया करता था मुसलमानों से मिलने उनका खाने और उनके साथ रहने से मैं मुसलमान हो गया मगर मैंने कण्ठी नहीं छोड़ी, जब मैं अच्छा हो गया तो मैंने जौनपुर के ब्राह्मणों से कहा कि आप मेरी प्रायश्चित करावें बहुत से यहां के पण्डित राजी हो गये, उन्हों ने आपस में सोचा और मुझे काशी में पण्डित शिव कुमार शास्त्री जी के पास भेजा मैं काशी गया और पण्डित शिव कुमार जी से जाकर सब वृतान्त कहा। उन्हों ने कहा, तुम जगन्नाथ हो आओ फिर तुम्हारा प्रायश्चित करा देंगे। मैंने यथा साध्य उनकी सेवा की और उनकी आज्ञानुसार जगन्नाथ आदि तीर्थों पर गया। लौट कर कुछ महीने हुए मैं काशी में आया। पण्डित शिव कुमार जी से निवेदन किया कि मेरे सैकड़ों रुपये नष्ट गये अब तो मेरा प्रायश्चित कीजिये। न मालूम क्यों, वह मेरी बात को सुन कर कुछ न बोले और उनके विद्यार्थियों ने मुझे जौनपुर चले जाने को कहा। मैंने व्यवस्था मांगी उन्हों ने न दी। मैं चिरकाल तक उनके मकान पर जाता रहा। जब उन्हें पता लगता कि जौनपुर का बचनू अहीर आ गया तो उन के नौकर और विद्यार्थी आकर कहते। आज पण्डित जी गया गये हैं, आज छपरा गये हैं। अन्दर से झट बोल देते मैं लौट आया करता। इस तरह से निराश होकर जौनपुर आया और सब समाचार उन पण्डितों को आकर सुनाया जिन्हों ने मुझे जौनपुर से भेजा था। वह भी घबड़ाने लगे। तब मैंने इरादा कर लिया कि मैं उन पण्डितों पर जिन्हों ने अनुमान ४००) रुपया खर्च करवा दिया है अदालत में नालिश करूंगा। मैं आर्य्य समाज में गया वह शुद्ध करने के लिये तय्यार है मगर कहते हैं कि पहिले सनातन धर्मियों से निपट लो। कुछ पण्डित तो जरूर कृपा कर मुझे शुद्ध करने पर राजी है। उन्हों ने इस से पहिले की ब्राह्मण सभा में भी कहा था आज यह दूसरी सभा है आप अपनी प्रतिज्ञा को पूरा कीजिये या मुझे अदालत में जाने दीजिये मैं कण्ठी धारी हूं और जो प्राय-

श्चित आप करावेंगे करूंगा मगर मुझे आप अपने में लेलें।

बचनू अहीर की वक्तृता के अनन्तर श्रीयुत पण्डित लक्ष्मी कान्त जी ने अनेक शास्त्रों तथा पुराणों के प्रमाणों से सिद्ध किया कि प्रायश्चित हो सक्ता है आपने लाला सुन्दरी प्रसाद जी रईस जौनपुर के चचा की तरफ संकेत किया कि वह विदेश में चिरकाल तक घूमा किये और लौटने पर केवल पांच २ रुपये ब्राह्मणों को दक्षिणा देकर बिरादरी में सम्मिलित हो गये । उन्हें तो प्रायश्चित का दण्ड भी नहीं दिया गया था । उनके पश्चात पंडित ठाकुर दत्त जी ने बल पूर्वक युक्तियों से शुद्धि का समर्थन किया और कई एक प्रतिष्ठित नगर के पण्डितों के निज के जीवन के घृणित कर्मों को वर्णन किया । इसके अनन्तर श्री लरबर पण्डित बोले और अन्तिम वक्तृता श्री बलदेव दत्त जी की हुई । इन व्याख्यानों में उस घोर विरोध को वर्णन किया गया जो शुद्धि के विरोधी सनातनी पण्डितों ने कर रखा है किस प्रकार पक्ष वाले पण्डितों को रोका और धमकाया गया । तब प्रस्ताव उपस्थित हुआ कि सनातन धर्मी जो पण्डित पक्ष में है वे हस्ताक्षर करें इस पर घोर विरोध हुआ । किसी ने तले से दीपक ही बुझा दिया अस्तु, लड़ते झगड़ते कुछ विद्वानों ने हस्ताक्षर किये हैं । ब्राह्मण सभा इस दूसरी सभा में भी निश्चित न कर सकी । अब तीसरी सभा होगी । यदि बचनू को सनातन धर्मावलम्बी शुद्ध नहीं करते तो वह पण्डित शिव कुमार शास्त्री प्रभृति विद्वानों पर अदालत में नालिश करेंगे और यदि शुद्ध करते हैं तो लोगों के वावेला का भय है । समाज सुधारकों के लिये यह विषय महत्व का विषय है यदि बचनू का कथन सत्य है तो महामहोपाध्याय पण्डित शिव-कुमार शास्त्री की आत्मिक दुर्बलता नितान्तः शोचनीय है और यदि उसका कथन प्रलाप मात्र है तो हमें विश्वास रखना चाहिये कि वह इसका खण्डन करेंगे ।

सनातन धर्मी जो चाहें विचारें हमारे लिये तो यह एक निर्विवाद विषय है कि तमाम अछूत जातियों के लोगों को वेद का अधिकार है उनकी उन्नति होना चाहिये । उनकी शारीरिक समाजिक तथा आत्मिकोन्नति हो इस उद्देश्य से उन्हें वैदिक धर्म में प्रविष्ट किया जावे । उनके साथ में खान पान का व्यवहार हो,

उन्हें शिक्षित किया जावे। इस उद्देश्य की पूर्त्ति के लिये महर्षि का रचाया हुआ यज्ञ आर्य्य समाज द्वारा निष्पादित हो रहा है। देखें अब कौन धीर तथा बीर इस तीव्र गति के वेग को अपने विद्या अथवा तपोबल से रोक सकता है। शिक्षित समाज तो इस यज्ञ में पूर्ण आहुति डालने के लिये प्रस्तुत होगया। पण्डितों की परीक्षा का यही प्रथम और यही अन्तिम समय है।

दयानन्द हाई स्कूल काशी।

---

(१)

अमली कार्य्य का क्या और कितना प्रभाव पड़ता है इसे जानने के लिये काशी क्षेत्र से बढ़ कर कोई ही स्थान कदाचित मिले। दो वर्ष पहिले जो यहां विरोध था उसका दसवां भाग भी आज प्रतीत नहीं होता। घर घर दयानन्द हाई स्कूल की चर्चा हुई। अनेक आर्य्य समाज के सिद्धस्वभाव मित्रों ने उपालम्भ देकर सनातन धर्मियों तथा बड़े २ पण्डितों को जगाना चाहा, सनातन धर्म के हाई स्कूल खोलने का प्रस्ताव हुआ परन्तु हुआ वही जिसकी आशा थी। हमें हार्दिक प्रसन्नता होती यदि काशी जैसी सुविख्यात नगरी में एक सनातन धर्म सभा स्थापित हो जाती या उसके साथ साथ एक स्कूल भी खुल जाता। क्योंकि देश की सेवा करने और शिक्षा फैलाने के उत्तम काम का भार उठाने में पण्डितों, पण्डों और साधुओं का धन शुभ कार्य्य में लगता। अस्तु, इतना तो अवश्य सन्तोष होता है कि अनेक विद्यार्थी दयानन्द स्कूल से लाभ उठाने लगे और पण्डित मण्डली ने विरोध छोड़ना आरम्भ कर दिया।

(२)

दयानन्द हाई स्कूल के मिडिल विभाग को रेकगनाइज़ कराने के लिये प्रार्थना पत्र भेज दिया गया है। दयानन्द हाई स्कूल कमेटी ने प्रथम वर्ष के बजट के लिये ४०००) रुपये वार्षिक व्यय करना स्वीकार किया है। मासिक फीस की आय तथा मासिक चन्दे के अतिरिक्त अनुमान १६००) रुपये कमेटी को फण्ड से देना पड़ेगा। स्कूल का स्टाफ बहुत अच्छा है। प्रायः सारे अध्यापक

अहर्निश स्कूल की उन्नति में सचेष्ट हैं। विद्यार्थियों की संख्या १०० से अधिक है। जिन विद्यार्थियों को अन्य स्कूलों में स्थान न मिला हो वह हेड मास्टर दयानन्द हाई स्कूल के साथ पत्र व्यवहार करें।

(३)

काशी प्राचीन काल से वैदिक धर्म का केन्द्र रहा है। काशी की संस्थाओं से जो अनुराग भारतवर्ष के आर्य्य पुरुषों ने दिखलाया है उसके लिये हम अत्यन्त अनुगृहीत हैं। हमने चेष्टा की कि काशी आर्य्य समाज को भारतवर्ष के प्रधान २ समाजों में स्थान मिले। काशी सामाजिक जीवन का केन्द्र हो और इसकी पुष्टि द्वारा भारतवर्ष के प्रत्येक विभाग में वैदिक धर्म्म की ज्योति का प्रसार हो जो अपने समय पर प्रत्येक प्रान्त में प्रचण्ड ज्वाला के स्वरूप को धारण करेगी। काशी आर्य्य समाज के सेवकों को कितनी सफलता प्राप्त हुई है इसका निर्णय तो आर्य्य पुरुष स्वयम करेंगे हां, काशी क्षेत्र में वपन किया हुआ बीज निष्फल नहीं गया। काशी अब भी इतना तमसाच्छादित होने पर भी नीरस और शुष्क भूमि नहीं है। ध्वनि और प्रतिध्वनि उठी। विरोध और घोर विरोध हुआ परन्तु कौन सा सुधार का कार्य्य है जिसे काशी समाज के सदस्यों ने नहीं किया। यह यश उनका नहीं। भगवान दयानन्द की पवित्र आत्मा दुर्बल हृदयों को जीवन प्रदान कर रही थी जिस दयानन्द को काशी के अबोध बालक भी मूर्ख कह कर तिरस्कार का पात्र समझते थे, जिस दयानन्द का नाम लेते ही मन्दिर और देवालय अपवित्र हो जाते और पण्डित शिव शिव करने लगते वे आज उसी दयानन्द की अमर कीर्ति को फैलाने के लिये

दयानन्द हाई स्कूल

के रूप में ओ३म् का झण्डा काशी नगरी के मध्य में स्थापित हो गया। आर्य्य पुरुषों के हौसले तो उसी दिन से बढ़ गये जब भारतवर्ष के प्रसिद्ध प्रसिद्ध आर्य्य पुरुषों ने साधु साधु की ध्वनि उठाई। दो मास के अल्प प्रयत्न में अनुमान ११००) रुपयों का नक़द और वायदों के रूप में इकट्ठा हो जाना इस सहानुभूति का प्रत्यक्ष उदाहरण है। परन्तु वेद विद्यालय की स्कीम उस समय तक बन्द

रहेगी जब तक न्यून से न्यून १५०००) रुपये कमेटी के हाथ में होगा। कमेटी को पूर्ण विश्वास है कि २५०००) रुपये के मिलने पर एक विशाल भवन की नीव रख दी जायगी । काशी आर्य्य समाज का मन्दिर कार्य्य चलाने के लिये पर्याप्त है । मन्दिर है भी मुख्य सड़क के ऊपर जहां से प्रचार में बड़ी सुविधा होती है परन्तु बड़ी सभाओं, व्याख्यानों और उत्सवों के लिये आर्य्य समाज का मन्दिर बहुत छोटा है । २५०००) रुपयों के एकत्रित हो जाने पर दूसरे स्थान से २५०००) के मिलने की आशा है और ५००००) का मकान वेद विद्यालय, दयानन्द हाई स्कूल तथा वैदिक आश्रम के लिये कुछ वर्षों तक के लिये पर्य्याप्त होगें। विद्या के कारण काशी का गौरव अनेक शताब्दियों से जगद्विख्यात हो रहा है और अब जब कि हिन्दू विश्वविद्यालय के साथ साथ काशी के गौरव में अभिवृद्धि और कौन कह सकता है कि उस समय दयानन्द हाईस्कूल दयानन्द कालिज के मनोहर नाम को धारण कर वैदिक धर्म का एक प्रधान केन्द्र न बनेगा यह तो रहा भविष्य पर परन्तु वर्तमान समय की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिये वेद विद्यालय तथा दयानन्द हाईस्कूल कमेटी ने केवल ५००००) रुपये की अपील की है। बाहिर से जो सज्जन २५ २५) की पुस्तकें मगवां और २५, २५ रुपये संग्रह करके भेज रहे हैं उनकी संख्या अभी बहुत न्यून है। आशा है कि अन्य उद्योगी भाई भी इधर ध्यान देंगे । परन्तु इस प्रकार विशेष धन के संग्रह होने की आशा नहीं । डेप्यूटेशन अभी तक केवल मिर्जापुर, गोरखपुर, देवरिया आज़मगढ़, बनारस, अलमोड़ा जौनपुरादि स्थानों में जा सका है । सम्पादक नवजीवन इधर बर्मा प्रान्त के आर्य्य भाइयों की आज्ञानुसार १५ अक्तूबर को बर्मा रवाना हो जायंगें और उन्हें पूर्ण विश्वास है कि बर्मा प्रान्त के आर्य्य भाई काशी की संस्थाओं के लिये एक सन्तोष जनक रकम इकठ्ठा कर देंगें। इधर श्रीयुत पण्डित कृष्णचन्द्रजी शर्म्मा समीप की समाजों में प्रचार करने और यथा संभव धन के संग्रह करने की चेष्टा भी करेंगे।

नवजीवन के ग्राहक महोदय पत्र व्यवहार में अपना नम्बर अवश्य लिखा करें—प्रबन्धकर्ता ॥

आर्य्य समाज काशी
और
वैदिकधर्म प्रचार ।

आर्य्य समाज काशी की ओर से श्रीमान् स्वामी परमानन्दजी नित्यप्रति आर्य्य समाज के सामने तथा अन्य स्थानों पर वैदिक धर्म का प्रचार करते हैं। आर्य्यसमाज की भजन मण्डली ने मुगुल सराय के समीपवर्त्ती ग्रामों में बड़े २ ग्राम, और उसके इर्द गिर्द चन्दौली तहसील तथा जनकपट्टी आदि स्थानों में प्रचार किया। लोगों की रुचि दिनों दिन अधिक हो रही है। यदि काशी जिले के आर्य्य पुरुष उत्साह पूर्वक अपने २ ग्रामों और समीपवर्ती स्थानों में प्रचार कराने में काशी आर्यसमाज को सहायता दें तो न्यून से न्यून ५००० सभासद बढ़ सकते हैं । क्या जिला के आर्य्य पुरुष इस ओर ध्यान देंगे ?

एक संन्यासी की ज़रूरत ।

मिर्ज़ापुर आर्य्य समाज एक प्रसिद्ध समाज है, कुछ उत्साही आर्य्य पुरुषों के चले जाने के कारण समाज की गति मन्द हो रही है। यदि कोई सज्जन आर्य्य सन्यासी एक स्थान पर बैठ कर प्रचार करना चाहे तो वह कृपया कुछ काल के लिये मिर्ज़ापुर के आर्य्यपुरुषों को सहायता दें। विन्ध्याचल का सुरम्य पर्वत भागीरथी का सुन्दर तट और इनसे बढ़ कर स्थानिक समाज के सदस्यों की भक्ति उनके निवास को शोभित करेगी। श्रीयुत सेठ पुरुषोत्तम दास सबरी से पत्र का व्यवहार करें।

स्त्री शिक्षा की अमूल्य पुस्तकें ।

नारीधर्म विचार २ भाग मूल्य १॥) नारायणी शिक्षा १।) भारत की वीर माताएं ॥≡) भारत की सच्ची देवियां ।=) भारत की वीर तथा विदुषी स्त्रियां ॥=) लक्ष्मी ।) शान्ता ॥) गृह शिक्षा ≡) गृहिणी कर्तव्य दीपिका ।=) भारत महिला मण्डल २ भाग ।॥) स्त्री हितोपदेश ।=) गृहस्थ चरित्र ।) चन्द्रकला ।) रमणी पंचरत्न ।) रमणी रत्नमाला ।=) सती चरित्र नाटक ।) बालबोधिनी व पिता का पुत्री को उपदेश ।)॥

सम्पादक नवजीवन का प्रोग्राम ।

यह निश्चित होचुका है कि सम्पादक नवजीन १५ अक्टूबर ; २॥ मास के लिये प्रचारार्थ भ्रमण करेंगे । १५, १६, और १७ अक्टू बर दानापुर, १९ और २० अक्टूबर सहारनपुर और २२ अक्टूब प्रातः कलकत्ते पहुंचेगा । वहां से चल कर अक्टूबर के अन्त त रंगून पहुंचेंगे । नवम्बर और दिसम्बर के २० तारीख तक ब प्रदेश में प्रचार करेंगे । वहां से कलकत्ता के हिन्दी साहित्य सम्मे लन तथा बांकीपुर से होते हुए ३० वा ३१ दिसम्बर को प्रतिनि सभा के बृहदधिवेशन मथुरा में सम्मिलित होंगे । नवजीवन क यथेष्ट प्रबन्ध कर दिया गया है । जिन सज्जनों ने अपना मूल्य नहं भेजा वह भेज कर कृपया कार्य्यालय की सहायता करें ।

आर्य्य कुमार सम्मेलन ।

तीसरा आर्य्य कुमार सम्मेलन आगामी १९ और २० अक्टूब को होगा । सभापति के आसन को श्रीयुत लोकमान्य लाला लाज पतराय जी सुशोभित करेंगे । आर्य्य कुमार सम्मेलन की स्वागत कारिणी सभा ने प्रस्ताव छाप कर कुमार सभाओं में भेज दिये है जो सभाएं किसी नवीन विषय को प्रविष्ट कराना चाहें वह कृपया शीघ्र मन्त्री को सूचित करें ।

(२) इस वर्ष सम्मेलन की स्वागतकारणी सभा ने धर्मचर्चा के लिये "सहभोज" के विषय को लिया है जिस में कई एक कुमार सभाएं अपने सदस्यों को तय्यार करके भेज रही हैं । इस डिबेट में प्रत्येक कुमार सभा के प्रतिनिधि को सम्मिलित होने का अधिकार होगा । डिबेट में (क) आर्य्य भोज क्या और कैसी होना चाहिये (ख) विलायत यात्रा और खानपान पर बिचार (ग) पतित जातियों के उद्धार और उन से खानपान खोलने पर बिचार (घ) वैदिक धर्मियों को छोड़ कर अन्य मतावलम्बियों के साथ खानपान का विचार और (ङ) स्वास्थ्य रक्षा के नियमों के अनुसार खान- पान । इस प्रकार इन पांच विषयों को लक्ष्य में रख कर खानपान के विषय पर आन्दोलन किया जावेगा । पक्ष तथा प्रतिपक्ष में बोलने वालों को समय प्रदान किया जावेगा । फ़ैसला एक कमेटी पर छोड़ा जायगा जो सब से उत्तम वक्ता को इनाम देगी ।

केशवदेव शास्त्री
प्रधान, भारतवर्षीय आर्य्य कुमार सम्मेलन ।

दयानन्द जयन्ती

पुष्प माला

तीसरा फूल

[श्रीयु० शिवनारायण शुक्ल बी० ए० लिखित]

लाला लाजपतिराय जी एक स्थान पर लिखते हैं और ठीक लिखते हैं, कि यदि स्वामी दयानन्द ने वेद भाष्य के सिवाय और कोई काम न किया होता तो यह ही अकेला ऐसा महान कार्य्य था जो कि उनके नाम को चिरस्थायी रखने के लिये काफी था। निःसन्देह ऋषि दयानन्द का एक २ काम अनुपम है। इस बाल ब्रह्मचारी ने देश की सभ्यता को जिसका प्रति दिन नाश हो रहा था फिर से जीवित किया। इस आदर्शभूत मनुष्य ने अपने चरित्र में मनुष्य जीवन का उद्देश्य लोगों के सम्मुख उपस्थित किया और हज़ारों भूले भटके प्राणियों को अन्धियोर के अगाध पयोधि में गिरने से बचाया। देश के अन्दर धर्म और सदाचार के प्रचार, विद्या के प्रसार, और प्राचीन शिक्षा प्रणाली के पुनरुद्धार का ख्याल और स्त्री जाति के सम्मान का भाव उसी महापुरुष की बदौलत पैदा हुआ, परन्तु इन सब को छोड़ करके मनुष्य जाति पर सब से बड़ा उपकार उस समय किया जब कि उसने वेद का भाष्य आरम्भ किया। ऋषि के जीवन का मुख्यतम उद्देश्य अन्धकार से पीड़ित ऋषि सन्तान को फिर से वैदिक ज्योति का दर्शन कराना था। यह उद्देश्य अपूर्ण रह जाता अगर ऋषि चार वेदों का गुटका मात्र हमारे हाथों में न देजाते। ऋषि दयानन्द के प्रादुर्भाव से पहले वेद की पुस्तकों का मिलना कठिन अवश्य था परन्तु वेद बिल्कुल लोप नहीं होगये थे। इस में कुछ भी सन्देह नहीं कि वेद और वैदिक लिटरेचर को आर्य्यावर्त्त में सुबोध तथा सर्वप्रिय बनाने में सब से बड़ा भाग स्वामी दयानन्द के संस्थापित वैदिक यन्त्रालय का है, परन्तु हमें यह भूल नहीं जाना चाहिये कि ऋग्वेद की सब से पहली आवृति यूरोप में एक पश्चिमीय विद्वान द्वारा प्रकाशित हुई। स्वामी दयानन्द का उपकार इसमें नहीं कि उसने हमें बतलाया कि हमारे असली धर्म ग्रन्थ वेद हैं क्योंकि इससे पहले भी इस बात को लोग कमसे कम मानते थे और यद्यपि स्वामी दयानन्द पहला मनुष्य था जिसने वेद का निर्वा-

चन किया और वेद तथा अन्य संस्कृत साँहित्य का भेद जतला कर वेद और वैदिक लिटरेचर और पौराणिक साहित्य में भेद को दर्शाया परन्तु तौ भी यदि स्वामी दयानन्द का काम यहीं तक परिमित रहता तो वे वैदिक धर्म को पुनःजीवित करने में असमर्थ रहते। स्वामी दयानन्द से पहले वेद मौजूद थे, कम से कम नियमित रूप से तो अवश्य वेद आर्यधर्म के मुख्य ग्रन्थ माने जाते थे और यद्यपि वेदों और उनके व्याख्यारूप ब्राह्मण ग्रन्थों और उपनिषदों के बीच इस स्पष्टता से विवेक न किया गया था जिस तरह से कि स्वामी दयानन्द ने किया परन्तु तो भी कम से कम पश्चिमीय जिज्ञासुओं ने उनके परस्पर भेद को अव्यक्त रीति से देख लिया था। परन्तु यह होते हुए भी वेद के लिए श्रद्धा दिन प्रति दिन कम होरही थी। इस बढ़ती हुई अश्रद्धा का कारण यह है कि वेदों की भाषा लौकिक भाषा से भिन्न है, परन्तु उस समय लोगों ने वेदों का अर्थ करने के लिये नियमों को पृथक कर दिया था और पुराणों के कल्पित किस्से कहानियों की सहायता से उनके अर्थों को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया गया था जिस का परिणाम यह होता था कि वह ऋचायें जो कि ठीक समझने वाले मनुष्य की गोद को विद्या के रत्नों से भरदेतीं वह झूठी कहानियों और किस्सों से भरी हुई दृष्टिगोचर होने लगीं। इस बात को बतलाने के लिए केवल एक उदाहरण काफी है। ऋग्वेद के दूसरे मण्डल का बारहवां सूक्त वेद के सौन्दर्य्य युक्त भागों में से एक है। इस सूक्त में पहले भौतिक सूर्य्य और फिर परमात्मा को इन्द्र के नाम से याद करके जिस खूबसूरती के साथ इन दोनों के गुणों का वर्णन किया है उस का अनुभव वही लोग कुछ उठा सकते हैं जिनको उस सूक्त के मूल पाठ देखने का अवसर मिला हो। अन्तिम ऋचा को छोड़ कर इस सूक्त के प्रत्येक मन्त्र की समाप्ति पर 'सः जन्मः सः इन्द्रः' शब्द आये हैं। इसका अर्थ यह है कि हे मनुष्यो! वह (जिसका उल्लेख ऊपर कर आये हैं) इन्द्र (सूर्य्य या परमात्मा) है। इसकी व्याख्या करते हुए सायणाचार्य जी लिखते हैं कि इन्द्र इत्यादिक देवताओं ने एक यज्ञ किया जिसमें ग्रतिष्म ऋषि भी सम्मिलित हुए। राक्षसों ने जब इस यज्ञ का समाचार सुना तो इन्द्र को मारने की इच्छा से द्वार पर इकट्ठे होगये। इन्द्र महाराज अपनी जान बचाने के लिए ग्रतिष्म

ऋषिकी शकल बनाकर यज्ञशाला से निकल गये और राक्षसों ने उसे ग्रतिष्म समझकर जाने दिया। बाद में असली ग्रतिष्म निकला और राक्षसों ने यह सोचकर कि इन्द्र सूरत बदल कर इनको धोखा देना चाहता है उसे रोका। उस समय ग्रतिष्म ऋषिने इस सूक्त की ऋचाओं में इन्द्र की परिभाषा की कि इन्द्र मैं नहीं हूं किन्तु इन्द्र वह है जिस में यह गुण हों। सायणाचार्य के अनुसार इस सूक्त की यह व्याख्या है। पीटर्सन ने इसको उसी घृणा से देखा है जिस घृणा के वह योग्य है। परन्तु यद्यपि पश्चिमीय विद्वानों ने सायणाचार्य जी की इस गल-ती को देख लिया तौ भी वह स्वयं कभी २ ऐसी और कभी इससे भी खराब गलती कर जाते हैं। ऐसी दशा में अगर वेदों की श्रद्धा लोगों के दिलों से कम हो रही थी तो यह कोई आश्चर्य की बात न थी। इस अश्रद्धा की लहर को रोकने के लिये केवल वेद और वैदिक धर्म की पुकार काफी न थी। आवश्यकता इस बात की थी कि न केवल वेदार्थ के ठीक नियमों को लोगों के सम्मुख रक्खा जाये किन्तु प्रत्यक्ष उन नियमों के अनुसार वेद की ऋचाओं के अर्थ करके उन लोगों को दिखलाये जायें। इस आवश्यकता को ऋषि दयानन्द के वेद भाष्य ने पूरा किया। मानव जाति पर जो उपकार ऋषि दया-नन्द ने किये हैं उनका अगर एक सूचीपत्र बनाया जाये तो इसमें वेदभाष्य का स्थान सब से उच्च होगा। ऋषि दयानन्द का वेद-भाष्य वेदरूपी विद्यानिधि के लिये एक कुञ्जी है। अगर वेद सूर्य्य हैं तो दयानन्द भाष्य इस सूर्य्य के आगे से अविद्या के बादलों के हटाने और उसके प्रकाश को अन्धकाराच्छादित कोनों में पहुंचाने का काम करता है। वेद को उसकी असली रोशनी में देखने की इच्छा रखने वाले मनुष्य के लिये दयानन्द का भाष्य सर्वथा अपरि-त्याज्य है। वेद के जिन स्थानों के अर्थों के सम्बन्ध में बड़ा भारी मत भेद है और जिनके विषय में अन्य २ टीकाकार ठीक परिणामों पर न पहुंचते हुए अन्धेरे में ठोकरें खाते हैं, दयानन्द उनकी सुगम व्याख्या हमारे सम्मुख उपस्थित करता है। ऋग्वेद के दूसरे मंडल के बारहवें सूक्त की तीसरी ऋचा में आता है, "यो गा उदाजदप-धाबलस्य"। इसमें "अपधा" शब्द के अर्थों के विषय में बड़ा भारी मत भेद है। पीटर्सन इसको [illegible] विभक्ति का एक वचन

मानता है। राथ, ग्रीसीमैन और लडोग इसे वैदिक तृतीया मानते हैं। पीटर्सन ने इसके अर्थ गढ़े के किये हैं और वह इस वाक्य के अर्थ इस तरह करते हैं "जो गौओं को बल के गढ़े में से निकालता है"। बल एक प्रख्यात पौराणिक नाम है। लेकिन वेदमन्त्र का यह भाग जो कि अन्य भाष्यकारों को कठिनाइयों के अगाध समुद्र में डालता है स्वामी दयानन्द के हाथों में आते ही बिल्कुल सहज और सुबोध हो जाता है। स्वामी दयानन्द की व्याख्यानुसार "योगा उदाजद बलस्य" एक शब्द नहीं बल्कि दो शब्द हैं। यह गाऊ (पृथ्वी) और उदाजदू और यह उपधा बलस्य। उपधा न सप्तमी है न तृतीया बल्कि प्रथमा है और उसका कोष के अर्थों में प्रयोग किया गया है अर्थात् योऽपधातिसः बल शब्द कोई संज्ञा विशेष नहीं है किन्तु अपने साधारण अर्थों में फौज के लिये इस्तेमाल हुआ है। स्वामी दयानन्द के भाष्य के अनुसार इस ऋचा में न तो असाधारण शब्द हैं और न वह असामान्य शब्दों में प्रयोग किये गये हैं बल्कि साधारण शब्द साधारण अर्थों में लिये गये हैं और यह बात अर्थ के शुद्ध होने की प्रबल युक्ति है। इसमें सन्देह नहीं कि स्वामी दयानन्द के भाष्य की अच्छाई बुराई की पडताल करने में एक आर्य्य समाजी की राय ज्यादा प्रमाणित नहीं हो सकती क्योंकि वह आरम्भ से ही स्वामी दयानन्द की असीम प्रतिष्ठा करना सीखता है और ज्यों २ समय बीतता जाता है त्यों त्यों वह उसके उपकारों से ज्यादा अभिज्ञ होता जाता है और बहुत दिनों के बाद यह प्रतिष्ठा का भाव पूर्ण श्रद्धा और विश्वास में परिणत हो जाता है। इस लिये यह असम्भव नहीं कि ऋषि दयानन्द कृत पुस्तकों के सम्बन्ध में उसके विचार पक्षपात से रंगे हुए हों परंतु दयानन्द भाष्य की श्रेष्ठता में किञ्चिन्मात्र सन्देह की जगह नहीं रहती जब कि हम उसके प्रभाव को न केवल अवैदिक धर्मियों के, बल्कि आर्य्य समाज के विरोधियों तक के ग्रन्थों में देखते हैं। स्वामी दयानन्द के भाष्य प्रणाली की विशेषता यह है कि वह वैदिक शब्दों को रूढ़ी नहीं वरन् यौगिक मानता है। आज कल के बहुत से टीकाकार उनको रूढ़ी मानते हैं। आर्य्यसमाज और सनातन धर्म सभा के बीच यह विषय सदैव से विवादास्पद चला आता है कि क्या वैदिक शब्द रूढ़ी हैं या यौगिक। पं०

गुरूदत्त के जीवन चरित्र को जिन महाशयों ने पढ़ा है वह जानते हैं कि इस विषय में किस तरह लाहौर और अन्य स्थानों में भी शास्त्रार्थ होते रहे हैं। हमें कैसा हर्ष होता है जब कि हम सनातन धर्मसभा के सुप्रसिद्ध आचार्य्य वेदविद्याभिमानी इटावा निवासी पं० भीमसेन शर्म्मा को यह लिखता हुआ पाते हैं कि वैदिक शब्दों को सब विद्वान यौगिक मानते हैं। उनका रूढ़ी होना किसी विद्वान को अभिमत नहीं। सनातन-धर्म-सभा के इस प्रतिनिधि का जिसके हृदय में आर्य्यसमाज और उसके व्यवस्थापक के लिये द्वेष के सिवाय दूसरा भाव नहीं होसकता यह स्पष्ट लेख प्रगट करता है कि सनातन धर्म सभा के विद्वानों की कम से कम एक बड़ी संख्या दयानन्द भाष्य के मूल नियम के सामने शिर झुकारही है। अभिमान पूर्ण पश्चिमीय विद्वानों के लेखों में स्वामी दयानन्द का प्रभाव इतना प्रकाश रूप से दिखाई नहीं देता परन्तु उसकी अस्पष्टता ही इसे विचार करने योग्य बना देती है। वेद मन्त्रों पर पश्चिमीय विद्वानों की टीकायें सरसरी नज़र से देखने वाले को भी इस नतीजे पर पहुंचाती हैं कि जो कुछ वह लिखते हैं सायणाचार्य का आश्रय लेकर लिखते हैं परन्तु विलसन को छोड़ कर आप एक भी ऐसा टीकाकार न पायेंगे जिसने कि सर्वथा स्वतन्त्र अर्थ करने का दावा न किया हो। इस दावे को पुष्ट करने के लिए वह कहीं कहीं पर सायणाचार्य से मतभेद भी प्रगट करते हैं परन्तु यह मत भेद प्रायः हास्य जनक होता है। एक ऋचा के सायण कृत अर्थों पर आक्षेप करते हुए उस निरुक्त प्रमाण के सम्बन्ध में जो कि सायण ने अपनी पुष्टि में दिये हैं प्रोफेसर मैक्समूलर यह लिखते हैं कि जिन विचारों को निरुक्तकार ने इस मन्त्र के सम्बन्ध में प्रगट किया है वह उस समय के हैं जब कि लोग वेद मन्त्र के निर्माता के वास्तविक अभिप्राय को भूल गये थे। ऐसा लिखने से इसके और क्या अर्थ होसकते हैं कि वेद मन्त्र के कर्त्ता के अभिप्राय का जो भगवान यास्काचार्य और उनके सहयोगियों को विस्मरण होगया था सहस्रों वर्षों के बाद उन्नीसवीं शताब्दी में वेदों के निर्माण करने के स्थान से हजारों मीलों की दूरी पर बैठे हुए डाक्टर मैक्समूलर को वास्तविक अर्थ का आविर्भाव हुआ। डाक्टर मैकडानल ने अपनी प्रख्यात पुस्तक "हिस्ट्री आफ संस्कृत लिटरेचर" के चौथे अध्याय के चौथे या पाँचवें पृष्ठ पर

स्वामी दयानन्द की एक उक्ति की ओर संकेत किया है। लाहौर में पूछे जाने पर उन्हों ने स्वयं मान लिया था कि एक हिन्दुस्तानी टीकाकार से उनका संकेत स्वामी जी की ही ओर है। इस हिन्दुस्तानी टीकाकार के नाम प्रगट न करने का हेतु इस के अतिरिक्त और क्या हो सकता है कि इससे डाक्टर साहिब के अभिमान पर धब्बा लगता था। ऐसी दशा में हम इससे अधिक आशा नहीं रखते कि स्वामी दयानन्द के विचार अव्यक्त रूपसे इन्डायेरक्ट तौर पर) इन विद्वानों के प्रभाव पर विचार डालेंगे और अगर हम इस प्रभाव को उनके लेखों में देखें तो चाहे कितना ही अव्यक्त और अस्पष्ट क्यों न हो हमें यह समझ लेना चाहिये कि स्वामी दयानन्द की लिखी हुई सच्चाइयां अपना काम कर रही हैं। दयानन्द भाष्य की विशेषता को अगर दो शब्दों में लिखना हो तो कहा जा सकता है कि ऋषि दयानन्द के विचारानुसार वेदों में जो अग्नि, वरुण, मित्र, इत्यादिक शब्दों का प्रयोग हुआ है न तो उनमें किसी देवता विशेष का आशय है और न उनसे अग्नि आदि भौतिक द्रव्यों को पूजा करने का प्रयोजन है किन्तु उनसे परमात्मा के भिन्न गुणों के सूचक होने के कारण यह सब उसी के नाम हैं और वेद मन्त्रों के देवताओं से आशय उन मन्त्रों के विषयों से हैं न कि किसी देवता विशेष से जिन की पूजा के लिये यह मन्त्र बनाये गये ख्याल किये जाते हैं। आरम्भ में इन विचारों पर खिल्ली उड़ाई जाती थी परन्तु स्वामी दयानन्द के परलोक गमन के एकसाल अन्दर ही यूरोप की विद्वद्मण्डली के प्रतिनिधि डाक्टर मैक्समूलर ने दबे शब्दों में उनकी सचाई को माना। मैक्समूलर अपनी प्रख्यात पुस्तक "इंडिया ह्वाट कैन इट टीच अस" में (जो १८८४ में प्रथम वार छपी) अग्नि, वरुण इत्यादिक शब्द के सम्बन्ध में यह लिखते हैं "यह केवल नाम हैं जिन से कि उस सर्वव्यापी परमात्मा का बोध होता था, वह इसे प्रगट करने में अनुत्तीर्ण रहे क्यों वह सर्वथा अवर्णनीय है"। फिर मैक्समूलर साहिब देवता शब्द का अनुवाद अंग्रेज़ी के शब्द गौड या गौडेस से करने की कठिनाई को बड़ी उत्तमता से दर्शाते हुए लिखते हैं "हमें प्राचीन भारतीय ग्रन्थकार के इस वाक्य को नहीं भूलना चाहिये कि देवता से आशय मन्त्र के भिन्न भिन्न विषयों से है"। जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है यह किताब

सन् १८८४ में प्रकाशित हुई । इस समय तक दयानन्द भाष्य का एक बड़ा भाग छप चुका था और कम से कम ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका पूरी प्रोफेसर मैक्समूलर के हाथों में पहुंच चुकी थी क्योंकि प्रोफेसर साहब ने अपनी उपरोक्त पुस्तक में इसका उल्लेख करते हुए लिखा है कि "वह किसी प्रकार भी अरोचक नहीं"। अब इस पुस्तक में ग्रन्थकार ने अपने पहले विचारों से भिन्न विचार प्रगट किये हैं। अभ्यान्तरिक दशा से हम इस से यह परिणाम निकाल सकते हैं कि मैक्समूलर के विचारों में यह परिवर्तन ऋषि दयानन्द के विचारों के प्रभाव से हुआ । मैक्समूलर अपने समय के समस्त पूर्वीय विज्ञान वेत्ताओं का शिरोमणि समझा जाता था । इसकी सम्मति उसके सहयोगी विद्वानों की सम्मतियों का इन्डेक्स कही जासकती है । इसके लेख में दयानन्द भाष्य के मूल सिद्धान्तों के इतने प्रबल प्रभाव को देख कर यह कहना अनुचित न होगा कि इन सब पश्चिमीय विद्वानों के विचार पर जिनको सौभाग्यवश इस भाष्य के देखने का अवसर मिला है किसी न किसी तरह उसका अवश्य प्रभाव पड़ा है। स्थानाभाव से मुझे खेद है कि मैं बहुत से उदाहरण यहां पर देने में असमर्थ हूं परन्तु अपने दावे की पुष्टिमें केवल एक उदाहरण यह दूंगा कि पाठक वृन्द "स्टोरी आफनेशन्स" माला की पुस्तक 'वैदिक इन्डिया' के ग्यारहवें अध्याय को और इसी किताब के चौथे और पाँचवें अध्यायों को चित्त लगा कर पढ़ें।

प्रिय पाठक वृन्द । महर्षि दयानन्द का वेद भाष्य हमारे लिये एक अमूल्य पैतृक सम्पत्ति है। मनुष्य जाति के लिये इतना लाभकारी है कि उसकी कीमत लगाना मनुष्य शक्ति के बाहर है । इस लेख के लेखक को विश्वास है कि उसकी तरह पाठकों के अन्दर एक बड़ी संख्या ऐसे महानुभावों की होगी जिनके डगमगाते विश्वास को इस भाष्य ने सहारा दिया होगा। यदि यह ठीक है कि संसार की वर्त्तमान अशान्ति उसी समय दूर होगी जब कि वेद भगवान का प्रकाश दुनिया के प्रत्येक कोनों में पहुंच जाये तो यह भी सही है कि ऋषि दयानन्द का वेद भाष्य इस प्रकार का पायोनियर होने के कारण इस सार्वलौकिक शान्ति का अग्रनेता होगा। यद्यपि आर्य्य समाज ने इस भाष्य को सर्व प्रिय बनाने के विषय में

अपना कर्त्तव्य पूर्णतया नहीं कियाहै,परन्तु तो भी वह समय दूर नहीं कि वेद का प्रत्येक जिज्ञासु अपने लिये वेद भाष्य की एक प्रति को अपरित्यज्य समझेगा और वर्तमान काल के वेदभाष्यकार को प्रेम, प्रतिष्ठा और कृतज्ञता के भावों के साथ स्मरण रक्खेगा।

—— o ——

चौथा फूल

यूरोप के नाटक लेखकों के शिरोमणि शेक्सपीयर के एक नाटक में कहा गया है कि संसार एक नाट्यशाला है और सारे मनुष्य इसमें खेल करने वाले हैं वह स्टेज पर आते हैं। और अपना खेल करके चले जाते हैं। खेल २ में भेद होता है और जहां एक ओर दुनिया के लोग एक बड़ी संख्या के सम्बन्ध में कि उन्हों ने अपना खेल किस तरह खेला है यह पूछने का कष्ट भी नहीं सहते वहां कतिपय मनुष्यों के खेल उन्हें ऐसे सिंहासन पर बिठा देते हैं कि इनके सहयोगी और उनके अनुयायी उन्हें देखने के लिये ऊपर देखते हैं। दुनिया का इतिहास अधिकतर उनके खेलों से बना हुआ है जो यह लोग खेल जाते हैं। जहां और लोग हालात के गुलाम होते हैं और अपने जीवन में एक ऐसे मार्ग पर चलते हैं जो उनके लिए वाह्य शक्तियां तैय्यार करती हैं वहां दूसरी ओर के समूह के लोग हालात को बनाते हैं और केवल यही नहीं कि वह स्वयं अपने लिये नई सड़क तैय्यार करते हैं किन्तु साधारण मनुष्य समूह को भी अपने बनाये नये मार्ग पर चला देते हैं। वह समस्त शक्तियां जो प्रकृति अपनी सन्तान को देती है अपने शिशुत्व काल में उनमें विद्यमान होती हैं और स्वयं प्रकृति शेक्सपीयर के शब्दों में उन्हें देख कर कह सकती है कि "यह एक मनुष्य है"।

नाटक के खेलने वालों का काम खेल देखने वालों के सामने होता है और वह इसके विषय में फैसला करते हैं कि उसने अपना खेल किस तरह खेला है। परन्तु इन सब वाह्य समीक्षकों से ज़्यादा गम्भीर दृष्टि से देखने वाला समीक्षक उसके भीतर उपस्थित होता है वह स्वयं जानता है कि उसका खेल कैसा खेला गया है। सबसे श्रेष्ठ मनुष्यसमीक्षा जो एक खेल करने वाले के काम के सम्बन्ध में हो सकती है वह अपनी समीक्षा है और वह उस मानसिक

अवस्था से प्रगट होती है जिस समय वह स्टेज को छोड़ता है। स्वयं उसका दिल जानता है कि उसका काम करने योग्य था या नहीं। यही दशा जीवन के नाटक की है। प्रत्येक मनुष्य का जीवन वह खेल है जो उसने समूह के जीवन के नाटक में खेला है। क्या वह अपने खेल में सफल हुआ? स्वयं उसी से पूछो। पूछने की भी आवश्यकता नहीं। देखो कि वह जीवन के स्टेज पर से किस भाव से जाता है। जैसा कि एक संस्कृत के लेखक ने कहा है कि मनुष्य के सदाचार की गहरी से गहरी तहें उसके अन्तिम भावों से प्रगट होती हैं। मृत्यु केवल दूसरों को ही नहीं बतलाती कि वह क्या है परन्तु स्वयं उसे भी उन अवस्थाओं का ज्ञान देती है जो शायद उसकी दृष्टि से बाहर थीं। किसी मनुष्य के जीवन के सम्बन्ध में एक आवश्यक बात जो हमें देखना चाहिये वह यह है कि वह किस तरह मरता है। मृत्यु जीवन का अन्तिम दृश्य है और उसकी सच्ची समीक्षा है।

इसी विचार को लेकर मैंने प्रायः स्वामी दयानन्द के जीवन और उनकी मृत्यु के सम्बन्ध में चिन्तन किया है और यह निश्चय नहीं कर सका कि उनका जीवन उनकी महानता को अधिक प्रकाश रूप से प्रगट करता है या उनका अवसान। उनका जीवन महान था और इसका प्रमाण वह काम है जो उन्हों ने अपनी अल्पायु में किया। इस काम की साक्षी वह हलचल है जो नये आर्य्यवर्त्त के धार्मिक और सोशल जीवन में प्रगट हुई और जिसके चिन्ह हमें चारों ओर दिखाई देते हैं परन्तु वह प्रमाण जो उनकी मृत्यु उनके जीवन की सफलता का देती है इनसे कम विश्वासप्रद नहीं है।

हम सब राग द्वेष के जाल में फंसे हुए हैं। जिस स्वतन्त्रता में हमारा आत्मा शरीर में प्रविष्ट हुआ था वह स्वतन्त्रता नाश हो चुकी है उस गुलामी की वजह से हम इस अवस्था से पृथक होना नहीं चाहते। इस गूढ़ बात को पुष्ट करने के लिये मैं एक और उदाहरण दूंगा जो कई वर्ष हुए मैंने एक मित्र से सुना था और जिसे मैंने कई दफा व्याख्यानों में कहा है।

एक मनुष्य निर्जन जंगल में अकेला घूम रहा है। उसका अकेलापन उसे भयभीत करने के लिये काफी है परन्तु वह देखता है कि ऐसे स्थान में एक रुधिर पिपासा सिंह उस की ओर दौड़ा आता है।

यह मनुष्य अपने बचाव के लिये भागना आरम्भ करता है। सिंह उसका पीछा करता है। रास्ते में नदी मिलती है। यह पुरुष उससे पार होता है। सिंह के लिए भी वह नदी कोई रुकावट प्रतीत न हुई। झाड़ियां और आती हैं और यह मनुष्य अपने प्राण रक्षा के हेतु विवश होकर उन्हें फांदता जाता है, परन्तु उसे परवाह नहीं शेर भी उन में कूदता हुआ आगे बढ़ जाता है इस दौड़ में मनुष्य की दृष्टि एक वृक्ष पर पड़ती है और वह इस पर चढ़ जाता है। शेर में यह योग्यता नहीं कि वह वृक्ष पर चढ़ सके। परन्तु वह उसे छोड़ भी नहीं देता और वृक्ष के नीचे ही डेरा डाल देता है। मनुष्य ऊपर है शेर को देखकर उसका दिल दहल जाता है, परन्तु उसकी वर्त्तमान अवस्था में और पहिली दशा में ज़मीन आसमान का भेद है। रात आती है। दिन भरकी थकावट से मजबूर होकर वह ऊंघने लगता है। ऊंघने के साथ ही वह अनुभव करता है कि उसकी दशा कितनी नाज़ुक है। इतने घंटों के प्रयत्न से वह अपने आप को शेर के मुहँ से बचा सकने में सफल हुआ है और अब नींद सारे बने बनाये काम का सत्यानाश करदेगी, यह सोच कर वह इस आपत्ति का चिन्तन करने लगता है। वृक्ष की नरम २ और मजबूत डालियां उसकी सहायता कर सकती हैं। वह टहनियां काटता है और उनसे अपनी टांगों को, गरदन को, पञ्जर और शरीर के सब अवयवों को एक दूसरे के बाद वृक्षसे बांधता है। जब एक अंग को बांध चुकता है तो अनुभव करता है कि काफी मजबूत हुआ या नहीं और सन्तोष से यह सोचने लगता है कि शेर के जबड़े भयानक हैं शेर का पञ्जा मजबूत है परन्तु मैं इन दोनों से सुरक्षित हूं। जब अपने शरीर को जकड़ कर पूर्ण रूपेण सन्तुष्ट हो जाता है तो नींद के नशे में बेहोश होजाता है। रात को अचानक आंख खुलती है। नीचे शेर दिखाई नहीं देता। उसे सन्तोष जनक मालूम हुआ, परन्तु ऊपर वृक्ष की टहनियों में से एक नाग उसकी ओर लपका आरहा है। बचाव का सब से सुगम उपाय यह है कि छलांग मारकर नीचे जारहे परन्तु यह अब हो नहीं सकता। पाँव बान्धे पड़े हैं, पञ्जर बन्धा है, हाथ भी स्वतन्त्र नहीं। यह एक बड़ा कष्टप्रद दृश्य है और अति शोक इस बात पर है कि जिन ज़ंजीरों ने उसे बाँधा है वह उसकी अपनी बनाई हुई हैं। वह स्वयं अपने आप को कैद करने वाला है। अगर

आत्मसमीक्षा का कुछ भी अभ्यास है तो ऐसे पुरुष की मानसिक अवस्था का चिन्तन करो।

हम लोगों की दशा एक ऐसे ही मनुष्य की तरह है। हम अपने आप को इस संसार में अकेला पाते हैं और मृत्यु रूपी सिंह को अपने पीछे दौड़ता हुआ देखते हैं। यह जीवन एक घोर संग्राम है जो हमें वाह्य शक्तियों के साथ करना पड़ता है और हम अनुभव करते हैं कि वाह्य शक्तियों की अपेक्षा हम कितने निर्बल हैं। हम अपने आप को दृढ़ बनाना चाहते हैं। हम एक घर बनाते हैं और कहते हैं कि हमें अब बिभुक्षा रूपी सिंह से मारे जाने का भय नहीं। हम विवाह करते हैं सन्तानोत्पत्ति करते हैं, मित्र बनाते हैं और सोचने लगते हैं कि अब हम अकेले नहीं। समय आता है और मृत्यु सर्दी और गर्मी बिभुक्षा आदि की सूरतों में हमारे सम्मुख नहीं आती, परन्तु एक और तरफ से हमें आकर घेर लेती है। हम उससे भागना चाहते हैं, परन्तु हम स्वतन्त्र नहीं. हम ज़ंजीरों से बन्धे हुए हैं और वे ज़ंजीरें स्वयं हमारी बनाई हुई हैं। स्वयं हम ने ही अपने आप को कैद कर रक्खा है। मृत्यु के समय एक साधारण पुरुष की अवस्था देखो। उसके साथी उससे कहते हैं राम का नाम लो, वह कहता है कि राम दयाल से हिसाब करलेना। साथी कहते हैं गायत्री का जाप करो वह कहता है बेटा! इस कोने में भी देखना। उसके साथी कहते हैं और अब वह सांसारिक झगड़ों से मुक्त हो और अपना ध्यान परमात्मा के चरणों में लगावे, परन्तु वह उन ज़ंजीरों से जकड़ा हुआ है और जब तक कोई वाह्य शक्ति अपने बल से उन्हें तोड़ नहीं देती वह मुक्त नहीं होसकता। महाराजाधिराज मरता है और अपने अन्तिम समय में अपने ख़ज़ानों के दर्शन करना चाहता है। मनुष्य जीवन की सफलता पर कैसा खेदयुक्त दृश्य है।

महापुरुष अपनी आत्माओं को स्वतन्त्र रखते हैं, यह नहीं कि वह खाते नहीं, पीते नहीं, मकानों में निवास नहीं करते, मित्र नहीं बनाते, सब कुछ वह करते हैं परन्तु वह कभी इस बात को नहीं भूलते कि इन वस्तुओं के मोह में फंस कर अपनी स्वतन्त्रता को खोदेना मूर्खता है। इनका जीवन कमल पत्र की तरह होता है जो पानी में डूबता रहता है परन्तु जिसमें पानी का प्रवेश नहीं होता। इनका जीवन दूसरों को ऐसा साधारण जीवन जान पड़ता है,

परन्तु इन का मन इस दुनिया में नहीं होता। स्वामी दयानन्द की ओर देखो। उसका जीवन एक कार्य तत्पर जीवन था। शास्त्रार्थों के झगड़े रगड़े, अनाथों की फिक्र, पुस्तकों की रचना, मौखिक बात चीत और उपदेश, सारे देशों के मिथ्या विश्वासों का सामना यह सब कुछ था परन्तु उसकी आत्मा का निवास और स्थान में था। दिवाली की शाम थी, स्वामी दयानन्द एक चारपाई पर पड़े हुए हैं। आगे पीछे कई श्रद्धालु बैठे हुए हैं। सबके नेत्र आंसू से भरे हैं। मरने वाले की अवस्था क्या है? उसकी आंखें तर नहीं। उसे अपने काम की कुछ फिकर नहीं। जो कुछ उसने किया वह परमात्मा के एजेण्ट की हैसियत में किया। अन्तिम शब्द जो इसके मुख से निकलते हैं वह यह हैं।

"परमात्मन् तेरी इच्छा पूर्ण हो" मैं बड़े आदमियों में मुकाबला करना नहीं चाहता हूं, नहीं तो मैं पाठकों से प्रश्न करता कि क्या विचित्र बात नहीं है, कि एक मनुष्य अपनी ज़िन्दगी भर अपने आप को परमात्मा का इकलौता बेटा कहता रहा और जब मृत्यु के द्वार से निकल कर परमात्मा के पास पहुंचने का समय आया तो दुःख जनक शब्दों में कहा कि ऐ मेरे खुदा! तूने मुझे क्यों छोड़ दिया? मुझ से यह मौत का प्याला दूरकर। दूसरा मनुष्य अपने आप को परमात्मा का सेवक किन्तु सेवकों का सेवक कहता रहा और मृत्यु के निकट आने पर उसके मुख से यह निकलता है 'परमात्मा तेरी इच्छा पूरी हो'।

प्यारे भाइयो! स्वामी दयानन्द का जीवन और उसकी मृत्यु दोनों हमारे लिये शिक्षा पूर्ण हैं। उनके जीवन से हम सीखते हैं कि जीवन का सुफल होना लगातार काम पर निर्भर है। उनकी मृत्यु यह सिखाती है कि काम करते हुए राग द्वेष से पृथक रहें और यह ही समझें कि जो कुछ हम कर रहे हैं वह हमारा नहीं किन्तु परमात्मा का काम है। क्या हम यह शिक्षा ग्रहण करेंगे?

मातृ शक्ति का सम्मान करो।

(लेखका श्रीमती दुर्गादेवी)

प्रिय बहिनो व माताओ ! आज मैं आप के सम्मुख अपने दिल का भाव प्रगट करती हूं। मुझे आशा है कि आप मेरी अशुद्धियों पर ध्यान न देकर सार को ग्रहण करेंगी। मैं बहुत शोक के साथ अपनी स्वदेशीय बहिनों का हाल लिखती हूं। देखिये ! हमारे पुरुष स्त्रियों पर कितनी अनीति करते हैं। शुरु ही से उनको किसी लायक नहीं रखते। अनुचित रीतियों से दबा २ कर उनके दिल छोटे कर देते हैं। देशी भाइयों ने अपने हाथ से अपना आधा अङ्ग सुन्न कर रक्खा है। यदि उनकी उन्नति करें तो क्यों बलहीन बनें। बस, उनको मूर्ख समझ लेने, इज्ज़त न करने ही में संतोष कर बैठते हैं। हमारे देश वालों से और दूसरे देश वालों की औरतें कितनी ज़्यादह पढ़ी लिखी होती हैं, इस लिये कि उनके पुरुष उनको इज्ज़त व मान से रखते हैं, उनको पढ़ाते लिखाते हैं। हमारे देश में पहले कैसी २ विदुषी स्त्रियां हो गई हैं जिनको देवियां कहते थे, लोपामुद्रा, गार्गी, सुलभा ऐसी बहुत सी देवियां हुई जिनके नाम अब तक विख्यात हैं। हमारे पुरुष जो हमारी उन्नति करते तो हम भी अब तक ऐसी मूर्खा न होतीं और न हम अपने को अबला ही समझतीं। देखिये ! जब कि लड़की पैदा होती है मां बाप खुशी करने के बदले शोक करते हैं, नई वस्तु के आने से पशु पक्षी भी खुश होते हैं, परन्तु हम अभागियों के पैदा होने पर शोक मनाया जाता है, घर वालों के चेहरे फक्क हो जाते हैं और लोग भी सुन कर कहते हैं हाय ! हाय !! लड़की पैदा हुई, लड़का होता। लड़की के होने में मां का दिल भी छोटा हो जाता है क्योंकि जानती है कि पहले से क्या कुछ आदर है अब तो और भी भिनक जायेगी। जब मुसलमानी राज्य था तब तो लड़कियों को पैदा होते ही मार डालते थे अब सरकार के राज्य में ऐसा कोई नहीं करता परन्तु अब मारने से भी बदतर कर देते हैं। लड़कों को तो पढ़ाते लिखाते हैं परंतु लड़कियों को मूर्ख रहने ही में शोभा है। भाई तो एम. ए., बी.ए. हैं बहिन क, ख, भी नहीं जानती। माता पिता को चाहिये दोनों को विद्वान बनायें, दोनों को एक आंख से देखें, परन्तु माता आप तो पढ़ी नहीं पुत्रियों को कैसे पढ़ावें। लड़कों की बराबरी बिचारी लड़कियां

नहीं कर सकतीं, देखती हैं भाई हर बात में जीतता है, विचारी बेक़सूर मार खा जाती हैं। यही देखने से अपने मन में अपने को लड़कों से कम समझती हैं। जब ज़रा नौ वर्ष की हुई तो यह होता है किसी न किसी तरह यहां से निकाली जांयें चाहे जैसा लड़का हो उसके साथ विवाह कर देते हैं, उसी के साथ ज़िन्दगी बितानी पड़ती है कुछ पढ़ी लिखी होती तो सुख से रहें अपने पर आपको भरोसा हो बेचारी पति के आसरे पड़ी रहती हैं। अब असल में स्त्री का मालिक पति ही होता है चाहे बिगाड़े या सुधारे, उसको अख्तियार है। वह तो अपने मन में स्त्री को पैर की जूती समझता है कुछ परवाह नहीं एक गई दूसरी तैय्यार। आप तो पांच विवाह करें साठ वर्ष की उम्र में स्त्री मर गई तब भी बग़ैर विवाह नहीं चैन पड़ती और स्त्री बिचारी आठ वर्ष की विधवा हो तो उसको ज़िन्दगी भर जलना पड़ता है। कहते हैं इसके भाग्य में यही लिखा था। चूड़ियां न पहने, अच्छा कपड़ा न पहने, कोई शुभ कार्य्य में न गिनी जाए, छूत वाली बनाकर बैठा दीजाए, यही स्त्रियों के भाग्य जानने वालों का न्याय है। ज़रा आप भी सोचिये यह सब पुरुषों की अनीति नहीं तो क्या है? जब जानें धर्म्म रखना ऐसा होता है कि आप भी एक सिवाय दूसरा विवाह नकरें। अपने भाग्य के लिखे हुए को भी तो निभाहें॥ इसी तरह कहीं घर में स्त्री पड़ी है आप कमाते कुछ भी नहीं जो कुछ बड़ों का धन जोड़ा रखा है उसे बुरे कामों में लुटा देते हैं। वेश्या के यहां जाना, मांस खाना, जुआ खेलना, आप अच्छा खाना, अच्छा पहिनना, घर में स्त्री विचारी को पेट भर खाने को भी नहीं मिलता जब पैसे थोड़े हुये तो घर आकर स्त्री को पीटने लगे या बाज़ार में किसी से कहासुनी हो जाय तो घरकी स्त्री की कमबख्ती आगई इसका न्याय पंच नहीं कर सकते, इसमें कहीं निन्दा भी नहीं होती क्यों कि यह तो रिवाज ठहरा, अपना दुख देना बुरा काम नहीं समझते हैं। आप तो थियेटर देखें, हवा खायें, यार दोस्तों से मिलें, स्त्री बेचारी बन्दीगृह में पड़ी रहे किसी से बात भी न कर सके। जब कि स्त्री आती है तो घर के नौकर मजदूरनी छुड़ा दिये जाते हैं। न काम करे तो मार का डर अगर स्त्री बीमार हो तो तबभी अपने अपने काम से मतलब। वह बेचारी मारे डर के अपना दुख नहीं कह सकती। कहें तो किसे कहें सुनता कौन है। वह तो कुछ न कुछ

बहाना निकाल कर तेज़ हो रहे हैं। यही सब दुख देख कर स्त्री अपने को धिक्कारती हैं और कहती हैं, स्त्रियां क्यों दुख सहनेकेलिये बनाई गई, न होतीं तो अच्छा था। भारतवर्ष की स्त्रियों के तीनों पन दुख में बीतते हैं, वृद्ध होने पर पुत्र दुख देता, काम नहीं हो सकता तो कहता है बुढ़िया बैठकर खाती है मरेगी तो शुक्र होगा विचारी की ज़िन्दगी भारी पड़ जाती है। बहनो! यह सब पुरुषों की ही करतूत है। उनको शर्म भी नहीं आती कि हमारी इज्ज़त ऐसी है और स्त्रियों की बिलकुल नहीं। आप बड़े दर्जे के पण्डित जी हैं बाहर गए बड़े इज्ज़त मान से घर में आप फिर वहीं फुंफां मानस गंद। बताइये! स्त्रियां संतोष कैसे करें, जब उनकी इज्ज़त करो, उनको सुखसे रखोगे पढ़ाओ, लिखाओगे तो वह भी दिल से इज्ज़त मान करेंगी। दण्डे के ज़ोर से काम किया तो क्या किया। हां, अब कुछ अंग्रेजी पढ़े लिखे अपनी स्त्रियों की इज्ज़त करने लगे हैं। वह पढ़ाते लिखाते हैं, अविद्या और स्त्रियों की मुर्खता दूर करने में लगे हैं, उस पर लोग कहते हैं करके पीछे पछताएगें, स्त्रियां कुरसी पर बैठेगीं, आप काम करेंगे, हमतो मूर्ख नहीं हैं जो अपने सुख में कांटा बोवें। वह सख्त कहने वाले यह नहीं समझते कि इज्ज़त करने में दोनों सुख से रहेंगें। देश का सुधार होगा, बच्चे सुधरेंगें। उसमें इनका भी दोष नहीं, दोष मूर्खता का है, न इनमें देश भक्ति है, न स्त्री का सच्चा प्रेम है न बच्चों के सुधरने का ख्याल, कहां से इज्जत करें और कन्या पढ़ाएं। कहते हैं कि कन्या को पढ़ा कर क्या करें वह तो पराये घरकी है, लड़के को पढ़ाएं जो स्वार्थ होगा। मेरी समझ में तो इनके सुधार का सब से अच्छा एक ही ढंग है कि ज्यादह नहीं तो एक वर्ष ही के लिये यदि ऐसा हो जाए कि औरतों को ताले में रखने वाले पुरुप सब औरत बन जायें और औरतें मर्द, फिर पुरुषों को इसी तरह अत्याचार सहना पड़े, परन्तु हम से तो अत्या चार किया ही नहीं जाएगा। ख़ैर, ज़रा कोठड़ी वाले कैद खाने की हवा खायें तब मालूम पड़े कि दुख ऐसा होता है और अत्याचार करना ऐसा बुरा है। विधवा के दिन कैसे कटते होंगे, अति दुख में कटते हैं, परन्तु मूढ़ पुरुषों को कुछ ख्याल नहीं। ख्याल कैसे रहेगा जब अपने को दुख सहना पड़े तो मालूम होजाय कि ऐसा होता है। हाय शोक! भारतवर्ष कब सुधरेगा? पुरुष व स्त्रियों को ज्ञान कब आवेगा?

आत्मोत्सर्ग क्या है !

(WHAT IS SELF-SACRIFICE?)

(ले० श्रीयुत हरिदास माणिक)

संसार में हम सब कोई आश्चर्य जनक कार्य और वीरता तथा संग्राम विषयक बातों को बड़े ध्यान से पढ़ते हैं। घोर संग्राम क्रूरता, वीरता और भयानक परिणामों के समाचार तक हमारी चित्त की चिन्ता को इतना बढ़ा देते हैं कि जब तक न मालूम हो जाय चित्त को शान्ति नहीं मिलती। यह विचार यद्यपि उतने उच्च श्रेणी का नहीं है तथापि उनसे अच्छा ही है जो कि " खाट पर पड़े रहना पर सिर पैर हिलाना नहीं " का ढोल पीटा करते हैं। किसी की सहायता करना तो दूर रहा स्वयं संसार में भार स्वरूप होकर रहते हैं। आत्मोत्सर्ग से तो मानों सांप नेवले सा वैर है।

किसी अच्छे कार्य को कर्त्तव्य पालन करते हुए करना यही आत्मोत्सर्ग है। आत्मोत्सर्ग करने वाले में साहस का होना परमावश्यक है। संसार के विस्तीर्ण कर्मक्षेत्र में छोटे बड़े, भले बुरे सब कार्य साहस के बिना नहीं होते। संसार के समस्त महापुरुषों में साहस का कुछ न कुछ विशेष अंश था। यदि उनमें साहस न होता तो आज उनका नाम इतिहास में स्वर्णाक्षरों के समान न चमकता होता। अर्जुन, भीम, नकुल, सहदेव इत्यादि वीर यदि चारों दिशा साहस युक्त हो विजय न करते तो युधिष्ठिर के भाग्य में यह कहां था कि दिल्ली में सम्राटपद ग्रहण करते। अर्जुन यदि साहसी न होते तो महाभारत के विकट संग्राम में किस प्रकार विजयी होते। मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र ने रावण ऐसे प्रबल शत्रु का मान मर्दन साहस ही द्वारा किया। पृथ्वीराज चौहान ने चौबीस बार शहाबुद्दीन गोरी को परास्त किया। हम्मीर ने अपना हठ रक्खा। रानी कलावती तथा जौहर बाई ने देश के लिये प्राण दिए। हल्दी घाटी तथा पेशावर की लड़ाई के मन्ना, झाला और फूलासिंह ने अपने २ स्वामियों के लिये प्राण निछावर किया। साहस ही से लंगड़ा तैमूर, चंगेज़, नादिर, और अबदाली ऐसे क्षुद्र महिमावालों ने भारत भूमि में पदार्पण किया। छत्रपति शिवाजी, रणजीत सिंह, हैदरअली, इत्यादि वीरों ने साहस ही से राज्य स्थापन किया।

आत्मोत्सर्ग करने वाले मनुष्य को साहसी होना तो परमावश्यक है, परन्तु साहसी मनुष्य का आत्मोत्सर्ग कारी तथा परोपकारी होना आवश्यक नहीं है, क्योंकि केवल साहस और आश्चर्यजनक वीरता दिखाने ही से आत्मोत्सर्ग नहीं कहलाता। पिज़ारो भी साहसी था जो कि अपनी सेना को पीरू में नाना प्रकार का कष्ट सहन कराते हुए ले गया, लेकिन इतना कष्ट सहन करना केवल धन तथा यश कमाने के लिये था। जितना धन कि उसने लूट में पाया यदि उसकी तुलना उसके साथ की जाय जो धन नहीं पा सकता, पर केवल अपनी वीरता दिखाने तथा यश के लिये हज़ारों पीरू वालों की जान ली।

इस प्रकार के साहस का कार्य चोर, डाकू और नीच श्रेणी के लड़ने वाले भी लूट की इच्छा से कर गुज़रते हैं। कितने विजयी लोग भी इस कार्य को साहस का काम समझते हैं और ऐसा विचार कर वे भी उसके करने में कुछ भी आना कानी नहीं करते। तैमूर लंग ने अपने विजय के चिन्ह स्वरूप दिल्ली में चौदह वर्ष के ऊपर के दस वीस लाख आदमियों को कतल कराया। नादिरशाह ने कतले आम का नक्कारा पीट कर क्या नहीं किया। अलाउद्दीन ने अपने चचा तथा भतीजों का कलेजा अपने सामने निकलवाया। फरुखसियर ने गुरु बंदा के हृदय को चिरा कर उसके सामने खाने को फेंका। ऐसे कार्यों को लोग साहस का कार्य समझते हैं, पर यह साहस नीच श्रेणी का साहस है।

मध्यम श्रेणी का साहस प्रायः शूरवीरों में पाया जाता है। वह उनके उच्च विचार और अद्भुत साहस तथा निर्भीरुता को भली भांति प्रगट करता है। इस प्रकार के मनुष्यों में बेपरवाही और स्वार्थहीनता की कमी नहीं रहती, परन्तु उनमें ज्ञान की कमी अवश्य पाई जाती है। एक समय की बात है कि गुरु गोविन्दसिंह मुसलमानों से घिर गये। पास न विशेष सेना थी और न गढ़ में रसद ही थी। अन्त में यह तय हुआ कि गढ़ से निकल कर तब युद्ध किया जाय। वीरगण सज धज कर निकले, दूसरी ओर से मुसलमानों की मार जारी हुई। मुसलमानों की संख्या विशेष थी इस कारण सिक्ख वीर गणों के जीतने की कोई आशा न थी। तेजासिंह नामी एक सिख यह देख कर कि उनका गुरू चिरकाल के लिये विदा होना चाहता है, स्वयं अपने एक हाथ को काट और दूसरे

हाथ से 'गुरु' ग्रन्थ पकड़ कर सैनिकों को उत्साहित करने लगा। परिणाम यह हुआ कि सिक्ख सैनिक उत्साहित हो लड़ने लगे और अन्त में अपने गुरू को बचा ले गये। झण्डा और ग्रन्थ की पटड़ी रहते हुए भी उस सैनिक ने ऐसा क्यों किया ? कारण यह था कि उस समय उसको अपनी वीरता सैनिकों को दिखानी थी इसी प्रकार पृथ्वीराज के समय में भी एक घटना हुई है। एक दिन पृथ्वीराज की सभा लगी हुई थी और कन्ह काका भी उक्त दिवस सभा में उपस्थित थे। दैवात् भाट ने विरदावली टेरी। विरदावली को सुन कर पांच चार राजपूत सरदार जो कि किसी कारणवश अपना राज छोड़ कर पृथ्वीराज की शरण में आ गये थे मूछों पर हाथ फेरने लगे। कन्ह ने यह देख कर कि विरदावली तो पृथ्वीराज की टेरी जा रही है और ये सरदार क्यों मूछों पर ताव दे रहे हैं इनको अवश्य कुछ न कुछ अभिमान है ऐसा मन में विचार कर म्यान से तलवार निकाल उन पर टूट पड़े और वहीं काट डाला। एक को मरता देख दूसरे ने बचाना चहा वह भी मारा गया। इसी प्रकार पांचों भाई मारे गये। कन्ह काका का यह अनुचित कार्य पृथ्वीराज को भी बुरा लगा। उन्हाने सूने में उन्हें समझा दिया और तब से जब कन्ह काका सभा में पधारते थे तो उनकी आंखों में पट्टी बंधी रहती थी जिससे वे भविष्य में इस प्रकार का कोई अनुचित कार्य न कर सकें।

आत्मोत्सर्ग कारी बनने के लिए ऐसे साहस की आवश्यकता होती है जो पवित्रता, उदारता तथा चित्त की दृढ़ता से युक्त हो। कर्त्तव्य परायण का होना परमावश्यक है। यदि मनुष्य कर्तव्य से शून्य है तो वह मानव जाति का कुछ भी उपकार नहीं कर सकता। जैसे किसी एक भारी विद्वान ने कहा है कि "grave and resolute fulfillment of duty is required to give it the true weight. अर्थात सच्चे आत्मोसर्ग कारी बनने के लिये कर्त्तव्य परायण होना परमावश्यक है कुछ दिन हुए आका नामी एक स्टीमर बारीसाल से खुलना जारहा था। रास्ते में चालाईपुर और शचादह स्टेशन के बीच सन्ध्या समय आग लगी। आग लगने से स्टीमर ने भयंकर रुप धारण किया। ऐसे विकट समय में जव्वार खां नामी एक मुसलमान चपरासी जो कि माल का रखवाला

था अपना कर्त्तव्यपालन करते हुये मर गया पर अपनी जगह नहीं छोड़ी। समाचार पत्रों में इसका विवरण यों आया है। आका डाक और २०० पाची लेकर बारिसाल से खुलना जाता था उसमें जूट की गाठें भी लदी थीं जिनमें से एक पर जलती हुई एक लालटेन रखी हुई थी। अचानक एक जगह रेती में स्टीमर के झोंका खाने से लालटेन टूट गयी और जूट की गांठ में आग लग गयी। धीरे धीरे इसकी भीषण ज्वाला स्टीमर भर में फैल गई। यात्री छटपटा कर चारों ओर दौड़ने लगे परन्तु शरण कहीं न थी। बहुत से पानी में कूद पड़े। विचारा जव्वार खां एक लठ लिये हुए जूट के बीच में खड़ा रहा। उससे जहां तक हो सका पानी लेकर आग बुझाता रहा परन्तु अन्त में जब बहुत अग्निज्वाला बढ़ी तब उसी जगह जल भुन कर राख हो गया। दूसरे दिन लोगों ने देखा कि वह और उसकी लोहे की छड़ तथा गठरी अपनी ही जगह पर मानों खड़ी होकर पहरा दे रही हैं। वीर जव्वार खां ने कर्त्तव्य पालन करते अपना प्राण दिया। इसी तरह भारतवर्ष के सन सत्तावन के बलवे में एक अंग्रेज तथा एक बंगाली ने भी अपना प्राण दिया था। मेरट शहर में जब कि सिपाहियों ने बलवे का झगड़ा शुरु किया उस समय विद्रोहियों ने जाने कितनों अंग्रेजों को काट डाला। अंग्रेज़ों को मारने के बाद सब सिपाहियों ने मिल कर शहर का खजाना लूट लिया और दिल्ली की ओर बढ़े। मार्ग में देखा कि एक अंगरेज़ तार घर में तार दे रहा है। सब विद्रोही उसी ओर बढ़े और देखते २ अंगरेज़ को मार डाला, पर वह वीर पुरुष अपनी जगह पर से नहीं हटा और तार भेजता ही रहा। अन्त में वह केवल इतना तार दे सका Sepoys advancing condition horri उपरोक्त शब्द वह केवल लिख सका था कि इतने में सिपाहियों ने उसे मार ही डाला। वीर अंग्रेज अपना कर्तव्य पालन करते २ मारा गया। इसी प्रकार एक बंगाली ने अपना प्राण दिया। ऐसे ही एक घटना राजस्थान के इतिहास में देखने में आती है। हल्दी घाटी की लड़ाई में जब कि राना प्रताप सिंह को मुगलों ने टिड्डी दल की न्याई घेर लिया और निकट ही था कि वह मुगलों के हाथ से मारे जाते कि सहसा ऐसे समय में मन्ना झाला नामी सरदार स्वयं उनकी झण्डी छीन कर खड़ा और उन को बचाकर आप स्वयं कट मरा। कर्तव्य पालन करते २ वीर वर

ने मुगलों के बीच अपना प्राण दिया। मुगलों ने यह समझ कर कि यही राना प्रताप है उस पर ऐसा वार किया कि उसके शरीर का पता तक न चला। उस वीर वर की विरदावली अब भी मेवाड़ में बड़े गौरव से टेरी जाती है। पृथ्वीराज रासो में भी एक विवरण बड़ा ही मनोरंजक इसी प्रकार का आता है कि जिस समय पृथ्वीराज संयोगता को हरण किये हुये अपने घोड़े पर लेकर चले हैं उस समय टिड्डी दल की न्याईं जयचन्द की सेना ने उनको घेर लिया है। ऐसे विकट समय में सामन्तों ने जो आत्मोत्सर्ग दिखलाया है सो परम प्रशंसनीय है। पृथ्वीराज को पकड़ने की लालसा से जयचन्द के वीर राजपूत मोह माया छोड़ सवेग आक्रमण करते हैं पर पृथ्वीराज के सरदार मरते कटते अपने स्वामी को बचाते हैं। जगह जगह पड़ाव करते जाते हैं और दो दो चार चार सामन्त एक के बाद एक कटने मरते जाते हैं। अन्त में यहां तक कि दिल्ली पहुंचते २ सौ सामन्तों में से केवल चार या पांच सामन्त बच जाते हैं और बाकी सब अपने स्वामी (पृथ्वीराज चौहान) के लिये अपना प्राण विसर्जन करते हैं। इसके अतिरिक्त कर्त्तव्य पालन का एक विचित्र विवरण महाराष्ट्रों के समय में एक मुसलमान का मिलता है जिस समय कि महाराष्ट्रों का भारतवर्ष में चारों ओर पूरा २ राज्य हो गया था उस समय पानीपत के मैदान में मुसलमानों से एक भारी मुड़भेड़ पड गई। इस में कुछ भी सन्देह नहीं था कि इस लड़ाई में महाराष्ट्र विजयी होते परन्तु आपस की फूट और ईर्षा ने यह भी चौपट किया। महाराष्ट्रों की इतनी सेना थी कि यदि वे एक मर्तबा सब मिल कर अब्दाली पर धावा कर देते तो सम्भव था कि वे सब पिस जाते पर वहां तो अपनी २ सूझ पड़ी। सोन्धया इस विचार में रहे कि गेकवाड़ की वीरता देखें और भाऊजी अपने ही घमण्ड में भूले थे कि जो आज्ञा मैंने जारी करदी यही सर्व श्रेष्ठ है। इसी सोच विचार में भारत की स्वाधनिता जाती रही और मराठे विचारे बड़े बेतरह मारे गये। पानीपत की लड़ाई की सूचना जब महाराष्ट्र देश में पहुंची है तो उस समय कोई ऐसा घर नहीं रहा जिसके घर में हाहाकार न मचा हो। इसी लड़ाई में मराठों की ओर से इब्राहीम खां गार्दी नामी मुसलमान सरदार बड़ी वीरता से लड़ा है और अन्त में उसे पकड़ कर अब्दाली के सामने लाया गया है तो

उस समय का दृश्य बड़ा ही भयानक है। लाखों मराठे बन्दी ह और सब वारी वारी काटे जा रहे हैं। जब गार्दी की पारी आई तब अबदाली के पूछने पर कि " तुम हमारे सेनापति होकर भारत के लूटने में मदद दोगे " उसका उत्तर यही मिला कि "गो कि मैं मुसलमान हूं पर हिन्दोस्तान के आब और हवा से पला हूं इस लिये मैं ऐसा नहीं कर सकता" । अबदाली ने उत्तर से चिढ़ कर इब्राहीम खां गार्दी को तुरत मारने की आज्ञा दे दी और वह विचारा बड़ी निर्दयता पूर्वक मारा गया । अहा! धन्य है ऐसे वीर को जिसने अपना धर्म पालन करते२ प्राण दिया है। भारत के इतिहास में यह एक अपूर्व उदाहरण है।

आत्मोत्सर्गकारी के लिए कर्त्तव्य परायण होना परमावश्यक है। विना कर्त्तव्य परायण हुए मनुष्य आत्मोत्सर्ग नहीं कर सक्ता, परन्तु विदित रहे कि कर्त्तव्य परायण ही होना आत्मोत्सर्गी होना नहीं है। आत्मोत्सर्ग करनेवाले के हृदय में यह बात अवश्य होनी चाहिए कि जो कुछ मैंने किया वह केवल अपना कर्त्तव्य पालन किया। आत्मोत्सर्ग के बारे में एक बड़े विद्वान की सम्मति है कि It is the spirit that gives itself for others, the temper that for the sake of religion, of country, of duty, of kindred, nay of pity even to a stranger, will dare all things, risk all things, endure all things, meet death in one moment, or wear life away in slow, persevering tendenc yand suffering. अर्थात्-यह एक ऐसी शक्ति है जिसके द्वारा वह दूसरे मनुष्य को विपत्ति से बचाने के लिये अपना प्राण तक देने को प्रस्तुत हो जाता है । वह न केवल धर्म, देश, जाति और कुटुम्ब वालों ही के लिये प्राण देता है वरन् संकट में फंसे हुए एक अपरिचित पुरुष के लिये भी वह भारी से भारी संकटों का सामना करने के लिये तैय्यार हो जाता है । वह अपने प्राणों की कुछ भी परवाह नहीं करता वरन नाना प्रकार के क्लेशों को वह प्रसन्नता तथा धैर्य्य पूर्वक सहता जाता है।

इसी प्रकार का आत्मोत्सर्ग एक भीलनी ने दिखाया था। एक दिन की बात है कि प्रतापसिंह अपने पुत्र तथा रानी के साथ अपनी बुरी दशा पर विचार कर रहे थे कि सहसा एक ओर

से मुसलमान आते हुए दिखाई पड़े। प्रतापसिंह को देखकर मुग़ल सवेग झपटे, पर उनको न पाकर केवल एक भीलनी को पकड़ पाया। प्रतापसिंह न जाने किस कन्दरा में छिप रहे। इधर भीलनी को पकड़ कर मुगलों ने लाखों बार प्रयत्न किया कि वह प्रतापसिंह को बता दे परन्तु उसने नहीं बताया। मुगलों ने उसे मार डालने की भी धमकी दी पर सब निष्फल हुआ। अन्त में मुगलों ने मिलकर उसे टुकड़े २ कर डाला परन्तु उस सुवीरा भीलनी ने प्रतापसिंह का पता न दिया। थोड़ी देर तक मुग़ल इधर उधर खोज कर चले गये। मुगलों के चले जाने के बाद प्रतापसिंह कन्दरा में से निकले और भीलनी के आत्मोत्सर्ग पर अपने को धिक्कारने लगे कि यदि मैं यहां इस प्रकार बन २ न भटकता तो क्यों विचारी मारी जाती पर वे इस विपत काल में कर ही क्या सकते थे। भीलनी का यह आत्मोत्सर्ग सराहनीय था।

पृथ्वीराज के समय में भी संयम राय नामी एक सरदार ने ऐसा स्वार्थ त्याग दिखलाया था कि जिसकी समता आज तक संसार में नहीं पाई गई। एक समय महोबे के युद्ध में जब पृथ्वीराज अपने घायल सैनिकों के साथ गिरे पड़े थे तब चील, कौवे और गृद्धादि घायल सैनिकों को मारने चीथने लगे, अन्त में एक चील पृथ्वीराज पर ऐसा झपटा कि निकट था कि उनकी आंख ले गुज़रता परन्तु परोपकारी संयमराय भी वहां पड़ा था। यह भयानक दृश्य उससे देखा न गया। उसने तुरंत एक कटारी जो पास ही पड़ी थी उठा ली और अपना मांस काट काट कर चीलों को खिलाना आरम्भ किया। संयमराय के इस आत्मोत्सर्ग से वीरवर पृथ्वीराज बच गये और विचारा संयमराय विशेष रक्त बहने के कारण मर गया। यद्यपि वह मर गया पर उसकी वीरता की कहावत अब तक लोगों में वर्त्तमान है कि:—

"गीधन कोपल भख दिये, नृप के नैन बचाय
सहदेही वैकुंठ में, गये जु संयमराय।"

छत्रपति शिवाजी के समय में भी एक महाराष्ट्र ने जो उपकार किया था वह भी परम प्रशंसनीय है। जब कि औरंगज़ेब के कपट जाल से शिवाजी उसके चंगुल में फंस गये उनका बचना असम्भव था, औरंगज़ेब ने [illegible] कड़ा पहरा

बैठा दिया था कि पक्षी के पर मारने पर भी वह नहीं बच सकता था महाराष्ट्र देश में उनके बिना हाहाकार मचा था अन्त में एक दिन एक नौकर को अपना वस्त्र पहिना कर और आप स्वयं खांचा में निकल गये । जब शिवाजी कुशल पूर्वक अपने देश में पहुंच गये तब बहुत दिनों के बाद बन्दी गृह में पता लगा कि यह शिवाजी नहीं हैं वरन उनका नौकर है विचारा नौकर औरंगज़ेब के सामने उपस्थित किया गया और इतने विषम दण्ड की आज्ञा मिली कि जल्लाद ने थोड़ी ही देर के बाद उसका सर उसके शरीर से अलग कर दिया । इस प्रकार अपने स्वामी के लिये शूर वीर सेवक ने प्राण देदिया पर चूं तक न की ।

इसी प्रकार बाजीप्रभु नामी मराठे सरदार ने जिस प्रकार शिवाजी के लिये प्राण दिया है वह श्लाघनीय है । एक दिन कल्याण दुर्ग में शिवाजी अपनी सेना ठीक कर रहे थे कि सहसा उनको सूचना दी गई कि सिद्दी जोहार अपने दल बल सहित इसी ओर बढ़ा चला आ रहा है । आज अफजल खां का बदला शिवाजी से पूरी तौर पर लिया जायेगा । इस समय शिवाजी के पास सेना भी नहीं थी । केवल थोड़े से मालव बाजीप्रभु के अधिकार में थे । अब तक जितनी लड़ाई हुई उसमें शिवाजी कभी भी विह्वल नहीं हुए थे पर आज शिवाजी का मुख देख कर बाजी प्रभु ने कहा, प्रभो ! यह बाजीप्रभु ताल ठोक कर आप को निकाल ले चलेगा । शिवाजी किलेदार से ऐसा उत्तर पाकर प्रसन्न हुए । फिर क्षण एक मौन रहकर बोले अब तो सन्ध्या हो गई, सवार भी भेजने का अवसर गया । बाजीप्रभु ने कहा धर्मावतार ! कुछ डरने की बात नहीं है । आप निश्चिन्त रहिये जिस मार्ग से बाजीप्रभु आप को निकालेगा उससे आप भी अनभिज्ञ हैं । थोड़ी ही देर में सेना ने अपना पूर्ण अधिकार जमालिया। शिवाजी ने एक ओर देखा तो हजारों मसालवाले यवन लोग गढ़ की ओर बढ़ रहे हैं। यवनों को गढ़ की ओर बढ़ते देख बाजी प्रभु भी अपनी सेना सहित गढ़ के बाहर निकला । बाजी प्रभु ने भी यद्यपि बहुत मसाल ले लिये थे पर उनको जलाया न था । मुसलमानों की सेना बढ़ी चली आ रही थी । जब शिवाजी के निकट पहुंची तब इन लोगों ने मसाल को जलाया और उनको भैंसों तथा भेड़ बकरियों के सर में बांध आप दूसरी ओर चलते

बने । भेड़ बकरियां सब एक ओर हंका दिये गये और शिवाजी तथा बाजी प्रभु अपने सैनिकों के साथ २ एक ऐसे मार्ग से चले जिसका पता यवन लोग नहीं लगा सकते थे। मुसलमानों ने भेड़ बकरियों तथा भैंसों के सींगों में बंधी हुई मसाल को सेना समझ कर उसी ओर धावा किया और तोप छोड़ना आरम्भ किया। अन्त में पांच छः घंटों के बाद परिणाम मालूम हुआ कि शत्रुओं ने भारी धोखा दिया। धोखा खाकर यवन लोग निराश न हुये, वरन और भी फुर्ती से सेना को दो भाग में बांट दिया। प्रातः काल होते ही बाजी प्रभु तथा शिवाजी को पता लगा कि दहिने और बाएं भाग से सेना बढ़ी चली आ रही है और अब बचना असम्भव है। शिवाजी को विह्वल जान बाजी प्रभु ने कहा, महाराज! आप रांगडा दुर्ग की ओर चलिये और यह बाजी आज अपने प्राण की बाजी यहीं लगावेगा। शिवाजी के बहुत कहने पर भी कि आज हम भी यहीं प्राण देंगे बाजी प्रभु ने कुछ न सुना। अन्त में शिवाजी रांगडा गढ़ की ओर बढ़े और इधर बाजी प्रभु दहिने भाग पर टूट पड़े। इधर यवनों तथा मराठों में भारी घमासान युद्ध हुआ। मराठे सब मारे गये और कुछ यवन भी घायल हो कर सुरपुर सिधारे। इधर शिवाजी ने रांगडा दुर्ग में पहुंच कर तोप छोड़वा दिया जिससे पता लग जाय कि वह कुशल पूर्वक पहुंच गये। इधर बाजी प्रभु भी अन्त में लड़ते २ बड़ी वीरता पुर्वक मारा गया। वीरवर बाजी प्रभु के आत्मोत्सर्ग से शिवाजी बच गये। जहां पर बाजी प्रभु मारागया था उस जगह को रमणीक बनवा कर वहां पर एक छतरी गड़वादी और अपने जीवन के अन्तिम दिवस तक छत्रपति शिवाजी कभी भी बाजी प्रभु को न भूले।

सच्चे परोपकार तथा स्वार्थ त्याग का विवरण आर्यों के प्राचीन इतिहास महाभारत में आता है। भीष्मपितामह अपने पिता के लिये सांसारिक सुखों पर लात मारते हैं और जन्म पर्यन्त यह प्रतिज्ञा करते हैं कि मैं आजन्म कभी भी विवाह न करूंगा और सत्यवती से जो पुत्र होगा वही राज गद्दी पर बैठेगा। संसार के आत्मोत्सर्गों में भीष्म पितामह के आत्मोत्सर्ग की समता अब तक कोई नहीं कर सका है।

(क्रमशः)

क्या विज्ञान और धर्म में विरोध है ?।

(सं० १९६८ के आठवें अङ्क से आगे)

आयुर्वेद औषधियों का विज्ञान

इसके नाम ही से मालूम होता है कि इसकी उत्पत्ति भी वेद ही से हुई है। वेद ही के मन्त्रों के आधार पर इस शास्त्र की रचना की गई है। जितनी विद्याओं को मनुष्य ने आविष्कार किया है उन सब के ऊपर हम को इस विद्या को स्थान प्रदान करना चाहिये क्योंकि इसके द्वारा और इसके साधन से संसार में मनुष्यों के, नहीं नहीं, वरन् सब प्राणिमात्र के दुखों और क्लेशों का हरण हो सकता है। अब यह भी सिद्ध हो गया है कि अन्य विद्याओं की भांति इस विद्या के प्रथम आविष्कार करने वाले और सांसारिक प्रयोग में लाने वाले आर्य ही थे। यहां से अरब वासी इस विद्या को सीख गये और योरुप के भिन्न २ देशों, विशेष कर यूनान में पुनः इसका प्रचार हुआ। यूनान के बड़े २ वैद्यों ने, जिन्हों ने औषधि शास्त्र में बड़ी सफलता प्राप्त की थी, आर्य्यावर्त्त के इसी विद्या के आधार मात्र पर अपने अमूल्य ग्रन्थों का निर्माण किया था। महाशय डाक्टर रायल (Dr Royle) जिन्होंने इस विषय का बड़ा अन्वेषण किया है और "एन्टिक्विटी आव दी हिन्दु मेडिसिन" (Antiquity of The Hindu Medicine) नामक ग्रन्थ लिखा है अपने ग्रन्थ में (पृष्ट ८२ से १०४ तक) यों लिखते हैं कि डिवोसिरीडीज़ ने (Diosiorides) जो यूनान देश का एक बड़ा वैद्य था और पहिली शताब्दि में पैदा हुआ था, एक बड़ी अच्छी पुस्तक Materia medica अर्थात् औषधि के द्रव्यों का बृहत् कोष (निघन्टु) के ऊपर लिखा है। इस पुस्तक का आधार आर्यों का (materia medica) निघन्टु है। आर्यों ने अरण्य में उत्पन्न हुई जड़ी बूटियों के गुणों को मालूम किया था और भी बहुतसी स्वाभाविक उत्पन्न हुई वस्तुओं को चिकित्सा के प्रयोग में लाने वाले थे। डाक्टर एच० एच० विलसन (Dr H. H. Wilson) ने प्रकाशित कर दिया है कि जो आर्य्यावर्त्त का वर्णन, थियोप्रेसस (Theophrasus) और भिषकटीसियस (Ctesiass) ने जो प्रायः ईसा के पूर्व पांचवीं शताब्दी यूनान देश में रहता था, लिखा है उस

में भारतवर्ष की स्वाभाविक पैदावार का भी वर्णन है । इससे विदित होता है कि आर्यों को यह विषय मालूम था ।

यूनान देश का सब से प्रसिद्ध वैद्य हिप्पोक्रेटीज़ Hippocrates जो चिकित्सा शास्त्र का आविष्कार करनेवाला माना जाता है. आर्यों की materia medica अर्थात् निघन्टु को पढ़कर अपनी पुस्तक लिखी थी । डाक्टर वाइज (Dr. Wise) कहते हैं कि हम लोग प्रथम चिकित्साशास्त्र की प्रणाली के लिये आर्यों के ऋणबद्ध हैं।

बहुत दिन हुये कि अमेरिका और योरुप के डाक्टरों में एक विवाद चला था । किन्हीं डाक्टरों का मत था कि seminal fluid अर्थात् शुक्र या वीर्य का स्थान अण्डकोष है । किन्हीं का मत था कि इसका स्थान शरीर के किसी विशेष अङ्ग में है । निदान यह कि भिन्न २ डाक्टरों की भिन्न २ राय थी । कोई बात निश्चित नहीं पाई गई । इसी के अनन्तर किसी डाक्टर को भाग्यवश. चरक सुश्रुत ग्रन्थ का अंग्रेज़ी अनुवाद (जिसको बङ्ग प्रान्त के किसी बङ्गाली डाक्टर ने किया था) देखने को मिल गया । उस ने इसका आद्योपान्त मनन किया, फिर क्या था उस ने अपने मन में कहा कि आज मुझ को एक नया सिद्धान्त मालूम हुआ है कि वीर्य के रहने का कोई विशेष स्थान शरीर में नहीं है किन्तु जिस भांति ईख का रस ईख में व्यापित रहता है उसी भांति मनुष्य के शरीर का शुक्र सारे शरीर में व्यापित रहता है । उसने इस कथन को अपने सहयोगियों के सम्मुख प्रगट किया और सबों ने इस बात को स्वीकार कर लिया । आर्यों की प्राचीन सभ्यता के सामने इन्हों ने अपने सिर झुकाये । यही विज्ञान के मौलिक सिद्धान्त की विजय है ।

अरब देश के ग्रन्थकर्त्ता सेरापियन, एरिसिना और रेजिसरिस्प (Serapion, Ariecenna and Rhazesrisp) ने अपने पुस्तकों में चरक के नाम जरच. सीराक और स्कारक लिखा है ।

Harounal Kashid बगदाद के बादशाह के राजदर्बार में दो आर्य चिकित्सक मनका और सुलेह, जिनके नाम अरबीपत्रों में वर्णित पाये जाते हैं, वर्त्तमान थे । भारतवर्ष के वैद्यों की निपुणता और वैद्यक में उनकी कुशलता को सुनकर इस बादशाह ने इन दोनों आर्यावर्त्तीय वैद्यों को बुलाया था । अलेकज़ेन्डर आज़म के पास जिसने भारतवर्ष के ऊपर आक्रमण किया था, वहां के एक यादी

वैद्य सर्वदा रहते थे। वह इनकी कृतकृत्यता से अत्यन्त प्रसन्न रहता था और उसने भारत की औषधि शास्त्र की बड़ी प्रशंसा की थी।

शस्त्र चिकित्सा शास्त्र भी बड़ी उन्नति पर था। सुश्रुत के पढ़ने से ज्ञात होता है कि चीरने फाड़ने के १२७ अस्त्र चिकित्सा सम्बन्धी यन्त्र ज्ञात थे। छेदन, भेदन, लेखन, व्यधन यन्त्र, शस्त्र, क्षार, अग्नि, शलाका, शृङ्ग, जलौका आदि आदि क्रियाओं से प्राचीन आर्य्यभिज्ञ थे। सारांश यह है कि विज्ञान की यह शाखा भी प्राचीन भारत में थी।

रसायन शास्त्र अर्थात् केमिस्ट्री।

और विद्याओं की भांति इस शास्त्र की उन्नति भी की गई थी। पानी का भाफ बन कर उड़ना, धातुओं को भस्म करना, द्रवभूित वस्तुओं का रस निकालना यह वैज्ञानिक क्रियाएं यहां पर प्राचीन काल से मालूम थीं। डाक्टर रोयल (Dr. Royal) ने अपने लेख में लिखा है कि भारत में लगभग सब धातु, नौसादर salammoniac तूतिया (Coppersulphate) फिटकरी (alum) सुहागा (Borax) चूना, कोयला, गन्धक, ताम्बा, लोहा, शीशा, टीन, जस्ता और रांगा के sulphurets आक्साइडस लोहा, ताम्बा, सुरमा, पारा और संखिया के sulphates, ताम्बा, जस्ता, लोहे के(सलफेटस) सब के रसादिक प्रयोग भारतवासियों को मालूम थे।

यह बात प्रसिद्ध है कि भारतवर्ष में मनुष्य निकम्मी धातु को औषधि द्वारा सुवर्ण बनाते थे। इस में कुछ २ सत्यता मालूम पड़ती है क्योंकि जिन्हों ने आजकल की विज्ञान सम्बन्धी बातों और केमिस्ट्री के नये २ सिद्धन्तों को पढ़ा है वे जानते हैं कि हाल ही में प्रोफेसर रैमजे (Prof. Ramsay) सुवर्ण बनाने में तत्पर हैं और उन्हों ने थैलियम धातु को तांबा में परिवर्त्तन करके कुछ इस विषय में सफलता प्राप्त की है और सम्भव है कि और भी सफलता उनको प्राप्त हो। हाल ही में उपरोक्त प्रोफेसर ने यह भी आविष्कार किया है कि "रेडियम" (Radium) से हेलियम (Helium) बनता है। एक धातु का दूसरे धातु में परिवर्त्तन होना संभव सा प्रतीत होता है *।

---

* १०. १२ वर्ष का समय हुआ कि मेरे सम्बन्धी यमुनाप्रसाद शुक्ल के गृह में जो स्थान [illegible] जिला उन्नाव में रहते थे दैव योग से एक सन्यासी पधारे! पं० यमुनाप्रसाद शुक्ल संस्कृत भी पढ़े थे और उन्होंने सन्यासी स्वामी की बड़ी सेवा

बहुत सी धातुओं को रसायन शास्त्र द्वारा शुद्ध करके प्राची आर्य्य चिकित्सा के प्रयोग में लाते थे, जिनका फल बहुतही गु आरोग्यदायक होता था । यहां पर Practical chemistry (प्रयोग में लाई हुई रसायन शास्त्र) के बहुत सी क्रियायें प्रचलि थीं । जिन्हों ने बौद्ध धर्म के इतिहास को पढ़ा है वे तो अनुमान कर सकते हैं कि कैसी सुन्दरता, स्वच्छता से लाट, स्तूप, चैत्य विहार और मन्दिरों का निर्माण होता था । इस बात को डाक्टर फरग्यूसन ने, जिन्हों ने इस विषय की बड़ी छान बीन की है मुक्तकण्ठ से स्वीकार कर लिया है कि यहां की यह विद्या बड़ी उन्नति में थी । इसकी महत्वता प्रगट करनेवाला अभी एक प्रसिद्ध स्तम्भ दिल्ली शहर के कुतुबमीनार के पास वर्तमान है । इसको देखकर डाक्टर फरग्यूसन (Dr Fergusson) बड़े अचम्भित हो गये और अपनी पुस्तक में यों लिखा है । "यह स्तम्भ २२ फीट पृथिवी के ऊपर निकला है और २० इञ्च जमीन के अन्दर गड़ा हुआ है । नीचे की इसकी मोटाई १६ इञ्च और चोटी की मोटाई १२ इन्च है । इसको देख कर हम लोगों की आंखें खुल जाती हैं और उस समय की सभ्यता की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकते । यह सम्पूर्ण स्तम्भ ढाले हुए लोहे का बना हुआ है । योरुप में भी ऐसे बड़े शिलाका का ढालना बहुत दिनों तक नहीं मालूम था और अब भी ऐसा बड़े लोहे का छड़ कम ढाला जाता है । यह और भी अचम्भे की बात है कि १४ शताब्दियों की वर्षा और वायु के आक्रमण से इसमें थोड़ा भी मुरचा

सुश्रूषा की जिससे वह स्वामी बड़े मुग्ध हो गये । निदान, यह कि एक दिन उन्हों ने एकान्त में उनको बुलाकर एक पत्ती का गुच्छा सा उनको दिया और उसके गुण बतला दिये । इसके द्वारा ताम्बा से सुवर्ण बन सकता है । एक दिन उनको सोना बनाकर दिखला भी दिया बिलकुल सोना की भान्ति मानों सुवर्ण ही था । चारों तरफ यह खबर ग्रामों में फैल गई । इस खबर को सुन कर लोग विस्मित हो जाते थे । संन्यासी कुछ दिन के पश्चात किसी अन्य स्थान में चले गये । उनको वे बहुत सी पत्ती दे भी गये थे । उनके चले जाने के पश्चात उन्हों ने (यमुना प्रसाद ने) दो या तीन मर्तबा सुवर्ण बनाया और सफलता प्राप्त हुई किन्तु खेद की बात है कि उनके यहां चोरी हुई और चोर उस पत्ती के बण्डल को उठा लेगये । इसके पीछे उनको कृतकृत्यता नहीं हुई । उनको यह पत्ती बहुत यत्न करने पर भी न प्राप्त हो सकी ।

(जङ्ग) नहीं लगा है। यह वैसा ही चमकीला मालूम पड़ता है जैसा कि अनुमान से पूर्व रहा होगा।

वैशेशिक दर्शन शास्त्र कणाद मुनि का वैशेशिक दार्शनिक ग्रन्थ होने पर भी इसमें भौतिक शास्त्र सम्बन्धी सिद्धान्त भी हैं। कहा जाता है कि परमाणु सिद्धान्त के आविष्कार करने वाले यूनान देश का विद्वान् डिमाक्रिटस (Democritus) और योरुप देश का डालटन (Dalton) विद्वान हैं परन्तु आश्चर्य होता है कि इस योरुप के पूर्व हज़ारों वर्ष पहिले आर्यों को परमाणु सिद्धान्त मालूम था जैसा कि कणाद मुनि ने अपने ग्रन्थों में उल्लेख किया है।

आज कल की भान्ति ७२ तत्त्वों को न मान कर इस में केवल पांच तत्वों के नाम हैं। नहीं, मालूम कि किस भित्ति पर संसार के सब वस्तुओं का केवल पांच ही तत्त्वों में विभाग किया है। इसका भेद किसी दूसरे अङ्क में दिखलाया जावेगा।

धूप, अग्नि, सूर्य का प्रकाश सबको एकही माना है। जैसा कि आज कल के वैज्ञानिक कहते हैं।

फुटकर बातें–महा कवि कालिदास को चुम्बक लोहे के गुण मालूम थे क्योंकि उन्हों ने लिखा है कि "अयस्कान्तेन लोहवत्"... पहले पहल जब वास्कोडिगामा (Vascode Gama) सूरत बन्दरगाह में आया तो उस ने सूरत के मल्लाहों और जहाज़ खेने वालों को चुम्बक सुई (Compass needle) इस्तैमाल करते हुये पाया और वह बड़ा विस्मित हो गया कि भारत वासियों को चुम्बक सुई के गुण कैसे मालूम हो गये।

यहां पर जहाज़ निर्माण करने का बड़ा व्यवसाय हुआ करता था जैसा कि मनुस्मृति में इनसे कर लेने का वर्णन है और जैसा कि विदेशी यात्री और भ्रमण करने वालों ने अपनी पुस्तकों में लिखा है।

संग्रामों में भुशण्डी और शतघ्नी एक भान्ति की तोपें प्रयोग में आती थीं। नाना प्रकार के और भी अस्त्र शस्त्र प्रचलित थे। धनुर्विद्या भी महोन्नति में थी जो प्रायः अब लोप सी हो गई ऐसा मालूम पड़ती है।

शास्त्रों के अवलोकन से ज्ञात होता है कि वेदों की ११२७

शाखायें थीं जिनमें प्रायः सभी विद्याओं का वर्णन था । अब आ-कल उनका कुछ पता नहीं चलता है । इस से ऐसे विषय अनुसन्धान करना बहुत ही मुश्किल हो गया है । जितना ही अन्वेषण किया जायगा उतनाही अधिक इस विषय का पता लगेगा।

इन पृष्ठों के लिखने का अभिप्राय केवल मात्र यही है। विज्ञान के मौलिक सिद्धान्तों से प्राचीन भारतवर्ष के आर्य भूषित थे, और जिन लोगों का कथन है कि भारतवासी विज्ञान अनभिज्ञ थे, समूलक नहीं मालूम पड़ता है, परन्तु इसके विपरी यहां पर धर्म और विज्ञान की वृद्धि एक दूसरे के साथ २ को जा थी । भारतीय और पाश्चात्य विज्ञान का भेद दूसरे अङ्क में दिख लाया जायेगा ॥

अमेरिका में भारतवासी

पैसिफिक महासागर के तटस्थ देशों में अनुमान दस सहस्र भारतवासी मज़दूर निवास करते हैं जिसमें से पांच सहस्र "ब्रिटिश कोलम्बिया"में और पांच सहस्र "युनायेट्ड स्टेट्स"में हैं युनायटेड स्टेट्स में लगभग २०० दो सौ विद्यार्थी बङ्गाल, पञ्जा मद्रास और सयुक्त प्रान्त से गये हुये हैं । इनमें से एक बड़ी संख्या ऐसे विद्यार्थियों की है जो आत्मावलम्बन का उदाहरण चरित्रा कर रहे हैं । वे एक पैसा भी अपने देश भारतवर्ष का नहीं लेते वे वहीं पर धन कमाकर अपना निर्वाह करते हैं । उनका यह कार्य बहुत ही प्रशंसनीय है जिससे ज्ञात होता है कि हमारे देश में भी आत्मावलम्बन का प्रादुर्भाव होने लगा है । कोई कृषि विद्यालय में उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं । कोई तो इन्जीनीरिङ्ग विद्यालय में पढ़ते हैं जिससे कला कौशल का ज्ञान हो और अपने देश में लौट कर उन्हीं कलाओं का प्रचार करें, जिससे देशोन्नतिका मार्ग सुगम हो जाय ।

यदि कोई अमेरिका आदि देशों की उन्नति का कारण ढूंढ़ना चाहे तो उसको ज्ञात होगा कि यहां पर संस्थाओं की भरमार है जो कुछ कार्य होता है वह संस्थाओं द्वारा ही किया जाता है जिससे शक्ति निष्फल नहीं जाती है । आज कल भारतवर्ष में हम देखते कि एक २ मनुष्य अपनी २ ढाई चावल की खिचड़ी अलग पकाय

करते हैं जिससे शक्ति एकाग्र नहीं की जासकती है, परन्तु सहर्ष कहना पड़ता है कि हमारे भाई वहां पर जाकर इस भाव को अपने हृदय में स्थान देने लगे हैं और लकीर के फकीर की कहावत को परित्याग करते जाते हैं। वहां पर अनेक संस्थायें हमारे देशी भाइयों की स्थापित की हुई हैं जिनका उद्देश्य भरतीय विद्यार्थियों को सहायता प्रदान करना और भारतवर्ष की उन्नति चाहना है।

"वैनकुवर नगर" में प्रोफेसर तेज सिंह एम.ए. "सिक्ख" सम्प्रदाय के नेता हैं। सिक्खों का यहां पर १० सहस्र डोलर (अमेरिका का सिक्का) के मूल्यका एक विशाल मन्दिर है जहां पर प्रत्येक आदित्य वार को धार्मिक सभायें की जाती हैं। एक नाईट स्कूल स्थापित किया गया है और एक मासिक पत्र भी "गुरुमुखी" भाषा में प्रकाशित किया जाता है। इन कार्यों में भाई करतार सिंह की सहायता और उद्योग प्रशंसनीय है।

"कैनेडा इन्डियन सप्लाई और ट्रस्ट कम्पनी लिमिटेड" के मैनेजर सेठ रहीम मुसलमान और हिन्दुओं के दूसरे नेता हैं। आपको "इमिग्रेशन" अफसरों ने वैनकुवर जाने पर बड़े कष्ट दिये थे और बहुत मरतबे देशनिकाला होगया था किन्तु सब आपत्तियों को सहन कर आप वहीं पर बर्तमान हैं। आप बहुत सी सभाओं में सम्मिलित होते हैं। आप युनायटेड इन्डिया लीग के मन्त्री हैं जो वहां की सरकार के सम्मुख भारतवासियों की शिकायतों को प्रस्तुत करने का प्रयत्न कर रही है और भारतवासियों को समान अधिकार प्राप्तहो इसका यह भी उद्देश्य है। ईश्वर करे इनको इसमें सफलता प्राप्तहो। हम को रावलपिन्डी के बाबू हरिचन्द सूरी का नाम न भूल जाना चाहिये। आप सचमुच हिन्दुओं के प्रतिनिधि कहे जा सकते हैं। हिन्दू मुसलमान और सिक्खों को चाहिये कि मत भेद को छोड़ दें एक होकर कार्य करना अभीष्ट होगा जिससे मातृभुमि के यश का उन देशों में प्रसार हो।

विक्टोरिया में अथक उत्साह से हमारे भाई डाक्टर सुन्दर सिंह प्रयत्न कर रहे हैं कि ब्रिटिश कोलम्बिया निवासी हिन्दुओं को भी "वोट" (vote) देने का अधिकार प्राप्त हो। आप 'आरयन' नामक मासिक पत्र के सम्पादक भी हैं जो विक्टोरिया से प्रकाशित किया जाता है।

"सियाटिल" में Association for the promotion of Education for the people of India नामक एक संस्था है सन् १९१० इ० में स्थापित की गई थी और जिसके सभाप[ति] महाशय मैक मोहन, Professor of History वाशिङ्गटन वि[श्व]विद्यालय के हैं। इसका उद्देश्य केवल शिक्षा प्रचार ही करना है। वहां पर एक और भी हिन्दुस्तान क्लब नामक सभा है जिसके स[भा]सद विद्यार्थीगण हैं और प्रत्येक मास "युनायटेड इन्डिया हाउ[स]" में उसकी बैठक होती है। उसी सभा भवन में बहुत से विद्या[र्थी] निवास भी करते हैं और एक ही साथ खाते पीते भी हैं।

लाला हर दयाल एम० ए० और डी०ए०वी० कालिज लाहौ[र] के प्रोफेसर भाई परमानन्द एम०ए० भी सम्प्रति किसी मुख्य उद्दे[श्य] से कैलीफोरनिया में हैं।

जो विद्यार्थी वहां पर जावें उनको चाहिये कि प्रथम सीएटिल [में] लुइस०पी० लुकनर (Louis P. Lulkner) से भेंट करें जो हर [ए]क प्रकार से उनको सहायता प्रदान करने का प्रयत्न करेंगे।

पौराणिक जाल।

न हि सत्यात्परो धर्मः नानृतात् पातकम् परम्।

सज्जनगृहस्थ! सन् १९०९ के फरवरी महीने में अमरावती [में] "आर्यसमाज" और "सनातनधर्म सभा" से शास्त्रार्थ हुआ था, यद्य[पि] मूर्तिपूजा, मृतकश्राद्धादि ५ विषयोंमें से एक भी पूरा नहीं हुआ, औ[र] दो ही दिन अर्थात् ३ घंटे में ही सर्व कार्य की समाप्ति हो गई, त[ब] कोई कैसे निर्णय कर सक्ता है कि अमुक एक पक्ष श्रेष्ठ रहा एतदर्थ संक्षेपमें हम शास्त्रार्थ के बंद होनेके सत्य कारण बताते हैं। २ दिवस पूर्वपक्ष और उत्तरपक्ष होनेके पश्चात् तृतीय दिवस यथा नियम संध्या के ६ बजे सभापति, तथा आर्यसमाज के पण्डित शास्त्रा[र्थ] भवन में उपस्थित थे किन्तु जब ६॥ बजे तब सनातन धर्म सभा [की] ओरसे कोई न आया तब सभापति "रावबहादुर मुधोलकर" य[ह] कहकर चले गये कि 'हमने आधा घंटा तक मार्ग प्रतीक्षा किया अ[ब] हम जाते हैं" इसके पश्चात् फिर सनातन धर्म सभा ने कभी शा[स्]त्रार्थ करना स्वीकृत नहीं किया, पौराणिकों की सभामें उपस्थि[त] न होनेकी पालिसी ध्यान देने योग्य है।

जब आर्यसमाज की ओरसे पुनः पुनः शास्त्रार्थ का आवाहन हुआ तब सनातनधर्म सभाने पण्डित भीमसेन शर्माको तार देकर इटावेसे बुलवाया और पं० पूर्णानन्द तथा पं० बालकृष्ण शास्त्री जी से उनका जो कुछ पत्र व्यवहार हुआ वह " शास्त्रार्थ अमरावती " नामक पुस्तक में सविस्तर छपा है, (आत्मश्लाघा में उत्तरकुमार को भी परास्त करने वाले बिचारे पं० रामनारायण को उस समय किसीने नहीं पूछा,) उसी पत्रव्यवहार में पं० भीमसेनका आर्यसमाज से शास्त्रार्थ अस्वीकार बाधक पत्र भी है, तथा दोनों पत्तकी कारवाही देखकर से० मोतीलालजी जैनी ने अपनी ओरसे एक विज्ञापन अलग छपाया जिससे आर्य समाजका विजय सबपर विदित हैं, उपरोक्त लेखसे पाठक समझ सकते हैं कि आर्यसमाज शास्त्रार्थ करनेको प्रस्तुत था, किन्तु सनातनधर्म के पण्डितोंने शास्त्रार्थ करना स्वीकृत नहीं किया, इसका फल स्पष्ट वर्तमान है कि सनातनधर्म सभा अमरावतीका अस्तित्वभी दृष्टिगोचर नहीं होता और आर्यसमाज अमरावती [जो कि शास्त्रार्थ से प्रथम बहुत हीन दशा में थी और मन्दिर भी नहीं था] 'आज शास्त्रार्थ के कारण ही आर्य सिद्धान्त को स्वीकार करनेवाले सज्जन (म० खोकले) की कृपासे,' सातहजार रुपयेके मन्दिर में अपने वैदिक धर्म का प्रचार आनंद पूर्वक कर रही है और शास्त्रार्थ के पश्चात् सभासद भी द्विगुणित हो गये हैं।

कदाचित् यही देख कर आर्यसमाज के विजय को रोकने के लिये अब तीन वर्ष पश्चात् पं० रामनारायण ने एक विज्ञापन बांटा. जिसमें रावबहादुर मुधोलकर के अंग्रेजी पत्रका भाषांतर भी था, उस पत्रको पढ़कर रा. ब. मुधोलकरको एक पत्र इस पत्रके प्रतिवाद में हमने भेजा और साथही में मराठी भाषांतर भी भेज दिया. उसके उत्तरमें रा. ब मुधोलकरने लिखा की "वह मराठी अनुवाद असत्य है" यह पढ़कर हमें एक ऐतिहासिक वार्ताका स्मरण हुआ, "महाराणा प्रतापके प्रतापसे जब अकबर बादशाह रातदिन चिन्तित रहता था ऐसे समय में अचानक प्रतापका संधिपत्र अकबर को मिला पत्र पढ़तेही बादशाह हर्षसे जामेके बाहर होगया और बड़े अभिमान व आनंद से वह पत्र सबको बताने लगा, किन्तु 'बीकानेरपति पृथ्वीराजने प्रतापके इस पत्र पर संदेह किया। और सत्यार्थ

जानने को प्रतापको लिखा. प्रतापने उसका जो उत्तर दिया सुनतेही अस्थिर विद्युत प्रकाशकी भांति दिल्लीश्वरका तात्कालि आनंद और वृथाभिमान क्षणार्ध में ही विलीन हो गया अस्तु, हा पास पं० रामनारायण का मराठी विज्ञापन, उसका प्रतिवादस्व हमारा पत्र, इसपर रा. ब. मुधोलकर का उत्तर यह सब प्रस्तुत जो सज्जन चाहें वह देख सकते हैं रा. ब. मुधोलकरके वही हम यहां लिखते हैं।

"I don't think that Marathi translation is correct".
R. N. Mudholker

पं० रामनारायण अपना विजय पत्र वेंकटेश्वर समाचार में मराठी में विज्ञापन छपाके समझते होंगे की " शास्त्रार्थ अमराव का उत्तर हो चुका और हमारी पोलभी दब गई. " किन्तु वह नहीं जानते कि एक और रहस्य स्फोट होगया । अब सर्व सा रण को भली भांति ज्ञात हो जायगा कि एक जीते जागते प्रति विद्वानके पत्रका अनुवाद करने में भी जब इतना घोर पक्षपात कि गया कि जिसको पढ़कर स्वयम् लेखक उससे सहमत नहीं है, भला हजारों वर्ष पहिले जो ऋषि मुनि हो गये उनके ग्रंथोंमें अ कपोलकल्पना से मनगढ़तं सिद्धान्त मिश्रित कर स्वार्थ साधने क्यों कमी की होगी ? सत्य है 'स्वार्थी दोषम् न पश्यति' ।

यह लेख किसी समाज या व्यक्ति विशेष पर कटाक्ष करने इच्छासे द्वेषभाव से प्रेरित होकर नहीं लिखा इसका एकमात्र सत्यार्थ प्रकाश है ।

वर्धा.
ता० ७-८-१९१२

सर्व सज्जनोंका कृपाकांक्ष
अम्बाप्रसाद.
मंत्री आर्यसमा

टीप–"शास्त्रार्थ अमरावती" नामक पुस्तक मिलनेका पता- मंत्री आर्यसमाज अमरावती ।

भारतवर्षीय आर्य्यकुमार सम्मेलन ।

आर्य्यकुमार सभाओं का तीसरा सम्मेलन अबकी बार समारोह से सहारनपुर में १९ व २० अक्तूबर को होगा । देश और आर्य्य सर्वमान्य लाला लाजपतराय जी को सभापति गया है । हम स्वागत कारिणी सभा के अधिकारियों को इस लिये बधाई देते हैं ।

काशी की नककटैया ।

(श्रीयुत राधारमण गुप्त लिखित)

काशी की रामलीला बहुत ही विख्यात है। यहपहिले चित्रकूट के नाम से आरम्भ हुई थी। इसके देखा देखी और भी महाल वालों ने शुरू की। इस समय अनुमान से ज्ञात होता है कि शायद ५० स्थानों में रामलीला जुदे २ महल्लों में होती होगी, परन्तु अब आठ दस वर्ष से जो अद्भुत लीला रामलीला में देखने में आती है वह बड़ी बिचित्र है। विचित्र बात यह है कि नककटैया में जिस समय खरदूषण अपनी बहिन शूर्पनखा के पक्ष में युद्ध के लिये रामचन्द्र के साथ चलता है, उस समय बजाय सेना के जो युद्ध के लिये एक बहुत आवश्यक सामान है, इसके बदले में बहुत ही बुरे २ स्वांग निकलते हैं जिनका असर देखनेवालों पर बड़ा ही भयङ्कर पड़ता है और लोगों का चित्त पाप के तरफ झुका देता है। इस नककटैया में स्त्रियों का बहुत ही अपमान किया जाता है। कोठे पर भले घर की स्त्रियों के सामने बुरे २ शब्द कहे जाते हैं। उनके सामने फाहशार नकल उतारी जाती है कि जिनको लिखने में लेखनी का साहस नहीं पड़ती। वह पुरुष जो स्त्रियों को प्रतिष्ठाहीन करते हैं पर हाय! सनातनधर्मावलम्बियो! तुम्हारा धर्म धन्य है। तुम्हारे गुरू धन्य हैं जिन्हों ने तुमको शिक्षा दी है, खूब अन्धे बैल की न्याई आंखों में पट्टी बांधे देखते हो, अन्धे होने का कारण स्पष्ट है कि धर्ममहामंडल और सनातनधर्म भी डफला सारङ्गी लेकर नककटैया में सम्मिलित होजाते हैं। बड़े२ महामहोपाध्याय इस निन्दित मर्यादा का निषेध नहीं करते। अब हम कुछ स्वांग का फोटो आपको दिखलाते हैं तब आप उस समय अवश्य ही कहेंगे कि "काशी का नाश हो"! अब हम आप से पूछते हैं कि युद्ध के साथ क्या अहीर, अहीरिन, डोम, डोमिन,खटीक, खटकीन, राजा,रानी, मुर्दा, अघोरपन्थी, कीनारामी नकल, वेश्या और उसका प्रेमी इत्यादि अनेक प्रकार की नकलें जो नककटैया में निकलते हैं, हुआ करती है हमारे अधःपतन की भी कोई सीमा है उफ!शोक! केवल यह लोग स्वांग रचकर चुपचाप चले नहीं जाते किन्तु बुरे २ शब्द स्त्रियों के सामने कहते हैं। एक विमान पर स्त्री पुरुष बैठे हैं

स्त्री पुरुष को जूतों से पीटती है और पुरुष उसकी स्तन पर हा
रखता है, खटीक खटकिन हाथ में केला लिये स्त्रियों को देख
चलते हैं कि......लेओ, एक पुरुष शरीर में कालिमा पोते छा
में रोली या महावीर लगाये एक हाथ में मद्य की बोतल और दू
हस्त में एक मांस का टुकड़ा लिये भैरोनाथ बने झूमते झामते म
वालों की न्याई बाबा भैरोंनाथजी बने अंड बंड बकते चिल्लाते च
जाते हैं। एक तरफ साहुकार बना हुआ तख्त पर बैठा है साम
उसके एक बड़ा हुक्का रक्खा है, रुपये और आभूषण की दुका
उस पर सजी हुई है हाथ में कोई जेवर या रुपया लेकर स्त्रियों
दिखलाता चलता है और कहता है कि......रुपया लो, चाहे कड़ा
एक पुरुष के संग लड़का है जो वह उसके साथ रास्ते में बुरे वि
की बातें और हाथापाई करते चले जाते हैं इसी तरह के अने
प्रकार के स्वांग निकलते हैं। इस बीसवीं सदी में भी हमारे का
के बड़े२ महामहोपाध्याय तथा सब से काशी के बड़े पण्डितजी
निद्रा न खुली और न इसका कभी प्रतिवाद किया और न आशा है
कि आगे प्रतिवाद करें परन्तु जोर अत्याचार इस नककटैया के बहाने
हुआ करता है वह किसी से छिपा नहीं है यदि नककटैया के नेताग
यह कहें कि थियेटरों में भी तो स्वांग बनते हैं यह दुरुस्त है प
थियेटरों से इसमें बहुत भेद है प्रथम तो थियेटरों में शिक्षाप्रद तमा
होता है और दूसरे वहां स्त्रियों की प्रतिष्ठा हीन नहीं की जाती
इस नककटैयामें जितने स्वांग बननेवाले हैं सब काशी के बदमाश औ
उचक्के बनते हैं, नहीं समझते किस शास्त्र या रामायण के आ
धार पर यह स्वांग नककटैया में निकाला जाता है और इस से
क्या शिक्षा पबलिक को हासिल होती है। हम आशा करते हैं कि
रामलीला के नेतागण इस लेख पर विचार कर जितने अनुचि
स्वांग निकलते हैं सब को बन्द कर देंगे और इसके बदले में यु
की सेना निकालें तो अच्छा होगा। बाहिर के लोग काशी को धर्म
क्षेत्र समझते हैं लाहोर, जालन्धर कलकत्ता आदि नगरों में
वेश्याओं को बाहिर किया जा रहा है परन्तु काशी में धर्म के रूप
गली गली में जाकर बाम मार्ग का प्रचार किया जाता है, यहां
पण्डित तिस पर मौन धारण किये हैं।

पारिवारिक दृश्य।

भारतवर्ष में बरार प्रान्त धन, शिक्षा तथा सामाजिक जीवन में अन्य प्रान्तों से बहुत ही पिछड़ा हुआ प्रान्त है ऐतिहासिक दृष्टि से यह प्रान्त अनेक राज्यों की लीला भूमि था। आज भी स्थान स्थान पर खण्डहरात और शिलाएं मिलती हैं। अनावृष्टि के दिनों में पर्वतों, नगरों तथा समस्त भूमि की अवस्था भयानक और मर्मभेदी दृश्य को धारण करती है। इसी प्रान्त में अकोला एक प्रसिद्ध नगर है। यह नदी के दोनों ओर बसा हुआ है। प्राचीन मर्यादा के अनुसार यहां अब भी प्रति सप्ताह मण्डी लगती है जिसमें समीपवर्ती ग्रामों के हज़ारो स्त्री पुरुष सौदा खरीदने और माल बेचने के लिये उपस्थित होते हैं। आज बुधवार और मण्डी का दिन है धर्मशाला के इर्द गिर्द और पुल के समीप नर नारी डेरा डाले पड़े हैं। चन्द्रमा की शीतल शीतल किरणों नदी का सुन्दर जल, विशाल पुल के सुरम्य स्थान पर अनेक पुरुष टहल रहे हैं। एक ओर से हाहाकार की ध्वनि उठी, ध्वनि और प्रतिध्वनि ने अनेक लोगों को आकर्षित किया। अग्नि की प्रचण्ड ज्वाला ने विज्ञापन का काम दिया प्रकाश और ऊष्णता बढ़ती गई। आग लग गई, आग लग गई। कहते हुए मनुष्य दौड़ने लगे, वृद्ध अपनी टेक को भूल गये। मज़दूरों ने काम छोड़ दिया। माताओं ने बालकों सहित छत पर खड़े हो कहना आरम्भ किया, हाय! बड़ी आग लगी, अमुक का मकान जला! वह देखो, आग बढ़ गई! लोगों की सहायता से, पुलिस की मदद से आग बुझ गई। बहुत से घर तबाह होगये। माताएं बच्चों को लेकर पुल पर आखड़ी हुई। हर एक ने अपना अपना दुखड़ा सुनाना आरम्भ किया, परन्तु वह देखो! एक सुकमारी के समीप जमघट खड़ा है। वह हताश हो रुदन कर रही है। किसी ने समझा उसका इकलौता पुत्र जल मरा, किसी ने कल्पना कीकि उसका पति छत के नीचे दब गया परन्तु उसकी निरन्तर अश्रुधारा ने सब के मन को विह्वल कर दिया। काशीबाई (उसी देवी का नाम था) का सर्वस्व भस्मसात हो चुका था। केवल एक सफेद साड़ी उसके उज्वल तन बदन पर पहिनी थी—वस्त्र, बर्तन पलङ्गादि गृह सामग्री जले भुने मकान की गिरी छत के अन्दर

विकृत रूप को धारण किये पड़े थे । पुलिस स्थान पर आ उ स्थित हुई । किन्हीं सज्जनों ने अपने घर में लेजाने की अभ्यर्थ की परन्तु अज्ञातवास में वह सुकमारी कैसे जाती । रोते धोते बज गये, अन्ततः उसने धर्मशाला में जाना स्वीकार किया । वह उसे एकान्त स्थान मिल गया परन्तु उसकी दारुण दशा, उस हृदय विदारक तथा मर्मभेदी आर्तनाद, उसके अश्रुधारा का नि न्तर प्रवाह कर्णभेदी बन रहा था । दैवात् उसी धर्मशाला श्रीमती विद्यावती ठहर रही थीं । उस ने आकर नानाप्रकार आश्वासन दिलाया परन्तु काशीबाई का गृथित हृदय उछलता च आता था । इस उमड़े हुए सेलाब को चक्षु द्वारा ही निकलने का मा मिलता था । श्रीमती विद्यावती अपने पति के साथ पंजाब जा र थीं । बच्चों को अपने पास रख कर उसने स्वामी से सविन प्रार्थना की कि आप दूसरे कमरे में जाकर विश्राम करें । इस बा को मेरे पास छोड़दें । मैं इसे समझा बुझा कर सुलादूंगी ! पति लिये दूसरे कमरे में वस्त्रादि का प्रबन्ध कर श्रीमती विद्यावती काशीबाई के लिये चारपाई तथा वस्त्रों का प्रबन्ध किया औ बरामदे में अपने पास ही उसको सोने को आग्रह किया । स्त्रियों परस्पर सहसा अपनी जाती पर विश्वास हो जाता है । नौक भी चला गया । जलपान करने तथा सच्चे प्रेम के भावों को दे कर काशीबाई ने चुपकी ! बरामदे के आगे लकड़ी की चारखा पटड़ियां लगी थीं । द्वार बन्द कर दिया गया । जब श्रीमती विद्या वती ने देखा कि अब शान्तचित होकर वह अपने दुख का विचा कर रही है तब इस प्रकार से उसने अपना कथन आरम्भ किया-

विद्यावती-बाईजी ! बेशक मैं पंजाब के रहने वाली हूं । आप महा राष्ट्र में निवास करती हैं परन्तु हम दोनों स्त्रियां हैं मैं आपके दुखों को अनुभव कर सकती हूं, तिस पर मैं आर्या हूं । हम स्त्रियों के दुखों को दूर करने के अने उपाय सोच रहे हैं । मेरे पति इंजिनियर हैं । मैं जहां से आती हूं वहां भी एक पाठशाला खोल रखी है हिन्दू समाज में अनेक अत्याचार हो रहे हैं यदि आपके दुखड़ों का पता लगजाय तो आपके दुखों को दूर करना जरा भी कठिन नहीं तिसपर आप तो पढ़ी लिखी प्रतीत होती हैं।

क्या मैं पूछ सकती हूं कि आपको क्या क्या कष्ट है ?

काशीबाई–देवी जी ! अगर एक कष्ट हो तो बतलाऊं, मैं आप की अत्यन्त अनुगृहीत हूंगी यदि आप मुझे जीवनयात्रा को समाप्त करने में सहायता दें । मेरा दुख एक नहीं ! मैं निस्सन्तान और निस्सहाय हूं ! High family में जन्म लिया था परन्तु शूद्रों से भी भ्रष्ट मेरा जीवन हो गया आप को क्या बतलाऊं इतना कह फिर रोने लगी ।

विद्यावती–बहिन [उसके दोनों हाथ अपने हाथ में लेकर और उस की खाट पर बैठ कर] मैं नहीं जानती थी कि आप ऐसी शुद्ध आर्यभाषा बोल सक्ती और अंग्रेजी भी जानती हैं । आप पढ़ लिख कर अधीर क्यों होती हैं । आप तो मर-हठा कुलोद्भवा हैं । भला यह हिन्दी आप कैसे पढ़ीं ?

काशीबाई–नागपूर के फीमेल ट्रेनिङ्ग स्कूल में ।

विद्यावती–तब आप अध्यापिका का कार्य्य भी करती हैं ?

काशीबाई–नहीं ! मैंने कभी भी अध्यापिका का कार्य्य नहीं किया ।

विद्यावती–अच्छा, आप ने अंग्रेजी का कब और कितना अभ्यास किया है ?

काशीबाई–मिडल तक की अंग्रेज़ी तो मैं ने घर में ही पढ़ी थी शेष जाकर मेडिकल कालिज में ।

विद्यावती–तो क्या आप डाक्टरी भी जानती हैं ?

काशीबाई–हां, कुछ जानती हूं, परन्तु अभ्भास कम है ।

विद्यावती–[आश्चर्य्य से] यहां आप का कोई सम्बन्धी है जिसके पास रहती हो ?

काशीबाई–देवि ! आप सोहागिन हैं । मैं दुश्चरित्रा और कलङ्कित हूं । अपनी व्यवस्था किस मुख से सुनाऊं । हां, यदि निस्तार होता देखूं तो अपने कालिमायुक्त पापी हृदय को फाड़कर आप के सम्मुख धर दूं परन्तु–

विद्यावती–बहिन ! विश्वास रखो, मेरा हृदय आप की योग्यता को जान कर पाशबद्ध हो चुका । मैं आप का यथेष्ट प्रबन्ध करूंगी और जब तक प्रबन्ध नहीं होता सखी या सहेली बना कर अपने पास प्राणादपि प्यारी समझ कर रखूंगी । पाप किस से नहीं होता और फिर हम अबलाओं को तो

रोन्दा और कुचला जा रहा है । आप निशङ्क हो आद्यो-
पान्त अपनी कथा सुना जावें ।

काशीबाई-[घड़ी निकाल कर] देवि ! एक बज गया मेरी कहा-
लम्बी और मर्मभेदी है । मुझे भय है कि आप की निद्रा
विघ्न पड़ेगा । मैं तो मुसीबत की मारी रातों तारे गिन-
रहती हूं ।

विद्यावती-नहीं आप मेरा ख्याल न करें, एक क्या चाहे चार न ब-
जावें, मैं आप के दुख को बांटना चाहती हूं, आप आरम्भ
से सुनावें ।

काशीबाई-अच्छा बहिन ! आप का नाम क्या है ?

विद्यावती-मेरा नाम विद्यावती है ।

काशीबाई-विद्यावती जी ! तब मैं विश्वास कर लूं कि मेरे शब्द ए-
धार्म्मिक जीवन वाली देवी के कानों पर पड़ेंगे और यदि
वह मेरी सहायता न करेगी तो न्यून से न्यून वह मुझे
घृणा की दृष्टि से तो न देखेगी ।

विद्यावती-[गले में हाथ डाल कर] घृणा ! मैं तो सखी बना चुकी
आज की रात्री से यह दोनों शरीर, उस भगवान से प्रार्थ-
ना है कि कभी विच्छेद को प्राप्त न हों ।

काशीबाई-तब सुनिये ! मैं जन्म से महाराष्ट्र हूं । एक उच्च ब्राह्मण
घराने में मेरा जन्म हुआ । धन, सम्पत्ति, ऐश्वर्य्य का भी
कमी न थी । मेरे पिता इंजिनीयर थे ! उन्हें अनुमान ७००
रु० वेतन मिलता था । मेरे तीन भाई थे । एक बैरिस्टर, एक
I. M. S. और तीसरे बम्बई हाईकोर्ट के Advocate
थे । मैं उनकी अकेली, कनिष्ठा और लाडली बहिन थी ।
वृद्धावस्था में माता पिता ने जो मुझ से प्रेम किया वह
पुत्रों से भी नहीं था । कहते हैं कि जब मेरा विवाह हुआ
तो बड़ा रुपया खर्च हुआ था । मेरी आयु उन दिनों सात
वर्ष की थी, परन्तु मुझे बहुत कम याद है । आठवें वर्ष में
विधवा होगई । इतना कहने पर अश्रुधारा का पुनः प्रवाह
हुआ और उसने दोनों रचिताञ्जलियों से आखों को ढांप
लिया ।

विद्यावती-तब क्या आप सुसराल नहीं ?

काशीबाई–नहीं, मुझे तो स्मरण भी नहीं कि मैं कब और कैसे सुसराल गई थी। मैं अपने पैतृक गृह पर रही। मेरे एक भाई ने बड़ी चेष्टा से मेरे पढ़ने का उत्तम प्रबन्ध कर दिया। दो मास्टर और एक अध्यापिका नियुक्त थे। मैं बिल्कुल वैधव्य के कष्टों को भूल गई। माता मुझे सुकुमारी जान अति प्रेम से रखती थी। भाई तथा पिता नित्य नये से नये बाजे आदि सामान लाते थे। इस प्रकार सुख पूर्वक मेरी आयु १७ वर्ष की होगई। हमारे देश में परदा नहीं। मैं प्रायः नौकरों को लेकर या अकेली भाई के स्थान पर चली जाती थी। इन दिनों एक सुन्दर युवक पोस्ट आफिस में नौकर होकर हमारे नगर में आया। उसने मेरे यौवन को देखा। मैं उनका नाम नहीं बतलाना चाहती हूं। लोग उसे शुक्ल जी कहते थे। एक दिन मैं गली से गुज़र रही थी कि उसने मुझ पर कङ्कर फेंके। मैं चुपचाप अपने मकान की तरफ बढ़ गई। लज्जा वश मैं ने यह बात किसी को न कही परन्तु मेरी अनुचित लज्जा ने विष का काम किया। दो चार बार जब मैं गुज़री और उस के कङ्कर मारने पर चुप रही तो वह दिलेर हो गया। बहुत दिन व्यतीत हो गये। मैं भी सावधान हो गई। सर्वदा नौकर या परिचारिका को सङ्ग रखती थी। एक दिन दैवात् मैंने साहस किया और अनुमान ९ बजे अकेली घर को आ रही थी कि रास्ता में उसने छेड़ छाड़ की। मैंने उसे गाली दी परन्तु न मालूम उसे कैसे साहस हुआ उसने मुझे पकड़ लिया और खेंच कर अपने घर लेगया। उस निन्दित घड़ी से मेरा पतन हुआ। मैं ने बड़ा शोर किया। उसने अनेक प्रलोभन दिये। यौवन और एकान्त फिर मैं तो दुर्बल थी, वश में आ गई। घर देर से पहुंची। अपने आप पर तिरस्कार किया। माता पिता क्या जानते थे। दूसरे मास जब रजोदर्शन न हुआ तो मैं बहुत घबराई। मुझे अपने पाप को छिपाते २ किसी प्रकार तीन मास व्यतीत हुए। मैं ने घर से निकलना छोड़ दिया, पढ़ने से भी रुचि उठ गई। सिर दरद के बहाने मैं खाट पर पड़े पड़े दिन काटने लगी। दुर्भाग्य से एक सखी को मैं ने सत्य सत्य कह दिया। उसने मेरी सहायता तो न की। मेरी माता को कह दिया। मेरी माता ने भयानक रूप धारण किया। दिन रात मुझे कोसती और तिरस्कार करती थी। होते २ यह बात पिता को भी ज्ञात हो गई।

उन्हों ने आपस में परामर्श किया। वैद्यों और हकीमों से नयी दवाई लाते और ज़बरदस्ती मुझे पिलाते थे, मगर गर्भपात न हुआ पांचवां महीना व्यतीत हुआ। लक्षण स्पष्ट हो गये । मुझे घर सम्बन्धी विष के समान कड़वे लगने लगे और मैं उनकी आंखों तारा होने के स्थान में कांटा बन गई। मेरी माता यात्रा की तय्या करने लगी। उसने केवल एक ही नौकर और एक नौकरानी सा ली और जब उसने मेरे कपड़े और बिछौने को निकाला तो मे माथा ठनका दूसरे दिन चलने से आधा घण्टा पहिले मुझे कहा चलो मथुरा तीर्थ की यात्रा कर आवें'। मैं बहुत गिड़ गिड़ा क रोई, परन्तु सुनता कौन, मैंने बीमारी और दुर्बलता की ओर ध्या दिलाया परन्तु माता के सिवाय वहां कोई था ही नहीं। भाई औ पिता सब हट गये। मैं संग आई और हम मथुरा पहुंचे। वहां ए मकान किराये पर लिया गया । डाक्टरों और वैद्यों को बुलाय गया। हाय ! मेरी दशा शोचनीय थी, खाना पीना बन्द सा होगया न जाने क्या२ दवाइयां खाईं। कितनी बार रक्त के प्रस्राव से मैं घण्टे बेहोश हुई परन्तु न तो यह कम्बख्त प्राणान्त हुए और नहीं गर्भस्थ बालक मरा। अन्ततः दसवां मास आ पहुंचा । प्रसव हुआ, पुत्री उत्पन्न हुई। उसे मारने की चेष्टा की गई, वह भी न मरी। मैं माता से विनीतभावेन अनेक प्रार्थनाएं की उसने एक न मानी उसका क्रोध मानो मृतवत्स व्याघ्री के समान था। उसके रक्त नेत्र द्वारा न तो मातृस्नेह प्रतीत होता और न शान्त हृदय का बोध होता था। मैं डर के मारे बोलती भी न थी। अस्तु, मथुरा से घर की ओर प्रस्थान हुआ । मार्ग में मणिकपुर स्टेशन पर हमें संध्या होगई। हम वहां उतर गये।

स्टेशन के बाहिर एक वृक्ष के नीचे डेरा लगाया । भोजन बना और हम एक समीपस्थ मकान में जाकर सोगये और विचार किया गया कि सबेरे ६ बजे की गाड़ी से चलें । पिछली रात अनुमान ४ बजे मेरी आंख खुली, देखा न कोई नौकर और न माता वह वहां से कहीं चले गये। मैंने अपने आपको निर्जन बन में पाया गोद में अबोध बालिका थी, न वस्त्र और न कुछ रुपया था उस दिन मैंने दिन भर रोते काटा। अनेक प्रकार से प्राणान्त करने की चेष्टा की परन्तु यह कठोर प्राण भी न निकले। मैं ने अन्ततः

उसी हत्यारे को पत्र लिखा जो मेरी कन्या का पिता था। वह आया और मुझे लेगया । भला, आप तो काहे को जानेंगी कि एक व्यभिचारी और दुराचारी पुरुष के संग रहने में क्या क्या कष्ट होते हैं । उसने मुझे एक ग्राम में मकान ले दिया और स्वयम् नौकरी की खोज में निकला । उसे ४०) रुपये की नौकरी मिल गई। अन्ततः उस के घर वालों को ज्ञात होगया । उन्हों ने मुझे बुलवाया। उसकी स्त्री और बच्चे विद्यमान थे। मैंने हर प्रकार से उनकी सेवा की । उसकी स्त्री के लिये नीच से नीच काम किया, परन्तु सौकिन का डाह कब चैन लेने देता था, मुझे रोज मार पीट पड़ने लगी, अन्ततः वहां से भाग कर मैं अकेली आई और आहोज़ारी से १००) रुपये लिये। यहां से मैं नागपुर पहुंची और वहां फीमेल ट्रेनिंग स्कूल में दाखिल हो गई। वहां का कोर्स दो साल का था । एक वर्ष और तीन मास व्यतीत हो गये, मुझे एक स्कालर शिप भी मिल गया। मैं अपनी क्लास में सब से प्रथम रहती थी । आश्रम की दिन चर्य्या भी अनुकूल थी। मैं समझती थी, मेरा जीवन सुधर जायेगा परन्तु एक आपत्ति और आ पड़ी। शुक्ल जी मुझे मिलने और देखने आये। खैर, आज्ञा लेकर मैं उनसे मिली। वह मेरे कमरे में कुछ देर रहे । आश्रम का नियम था कि ६ बजे के पश्चात कोई पुरुष वहां न रहे। मैंने उनसे जाने को कहा परन्तु वह न गये। कामातुर पुरुष भला काहे को मेरी प्रार्थना पर ध्यान देता । वह मेरी खाट के नीचे छिप गया और घण्टों नीचे रहा । मैं भी बलात् इस पाप में सम्मिलित थी । अकस्मात् १०½ बजे हमारे सुपरिनटेन्डन्ट मिस साहिबा मेरे कमरे में आई। भाण्डा फूट गया और साथ ही मेरा नसीब भी फूटा । मुझे दूसरे दिन ही बोर्डिङ्ग तथा स्कूल से खारिज कर दिया गया और मैं रोती धोती फिर उनके सङ्ग पाप के जीवन को व्यतीत करने आई। फिर येनकेन कुछ रुपया इकट्ठा कर मैं बम्बई में पहुंची। वहां डाक्टरी पढने लगी। ट्यूशन ले तथा इन की कुछ सहायता से मैंने वहां तीन साल व्यतीत किये परन्तु यह फिर वहां भी पहुंच गये। मैं अपनी बदनामी और इनकी मारपीट से डर कर फिर वापिस आई। अनुमान ८ मास से फिर अकोला में हूं। मेरी किताबें, मेरे वस्त्र, और मेरी जो कुछ सम्पति थी सो इसी घर में पड़ी जो आज जल गया । अब ऐसी अवस्था में मेरे

लिये सिवाय मृत्यु के कोई शान्ति देने वाली वस्तु नहीं । मेरी आयु केवल २५ वर्ष की है परन्तु इन सात सालों में मैंने खूब देखा कि कैसे रक्षक भक्षक बन जाते हैं । मेरे लिये जगत अन्धकार है। मेरा कोई भी हित चिन्तक नहीं । जिस ने मेरे यौवन, जीवन और धर्म को भ्रष्ट किया उस पर इतना भी विश्वास नहीं कि रोटी का सहारा हो। मैं अपनी जीवन लीला पर पुनः पुनः विचार कर एक मात्र अहर्निश रोने धोने में अपने दुख को कटता देखती हूं ।

विद्यावती—बहिन ! पाप की स्मृति निश्चित ही मनुष्य के मन को उद्विग्न कर देती है। आप शान्त होकर एक दो घण्टे विश्राम कर लें । मैं आप के लिये यथेष्ट प्रबन्ध कर दूंगी और यदि आप अपने जीवन को अपनी बहिनों की सेवा में अर्पण करना चाहेंगी तो अनेक साधन मिल जावेंगे दूसरे दिन श्रीमती विद्यावती ने अपने स्वामी से मशवरा किया । उन्हों ने सहर्ष उसे सहायता देनी स्वीकार की और रात की गाड़ी से श्रीमती विद्यावती के साथ आर्य्य जीवन व्यतीत करने के अभिप्राय से श्रीमती काशी बाई लाहौर को चल दी।

पाठक ! अपने इर्द गिर्द दीर्घदृष्टि से देखो, कितनी काशीबाई जैसी भारत ललनाएं आज व्यभिचार रुपी हलाहल विष को चख कर अजगर के समान नव युवकों के प्राण हरने के लिये नगर नगर और ग्राम ग्राम में उपस्थित हैं । धर्म रुपी रसायन के खाने से इनका विष जाता रहेगा और यह नारी रत्न देश की उन्नति में सहायक बनेंगी । बाल विवाह के प्रचारक दुष्ट जन यदि अपनी कुचेष्टाओं और गर्हित उपदेशों के परिणामों को आकर देखें तो उन्हें लाहौर की अनारकली, कलकत्ता के बडिनसुकेअर और बम्बई के डंकन रोड पर दिल को विदीर्ण करने वाली कहानियों के सुनाने वाली एक नहीं, दो नहीं, दस नहीं, हज़ार नहीं, लाखों काशी बाइयां मिलेंगी । इन का निस्तारा करने वाले केवल आर्य्य कुमार और विदुषी आर्या देवियां ही हो सकती हैं। भारतमाता ! यदि दो चार सौ विद्यावती जैसी धार्मिका पुत्रियों को भी आप प्रसव करदें तो घर घर नारियों का सत्कार होने लगे ।

ओ३म् ।

मध्यभारत में भी गुरुकुल [ब्रह्मचर्य्याश्रम] खुल गया ॥

१००००) दस हजार रु० भवननिर्माणार्थ और ५००) पांचसौ रु० मासिक खर्च को चाहिये ।

दान दीजिये ! दान दीजिये ! ! दान दीजिये ! ! !

क्योंकि

सर्वेषामेव दानानां ब्रह्म दानं विशिष्यते ॥ मनु० ॥

ऋषि सन्तानो !

वेदों के उद्धारार्थ, ऋषि मुनियों के गौरवार्थ, प्राचीन प्रणाली के प्रचारार्थ, भारतवर्ष के उपकारार्थ, संसार भरके लाभार्थ, तथा ब्रह्मदान के महत्व के द्योतनार्थ, आपके भावी सन्तानों के हृदयान्तर्गत आत्म सम्मान, सरलता, सत्यशीलता, मित्रभाव, अहिंसा, प्रसन्न चित्तता, धीरता, ईश्वर भक्ति, देशानुराग तथा इसी प्रकारके अन्यान्य गुण उत्पन्न करने और वर्णाश्रम के सुधारार्थ मध्यभारत गुरुकुल परिषद नरसिंहपुर ने ता० २७ अप्रेल १९१२ ई० तदनुसार बैसाख शुक्ल ११ सम्बत् १९६९ वि० को स्थान होशंगाबाद में नर्मदा तट के समीप परमात्मा और आप ऐसे उदार आत्मा विद्याप्रेमी सज्जनों के भरोसे पर मध्यभारत में भी गुरुकुल विद्यालय की स्थापना कर दी है ।

इस विद्यालय में अभी २० ब्रह्मचारी (मध्यभारत, हैदराबाद, बम्बई, गुजरात, बंगाल, संयुक्त प्रदेशादि के) प्रवेश किये गये हैं । उन्हें विद्यालय द्वारा यथार्थ धन, बल, विद्या और धर्म्म की प्राप्ति कराई जावेगी, जिससे इस लोक में सुख सम्पति और सुयश बढ़े और परलोक में शान्ति और आनन्द प्राप्त हो ऐसी शिक्षा देकर योग्य बनाये जावेंगे ।

महर्षि वशिष्ट और शौनक तथा अन्य महर्षि ऐसे ही विद्यालयों के कुलपति थे । इस गुरुकुल में साम्प्रति ३ अध्यापक १ वैद्य २ अधिष्ठाता तथा ३ अन्य सेवक कार्य्य निमित्त रक्खे गये हैं । अभी

तो यहां गुरुकुल का कार्य्यारम्भ ही हुआ है इसकी उन्नति के लिये योग्य और धर्मात्मा अनेक अध्यापकों को बढ़ाना है, साइंस (पदार्थ विद्या) की शिक्षा के लिये अनेक प्रकार के यंत्र मंगाने हैं और विद्यालय, पुस्तकालय, शिल्पालय, औषधालय तथा अध्यापकों तथा संरक्षकों के रहने को मकानात, यज्ञशाला, और यात्रियों के ठहरने के लिये धर्मशाला आदि स्थान निर्माण करने हैं । जिसमें बहुत बड़ी सहायता की आवश्यकता है परन्तु साम्प्रति १००००) दस हज़ार रुपया प्राप्त होने पर स्थानादि बनाने का कार्य्य प्रारम्भ करादिया जायगा ।

इस गुरुकुल विद्यालय का प्रबन्ध एक स्थानीय गुरुकुल प्रबंध कर्त्री सभा के आधीन है । इस वर्ष मासिक व्यय का अनुमान ५०० रुपया अर्थात् २००) रु० ब्रह्मचारियों के भोजनादि और २००) रु० कर्मचारियों के वेतनादि में तथा १००) रु० स्थिर निधि में स्वीकार किया गया है, जिस में २० ब्रह्मचारियों में से १४ ब्रह्मचारियों के संरक्षकों द्वारा केवल भोजन व्यय के निमित्त ८४) रु० मासिक आता है और ६ ब्रह्मचारियों से कुछ भी नहीं लिया जाता शेष ४१६ रुपये मासिक की पूर्ति और १००००) रुपये साम्प्रति मकानादि बनवाने की पूर्ति करना सम्पूर्ण प्रान्तों के वेदों के प्रेमियों को, ऋषि मुनियों की सन्तानों को तन, मन, धन से गुरुकुल इस महान यज्ञ के पूर्ण करने की सहायता करनी चाहिये ।

५००) अथवा इससे अधिक सहायता देने वालों के नाम पत्थर पर खुदवा कर पक्की इमारतों में लगाये जायंगे ।

होशंगाबाद से गुजरने वाले यात्रियों को एकबार इस " गुरुकुल विद्यालय " का अवश्य दर्शन करना चाहिये ।

भवदीय	निवेदयिता
नन्हेलाल मुरलीधर,	इन्द्रदत्त शर्म्मा मुख्याधिष्ठाता
मंत्री गुरुकुल परिषद होशंगाबाद,	गु० कु० वि० होशंगाबाद म० प्र०

नोट–हम अपने मध्य प्रदेश के उत्साही तथा पुरुषार्थी भाइयों की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकते, परन्तु हमारे विचार में कुछ वर्षों तक समग्र शक्ति उस प्रान्त में वैदिक धर्म के प्रचार कराने में लगती तो उत्तम परिणाम निकलता । (सम्पादक)

सामाजिक समाचार ।

जेनरल बूथ ।

आज जेनरल बूथ का शरीर पात होगया। इनके देहान्त से सारे पाश्चात्य देशों के मनुष्य शोक सागर में डूबे हुये हैं। आपके विषय में यही कह देना उपयुक्त होगा कि आपका पूर्ण जीवन परोपकार करने में व्यतीत हुआ है। आप "मुक्ती फौज" [Salvation Army] के संचालक थे। आप ही के परिश्रम से "मुक्ती फौज" की संस्था सुदृढ़ होगई है जेनरल बूथ के वास्ते कितना प्रेम और अनुराग इङ्गलैंड वासियों के अन्दर था उसको पाठक गण स्वयम् इसी से अनुमान कर सकते हैं कि जेनरल बूथ की शव के साथ हजारों मनुष्य थे यहां तक कि मनुष्यों की कतार लगभग चार मील से अधिक लम्बी थी और ५० देशों से मुक्ती फौज के ५० प्रतिनिधि विद्यमान थे। इनके पद पर ब्रामवेल बूथ नियुक्त हुये हैं। इन का स्मारक चिह्न स्थापित करने के लिये ६०,००० पौंड की अपील की गई है जिसका दसवां अंश हमारे देशवासी मि० टाटा ने प्रदान किया है। यह कार्य अति प्रशंसनीय है।

जेनरल नोगी ।

जेनरल नोगी इस संसार में नहीं है। सुना जाता है कि स्वर्गीय मिकाडो के प्रति स्वामि भक्ति और अनुराग प्रकाश करने के लिये इन्होंने आत्म हत्या करली।

इन्हों ने अपने पत्र में लिखा है कि अब मेरा स्वामी मर गया है सो मैं इस संसार में रहना अच्छा नहीं समझता हूं। इन्हीं को देख कर इनकी धर्मपत्नी ने भी आत्म हत्या कर ली। इन्हीं के उदाहरण को अनुकरण करते हुये और भी अनेक जापानियों ने जीवन से छुटकारा पाया। आत्महत्या रोकने के लिये वहां की पुलिस पूर्णतया प्रयत्न कर रही है।

'शुद्धि' का आन्दोलन ।

आजकल पञ्जाब में हज़ारों की बड़ी संख्या में पतित और अछूत जातियां आर्य समाज की शरण में आ रही हैं जिसको देख कर अन्य धार्मिक सम्प्रदाय भी दंग चकित हो गये हैं। सिक्ख और

सनातनधर्मी भी अन्त्यज्य मनुष्यों की शुद्धि करते हैं यहां तक कि नास्तिक समाज अर्थात् देवसमाज के सभासदों ने कुछ चमारों के लड़कों को शुद्ध करके अपने स्कूल में भरती कर लिया है।

स्त्रियों के लिये मेडिकल कालिज।

पाठकों को यह सुन कर हर्ष होगा कि दिल्ली में स्त्रियों के लिये मेडिकल कालिज खुलना निश्चित होगया है जिसके लिये १ लाख रुपया का भी संग्रह हो चुका है।

हिन्दू विश्वविद्यालय।

हिन्दू विश्वविद्यालय के लिये पुनः श्रीमान् मालवीय जी ने कार्य करना आरम्भ कर दिया है। मन्त्री के सूचना से ज्ञात होता है कि विश्वविद्यालय का चन्दा अनुमान १५ लाख रुपये के आगया है और १० लाख रुपये आने पर सर्कार चार्टर दे देगी।

बर्मा की यात्रा।

श्रीमान् पं० केशवदेवशास्त्री बर्मा देश के लिये अक्टूबर मास में रवाना होंगे। वहां पर धर्म प्रचार करते हुये आप दिसम्बर मास के अन्त तक देश लौट आवेंगे।

आर्य समाज दिल्ली।

आर्य समाज, सदर बाज़ार दिल्ली का वार्षिकोत्सव बड़े समारोह के साथ २६, २७, २८, २९ और ३० सितम्बर को मनाया जावेगा। मंत्री जी लिखते हैं कि आर्यसमाज के सब महानुभावों से प्रार्थना है कि यहां पर उत्सव में सम्मिलित हों जिससे धर्म का प्रचार सुगमता पूर्वक हो सके।

भूल सुधार।

नवजीवन में जो लेख "घोर अत्याचार" के नाम से किसी पिछले अङ्क में छपा था और जिस में बतलाया गया था कि स्वामी नित्यानन्द के मकानों पर ज़बरदस्ती कबज़ा कर लिया गया है उन में से एक मकान ८ आना मासिक प्रजावट पर ज़मीन लेकर बनवाया गया है वहां पर आठ आना वार्षिक चाहिये न कि ८ आना मासिक।

Printed by Pt. Baijnath Jijja, Manager at the Tara Printing Works,
Benares, and Published by Keshava Deva Shastri,
Dasaswamedh, Benares City.

नवजीवन

—:o:—

गत वर्ष के नवजीवन की सजिल्द किताब तय्यार हो गई है । अनुमान ७५० पृष्ठ की पुस्तक भिन्न २ विषयों से अलङ्कृत है । मूल्य नवीन ग्राहकों के लिये केवल २) रु० मात्र । शीघ्र मंगवावें, क्योंकि थोड़ी सी कापियां तय्यार हुई है ।

भारत की वीर माताएं

पं. ललिता प्रसाद जी द्वारा संगृहीत । २७० पृष्ठ की पुस्तक । भिन्न भिन्न स्थान की वीर माताओं के वृतान्त । मूल्य केवल ॥≡) मात्र ।

मिलने का पताः—प्रबन्धकर्त्ता नवजीवन ।

एक बार अवश्य पढ़िये ।

बनारस का बना हुआ हर किस्म का माल जैसे रेशमी साड़ी जरी की व सादी, पीताम्बर, चद्दर जनाना व मरदाना, डुपट्टा (सेल्हा) साफा सादे व जरी के काम के ।

काशीसिल्क के थान, मेरट की व बनारसी पक्के काम की टोपियां, जरमन सिलवर, पीतल, एल्मोनियम के बरतन नक्शे व सादे व जर्मन सिलवर, पीतल के हर किस्म के जेवरात सुनहरे व रुपहले, सुरती की गोलियां, सूंघने व पीने का तम्बाखू, हर तरह के लकड़ी व हाथी दांत के खिलौने, टिकुली, बिन्दी, ईंगुर सेंदुर वगैरह हमारे यहां से किफायत भाव से भेजे जाते हैं ।

हर चीज का भाव जानने के लिये)॥ का टिकट भेजकर हमारा बड़ा सूचीपत्र मंगाकर देखो ।

पताः—महादेवप्रसाद एण्ड एम० पी० आर्य्य

जनरल मर्चेन्ट एण्ड सप्लायर,

सराय हड़हा. बनारस सिटी ।

सनातनधर्मी भी अन्त्यज्य मनुष्यों की शुद्धि करते हैं यहां तक नास्तिक समाज अर्थात् देवसमाज के सभासदों ने कुछ चमारों लड़कों को शुद्ध करके अपने स्कूल में भरती कर लिया है।

स्त्रियों के लिये मेडिकल कालिज।

पाठकों को यह सुन कर हर्ष होगा कि दिल्ली में स्त्रियों लिये मेडिकल कालिज खुलना निश्चित होगया है जिसके लिये लाख रुपया का भी संग्रह हो चुका है।

हिन्दू विश्वविद्यालय।

हिन्दू विश्वविद्यालय के लिये पुनः श्रीमान् मालवीय जी ने क करना आरम्भ कर दिया है। मन्त्री के सूचना से ज्ञात होता है विश्वविद्यालय का चन्दा अनुमान १५ लाख रुपये के आगया और १० लाख रुपये आने पर सर्कार चार्टर दे देगी।

बर्मा की यात्रा।

श्रीमान् पं० केशवदेवशास्त्री बर्मा देश के लिये अक्टूबर मा में रवाना होंगे। वहां पर धर्म प्रचार करते हुये आप दिसम्बर मा के अन्त तक देश लौट आवेंगे।

आर्य समाज दिल्ली।

आर्य समाज, सदर बाजार दिल्ली का वार्षिकोत्सव समारोह के साथ २६, २७, २८, २९ और ३० सितम्बर को मना जावेगा। मंत्री जी लिखते हैं कि आर्यसमाज के सब महानुभावों प्रार्थना है कि यहां पर उत्सव में सम्मिलित हों जिससे धर्म प्रचार सुगमता पूर्वक हो सके।

भूल सुधार।

नवजीवन में जो लेख "घोर अत्याचार" के नाम से कि पिछले अङ्क में छपा था और जिस में बतलाया गया था कि स्वा नित्यानन्द के मकानों पर ज़वरदस्ती कबज़ा कर लिया गया उन में से एक मकान ८ आना मासिक प्रजावट पर ज़मीन ले बनवाया गया है वहां पर आठ आना वार्षिक चाहिये न कि ८ अ मासिक।

Printed by Pt. Baijnath Jijja, Manager at the Tara Printing Wo
Benares, and Published by Keshava Deva Shastri,
Dasaswamedh, Benares City.

नवजीवन

—:o:—

गत वर्ष के नवजीवन की सजिल्द किताब तय्यार हो गई है । अनुमान ७५० पृष्ठ की पुस्तक भिन्न २ विषयों से अलङ्कृत है । मूल्य नवीन ग्राहकों के लिये केवल २) रु० मात्र । शीघ्र मंगवावें, क्योंकि थोड़ी सी कापियां तय्यार हुई है ।

भारत की वीर माताएं

पं. ललिता प्रसाद जी द्वारा संगृहीत । २७० पृष्ठ की पुस्तक । भिन्न भिन्न स्थान की वीर माताओं के वृतान्त । मूल्य केवल ॥=) मात्र ।

मिलने का पताः—प्रबन्धकर्त्ता नवजीवन ।

एक बार अवश्य पढ़िये ।

बनारस का बना हुआ हर किस्म का माल जैसे रेशमी साड़ी जरी की व सादी, पीताम्बर, चद्दर जनाना व मरदाना, दुपट्टा (सेल्हा) साफा सादे व जरी के काम के ।

काशीसिल्क के थान, मेरट की व बनारसी पक्के काम की टोपियां, जरमन सिलवर, पीतल, एल्मोनियम के बरतन नची व सादे, व जर्मन सिलवर, पीतल के हर किस्म के जेवरात सुनहरे व रुपहले, सुरती की गोलियां, सूंघने व पीने का तम्बाखू, हर तरह के लकड़ी व हाथी दांत के खिलौने, टिकुली, बिन्दी, ईंगुर सेंदुर वगैरह हमारे यहां से किफायत भाव से भेजे जाते हैं ।

हर चीज का भाव जानने के लिये)॥ का टिकट भेजकर हमारा बड़ा सूचीपत्र मंगाकर देखो ।

पताः—महादेवप्रसाद एण्ड एम० पी० आर्य्य
जनरल मर्चेन्ट एण्ड सप्लायर,
सराय हड़हा. बनारस सिटी ।

नवजीवन बुक डिपो काशी।

हमारे नवजीवन बुक डिपो में स्त्री शिक्षा की तथा अन्य उत्त[म] पुस्तकें विक्रयार्थ मंगाई गई हैं। अब ऐसा सुप्रबन्ध हो गया है [कि] मांग के साथ ही पुस्तकें तुरंत भेज दी जाती हैं। पाठक यह विच[ार] रक्खें नवजीवन का जैसा धार्म्मिक तथा सामाजिक उद्देश्य है वै[सी] ही उत्तम २ पुस्तकें यहां से मिलती हैं। कुछ पुस्तकों का सूची [पत्र] यहां दिया जाता है। ५) रुपये से अधिकके खरीदने वालों को उ[चित] कमीशन भी दिया जाता है। जो लोग पुस्तकें मंगाना चाह[ें] वे निम्न लिखित पते से मंगावें:—

मैनेजर नवजीवन बुकडिपो काशी।

—ः पुस्तकों का सूचीपत्र ः—

१ सीता चरित्र ५ भाग पृष्ठ ७०० के लगभग—— १।।=)
२ नारायणी शिक्षा— १।)
३ स्त्री सुबोधिनी १।)
४ नारी धर्म विचार १ भाग ।।)
... ... २ भाग १)
५ महिला मंडल २ भाग ।।।)
६ रमणी पंचरत्न ।)
७ गर्भ रक्षा विधान ।।)
८ धर्म बलिदान =)
९ वनिता विनोद १)
१० भारत की वीर तथा विदुषी स्त्रियां २ भाग ।।=)।।
११ सच्ची देवियां ।=)
१२ चन्द्रकला सच्चा उपन्यास।)
१३ लक्ष्मी एक रोचक और शिक्षा प्रद उपन्यास ।)
१४ रमणी रत्नमाला ।=)
सत्यार्थ प्रकाश १)

ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका
संस्कार विधि
महाबीर जी का जीवनच[रित्र]
महात्मा बुद्ध का जीवनचरित्र
भीष्म का जीवनचरित्र
वीर्य रक्षा
उपदेश मंजरी
स्वामीजी का जीवन
श्री रामविलास शारदाकृत
धर्म शिक्षा १ भाग
वीरबालक अभिमन्यु
हलदी घाटी की लड़ाई
राणा प्रतापसिंह की वीरता
एकान्त वासी योगी
भारत की वीर माताएं मूल्य
आर्य्यों का आत्मोत्सर्ग
प्रोफेसर राममूर्ति की कसरत
और अन्य २ पुस्तकें मंगाने का
मैनेजर नवजीवन बुकडिपो का[शी]

A. 474 [ओ३म्] रजिस्टर्ड नं० ४७४

नवजीवन

Nawajiwan

सम्पादक—केशवदेवशास्त्री

विषय सूची ।

भाग ४ (अक्टूबर १९१२) अङ्क ७

वार्षिक मूल्य ... ... ३) रु०

एक प्रति का मूल्य ...... ।-)

श्रीयुत लाला लाजपतरायजी
प्रधान आर्य्यकुमार सम्मेलन, सहारनपूर

ओ३म्

नवजीवन ।

उदयति यदि भानुः पश्चिमे दिग्विभागे
प्रचलति यदि मेरुः शीततां याति वन्हिः ।
विकसति यदि पद्मं पर्वताग्रे शिलायां
न भवति पुनरुक्तं भाषितं सज्जनानाम् ॥

भाग ४. | अक्टूबर, १९१२ | अङ्क ७

प्रार्थना ।

परीत्य भूतानि परीत्य लोकान् परीत्य सर्वाः प्रदिशो दिशश्च । उपस्थाय प्रथमजामृतस्यात्म-नात्मानमभि संविवेश ॥

परम पिता परमात्मन् ! प्रकाश की गति बहुत शीघ्र है । उस की गति फी सेकेन्ड में १,८६,००० मील की है । सूर्य से पृथिवी तक प्रकाश के आने में अनुमान आठ मिनट लगते हैं। किन्हीं नक्षत्रों से प्रकाश के पहुंचने में घंटे और दिन लग जाते हैं । बहुत से ऐसे तारागण हैं जिनका प्रकाश पृथिवी तक वर्षों में पहुंचता है । इस भौतिक सूर्य से भिन्न अन्य सूर्य भी हैं जिनका प्रकाश हज़ारों और लाखों वर्षों में आता है । हे भगवन् ! आपही ने उनको ज्योति प्रदान की है । आपही के नियम से समग्र विश्व का कार्य चल रहा है । आप वहां भी व्यापक और परिपूर्ण हो रहे हैं । सब लोक, सब दिशा और उपदिशा आपकी महिमा को गारहे हैं । कोई स्थान आप से शून्य नहीं है । परमात्मन् ! हमको बुद्धि प्रदान करिये जिससे हम अपने को आपके समीप ही सर्वदा चिन्तन करके, सब दुखों से छूट, परमानन्द को प्राप्त होवें ।

ओ३म् शम् ॥

उपदेश ।

उन्नति का मार्ग ।

सम्प्रति पृथ्वी के सब देशों में उन्नति की ध्वनि गूंज रही है। देशों के प्रान्तों में भी उन्नति करने की चेष्टा की जा रही है। यह बीसवीं शताब्दि का सौभाग्य समझना चाहिये कि प्रत्येक देश जाग्रति के चिन्हों को अनुभव करने लगा है। परन्तु वास्तविक उन्नति होती है या नहीं, यह तो दूसरी बात है। देशों के राज्य शासन प्रणाली में परिवर्तन होरहे हैं, नाना प्रकार के नियम उन्नति का मार्ग अकण्टक बनाने के लिये प्रचलित करना पड़ते हैं। बहुत से मनुष्य भाग्य के ऊपर नितान्त भरोसा करके उन्नति की अभिलाषा करते हैं। हमारे वेदों और सत् शास्त्रों में जहां पर कर्म करके जीवनोद्देश्य पर पहुंचने का आदेश है वहां पर आज भारत के मनुष्य प्रायः कर्म से मुख मोड़ कर जीवनयात्रा व्यतीत करते हैं। यही कारण है कि उन्नति का मार्ग सुगम होने के विपरीत विषम होता हुआ प्रतीत होता है। यद्यपि संसार के मनुष्यों ने शारीरिक उन्नति के लिये व्यायाम के नियमों को प्रचलित किया है, मानसिक उन्नति के लिये थोड़े ही मूल्य में पुस्तकें प्राप्त हो सकती हैं, पुस्तकालयों तक हर एक मनुष्य की पहुंच हो सकती है तौभी आत्मिक उन्नति वैसी नहीं की गई है। आत्मिक उन्नति के लिये सबसे आवश्यक बात यह है कि हम जिन गुणों और शुभ कर्त्तव्यों का उपदेश अन्य मनुष्यों को करैं, उनको हम स्वयम् अपने जीवन में चरित्रार्थ करने की पूर्ण चेष्टा करैं, क्योंकि उपदेश की अपेक्षा दृष्टान्त और उदाहरण मनुष्यों की आत्मिकोन्नति के लिये बहुत ही हृदयग्राही होते हैं। उन्नति का मार्ग बहुत ही सुगम हो जाय यदि भारतवर्ष देश में सुचरित्रवान पुरुष थोड़े से उत्पन्न हो जायं। वर्तमान समय में धर्म के मर्म को न समझ कर, बाह्य आडम्बरों को धारण करनेवाले मनुष्य धर्मात्मा समझे जाते हैं। आवश्यकता इस बात की है कि दूसरों को बतलाया जाय कि मन में शुभ संकल्पों और उच्च आदर्शों को रखते हुये, अपने रहन सहन और भोजन छादन में बनावटी बातों को निकाल कर, उनके स्थान पर सादगी से जीवन व्यतीत करने

को प्रचार किया जावे । प्रत्येक मनुष्य सदाचार के गुणों को ग्रहण करें। सहनशीलता, क्षमा और स्वाध्याय से अपना और दूसरों का उपकार करें क्योंकि मानव समाज व्यक्तियों से बनी हुई है। यदि उस समाज के प्रत्येक मनुष्य सुचरित्रवान और सदाचारी बन जावें, तो वे अपने जीवन के प्रकाश में दूसरों के हृदयों पर प्रभाव डाल सकते हैं। तभी उन्नति का मार्ग सुगम हो जायगा।

सम्पादकीय वक्तव्य।

मद्रास में प्रचार।

यदि हम भारतवर्ष के ऊपर दृष्टिपात करते हैं तो हम को ज्ञात हो सकता है कि किन २ प्रान्तों में वैदिक धर्म का प्रचार अधिक है। विशेष करके पञ्जाब और संयुक्त प्रान्त में ही एक जन समूह को वैदिक धर्म का अनुयायी होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। किन्तु इन दोनों प्रान्तों में एक महान अन्तर पड़ जाता है। पञ्जाब में आर्य समाज के सभासदों की संख्या भी अधिक है और वहां पर उनके द्वारा अमली कार्य भी बहुत हो चुका है। इसके विपरीत इस प्रान्त की अवस्था शोचनीय है। यद्यपि इस प्रान्त में खानपान, छुआ छूत का आडम्बर और भी अनेक कुरीतियों पर आर्यसमाज का विलक्षण प्रभाव पड़ा है तो भी यहां पर अमली जीवन की अभावता सी देख पड़ती है। बम्बई प्रान्त में आर्यसमाज का थोड़ा बहुत प्रचार है। शोक से कहना पड़ता है कि मद्रास प्रान्त की ओर किसी महानुभाव उपदेशक का ध्यान आकर्षित नहीं हुआ था। गत वर्ष प्रो० रामदेव के अंग्रेजी व्याख्यानों से वहां पर आर्यसमाज स्थापित हो गई थी। हर्ष की बात है कि दो तीन उत्साही सभासदों द्वारा आर्यसमाज का प्रचार हो रहा है। इसके साथ ही साथ आर्यभाषा के प्रचार की ओर पूर्ण उद्योग किया जा रहा है। गत मास में स्थानिक आर्यसमाज के मन्दिर में इसी के ऊपर एक व्याख्यान भी हुआ था।

आर्य सम्पादक समिति।

सद्धर्म प्रचारक के योग्य सम्पादक ने प्रस्ताव उपस्थित

किया है कि भारतवर्षीय आर्य्य सामाजिक पत्रों के सम्पादकों की एक सामिति संगठित होनी चाहिये । यह एक निर्विवाद विषय है कि बीसवीं शताब्दि में प्रेस और समाचार पत्र एक शक्ति है जिस के सद्प्रयोग पर न्यूनाधिक हमारी उन्नति का आधार है । भारतवर्ष के वर्तमान इतिहास में आर्य्य समाज का काम सामाजिक स्थिति में जविन का संचार करना है । मृतवत तथा प्राणों से शून्य शरीर में रक्त का संचलन वेग से होने लगा । शारीरिक बल के साथ साथ आत्मिक बल का भी प्रादुर्भाव हुआ । यद्यपि और भी शक्तियां जीवन की वृद्धि में सहायक हो रही हैं परन्तु सामाजिक जीवन में प्रधान और प्रशंसनीय भाग आर्य्य समाज का ही है। भारतवर्ष की जनसंख्या के सामने गिने चुने आर्य्य पुरुषों की शक्तियां कितनी परिमित हैं और जब वह भी परस्पर के वैमनस्य में विनिष्ट की जायें तो अत्यन्त शोक का स्थान बन जाता है । हम सहर्ष इस प्रस्ताव का अनुमोदन करते हैं और यथा सम्भव इस कार्य्य के भार उठाने वालों को सहायता देने का भी विश्वास दिलाते हैं । यदि मैत्री के एक साधन को हम धारण कर लें और अपने विरोधियों तथा विद्वेषियों से भी प्रेम करना सीख लें तो निस्सन्देह हमारी समग्र शक्तियां वैदिक धर्म्म रूपी विशाल भवन के निर्माण करने में लगेंगी और हमारा सच्चा प्रेम हमें कभी भी तुच्छ से तुच्छ आर्य्य समाज के सेवक को निरादर करने की आज्ञा न देगा, जो इस भवन की अभिवृद्धि में प्रयत्नवान हो रहा है । क्या ही अच्छा हो यदि इस विचार में प्राण डालने के लिये प्रस्तावकर्त्ता महोदय अग्रसर हों ॥

काशी में महर्षिकुल ।

काशी वालों की प्रत्येक चाल न्यारी होती है । सभा बने तो "समाज रक्षक सभा" या "महामण्डल संस्कार समिति" या "काशी विद्वत्सभा", जिसका काम यह हो कि लघुकौमुदी तथा हितोपदेश में परीक्षा देने पर उसे विद्यालङ्कार की उपाधि दे दें। ब्रह्मचर्य्य आश्रम खोलेंगे तो उसका नाम होगा महर्षिकुल, उपदेशक पाठशाला बनेगी तो "महोपदेशक पाठशाला" चाहे विद्यार्थी चार भी न हों बाहर के लोगों को काशी के अगाध समुद्र की गति

का बोध नहीं हो सका । हम कृतघ्न होंगे यदि हम यह न मानें कि शिवपुर काशी का अन्नपूर्णा महर्षिकुल वैदिक सिद्धान्त का प्रचार कर रहा है । कुल के दैनिक कार्य्यक्रम में मूर्त्तिपूजा को स्थान ही नहीं मिला । नियमावली के उपनियम तथा उद्देश्यों की ११ वीं धारा में स्पष्ट लिखा है कि "शीतकाल में ५ बजे ग्रीष्म काल में ४ बजे प्रातः सूर्य्योदय से पहले उठकर ईश्वर प्रार्थनोत्तर शौच, स्नान सन्ध्या और अग्निहोत्र कर्म सूर्य्योदय तक करें"॥ ऐसे ही सायङ्काल को "७॥ बजे तक शारीरिक परिश्रम स्नान, सन्ध्या और व्यायाम करना होगा". अस्तु प्रातः सायं सन्ध्या और केवल प्रातःकाल हवन इनका तो कार्य्यक्रम में समावेश हो गया और मूर्तिपूजा नितान्त काशी की वृद्धा स्त्रियों तथा पण्डितों के लिये रह गई । इस कुल के अन्य नियम तो प्रायः गुरुकुलों के सदृश हैं । हां, ब्रह्मचर्य्य २५ वर्ष के स्थान में २० वर्ष का होगा । द्विजातियों के बालक मिलकर रहेंगे वैश्य और क्षत्री गायत्री के स्थान में एक ही गुरूमन्त्र रहेगा । रहेंगे सभी ब्रह्मचारी भ्रातृभाव से और "सब ब्रह्मचारियों के ऊपर समान वर्ताव रहेगा वरञ्च पाकशाला में भोजन की पंक्ति तीनों वर्णों की पृथक पृथक रहेगी । खूब! कहिये पाठक! "जो काम किया बेमिसाल किया" की लोकोक्ति काशी के पण्डितों पर चरितार्थ होती है या नहीं। अच्छा, महर्षिकुल कोचिरायु लाभ हो ।

डाक्टर रिचर्डसन का श्राद्ध ।

चिरस्मरणीय डाक्टर आर्थर रिचर्डसन हिन्दू कालिज के प्रथम प्रिन्सिपल थे । आप ने आत्मसमर्पण के उच्च आदर्श को ग्रहण कर जिस प्रेम और नम्रता से हिन्दूकालिज की उन्नति में भाग लिया उस के लिये थियासोफिस्ट विशेषतया और हिन्दु-मात्र साधारणतया आप के अनुगृहीत हैं और इस सेवा के लिये चिरकाल पर्य्यन्त बाधित रहेंगे । श्रीयुत हरशङ्कर प्रसाद उपाध्याय ने उक्त डाक्टर महोदय का सचित्र जविन चरित्र लिखा है जो ≡) मात्र से मिल सक्ता है । काशी के कतिपय पण्डितों ने भी उदारता दिखलाई और उन की मृत्यु पर हार्दिक दुख को प्रगट किया परन्तु सब से उत्तम और हिम्मत का काम जो पण्डितों ने किया वह डाक्टर रिचर्डसन का श्राद्ध था । ग्रन्थकर्त्ता के अपने

शब्दों में स्थानीय रईस श्रीमान कालिया साहेब चन्दन लेकर खड़े हुए। अन्यान्य कई रईस अक्षत, पुष्पादि लेकर खड़े हुए। माननीय ब्राह्मणगण क्रम २ से आगे बढ़ते और उक्त स्थानीय रईस उन्हें चन्दन, अक्षत और मालों से सुशोभित करते, इसके बाद पूज्यनीय ब्राह्मणों के हाथ २) रुपये दक्षिणा और पेड़े दिये जाते थे। इस प्रकार कितने ही ब्राह्मणों ने दक्षिणा सहित पूजित हो रिचर्डसन साहब की शान्ति के लिये आशीर्वाद दिया। यह तो प्रसन्नता का विषय है कि डाक्टर रिचर्डसन के अन्तेष्टि कर्म तथा श्राद्ध होने से वह हिन्दू धर्म्मी मान लिये गये, और जिन पण्डितों ने यह काम कराया उन्हें बिरादरी में रहने दिया गया। हिन्दू पण्डितों की उदारता तो प्रशंसनीय है क्योंकि नित्यम्प्रति सनातन धर्म रबड़ के समान फैलता जाता है परन्तु आश्चर्य्य क्या यदि फिर भी पण्डित शुद्धि का विरोध करें।

मि० गोखले की यात्रा।

मि० गोखले की प्रारम्भिक शिक्षा की बिल, जो बड़े लाट महोदय की कौन्सिल में उपस्थित की गई थी, यद्यपि कानून के रूप में नहीं बन गई है, तौ भी उस के आन्दोलन के चिन्ह अभी पाये जा सकते हैं। लाहौर की 'प्राइमरी यूडीकेशनलीग', बनारस की 'प्रारम्भिक शिक्षा समिति' और मद्रास की शिक्षा की लीग, ये सब की सब उसी बिल के फल हैं। इसी प्रारम्भिक शिक्षा का आन्दोलन करने के लिये मि० गोखले महोदय बिलायत में गये थे। वहां पर भारत निवासियों ने उनका बड़ा स्वागत किया था मि० गोखले ने अपनी व्यक्ति और वक्तृता से सम्प्रति भारतवर्ष में शिक्षा की आवश्यकता के ऊपर बड़े २ अंग्रेजों का ध्यान आकर्षित किया जिस से कुछ प्रभाव तो अवश्य उत्पन्न हुआ है। इतना कार्य करने के पश्चात् उन्हों ने दक्षिणी अफ्रीका के लिये प्रस्थान किया है जहां पर भारतवासी अनेक प्रकार से पीड़ित किये जाते हैं। अफ्रीका के जाने वाली जहाज़ की कम्पनी से उन्हों ने पहिले दर्जे की टिकट ली परन्तु जब यह ज्ञात हुआ कि मि० गोखले तो भारतवासी हैं तब क्या था, इनसे पूरे एक कैबिन का भाड़ा मांगा जाने लगा जो प्रायः ड्योढ़ा होता है। इस की युक्ति यह थी कि कोई श्वेतवर्ण

का मनुष्य इनके साथ यात्रा करना अभीष्ट नहीं समझूंगा । परन्तु इन्हों ने इसका बड़ा विरोध किया । अन्त में ये फली भूत हुये । यह वर्णों का बितण्डा नूतन सभ्यता का एक बड़ा शोचनीय कालिमा है।

अछूत जातियों का उद्धार ।

जहां हिन्दुओं में स्त्री शिक्षा, सामाजिक सुधार, बाल्य विवाह का निषेध और अन्य कुरीतियों के निवारणार्थ इन सबके ऊपर आन्दोलन करने की आवश्यकता समय और देश को देखते हुये, सम्यक रूप से प्रतीत होती है, वहां अन्त्यज्य जातियों को शिक्षा प्रदान करना, उनके साथ सामाजिक व्यवहार खोलना और उनके यथार्थ में मनुष्य बनाने का प्रयत्न करने की भी आवश्यकता है । गत-मास में श्रीलोकमान्य लालालाजपति रायजी ने इन्हीं अछूत जातियों के उद्धार पर एक बड़ा रोचक और प्रभावशाली व्याख्यान स्थानिक बिश्वेश्वर थियेटरहाल में दिया जहां पर निश्चित समय के दो तीन घण्टों के पूर्व ही से श्रोतागणों के दल के दल उपस्थित होने लगे यहां तक कि व्याख्यान देने के समय तक ५ या ६ सहस्र मनुष्य एकत्रित होगये यद्यपि गर्मी बहुत थी, तौ भी श्रोतागण सावधानी से अनुमान दो घण्टों तक बैठे रहे । नियमित समय पर सभा की कार्यवाही आरम्भ कीगई । कुछ सज्जन लालाजी को परिचित कराने के लिये उठे । तदन्तर श्रीमान लालाजी ने अपनी वक्तृता प्रारम्भ की जिसका सारांश निम्न लिखित था । उन्हों ने बतलाया:-

पाश्चात्य देशों में मनुष्य की समानताके ऊपर बहुत ज़ोर दिया जा रहा है और *Equality of man* अर्थात् समानता स्थापित करने का प्रयत्न किया जा रहा है । यह उनका कार्य नितान्तः निष्फल सिद्ध हो रहा है । संसार पर दृष्टि डालिये सर्वत्र भिन्नता और वैचित्रता ही दिखाई पड़ते हैं । पृथ्वी पर की कोई भी दो वस्तुयें समान नहीं होती हैं फिर मनुष्य का क्या कहना । कोई तो विद्वान है, कोई तो मूर्ख ही है, कोई धन से सम्पन्न है और कोई धन हीन है । इस से सिद्ध होता है कि समानता होना असम्भव प्रतीत होता है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है समाज के बिना उसका कार्य नहीं चल सकता है अतएव यह आवश्यक बात है कि समाज को सुदृढ़ बनाने के लिये कार्यों का विभाग होना चाहिये । इसी उद्देश्य से ऋषि और महर्षियों ने वर्ण व्यवस्था गुण कर्म स्वाभावानुसार

चलाइ थी। मनुष्य समाज एक शरीर के समान है और जैसे शूद्रों को पैर बतलाया जाता है, वैसे ही ब्राह्मण को मुख की उपमा दी जाता है। यदि पैर में कोई घाव हो जाता है तो मनुष्य उस को दवाई और साबुन से धोते हैं, इसी प्रकार से आज कल यह आवश्यक है कि शूद्रों और अन्त्यज्य जातियों के अन्दर शिक्षा का प्रचार किया जावे जिस में वे भली प्रकार से अपने कार्य सम्पादन कर सकें।

यदि अन्त्यज्य जातियों के उद्धार के लिये कोई शास्त्रीय प्रमाण हम चाहते हैं तो मनुजी अपनी स्मृति में लिखते हैं कि जिस देश में शूद्रों की संख्या द्विजों की अपेक्षा अधिक हो जाती है वह देश दुर्भिक्ष, अकाल और महा मारियों का ग्रास बन जाता है। आज वही दशा प्रत्यक्ष दिखलाई पड़ती है। आज क्या कारण है कि यहां पर लाखों मन अनाज उत्पन्न होता है किन्तु खाने को कुछ भी नहीं मिलता है और दुर्भिक्ष पड़ते रहते हैं। यहां पर मनुष्यों की कमती नहीं है किन्तु शक्ति की अभावता है जो सर्वदा द्विजों से ही हुआ करती है। गत जन संख्या से ज्ञात होता है कि यहां अनुमान ६ करोड़ अछूत जातियों के मनुष्य हैं और अनुमान इतने ही शूद्र भी (अर्थात् अहीर, कहार इत्यादि) होंगे तो २० करोड़ में से, जो हिन्दुओं की जन संख्या है, केवल ५ या ६ करोड़ ही द्विज शेष रह गये। मनुस्मृति में यह भी आता है कि जिस द्विज को वेद और संध्या नहीं आती वह काठ के हाथी के समान है। यदि इस नियम से देखा जाय तो बहुत कम द्विज ऐसे मिलते हैं जो वास्तविक द्विज हैं। तो इन काठ के हाथी रूपी द्विजों को क्या अधिकार है कि वे धर्म के नाम से दूसरों के ऊपर अत्याचार करें और अछूत जातियों को शिक्षा के अमृत से वञ्चित रक्खें। मुसलमान और ईसाइयों में धर्म का भाई बराबर होता है परन्तु यहां पर जब तक एक मनुष्य हिन्दू रहता है तब तक उसका सम्मान नहीं किया जाता और उसको स्पर्श करने से घृणा करते हैं। यदि वही मनुष्य ईसाई और मुसल्मान हो जाता है तब हिन्दू छूते हैं और सलाम तक करते हैं इसका कारण सिवाय अज्ञानता के और क्या हो सकता है। अतः हिन्दुओं की उन्नति के लिये इन अन्त्यज्य जातियों को शिक्षा प्रदान करना बहुत ही आवश्यक है। अन्य कई लौकिक दृष्टान्तोंकोदेते हुये श्रीमान्लालाजी ने अपनीवक्तृता कोसमाप्तकिया

वैज्ञानिक वार्तालाप।

(पं० शिवनारायण शुक्ल बी० ए० लिखित)

मेरठ के जिले में एक ग्राम दाऊदपुर नामक है। इसी ग्राम में दो कन्यायें रमा और कौशिल्या नाम की रहती हैं। रमा का बड़ा भाई कालिज में पढ़ता है। गर्मियों की छुट्टियों में वह अपने घर पर आया है। रमा के बड़े भाई का नाम प्रद्युम्नकिशोर है प्रद्युम्नकिशोर को शरीर-विद्या (Physiolgy) से बड़ा प्रेम है। वह दिन रात इस की किताबें पढ़ता है। यही नहीं, वह अपनी बहिन रमा को भी उस से बहुत कुछ परिचित करा चुका है।

रमा अपने कमरे में बैठी हुई कुछ पढ़ रही है। इतने में उस की सखी कौशिल्या आगई। कौशिल्या को देखकर रमा ने उठकर नमस्ते की और गले में हाथ डालकर आदर और प्रेम के साथ कौशिल्या को बिठलाया।

कौशिल्या:—कहो प्यारी रमा! तुम तो अब किताब की कीड़ा ही बनी जाती हो। सखियों से मिलना जुलना, उनके घर आना जाना तो तुमने बन्द ही कर दिया।

रमा:—नहीं सखी! मेरे कम आने जाने से यह मत समझो कि मुझे अपनी सखियों से प्रेम कम हो गया। बात यह है कि आज-कल मेरे जेष्ठ भ्राता जी गर्मियों की छुट्टियों में आये हैं। वह मुझे शरीर सम्बन्धी बड़ी २ विचित्र बातें बताया करते हैं।

कौशिल्या:—तो क्या सब अपने आप ही सीख लोगी, हमें भी कुछ बताओ।

रमा:—अभी तो मुझे केवल एक सप्ताह तक उनके साथ पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। इतने थोड़े समय में तो बहुत थोड़ी बातें उन्हों ने बतलाई हैं।

कौशिल्या:—अच्छा तो कुछ थोड़ी सी हमें भी बताओ।

रमा:—अच्छा तो सुनो। देखो शरीर की बनावट के विषय में मैं तुम्हें कुछ बातें बताती हूं। मनुष्य स्वाँस के द्वारा जीवित रहता है। जब तक स्वाँस चलता रहेगा तब तक मनुष्य जीवित रहेगा। जिस नली से स्वाँस लिया जाता है उसको वायु नली कहते हैं।

शरीर को तीन भागों में विभक्त करो। देखो एक तो शिर हाथ

इत्यादिक हैं। फिर नीचे उतर कर वक्षस्थल, फेफड़ा, और उस नीचे पेट, पेडू और जँघा पाँव इत्यादिक।

कौशिल्याः–अच्छा तो यह कैसे मालूम हो कि यहा हड्डि हैं और यहां मांस।

रमाः—अच्छा देखो अपनी गर्दन के नीचे अंगुली रक्खो और अगुँली से नीचे की ओर हड्डियां टटोलो। जब हड्डियां न मालूम हो तो समझलो कि तुम्हारी अंगुली तुम्हारी छाती के नीचे पहुंच गई उसके नीचे पेट है। जब हमने कोई पदार्थ खाया तो वह नली द्वारा पेट में पहुंचा। वहां पचाया गया और जो मल इत्यादिक बचा व अंतड़ियों में से होकर बाहर चला गया।

कौशिल्याः—अच्छा तो यह तो मैं समझ गई। अब य बताओ कि इस शरीर में क्या क्या है ?।

रमाः–शरीर के ऊपर चर्म है। यदि चर्म हटा दिया जाय त चरबी निकल आयेगी, चरबी के नीचे मांस मिलेगा और उस नीचे हड्डियों का ढांचा या पंजर। जहां एक हड्डी दूसरी हड्डी मिलती है जैसे अंगुलियों में, वहां पर एक गांठ सी दिखाई देती है इस के अतिरिक्त छोटी २ नसों का एक बड़ा भारी जाल इस शरी में पड़ा हुआ है।

कौशिल्याः–यह चर्म, रक्त, हड्डी इत्यादिक किस चीज़ की बनी हुई हैं ?।

रमाः—देखो जिस प्रकार एक लकड़ी को जलाने से कुछ त उसका धुआं हो जाता है और कुछ राख बन जाती है इसी प्रका मनुष्य शरीर भी जलने के पश्चात् कुछ गैस अर्थात् धुएं के स्वरू में हो जाता है और कुछ दृढ़ राख के आकार में। रसायन वेत्ता ने मनुष्य शरीर में मुख्य २ कारबन, हाइडरोजन, ओक्सीजन, नाइट्रो जन, गन्धक, और चूना इन पदार्थों को बतलाया है। इन्हीं दो य तीन या अधिक के मिलाव से रक्त और हड्डियां इत्यादिक बनती हैं उदाहरणार्थ जल में एक भाग आक्सीजन और दो भाग हायडरो जन के हैं। हड्डियों में अधिक भाग चूने का है।

कौशिल्याः–प्यारी रमा ! मैं बड़ी अनुगृहीत हूं कि तुम

कष्ट उठा कर मुझे इन बातों को बतलाया। मुझे बड़ा खेद है कि हिन्दी में कोई भी ऐसी पुस्तक नहीं जिस से साधारण बातों को भी हम लोग जान जायें। तुमने तो भला अपने भ्राताजी से इस विषय में कुछ ज्ञान प्राप्त कर लिया परन्तु मैं क्या करूं। अच्छा, प्यारी यदि तुम्हारी इच्छा हो तो ऐसा करें। तुम्हारे भ्राताजी जो २ बातें अंग्रेज़ी की किताब से बताते हैं उसको तुम एक कापी बना कर लिख लिया करो। बहिन! बड़े खेद की बात है कि हमारे यहां के साहित्य में ऐसी पुस्तकें नहीं हैं जिनकी सहायता से थोड़ी भाषा पढ़ा हुआ मनुष्य भी गूढ़ २ वैज्ञानिक विषयों का अपनी बोलचाल की भाषा में कुछ दिग्दर्शन मात्र कर सकें। अस्तु, अब समय भी अधिक हो गया है और तुम भी थक गई होगी क्योंकि उधर तो तुम्हें अपने भ्राताजी के साथ पढ़ने में परिश्रम करना पड़ा इधर अब घंटा भर के लगभग मेरे से शिरपच्ची कर रही हो।

रमाः—नहीं, मैं अभी नहीं थकी हूं। मुझे यह विषय ऐसा रोचक जान पड़ता है कि उस के छोड़ने को चित्त नहीं चाहता। बहिन! मेरे भ्राताजी कह रहे थे कि इसी प्रकार जब २ छुट्टी हुआ करेगी तब २ तुम्हें किसी वैज्ञानिक विषय की साधारण २ बातें बताया करेंगे। अब इस छुट्टी में तो शरीर—विज्ञान के विषय को ही लेंगे। फिर जब अगली छुट्टी होगी तो भूगर्भ-विद्या को लेंगे। उस में बतलावेंगे कि पृथ्वी, नदी, पर्वत किस प्रकार बने, पृथ्वी की आयु कितनी है. ज्वालामुखी इत्यादिक किन को कहते हैं।

कौशिल्याः—अच्छा तो मैं आप को फिर धन्यवाद देती हूं कि आप ने मेरे ऊपर दया करके इतना कष्ट उठाया। अब आगामी शनिवार को फिर आऊंगी। अभी तो शरीर—विज्ञान (Physiology) के विषय में ही बहुत सी बातें जानने को हैं।

अच्छा! अब मैं नमस्ते करती हूं और आप से जाने का आज्ञा चाहती हूं।

रमाः—अच्छा, नमस्ते। शनिवार को अवश्य आना, मैं आप की प्रतीक्षा करूंगी। निराश न करना।

(शिवनारायण शुक्ल बी. ए.)

देशभक्त।

(पं० उदित मिश्र लिखित)

मनुष्य को किसी न किसी प्रकार की भक्ति अवश्य करनी पड़ती है। बिना किसी का भक्त बने संसार में रहना असम्भव है। धार्मिक संसार में तो प्रारम्भ से लेकर मरण पर्यंत भक्ति तथा पूजा करने ही में समय बीतता है। मातृभक्ति, पितृभक्ति और भ्रातृभक्ति प्रभृति इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। सचमुच इस प्रकार का भक्त बनना मनुष्य जीवन के उद्देश्य की पूर्त्ति करना है। भांग का भक्त बनना। वेश्या पर तन, धन अर्पण करना। भूत, झूठ, अहंकार, लोभ, ईर्षा अर्थात् अनेक प्रकार के अविवेक उत्पादक विषयों का मनन करना, उत्तम लक्ष्य से गिरा कर जीवन को वैभव शून्य बनाता है। पुनः उद्योग करने पर भी भक्ति चर्चा दुख कारक होती है, किसी उत्तम विचार की पुष्टि करना दुस्तर हो जाता है, समय सात्विक भावों से शून्य विदित होता है, सर्वदा तमोगुण का प्रभाव शरीर और मन को उद्दण्ड बनाये रहता है। खाते, पीते, उठते, बैठते हर समय जो काम किया जाता है सब का परिणाम ज्ञान शून्य होने के कारण दुखदाई होता है। कृष्ण महाराज़ ने अर्जुन के प्रति उपदेश किया है कि "सत्वात् संजायते ज्ञानम्" अर्थात् सतोगुणी वृत्ति रखने से ज्ञानोत्पत्ति होती है। बिना ज्ञान के सहल से सहल कार्य भी सम्पादन नहीं हो सकता। अतएव देशभक्त बनने के लिये सतोगुणी होना परमावश्यक है। शास्त्रकारों ने बतलाया है कि बिना सात्विकी पुरुष के संसार से कुटुम्ब सा बर्ताव करना कठिन है और परम देशभक्त वही है जो बसुधा को कुटुम्ब मान कर कर्म-योग की उपासना में दत्तचित्त होकर संसार के दुख दूर करने में अपने तन, मन एवं धन किसी की कुछ भी चिन्ता न करें।

> अयंनिजः परोवेत्ति गणना लघु चेतसाम्।
> उदार चरितानान्तु वसुधैव कुटुम्बकम्॥

वेद तो प्रत्येक व्यक्ति को सांसारिक जनों के साथ परस्पर कौटुम्बिक व्यवहार करने के लिये बाध्य करता है। क्योंकि किसी प्रकार का अन्तर न दिखलाकर प्रत्येक स्थान पर पहले यह आदेश देता है कि हे मनुष्यो! जो अपना पिता, उत्पादक सर्वमोच्च सुखादि

कामों का विधायक, सब भुवन लोक लोकान्तरों धाम अर्थात् स्थिति के स्थानों को यथावत् जाननेवाला है उसी की उपासना सारे संसार को करनी योग्य है। उसी को सब का पिता मानकर मनुष्य मात्र को आपस में मित्रता का वर्ताव रखना चाहिये। यथा इस वेद मंत्र से स्पष्ट है।

दृते दृहं मां मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्।

इस वेदाज्ञा से प्रकट हुआ कि वेद को माननेवाले तथा उसका विश्वास करनेवाले लोगों को चाहिये कि मनुष्य मात्र को सहायता देने से कदापि विमुख न हों और जैसा मित्र के साथ बर्ताव किया जाता है उसी प्रकार का व्यवहार अमीर, गरीब, मूर्ख. पण्डित; बलवान, निर्बल अर्थात् सर्व साधारण से रक्खें। देश के किसी मनुष्य के दुख को सुनकर दुखी और सुख को सुनकर सुखी हों यही नहीं वरन् देश के किसी व्यक्ति के धूल समान दुख को पहाड़ सदृश समझकर उसके दूर करने के हेतु उद्योग करें। दूसरे के दुख के सामने अपने दुखको भूल जायें।

यथा तुलसीकृत रामायण में कहा है कि:—

जे न मित्र दुख होहिं दुखारी।
तिन्हैं बिलोकत पातक भारी॥
निज दुख गिरि समरज कै जाना।
मित्र के दुखरज मेरु समाना॥

प्रश्न कर्त्ता—क्या जो लोग वेदशास्त्र पढ़ते हैं. वे सब डोम, चमार को भी मित्र मानते हैं।

उत्तर दाता—मानना तो चाहिये क्योंकि वेद में स्पष्ट आज्ञा है कि मनुष्यमात्र से प्रेम करना मानो ईश्वर से प्रेम करना है।

प्रश्न कर्त्ता—इसका क्या कारण है कि बड़े २ लोग तो औरों के साथ मित्रता का बर्ताव करने को कौन कहे अपने से छोटे को मित्र कहते हुये लज्जा से आच्छादित हो जाते हैं।

उत्तर दाता—"बड़े लोग" आप किसको समझते हैं। क्या जो लोग सदैव निन्यानवे के फेर में रहकर अखबार देखने को भी

दुख समझकर गद्दी पर पड़े २ अमूल्य जीवन को रद्दकर डालते हैं उन्हीं को बड़ा आदमी कहना चाहिये।

प्रश्न कर्त्ता—जितने लक्षण आपने बतलाए हैं उनमें कई छूट गए हैं एक तो उनका व्यय बहुत होता है, दो एक रंडियां प्रति दिन द्वार पर खड़ी रहती हैं, निर्धन विद्यार्थी तथा पाठशाला निमित्त दान जिनकी महिमा बहुधा आप बतलाते हैं उस दान से सदा विमुख रहते हैं, उसमें द्रव्य खर्चना वे पागलपना समझते हैं।

उत्तर दाता—सभ्य समाज में ऐसे लोगों को देश का शत्रु कहते हैं।

प्रश्नकर्त्ता—मित्रता तो समान गुणवालों में होती है। यह कैसी बात आप बतलाते हैं? देखिये भंगड़ों की प्रीति भंग प्रियों ही से होता है। जुआड़ी के वक्त का खून जुआड़ियों ही के साथ होता है। लेकचरार पब्लिक को छोड़कर भाषा द्वारा अपने गोतही में मिलने के लिये उत्सुक रहते हैं। यहांतक कि वेद के परमभक्त आर्य समाजी भी केवल अपने ही भाइयों (आर्यसमाजियों) से मित्रता रखते हैं।

उत्तरदाता-भंगड़ों और जुआड़ियों का हाल मत कहो वे तो आपु गये धरु घालहिं आनाहिं लोकोक्ति की पुष्टि करते हैं। रहा लेकचरार का सो तुम अनुभवी विद्वान् वक्ताओं का व्याख्यान न सुनकर रास लीला तथा चीर लीला के समर्थन कर्ताओं का व्याख्यान सुने होगे वे तो अवश्य उत्तम उद्देश्य से गिरे हुये उपदेश तथा कार्य करेंगे आश्चर्य तो यह है कि शूद्र से ब्राह्मण बनानेवाले आर्यसमाजियों को तुम दोषी बताते हो तो तुम्हारी बुद्धि की बलिहारी है। आर्य पुरुष तो ईसाई,मूसाई,कुरानी, किरानी सब को आर्य बनाने (उत्तम गुणों से भूषित करने) में अनेकानेक विरोध उठने पर भी तय्यार रहते हैं। क्यों नशा में चूर होकर ऐसे सच्चे देश भक्तों को कलङ्कित करते हो।

निस्सन्देह बहुत से लोग अपने को सर्वोच्च अपने से इतर जनों को नीच समझते हैं। वे इस बात का विचार निज हृदय में अवश्य रखते हैं कि जो हमारे समान गुणवान तथा विद्वान होगा उस से हम सम्बन्ध रक्खेंगे अर्थात् मित्रता का वर्ताव करेंगे, परन्तु यदि दीर्घ दृष्टि से विचारा जाय तो वे सब प्रकार उच्च उद्देश्य से गिरे

हुए कहे जायेंगे क्योंकि संसार में यदि बलवान यह समझले कि हम दुर्बलों को दुखी करने के लिये पैदा हुए हैं, धनवान यह समझ कर बैठ जाय कि हमारा जन्म सब का सर्वमोचन करके सारे संसार को दरिद्र बनाने के हेतु हुआ है, इसी प्रकार सम्बन्धी जन एक दूसरे की सहायता करनी छोड़कर स्वार्थान्ध में मग्न हो जायें तो यह कहा जा सकता है कि ऐसे विचारवाले पैदा होते ही मर क्यों नहीं गये या जन्म न लेते तभी अच्छा था। इस प्रकार के परम स्वार्थी लोग दुनिया में व्यर्थ जन्म लेकर जन संख्या में वृद्धि किये हैं और अपने परमस्वार्थ के जाल को फैलाकर दुर्विचारों की वृद्धि कर रहे हैं। सच्च तो है यह कि द्रव्यवान का मान उसी देश में हो सकता है जहां दरिद्रों की उपस्थिति हो। जिनके धन से परिश्रमी, उद्योगी, सदाचारी और धर्मात्मा पुरुषों को प्रत्येक उत्तम कार्यों के सम्पादन करने के लिए सहायता मिलती है उन धनाढ्यों का मान सारे देश ही में नहीं वरन् सबलोक में भी होता है। ऐसे ही लोगों को दुनिया सन्मित्र (सच्चा देश भक्त) कहती है। जिसका लक्षण शास्त्रकारों ने स्पष्ट बतलाया है। यथा—

पापान्निवारयति यो जयतो हिताय,
गुह्यान्निगूहति गुणान् प्रकटी करोति।
आपद्गतं च जहाति ददातिकाले,
सन्मित्रलक्षणमिदं प्रवदन्ति सन्तः॥

अर्थात्—सच्चा देशभक्त वही है जो संसार से पापों को दूर करके औरों की कीर्ति और ऐश्वर्य की वृद्धि करता है। तथा दुख पड़ने पर तन, मन और धन सब प्रकार से सहायता करता है।

इस समय जितने विद्वान् हैं सब का कर्त्तव्य है कि मूर्खों की संख्या, उन्हें विद्वान् बनाकर कम करें, उनको विद्यादान दें, चाहे वे चमार हों या नीच से नीच व्यवसायी हो। प्रसन्नचित्त हो पढ़ायें और अखण्ड कीर्त्ति भागी बनें।

यदि विद्वान् होकर ऐसा नहीं करते तो जानना चाहिये कि अपने सब से बड़े भारी धर्म को पालन करने से दूर भागते हैं।

ऐसा करने में हमको अपनी कमजोरी के कारण अवश्य कुछ

कष्ट उठाना पड़ेगा क्योंकि हमारा स्वभाव कुसंस्कारों के कार
ऐसा खराब पड़ गया है कि अपने सामने दूसरे को उच्चासनासी
हुये भी नहीं देख सकते। यदि ऐसा अवसर कभी प्राप्त हो जाता
तो हृदय संकुचित करके अपनी दृष्टि को बिल्कुल अन्धा कर दे
हैं, इस युक्ति को चरितार्थ करके दिखा देते हैं । देखि न स
पराय विभूती। यही हाल, वार्तालाप, चाल, व्यवहार सब जग
रहता है। शान में ज़रा भी बट्टा आया कि स्वाभिमान(self-respect
का आधार लेकर लड़ने की तय्यारी कर देते हैं और शक्ति की कुछ
कुछ हानि करके तभी आराम लेते हैं।

बहुत से लोग तो यहां तक सोचते हैं कि हमारा बच्चा विद्
पढ़ने के लिए पैदा हुआ है और भंगी ने पुरोषागार कोही स्वच्छ
करने के हेतु जन्म धारण किया है । शोक तो यह है कि ऐसे
लोग देश भक्त और धर्म रक्षक होने की डींग मारते हैं !

कर्त्तव्य विमुख मनुष्य कोही अधर्मी कहते हैं, मनुष्य का जन
परोपकार करने के लिये हुआ है। मनुष्य को परम कर्त्तव्य परोप
कार करना है। विद्यादान देने से बढ़कर निर्मल परोपकार क्य
होगा, कहा है।

परोपकाराय फलन्ति वृक्षाः परोपकाराय वहन्तिनद्याः
परोपकाराय दुहन्तिगावः परोपकारार्थमिदं शरीरम्।

जो लोग अपने उत्तम उद्देश्यों से केवल छोटे २ स्वार्थ साधन
के हेतु गिरे जाते हैं कहा जा सकता है कि ऐसे लोग केवल मनुष्य
जन्म ही प्राप्त किये हैं । कुछ अपने उत्तम शक्तियों का प्रयोग
नहीं करते।

उत्तम कार्यों के सम्पादन करने में कष्ट मिलना इस बात को
सिद्ध करता है कि कार्य में सफलता होगी।

वही देशभक्त सफलमनोर्थ हैं जिसके देश में उत्तम विचारों
की वृद्धि हो। राग द्वेष की चर्चा कहीं नाम को भी न हो। झूठे
अभिमान को प्रत्येक व्यक्ति ने तिलांजुलि दे दियाहो। उत्तम, साहस
धैर्य, बल, बुद्धि और परोपकार इन छ उत्तम गुणों का स्थापन पूर्ण
रीति से होगया हो, ऐसे देश पर परमात्मा का परम कृपा रहती है
यथा:—

उद्यमं, साहसं, धैर्यं, बलं, बुद्धिः पराक्रमाः ।
षडेते यस्य विद्यन्ते तस्माद्देवोऽपि शङ्कते ॥

उदित मिश्र

———o———

हिन्दू-मुसलमानों के सम्बन्ध ।

जाति या कौम का भाव आजकल सारी पृथ्वी में उज्जागृत हो रहा है । विद्या की वृद्धि के साथ २ लोग इस सिद्धान्त पर पहुंच रहे हैं कि जाति ही कल्याणों का केन्द्र, जाति ही प्रकाश का मूल और जाति ही उन्नति का उत्पत्ति स्थान है । अतएव आधुनिक कवि जाति शब्द को अनेक उत्तम २ उपमाओं से उपमित करते हैं । अस्तु, इन भावों के साथ विशेष विरोध न जतलाते हुए हम अपना विचार प्रगट करते हैं । हमारा विचार है कि आधुनिक जाति का विचार (Conception) सांसारिक दुखों की निवृत्ति के लिये उत्पन्न हुआ है । लोग इस बात को अनुभव कर रहे हैं कि अनेक ऐहिक दुख, शारीरिक, मानसिक तथा सामाजिक, जातीय भावों के विकसित करने से निरस्त हो सकते हैं । अनेक देश जैसे संयुक्त प्रान्त अमेरीका तथा स्विट्ज़लैंड भिन्न २ मतों को रखते हुए भी अद्भुत देशभक्ति का परिचय दे रहे हैं ।" इस देश भक्ति के भावों से प्रेरित हो कर उन्हों ने अपने देशों को उन्नति और कल्याण का नमूना बना दिया है । वह इस बात को अनुभव करते हैं कि प्रकाश, स्वास्थ्य विद्या और कल्याण सब के लिये साझा होना चाहिये । सांसारिक अन्धेरे, रोग, अविद्या और दुख की निवृत्ति में सबका साधारण प्रयोजन (Common interest) है, चाहे वह लोग किसी मत के हों । यदि एक मुसलमान के घर में आग लग गई हो और उसका हिन्दू पड़ोसी इस लिये उसको सहायता न करे कि उस अग्नि पीड़ित गृह का स्वामी मुसलमान है, जिस प्रकार यह हिन्दू महा-मूर्ख और आत्मघाती समझा जावेगा, इसी प्रकार पश्चिम के बड़े २ विद्वान् उन लोगों को पतितावस्था में समझते हैं जो एकत्र हो कर सांसारिक क्लेशों की निवृत्ति का उपाय नहीं करते । पस, साधारण प्रयोजन का विचार ही जातीय भावों का केन्द्र है ।

भारतवर्ष में भी जातीय भावों की लहर अनेक वर्षों से प्रार
हुई है। इसी लहर ने बूढ़े भारत को नवीन भारत बना दिया
परन्तु नवीन भारत के लिये अभी प्रारम्भिक शिक्षा का समय
और वह उच्च शिक्षा जो अनेक तजर्बों और आघातों के पश्
ही मिल सकती है, उसके लिये अभी पर्याप्त काल चाहिये। निस्
न्देह भारतवर्ष को जातीय भाव के चरितार्थ करने के लिये अ
जोखों और विघ्नों से गुजरना होगा। सब से प्रथम परीक्षा जि
में से भारतवर्ष को उत्तीर्ण होना होगा, वह हिन्दू-मुसलमानों
सम्बन्ध का प्रश्न है। जब तक हिन्दू-मुसलमानों में परस्पर क
पक्षपात और द्वेष के भाव विद्यमान हैं तब तक जाति २ की गग
भेदी घोषणा निरर्थक और निष्फल होगी। हिन्दू-मुसलमानों
सम्बन्ध अब ऐसी शोचनीय अवस्था पर पहुंच गये हैं कि दो
पक्षों के नायक अब इस विषय पर गम्भीरता से विचार कर रहे
वह इस बात को अनुभव करने लगे हैं कि हिन्दू-मुसलमान रू
रथ चक्रों के सुसम्बद्ध रहने के बिना भारतजाति रूपी रथ
गति बहुत कठिन होगी।

हिन्दू-मुसलमानों में शुभ सम्बन्धों को उत्पन्न करने के उप
दो भागों में विभक्त किये जा सकते हैं, प्रथम हेय (Negative
और दूसरे उपादेय (Positive)। हेय उपायों पर विचार क
हुए पहिले हम उन भावों पर विचार करते हैं जो मुसलमानों
लिये हेय या त्याज्य हैं-:

प्रायः शोक से देखा जाता है कि मुसलमानों के भक्ति भ
भारत माता में नहीं जमते। उन के लिये यह संकल्प करना क
प्रतीत होता है कि भारतवर्ष उन की मातृभूमि और उत्पत्ति स्थ
है। भारतवर्ष की मट्टी से ही उनका शरीर बना और पुष्ट हुआ है
भारतवर्ष के रीति रिवाज़, उनके सब संस्कारों और व्यवहारों,
की चाल ढाल और पोशाक में पाये जाते हैं, परन्तु इन अवस्था
के होते हुए भी वह गङ्गा और यमुना जैसी मनोहारिणी नदि
और हिमाचल जैसे आकाश स्पर्शी पर्वतों से पराङ्मुख हो
दजला और फुरात के किनारों और टर्की के पर्वतों को ही मातृभू
के तौर पर स्मरण करते हैं। हमारा विचार है कि मुसलमान क
अपने सहमत टर्की और अर्ब निवासी लोगों के साथ पूर्ण सह

भूति रखते हुए भी भारतभूमि में स्नेह के भाव स्थिर रख सकते हैं। अनेक यूरोपीय देशों में धर्म एक होते हुऐ भी अपने २ देशीय भाव सुदृढ़ विद्यमान हैं हम ऊपर कह आये हैं कि जाति का केन्द्र साधारण प्रयोजन है, और यदि मुसलमान लोग इस देश में निष्प्रयोजक दर्शकों के समान ठहरना चाहते हैं तो यह उनकी भूल है। ऐसी अवस्था में उनके विचारशील नायकों को कभी भी आशा नहीं रखनी चाहिये कि भारतवर्ष में कभी जातीय एकता का भाव चरितार्थ हो सकेगा। अतएव हम बलपूर्वक सम्मति देते हैं कि मुसलमानों को यह विचार अपनी हृदय भूमि से समूल उखाड़ फैंकने चाहिये कि भारतवर्ष उनकी मातृभूमि और भक्ति पात्र नहीं है।

(२) दूसरा जो भाव मुसलमानों के लिये हेय या त्याज्य है वह गोहत्या के विषय में है। शोक है कि मानव समाज के इतिहास में ऐसी अनेक घटनाएं उपस्थित हैं और हो रही हैं जब कि एक मत के अनुयायी अपनी धर्म पुस्तक की मुख्य शिक्षा को विस्मृत करके उस की गौण शिक्षा को जो कि मनुष्य के लिये आवश्यक नहीं और जो अवस्थाओं के तबदील होने पर परिवर्तित की जा सकती है शिरोधार्य्य समझ लेते हैं। तथापि हमें यह विदित हो कर प्रसन्नता हुई है कि प्रायः शीआ मुसलमानों ने निश्चय कर लिया है कि "कुरान की मुख्य शिक्षा यह है कि वृथा किसी का हृदय मत दुखाओ। गोहत्या के लिये केवल गौण शिक्षा कुरान में पाई जाती है। इस गौण शिक्षा को हम तिलांजलि देते हैं क्योंकि हम हिन्दुओं के हृदय को वृथा दुखा कर अपनी धर्मपुस्तक की मुख्य शिक्षा का उल्लंघन नहीं करना चाहते"। क्या अच्छा हो यदि भारतवर्ष के तमाम मुसलमान अपनी धर्मपुस्तक की मुख्य शिक्षा का अनुसरण करने लग जावें। इस पवित्र और श्लाघनीय कार्य्य में यदि वह एक पद भी आगे बढ़ेंगे तो हिन्दू उनसे हाथ मिलाने के लिये सौ कदम आगे बढ़ेंगे। हिन्दू-मुसलमानों की आर्थिक दशा गो पर निर्भर है, और जीवन-यात्रा के लिये भी गोहत्या करना आत्मघात के बराबर है। अस्तु, यदि मुसलमान इस जघन्य और कठोर कर्म को छोड़ना नहीं चाहते तो कमसे कम यह तो कर सकते हैं कि बाज़ारों आदि नगर के समीपवर्ती स्थानों में इस कर्म को छोड़ कर उस नगर से बाहर और एकान्त स्थान में करें। आये दिन अनेक वृत्तान्त सुने जाते हैं

कि अमुक स्थान पर मुसलमानों ने खुले बाजार में गो को मारा, इत्यादि । ये कार्य्य हैं जो कि हिन्दुओं के हृदयों को विशेषतः विदीर्ण करते हैं। मुसलमान नायकों का यह कर्त्तव्य हो कि वह इन हृदय वेधक कार्य्यों का बड़े ज़ोर से प्रोटेस्ट करें और अपने लोगों को ऐसे कर्मों से निष्कलंक रखने का प्रयत्न करें । मुसलमानों के विशेष दोषों को दर्शा कर अब हम उन त्रुटियों और अपराधों पर विचार करते हैं जो हिन्दुओं के लिये हेय हैं-;

(१) अनुचित छुआ छात ने हिन्दुओं के भावों को जहां तंग और संकुचित बना दिया है वहां मुसलमानों के हृदयों को दुखाने में भी कोई कसर नहीं छोड़ी । आज कल उन्नति और रोशनी का ज़माना है और आधुनिक शिक्षा ने प्रत्येक जाति और व्यक्ति में आत्मसम्मान के भाव को अंकुरित कर दिया है । अतएव ज्यूं २ मुसलमान लोग विद्या में उन्नति करते जाते हैं वह उस व्यवहार से वस्तुतः दुखी होते हैं जो हिन्दू लोग छुआ छात के भूत से प्रेरित होकर उनके साथ करते हैं । एक विद्वान, सुशिक्षित, सदाचारी और उच्च पदवी प्राप्त मुसलमान के लिये यह अत्यन्त अपमान का दृश्य होता है जब वह एक हिन्दू हलवाई से मिठाई खरीदता है और वह हलवाई उसे चीज़ ऐसा फेंकता है जैसे किसी पशु या नीच पुरुष को दी जाती है । इसी प्रकार जब कोई मुसलमान जेंटलमैन किसी हिन्दू मित्र के पास मिलने जाता है तो प्रायः उसे मित्र की दरी से उठना पड़ता है जब उस हिन्दू के पानार्थ दूध या जल आता है । हिन्दुओं को स्मरण रखना चाहिये कि मुसलमानों के हृदयों में अब आत्म-सम्मान के भाव उज्जागृत हो गये हैं । यदि वह अब भी अपनी काया न पलटेंगे और इस मिथ्या छुआ छात को नहीं छोड़ेंगे तो मुसलमानों की द्वेषाग्नि को नितान्त बढ़ा देंगे । जहां मुसलमानों ने अपनी धर्मपुस्तक की मुख्यशिक्षा को भुला दिया है वहां हिन्दुओं ने भी अपनी मुख्य धर्मपुस्तक वेद का उपदेश "सहनौ भवतु सहनौ भुनक्तु" जो मनुष्य मात्र को सहभोजी होने की शिक्षा देता है विस्मृत कर दिया है । अतएव हिन्दुओं के लिये आवश्यक है कि सात्विकभोजन के नियमों का उल्लंघन न करते हुए वह मिथ्या छुआ छात की उपाधि का परित्याग कर देवें।

(२) एक और दुर्व्यसन जिसका प्रचार पंजाब के हिन्दुओं में

आरम्भ हो गया है सर्वथा और शीघ्र त्याज्य है। यह "झटके" का रिवाज है। प्रायः अज्ञानी हिन्दू लोगों में यह विचार अंकुरित हो रहा है कि यद्यपि मुसलमान के हाथ से काटा हुआ मांस खाना पाप है, परन्तु हिन्दू के हाथ से मारे हुए पशु का मांस (जिसको पंजाब में "झटका" कहते हैं) खाना पाप नहीं है। यह मूर्खता का प्रपंच इस पराकाष्ठा को पहुंच गया है कि इस झटके का नाम "महाप्रसाद" रखा गया है, मानों कुछ स्वार्थी पुरुषों द्वारा यह नये प्रकार का वाममार्ग प्रचलित हुआ है जो मांस को "शुद्धि" या "पुष्प" कहते हैं। इस व्यसन का आधार मूर्खता और स्वार्थ परता के बिना और कुछ नहीं हो सकता, परन्तु इस खोखले सिद्धान्त का परिणाम बहुत भयंकर और हानिकारक हो रहा है। मुसलमानों के क्रोधशील हृदय भड़क उठे हैं और यदि यही अवस्था रही तो जाति २ की ध्वनि गूंजने वाले हिन्दुओं को किसी दिन अश्रुओं से मुंह धोना पड़ेगा। आशा है कि "अहिंसा परमो धर्मः" को मानने वाले हिन्दू अपने वास्तविक सिद्धान्त का प्रचार करते हुए "झटके" के हानिकारक रिवाज को निर्मूल करने का यथा-शक्ति प्रयत्न करेंगे।

मुसलमानों और हिन्दुओं के लिये भिन्न २ हेय उपयों को बतला कर अब हम उन दोषों का उल्लेख करते हैं जो दोनों पक्षों के लिये समान त्याज्य हैं:—

(१) जब दो बलवान् पार्टियां एक देश में रहती हों तो उन्हें अत्यन्त सावधानी से परस्पर व्यवहार करने की आवश्यकता है, क्योंकि उनका छोटा सा परस्पर व्यवहार भी दुख वा सुख के महान् परिणाम को उत्पन्न कर सकता है। विशेषतः परस्पर कटुवचनों के प्रयोग से बचना और सहनशीलता का परिचय देना दोनों के लिये अत्यन्त ज़रूरी है। लोकोक्ति प्रसिद्ध है कि बनाना दुष्कर होता है परन्तु बिगाड़ना बहुत सुगम होता है। एक मनुष्य के साथ वर्षों से बना हुआ शुभ व्यवहार एक कटुबचन के प्रयोग से नष्ट हो सकता है। यह विषय और भी गम्भीर और गौरवान्वित हो जाता है जब दो मनुष्य समुदायों का व्यवहार हो। एक जाति के सम्बन्ध में कठोरवचन प्रयोग करने से दावाग्नि के समान उस जाति में क्रोध प्रज्वलित हो जाता है जिससे अनेक वर्षों के सौहार्द-

भाव मलिया मेट हो जाते हैं । इस सावधानता का महत्व हिन्दू-मुसलमानों के सम्बन्ध में और भी घटता है, जिन में एकता के भाव अभी अंकुरित नहीं हुए और जिन में परस्पर विश्वास का चिन्ह मात्र भी कठिनता से प्रतीत होता है । ऐसी नाज़ुक अवस्था में कितनी बुद्धिमता की आवश्यकता है परन्तु हमें शोक से कहना पड़ता है कि हिन्दू-मुसलमानों में गाली गलौच का बाज़ार गरम है, सहनशीलता का तो कहना ही क्या है । पंजाब के अनेक उर्दू अख़बार इस भयानक अवस्था का परिचय देते हैं । दोनों दलों के पत्र सभ्यता से गिरे हुए और मर्मभेदी शब्द एक दूसरे के लिये प्रयोग करते हैं । यह समाचार पत्र पब्लिक की रुचि को बिगाड़ रहे हैं और धन लाभ से प्रेरित होकर इन्होंने गाली देने के नये व्यापार (Trade) को स्वीकार किया हुआ है । उस पत्र की बिकरी सब से अच्छी होगी जो दूसरे दल को गाली निकालने की विधि में निपुणतम हो। इन पत्रों के रुपया कमाने की दूसरी रीति यह भी है कि छोटे से छोटे विषय को ये हिन्दू मुसलमानों का प्रश्न बना लेते हैं, और व्यक्तियों का दोष जाति पर लगा देते हैं । पक्षपात का ज़हरीला रोग दोनों दलों के लोगों को कुरूप और घृणास्पद बना देता है । यह रोग न्यायचक्षु को सर्वदा के लिये ऐसा बिगाड़ देता है कि वह मनुष्य जो अपनी जाति के लोगों के साथ कैसा व्यवहार क्यों न करता हो अन्य जातियों के लोगों के साथ कुटिलता और अन्याय का व्यवहार करने के लिये बाध्य हो जाता है । अपनी जाति में देवता भी दूसरी जाति के व्यक्तियों के लिये राक्षस बन जाता है, और प्रायः उसे बनना पड़ता है । इस पक्षपात को बढ़ाने के प्रधान यन्त्र बहुत से समाचारपत्र हैं जिन्हें पबलिक अच्छी तरह जानती है । हिन्दू और मुसलमान दोनों दलों के नायकों का कर्तव्य है कि वह इस प्रकार के साहित्य को यथाशक्ति निरुत्साहित करें और समाचारपत्रों का भी जो अपने आपको जातीय विचारों का लीडर समझते हैं धर्म है कि वह निराधार द्वेष के भावों को मत फैलावें और अपनी ज़िम्मेवारी को समझें ।

(२) यदि इस पक्षपात का विशेष उदाहरण देखना हो तो उर्दू और हिन्दी के लिये जो शुष्क लड़ाई हो रही है उस पर दृष्टिपात करो । वास्तव में अनेक सत्पुरुष हैं जो हिन्दी अथवा उर्दू

के पक्ष में हैं, परन्तु अनेक लोग ऐसे भी मिलेंगे जो भाषाओं के विरोध द्वारा द्वेषाग्नि फैला रहे हैं और उनको हिन्दू मुसल्मान-प्रश्न बना रहे हैं। हिन्दी अथवा उर्दू के विशेष अनुरागियों को उचित है कि यदि वह वास्तव में अपनी भाषा की उन्नति चाहते हैं तो उनके सामने महान् कर्मक्षेत्र है। उन्हें हिन्दुस्तानी पबलिक को विलायत की विद्याओं का परिचय दिलाना है, यह कार्य्य एक जीवन का नहीं परन्तु अनेक जीवनों का है। इस लिये परस्पर शुष्क युद्ध करने के स्थान में उनके लिये यही समुचित प्रतीत होता है कि वह अपनी २ भाषाओं में उत्तम २ पुस्तकें लिखना आरम्भ कर देवें। जिस २ भाषा की पुस्तकें पबलिक को अच्छी तरह विज्ञानवान् बना सकेंगी, उसी की अन्त में विजय होगी, परन्तु शुष्क विरोध सर्वथा त्याज्य और केवल समय का अपव्यय है।

(३) हिन्दु-मुसलमानों के चरितार्थ करने का एक यह भी उपाय है कि वह ओछापन और बच्चपन के भाव जिनका परिचय वह कभी २ समाचार पत्रों द्वारा देते रहते हैं, छोड़ देवें। पत्रों में आये दिन शिकायत सुनी जाती है कि अमुक ग्राम में पटवारी और चौकीदार दोनों मुसलमान हैं, अमुक दफ्तर में हिन्दुओं की संख्या मुसल्मानों से अधिक है इत्यादि। यह विचार उन बच्चों के समान है जिनमें से किसी एक को माता कभी मिठाई अधिक देती है, कभी दूसरे को अधिक देती है, परन्तु जो किसी समय वंचित रहते हैं वह रो पड़ते हैं। हम लोगों को चाहिये कि केवल किसी एक स्थान या एक व्यक्ति से न्याय का अनुमान न करें। किसी जाति के साथ वर्त्ताव समस्त और व्यस्त दोनों रीतियों के अनुमानों द्वारा ही जांचा जा सकता है। हां, जहां महान् न्याय-सिद्धान्तों का उल्लंघन हो वहां निस्सन्देह बलपूर्वक प्रोटेस्ट करना उचित है, परन्तु व्यक्तिगत और स्थानगत विषमता पर पबलिक में विलाप करने से केवल परस्पर कलही और कल ही उत्पन्न होता है।

(३) एक स्थिर (Permanent) कमेटी हिन्दू और मुसल्मानों में एकता आदि के भावों को उज्जागृत करने और विरोधी विषयों के निर्णय करने के लिये बनाई जावे। यदि हो सके तो एक मासिक अथवा त्रैमासिक पत्र इस परिषद् की ओर से निकाला जावे जिस के सम्पादक दोनों दलों की ओर से नियुक्त हों। ऐसी एक कमेटी

इलाहाबाद की गत कांग्रेस के पश्चात् बनाई भी गई थी, परन्तु शोक है कि अभी तक उस से कोई उत्साहप्रद परिणाम नहीं निकला। हमें आशा है कि दोनों दलों के नेता इस विषय की ओर अवश्य ध्यान देंगे, क्योंकि ऐसे कार्य्यों में सुनियमित और सुस्थिर रीति से ही सफलता हो सकती है।

(४) हिन्दू-मुसलमानों में शुभ सम्बन्ध उत्पन्न करने का यह भी उपाय है कि जिन विषयों में दोनों दलों का विशेषतः साधारण प्रयोजन (Common interest) हो उन विषयों में यथासंभव सम्मिलित हो कर कार्य्य करें। जैसे प्राईमरी शिक्षा के लिये यदि गवर्नमेंट ने सन्तोषजनक सहायता नहीं की तो दोनों दल एकत्रित हो कर ऐसी शिक्षा के लिये बहुत कुछ स्वयम् प्रबन्ध कर सकते हैं अथवा संगठित हो कर इस विषय पर आन्दोलन कर सकते हैं जब तक कि गवर्नमेंट की ओर से सन्तोषजनक उत्तर न मिले। इसी प्रकार हिन्दू मुसलामनों विश्वविद्यालयों के विषय हैं जिन के लिये सन्तोषजनक सहायता गवर्नमेंट से उपलब्ध करने के निमित्त वह संयुक्त डेप्युटेशन द्वारा गवर्नमेंट की सेवा में उपस्थित हो सकते हैं। अस्तु, अनेक ऐसे विषय हैं जो एकता और संगठन की भूमि बन सकते हैं।

एकता में अद्भुत शक्ति है, इसको सब लोग अनुभव कर सकते हैं। यदि भारतवर्ष से पक्षपात की महामारी का निरास करना हो, यदि भावी सन्तानों को सदाचार के उच्च आदर्श की ओर ले जाना हो, यदि देश में विद्या और विज्ञान का सूर्य्य शीघ्र प्रकाशित देखने की अभिलाषा हो, यदि अपनी जाति को अनेक शक्तियों के वृथा व्यय से बचाना हो तो भारतवर्ष के भिन्न २ दलों, ईसाई और पारसी, जैनी और सिक्ख, विशेषतः हिन्दू और मुसलमान लोगों को एकत्र करने का प्रयत्न करो। परमात्मा हमें आशीर्वाद देवें कि हम न्याय के आदर्शजीवन का अनुसरण करते हुए मनुष्यमात्र के साथ "यथायोग्य और प्रीति पूर्वक बर्ताव करना सीखें॥"

इन हेय उपायों पर विचार करके अब हम उपादेय विचारों पर विचार करते हैं, क्योंकि हेय उपायों का सम्बन्ध केवल परहेज़ या त्याग से है। प्रायः केवल परहेज़ से रोग की निवृत्ति नहीं होती

परन्तु साथ ही कुछ औषधि ग्रहण करने से ही हो सकती है।

(१) उपादेय उपायों में से मुख्य यही है कि हिन्दू-मुसलमान नियमित (Organized) सभाओं द्वारा मेल मिलाप करना आरम्भ कर देवें। इस बारे में लंडन की मुसलिम लीग ने जो निश्चय किया है कि लीग की ओर से भी प्रतिनिधि कांग्रेस के प्रतिनिधियों में सम्मिलित हुआ करें, बहुत मुबारक है, और हिन्दू-मुसलमानों के मिलाप का पहिला कदम है। इस महान् साधन द्वारा जहां मुसलमानों में देशभक्ति के भाव उत्पन्न हो सकेंगे वहां उन्हें हिन्दू लीडरों के साथ गम्भीर विषयों पर विचार करने का अवसर भी प्राप्त होगा। परमात्मा करे कि यह चेष्टा अवश्य फलभूत हो।

(२) कुछ दिन व्यतीत हुए कि काशी के सुप्रसिद्ध रईस राजा माधोलालजी ने पत्रों द्वारा प्रस्ताव किया था कि हिन्दू मुसलमान और यूरूपीनों का एक संयुक्त क्लब स्थापित किया जावे जहां वह प्रीति भोजन, चित्त विनोद और परस्पर विचारादि के लिये एकत्रित हुआ करें। हमारे विचार में यह उपाय बहुत श्लाघनीय है, यह क्लबें जहां एकता को सुदृढ़ करने का साधन बनेंगी, वहां समाज-संशोधन का भी सुगम उपाय बन सकेंगी। स्थान २ पर ऐसी क्लबों की अत्यन्त आवश्यकता है।

---o---

एक गणितज्ञ की कल्पित कथा।

(ले० श्रीयुत बनारसीदास)

किसी नगर में एक रविदत्त नाम के ब्राह्मण रहते थे। इनका विवाह सुन्दरी नाम की एक स्त्री से हुआ था। सुन्दरी भले प्रकार पढ़ी लिखी थी। रविदत्त अति निर्धन थे इसलिये उन्हें भोजन भी ज्यों त्यों करके प्राप्त होता था। एक दिन सुन्दरी ने रविदत्त से नम्रता पूर्वक निवेदन किया "हे पति! निर्धनता के दूर करने के लिये कोई यत्न कीजिये इतने दिवस कष्ट सहते २ बीत गये अब सुख के लिये लालसा होती है। जिस वस्तु की आप को अथवा मुझ-दासी को आवश्यकता होती है प्रथम तो वह प्राप्त ही नहीं होती और यदि प्राप्त होती भी है तो अति कठिनता के पश्चात्।

इस बात का प्रभाव रविदत्त के चित्त पर इतना पड़ा कि वे चिन्ता-सागर में निमग्न हो गये और धन उपार्जन करने के यत्न सोचने लगे। इस सोच विचार में भोजन का समय भी व्यतीत होगया। पाठक ! गणितज्ञ मनुष्य का चित्त जिस बात में पूर्ण रूप से लग जाता है उसे वह समाप्त किये बिना नहीं छोड़ता। वह इसी विचार में बैठे हुए थे इतने में उनका लड़का रमेशदत्त पाठशाला से पढ़ कर आ गया। उसे आते ही ज्ञात हुआ कि पिताजी ने अभी तक भोजन नहीं किया। वह तुरन्त ही पिताजी के पास गया और भोजन करने में विलम्ब करने का कारण नम्रता पूर्वक पूँछा। पिता का ध्यान जो धन उपार्जन करने के यत्नों में लगा हुआ था। पुत्र की ओर आकर्षित हुआ। वे अपने पुत्र से बोले " क्या कहा ? " पुत्र ने भोजन करने के लिए दुबारा कहा। रविदत्त ने थोड़ी देर बिचार कर अपने पुत्र से केवल इतना ही कहा 'ऐ रमेश ! भाग्य बड़ा प्रबल है।" तत्पश्चात् भोजन किये और फिर उसी चिन्ता में डूब गये। इतने में मरीचिमाली श्री सूर्य्यभगवान अस्त होने को आये। शौच आदि आवश्यकीय कार्य्यों से छुटकारा पाकर सन्ध्या की और फिर उन्हों ने धन उपार्जन करने के निमित्त परदेश जाना ही निश्चय किया। दूसरे दिन अपने किसी एक मित्र से कुछ रुपये ऋण लेकर घर का प्रबन्ध किया और तीसरे दिन प्रातःकाल के पूर्व जब कि कुमुदिनी के नायक श्रीचन्द्रनारायण ने अस्ताचल की चोटी की शरण ली उन्हों ने शय्या त्याग करके किसी अन्य ग्राम के लिये प्रस्थान कर दिया।

रविदत्त के ग्राम से इस ग्राम को दो मार्ग थे एक तो पगडण्डी सीधी चली गई थी और दूसरी थोड़ी दूर के बाद मुड़ कर गई थी। जब वे इन मार्गों के संगम पर पहुँचे उन्हें रेखागणित पहिले अध्याय की बीसवीं साध्य स्मरण हुई "त्रिभुज की हर दो भुजा मिल कर तीसरी भुजा से बड़ी होती हैं।" ऐसा विचार करके वे सीधी पगडंडी ही से गये और अपने मित्र आनन्दकुमार के यहाँ पहुंचे। आनन्दकुमार ने आदर सहित उनको आसन दिया। और कहा "कहिये मित्र आज आप इधर कैसे भूल पड़े" रविदत्त ने कहा " मित्र ! धन उपार्जन करने के लिये हम किसी अन्य नगर को जा रहे हैं इस लिये हमने सोचा कि आप से भी

मिलते चलें" आनन्दकुमार ने कहा "यदि ऐसा है तो हम भी आप के साथ चलेंगे" रविदत्त ने कहा "बहुत अच्छा चलो एक एक ग्यारह हुए एक से दो भले होते हैं" किम्बहुना उन्होंने कई दिन अपने दोस्त आनन्दकुमार के यहां निवास किया। फिर उन्हें भी साथ लेकर तीसरे पहर के समय किसी अन्य नगर की ओर चल दिये। चैत्र का महीना था चारों ओर आनन्द ही आनन्द छारहा था जिधर देखो उधर ही हरियाली पर दृष्टि पड़ती थी। कोकिला, शुक, कपोत इत्यादि विविध रंग के सुन्दर पत्ती गान कर रहे थे। पाठक ! यों तो प्रकृति के दृश्यों का प्रभाव प्रत्येक मनुष्य के हृदय पर पड़ता है परन्तु वह प्रभाव जो एक विज्ञानवेत्ता और गणितज्ञ के हृदय पर पड़ता है अकथनीय है। जल का एक कण जो विज्ञान से अनभिज्ञ मनुष्य के लिये एक साधारण वस्तु है विज्ञानवेत्ता उसके ऊपर सोचा करते हैं कि यह क्या वस्तु है ? किन २ वस्तुओं के मिश्रण से बनी है इत्यादि।

अस्तु इस प्रकार प्रकृति के सुन्दर दृश्यों को देखते हुए अपने मित्र आनन्दकुमार के साथ नगर के निकट आ पहुंचे। यहां पर एक मन्दिर था रात्रि को यहीं निवास किया और प्रातःकाल में सूर्य के उदय होते ही नगर के भीतर की ओर चल दिये। मार्ग में इन्हें दो साझी बानिये आपस में लड़ते हुए दीख पड़े वे एक दूसरे से साझा तोड़ने के लिये कह रहे थे। एक कहता था "अगर बहुत तीन पांच लगाई तो बतलादूंगा" दूसरा उसके उत्तर में कहता था 'साल भर में तुम से ३६० मिलते हैं तुम क्या बतलावोगे" रविदत्त ने उन्हें लड़ने से रोका और कहा "क्या तुम नहीं जानते फूट से क्या २ हानियां होती हैं ? घर के घर मिट्टी में मिल जाते हैं। जो लाभ दो मनुष्य मिलकर उठा सक्ते हैं वह लाभ दोनों मनुष्य पृथक २ कदापि नहीं उठा सक्ते।

देखिये विदुर जी क्या कहते हैं।

महानप्येकजो वृत्तो बलवान सुप्रतिष्ठितः।
प्रसह्य एव वातेन सस्कन्धो मर्दितुं त्तणात् ॥
अथ ये संहिता वृत्ताः संघशः सुप्रतिष्ठिताः।
तेहि शीघतमान्वातान् सहन्तेऽन्योन्य संश्रयात ॥

अर्थात् अकेला वृक्ष चाहे बड़ा बलवान, गहरी जड़ वाला भी हो वह भी वायु से तत्क्षण गुद्दों सहित गिराया जा सक्ता है परन्तु घने वृक्ष जो एक दूसरे के साथ जमे हुए हों तो आपस के सहारे से तीव्र वायुओं को सह लेते हैं। इसी प्रकार जिन लोगों में फूट होती है शत्रु भी उन्हें जीतने योग्य समझते हैं। देखिये रेखागणित क्या कहता है 'यदि कोई रेखा दो भागों में बाटी जावे तो कुलरेखा पर का वर्ग बराबर होगा उन दोनों भागों के पृथक पृथक वर्ग+ उन्हीं भागों के दूने धरातल के (रेखागणित चौथी साध्य, २ अध्याय)

यदि अब रेखा अ^3 स^4 ब से बिन्दु पर अस और बस दो भागों में बाटी जावे जिन की लम्बाई क्रमशः ३ और ४ सैन्टीमीटर है तो अब^2=अस^2+बस^2+२×अस×बस। अर्थात् $(३+४)^2 = ३^2+४^2+२\times३\times४$ देखिये अस और बस मिली हुई का वर्ग अस और बस पृथक पृथक के वर्ग से २४ अधिक है। इस साध्य से हम यह शिक्षा ग्रहण कर सक्ते हैं कि दो मनुष्य मिल कर जो लाभ उठा सक्ते हैं उतना लाभ वे पृथक पृथक कदापि नहीं उठा सक्ते। बहुत से ढपोलसंख कहा करते हैं कि रेखागणित से कोई शिक्षा नहीं मिलती। हम कहते हैं कि यदि हम लोग रेखागणित की दी हुई इस एक शिक्षा पर ही चलें तो हमारा कितना कल्याण हो सक्ता है यह आप ही समझ लीजिये"। ऐसा कह कर और उनके झगड़े को निबटा कर नगर में घुसे और वहाँ एक मन्दिर में जाकर डेरा जमाये। बसंत ऋतु यहीं पर व्यतीत की॥

एक दिन मित्र को साथ लेकर किसी दूसरे नगर को चल दिये सूर्य्य भगवान अपने प्रचंड प्रताप से पृथ्वी को तपा रहे थे। आकाश नील रंग का दीख पड़ता था। धूप बड़ी कठिन थी और छतुरी भी रविदत्त की पौने बीस अर्थात् टूटी हुई सी थी। ज्यों त्यों करके मार्ग में चले जा रहे थे। चलते २ एक ताड़ के वृक्ष के नीचे पहुँचे। इस ऊंचे और सीधे वृक्ष को देख कर आनन्दकुमार ने कहा "हे मित्र यह वृक्ष बड़ा ऊंचा है इस की ऊंचाई क्या होगी?" रविदत्त ने तुरन्त अपनी लाठी को खड़ी कर उस की परछाईं और उस की लम्बाई नाप कर और फिर ताड़ वृक्ष की परछाँई नाप कर वृक्ष की ऊंचाई निकाल दी और रविदत्त को सब भेद समझा दिया। इसके

अनन्तर वे एक नगर के निकट आ पहुंचे नगर के ऊंचे ऊंचे गृह व राजा के महल दृष्टिगोचर हुए। रविदत्त ने आनन्दकुमार से कहा "देखो ये महल यहां से कैसे छोटे दीख पड़ते हैं" आनन्दकुमार ने कहा "यह तो ठीक है परन्तु यह बताओ कि निकट की वस्तु की अपेक्षा दूर की वस्तु छोटी कैसे दीख पड़ती है" रविदत्त जिन्हें कि प्रत्येक बात में गणित ही सूझ पड़ती थी बोले "हे मित्र! तुमने रेखागणित प्रथम अध्याय की इक्कीसवीं साध्य पढ़ी है तुम जानते हो कि इस साध्य में यह बात सिद्ध की गई है कि "यदि किसी त्रिभुज के आधार के दोनों सिरों और त्रिभुज के भीतर किसी बिन्दु के बीच सरलरेखा मिलाई जावें तो इन रेखाओं से बना हुआ कोण त्रिभुज के शीर्षकोण से बड़ा होगा। अर्थात् जिस प्रकार कि त्रिभुज का शीर्षकोण त्रिभुज के भीतर बने हुये कोण की अपेक्षा अधिक दूर होने के कारण छोटा होता है उसी प्रकार दूर की वस्तु निकट की वस्तु की अपेक्षा छोटी प्रतीत होती है"।

इस प्रकार समझाते हुए नगर के द्वार पर आ पहुंचे। नगर में जाकर एक मन्दिर पर जो कि नगर के भीतर ही था, आये। यह बड़ा ही रमणीक स्थान था अतः ये दोनों यहां ही रहने लगे। भोजन के लिये बेझर आदि का आटा कहीं मिल जाता था जिसे कि वे जैसे तैसे पचा सकते थे। अब ग्रीष्म ऋतु का अन्त आया। जल वर्षा होने लगी। नदी नद तड़ाग आदि जल से भरने लगे। घनघोर घटा घुमड़ घुमड़कर उठने लगी। दामिनी बादलों में दमकने लगी। दादुर अपने अनोखे राग गाने लगे प्रत्येक वस्तु चित्त को लुभाने लगीं। एक दिवस इसी प्रकार के प्रकृति सौन्दर्य को देखते हुए एक नदी के पास आ पहुंचे। यह नदी वर्षा के जल के कारण बहुत बढ़ आई थी और उसे तैरकर दूसरी पार जाना अति कठिन ही नहीं वरन असम्भव सा प्रतीत होता था। आनन्दकुमार ने रविदत्त से कहा "कहो मित्र यह नदी कितनी चौड़ी होगी" रविदत ने कहा "आओ नाप ही क्यों न लें" आनन्दकुमार ने कहा "मित्र बरसात की नदी है पानी बहुत है और हम लोग तैरना भी बहुत अच्छी तरह नहीं जानते नौका भी हमारे पास नहीं फिर नदी की चौड़ाई कैसे नापोगे?" रविदत्त ने जिस प्रकार नदी की चौड़ाई नापी उसे हम यहां पर क्या के विस्तार भय से सिद्ध करना नहीं

चाहते केवल इतना लिख देते हैं कि उन्होंने अपनी लकड़ी नदी
इस तट पर नदी के दूसरे तट से मिली हुई किसी वस्तु के ठी
विरुद्ध खड़ी की। फिर नदी के उस तट की वस्तु और लकड़ी
बीच जो सरल रेखा बनी उसके साथ समकोन बनाती हुई ए
सरल रेखा इस ओर खींची। इस सरल रेखा को दो समान भा
में विभाजित किया। फिर इस समकोन बनाती हुई सरल रेखा
दूसरे छोर पर एक सरल रेखा समकोन बनाती हुई खींची। औ
फिर जहां से नदी के दूसरे ओर की वस्तु और नदी की इस ओ
की सरल रेखा की मध्य बिन्दु एक सीध में दिखाई पड़े वहां
एक ईंट रखदी। फिर इस ईंट और नदी के इस ओर की सरलरे
के दूसरे छोर के बीच की लम्बाई नाप ली। रेखागणित से सि
हो सकता है कि यह नदी की चौड़ाई के बराबर है।

पाठक! उकता न जाइये हम अभी इस कथा को समाप्त क
हैं। जब रविदत्त को रहते रहते बहुत दिन बीत गये उन्हें धन पै
करने की चिन्ता ने फिर आ घेरा। वे सोचने लगे देखो कैसा ढलु
पन्थी में हमारा समय व्यतीत हुआ है। जिस कार्य के लिये घर
निकले थे वह तो अभी हुआ ही नहीं। सोचते २ उन्हें एक ब
याद आ गई। उन्होंने एक विज्ञापन नगर में लगवा दिया जिस
कि सारांश निम्न लिखित था।

" बहुत से मनुष्य सेठ व साहूकारों के यहां अपने सहस्
रुपये जमा करते हैं और उन्हें प्रत्येक माह में एक रुपया या इस
लगभग व्याज सौ रुपये पर मिलता है। हम ने एक ऐसी युक्ति
निकाली है जिससे आदमी चालीस दिन में ही करोड़ पति ब
सकता है। जो मनुष्य करोड़पति बनना चाहे वह हमारे य
कौड़ियां जो एक पैसे की ८० आती हैं इस प्रकार जमा कर जाय
करे पहिले दिन १ कौड़ी दूसरे दिन २ कौड़ी तीसरे दिन ४ कौ
चौथे दिन ८ कौड़ी इस प्रकार हर दूसरे दिन उस से पहिले दि
से दूनी कौड़ी दे जाया करे। हम प्रतिज्ञा करते हैं कि हम उ
मनुष्य को जो इस नियम का प्रतिपालन चालिस दिन तक करेग
इकतालिसवें दिन १० करोड़ रुपया नकद देवेंगे। यदि हम अपन
प्रतिज्ञा के अनुसार कार्य्य न करें तो राजा से आजन्म कारावा
का दण्ड पावें॥

आपका शुभचिन्तक
रविदत्त, आनन्दकुमार।

नगर के कम पढ़े लिखे मनुष्य इस विज्ञापन को पढ़ कर चकित रह गये उन्हों ने यह न समझा कि चालीस दिन में कितने रुपयों की कौड़ी इकट्ठी हो जावेंगी। वैसे ही अनुमान कर लिया कि अधिक से अधिक १०० रु. की कौड़ी इकट्ठी हो जावेंगी और सचमुच कम पढ़े लिखे इसका अनुमान १०० रु. से अधिक शायद ही करेंगे। उन लोगों के आश्चर्य्य का ठिकाना न रहा। कई दिन के पश्चात् यह बात राजा के कानों तक पहुंची। राजा ने रविदत्त और आनन्दकुमार को बुलवा भेजा। थोड़ी देर के पश्चात् रविदत्त और आनन्दकुमार आ उपस्थित हुए। राजा ने उनसे पूँछा "कहिये आप लोग १० करोड़ रुपया देने में किस प्रकार समर्थ होवेंगे" रविदत्त ने कहा "महाराजाधिराज यह प्रश्न वैसे तो जोड़ से ही हल हो सकता है परन्तु बीजगणित में गुणोत्तर श्रेणी(geometrical progress ion)के योग निकालने की एक विधि है उससे भी यह निकल सक्ता है जो लोग ऊंचे दरजे का बीजगणित पढ़ते हैं वे जानते हैं कि जब कि common ratio (सर्वीय सम्बन्ध) एक से अधिक होता है तो योग बहुत ही ज्यादः होता है इस प्रकार हिसाब लगाने से चालीस दिन में २० करोड़ से भी अधिक रुपयों की कौड़ी इकट्ठी हो जावेंगी"।

राजा भी इस उत्तर को सुन कर चकित रह गया। तत्पश्चात् राजा ने रविदत्त से उस नगर में आने का कारण पूंछा। रविदत्त ने जो कुछ कारण था बतला दिया। रविदत्त के वार्तालाप से राजा को ज्ञात हो गया कि रविदत्त गणित और प्राकृतिक विज्ञान पढ़ा सकते हैं इस लिये राजा ने रविदत्त को अपना पुत्र पढ़ाने के लिये रख लिया और रविदत्त के मित्र आनन्दकुमार को भी किसी अन्य कार्य्य पर नियत कर दिया।

इस प्रकार रविदत्त को राजा के यहां रहते २ कई मास व्यतीत होगये। बसन्त ऋतु का फिर अधिकार आ गया। रविदत्त को चिन्ता हुई कि लगभग एक वर्ष के घर से निकले होगया परन्तु अद्यपर्य्यन्त घर से कोई क्षेमकुशल का समाचार नहीं मिला। यह बात रविदत्त ने आनन्दकुमार से कहा अन्त में दोनों ने घर को चलना ही निश्चित किया। दूसरे दिन रविदत्त ने राजा से कहा "हे राजन् मुझे घरबार छोड़े लगभग एक वर्ष व्यतीत होगया अब

कुछ दिनों के लिये घर जाने की इच्छा है" राजा ने कहा "य
उन सब को यहीं बुलालो तो अति उत्तम होगा"। रविदत्त ने इ
के उत्तर में नम्रतापूर्वक निवेदन किया "हे राजन् इस बार तो मु
वहां हो आने दो–भविष्य में मैं ऐसा ही प्रबन्ध करूँगा" राजा
इस बात को स्वीकार कर लिया और रविदत्त और आनन्दकुमा
को बिदा करते समय दो घोड़े और बहुत सा धन दिया। ये घो
पर सवार होकर घर की ओर चल दिये। दोनों कुशलपूर्वक अपने
घर पहुँचे। परिवार के लोग फूले न समाते थे और परमेश्वर
कोटि २ धन्यबाद देते थे। इस प्रकार रविदत्त से मित्रता होने
कारण आनन्दकुमार के यहाँ भी आनन्द छा गया। रविदत्त ने
धन अपने किसी अन्य मित्र से उधार लिया था चुका दिया। तत
श्चात् रविदत्त कुछ दिन अपने गाँव में रह कर कुटुम्ब सहित रा
के यहाँ चले गये और वहाँ सुख पूर्वक जीवन व्यतीत करने लगे
किम्बहुना उनके गृह से दरिद्रता सदा के लिये बिदा होगई।

———o———

अन्य मतों पर वैदिक धर्म का प्रभाव।

(१)

(ले० श्रीयुत हरिहरदत्त शर्मा)

प्रिय पाठकवृन्द !

आज से ४० वर्ष पूर्व लोग आर्य समाज को नास्तिक मण्डल
कहा करते थे। ऋषि दयानन्द को वेद निन्दक, नास्तिक आदि शब्द
से याद किया करते थे। यहीं तक नहीं किन्तु ऋषिवर को जर्मन
का भेजा हुआ पादरी कहते थे। आर्य समाजी यदि कोई होगय
तो जानो प्रलय का मोकाबला किया उसको बिरादरी से खारि
किया जाता तरह तरह की तकलीफें दी जातीं। वास्तव में उस
समय आर्य धर्म स्वीकार करना वड़ी वीरता का काम था। ज
पौराणिक पंडितगण ऋषिवर के सामने, वैदिक धर्म के सामने
सत्सिद्धान्तों के सामने अवाक हो जाते थे, हार जाते थे, पराजय पा
थे, तो लज्जित होकर नीचता पर उतर आते थे, स्वामी जी पर पत्थ
बरसाये गये। गालियां चिलम फिकवाई गई। झूठमूठ ताली पि

छाई गई। सब प्रकार की कुटिल नीति वरती गई। उस समय पौरा-णिक धर्मावलम्बियों की दशा ठीक सन्निपात ग्रसित रोगी की थी। जिस तरह रोगी रोग के झोंक में आनतान बकता है। वैद्य को शत्रु समझता है। दवा फेंक देता है सर्व प्रकार का उपद्रव करता है किन्तु जब औषधि से रोगी को कल्याण होता है तो वैद्य को धन्य-वाद देता है और सबको उस की औषधि सेवन करने की सलाह देता है। परन्तु एक रोगी कृतघ्न होते हैं जिस वैद्य के नुसखे (प्रयोग) से फायदा होता है उस की दवा को अपने नाम से सेवन कराते हैं। जिस से अपनी स्तुति और वैद्य की निंदा करते हैं। ऋषिवर ने देखा कि भारत सन्तान अविद्या, खुदगर्जी, छल, कपट, बेइमानी निर्दयतादि रोगों से पूर्णरूप में ग्रसित है। ऋषि ने विचारा तो इस रोग से छूटने के लिये एकमात्र औषधि वैदिक धर्म बताया। पहले हमारे भाइयों ने औषधि सेवन करना अस्वीकार किया, केवल अस्वीकार ही नहीं किया बल्कि ऋषि पर अनेक प्रकार के अत्याचार किये। किन्तु इतना मोखालफत, इतना विरोध होने पर भी जब लोग वैदिक धर्मरूपी अमृतौषधि को धड़ाधड़ से पान करने लगे तो हमारे भ्रातृगण बड़े फेर में पड़े। लोग न तो उनके विरोध का परवाह करते थे और न उनके चाल में फंसते थे तो हमारे भाइयों ने नई चाल शुरू की:—वैदिक धर्म को, आर्य सिद्धान्तों को कहीं प्रत्यक्षरूप में, कहीं २ सिद्धान्तों को तोड़ मरोड़ कर अपने धर्म में प्रचार करने लगे अब हम इस विषय का प्रमाण देते हैं। पाठकगण ! देखो कि हमारी बात बिल्कुल सत्य है।

पहले मूर्ति को साक्षात ईश्वर मानते थे उसका आवाहन, विस-र्जन करते थे किन्तु अब केवल ध्यान का ज़रिया मानते है। (देखो पं० दीनदयालजी का लाहौर वाला लेकचर) अष्ट वर्षाभवेद् गौरी का अर्थ १६ वर्ष किया जा रहा है (देखो प० रामभिश्र शास्त्री का काशी का व्याख्यान) पहले पुराणों की कथाओं को सत्य मानते थे कि पुराण में लिखित किस्से कहानी सच हैं और ऐसे २ लोग गुज़रे हैं किन्तु अब पुराण की कथाओं को अलंकार मात्र मानते (अष्टादशपुराण दर्पण विद्या वारिधि पं०ज्वालाप्रसाद कृत) हैं अब पुराण के उन स्थलों को जहां पर शैव वैष्णवों का तथा वैष्णव शैवों की निन्दा करते ... प्रक्षिप्त (मिलावट) मानते हैं (देखो

उपरोक्त अष्टादश पुराण दर्पण) पहले शुद्धि की सख्तोड़ मुख़ालफ़त तक करते थे अब खुद करते हैं ('वेंकटेश्वर' समाचार में नास्तिक के धर्म परिषद का हाल तथा मई सन् १९०९ का 'आर्यसमाचार' कानपुर) अनेक पढ़े लिखे सनातनधर्मी फलित ज्योतिष को झूठा, मिथ्या तथा यवन ज्योतिष बतलाते हैं । (ज्योतिषचमत्कार पं० जनार्दन जोशीकृत) बहुत से सनातनधर्मी विधवा विवाह को शास्त्रोक्त, अत्यन्त आवश्यक तथा समयानुकूल समझते हैं (देखो विधवा पुनः संस्कार पं० श्रोतियशंकरलालकृत " विधवा विवाह पं० मुरारीलालकृत तथा दीवान नानकचन्द सी० आई० ई० कृत स्त्री व शूद्रादिकों को वेद पढ़ाना तथा सुनाना परम निन्दित, परम अनुचित, तथा परम नीचता मानते थे किन्तु अब सर्वसाधारण जिसमें शूद्र, ईसाई, मुसलमान, अन्त्यज्य सनातनधर्म सभावों में रहते हैं उनके सामने बड़े ज़ोर से वेद मन्त्र पढ़कर सुनाते हैं (विद्यावारिधि व्याख्यान वाचस्पति, विद्यानिधि महामहोपदेशकादि व्याख्यान सुनिये) प्रियपाठक आपका मन प्रमाण पढ़ते २ उक्ता गया होगा किन्तु थोड़ी युक्तियां प्रमाण में देकर तब आप से जुदा होना चाहता हूं नीचे सनातन धर्म मार्तण्ड नामक पुस्तक पं० गुरु सहायजी रचित तथा शाहजहांपुरस्थ धर्मसभा के सभ्य लोगों की सम्मति से रचित तथा सं० १९६५ द्वितीय वार काशी अमरप्रेस द्वारा छपी का प्रमाण देखो।
अपना भूला हुआ नाम आर्य स्वीकार करते हैं (देखो भूमिका) रामचन्द्र कृष्णचन्द्रादिक महापुरुषों के रूप बनाना निषेध करते हैं गुरू करने की कोई ज़रूरत नहीं मानते (सफा १३ व ३४) मित्रो उपरोक्त प्रमाणों से अच्छी तरह प्रमाणित हो गया होगा कि सनातन धर्मी अब आर्य समाज के कितने करीब होते चले आ रहे हैं ? वह दिन बहुत समीप है हमारे भाई हम से खुले दिल मिलेंगे स्वभावतः आप प्रश्न करेंगे कि इस फेर फार इस रद्दो बदल इस कतर ब्योंत का क्या कारण है ?

यह सब आर्य समाज के प्रबल, सत्य, समयानुकूल तथा वेदोक्त सिद्धान्तों का प्रभाव है । यह आर्य समाज के संस्थापक ऋषिवर महावीर श्रीस्वामी दयानन्द सरस्वतीजी महाराज के तप विद्या बुद्धि, योगबल का प्रताप है। यह पं. गुरुदत्त तथा पं. लेखराम

बलिदान का नतीजा है।

अगर हम चाहते हैं दुनिया अविद्यान्धकार से निकल कर वैदिक धर्म भास्कर के उजाले में आजाय तो हमको तन मन धनसे आर्यसमाज की मदद करना चाहिये। यदि हम पवित्रता, सदाचार, सद्व्यवहार और धार्मिक जमाना दुनिया पर लाना चाहते हैं तो हमको वैदिक धर्म ग्रहण करना चाहिये। वैदिक धर्म ही है जिसके सत्सिद्धान्तों का प्रवेश सब मतों में हो रहा है। आज हिन्दू धर्म की तस्वीर दिखा कर फिर मोहम्मदी मत का हाल दिखाऊंगा। इतिशम्।

———:o:———

क्या धर्म और विज्ञानमें विरोध है ?

(श्री यु० चन्द्र शेखर वाजपेयी लिखित)

(पूर्व लिखित से आगे)

पाश्चात्य और भारतीय विज्ञान में भेद।

यदि हम संसार के कार्य क्रम के ऊपर दृष्टि डालते हैं तो कार्य करने में भिन्न २ उपायों और रीतियों के अवलम्बन से, कार्यों के परिणामों और अनन्य शक्तियों की न्यूनता और अधिकता के होने से प्राणी मात्र की योनियों को दो बड़ी श्रेणियों में विभाजित करना पड़ता है। एक तो मनुष्य और दूसरी मनुष्येतर योनियां अर्थात वानर, जङ्गली पशु और पक्षी, गाय, बैल इत्यादि। दूसरी श्रेणी की अपेक्षा मनुष्य में बहुत से ऐसे गुणों की अधिकता होती है जिससे दोनों श्रेणियों में महान अन्तर पड़जाता है और स्पष्ट रूपसे दोनों में पृथकता दृष्टि गोचर होने लगती है। यदि अन्य बातों को छोड़ दें और केवल कार्य सम्पादन करने में उपायों को प्रयोग में लाने ही को लें तो दूसरी श्रेणीको मनुष्यों से कहीं बढ़ी चढ़ी पाते हैं। किन्हीं बातों में दूसरी श्रेणीको मनुष्यों का गुरू स्वीकार करना पड़ेगा। यह बात एक बाधा उपस्थित करती है कि केवल इस पृथकता के कारण से मनुष्य को ईश्वर की सृष्टि में उच्च पदवी नहीं दी जासकती। किन्तु इसके निर्णय करने के लिये अन्य बातों का भी ध्यान रखना चाहिये।

इस कथन की पुष्टि में कल्पना कीजिये कि आपके सम्मुख कीड़े

कीड़ों का जीवन रूपी संसार आता है। आइये और देखिये ये किस प्रकार से अपने जीवन यात्रा को व्यतीत करते हैं। इनका जीवन संसार एक महा विद्यालयके समान प्रतीत होता है जिसमें नाना प्रकार के कला कौशल नाना प्रकार की विद्यायें और भान्ति २ के व्यवसाय सिखलाये जाते हैं। वे मजदूरों की (Mechanics) एक चित्र शाला उपस्थित करते हैं। वल्मीकि को लीजिये। वे कैसी सुन्दरता, स्वच्छता और वैचित्रता से अपने दुर्ग रूपी गृह को बनाते हैं। वे जिस मिट्टीसे अपने मकान को बनाते हैं उसके अन्दर न तो कङ्कड़ और न किसी अन्य वस्तु का एक टुकड़ा भी मिल सकता है। वे मिट्टी को छान कर अपने गृह का निर्माण करते हैं। मनुष्यों के आविष्कार किये हुये यन्त्रभी ऐसा करने में असमर्थ होंगे। उनके गृह के अन्दर हजारों कोठरी और कोठरियां दृष्टि आती हैं जो वास्तव में "भूल भुलैयां" का दृश्य उपस्थित करती हैं। मनुष्य एक ताज महल, एक पिरैमिड और एकयन्त्र बनाता है और कहता है कि मैंने खूब उन्नति की है। परन्तु वह यह देखने का साहस नहीं करता है कि इस वल्मीकि के गृह के सम्मुख उनके मूल्य और गुण कम हो जाते हैं। इतना तो इनके गृह निर्माण करने की शक्ति के विषय में, अब चलिये इनकी सामाजिक रहन सहन और संस्था का निरीक्षण करिये। उनके यहां भी कार्य का विभाग होता है। कोई तो वस्तुओं के टुकड़ों को लाकर अपने राजा और रानी को देता है। कोई सिपाही का काम करता है और जब युद्ध दो दलों में आरम्भ होता है तब वे अपने राजा की रक्षा करने का यत्न करते हैं। इसी प्रकार से वे अपनी अल्पायु का निर्वाह करते हैं। बर्र और तितलियां कागज़ बनाती हैं। वे गारा (Mortar) बनाकर अपने गृह का निर्माण करते हैं। वे मिट्टी को खोदते हैं। वे आरा चलाकर लकड़ी काटते हैं जिससे मालूम होता है कि वे बढ़ई भी हैं। वे मिट्टी के अन्दर सुरंग भी खोदते हैं वे बुनने का भी काम करते हैं। ऐसा कौन सा कार्य सृष्टि में है जिसको ये कीड़े न करते हों। ईश्वर (या Nature जैसा पाश्चात्य वैज्ञानिक साहित्य में प्रयोग किया जाता है) उनको कार्य करने वाले यन्त्र और औज़ार प्रदान करता है। किसी के शरीर में आरा (*saw*) होता है। किसी के पास छिद्र करने का औज़ार होता है। कोई तो सुई और सिलाका से कार्य लेते हैं।

किसी के पास पकड़ने के लिये चिमटी होती है। कोई कीलही से कार्य करता है यहां तक कि (उन यन्त्रों में से कोई न कोई यन्त्र प्रत्येक के पास होता है जिन को मनुष्य ने अब तक आविष्कार किया है कौन सा ऐसा वैज्ञानिक सिद्धान्त या नियम है जिसको ये छोटे जीव जन्तु अपने प्रयोग में न लाते हों। शहद की मक्खियां *Wedge* और *Lever* के सिद्धान्त से कार्य सिद्ध करती हैं। उड़ने वाली पक्षियां वायुके नियमों के अनुकूल उड़ती हैं। आश्चर्य से कहना पड़ता है कि वे बड़ी निपुणता और कार्य कुशलता से अपने घोंसले बनाती हैं। क्षण भर के लिये मानलीजिये जैसा युरोप के वैज्ञानिकों का मत है कि किसी समय में मनुष्य निरा जङ्गली थे तब भी ये जीवजन्तु अपने ईश्वरदत्त औज़ारों से कार्य करते रहे होंगे। पानी के ऊपर देखिये मच्छड़ किस प्रकार से तैरता है। ऐसा मालूम होता है कि उसके पास (*lifeboat*) है। हमारे कार्य करने की प्रणाली का कोई ऐसा उपाय नहीं है जिसका अवलम्बन उन्होंने पूर्व ही से न किया हो। यह एक विस्मित होने की बात है। किन्तु इनमें और मनुष्य में जो सबसे बड़ा भेद है वह यह है जैसा कार्य करने और कार्य के ज्ञान रखने में होता है। एक की भोगयोनि है दूसरे की भोग और ज्ञान योनि दोनों होती है केवल कार्य करना मनुष्येतर जीव जन्तुओं का जीवनो द्देश्य होता है किन्तु मनुष्य को जानने का अधिकार होता है। मनुष्य के अन्दर बुद्धि की अधिकता होतीहै। मनुष्य सांसारिक वस्तुओं और पदार्थों से लेकर ईश्वर तकको जान सकता है किन्तु इसके विपरीत अन्य प्राणियों को इसका ज्ञान होना असंम्भव है। यहां पर यह अनुचित नहोगा यदि पाठक गणों का ध्यान इस ओर आकर्षित किया जावे कि बिलकुल इसी प्रकार का भेद पाश्चात्य और भारतीय विज्ञान में भी पाया जाता है। यदि आप पाश्चात्य विज्ञान की ओर दृष्टि डालिये तो वहां के वैज्ञानिकों ने केवल यन्त्रों का आविष्कार करने और उनसे कार्य लेनाही जीवनोद्देश्य मान रक्खा है परन्तु इस विषयमें भारत वर्ष की ऐसी अवस्था न थी। यहां पर विद्वानों ने विज्ञान को ईश्वर और परमार्थ का ज्ञान लब्ध करने में महान साधन माना था नकि इसी को अन्तिम उद्देश्य (*End*) जो मानुषी जीवन काहोना चाहिये। पाश्चात्य और भारतीय विज्ञान का मुख्यभेद साधन और उद्देश्य (*Means and End*) का भेद

हो जाता है। पाश्चात्य वैज्ञानिक विद्वानों ने कार्य करनाही अपना उद्देश्य दूसरी योनियों की भान्ति मानते हैं। यहां के ऋषि और महर्षि जीवन यात्रा के उद्देश्य के लिये कार्य करना और ज्ञान होना दोनों को मानते थे। मनुष्यके अन्दर जानने की शक्ति दूसरी योनियों की अपेक्षा अधिक होती है। अतः इस विशेष अधिकार से मनुष्यों के उद्देश्यों और आदर्शों में महान भेद आजाता है पाश्चात्य मनुष्य यन्त्र आविष्कार करते चले जाते हैं और उतने ही जीवन के प्रकाश से दूरचले जारहे हैं। विज्ञान को इष्ट देव स्वीकार कर लेना एक बात है और विज्ञान को साधन निश्चित करना दूसरी बात है अधिकतर इन दोनों वाक्यों के अन्दर मुख्य मौलिक भेद का वर्णन आ जाता है। पहिले वाक्य में पाश्चात्य और द्वितीय में भारतीय विज्ञान की विशेषता आजाती है।

आधुनिक समय में पाश्चात्य वैज्ञानिक नवीन यन्त्रों के आविष्कार से और उनको प्रयोग में लाने से उन्नति के उच्च शिखर पर पहुंच गये हैं और इन्हीं के सहायता और प्राकृतिक सिद्धान्तों के ज्ञान से बहुत सी अलौकिक बातों के ऊपर जय प्राप्त करली है और इस कथन में किञ्चित मात्र भी अवास्तविक सन्देह नहीं हो सकता है क्योंकि सब घटनायें सम्मुख ही उपस्थित हैं। कुछ तो इसी ध्वनि में मग्न रहते हैं कि ऐसी वैज्ञानिक उन्नति कभी भी संसार के इतिहास में नहीं हुई है। किसी अंश में यह भी उपयुक्त हो सकता है परन्तु साथ ही साथ नम्रता पूर्वक यह भी बतला देना अच्छा होगा कि प्रकृति के ऊपर जय प्राप्त करने का केवल यही एक उपाय नहीं है। जब कोई वस्तु मनुष्य के ऊपर अपना प्रभाव डालती है तो वस्तु और मनुष्य दोनों की वर्तमानता आवश्यक है। प्रकृति अपना प्रभाव डालती रहती है और हम अपने कर्म और ज्ञानेन्द्रियों द्वारा इन प्रभावों को अनुभव करते रहते हैं। मन को ये प्रभाव इन्द्रियों द्वारा प्रत्यक्ष होते हैं मनुष्य का समस्त जीवन वाह्य शक्तियों और प्रकृति के विरुद्ध झगड़ा करने में व्यतीत होता है। शीत और ऊष्णता से मनुष्य पीड़ित होते रहते हैं। ऋतुओं के परिवर्तन से मनुष्य को दुख पहुंचता है। यदि वर्षा निश्चित समय पर नहीं होती है तो अकाल से घिर जाने का भय रहता है। यदि अधिक वर्षा हो जाय तो जलप्लावन से अनेक

मनुष्यों के प्राण नष्ट हो जाते हैं और माल असबाव की हानि होने की भी सम्भावना होती है। आज कल अस्पतालों में जाइये हज़ारों मनुष्य नाना प्रकार की व्याधियों से पीड़ित हुये पाये जाते हैं। अर्थात् ऐसी महोन्नति को प्राप्त सभ्यता में भी दुखों की निवृत्ति नहीं हुई है। सुख के लिये यन्त्र बनाये जाते हैं परन्तु वे सुख और शान्ति प्रदान करने के विरुद्ध दुख पहुंचाते हैं इससे मेरा यह अभिप्राय नहीं है कि यन्त्रों का आविष्कार करना नितान्तः निरर्थक है परन्तु मेरा तात्पर्य यह है कि यदि प्रकृति के ऊपर एक ओर जय प्राप्त कर ली जाती है तो दूसरे ओर से उसी जय के तुल्य मनुष्य के ऊपर प्रकृति जय प्राप्त करती है। अन्त में हानि के सिवाय लाभ नहीं प्राप्त होता है। उदाहरण लीजिये एक मनुष्य बाल्यावस्था से ब्रह्मचर्य्य व्रत को पालन कर और विद्योपार्जन कर के सन्यासाश्रम में प्रवेश करता है। बालकपन में उसने ब्रह्मचर्य्य को पूर्ण रूप से पालन किया है अतः ऋतुओं के परिवर्तन से और शीत और उष्णता से उसको बहुत अल्प दुख पहुंचता है। इसी से उसको बहुत से वस्त्रों की आवश्यकता नहीं अनुभव होती है। दूसरी ओर देखिये जिन्होंने ऐसा नहीं किया है उनको वस्त्रों की अभावता से दुखों के आक्रमण से ओट नहीं पा सकते हैं। यदि इन्होंने अपने वस्त्रों के निर्माण करने में उनकी बनावट और सजावट में सारा जीवन व्यतीत कर दिया है और वस्त्रों की सिलाई के के लिये कल (Sewing Machines) बनाई, तो वास्तव में देखा जाय तो अपने जीवनोद्देश्य के पूर्ति के लिये उन्होंने अणुमात्र भी यत्न नहीं किया है और वे उद्देश्यों से उतनी ही दूर हैं जितनी दूर एक दूसरा मनुष्य हो सकता है जिसने कोई कल आदि नहीं बनाई हो। सभ्यता उसी उन्नति दशा को कह सकते हैं जिसमें दुखों के निवारण करने के लिये एक दुख के स्थान पर दूसरा दुख नहीं स्थापित किया जाता किन्तु दुखों की जड़ और मूल ही काटने का प्रयत्न किया जाता है। यदि हम सभ्यता की इस कसौटी को ग्रहण करते हैं तो आज सकल पाश्चात्य देश वास्तविक उन्नति से उतनी ही दूर खड़े हुये हैं जितनी दूर एक अर्द्ध सभ्यदेश की खड़े होने की सम्भावना हो सकती है। वर्तमान समय में पाश्चात्य देश प्राकृतिक नियमों और सिद्धान्तों को समझ कर यन्त्रों को आवि-

स्कार करते हैं और इन नियमों को अनुकूल बनाने का प्रय
करते हैं । एक प्रकार से वहां के मनुष्य इनके स्वामी बन बैठे हैं
परन्तु इसके बिलकुल विपरीत भारत के ऋषि और महर्षि
महात्मा पुरुष और तत्त्ववेत्ताओं ने प्राकृतिक शक्तियों के ऊपर अ
प्राप्त करने के लिये एक अन्य प्रकार का उपाय बतलाया है
उन्होंने मनुष्यों को उपदेश किया है कि यदि तुम इन शक्तियों
वश में करके, इनके स्वामी बनना चाहते हो तो तुम अपने मन औ
इन्द्रियों को ब्रह्मचर्य, व्यायाम, प्राणायाम और योगाभ्यास से
प्रकार का बना लो कि ये शक्तियां तुम्हारे ऊपर कुछ भी अधिक
न जमा सकें। यही प्राचीन विज्ञान की (मेरा तात्पर्य Psycholo
से है) उत्तम शिक्षा थी । यही मनोवाञ्छित फलों को देने वा
उपदेश था । अस्तु, शोक से कहना पड़ता है कि भारतवर्ष
ऐसी भी अवस्था शेष नहीं रह गई है जिससे उपरोक्त कथ
चरितार्थ हो सकता और पाश्चात्य देश को आदर्श दिखला
जा सकता ।

यदि हम किसी वस्तु अथवा रात्रि में नक्षत्र आदिकों को देखन
चाहते हैं तो मुख्य दो बातों की आवश्यकता होती हैं अर्थात् प्रथ
प्रकाश और द्वितीय चक्षुओं का आरोग्य अवस्था में होना । ज्ञा
लब्ध करने की इच्छा से चक्षुओं की निरीक्षण शक्ति की उन्न
करना योग्य है । इस शक्तिकी वर्तमानता से दोनों प्रकार के वीक्ष
यन्त्रों की सहायता से (Telescopes and Microscopes) नक्ष
और छोटी वस्तुयें भली भांति देखी जा सकती हैं । यदि हमने
निरीक्षण शक्ति की यथेष्ट उन्नति न की, अथवा कोई अनिवार्य
व्याधि ने नेत्रों को देखने से असमर्थ कर दिया और चक्षुओं के होते
हुये भी हम नेत्र हीन होगये, तो स्मरण रखना चाहिये कि वीक्षण
यन्त्रों से कुछ भी नहीं देखा जा सकता है। प्रथम स्वाभाविक अथवा
ईश्वरदत्त वस्तु की आवश्यकता होती है फिर इसके पश्चात्
कृत्रिम वस्तु होनी चाहिये। प्राचीन विज्ञान प्रथम स्वाभावि
शक्तियों का प्रादुर्भाव करने के लिये आदेश करता है परन्तु नवीन
विज्ञान स्वाभाविक शक्तियों को हानि पहुंचाते हुये कृत्रिम और
पदार्थ विषयक शक्तियों की उन्नति करना बतलाता है । विज्ञान के
इस कुत्सित प्रभाव को अनेक पाश्चात्य विद्वान देखने के समर्थ हैं।

उनमें से जान रसकिन (John Ruskin) और प्रो० लेकी (Prof. Lecky) थे । प्रो० लेकी ने "हिस्ट्री आव युरोपियन मारैल्स" (History of European Morals) में लिखा है कि "वर्तमान कालिक सभ्यता का समस्त ढांचा इस विश्वास पर निर्भर है कि मानसिक और पदार्थ विषयक शक्तियों की उन्नति करना एक अच्छी वस्तु है। यद्यपि अनेक सदसदाचार विषयक बुराइयां भी उत्पन्न होजांय जिनको बहुधा हम लोग निश्चयात्मक प्रथमही से देखने के समर्थ हैं" । युरोप के नवीन विज्ञान का बहिर्लक्ष्य है, परन्तु भारत के प्राचीन विज्ञान का अन्तर्लक्ष्य था । युरोप के विज्ञान का भित्ति शिल्पनैपुण्य है परन्तु प्राचीन आर्य्यों के विज्ञान की भित्ति स्वाभाविक आन्तरिक शक्तियों की गम्भीर उन्नति थी । पाश्चात्य वैज्ञानिकों की रुचि को देख कर यह कहा जा सकता है और यह कथन अभी तक वैज्ञानिकों के ऊपर घटित भी हो सकता है, कि युरोप में तत्कालिक वैषयिक आनन्द के अर्थही विज्ञान की उन्नति की जाती है। परन्तु प्राचीन भारतवर्ष में संसार का रहस्य प्रगट करने वाली विज्ञान विद्या को आत्मोन्नति का प्रथम रूप करके और साधन मात्र माना था ।

जो मनुष्य पत्रों को पढ़ते रहे हैं उनको उपरोक्त कथन की सत्यता सम्यक रूप से स्पष्ट हो जायगी जब वे इस ओर ध्यान देंगे कि कैसे मुक्तकण्ठ से अमेरिका निवासियों ने श्रीमती सत्यबाला की प्रशंसा की थी। आन्तरिक उन्नति को लक्ष्य में रख कर यह एक सङ्गीत का उदाहरण मात्र था। यद्यपि श्रीमती सत्यबाला के पास न तो लफूट न बैगपाइप, न हारमोनियम, न आरगैन और न बायोलिन थे, तौभी अपने कण्ठस्वर साधन के गान करने की अलौकिक रीति से और भारतवर्ष के वीणा यन्त्र से जैसे श्रद्धा के भाव भारत की सङ्गीत के प्रति अमेरिका निवासियों के हृदयों के अन्दर उत्पन्न किया था वैसा अन्य किसी नवीन आविष्कृत सङ्गीत यन्त्र से, चाहे जैसा पूर्ण और श्रेष्ठ हो, होना असम्भव सा प्रतीत होता है। श्रीमती सत्यबाला ने भारत के प्राचीन सङ्गीताचार्य्यों के समान अपने कण्ठ की विशेष और पूर्ण उन्नति की है । नवनि विज्ञान के प्रसार से ऐसी उन्नति का लोप सा हो चला है।

नवीन विज्ञान अभी तक पूर्ण वृद्धि को नहीं प्राप्त हुआ है ।

जो आज कल वैज्ञानिक सिद्धान्त मान जाते हैं वे दश वर्ष के पू
नहीं स्वीकार किये जाते थे । दश वर्ष पहिले के परमाणु सि
द्धान्त में अनेकानेक परिवर्तन होगये हैं। यदि निवटन Newto
का अवतार हो तो वे विस्मित होजायेंगे कि वर्तमान कालिक औ
उनके जीवन समय के विज्ञान में भूमि और आकाश का अन्त
होगया है और यह भी सम्भव है कि कदाचित वे इस विज्ञान
पहिचान भी न सकें । यद्यपि यह एक निर्विवाद विषय है
विज्ञान के जन्म दाताओं में से वे भी अपने समय में एक अद्वित
वैज्ञानिक थे । आज कल ४० तत्वों के स्थान पर ७० तत्त्व माने ज
हैं । इस विषय में प्राचीन वैज्ञानिकों की निपुणता सराहने यो
है । उन्हों ने प्रकृति की अवस्थाओं के हिसाब से पांच तत्व माने
अर्थात पृथिवी, जल, अग्नि, वायु और आकाश । परन्तु इसके स
ही साथ इन तत्वों का एक दूसरे में परिवर्तन हो जाया करता
क्योंकि इन सब तत्त्वों का मूल प्रकृति है जिसको सदार्थ शास्
में अनादि माना है और जिसका मुख्य गुण अविनाशत्व है । ये पां
तत्व प्रकृति के पांच आकारों के नाम हैं, वह इनको समय २
धारण करती है । शास्त्रों में ऐसा भी उल्लेख आता है कि सूक्ष्म
स्थूल पदार्थों की रचना होती है जैसे " तस्माद्वा एतस्मादात्म
आकाशः सम्भूतः । आकाशाद्वायुः " इत्यादि मन्त्र भली भांति प्र
करता है । यदि वैशेषिक दर्शन शास्त्र के उस स्थल का अवलोक
करें जहां पर इन तत्वों के गुणों का वर्णन आता है, तो
को ज्ञात हो सकता है कि प्रकृति के स्थूल या ठोस अवस्था (Soli
को पृथिवी कहते हैं, प्रकृति के द्रवीभूत आकार को जल कहते
(जिससे युरोप के विज्ञान में Fluid state of matter का
है), पदार्थ के गैस अवस्था (Gaseous) को वायु कहते हैं तेज
समस्त शक्ति (Energy) का प्रतिनिधि कह सकते हैं जैसा
नवीन वैज्ञानिक भी मानते हैं । जब विद्युत वायुशून्य शीशे के न
में से होकर जाता है तब अनेक प्रकार के प्रकाश की आभाएँ दि
लाई पड़ती हैं । उन्हीं में से " कैठोड रेज़ " (Kathode Ray
और " यक्स रेज़ " (X-rays) होती हैं जिनको वैज्ञा
" क्रुक्स " (Sir W. Crookes) पदार्थ की चतुर्थ अव
स्वीकार करते हैं । (Crookes concludes that ' this radi

form of matter was really a fourth state of matter and and quite distinct from the solid, liquid and gaseous states.') । एवं आकाश को पांचवीं अवस्था कह सकते हैं जिसके बीच से हो कर सूर्य से पृथ्वी तक प्रकाश आता है। इस प्रकार के पांच तत्त्वों को मानकर प्राचीन वैज्ञानिक विज्ञान की उन्नति और अवनति के झंझटों से बच गये थे । ऐसा लिखने से मेरा तात्पर्य यह कभी नहीं है कि नवीन तत्त्वों की भित्ति भ्रमोत्पादक है अथवा नवीन वैज्ञानिकों का ऐसा करना नितान्तः भूल है परन्तु इन पृष्ठों में जो कुछ लिखा गया है वह प्राचीन विज्ञान के गूढ़ विषयों, रहस्यों और स्थायी भित्त को नवीन विज्ञान के प्रकाश से समझने का साहसमात्र है।

वर्तमान कालिक विज्ञान परीक्षा से सिद्धान्त स्थापित करता है अर्थात् जिसे अंग्रेजी में (Inductive Method) कहते हैं। दृष्टान्त के तौर पर लीजिये कि उष्णता से पदार्थों का आकार फैलता है । यह सिद्धान्त तभी ठीक माना जा सकता है (जैसी नवीन विज्ञान की शैली है) जब चार या पांच परीक्षाओं से इस की सत्यता सिद्ध की जा सकती है । यहां का विज्ञान निगमन सिद्धान्त से परीक्षा स्थापित करता है ऐसी शैली को अंग्रेजी में Deductive Method कहते हैं । मान लीजिये, जैसा कि प्राचीन विज्ञान की प्रणाली है किँ पदार्थ संसार में वर्तमान है । तब इस सिद्धान्त की पुष्टि परिक्षाओं से की जायगी और पदार्थ के गुण और कर्मों का अन्वेषण किया जायगा।

नवीन विज्ञान की दृष्टि में कोई विषय भी निश्चित नहीं है । पदार्थ (Matter) की व्याख्या की जाती है । अन्त में इस परिणाम पर पहुंचा जाता है। पदार्थ की अस्तित्व का अनुभव नहीं हो सकता है कि किस वस्तु को पदार्थ कहते हैं । इसका भी ठीक निर्णय नहीं हुआ है। युरोप का नवीन विज्ञान केवल जड़ जगत में ही विचरण कर रहा है और इसका भविष्यत क्या और कैसा होगा यह निर्धारित करना बिलकुल ' सांप के बिल में हाथ डालने की' भांति भूल सा होगा । इसके विपरीत यहां पर एक चेतन, सच्चिदानन्दस्वरूप परमात्मा को मानकर फिर कुछ कार्य किया जाता था जिसके विषय में ऋषि और महर्षियों को निश्चयात्मक

परिपूर्ण ज्ञान था सो दोनों प्रकार के विज्ञान में इतना ही भेद है जाता है कि भारतीय विज्ञान अन्तर्जगत् में भ्रमण करता हुआ सर्वोत्कृष्टेश्वर भगवत् पदारबिन्द में जा मिलता है।

(अपूर्ण)

मृतक-संस्कार

सम्बन्धी आधुनिक कुरीतियां।

(पं० शिवनारायण शुक्ल बी॰ ए० लिखित)

जब कोई स्त्री या पुरुष मरने लगता है तो उसके सम्बन्धी प्राण निकलने से पूर्व ही उसको चारपाई से नीचे उतारकर पृथ्वी पर लिटा देते हैं। समझ में नहीं आता कि ऐसा क्यों किया जाता है सच बात तो यह है कि ऐसा करने से मृत्यु आसन्न पुरुष या स्त्री को महान कष्ट उठाना पड़ता है। जहांतक विचार पहुंचता है वहां तक यह मालूम होता है कि कभी सन्यासाश्रम में मनुष्य प्रवेश किया करते थे और सब सांसारिक बन्धनों को त्यागकर इस चतुर्थाश्रम में चले जाते थे। चारपाई से उतारने में कदाचित यह आशय हो कि उन सांसारिक बातों से पृथक कर दिया जाय। भला कहां संसार को छोड़कर, भूमिको शय्या बनाकर ईश्वर भजन करते प्राण त्यागना और कहां अब रोग ग्रस्त शरीर को घसीट कर नीचे डाल देना।

बंगाल में यह रस्म इस तरह है कि जब पुरुष या स्त्री मरने निकट होता है तो उसको गंगा के किनारे ले जाते हैं और जीवित को ही गंगा में गोता देते हैं और उससे हरी बोल कहलाते हैं और जब वह मर जाता तो उसका बेटा या यदि बेटा न हुआ तो अन्य कोई सम्बन्धी जो उस समय उपस्थित होता है, सब सिर और डाढ़ी मूँच्छ मुड़वाकर "भद्रा" करा लेते हैं और किन्हीं स्थानों में सब कुलके आदमी, वरन जहां कोई परदेश में भी होता है वह भी मृत्यु के समाचार सुनकर शिर के केश इत्यादिक मुड़वा लेता है। इसके पश्चात सब बिरादरी के लोग आते हैं और उसके द्वार पर बिछौना कुछ बिछाये बैठ जाते हैं। महाब्राह्मण को बुलाया जाता है बाजार से बांस और कपड़ा मंगवाकर, टिकटी बनवाकर मुर्दे

फूकने ले जाते हैं। इधर घर की स्त्रियां किसी तालाब पर रोती पीटती जाती हैं। पुरुष टिकटी को जब लेकर चलते हैं तो मार्ग में दो तीन स्थान पर कच्चे आटे के पिन्ड बनाकर छुड़वाये जाते हैं। इसके पश्चात् मृतक पुरुष को चिता पर ले जाकर और थोड़ा सा चन्दन, और ज़रा सा घी डालकर उसको जला देते हैं। इसके पश्चात एक तालाब पर जाकर सब स्नान करते हैं और घर पर जाकर सब न्हाते हैं औरएक नीम का पत्ता चबाकर सब कुटुम्ब के लोग घर वापिस चले जाते हैं। उस रोज किसी अन्य के घर से खाने को आता है तब खाते हैं। उधर सब स्त्रियां तालाब से भीगे कपड़ों सहित आती हैं। महीनों तक यह होता है कि कुटुम्ब के और मोहल्ले की स्त्रियां आती हैं और सब मिलकर रोती हैं। जब २ कोई आता है तब २ रोती हैं और जिस किसी को आंसु न आवे उनको बुरा भला कहती हैं। पुरुष तीसरे दिन उसकी चिता से हड्डियां उठा लाते हैं और उन हड्डियों को उसी समय या दस पांच दिन बाद गंगा में ले जाकर फेंक देते हैं। पंजाब में इन हड्डियों को वर्षों तक घर में रखे रहते हैं और जब कभी भी गंगा को स्ना-नार्थ आने का अवसर मिलता है तब उनको गंगा में लाकर डालते हैं। छोटे २ लड़के लड़कियों को तो सैकड़ों हिन्दू ही नहीं वरन् आर्य लोग भी पृथ्वी में गाड़ देते हैं।

मेरी तुच्छ बुद्धि में डाढ़ी मूँछे मुड़वाने की कोई आवश्यकता नहीं मालूम होती। व्यर्थ पागलों की भांति सूरत बनाई जाती है। सम्भव है किसी समय में लोग सिर मुँडवाने को दुःख मानने का चिन्ह समझते हों। पिंड इत्यादिक देना मूर्खता के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। किसी सत् शास्त्र में यह नहीं लिखा मालूम होता कि यह पिंड मृत पुरुष या स्त्री को पहुंच जाते हैं। केवल गरुड़ पुराण इत्यादि आधुनिक ग्रन्थों में टका पन्थियों ने इसको मिला दिया हुआ मालूम होता है। किसी मृत पुरुष की हड्डियों को गंगा में डालकर यह आशा करनी कि उसको मुक्ति मिल जायगी सर्वथा मूर्खता और अज्ञानता की बात है। इन्हीं खराब वस्तुओं को गंगा इत्यादिक नदियों में डाल कर उनके जल को दुर्गन्धित किया जाता है। दो चार तोला चन्दन इत्यादिक डालने की रिवाज़ संस्कार विधि में लिखित पूर्ण संस्कार की बिगड़ी हुई दशा है। संस्कार विधि में

संक्षेप से इसका विधान यूं है कि मृत पुरुष को प्रथम स्नान करा कर साफ कपड़ा लपेट दें और आबादी से बहुत दूर दक्षिण की ओर लेजाकर ढाक इत्यादिक की लकड़ी से संस्कार विधि में लिखित मन्त्रों के द्वारा कम से कम दो मन घी, चन्दन, तगर, काफूर इत्यादि से मृत शरीर को जलाये । इन सुगन्धित वस्तुओं के डालने से जीवित पुरुषों को किसी प्रकार की दुर्गन्धि पहुंचने की आशंका नहीं होती । इसके पश्चात स्नान करके घर पर चले जाना चाहिये । स्त्रियों को भी घर पर स्नान कर लेना चाहिये । तालाब इत्यादिक पर जाकर नहाना असभ्यता में शामिल है । जब शरीर जल चुके और राख इत्यादिक सब ठंडी होजाय तो हड्डियों को किसी स्थान में दबा देना चाहिये । दस दिन के बाद घर को लीप पोत के हवन करके शुद्ध करदेना चाहिये । किसी धर्म विशेष को छोड़ कर बुद्धि से भी यह बात स्पष्ट है कि मृत पुरुष के शरीर के दुर्गन्धि युक्त परमाणु वायु में मिल कर साधरणतया मुहल्ले भर के और विशेष कर उस घर के निवासियों के चित्तों में ग्लानि उत्पन्न कर देते हैं और वायु अपवित्र होने से बीमारी आने का भी भय रहता है । इसी को ध्यान में रख कर ऋषियों ने यह विधि रख दी है कि हवन द्वारा वायु को शुद्ध किया जाय और जो कुछ आशंका दुर्गन्धि से है वह सब जाती रहै ।

हिन्दूमात्र का विश्वास है कि मरने के बाद मनुष्य प्रेत होजाता है अर्थात् इस भौतिक शरीर को छोड़ कर सूक्ष्म शरीर ग्रहण कर लेता है और उसके बेटे या अन्य किसी निकट सम्बन्धी को चाहिये कि उसकी क्रिया कर्म यथा विधि करदें यदि वह न करे तो जब तक यह न किया जावे तब तक उसे दूसरी योनि नहीं मिलती और न उसको मोक्ष मिलता है । इसलिये ब्राह्मण लोग बतलाते हैं कि बाद मरने के तीन दिन तक एक चिराग चौराहे पर जलाओ। तीसरे दिन से दसवें दिन तक प्रति दिन एक पिण्ड आटे का बना कर और उस पर मधु, घी, चंन्दन इत्यादिक लगा कर मृत पुरुष के नाम पर दिया जाये अर्थात् तालाब इत्यादिक में डाल दिया जाय। एक पानी का घट भर उसकी तली में छोटा सा छिद्र करके किसी पीपल के वृक्ष पर रख देते हैं कि दस दिन तक अर्थात् प्रेतयोनि की दशा में मृत पुरुष इस घट का पानी पीता है और आटे का पिंड

जाता है। दसवें दिन सब आदमी कुटुम्ब के फिर शिर मुड़वाते हैं और ग्यारहवें दिन एक महाब्राह्मण सपिंडी अर्थात् एक बड़ा पिंड बनवाता है और मन्त्र पढ़ कर, कुसकी तिनकी से उसे काट देता है। काटने से कदाचित यह आशय रक्खा गया हो कि अब उसकी प्रेत योनि छोड़ दी गई और वह पितरों में सम्मिलित होगया। जब तक महाब्राह्मण को भरपूर नज़राना नहीं मिलता तब तक वह प्रेत योनि को नहीं काटते। या यूं समझिये कि जैसे ईसाइयों में हजरत ईसा मसीह की शिफारिश से और मुहम्मदियों में मुहम्मद की शिफारिश से मुक्ति मिलती है वैसेही हिन्दुओं में कुपढ़, धूर्त्त, पाखंडियों से मुक्ति दिलाई जाती है। बहुत से कपड़े, नाज, पलंग इत्यादिक इन महाब्राह्मण को दिये जाते हैं और यह समझा जाता कि यह सब वस्तुएं मृत पुरुष के पास पहुंच जांयगी। बारहवें दिन मिट्टी के बारह घड़े भर कर बारह ब्राह्मणों को एक २ पैसा और कुछ कपड़ा एक घड़ा दे दिया जाता है। यह कदाचित इसलिये रक्खा गया हो कि मृत पुरुष को वर्ष भर का समान देदिया जाता है। ताकि वह पानी और भोजन से दुखित न हो अर्थात् यह घड़ा और कपड़ा और ब्राह्मणों की खिलाई हुई मिठाई प्रतिमास उसको मिलती रहेगी। वह यह भी समझते हैं कि रास्ते में कोई नदी मिलती है जिसका नाम बैतरणी है। उसमें पानी के स्थान में खून है और जैसे नदियों में जानवर होते हैं उसमें भी सांप बिच्छू हैं। जो मनुष्य यहाँ गौदान इत्यादिक कर देते हैं तो वह गाय मृत पुरुष से पहिले ही इस नदी के किनारे आजाती है और मुर्दा उसकी पूंछ पकड़ कर तुरन्त बैतरणी उतर जाता है। तेरहवें दिन सब रिश्तेदार एक २ पगड़ी और एक २ रूपया नज़राना लाते हैं और पगड़ी लड़के के शिर पर बाँधी जाती है।

हमने जितनी प्रचलित रस्में बतलाई हैं उनमें अधिकांश सब व्यर्थ है। इसमें सिवाय रुपया फेंकने और व्यर्थ समय नष्ट करने के और कुछ नहीं है। किसी धर्म शास्त्र में उनका विधान नहीं है। केवल पाखंडियों ने टका कमाने के लिए और सीधे साधे मनुष्यों को ठगने केलिए अपनी मन मानी गढ़ंत कर रखी है। जिन जातियों में यह सब भ्रमजाल नहीं होते उनके समस्त पुरुष क्या नरक में ही पड़े होंगे [illegible] जिस से

वायु शुद्ध होजाय और जो रस्म पगड़ी बाँधने की है इसमें कुछ हानि नहीं जान पड़ती क्यों कि इससे आशय जान पड़ता है कि जब किसी का बाप मा अन्य घर का पूज्य मर गया हो तो बाप के मरन के बाद सब बिरादरी और कुटुम्ब के लोग लड़के के पगड़ी बाँध देवे और उस को समझा देवें कि अब तुम अपने पिता के स्थानापन्न हो तुम्हीं घरके कर्त्ता धर्त्ता हो। महा ब्राह्मण को कपड़ा इत्यादिक देना सब मूर्खता सूचक है। भला सोचोतो सही शरीर को पलँग और बिछौने की आवश्यकता होती है न कि केवल जीव को। जब शरीर को दबा दिया या जला दिया तो पलगँ पर कौन सोवेगा और कपड़े कौन ओढ़ेगा। भला कौन समझदार मनुष्य इस बात को मानेगा कि यहां दी हुई गाय बैतरणी के किनारे कैसे पहुँच सकी है। और हां जब मनुष्य पूँछ पकड़ कर स्वर्ग पहुँच जाता है तो गाय भी तो स्वर्ग ही पहुचँ जाती है। भला उसको मुक्ति न मिलेगी। परन्तु प्रायः देखा गया है कि मनुष्य के मरजाने के वर्षों बाद तक वह गायें जीवित रहती हैं तब तो उस मुर्दे को बर्षों बैतरणी के किनारे प्रतीक्षा करनी पड़ती होगी। अपस्वार्थियों ने भी जब देखा कि भाई अबतो सेठजी चल ही दिये अबतो इनसे कुछ प्राप्ति होगी नहीं तो यह ढकोसला निकाल दिया कि मरने के साल भर तक उन्हें दूसरी योनि न मिले और तब तक महा ब्राह्मण सौ पचास रुपये का और कुछ ऐंठले। गाय देने में कुछ हानि नहीं अगर किसी के बाल बच्चे बिना दूध के कष्ट पा रहे हों औ किसी धनाढ्य के पास धन हो या गायें हो तो अवश्य यथा शक्ति दान करदें। परन्तु खुशी से सुपात्र को दान देना एक बात है और धोखे से दान लेना दूसरी बात।

हिन्दुओं के यहां मृतपुरुष के लिये बहुत शोक मानते हैं। पुरुष चूँकि समझ दार होते हैं इस लिए वे तो दो चार दिन ही रो पीट कर बैठ रहते हैं परन्तु स्त्रियां अपनी छाती घुटना और सिर खूब पीटती है। बर्षों और महीनों तक शोक मानया जाता है। रोज़ शाम को कुटुम्ब की स्त्रियां घरकी स्त्रियों को रोने में सहायता देने के लिए आती हैं। और फिर उनका रोना भी साधारण रोना नहीं एक बिचित्र ही रोना होता है। बाहर की स्त्रियां कभी दौड़ आती हैं और कभी चार २ और घर की स्त्री की इन सब के आने पर

पृथक २ रोना होता है। वर्षों तक पक्का खाना पूरी इत्यादिक कुछ नहीं बनता। कोई व्यवहार नहीं मनाया जाता। किन्हीं २ प्रान्तों में तो रोने वालियों का एक विशेष समुदाय है। वे अमीरों के घर से बीसों रूपया लेकर बर्षों रोज आती हैं। वास्तव में ऐसे स्त्रियों के आने का यह आशय रक्खा गया होगा कि जब किसी मनुष्य को शोक होता है तो उसके कुटुम्ब वाले और सम्बन्धी लोग उनको धीरज दिलाने के लिये आवें अब मूर्खता के बश उनके आने पर और अधिक रोया जाता है।

यह अवश्य है कि जब किसी का सम्बन्धी मृत्यु को प्राप्त होकर उससे पृथक हो तो शोक होता ही है और बहुतों को रोना भी आता ही है परन्तु यदि विचार दृष्टि से देखा जाय तो इसमें केवल मूर्खता और समय नष्ट करने के और कुछ नहीं है। यदि किसी को प्रेम का जोश आवे तो वह कहीं एकान्त में जाकर रोले। स्त्रियों के समुदाय घर आवें और घर की स्त्रियों को आकर धैर्य्य दिलावें तो इस में कोई बुराई नहीं जान पड़ती परन्तु मोहल्ले और कुटुम्ब की स्त्रियों का आकर रोने और छाती पीटने में शक्ति खर्च करना मूर्खता के अतिरिक्त कुछ नहीं।

हिन्दुओं में जब कोई बूढ़ा मरता है और यदि उसके पुत्र और प्रपोते होते हैं तो वे बजाय रोने पीटने के बड़ी धूम धाम से उसकी क्रिया कर्म करते हैं और यदि कोई ऐसा न करै तो उस की नाक कट गई इत्यादिक उपाधियाँ दी जाती हैं। न मालूम यह किस विधि के अनुसार माना जाता है। किसी भी मनुष्य की मृत्यु पर चाहे वह बूढ़ा हो या युवक ऐसा उपहास करना या कराना शास्त्रानुकूल या युक्तिसिद्ध नहीं जान पड़ता।

पाठक वृन्द ! हमने यह संक्षेप से मृतक संस्कार सम्बन्धी कुरीतियां बतलाई हैं। जीवन के किसी भी अंश को देखो बाल्यावस्था से लेकर मृत्युपर्य्यन्त, नहीं नहीं मृत्यु के बाद भी हमारे घरों की कुरीतियां पीछा नहीं छोड़तीं। पाखंडी धुर्तों ने भोले भाले हिन्दुओं को ऐसे निन्यान्हवें के फेर में डाल रखा है कि उन्हें इस बात के बिचारने का अवसर भी नहीं मिलता कि वे क्या कर रहे हैं। वेद शस्त्रों के अर्थों की खेचा तानी को छोड़ कर केवल बुद्धि की कसौटी ही हमारी कुरीतियों की पड़ताल करदेगी। हमारे

विचार है कि शास्त्रों की बारीकियों में न पड़कर हम बुरे संस्कारों की ओर एक दृष्टि डालें।

पाखँडियों के भ्रमजालात्मक भवन को स्वामी दयानन्द के युक्ति और प्रमाण के बाणों ने अच्छी तरह से छिन्न भिन्न करही दिया है और इनके ऊपर उसके पश्चात् भी बहुतेरों ने कुठाराघात किया है तथापि हमारा यह विश्वास है कि नवीन जीवन के संचार काल के पूर्व यह अत्यावश्यक है कि बुरे संस्कारों का किञ्चिन्मात्र भी प्रभाव हमारे में न रहे। क्षेत्र में नवीन बीज के वपन के पूर्व बुद्धिमान किसान को चाहिये कि जो कुछ कूड़ा करकट क्षेत्र में पड़ा हो उसको बाहर निकालदे। यही विचार कर लेखक का यह इरादा है कि आधुनिक आचार व्यवहार त्यौहार और संस्कारों पर, कि जिन पर भारत वासियों का अमूल्य समय द्रव्य और शक्ति स्वाहा हो रही है एक विचार पूर्वक दृष्टिपात किया जाये। प्रत्येक जाति की सभ्यता का पता इन्हीं चार वस्तुओं से लगता है।

भारतवर्षीय
आर्य्य कुमार सम्मेलन।

जिस सम्मेलन के सम्बन्ध में गत दो मास से एक प्रबल आन्दोलन हो रहा था, जिस सम्मेलन के सम्बन्ध में आर्य्य कुमारों का उत्साह दिनों दिन बढ़ रहा था और जिस सम्मेलन की सफलता के लिये सहारनपुर के कुमार सरतोड़ परिश्रम कर रहे थे, वह सम्मेलन गत १९ और २० अक्टूबर को बड़े समारोह के साथ निर्विघ्न समाप्त हुआ। अनुमान एक सौ से अधिक आर्य्य कुमार बाहिर से सम्मेलन में सम्मिलित हुए। पिशावर, लाहौर, काशी तथा अन्य दूरवर्ती नगरों के कुमारों को देख कर आर्य्य पुरुषों तथा आर्य्य कुमारों का उत्साह द्विगुणित हो रहा था। १९ तारीख प्रातःकाल ही पण्डाल में जौक दर जौक लोग आने लग गये, ८ बजे नर नारियों की इतनी भीड़ हो गई कि न केवल पण्डाल में स्थान न रहा किन्तु मकानों और सड़क पर भी बैठने की जगह न थी। अनुमान ९॥ बजे पर्य्यन्त भजन होते रहे, तब श्रीयुत महाशय देवीचन्द जी स्वागत कारिणी सभा के प्रधान महोदय ने अपनी वक्तृता आरम्भ की, आप ने जहां प्रतिनिधियों को हार्दिक धन्यवाद दिया और

उनका स्वागत किया वहां अपनी कठिनाइयां बतला कर लोकल उत्साही कुमारों का उत्साह भी बढ़ाया। आप की स्पीच श्रीयुत महाशय महादेव प्रसाद जी महामन्त्री ने पढ़ी। तदन्तर सम्पादक नवजीवन ने श्रीयुत लोकमान्य लाला लाजपतराय जी को सभापति के आसन पर चुनने का प्रस्ताव उपस्थित किया। आप ने बतलाया कि जैसे समुद्र को पार करने के लिये नौका की ज़रूरत पड़ती है और उस नौका को उस के उद्देश्य तक पहुंचाने के लिये सहस्रों मनुष्यों के जीवन कप्तान के हाथ में होते हैं वैसे ही किसी संस्था को योग्य संचालक नेता या कप्तान की ज़रूरत होती है। आर्य्य कुमारों के सम्मेलन के लिये भी हमें किसी ऐसे ही नेता की आवश्यकता थी। हमारे लिये यह सौभाग्य का समय है कि जिस महानुभाव ने कौमारावस्था में प्रातः स्मरणीय पं० गुरुदत्त जी के साथ आने वाली नसलों में वैदिक धर्म फैलाने के स्वप्न देखे थे, जिस महापुरुष ने अपने सारे जीवन में आर्य्य कुमारों को सहायता देकर धर्म परायण बनाने का उत्तम कार्य्य किया, हां, जिस धर्मात्मा ने अपने विचारों को फैलाने के लिये कभी भी देश के कुमारों को नहीं छोड़ा, वही महानुभाव लोकमान्य श्री लाजपतराय जी आज हमारे अन्दर उपस्थित हैं। हमें आप के नेता होने में सफलता की पूर्ण आशा है इस लिये मैं सहर्ष प्रस्ताव करता हूं कि तृतीय भारतवर्षीय आर्य्य कुमार सम्मेलन के सभापति श्रीयुत लाला लाजपतरायजी चुने जावें। महाशय बालमुकन्दजी बी. ए. (प्रयाग) ने अनुमोदन किया और महाशय चरणदासजी बी. ए. (सहारनपुर) ने समर्थन किया। तत्पश्चात् श्रीयुत्त महाशय दुर्गाप्रसादजी ने लोकमान्य लाला लाजपतरायजी के अनेक प्रशंसनीय कार्य्यों को अपनी रोचक उर्दू कविता द्वारा वर्णन किया इसके पश्चात लोक की कर्णभेदी करतल ध्वनि में श्रीलाला लाजपातरायजी ने सभापति के आसन को स्वीकार किया—

——o——

ओ३म् ।

स्वागतकारिणी सभा के सभापति की स्पीच।

समानो मन्त्रः समितिः समाना
समानं मनः सह चित्तमेषां ।
समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समानेन
वो हविषा जुहोमि ॥ ऋ० ८।४९।३॥

उस परम दयालु परमात्मा को कोटि २ धन्यवाद है जिसकी असीम कृपा से आज मुझे यह सुअवसर प्राप्त हुआ है कि दूर से पधारे हुये आप सब आर्य युवकों का स्वागत करूं। आर्य समाज के इतिहास में यह प्रथम ही अवसर है कि एक मण्डप में बङ्गाल पञ्जाब संयुक्त प्रान्त तथा मध्य प्रदेश के आर्य युवक अपने प्रतिनिधियों द्वारा आर्यकुमार सभा के संगठन के उद्देश्य तथा नियमों पर विचार करने के लिये उपस्थित हुये हैं।

इस से पूर्व भारतीय आर्यकुमार सभाओं के दो सम्मेलन हो चुके हैं। प्रथम १९०९ में रावलपिंडी में श्रीमान पं० केशवदेव शास्त्री की अध्यक्षता में और द्वितीय महाशय अलखमुरारीजी बी० ए० एल० एल० बी० के सभापति में गतवर्ष आगरे में हुआ। अब यह सम्मेलन का तीसरा अधिवेशन है। यद्यपि अब चार वर्ष के बाद यह बताने की आवश्यकता नहीं कि आर्यकुमार सम्मेलन क्यों आवश्यक है। तो भी यह बतला देना अत्यावश्यक समझता हूं कि आर्यकुमार सभायें कई वर्षों से बनी हुई हैं। परन्तु संगठित न होने के कारण यथेष्ट कार्य नहीं हो सका—निस्सन्देह यदि परिषद् का संगठन विचार पूर्वक बना दिया जावे तो वही उद्देश्य रखते हुये आर्य समाज से विरोध न होगा।

प्रायः सभी आर्य्य सज्जन इस बात पर विचार करते हैं कि आजकल आर्य्य समाज की चाल कुछ मन्द सी हो गई है। यद्यपि पतितोद्धार, शिक्षा, और अनाथ रक्षा का कार्य्य बढ़-चढ़ कर हो रहा परन्तु समाजिक शक्ति शिथिल होती जाती है। इसका विशेष कारण युवकों में धर्म की श्रद्धा की कमी और आर्य समाज के प्रसिद्ध उद्धारक न दिया सकता है।

युवक जातिका आधार हैं। उन्हीं से जाति बनती है और वेही अधिक शक्ति से कर्मक्षेत्र में काम करने में समर्थ हो सक्ते हैं। स्थानिक आर्य्य समाज की शक्ति आर्य युवकों पर ही निर्भर है। परन्तु हमारे दुर्भाग्य से प्रायः आर्य समाजों और कुमार सभाओं में अनबन पाई जाती है। इसका मूल कारण संगठन की त्रुटि है अभी तक आर्यकुमार सभा के लिये आर्य समाज कुछ भी उत्तरदाता नहीं है। नहीं प्रतिनिधि सभाओं ने इस विषय पर विचार कर कुछ सुगमता की है। वस्तुतः आर्यकुमार सभा संस्था है कि जिसका अस्तित्व तो है परन्तु यह किसी समाज के संगठन में अवयव रूप नहीं। इसी कारण प्रायः अधिकारियों में मत भेद हो जाता है। अब आवश्यकता है कि कुमार सभाओं को संगठित कर इनकी शक्ति का सदुपयोग किया जावे।

इस विषय पर जो कुछ आन्दोलन हुआ है उसे सभी श्रोतागण समाचार पत्रों में अवलोकन कर चुके होंगे। इस लिये इस विषय पर अधिक न कह कर मैं आप का ध्यान माननीय महाशय अलखमुरारी जी के प्रस्तावित नियमों की ओर दिलाना चाहता हूं। तदनुसार यह परिषद् संगठित हो कर सार्वदेशिक सभा के आधीन रह कर कार्य करे तो बिना विरोध कुमार सभायें आर्य समाज की अनुमति से कार्य कर महान कार्य में आर्य समाज का हाथ बटावेंगी। और प्रत्येक आर्य युवक २५ वर्ष की वयस तक तय्यार हो कर आर्य सभासद बन कर आर्य समाज का गौरव बढ़ावेगा॥

अब आवश्यकता है कि अधिक उदारता से काम लिया जावे और अन्य मतावलम्बी नवयुवकों को वैदिक आचरण दिखाया जावे और उन्हें अवसर दिया जावे कि वे आर्य ग्रन्थों और वैदिक धर्म का स्वाध्याय तथा मनन करने में सहायता पा सकें।

आर्यसमाज की वेदी आज कल अभ्यास करने का स्थान बन रही है। लोग आर्यसमाज में आकर उपदेशक बन बैठते हैं। और अवैदिक विचारों से जो हानि हुई है उसे आप सब ही जानते हैं। छोटे से छोटे काम के लिये अभ्यास की आवश्यकता है। पटवारी तक बनने के लिये परीक्षा होती है। और कुछ समय तक काम कर के दिखलाना पड़ता है। भ्रातृगण! क्या यह आवश्यक नहीं कि हर एक सभासद धर्म ग्रन्थों से परिचित और कर्मक्षेत्र में कुछ

लोक सेवा का अनुभव करके आर्य सभासद बनें। इस लि आर्यकुमारों में स्वाध्याय और निष्पन्न होकर विचार और काम ने की शक्ति बढ़ाने की आवश्यकता है।

यह बड़े सौभाग्य की बात है कि हमारे भाइयों का ध्यान ओर आकर्षित हुआ है और आशा की जाती है कि इस सम्मे में इन सब कठिनाइयों पर विचार होकर कार्य प्रणाली निश्च हो जावेगी जिससे आर्य युवक निर्विघ्न देश, धर्म, प्राणीमात्र सेवा कर वैदिक धर्म का गौरव बढ़ावेंगे। निसन्देह हर मह कार्य्य में विघ्न उपस्थित हुआ करते हैं परन्तु यदि उदारता धैर्य से काम लिया जावे तो सब रुकावटें दूर हो जाती हैं। लोगों का बड़ा सौभाग्य है कि ऐसे अवसर पर लोकमान्य लाला लाजपतरायजी ने हमे सफलता की आशा दिलाई है।

इस सम्मेलन को फलीभूत करने में अनेक महाशयों ने प्रकार से हमारी सहायता की है। उन सबके हम अत्यन्त अनुगृहीत हैं। हम समाचार पत्रों के सम्पादकों को हार्दिक धन्यवाद देते प्रायः सभी ने सम्मेलन में हमे सहायता दी है। आर्यकु० स सहारनपुर की ओर से आपको निमन्त्रण स्वीकार करने के धन्यवाद देता हुआ आपको हर्ष से स्वागत करता हूं। अन्त आर्यसमाज सहारनपुर के चार सभासदों को स्वागत कारि सभा में काम करने के लिये नियत करने के लिये धन्यव देता हूं।

अब आप से प्रार्थना करता हूं कि इस सम्मेलन का सभाप चुन कर इस शुभ अवसर पर कार्य को प्रारम्भ कीजिये। यद्य आप लोग इस विषय में अपनी इच्छा पहिले से ही प्रगट कर चु हैं। तो भी प्रचलित रीति के अनुसार सभापति का चुनाव समय होना उचित है।

अतएव मैं पूज्यवर श्रीमान कविराज केशवदेवजीशास्त्री प्रार्थना करता हूं कि वे इस प्रस्ताव को आप लोगों के सम्मु उपस्थित करने की कृपा करें।

देवीचन्द

—o—

सभापति की वक्तृता का सारांश।

जब मुझे सभापति बनने के लिये आपने प्रार्थना की उस समय मुझे कुछ तामुल था। इस लिये नहीं कि मैं आपकी संस्था के महत्व को नहीं समझा था और नहीं इस लिये कि मुझे आपके विचारों के विस्तृत होने में सन्देह था किन्तु इस लिये कि इस उच्च आसन के लिये मुझे अपनी योग्यता में सन्देह था। मेरी सम्मति में देश सेवकों की सब से आवश्यक और कठिन उत्तर दायता इसी में है कि वह देश के युवकों की सेवा करने के कष्ट और जिम्मेवारियों को बतलावें और उन्हें सफलता के मार्ग पर चलावें ऐसा न हो कि युवावस्था के प्रबल उत्साह या आलस्य तथा उपेक्षा की चट्टान से टकरा क चकना चुर हो जावें। हमारे देश की सामाजिक राजनैतिक तथा धार्मिक अवस्था ऐसी विचित्र है कि जिसका उदाहरण प्राचीन देशों के इतिहास में कहीं भी नहीं पाया जाता। ऐसी पुनीत भूमि अन्यतर कहीं भी नहीं मिलती। बर्फीली चोटियां और रेतिले मैदान इसी भारतवर्ष में पाये जाते हैं।

हमारी जनसंख्या का अधिक भाग [हिन्दू मुसलमान] प्रायः एकही जाति से हैं। जो रक्त उनकी नस नाड़ियों में बहता है वह अधिकतर आर्यों का ही है। चाहे उत्तर को जाओ अथवा दक्षिण को पूर्व में देखो वा पश्चिम में जनसंख्या के अधिक भाग में आर्यों के ही मौखिकाचिन्ह तथा चिहरा मुहरा की बनावट पाई जाती है और जनसंख्या के अधिकांश की भाषाएं भी एक ही भाषा से प्रायः निकली हैं। निस्सन्देह धार्मिकावस्थाओं में बड़ा अन्तर दृष्टिगोचर होता है। परन्तु हिन्दू धर्म की यह विचित्र उत्तमता है कि वह प्रत्येक नवीन धार्मिक विचारों को स्वीकार कर लेता है इनके सहित उन प्रभावों को भी सम्मिलित कर लो, जो एक शताब्दी से भारत वासियों को संगठित कर रहे हैं।इन सब मेंसे आंगलीय विद्या प्रधान है। जिसके लिये स्वतन्त्र विचारक आंगलीय राजनैतिक पुरुष हमारे धन्यवाद योग्य है जिन्होंने भारतवर्ष में इस विद्या के प्रचलनार्थ सम्मति दी थी। सम्प्रति पाठ विधि से भी हम आंगल भाषों द्वारा दी है। यद्यपि कई दोष हैं और उन से हमें हानि भी

पहुंची है। परन्तु कोई भी न्यायशील मनुष्य जहांतक इस भा का भारतवर्ष में ऐक्य करने का सम्बन्ध है इस उपयोगिता से नहीं कर सकता। एक ही प्रकार की पाठ विधि भारतखण्ड के भिन्न प्रदेशों में एक ही प्रकार विचार उत्पन्न कर दिये हैं। जातीय विचारों को पक्का करने में बहुत सहायता दी है। इसका यह अभिप्राय नहीं कि अन्य ऐक्यवर्द्धक शक्तियां रही हैं। सर्वदा सब प्रकार की भिन्नतोत्पादक शक्तियों से भी मुख होना पड़ा है। वे वास्तविक हैं जीवित हैं और सदैव स्वका परायण हैं। उन्होंने हमारी अवस्था को इस तरह दुस्साध्य कठिन कर दिया है। यही बात है जिन में से इस देश में स्व भक्ति को इस तरह की महान् जिम्मेदारी बना दी है।

भारतवर्षीय देशभक्ति का बड़ा महान् कार्य्य यह है कि भिन्न तथा विरुद्ध अंशों का मिलान किया जावे जिससे एकता शक्तियें पूरा पूरा कार्य्य कर सकें।

युवकों के कर्त्तव्य।

यह प्रश्न बहुत से आशा भरे दिलों को बिस्मित कर दे और बहुत से सुदृढ़ देश भक्तों के धैर्य्य को कमज़ोर कर देता है परन्तु येन केन प्रकारेण यह प्रश्न को अवश्य ही साध्य बनाना है यह कार्य्य उनके लिये जो आयु में वृद्ध हैं और जिन्होंने जीवन का अमूल्य भाग देश सेवा (Public life) में व्यती किया है कम कठिन है। और तुम्हारे लिये तो और भी विषम यतः तुमने अभी तक संसार के कार्य्यक्षेत्र में पग नहीं धरा सम्भव है कि तुममें पुरुषार्थ और युवावस्था का जोश हो तथा देशसेवक (Public man) की सफलता के लिये यह काफी है। तुममें उचित फैसला करने की शक्ति, सम्मति की सुदृढ़ और कार्य्य करने की विधि होनी चाहिये जो केवल अभ्या अनुभव से प्राप्त होते हैं। इस देश में देशभक्त (Public man को तब ही सम्मानप्राप्ति हो सकती है कि वह हर समय सम नुसार उचित शब्द मुख से निकालें और उचित कार्य्य करें तुम में से प्रत्येक पुरुष जो देश सेवा की इच्छा करता है प्राप्त करने का यत्न करना चाहिये। यह बात भी हमारी कठि यिओं को बढ़ाती है कि हमारी सभी एक खास प्रकार की

भेद बढानेवाली सभा है और इसमें एक विशेष प्रकार का धार्मिक प्रचार भी उद्देश्यों में से एक है। किन्तु बाधाएं हो वा न हों। इस अवस्था का पूरे शौर्य्य तथा जिम्मेवारी से मुकाबला करना पड़ेगा। विषमता के कारण जिम्मेवारी हट जाने से अवस्था सुधर नहीं सकती ॥

आर्य्यसमाज का दुहरा उद्देश्य।

आर्य्यकुमारो! तुम में से किसी को भूल न जाना चाहिये कि बेढंगे विचारों ने हमें कैसी मुसीबत में डाल रखा है। और उन पुरुषों को बहुत ही विचार तथा बुद्धिमता से कार्य्य करना चाहिये जो भारतीय (Public life) में सुधारेच्छुक हैं॥ और आर्य्यसमाज जिसके साथ आर्य्यकुमार सभा का ऐसा घनिष्ठ सम्बन्ध है दुहरा उद्देश्य रखता है। इसका लक्ष्य मनुष्य मात्र की सेवा है और जातीय सेवा भी जहां तक पुरुषों को वह श्रेष्टतर,सत्यशील, और धार्मिक बनाना चाहता है वह इसकी मानुषी सहानुभूति है। समाज कतिपय सच्चाइयों पर निश्चय रखता है जिनको वह सच्चेमन से जाति. वर्ण, रंग के भेद बिना मनुष्यमात्र के सामने प्रचार करता है। वह एक विशेष प्रकार की सभ्यता पर निर्भर है। जिसके प्रचार से उसकी सम्मति में सारे संसार को लाभ होगा॥ और उनकी आत्मिक, सामाजिक तथा शारीरिक उन्नति में सहायता देगी॥ आर्य्य समाज का विश्वास है कि संसार के दुःखों की औषधी केवल एकमात्र वैदिक धर्म्म ही है॥ इससे आर्य्य समाज का धर्म्म सार्वभौमिक धर्म है। और इसके प्रचार में किसी जाति को विशेषता नहीं देता॥

आर्य्य समाज का जातीय उद्देश्य।

किन्तु इसके साथ उन लोगों के सुधार का कार्य्य भी शामिल है जो प्राचीन समय से वेदानुयायी कहलाते आये हैं और जिनकी नसों मे आर्य्यसभ्यता की नींव डालने वाले ऋषियों का रक्त संचारित हो रहा है और जिन का नाम हिन्दू है। और आर्य्य समाज पर उनके लिये एक खास जिम्मेवारी है। इससे आर्य्य समाज का यह जातीय उद्देश्य है॥ यह एक ऐसा समाज है जिसने मन और आत्मा की स्वतन्त्रता का बीड़ा उठाया है। इसके उद्देश्य उच्च हैं और मनुष्य के सामाजिक नियमों को प्रचलित करना तथा शारीरिक अथवा मानसिक बन्धनों को तोड़ना है।

स्वदेश तथा भारतवर्षियों के साथ इसका लक्ष्य बिल्कुल साफ है। आर्य्यसमाज का कट्टर से कट्टर शत्रु भी इससे इनकार नहीं कर सकता कि आर्य्यसमाज बहुत से बन्धनों से मुक्त कराता है और स्वदेशोन्नत्यभिलाषी है ॥ स्वधार्मिक नियमों के कारण वह राज-विद्रोहेत्यादि गर्हित कार्य्यों का शत्रु है वह मन पर अधिकार करने तथा निजजीवन को पवित्र रखने का उपदेश करता है। इस बात से इनकार व्यर्थ है कि वह धार्मिकोद्देश्य के अतिरिक्त जातीयोद्देश्य भी रखता है ॥ वह सद्हृदय से वेदाज्ञा को पालन करना चाहता है॥ मुसल्मान और ख्रीस्ट लोग इसे शत्रु समझते हैं और संदिग्ध स्वभावस्वल्पबुद्धि वाले पुरुष इसे राजद्रोही बताते हैं परन्तु ये सारे दोष मिथ्या हैं ॥

युवकों को धार्मिकपक्षपात से बचना चाहिये।

आर्य्य कुमार सभा का जन्मदाता आर्य्य समाज है। अतः अपने रक्षक समाज से भिन्न नहीं हो सकती। यह कुमारों की सभा है जो आर्य्य समाज के सार्वदेशिकोद्देश्य पर निश्चय रखती है। युवक कार्य्य इन सभाओं में इस अभिप्राय से सम्मिलित होते हैं कि समय पर समाज का कार्य्यसम्पादन करने योग्य बन सकें ॥ आर्य्य कुमार सभा एक प्रकार की शिक्षाशाला है। जहां युवक विश्व विद्यालय अर्थात् समाज में प्रविष्ट होने के लिये तय्यार किये जाते हैं। एक कुमार के वास्ते प्रथमतः यह आवश्यकीय है कि वह आर्य्य समाज की धर्मशिक्षा को ग्रहण करे। इससे कदाचित् यह अभिप्राय नहीं कि वह न्याय दर्शनशास्त्र (Philosophy) की सी बारीकियों को दिमाग में ठोंस ले अथवा अन्य मतावलम्बियों से झगड़ने की बातों पर अधिक ध्यान देवें। वरन् उसके लिये इतना उचित है कि वह वैदिक धर्म्म की बड़ी बड़ी सचाइयों का ज्ञान प्राप्त कर ले। विशेषतया उन बातों को जिनसे अन्य धर्म्मों की अपेक्षा गौरव दीख पड़े। और वह सत्यग्रहण में सदा तत्पर रहें। मेरी प्रबल सम्मति यह है कि कुमारों को धार्मिक पक्षपाती न होना चाहिये। कई युवक मज़हबी मनुष्यों का अनु-करण करते हैं केवल इस हेतु से कि वे कतिपय धार्मिक पुस्तक पढ़े हैं। मैं इसका बड़ा विरोधी हूं कि युवकों के मन में लड़ाई झगड़े की ख्वाहिश उत्पन्न किया जावे।

वैराग्य की शिक्षा हानिकारक है।

हिन्दू मत का झुकाव जो वैराग्य की ओर है वह पराक्रमिक शक्तियों को हानिकारक है मेरे ख्याल में अल्पायु के युवक अथवा युवतियों को मज़हबी बातों में अधिक सोचना और योग करना हानिकारक है । बच्चों के सामने यह कहते रहना कि संसार भ्रममात्र है और जातीय भलाई का विचार व्यर्थ है अत्यन्त हानिकारक है । और वैराग्य की शिक्षा अति हान्युत्पादक है । मेरी सम्मति में यह बड़ी भारी भूल होगी यदि उपनिषदें बच्चों के हाथ में पठनार्थ दी जावें उपनिषदकारों का कदाचिद् भी यह अभिप्राय नहीं था कि जीवन के भेदों को हल करने का शुभ प्रयत्न उन्होंने किया है। प्रमाद से उनके सामने रखे जाएं जो इनको समझने की शक्ति भी नहीं रखते ॥

शारीरिक उन्नति करनी चाहिये।

जीवन संग्राम के वास्ते शारीरिक बल की आवश्यकता है। हर एक ऐसा कार्य्य करना चाहिये. जिससे शारीरिक बलोपलब्धि हो। आर्य्य कुमार सभा का धर्म्म है कि वह कुमारों की शारीरिक दशा की ओर ध्यान दें । जो बड़े हैं उनको उचित है कि वे छोटों की, न केवल धार्मिकावस्था पर ध्यान दें किन्तु कुमारों में शारीरिक खेलों का प्रचार करें । खान पान के विषय में पाश्चात्यों का अनुकरण करना महा मूर्खता है । जो वस्तु उनको अनुकूल है जल वायु के कारण वह हमारे प्रतिकूल है । तथापि उनसे यह शिक्षा लेनी चाहिये कि जो मनुष्य अपने जीवन में कुछ अच्छा कार्य्य करना चाहे तो उसे खान पान का अवश्य ध्यान रखना चाहिये। यह नहीं कि जैसा और जिस समय प्राप्त हुआ भक्षण कर गए खटाई अचार इत्यादिकों से बचते दुग्ध दधि इत्यादि पान करना चाहिये।

व्यायाम और खेल में अधिक रुचि होनी चाहिये।

कुमारों की खेलकूद में रूचि की अधिकता अर्थात् मुकाबले में प्रथम रहने पर अभिमान करना उचित है। युवकों को योग्यता की कसवटी उनकी शारीरिक दशा है। कई पिता स्वपुत्रों को परीक्षा में विशेषता से उत्तीर्णार्थ अहोरात्र्यध्ययन का उपदेश करते हैं।

उनकी स्वास्थ्य विगड़ जाय तो बला से । उचित है कि इसको रोका जाय । इस विषय में माता पिता की आज्ञा पालनीय नहीं है । एवं विवाह विषय में करना उचित है किसी कुमार का विवाह उसकी सम्मति के बिना न होना चाहिये आर्य कुमार सभा इस विषय में बहुत कुछ कर सकती है । इसके लिये वे पुस्तक रखें जिसमें जितने बाल्य विवाह इत्यादि रोके दर्ज हों । परन्तु खेलने का सामान प्राप्त करना चाहिये और खेलने के लिये शिक्षित, अशिक्षित, छोटे बड़े, धनाढ्य, दरिद्री सभी सम्मिलित हों । और वहां उसी का सम्मान अधिक हो जो क्रीड़ा में उत्तम हों ।

आर्यकुमार सभाओं के अन्य कर्तव्य ।

आर्य्यकुमार सभाओं का द्वितीय कर्तव्य यह है कि निर्धन निराश्रित विद्यार्थियों को बिना जताये सहायता करनी चाहिये । कुमारों के पढ़ने के लिये अच्छे पुस्तकालय बनाने चाहिये । लड़कों तथा लड़कियों को बदमाशों से सुरक्षित करना चाहिये । बड़ी कुमारसभाओं को रोगियों इत्यादियों के लिये सेवक मण्डली बनानी उचित है ।

यह मैंने उनके कर्त्तव्यों का खाका मात्र खेंचा है । आर्य्यसमाज के वार्षिकोत्सवों पर प्रबन्ध आदि कार्यों में सहायता देना पुस्तक बांटना इत्यादि कार्य ये कुमार अच्छी तरह से कर सकते हैं । और ऐसे कार्य में समाज की सहायता अवश्य करनी उचित है ।

मनुष्य सेवा एक शुभ कर्तव्य है ।

कोई मनुष्य वास्तव में बड़ा नहीं जो अपनी स्वार्थसिद्धि में मतवाला है कोई जाति बड़ी नहीं यदि उसका अधिकांश जोश से खाली हो । कोई पुरुष धार्मिक नहीं जो ईश्वर की सृष्टि की सेवा को उच्चतम कर्तव्य नहीं मानता ।

आर्य्यसमाज प्रवर्तक महात्मा बड़ी दूर दृष्टि और गम्भीर विद्याबल से जाना कि हम ने अपने पूर्वजों की शिक्षा को उलटा समझा है । वर्णाश्रम के उलटे अर्थ लिये हैं । इस कारण उसने हमें प्राचीनादर्श बतलाया । और आर्य्यसमाज की नीव डाली किन्तु आर्य्यसमाज में बहुत कम लोग प्रविष्ट होते हैं । डिपलोमा (Diploma) प्राप्त करके युवक स्वार्थ और आराम में पड़जाते

हैं। वे संसार में सुख भोग के इच्छुक हैं। कार्य्य पर्वत पर चढ़ने का है विषम और भयानक है परन्तु करना पड़ेगा। समय में परिवर्तन हुआ है। दुःख से हार्थो निराश होने से जीवनोद्देश्य की पूर्ति नहीं हो सकती॥

ओ३म्।

सभापति की वक्तृता के अनन्तर सब्जेक्ट कमेटी का संगठन हुआ। प्रातःकाल की कार्य्यवाही ११॥ बजे समाप्त हुई। मध्यान्ह को एक बजे से तीन बजे पर्य्यन्त सब्जेक्ट कमेटी हुई। तीन बजे प्रोग्राम अनुसार डिबेट शुरु हुई।

सहभोज पर डिबेट।

दुर्भाग्य वश धर्मचर्चा या डिबेट एक ऐसे गूढ़ विषय पर रखी गई जिसे विद्यार्थियों के लिये समझना अतिदुस्तर था। आर्य्य समाज में भी अभी इस विषय पर मतभेद है। अस्तु, डिबेट नियम पूर्वक आरम्भ हुये। पांच जज ऊपर प्लेटफार्म पर बैठ गये। दोनों पक्षों के वक्ता आमने सामने उपस्थित हुये। बहुत से श्रोता दत्तचित हो सुनने के लिये विद्यमान थे महाशय परमेश्वरी दयालजी मन्त्री आर्य्यमित्र सभा आगरा ने प्रथम अपनी वक्तृता पक्ष में दी। उसका खण्डन श्रीयुत मोतीलालजी सभासद आर्य्यन डिबेटिङ्ग क्लब मेरट ने किया। तदनन्तर उभय पक्ष के २१ वक्ता और बोले। अन्त में वादी तथा प्रतिवादी को फिर समय दिया गया। जजों ने योग्यता विचार कर महाशय परमेश्वरी दयालजी को चान्दी का कप इनाम में दिया।

शाम के ५॥ बजे मध्यान्ह की कार्य्यवाही समाप्त हुई। ८ बजे से ११॥ बजे पर्य्यन्त सब्जेक्ट कमिटी हुई। दूसरे दिन २० तारीख सवेरे ८ बजे से कार्य्याक्रम आरम्भ हुआ। आज दशहरा के कारण कुछ कुमार वापिस चले गये थे। सभापति लाला लाजपतरायजी के चले जाने के कारण दूसरे दिन सभापति के आसन को श्री कविराज केशवदेवशास्त्री ने स्वीकार किया कानफरेन्स के ११ प्रस्ताव पास हुए और अनुमान १ बजे कार्य्य समाप्त हुआ।

प्रस्ताव अन्यतर छापे जायेंगे।

सहारनपुर के नवयुवकों के असीम उत्साह से प्रोत्साहित होकर आर्य्य कुमार अपने अपने घरों को लौटे। आगामी वर्ष सम्मेलन भारतवर्ष की नवीन राजधानी देहली में होगा जहां के कुमारों तथा आर्य्य पुरुषों ने उसे निमन्त्रित किया है।

भारतवर्षीय आर्य्य कुमार सम्मेलन की तृतीय बैठक पूर्ण सफलता और अद्वितीय समारोह से समाप्त हो चुकी है उसका कुछ वृतान्त ही लिखने का मेरा आशय है।

१६ (अक्टोबर) से स्थानिक आर्य्य समाज का वार्षिक उत्सव होने के कारण उस ही दिन से प्रतिनिधि आना आरम्भ हो गये थे सम्मेलन में पधारने वाले सज्जनों के लिये एक बहुत बड़ा मकान और दूसरा एक सुशोभित कैम्प नियत थे यह दूसरा कैम्प रात्रि के ठहरने के समय गैस के प्रकाश में विशेषतया बड़ा ही सुन्दर प्रतीत होता था। इसमें प्रधान सम्मेलन का डेरा देखने ही योग्य था दूसरे और भी बहुत से डेरे, प्रधान प्रतिनिधि सभा संयुक्त प्रान्त, पं० केशवदेवशास्त्रीजी इत्यादि के भी अच्छे थे। आहिस्ता २ लोग आते रहे। इस प्रकार २८ तारीख़ आ गई, १९ से सम्मेलन आरम्भ होना था। १८ की रात्रि को बड़ा समारोह एकत्रित हो चुका था और उसी रात ३॥ बजे पं० केशवदेवशास्त्री म० शिव प्रसाद गुप्त अपनी बनारस मंडली सहित तथा बरेली, इलाहबाद देहरादून इत्यादि अनेक स्थानों से बहुत सज्जन आये। यह सब और दूसरे पहले आये हुये महाशयगण लाला लाजपतरायजी महोदय का, जो ४॥ बजे देहली से आ रहे थे स्वागत करने को स्टेशन पर मौजूद थे। इसी ट्रेन में ब्रम्हचारी इन्द्रजी इत्यादि अनेक प्रतिष्ठित सज्जन व प्रतिनिधि भी पधारे॥

१९ तारीख़ को दिवाकर सूर्य्य भगवान ने जब आंख उठा कर अपने सहारनपुर नगर में देखा तो उन्हें आश्चर्य्य से मालूम हुआ कि पेशावर से लेकर बंगाल तक, मथुरा आगरा, देहली, मेरठ मुज्जफ़र नगर, काशी, प्रयाग, अयोध्या, लखनऊ, साहजहांपुर बरेली, गाज़ीपुर, मिर्ज़ापुर, जाफ़रपुर, फीरोज़ाबाद, जगाधरी लुधयाना, लाहौर, पेशावर, पट्टी, नैनीताल, देहरादून, बिजनौर

देहमदाबाद, इत्यादि स्थानों से २०० के लगभग उत्साही आर्य्य कुमार प्रतिनिधि अपने परमप्रिय वैदिक धर्म्म में एक नया जीवन संचार करने पर विचार करने को शोभायमान हो रहे हैं ॥

७॥ बजे से पहले २ सभा मंडप दर्शकों और प्रतिनिधियों से जिनके लिये एक स्थान नियत था बिलकुल भर गया। सभा मंडप भी इतने बड़े उत्सव ही के योग्य बनाया गया था उस में वेद मंत्र इत्यादि लगे होने के कारण उसकी शोभा और भी अधिक होगई थी॥

एक बड़ा प्लेटफार्म उस में प्रतिष्ठित महाशयों के लिये बनाया गया था जिस पर श्रीमान केशवदेव शास्त्री व बाबू अलख मुरारी बी ए० दोनों पहिले सम्मेलनों के सभापति म० तुलसीराम जी स्वामी, म० नारायण प्रसाद, म० मदनमोहन सेठ एम० ए० म० श्रीराम, म० क्षेत्रपाल (मथुरा), म० पन्नालाल, म० रामप्रसाद, म० शिवप्रसाद गुप्त, म० गौरीशंकर प्रसाद (काशी), म० पोशाकीलाल (बदायुं), ब्रह्म० हरिश्चन्द्र (कांगडी), ब्रह्म० इन्द्र (देहली) डाक्टर श्यामस्वरूप (बरली) इत्यादि करीब २ सब ही आर्य्य समाज के प्रतिष्ठित पुरुष थे आठ बजे हवन इत्यादि समाप्त होने पर कार्य आरम्भ हुआ, स्वागतकारिणी सभा के प्रधान लालादेवीचन्द गुप्त रईस का एडरस पढ़ा गया, इसके पश्चात् कविराज पं० केशवदेव शास्त्री जी ने मनोहर शब्दों में सम्मेलन के इतिहास की आलोचना और उस की आवश्यकता बताते हुये लोकमान्य श्रीलाला लाजपत राय जी के प्रधान पद पर नियुक्त करने का प्रस्ताव किया, ब्रह्मचारी बालमुकुन्द बी० ए० (प्रयाग) के अनुमोदन और म० चरनदास जी बी० ए० के समर्थन करने पर महामान्य लाला जी ने सभापति के आसन को सुशोभित किया, सारा मंडप बड़ी देर तक तालियों से प्रतिध्वनित होता रहा, इसके पश्चात लाला जी महोदय का व्याख्यान आरम्भ हुआ मंडप सारा इतना भर रहा था कि सायद कभी ही इतनी संख्या सहारनपुर में किसी सभा में एकत्र हुई हो ॥

व्याख्यान की समाप्ति पर सब्जेक्ट कमिटी के लिये सभ्य नियत हो सभा विसर्जन हुई। १ बजे से पुनः कार्य्य आरम्भ हुआ, म० अलखमुरारी जी बी० ए० एल० एल० बी०प्रधान द्वितीय सम्मेलन आगरे (वकील सहारनपुर) के प्रास्तवित नियमों पर जो पहले

तृतीय भारतवर्षीय कुमार सम्मेलन के प्रस्ताव।

(१) भारतवर्षीय आर्य्य कुमार परिषद का वार्षिक विवरण पढ़ा गया और स्वीकार हुआ।

प्रस्ताव कर्ता०--बा० महादेवप्रसाद।

अनुमोदन कर्ता०--म० परमानन्दजी।

(२) भारत वर्षीय आर्य्य कुमार सभाओं के १० नियम निश्चय हु

नोट-नियम अलग छपकर सभाओं, समाजों तथा अन्य प्रतिष्ठित महाशयों की सेवा में भेजे जावेंगे।

प्रस्ताव कर्ता--बा० अलखमुरारीजी B. A.

अनुमोदन कर्ता०-म०-लाभुरामजी.

(३) भारत वर्षीय आर्य्य कुमार सभाओं के नियम निश्चय हुये। इस वर्ष के लिये कुमार सभायें इन्हीं नियमों के अनुसार कार्य्य करेंगी और आगामी वर्ष के स्वीकृति के लिये नियम सम्मेलन में उपस्थित किये जावेंगे।

नोट-यह भी अलग छप कर उद्देशों के साथ भेजे जावेगें।

(४) भारतवर्षीय आर्य्यकुमार परिषद के नियम निश्चय हुये।

नोट-यह भी अलग छप कर कुमार सभाओं के नियमों के साथ भेजे जावेंगे।

(५) निश्चय हुआ कि आगामी भारतवर्षीय आर्य्य कुमार परिषद् की चतुर्थ बैठक दिल्ली में की जावे।

(६) निश्चय हुआ कि आर्य्य कुमार परिषद् का कार्य्यालय सहारनपुर में रखा जावे।

(७) निश्चय हुआ कि परिषद् की अंतरंग सभा में निम्न लिखित महाशय लिये जावे।

१,—पं० गंगाप्रसादजी M. A., H. M. A. S.	प्रधान
२,—पं० केशवदेवजीशास्त्री	उपप्रधान
३.—बाबू अलखमुरारीजी B. A.	महामंत्री
४.—बाबू घासीरामजी M. A.	
५.—म० शिवप्रसादजी (काशी)	कोषाध्यक्ष
६.—डा० श्यामस्वरूपजी L. M. S.	
७.—बा०. मदनमोहन सेठजी M. A.	
८.—बा० हरिश्चन्द्र जी	
९.—प्रो० दयानन्द जी M.A.	

१०.—म० निरंजननाथ—(देहरादून)
११ —म० चरनदास जी B. A. (मंत्री)
१२. —म० विश्वम्भरदयाल जी B. A. पुस्तकाध्यक्ष
१३. — म० परमानन्द जी B. A.
१४.—म० चान्दकरण जी B. A.
१५.—ब्र० इन्द्र जी
१६.—म० रतनलाल जी B. A.
१७.—म० केशोराम जी (पेशावर)
१८ —पं० कृष्णचन्द्र जी
१६ —म० रामकिशोर जी
२० —म० महादेव प्रसाद जी

८.—निश्चय हुआ कि आगामी वर्ष के लिये निम्न लिखित बजट बनाया जावे ।

आयः		व्ययः	
१. मासिक चन्दा, कुमार सभाओं का दशांश	१५०)	१, छपाई	१००)
२. वार्षिक " पंचमांश	२५०)	२. कार्य्यालय	१२०)
३. संरक्षकों से	२००)	३. वेतन उपदेशक	६००)
४. अन्य चन्दा-विशेष	४००)	४. सफ़र खर्च	१८०)
योग	१०००)	योग	१०००)

(६) निश्चय हुआ महाशय गजाधर प्रसाद को परिषद् का auditor बनाया जावे ।

(१०) निश्चय हुआ कि लोकमान्य लाला लाजपतराय जी को सम्मेलन के सभापति का आसन ग्रहण करने के लिये यह सम्मेलन धन्यवाद देता है ।

(११) यह सम्मेलन निश्चय करता है कि आर्य्यकुमार परिषत् के समाचारादि नवजीवन मासिकपत्र काशी में भेजे जाया करें और उस के अधिपति से प्रार्थना की जाये कि उसे स्वीकार करें ।

इन प्रस्तावों से अलग स्वागतकारिणी सभा के सभापति की स्पीच भी प्रकाषित होने के लिये भेजी जाती है ।

भवदीय
Charan Das Mital
मंत्री परिषत्.

र्म शिक्षा ।

(सम्पादक नवजीवन द्वारा लिखित)

भगवान मनु के बतलाये धर्म के दश लक्षणों की सविस्ता व्याख्या है। यह लेख पहिले नवजीवन में निकल चुके हैं। मान्य पुरुषों के आग्रह पर अब इन लेखों को पुस्तकाकार में छाप दिया गया है। मूल्य केवल ।) मात्र। आर्य्य समाजों तथा आर्य्य कुमार सभाओं में साप्ताहिक अधिवेशनों में कथा करने के लिये यह ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगा।

यमुनाबाई ।

यह ग्रन्थ में अतीत कालनि घटनाओं में से एक ऐतिहासिक घटना को उद्धृत किया गया। मुसलमानों के समय में आर्य्या देवियों पर जो जो अत्याचार हुए, उन्हें जानने के लिये जमुनाबाई का जीवन एक ज्वलन्त उदाहरण है जो लोग आज देवियों को गृह की चारदीवारी में कैद रखते हैं वह आंख खोल कर इस ग्रन्थ को पढ़ें और सोचें कि अवसर मिलने पर आर्य्या देवियां क्या कुछ नहीं कर सक्ती मूल्य =)

बाल विवाह कैसे चला ।

इस लघु पुस्तक में सम्पादक नवजीवन के उस व्याख्यान का हिन्दी अनुवाद है जो उन्होंने अङ्ग्रेजी भाषा में संस्कृत कालिज तथा कलकत्ता के विद्वानों के सामने दिया गया और जिसमें सम्पूर्ण स्मृतियों के आधार पर बालविवाह की रीति कब और कैसे चली बतलाकर बाल विवाह का खण्डन किया था मूल्य –)॥

सात ग्रन्थों का इकट्ठा मूल्य १)

शान्ता ॥) लक्ष्मी ।) दो कन्याओं की बातचीत)॥ शिशुपालन)॥ धर्मशिक्षा ।) यमुनाबाई =) बाल विवाह कैसे चला –)॥ कुल सात पुस्तकों का मूल्य १।–)॥

इकट्ठे खरीदनेवाले से केवल १) मात्र लिया जावेगा।

पाठक वृन्द:—नवजीवन के विलम्ब से निकलने के लिये क्षमा कीजियेगा क्योंकि श्री लाजपतरायजी के प्रतिबिम्ब का Block विलम्ब से प्राप्त हुआ।

Printed by Pdt. Baijnath Ojha Manager Tara Printing Works, Benares.

नवजीवन

—:o:—

गत वर्ष के नवजीवन की सजिल्द किताब तय्यार गई है । अनुमान ७५० पृष्ठ की पुस्तक भिन्न २ षयों से अलङ्कृत है । मूल्य नवीन ग्राहकों के लिये केवल २) रु० मात्र । शीघ्र मंगवावें, क्योंकि ड़ी सी कापियां तय्यार हुई है ।

भारत की वीर माताएं

पं. ललिता प्रसाद जी द्वारा संगृहीत । २७० पृष्ठ की पुस्तक । भिन्न भिन्न स्थान की वीर माताओं के वृतान्त । मूल्य केवल ॥≥) मात्र ।

मिलने का पताः—प्रवन्धकर्त्ता नवजीवन ।

एक बार अवश्य पढ़िये ।

बनारस का बना हुआ हर किस्म का माल जैसे रेशमी साड़ी ारी की व सादी, पीताम्बर, चद्दर जनाना व मरदाना, डुपट्टा सेल्हा), साफा सदं व जरी के काम के ।

काशी सिल्क के थान, मेरठ की व बनारसी पक्के काम की ोपियां, जरमन सिलवर, पीतल, एल्मोनियम के बरतन नक्शी व ादे व जर्मन सिलवर, पीतल के हर किस्म के जेवर व सुनहरे व रुपहले, सुरती की गोलियां, सूंघने व पीने का तम्बाखू, हर रह के लकड़ी व हाथी दांत के खिलौने, टिकुली, बिन्दी, ईंगुर संदुर वगैरह हमारे यहां से किफायत भाव से भेजे जाते हैं ।

हर चीज का भाव जानने के लिये)॥ का टिकट भेजकर मारा बड़ा सूचीपत्र मंगाकर देखो ।

पताः—महादेवप्रसाद एण्ड एस० पी० आर्य्य
जनरल मर्चेन्ट एण्ड सप्लायर
सराय हड्हा, बनारस ।

नवजीवन बुक डिपो काशी।

हमारे नवजीवन बुक डिपो में स्त्री शिक्षा की तथा अन्य उत्त
पुस्तकें विक्रयार्थ मंगाई गई हैं। अब ऐसा सुप्रबन्ध हो गया है
मांग के साथ ही पुस्तकें तुरंत भेज दी जाती हैं। पाठक यह वि
रक्खें नवजीवन का जैसा धार्मिक तथा सामाजिक उद्देश्य है वै
ही उत्तम २ पुस्तकें यहां से मिलती हैं। कुछ पुस्तकों का सूची
यहां दिया जाता है। ५) रुपये से अधिकके खरीदने वालों को उ
कमीशन भी दिया जाता है। जो लोग पुस्तकें मंगाना चाहते
वे निम्न लिखित पते से मंगावें:—

मैनेजर नवजीवन बुकडिपो काशी।

—ः पुस्तकों का सूचीपत्र ः—

पुस्तक	मूल्य
१ सीता चरित्र ५ भाग पृष्ठ ७०० के लगभग——	१।।।=)
२ नारायणी शिक्षा—	१।)
३ स्त्री सुबोधिनी	१।)
४ नारी धर्म विचार १ भाग	।।)
... ... २ भाग	१)
५ महिला मंडल २ भाग	।।।)
६ रमणी पंचरत्न	।)
७ गर्भ रक्षा विधान	।।)
८ धर्म बलिदान	=)
९ वनिता विनोद	१)
१० भारत की वीर तथा विदुषी स्त्रियां २ भाग	।।=)।।
११ सच्ची देवियां	।=)
१२ चन्द्रकला सच्चा उपन्यास	।)
१३ लक्ष्मी एक रोचक और शिक्षा प्रद उपन्यास	।)
रमणी रत्नमाला	।=)
...र्य प्रकाश	१)

ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका
संस्कार विधि
महाबीर जी का जीवनचरित्र
महात्मा बुद्ध का जीवनचरित्र
भीष्म का जीवनचरित्र
वीर्य्य रक्षा
उपदेश मंजरी
स्वामीजी का जीवन
श्री रामविलास शारदाकृत
धर्म शिक्षा १ भाग
वीरबालक अभिमन्यु
हलदी घाटी की लड़ाई
राणा प्रतापसिंह की वीरता
एकान्त वासी योगी
भारत की वीर माताएं
आर्य्यों का आत्मोत्सर्ग
प्रोफेसर राममूर्ति की
और अन्य २ पुस्तकें। मंगाने का पता
मैनेजर-नवजीवन बुकडिपो

नवजीवन
Nawajiwan

सम्पादक—केशवदेवशास्त्री

विषय सूची।

भाग ४ (नवम्बर १९१२) अङ्क ८

वार्षिक मूल्य ... ... ३) रु०
एक प्रति का मूल्य ...... ।-)

नवजीवन के नियम

(१) नवजीवन का वार्षिक मूल्य ३) रुपये मात्र है।

(२) प्रतिमास की २० तारीख़ को काशी से निकला करेगा

(३) नवजीवन में कोई अश्लील विज्ञापन न छपने पावेगा।

(४) विद्यार्थियों, छात्राओं, कन्या पाठशालाओं की अध्यापिकाओं पुस्तकालयों से केवल २) रुपये वार्षिक मूल्य लिया जावेगा।

(५) प्रतिमास प्रकाश होने की तिथि के १० दिन के अन्दर भी नवजीवन के न पहुंचने पर दूसरी कापी भेजी जावेगी, अन्य मूल्य देना पड़ेगा।

—:o:—

नवजीवन का उद्देश्य।

(१) वैदिक धर्म्म के प्रचारार्थ।

(क) आर्य्य कुमारों तथा कुमारियों में नवीन जीवन का संचार क

(ख) सामाजिक उन्नति के उपायों पर विचार करना।

(ग) आर्य्य जीवन की मर्यादा को स्थापित करने की चेष्टा करना।

(घ) महानुभावों के सच्चरितों पर विचार करना और

(ङ) उपयोगी संस्थाओं के वृत्तान्तों को सर्वसाधारण तक पहुंचान

❀ ऋतुचर्य्या ❀

यह पुस्तक प्रत्येक नरनारी को अपने घर में रखनी चाहिये क्यों शरीर की रक्षा के बिना कोई भी संसार का सुख नहीं [illegible] सक शरीर के स्वास्थ्य पर ऋतुओं के परिवर्तन से जो घटनायें होत जिनसे मनुष्य भीषण रोगों में ग्रस्त हो जाता है ये सब बातें [illegible]गाचार्य कविराज केशवदेव शास्त्री जी ने बड़े परिश्रम और [illegible]भव से इस पुस्तक में दर्शाई है। ऋतु वर्णन, द्रव्य [illegible]ान, [illegible] के द्रव्य, ऋतुओं में परिवर्तन, आहार्य्य द्रव्य, विषम भोजन [illegible] पथ्यापथ्य, फलों और आहार आदि विषयों का वर्णन कि[illegible]या ग[illegible]है। पुस्तक अच्छे मोटे कागज़ और सुन्दर टाईप में छपी १) मात्र।

मिलने का पता—मैनेजर
नवजीवन [illegible] काशी

ओ३म

उदयति यदि भानुः पश्चिमे दिग्विभागे
प्रचलति यदि मेरुः शीततां याति वन्हिः ।
विकसति यदि पद्मं पर्वताग्रे शिलायां
न भवति पुनरुक्तं भाषितं सज्जनानाम् ॥

ग ४. | नवम्बर, १९१२ | अङ्क ८

प्रार्थना ।

तदेजति तन्नैजति तद्दूरे तद्वन्तिके ।
तदन्तरस्य सर्वस्य तदुसर्वस्यास्य बाह्यतः ॥

परमात्मन् ! आपका यह रचित विश्व कैसा सुन्दर और अद्भुत
त होता है । एक ओर हम जीव अपने कर्मों से जीवनोद्देश्य
गिरकर नार्की जीवन व्यतीत करने लगते हैं । दूसरी ओर हम
ने शुभ कर्म्मों के सम्पादन से विद्वान और देव की पदवी तक को
च सकते हैं । हम जीव अपने कर्मों से ही गिरते और उठते हैं ।
त का कार्य इस प्रकार से यथा योग्य चल रहा है कि आपही
सर्व व्यापकता से यह सब चल रहा है तौ भी आप चलायमान
हीं हैं । आप समस्त विश्व में एक रस निश्चल हो के परिपूर्ण हैं
पने इस जगत को कार्यक्षेत्र बनाया है जहां पर आपके अमृत पुत्र
पने कर्त्तव्यों का पालन कर सकते हैं । जिन मनुष्यों ने पाप कर्मों
अपने आत्मा को गिरा दिया है उन से आप बहुत दूर हैं किन्तु
ो मनुष्य धर्माचरण करते और सत्य मानते हैं और जो अपने
त्मा को शुद्ध रखते हैं ऐसे जीवों के अत्यन्त निकट आप हैं ।
गवन् ! कृपा निधे ! हमको ऐसी बुद्धि दीजिये कि हम आपको
खण्ड रस सब में व्यापक समझें और धर्म की ओर रुचि रक्खें;
ख और मुक्ति के भागी हों ।

ओ३म शम ।

उपदेश ।

सत्यं वद, धर्मं चर, स्वाध्याये मा प्रमद।

जब २ हम आर्ष ग्रन्थों के समुद्र के निकट जाते हैं तब त को धर्म और कर्तव्य के भाव से परिपूर्ण उपदेश रूपी सी प्राप्त होती हैं। यद्यपि उन सीपियों का बाहरी आकार बदसूर हो तौ भी उनके अन्दर से उज्ज्वल मोतियां निकाली जा सक जिनकी अमूल्यता उनको देखने से प्रत्येक मनुष्य को विदि सकती है। ऊपर के उद्धृत किये हुए शब्दों में यह बतलाया है कि हर एक पुरुष सर्वदा सत्य बोले और धर्म का आचरण सत्य की सहायता के लिये अन्य किसी वस्तु की आवश्यकता होती है। यह सदा हमारे निकट निवास करता है और जि पर बैठा रहता है। जब हम सत्य को बोलते हैं तब हमको ज्ञात होता है कि हम बोलते हैं क्योंकि यह इतना सरल है झूठ के बोलने में हज़ारों चिन्तायें करनी पड़ती हैं। यदि हम नुकूल सब कार्य करते हैं तो हमको किसी प्रकार की आपत्ति सामना नहीं करना पड़ता है किन्तु ज्योंहीं धर्म के मार्ग से हटता है त्योंहीं दुखों का आक्रमण होने लगता है चाहे इसके फल न दिखलाई पड़ें तौ भी हमको मानासिक वेदना सताये आजकल सत्य और धर्म के विषय में इतना कहा जा रहा है तो असत्य और अधर्म का नाश होता हुआ नहीं प्रतीत होता है। इ कारण यही है कि सब कार्यों की प्रणाली, क्या न्यायशाला, पाठशाला, क्या सेवक वृत्ति, क्या राजकीय प्रबन्ध, केवल म के बाहरी जीवन से सम्बन्ध रखती है। जीवन का आभ्यान्त लक्ष्य की शरण नहीं ली जाती है जिसकी वर्तमानता से सब ब आडम्बर और पाखण्ड दूर हो सकते हैं। आजकल न्यायशाल सत्य बोलनेवाले को दण्ड मिलता है, पाठशाला में असत्य प्रचार किया जाता है, सेवक वृत्ति में अपने सत्य विचारों छिपाना पड़ता है। इसके होते हुए भी हम सत्य और धर्म आरूढ़ रह सकते हैं। केवल आवश्यकता आत्मिक बल की है।

सम्प्रति भारतवर्ष में पुरुषों को शिक्षित बनाने के लिये भर यत्न किया जा रहा है। यह बहुत प्रशंसनीय कार्य है। परन्तु

साथ ही साथ हमको यह न भूल जाना चाहिये कि शिक्षित पुरुषों के अन्दर स्वाध्याय की रीति प्रचलित करें। आजकल भारतवर्ष में जितनी अज्ञानता शिक्षित पुरुषों में पाई जाती है उतनी अशिक्षित पुरुषों में नहीं है। इसका मुख्य कारण स्वाध्याय के प्रचार की अभावता है। हमारे विद्यार्थी समझते हैं कि परीक्षा में उत्तीर्ण होने के पश्चात अध्ययन करने की आवश्यकता नहीं है। यह उनकी भूल है क्योंकि परीक्षा में उत्तीर्ण होने के बाद विद्याध्ययन वास्तव में आरम्भ होता है। स्वाध्याय से हमारी स्थिति हमको विदित हो सकती है, सत्य और धर्म का मर्म हमको मालूम हो सकता है, तभी और तभी हमको जीवन का स्वाद मिलैगा।

———०———

सम्पादकीय वक्तव्य।

'ऋषि' उत्सव।

दीपमालिका का दिन आया और बहुत से स्थानों में ऋषि उत्सव मनाया गया। पाठकों को यह बतलाने की आवश्यकता नहीं है कि दीपमालिका के ही दिन स्वामी दयानन्द सरस्वतीने अपने प्राण त्याग दिये थे। उसी दिन के उपलक्ष्य में सामाजिक पत्रों ने ऋषि अंक भी निकाले थे। "प्रकाश" का ऋषि अंक बड़ा मनोरंजक और प्रभावोत्पादक था। उसमें स्वामी दयानन्द सरस्वती के जीवन के ऊपर बहुत से मुसलमान भाइयों और पौराणिकों के लेख लिखे हुए थे। "आर्य पत्रिका" का भी ऋषि अंक बड़ा अच्छा था। उसमें बहुत से अच्छे लेख अंग्रेज़ी में निकले थे। इसी प्रकार मेरठ का "भास्कर" जालन्धर का "भारत", "भारतसुदशाप्रवर्त्तक" आदि २ के भी ऋषि अंक अच्छे निकले हैं। काशी में भी ऋषि उत्सव के उपलक्ष्य में समाज मन्दिर में कई सज्जनों के शिक्षाप्रद व्याख्यान हुये थे।

जातीय विश्वविद्यालय।

यद्यपि मुसलिम विश्वविद्यालय ने चारटर (charter) पाने के लिये काफी चन्दा एकट्ठा कर लिया है, तौ भी तुर्की और बलकान के युद्ध के कारण मुसलमानों ने विश्वविद्यालय का कार्य कुछ बन्द कर दिया ऐसा प्रतीत होता है। सरकार के प्रस्ताव ने भी उनको बहुत निराश कर दिया है। जैसा विश्वविद्यालय के सञ्चालक

इसका आकार और उद्देश्य रखना चाहते थे, उसमें बहुत से
परिवर्तन करना पड़ेगा। सरकार का प्रस्ताव हिन्दू तथा मुस
दोनों विश्वविद्यालय के लिये समान है। इससे भेद यह हो
है कि विश्वविद्यालय के आगे से हिन्दू तथा मुसलिम ये दोनों
निकाल दिये जायँगे और उनके बदले में बनारस और अल
शब्द रक्खे जायंगे। यदि ऐसे नाम रक्खे गये तो सम्भव है कि
श्वविद्यालय की बहुत सी आकर्षण शक्ति चली जायगी और इ
बृद्धि में पवलिक का जोश भी कमती हो जायगा। यद्यपि बहुत
सज्जनों ने वादा किया हुआ चन्दा दे दिया है, तौ भी हिन्दू वि
विद्यालय का कार्य सन्तोषजनक नहीं होता है।

महामण्डल में दो प्रस्तावों का समावेश।

पाठकों को यह सुनकर महान हर्ष होगा कि भारतधर्ममह
ण्डल अब अपनी कुंभकर्ण की नींद से जागा है और उसमें कुछ ज
के लक्षण दिखलाई पड़ने लगे हैं। महामंडल ने अभी तक हिन्दु
का कुछ भी उपकार नहीं किया है यद्यपि उसने भोले भाले हि
ओं से इतना चन्दा लिया है जो ब्राह्मणों के भोजन कराने में
किये जाने के सिवाय और किसी शुभ कार्य में नहीं लगाया
है। महामंडल ने समुद्र यात्रा और अन्त्यज्य जातियों के उद्धार
समर्थन किया है और इन दोनों विषयों को प्रस्तावों के रूप में
कर दिया है जिससे इसकी कुछ उपयोगिता मालूम पड़ती है।
से श्रीयु० शारदाचरण मित्र ने महामंडल के मन्त्री पदको ग्रह
किया है तब से इन प्रस्तावों का प्रादुर्भाव हुआ है। उस का
नगर में जहां पर समुद्र यात्रा पर अभियोग चला हो और ज
पर वैदिक धर्म प्रचार करने में बड़े विघ्न पड़ते हों, वहां पर
प्रस्तावों का समावेश होना एक अच्छे आनेवाले समय को सूचि
करता है। महामंडल के इस कार्य ने काशी के पंडितों में हलच
मचा दिया है जो त्राहि २ के शब्द पुकार रहे हैं। कोई कहता
कि महामण्डल आर्यसमाजी होगया है और आर्य-समाज का प्रचा
कर रहा है। यद्यपि हम इस बात को स्वीकार करने के लिये न
हैं तौ भी इतना कह सकते हैं कि काशी में वैदिक धर्म के प्रचा
का ही यह प्रत्यक्ष फल है।

काशी में माधवाचार्य ।

गत वर्ष सहयोगी 'लीडर' ने हिन्दू और हिन्दू धर्म की व्याख्या के लिये बड़े २ पुरुषों की सम्मतियां प्रकाशित करना आरम्भ किया, तब प्रत्येक सम्मति दूसरी से भिन्न पाई गई थी, यहां तक यह पता न लग सका कि हिन्दू धर्म किसे कहते हैं। किसी ने तो भोजन छादन रहन सहन की प्रचलित रीतियों से हिन्दू धर्म को अन्य मतों से भेद करने का प्रयत्न किया। किसी ने लिखा कि जो मनुष्य वेदों को ईश्वरकृत मानते हैं वेही हिन्दू धर्म के सच्चे अनुयायी हैं। किसी ने बतलाया कि जो मनुष्य हिन्दुओं के देवालयों और मन्दिरों में प्रवेश करते हैं वेही हिन्दू धर्म के अनुगामी हैं और भी इसी प्रकार के अन्य विचार उपस्थित किये गये थे। पाठकगण स्वयम सोच सकते है कि उपरोक्त बातें कहांतक सत्य हैं। अन्त में यही कहना पड़ता है कि हिन्दू धर्म का कुछ पता नहीं है कि किसे कहते हैं। बहुत से मनुष्य कहते हैं कि जो मनुष्य श्रीस्वामीशङ्कराचार्य का प्रतिपादित किया हुआ अद्वैत सिद्धान्त को स्वीकार करते हैं वेही मनुष्य सच्चे हिन्दू हैं। उनको इस बात पर ध्यान देना चाहिये कि हमारे माधवाचार्य जो कुछ दिवस व्यतीत हुये काशी में अपने दलबल के सहित पधारे थे, द्वैत सिद्धान्त को मानते हैं जिसको श्रीरामानुज ने प्रतिपादित किया है।

माधवाचार्य आये। काशी में एक सभा की गई और स्थानिक पंडितों के बुलाने की चेष्टा की गई जिससे वे सभा में सम्मिलित हो सकें। म०म०प० शिवकुमार शास्त्रीजी ने सभापति का आसन ग्रहण करके सभा की कार्यवाही में भाग लिया। आपने (पं० शिवकुमारशास्त्री) बतलाया कि हम अपनी विद्वता से जिस सिद्धान्त को चाहें उसकी सिद्धि करके दिखला सकते हैं और सत्य को भी असत्य करके समझा सकते हैं किन्तु आपने और भी फरमाया कि हम सबके ऊपर अद्वैत सिद्धान्त को मानते हैं। यह तो हुई उनकी विद्वत्ता की बात। अब रही रूपये की बात। सो भी माधवाचार्य ने पुष्कल दक्षिणा दे के उनको सन्तुष्ट किया और भी अन्य पण्डित उन्हीं की भांति पूजे गये। इसके उपरान्त सभा विसर्जन कर दी गई। कुछ पंडितों ने माधवाचार्य के विरुद्ध एक विज्ञापन निकाल के विरोध प्रगट किया है।

निरामिष भोजन ।

यद्यपि आर्ष शास्त्र मांस को अखाद्य बतलाते हैं, तौ भी बहुत से भाई यह कहा करते हैं कि मांस खाने से बल और पु... शरीर में आता है और संसार की मनुष्य संख्या को विशेष ... मांस खानेवाले पाकर, वे मांस को त्याग करने में असमर्थ हो... हैं चाहे जितना उनको समझाया जाय और सहस्रों प्रमाण क्यों न दिये जायं। हमारे पाश्चात्य भाई जिस बात को या सिद्धा... को स्वीकार करते हैं उसको प्रथम प्रमाणों से सिद्ध करके दि... देते हैं। आजकल वहां पर बहुत से वैज्ञानिक विद्वान इस विषय... हल करने पर उद्यत हैं कि मांस भोजन मनुष्य के लिये अच्छा... वा नहीं। बड़े अन्वेषण और अनुसन्धान के पश्चात महा० र... (Mr. Russell) इस सम्मति पर पहुंचे हैं कि (१) जो जा... और मनुष्य मांस भोजन का सेवन नहीं करते हैं वे उन जा... और मनुष्यों की अपेक्षा, जो मांस सेवन करते हैं, बलवान... खुश रहते हैं, उनके अन्दर व्याधियां बहुत कम होती हैं और उ... और पुरुषार्थ के कार्यों में वे बहुत ही परिश्रमी होते हैं। देखें, ह... गौराङ्ग भाई और भारतवासी कहां तक इस अनुसन्धान के प... णामों को स्वीकार करके अपने अमली जीवन में घटित करने... प्रयत्न करेंगे।

निद्रा।

सम्प्रति भारत वर्ष में यह विचार प्रचलित है कि जिन ल... को मस्तिष्क की व्याधियों ने पीड़ित किया हो, उसको अच्छा होने... लिये चाहिये कि शारीरिक व्यायाम करें। परन्तु यह विचार अ... है। बालकों को बहुत जल्दी छोटी अवस्था में पाठशालाओं में न भेज... चाहिये जहां पर बहुत से विषय एक साथ पढ़ाये जाते हैं इ... बालकों का भविष्य जीवन और शरीर को बड़ा धक्का पहुंचता... यह तो शिक्षा प्रणाली का कुत्सित प्रभाव है। बाल्य विवाह... गृहस्थाश्रम की चिन्तायें और भी अन्य सामाजिक कुरीतियां ह... देश के बालकों और युवकों को मानसिक और शारीरिक अव... की ओर लिये जा रही हैं। हालही में मि० ब्राउन (Sir Ja... Crichton Browne) ने इस विषय के ऊपर कि मनुष्यों को नि...

टे सोना चाहिये कुछ विचार उपस्थित किये हैं जिनके पालन से नुष्य आरोग्य रह सकता है। उनका मत है कि चार वर्ष से ६ वर्ष ले बालकों को १३ घंटे, ७ और ९ वर्ष की अवस्थावालों को ११ टे, ९ और १४ वर्ष वाले लड़कों को १०॥ घंटे, १४ और १७ वर्ष लों को १० घंटे, १७ और २१ वर्ष वाले युवकों को ९॥ घंटे, २१ र २७ वर्षवालों को ९ घंटे और साधारण मनुष्यों को ८ घंटे ना चाहिये।

उक्त महाशय को विश्वास है कि यह नियम पालन करने से मान-क व्याधियां पास नहीं आ सकती हैं। विद्यार्थीगणों को इस पर ान देना चाहिये। रात्रि के समय किस दिशा को सिर तथा पैर रके सोना चाहिये इस विषय में कुछ नये विचार उपस्थित किये ये हैं। हमारे बहुत से हिन्दू भाई बतलाते हैं कि दक्षिण दिशा ी पैर करके न सोना चाहिये इससे गङ्गा देवी का अपमान करना गट होता है और वे इसके ऊपर प्रकोप भी करती हैं। परन्तु सके विपरीत प्रमाणों से सिद्ध होगया है कि रात्रि को दक्षिण शा की तरफ पैर करके सोना बहुत लाभदायक और गुणकारी अमेरिका देश के कोलम्बिया विश्वविद्यालय के डा० वाल्टर क्लार्क बड़े परिश्रम से अनुसन्धान किया है कि उपरोक्त कथन को पालन रने से रात्रि को अच्छी निद्रा आ सकती है प्रो० वेन्डल (Wendel) ौर प्रो० मैक ग्रीगर (Mac Gregora) ने भी इसी बात की ुष्टि की है।

विज्ञान की ऊर्ध्व गति।

आजकल मनुष्य पाश्चात्य वैज्ञानिकों के आविष्कारों और अन्वे-णों को बड़े कौतूहल से देख रहे हैं। जो कुछ विज्ञान ने मनुष्यों के ाहरी सुख और आराम के लिये किया है वह किसी से छिपा नहीं । उससे हमारे जीवन में महान अन्तर होता जाता है। आज हम विज्ञान ही की बदौलत देश देशान्तरों का भ्रमण दिनों में कर सकते । उसके ही बदौलत समुद्रों को पार कर सकते हैं। उसके ही दौलत हम घंटों का काम पलभर में कर सकते हैं।

विज्ञान की जो सब से प्रशंसनीय बात है वह यह है कि विज्ञान ेत्र में मन्तव्य और कर्त्तव्य का मिलाप अधिकांश में होगया है।

वैज्ञानिक जिस बातको स्वीकार करते हैं और जिस सिद्धान्त
प्रचार करना चाहते हैं. प्रमाणों से उसको सिद्धि भी करके दिख
देते हैं। जिन बातों की सिद्धि हम जादू, तन्त्र शास्त्र और मन
द्वारा सुना करते थे, चाहे सत्य हों या असत्य, उन्हीं को विज्ञ
हर एक मनुष्य को खुले मैदान बतलाने के लिये तैयार है। बहुत
वस्तुएं जो केवल प्रकृति की ही बदौलत बनती हुई मानी जाती
उनको आज विज्ञान बनाकर दिखला देता है। मनुष्य के आराम
व्यापार के लिये विज्ञान के द्वारा बड़ी २ नहरें बनाई गई हैं। स
के दो बड़े भागों को, नहर खोद कर मिला दिया गया है। स
नहर इसी का उदाहरण है अमेरिका में पनामा नहर खोदी जा
है। अब अफ्रीका के सहारा की मरुभूमि में नहर खोद कर पानी ल
का विचार एक फरासीसी वैज्ञानिक ने उपस्थित किया है। सह
में फरासीसियों ही का राज्य है और मरुभूमि और रेतही रेत
के कारण वहां पर कुछ भी वस्तु नहीं उपज सकती है। इस
उत्तर में समुद्र है। ५० मील की नहर खोदकर उस समुद्र से पा
लाने का विचार उत्पन्न हुआ है जिससे सहारा बिल्कुल समुद्र
परिवर्तित हो जायगा और चारों ओर पानी ही पानी दृष्टिगोच
होयगा क्योंकि सहारा की सतह समुद्र से नीची है। बीच बीच
द्वीप पानी से निकले हुये रह जायगें जिनमें खेती इत्यादि हो सकें
ऐसे कार्य के होने से प्रायः दक्षिणीय योरप के देशों के मनुष्यों
रहन सहन और जल वायु में महान परिवर्तन हो जाने की सम्भा
वना प्रतीत होती है।

पाठकों ने कदापि सुना होगा कि नकली हीरे योरप में बना
गये हैं। नकली इस बात में नहीं कि वे हीरे हीरे नहीं हैं। उन
उतनी ही चमक दमक होती है जितनी असली हीरे में पाई जात
है। यद्यपि ये कृत्रिम हीरे असली हीरों की अपेक्षा बहुत छोटे होते
हैं तो भी इससे ज्ञात होता है कि इस ओर और सफलता हो सकती
है यदि प्रयत्न किया जाय। यही नहीं किन्तु कृत्रिम रबड़, कृत्रिम
नील (indigo) भी बनाये जाते हैं। हालही में एक योरपीय
वैज्ञानिक ने पत्थर के सूत से बड़े मुलायम कपड़े बनाये हैं जिनको
अग्नि से हानि नहीं पहुंच सकती है। एक ने दूध से कृत्रिम हाथी
दांत बनाया है जो असली हाथी दांत से भी कई गुणों में बढ़कर है।
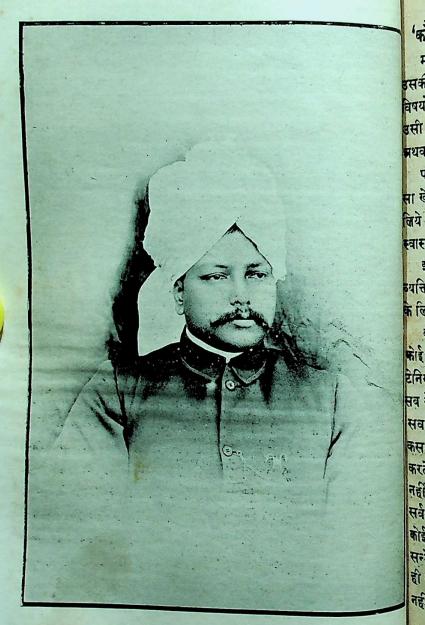
प्रोफेसर कालिदास माणिक
सेन्ट्रल हिन्दू कालेज ।

स्वास्थ्य और स्वभाव

(ले० श्रीयु० कालिदास माणिक)

'कौन सी कसरत हमारे लिये परमलाभदायक है'

मनुष्य का स्वभाव है कि जो जिस विद्या में निपुण है वह उसकी बड़ी प्रशंसा करता है। खेलकूद और व्यायाम सम्बन्धी विषयों में भी ऐसी ही अवस्था है। जो जिस खेल में दक्ष है वह उसी की तुरही बजाता है। विशेषता यहां तक है कि वह उसी खेल अथवा व्यायाम को संसार भर के लिये उपकारी समझता है

पहिला प्रश्न हर एक नवयुवक का यह होना चाहिये कि कौन सा खेल हमारे लिये लाभकारी होगा? दूसरा यह कि कसरत हमारे लिये उपकारी होगी अथवा खेल। इसी प्रकार के अनेक प्रश्न स्वास्थ सम्बन्धी हृदय से निकालने चाहिये।

इन प्रश्नों का उत्तर भिन्न भिन्न होगा। मेरी समझ में किसी व्यक्ति के लिये खेलही काफी है। किसी के लिये कसरत और किसी के लिये खेल और कसरत दोनों।

कोई कहेगा बाइसकिल पर चढ़ना सबसे अच्छी कसरत है। कोई कहेगा पटेबाज़ी के सामने सब कसरत तुच्छ हैं। कोई साहब टेनिस की उपमा में मग्न रहते हैं। कुश्ती बाज कुश्ती के सामने सब खेल कूदों को तमाशा मानता है। एक ठाकुर साहब घोड़े की सवारी को सबसे उत्तम समझते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि हर एक कसरत या खेल अपने २ ढंग के अच्छे हैं। जो लोग कोई कसरत नहीं करते उनके लिये सब बातें नई हैं। परन्तु हर एक मनुष्य घोड़ा नहीं रख सकता और न इतना समय ही लगा सकता है। इसलिये सर्वसाधारण घोड़े की सवारी से लाभ नहीं उठा सकते। कोई कोई सज्जन सब कसरतों से उत्तम जल में तैरना बताते हैं इसमें सन्देह नहीं कि स्वास्थ्य के लिये तैरना बड़ा उपकारी है और साथ ही यह एक उपयोगी विद्या भी है। परन्तु यह भी सब के अनुकूल नहीं हो सकता कि सर्वत्र तैरने के लिये सुभीता का स्थान मिले।

इसमें सन्देह नहीं की घोड़े कि सवारी से बदन के सब स्नायू (मसल्स) दृढ़ होजाते हैं और थकावट भी अच्छी होजाती है परन्तु वास्तव में सवारी करने से घोड़े की कसरत स्वयम अधिक होती

है। सवार से ज़्यादा घोड़ा लाभ उठाता है। घोड़े के पट्ठे मज़बूत
हो जाते हैं और वह फुरतीला भी हो जाता है।

प्र०– अब प्रश्न यह उठता है कि कौनसा खेल और कौनसी कसरत
सब से उत्तम और लाभकारी है ?

उ०–यह हरएक मनुष्य के स्वभाव और बदन की बनावट पर निर्भर
है। कोई खास खेल या कसरत नहीं बतलाई जासकती जो
हर एक मनुष्य के लिये उपकारी हो।

हां जब तक कोई खेल या कसरत नियमानुसार और इस
इरादे से किये जाते हैं कि स्वास्थ और बल बढ़े, अवश्य लाभ पहुं-
चाता है। हर एक काम करने के उचित और अनुचित कायदे हैं
परन्तु हमारे नवयुवक अपने उमंग से भूल कर अति कर देते हैं
और परिणाम यह होता है कि लाभ के स्थान में हानि उठाते हैं
तत्पश्चात् उक्तखेल या कसरत की निन्दा करने लगते हैं।

जो लोग यह प्रश्न उठाते हैं कि हमारे लिये कौनसी कसरत
लाभकारी होगी उनको साथही साथ यहभी प्रश्न करना चाहिये
कि हमारी मनशा क्या है। आया, हम सच मुच बली होना चाहते
हैं अथवा यश और मेडल की जयमाला पहिनना चाहते हैं। अथवा
कीर्त्ति और बल दोनों के इच्छुक हैं। ऐसा ख्याल करना कोई बुरी
बात नहीं है क्योंकि एक बलिष्ट शरीर और शारीरिक कला कौशल
जानना कोई बुराई नहीं है। जो मनुष्य बल और कला कौशल दोनों
में कुशलता चाहते हैं उनको याद रखना चाहिये कि वह किसी एक
या दो किस्म की कसरत से लाभ नहीं उठा सकते। उनको अनेक
प्रकार की कसरतों का अनुगामी होना पड़ेगा।

ऐसी कोई कसरत नहीं है जिसके अभ्यास से अंग के सब
भीतरी और बाहरी इन्द्रियां मज़बूत होजायं। हां, इतना सम्भव है
कि खुले मैदानमें कसरत करने से फेफड़े मज़बूत हो जाते हैं जिससे
खून साफ होता रहता है और शरीर भर में सुर्खी और ताज़गी
झलकती है।

हमको कौनसी कसरत करनी चाहिये यह हमारे सांसारिक
काम काज और जीवन प्रणाली पर निर्भर है। इसलिये हमारा
ध्यान सर्वदा उन इन्द्रियों पर रहना चाहिये जो स्वतः कोमल और
कमज़ोर हैं क्योंकि मानव शरीर एक अदभुत मशीन है इस यंत्रका

यदि कोई पुरज़ा बिगड़ जाय तो बस क्षय शुरू हो जाता है। और कालान्तर उसके शरीर में कोई राज रोग उतपन्न होकर उस व्यक्ति को सर्वनाश करदेता है।

बुद्धिमानों को चाहिये कि बीच बीच में किसी व्यायामाशास्त्री से अपना अभिप्राय कहते रहें और गुरु कि शिक्षानुसार कसरत में परिवर्तन भी करते रहें।

जो लोग बन्द और गन्दे स्थानों में अथवा तंग गली और कारखानों में अपना जीवन बिताते हैं उनकी अवस्था कम हो जाती है! मनुष्य के लिये स्वच्छ वायु में कसरत करना उतनाही आवश्यक है कि जैसे दीपक के लिये तेल।

हरएक बाल बृद्ध युवा स्त्री पुरुष को प्रतिदिन स्नान करना और स्वच्छ हवा में कसरत करना चाहिये।

हम अपना स्वास्थ्य कैसे अच्छा रख सकते हैं?

हम सब सुखी और निरोगी रहना चाहते हैं जिससे प्रतिदिन का कार्य्य सुगमता से कर सकें और खेल, तमाशे में भी अच्छी तरह भाग ले सकें। सुख का पूर्ण अनुभव बरतने के लिये केवल स्नान, पोशाक और सफाई से काम नहीं चलेगा। हमें अपना स्वभाव ऐसा बना लेना चाहिये कि नियत समय पर सोयें, उठें और नियत ही समय पर कसरत और भोजन करें।

हमें ऐसी आदत न डालना चाहिये कि जब चाहे खायँ जब चाहें उठें सब काम मन माना किया करें। इससे शरीर को आराम नहीं मिलता। उसका स्वभाव बिगड़ जाता है। वह अपने काबू में नही रहता, बलिक मनुष्य ही को अपने शरीर के वशीभूत होना पड़ता है। हमारा स्वास्थ्य और आनन्द हमारे नियत समय पर काम करने पर निर्भर है।

यदि हम ऐसा करने में आलस्य दिखायेंगे तो हमारा स्वास्थ्य बिगड़ेगा और हमारी शारीरिक शक्ति भी घट जायगी। नियत समय पर पाखाने न जाने पर अथवा स्नान न करने से मल पदार्थ रुधिर से मिलकर हमें रोगी बनाते हैं। इसलिये जैसा अंगरेज़ी में कहा है कि "An ounce of precaution is very much better than a ton of cure" अर्थात छटांकभर सावधानी से रहना मन भर बेपरवाही से रहने से बेहतर है।

स्वास्थ्य के चिन्ह ।

एक तन्दुरुस्त आदमी की चाल ही निराली होती है वह तना हुआ सीधा चलता है और उसका सिर कन्धों के बीच में शोभायमान दीखता है। शरीर के अंग (limbs) फुरतीले और जिन्दे मालूम पड़ते हैं। बीमारों के पैर भूमि पर स्वभावतः सीधे नहीं पड़ते और सिर भी एक तरफ लटका रहता है। आरोग्यता के समय ये लक्षण नहीं देख पड़ते वरन निरोगी की आंखें चमकती हैं त्वचा (चर्म) साफ और सुथरा मालूम पड़ते हैं और सूरत से मुस्कराहट झलकती है। खून के धब्बे बदन पर नज़र आना, खून की कमी और उचित प्रकार के भोजन की कमी ज़ाहिर करता है। नीचे लिखे हुये वाक्य पर पूरा ध्यान देने से हर एक मनुष्य निरोगी रह सकता है "Fresh air, wholesome food, exercise cleanliness and regularity are the keys to the possession of sound health" अर्थात् "स्वच्छ हवा, पचने वाला आहार, कसरत, सफाई और नियत समय पर काम करना मानो स्वास्थ्य की कुंजी हैं"

Manners

स्वभाव ।

"Manner maketh man" स्वाभाव ही से मनुष्य पहिचाना जाता है। केवल धन और स्वास्थ से मनुष्य सुखी नहीं रह सकता यद्यपि ये मनुष्यों की परम उपकारी वस्तु हैं तथापि अच्छा स्वभाव का होना भी आवश्यक है। मनुष्य और पशुओं में अनेक बातें एक सी होती हैं किन्तु मनुष्य अपने अच्छे स्वभाव से अच्छी अच्छी बातें ग्रहण करता है और बुरी आदतें छोड़ देता है। एक कवि ने कैसा अच्छा कहा है:—

आँख कान, मुख नासिका, सबही के इक ठौर।
कहबो, सुनबो, देखिबो, चतुरन के कछु और॥

स्वभाव ही से मनुष्य अपने को ऐसा बना डालता है कि सहस्रों मनुष्य उसके उपासक बन जाते हैं और वह आदर्श पुरुष बन जाता है और स्वभावही से वह अपने को ऐसा भी बनाता है कि नाम सुनने से लोग त्राहि भगवन करने लगते हैं।

हमारा जन्म केवल हमारे हित के लिये नहीं है। हमें अपने भलाई के साथ ही साथ अपने इष्ट मित्रों और मनुष्यमात्र की भलाई के लिये तत्पर रहना चाहिये। महर्षि व्यास जी का वचन है कि:—"परोपकाराय पुण्याय पापाय पर पीडनम्" स्वभाव उच्च होने से मनुष्य उच्च श्रेणी में गिना जाता है स्वभाव की हीनता से उच्च कुल में जन्म लेने पर भी अन्त नीच के नीच समझे जाते हैं।

बहुत से लोग ऐसे होते हैं कि बड़ी बड़ी लम्बी चौड़ी स्पीच (Speech) देते हैं परन्तु कार्य परायणता में निरे बालक होते हैं। ऐसे लोग 'वचने किं दरिद्रता' के अनुगामी हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी ने कहा है:—

'पर उपदेश कुशल बहुतेरे,' जे आचरहिं ते नर घनेरे' मनुष्यमात्र पर केवल उन्हीं लोगों का प्रभाव पड़ता है जो कि सरल स्वभाव के हैं। जो बड़ेबड़े काम करते हैं और सुकार्य में दत्तचित्त हैं।

"Better is he that ruleth himself than that he taketh a city

प्रातःकाल उठना।

स्वच्छ हवा और धूप के गुणों को आर्य्य सन्तान एक प्रकार अब भूल सी गयी है। उनको यह नहीं मालूम है कि उनके पितामह वायु और सूर्यदेव की पूजा केवल इसलिये नहीं करते थे कि उनके खेत अन्न से भर जायं, वरन संसार रूपी क्षेत्र में वे बली और परिश्रमी होकर परमेश्वर के सृष्टि में पूरे कर्मयोगी बनें।

सूर्य-कुल-कमल महाराणा प्रतापसिंह, छत्रपति शिवाजी, सम्राट अकबर प्रातःकाल उठने वाले पुरुषों में थे। संसार के प्रायः सभी नर रत्न सूर्य से पहिले ही उठने वालों में से हुये हैं। नेपोलियन बोनापार्ट, वेलीगृन, टोगो, मिकाडो आदि श्रेष्ठ पुरुष की जीवनी से यहीं शिक्षा मिलती है कि प्रातःकाल उठनाही हितकर है।

प्राचीन भारत के राज कुमार भी प्रातःकाल उठा करते थे जैसा कि निम्न लिखित दोहा से विदित है।

उठे लखन निशि विगति सुनि, अरुण शिखा धुनि कान।
गुरु ते पहिले जगतपति, जागे राम सुजान॥ गो० तुलसीदास॥

धनुर्धारी अर्जुन भी अपने गुरू भाई अश्वस्थामा के संग प्रा
काल उठा करते थे और गुरू सेवा के लिये सब से पहिलेही नदी
जल भर लाया करते थे।

शिक्षा के अभाव से हम सब आलसी बन गये हैं। बिछौने
से उठते उठते १ घंटा लग जाता है। अब हम सब 'कुम्भकर्ण
सोवत नीके' के अनुगामी होते जाते हैं।

जापानी नवयुवक सूर्योदय से पहिले उठाये जाते हैं
नित्य कर्म से छुट्टी पाकर खुले मैदान में कसरत कराये जाते
इधर इंगलेण्ड और जरमनी के नवयुवक ऊषा काल से पहिले
अपनी बन्दूक सम्हालते हैं और पास के जंगल में शिकार के
निकल जाते हैं।

हमारे देशी नवयुवक बिछौने पर पड़े पड़े सिगरेट या तम्बाकू
पिया करते हैं और जब खूब गरमा गये तब उठते हैं। किसी
दियासलाई पास रखना भूल गये तो फिर क्या कहना है
दुर्गति होती है।

स्वास्थ सम्बन्धी नियमों में से प्रातःकाल उठना परम आवश्यक
है। श्रुति स्मृति नीति और पुराणों में जहां देखिये वहां प्रातःकाल
उठना बड़ा लाभदायक कहा गया है। महर्षि, पंडित, कवि, सूरवीर
राजा बादशाह सभी सूर्योदय से पहिले उठते थे। विद्यार्थियों
यह पक्का नियम था कि प्रातःकाल विद्याभ्यास करैं।

वैद्यक ग्रन्थों में यही कहा गया है कि ब्राह्म मुहूर्त में
उठना चाहिये।

ब्राह्मे मुहूर्ते वुध्येत्त स्वस्थो रक्षार्थमायुषः।
तत्र दुःखस्य शान्त्यर्थं स्मरेद्धि मधुसूदनम ॥

अर्थात् स्वास्थ रक्षा के लिये ब्राह्म मुहूर्त्त में (चार घड़ी तड़के
उठे और उस समय दुःखनाश होने के लिये भगवान से प्रार्थना करे
जो मनुष्य रात को ९ या १० बजे उचित समय पर सो
प्रातःकाल सूर्योदय होने से पहिले उठते हैं उनका शरीर स
आरोग्य रहता है। सूर्योदय से कुछ पहिले के समय को अमृतवेला
कहते हैं। उस समय की निर्मल हवा बड़ी सुहावनी और प्राणा
याम करने के लिये वास्तव में अमृत के समान होती है। बल

बुद्धि बढ़ाने के लिये शुद्ध हवा का सेवन करना परम आवश्यक है। आरोग्यता और सुख की इच्छा करने वाले को प्रातःकाल उठना परम आवश्यकता है। दिन चढ़ने पर उठने से मन मलीन रहता है। आलस्य घेरे रहता है और किसी काम में चित्त नहीं लगता।

परिश्रमी लोग साधारण जन समुदाय से दो या एक घंटे पहिले उठते हैं और इस तरह से उनको काम खतम करने के पीछे खेलने कूदने का समय भी मिल जाता है।

यदि तुम और लोगों से एक घण्टा पहिले उठो तो एक महीने में तुम्हें तीस घण्टे ज्यादा मिलेंगे इस तरह एक वर्ष के बाद तुम्हें ३६५ घण्टे अर्थात् तीस दिन और कई घण्टे ज्यादा मिलेंगे वास्तव में जब और लोगों के बारह महीने पूरे होंगे उतनाही समय में तुम तेरह महीने का काम कर सकोगे एक अंगरेज़ कवि ने कैसा अच्छा कहा है और इस में सत्यता भी कितनी है।

"Early to bed and Early to rise
Makes a man healthy, wealthy and wise."

मल मूत्र का त्याग।

प्रकृति का यह नियम है कि अच्छे पदार्थों का ग्रहण करना और निरस और तलछटे वस्तुओं का त्याग इसी नियम के अनुसार मनुष्य जो पदार्थ खाता पीता है उसका रस रक्तादि बनकर शरीर भर में प्रवाह करता है और त्याज्य रस-मूत्र और त्याज्य भोजन-विष्ठा शरीर के बाहर निकलता रहता है। यदि कोई मल मूत्र, अधोवायु आदि वेगों को रोकता है, वह शरीर को कष्ट पहुंचाता है और अनेक रोगों का संरक्षक बनता है।

प्रातः काल उठते ही सृष्टि कर्ता परब्रह्म परमेश्वर का स्मरण करे और उसके अपूर्व प्रकृति की शोभा का अनुभव करे और अपने कर्त्तव्य कर्म को विचारे। इसके पश्चात् पाखाने, टट्टी से निपटे। उठते ही लोटा लेकर पाखाने को दौड़ना ठीक नहीं। पांच चार मिनट ठहर कर जाना चाहिये और उस समय केवल मल मूत्र त्याग करने का विचार चित्तमें रखना चाहिये। इस काम में जल्द निपटनाही अच्छा है। क्योंकि देर करने से अनेक तरह की पीड़ा हो जाती है।

बहुत से लोग बिना तम्बाखू खाये या पीये पाखाना नहीं जा सकते कोई २ तो गुड़गुड़ी या सिगार पाखाने के भीतर पीते हैं किसी व्यसन के आधीन रहना बुद्धिमानी नहीं है। गत वर्ष प्रयाग की प्रदर्शनी के अवसर पर महाराज मझौली वहां गये थे। महाराजा साहब रेशमी के कपड़े पहन कर पाखाने गये। प्रतिदिन के अनुसार उस दिन भी सटक तम्बाखू लगा कर वहां रखा था, दैव संयोग से वस्त्र का कोई हिस्सा चिलम से मिल गया धीरे धीरे आग सुलुगते छाती और कमर तक पहुंच गई महाराजा ने कपड़े नोच कर फार डालना चाहा परंतु कपड़े ऐसे बँधे थे कि सब परिश्रम निष्फल हुआ। महाराज की उंगलिया जलकर गल गईं और उनकी छाती पीठ भी अधिक जल गई। परिणाम यह हुआ कि महाराजा को परलोक यात्रा करनी पड़ी। इस तम्बाखू के व्यसन ने महाराजा का प्राणही ले छोड़ा। जो लोग प्रकृति के प्रतिकूल काम करते हैं उनकी ऐसी अवस्था होती है। पेटमें कोई तहखाना नहीं बना है कि वहां मल मूत्र जमा रहेगा। नशा पानी जमाकर दस्त निकालना किसी पशु पत्ती में भी नहीं देखा गया है, परन्तु मनुष्य ईश्वर की सृष्टि में श्रेष्ठ होकर भी परतंत्र हुआ जाता है। नशे बाज़ उठते ही टिकिया तम्बाखू और दिया सलाई का ध्यान करते हैं। ईश्वर के स्मरण की जगह तम्बाखू का पिन्डा ध्यान में आता है प्रातः काल स्वच्छ वायु का सेवन करना चाहिये परन्तु शुद्ध हवा के स्थान में दियासलाई जला कर गंधक और मिट्टी का तेल आदि की दुरगन्ध यूक्त हवा सांस लेते हैं। तम्बाखू पीने से फेफड़ा जलकर कमज़ोर हो जाता है जिससे अनेक व्याधियां उत्पन्न होती हैं।

वैद्यक ग्रथों में भी मल मूत्र का रोकना का बड़ा निषेध किया गया है:—

आयुष्यमुषसि प्रोक्तं मलादीनां विसर्जनम्।
तदंत्र कूजनाध् मानोदर गौरव वारणाम्।

सुश्रुत संहिता—

अर्थात्- सवेरे ही मल मूत्र और वायु आदि त्यागने से आयु बढ़ती है। क्यों कि इससे आतों का गुड़गुड़ाना पेट का अफरा भारीपन दूर होते हैं। पाखाना रोकने से पेट फूलजाता है और पेट में दर्द होने लगता है।

स्वास्थ रक्षा के लिये मल मूत्र का सवेरे त्याग करना अति आवश्यक है। खुलासा दस्त होजाने के बाद बड़ा आनन्द मालूम पड़ता है। बदन में फुर्ती आ जाती है। और काम करने में चित्त लगता है पेट में दस्त पेशाब रोक कर किसी प्रकार की कसरत नहीं करनी चाहिये। इन वेगों को रोक कर जो लोग कसरत करते हैं वं अपना प्राण खो बैठते हैं।

हिंदुस्तान में एक कहावत है कि जो लोग एकबार दिन भर में दस्त जाते हैं वे योगी हैं, दो बार वे गृहस्थ और जो तीन चार वार जाते हैं वे रोगी हैं।

मुँह धोना और दांतुन करना।

ज्ञानेन्द्रियों का जुटाव परमेश्वर ने सिर में बना दिया है। आंख कान नाक मुख जिव्हा सिर के अग्रिम भाग में उपस्थित हैं। इन ज्ञानेन्द्रियों को साफ रखना हमारा परम धर्म है। निरोग मनुष्य को चाहिये कि शीतल जल से मुँह को धोवे। विशेष कर आखों को। ठन्ढे जल से मुँह पर फुणसे, काले दाग और श्यामता नहीं झलकती, आंखें धोने से दृष्टि की ज्योति पुष्ट होती है। मुँह धोने के साथ साथ पैर भी धोना चाहिये क्योंकि तलुआ धोने से भी मस्तक में तरावट पहुंचती है, और नेत्र की ज्योति भी बढ़ती है।

दांतुन करना भी परम आवश्यक है। भारत वर्ष में दांतुन करना पुरानी चाल है। वास्तव में दाँतुन करना आरोग्यता के लिये अति हितकारी है। दांत और जिव्हा के मैल और दुर्गन्धी बिना दांतुन किये नहीं जाते। दाँतुन करने के बाद जीभ भी साफ करना चाहिये। हिन्दू प्रायः दांतुन को चीरकर जीभी बना लेते हैं। यह उपाय अच्छा है जो लोग मञ्जनादि से कुल्ला करते हैं उनको चाँदी या पीतल की जीभी अलग रखना चाहिये। जो लोग कुल्ला नाहीं करते उनके मुँह से दुर्गन्ध निकला करती है। उनको कुछ बुरा नहीं मालूम पड़ता परन्तु जो उनसे बात चीत करते हैं उनकी शामत आजाती है। दांत मैले रहने से दंत रोग हो जाते हैं। भोजन पचाने को दात पहिली मशीन है। इसके खराब होजाने से पेट को डबल काम करना पड़ता है। दाँत मैले रहने से दाँतों में कीड़े पड़ जाते हैं। दाँत की पीड़ा बड़ी भयानक होती है। जीभ न साफ करने से मनुष्य जो कुछ खाता पीता है उसका पूरा

पूरा स्वाद नहीं चख सकता। जीभ हमारे पेट के भीतर का हाल बता देती है। डाक्टर लोग रोगी की जिभा देखकर निश्चय कर लेते हैं की इसके पेट में कुछ गड़बड़ है या नहीं। ऐसी उपयोगी इन्द्रिय को यदि हम असावधानी से नष्ट करदें तो हमारी गिनती मूक अर्थात् मूंगों में होगी।

वैद्यक ग्रन्थों में आक, बड़ करञ्ज, बेर, खैर, गूलर, कदम्ब आदि दाँतुनों की अलग अलग प्रशंसा लिखी हैं। भारतवर्ष में नीम बबूल लोग काम में लाते हैं।

सुश्रुत जी लिखते हैं:—

निम्बश्च तिक्तके श्रेष्ठः कषाये खदिरस्तथा।
मधूको मधुरे श्रेष्ठः करंज कटुके तथा।

अर्थात्-कड़वे पेड़ों में नीम, कसैले वृक्षों में खैर, मीठे वृक्षों में महुए और रूखों में करंज की दांतुन अच्छी होती हैं।

जो लोग मांस ज्यादा खाते हैं उनके दांत बहुधा ख़राब हो जाते मसूड़े और दांतों के जड़ों में खोड़रे पड़ जाते हैं। विलायत में जिन लोगों के दांत खराब हो जाते हैं उनको फौज में भरती नहीं करते। एक बार एक अच्छा हट्टा कट्टा मनुष्य पलटन में भरती होकर बोर वार (Boar war) में जाना चाहता था। सब लोगों ने यही ख्याल किया कि यह मनुष्य बड़ा मज़बूत दिखलाई पड़ता है यह ज़रूर भरती होजायगा परन्तु डाक्टर ने उसको अनफिट (Unfit) कर दिया। युवक ने पूछा किस कारण से हम नहीं भरती किए जाते। डाक्टर ने जवाब दिया कि "तुम्हारे दाँत कमज़ोर हैं"।

युवक ने कहा तो क्या हम लोगों को अपने दुश्मनों को मार कर खाना तो नहीं पड़ेगा जो आप दांत कमज़ोर होने के कारण मुझे भरती नहीं करते?

डा० ने कहा यह ठीक है कि तुम को शत्रुओं को मार कर खाना नहीं पड़ेगा परन्तु लड़ाई के मैदान में तुमको पुलाव नहीं मिलेगा कड़े कड़े बिसकिट और आधा उबाला मांस मिलना भी कठिन है ऐसी अवस्था में तुम बदहज़मी या और कोई पेट की शिकायत से बिना मौत मर जावोगे। भारतीय नवयुवकों को इससे शिक्षा लेनी चाहिये।

गो० दीनदयालगिरि ने कैसा कहा है।

कुंडलिया

टूटे नख रद केहरी वह बल गयो थकाय।
हाय जरा अब आयके यह दुख दियो बढ़ाय॥
यह दुख दियो बढ़ाय चहूँ दिशि जम्बुक गाजै।
शशक लोमड़ी आदि स्वतन्त्र करैं सब राजै॥
बरनै दीनदयाल हिरण विहरे सुख लूटे।
पंगु भये मृगराज आज नख रद के टूटे॥

इस कुण्डलिया में वृद्धावस्था का कैसा चित्र खिंचा हुआ है। देश के नवयुवक स्वल्प अवस्था में दांत खो बैठते हैं। वास्तव में इनका दोही काल बाल और वृद्ध काल होता है युवा काल आने का सौभाग्य प्राप्त नहीं होता। परमेश्वर हमारी रक्षा करे।

बदन में तेल मालिश करना।

अंगरेजी पढ़े लिखे लोगों को बदन में तेल लगाने से घृणा उत्पन्न होती है पर वे इतना नहीं जानते कि वे किस देश के रहने वालों में से हैं। वास्तव में हम लोग गर्म मुल्क के रहने वाले हैं। हमारे लिये लावेण्डर से सुगंधित चन्दनादि तेल अत्यन्त लाभदायक है। बढ़िया से बढ़िया साबुन आँवले का मुकाबला नहीं कर सकता हैं। तेल लगाने से शरीर का चमड़ा नर्म और चिकना हो जाता है। शरीर बड़ा हलका और फुर्तीला मालूम होने लगता है। कमज़ोर आदमी के लिये बदन में तेल की मालिश करना एक तरह की कसरत हो जाती है। जो लोग नियम पूर्वक तेल बदन भर में लगाते हैं उनको चर्म रोग जैसे दाद, खाज, खुजली, फोड़े, फुन्सी नहीं सताता। वैद्यक ग्रन्थों में लिखा है कि तेल मर्दन कराने से धातु पुष्ट होती है। शुद्धि, रूप और बल बढ़ता है। सुश्रुतजी कहते हैं:—

"जल सिक्तस्य वर्द्धन्ते यथा मूलेऽङ्कुरास्तरोः।
तथा धातु विवृद्धिहि स्नेह सिक्तस्य जायते"॥

अर्थात्-जैसे वृक्ष की जड़ में जल सींचने से उसके डाल पत्तों

के अङ्कुर बढ़ते हैं उसी तरह तेल की मालिश करने से मनुष्य धातु बढ़ती हैं।

भारतवर्ष में अचार आदि चीज़ तेल में डुबो कर रखते हैं में डुबा रखने से स्वाद में परिवर्तन तो अवश्य हो जाता है पर सड़ता नहीं। अंगरेज़ लोग तेल की जगह शराब में डुबो कर सा वाली चीज़ रखते हैं। इस देश में तेल को लोग बदन में भी लग हैं और तेल की बनी हुई चीज़ें जैसे बरा, पापड़, पकौड़ी खाते यद्यपि तेल के बने हुये पदार्थ खाने से विशेष लाभ कुछ नहीं है तथापि उचित रीति से थोड़ा पदार्थ तेल-युक्त खाना लाभ पहुंचा है। महर्षि चरकजी अपनी संहिता में एक जगह लिखते हैं जिस भावार्थ यह है कि—" स्नेह यानी तेल के संयोग से जैसे मिट्टी घड़ा मज़बूत होता है, सूखा चमड़ा नर्म हो जाता है और यानी पहिये का रूखापन जाता रहता है, उसी प्रकार तेल मालिश से शरीर के चमड़े का भी रूखापन जाता रहता है।

भारत के पहलवान लोग भी आठवें रोज़ यानी हर बुधवार बदन में तेल की मालिश करते हैं। उस रोज और कसरत न करते केवल बदन भर मालिश कराते हैं। मालिश करना भी विद्या है हर एक मनुष्य अच्छी तरह मालिश नहीं कर सकता जापानियों में भी मालिश की प्रथा जारी है वे अपनी मालिश आप कर लेते हैं। एक तीन हाथ का डंडा लेकर सारे बदन रगड़ते हैं खास कर पीठ और पेट पर। अमेरिकन्स और इंगलिश मेन भी मालिश करना सीखते जाते हैं फिर भारतवर्ष के लोग पीछे पड़े हैं।

शिर में तेल लगाना।

सिर में तेल लगाने से बाल जल्दी नहीं पकते। आँवला तेल से बाल भौंरे के समान काले और चिकने बने रहते हैं। मस्तक की थकावट दूर होती है। बुद्धि बढ़ती है। आंखों की ज्योति पु होती है तथा मस्तक सम्बन्धी रोग बहुत कम होते हैं। मह चरकजी लिखते हैं कि—"मस्तक में सदा तेल लगाने से सिर में नहीं होता; न केश गिरते हैं न सफेद होते हैं और न टूट कर गि हैं। मस्तक और कपाल का बल बढ़ता है बाल सब मज़बूत वाले, लम्बे और काले रंग के हो जाते हैं।

पैरों के तलुओं में तेल लगाना।

तलुओं में तेल की मालिश करने से नेत्र की ज्योति बढ़ती है। थकाई, पैर फटना और पैरों का सूजना आदि रोगों का नाश हो जाता है। थकावट मिट जाती है और रात्रि में नींद आजाती है। भाव प्रकाश और सुश्रुत में लिखा है कि कसरत करके पैर में तेल की मालिश कराने से मनुष्य के पास राग इस तरह नहीं आता जैसे गरुड़ के पास सांप आना नहीं चाहता। निषेध केवल उन लोगों को है जो बुखार से पिड़ित हों अथवा अजीर्ण रोगी हों।

उबटन लगाना।

हम लोगों को कभी कभी सरसों या जौ या तिल्ली का तेल मालिश के बाद लगाना चाहिये। कभी कभी चने के चूर्ण यानी बेसन भी बदन में मलते हैं। उबटन मुंह पर मलने से गाल पुष्ट होते हैं। मुहासे और झांई मुख पर नहीं निकलते। इन दिनों उबटन की चाल बिलकुल कम होजाती है। बिलायती साबुन के सामने भला यहां का उबटन कब पसन्द आवेगा। लेकिन जितना लाभ ताज़ा बना हुआ उबटन से होता है उतना चरबीदार साबुन से कदापि नहीं हो सकता।

स्नान करना।

पवित्रं वृष्यमायुष्यं श्रम स्वेद मलापहम्।
शरीर बल सन्धानं स्वान भाजस्करं परम॥

स्नान पवित्रता करता है, आयु बढ़ानेवाला और श्रम नाशक है, पसीना नाश करने वाला और मल दूर करने वाला, बल बढ़ाने वाला और अति तेज करने वाला है।

और देशों में स्नान करने की चाल इतनी नहीं है जैसी कि भारतवर्ष में है। भारतवर्ष एक गर्म मुल्क है इसलिये यहां के लोगों को स्नान अधिक करना पड़ता है। गंगा स्नान के लिये सहस्रों कोस से लोग आते हैं और गंगा के निर्मल जल में स्नान कर कृतार्थ होते हैं।

स्नान करने के माने सिर्फ़ यही नहीं है कि दो लोटा पानी सिर पर डाल लिया बस स्नान हो गया। बदन पर कहीं पानी पड़ा कहीं नहीं पड़ा। जल्दी से बदन पोछ अलग होगये, ऐसे स्नान करनेवालों की संख्या कम नहीं है।

स्नान ऐसा करना चाहिये की शरीर के सब रोम कूप खुल जा और खास कर बगल पट्ठे तो टावल या गमछे से रगड़ कर स कर लेना चाहिये। स्नान न करने से शरीर के छिद्र बन्द होजाते वायु का आवागमन बन्द हो जाता है जिससे अनेक प्रकार चर्म रोग खड़े हो जाते हैं। यूरप वालों के मस्तक में अब स्ना करने के गुण समझ में आने लगे। कोई Cold Bath कोई Steam Bath कोई Tepid Bath की प्रशन्सा कर रहा है यहां तक कि Sun bath and Air-bath निकाल रखा है।

भारत वासियों के लिये तो स्नान करना एक धर्म आज्ञा परन्तु उचित रीतिसे स्नान करना एक तरह से बन्द हो गयाहै

एक तो अंगरज़ी ढंग के कपड़े पहिनने से योंही बदन में ह नहीं लगती-फिर जल का स्पर्श भी कम होता है ऐसी अवस्था शरीर का चमड़ा कमज़ोर पड़ जाता है उसको सर्दी गर्मी स की आदत नहीं रहती। हिन्दुओं का माघ स्नान और कर्तिक स्ना कुछ सोच विचार कर रक्खा गया है। स्वास्थ्य संम्बन्धी नियम स्नान करना परम आवश्यक है। कसरत करने के बाद जब थका दूर होजाती है उसके बाद स्नान करने से कैसा आनन्द माल पड़ता है उसका अनुभव वेही जान सकते हैं जो कसरती हैं।

कसरत खतम होतेही स्नान करने की भी रीति निकली परन्तु यह सर्व साधारण के लिये हितकारी नहीं है।

जो लोग हल्की कसरत करते हैं उनको पहिले स्नान कर कसरत करना चाहिये।

एक बात ध्यान में रखना चाहिये कि जब बड़ी थकावट या पसीना निकल रहा हो उस समय स्नान कभी नहीं करना चाहिये।

स्नान करने से चित्त प्रसन्न होता है, अग्नि प्रदीप्तहोती है औ पुरुषार्थ बढ़ता है। चरक आदि ऋषियों ने स्नान की जैसी प्रशंसा की है वास्तव में स्नान करना वैसाही लाभ दायक है परन्तु जितन बार पाखाने जाय या पेशाब करे उतनी बार स्नान करना मूर्खता है।

शीतल जल से स्नान करना लाभकारी है विशेष कर गर्मी ऋतु में तो शीतल जलसे सदा स्नान करना चाहिये। हां जाड़े

दिनों में गर्म जल आवश्यक है परन्तु सिर पर गर्म जल डालना हानि कारक है।

अनुलेप

अनुलेप करने से शरीर हलका हो जाता है और दुर्गन्ध आदि का नाश होजाता है। केशर चन्दन और अगर इन तीनों चीज़ों को घिस कर लेप करने से वात और कफ का नाश होता है। इनका लेप शीत कालमें अच्छा होता है।

बरसात में चन्दन केशर और कस्तूरी को घिस कर लेप करे उनका लेप मातदिल है।

गरमी के दिनों में कपूर चन्दन और सुगन्ध वाला इन तीनों का लेप करे इसका लेप सुगंधित और शीतल है। लेप करने से शरीर का रङ्ग सुन्दर होता है उत्साह बढ़ता है। हां, बुखार और अजीर्ण अवस्था में अनुलेप करना निषेध है।

❀ भोजन ❀

आहारः प्रीणनः सद्यो बल कृद्देह धारकः।
आयुस्तेजः समुत्साह स्मृत्यो योऽग्नि विवर्द्धनः।

सुश्रुत

भावार्थः— भोजन तृप्ति करने वाला, तत्काल बल बढ़ाने वाला, देह धारण करने वाला आयु, तेज, उत्साह, स्मरण शक्ति और जठराग्नि बढाने वाला है।

वास्तव में भोजन ही हमारा प्राणाधार है। संसारमें जितने जीवधारी हैं उनको किसी न किसी प्रकार का भोजन अवश्य करना पड़ता है।

भाव मिश्रजी लिखते हैं कि—भोजन से ही शरीर का पालन होता है, स्मरण शक्ति आयु बल, शरीर का रंग ,उत्साह, धीरज और सुन्दरता आदि बढ़ती है।

भोजन न करने से चय होता है। निर्बल मनुष्य सब प्रकार रोग ग्रसित हो जाता है। "दुर्बलो दैव घातकः" दुर्बल को दैव भी सताता है। इसलिये भोजन सम्बन्धी नियम में खूब सावधानी रखना चाहिये नहीं तो बल का चय अवश्य होगा।

भोजन सम्बन्धी सब सामग्री स्वच्छ और साफ़ रहना चाहिये। कई मनुष्यों की यह सम्मति है कि खूब ठूंस ठूंस कर भोजन करने से

बल की वृद्धि होती है परन्तु ऐसा करने से हमारा बल नहीं
बरन जो कुछ हम पचा सकते हैं उसी से हमारा बल बढ़
जैसा कि अंगरजी में किसीने कैसा अच्छा कहा है।

It is not what we eat but what we digest
makes us strong.

जो कुछ हम आहार करते हैं वह गले द्वारा होकर पे
उतरता है। वहां भोजन पेट के रास्तों द्वारा निकल कर झागदा
जाता है! फिर वहीं आहार पेट से निकल कर अतड़ियों में जात
यहां पर उसे पाचक पित्त आदि कई खट्टे पदार्थ मिलकर
भी पचता है। इस प्रकार बने हुये आहार के सार को रस कह
यह रसही भोजन का सूक्ष्म सार है। यदि यह रस मंदाग्नि
अध कच्चा रह जाता है तो चरपरा हो जाता है और तब अ
रोगों को पैदा करता है। आहार अच्छी तरह पचने से रस ब
है। रस से रक्त बनता है। रक्त से मांस बनता है। मांस से
अर्थात् चरबी बनती है। मेद से अस्थि बनती है। और हड्डी
मज्जा और मज्जा से शुक्र अर्थात् वीर्य्य बनता है। रस,
मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, और शुक्र ये गिनती में सात हैं
क्षय होने से जीव का क्षय होता है।

अतएव-भोजन की पवित्रता से हमारे मानसिक और शारीरि
बल दोनों बढ़ते हैं।

भारतवर्ष में भोजन के सम्बन्ध में जितना आचार विचार
इतना और किसी देश में नही है। इसका मुख्य कारण य
कि यहां के ऋषियों को सहस्त्रों वर्ष से विदित होगया था
आहार में स्वच्छता रखना परमावश्यक है। उनका तात्प
यह था कि इससे आरोग्यता बनी रहेगी और लोग आरोग्य हो
धर्म अर्थ काम मोक्ष सभी कुछ प्राप्त कर सकेंगे।

भोजन किस समय और कैसे खाना चाहिये.

जब हमें यह बात अच्छी तरह विदित होगई कि विना भो
किये हम नहीं रहसकते तो अब यह प्रश्नउठता है कि २४
में कै वार हमको भोजन करना चाहिये और किस तरह
खाना चाहिये।

स्वामी दयानन्द के
जीवन से कुछ शिक्षाएं।

आज से २९ वर्ष होने चाहता है जब उस महान नैष्ठिक ब्रह्मचारी ने अपने प्राण त्याग दिये। प्राणान्त के समय न तो उसके मुख पर कष्ट और क्लेश के चिन्ह ही दिखलाई पड़ते थे और न उस को मृत्यु ने भयभीत और कम्पायमान ही कर दिया था। जब सारे भारतवर्ष में दीपमालिका का उत्सव मनाया जा रहा था, जब दीपमालिका के प्रकाश से सूर्य के बिना भी रात्रि दिन हो रही थी; अजमेर नगर में एक सर्व त्यागी सन्यासी अपने पिता ईश्वर से अन्तिम प्रार्थना कर रहा है। यद्यपि वह सन्यासी मृत्यु आसन्न है तौ भी वह प्रसन्न वदन है। क्यों! इसका क्या कारण है? भारतवर्ष के मनुष्यों के अन्दर इतनी चहल पहल, इतनी प्रसन्नता, इतना हर्ष क्यों है। उस मरते हुये परम योगी के मुख पर सुख और मोद की आभायें क्यों दिखलाई पड़ती हैं? यही प्रश्न है और प्रत्येक मनुष्य को चाहिये कि अपने मन से इसका उत्तर पूंछे। उसको पूर्ण विश्वास है कि उसने अपना जीवन समय नष्ट नहीं किया है, वह पूर्णतया जानता है कि वह अपने जीवनोद्देश्य में फली भूत हुआ है, उसको सन्तोष है कि उसने अपने गुरू की आज्ञा पालन किया है अतः उस को अपने कर्त्तव्य पालन से हर्ष है। जिस प्रकार पिता से बिछुड़े हुये पुत्र को पिता के दर्शन से महान हर्ष होता है उसी प्रकार आज वह अपने परम पिता से मिलने के लिये अह्लादित हो रहा है। वह पुत्र पिता से मिल रहा है अतएव उस पिता के अन्य पुत्र भी खुशी कर रहे हैं। आवो, ऐसे योगी और त्यागी सन्यासी के जीवन से कुछ शिक्षा ग्रहण करें।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने जीवन पर्य्यन्त मनुष्यों को यही आदेश किया कि कर्म करो, कर्म करो परन्तु कर्म के फलों की इच्छा मत करो। उन्हों ने समझाया कि प्रत्येक मनुष्य को योग्य है कि अपनी ही उन्नति से वह सन्तुष्ट न रहे किन्तु सर्व की उन्नति में अपनी उन्नति समझे। उन्होंने अपनी बुद्धि, अपना शारीरिक बल, पराक्रम और विद्या मनुष्यों की सेवा में अर्पण कर दिया। यही नहीं, वरन धर्मपरायण और सत्यवक्ता होने के कारण उन्होंने अपने प्राण तक त्याग दिये किन्तु पीछे पैर न हटाया।

स्वामी दयानन्द का जीवन जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त घट-नाओं से परिपूर्ण एक ऐतिहासिक जीवन है । उनके सब गुण प्रशंसनीय हैं । परन्तु हम यहां पर बतलाना चाहते हैं कि उनके सब गुणों में से दो गुण बहुत ही श्रेष्ठ थे जिनकी समता और मिश्रण से उनका जीवन मधुर, सुख और कल्याणदायक जीवन हो गयाथा।प्रथम उनके जीवनमें कर्मप्रधानता दृष्टिगोचर होती है। अर्थात् वे कर्त्तव्य परायण (Man of action) थे । द्वितीय वे ईश्वर भक्त (Spiritual man or man of devotion) और त्यागी थे। प्रथम गुण उनको कठिन ब्रह्मचर्य्य व्रत के पालने से प्राप्त हुआ था। द्वितीय गुण सन्यासाश्रम से लब्ध हुआ था । जिस प्रकार दो भिन्न स्वरों के मिलने से एक नया और मधुर स्वर उत्पन्न हो जाता है उसी प्रकार इन दोनों गुणों के मिलावट से एक महान जीवन का प्रादुर्भाव हो गया जिसकी इतिहास में समता पाना असम्भव सा प्रतीत होता है ।

जिस मनुष्य में ये दोनों गुण पाये जाते हैं वही संसार का, देश का सब मनुष्यों का सच्चा उपकारक है । उसी का जीवन, उसी का अनुभव, और उसी की विद्वत्ता दूसरे मनुष्यों को जीवन और प्रकाश प्रदान करते हैं । वही मनुष्य दूसरों को लाभ पहुंचाने में अग्रसर होता है । संसार में प्रकाश देना, अन्धकार और तिमिर का हटाना सूर्य का स्वभाव होता है । सूर्य कोने २ और कोठरी २ तक प्रकाश और तेज पहुंचाता है । यदि किसी मनुष्य को प्रकाश में रहना अभीष्ट न हो, तो वह अपने को एक कोठरी में बन्द कर सकता है यदि उस मनुष्य की ऐसी दशा बहुत दिनों तक रही, तो वह बहुत सी व्याधियों का ग्रास बन जायगा । इसी प्रकार ये महात्मा पुरुष अपने ज्ञानरूपी तेज के पुञ्ज से दूसरों को जीवनरूपी प्रकाश प्रदान करते हैं । दूसरे मनुष्यों का उपकार करना ऐसे पुरुषों का सरल स्वभाव है । ऐसे मनुष्यों की श्रेणी में स्वामी दयानन्द की व्यक्ति सर्वोत्कृष्ट थी ।

यदि आप लोग इतिहास के पृष्ठों पर दृष्टिपात करें तो एक प्रकार के मनुष्य मिलते हैं जिन्होंने प्रसिद्ध होने की अभिलाषा से दूसरों के प्राण तक लेने में विलम्ब नहीं किया । इन्हीं के कार्यों की सूचना से इतिहास के पृष्ठ पूर्ण हैं । उन्होंने अपने जीवन समय में

मनुष्यों को चकाचौंध करने के लिये और अपना नाम अमर करने के लिये नाना प्रकार के साधनों का अवलम्बन किया किन्तु ये उन के क्षणभङ्गुर प्रयत्न सब निष्फल हुये। अब केवल उनके नाम मात्र इतिहास में अवलोकन किये जा सकते हैं। इसी श्रेणी में बहुत से महाराजाओं, सैनिकों, देशों के ऊपर विजय पाने वालों और नेताओं के नाम अन्तर्गत हो जाते हैं। इसके लिये उन्होंने अच्छे २ रमणीक और मनोहर राज महलों और प्रासादों का निर्माण किया। उन्होंने दूसरे देशों के ऊपर आक्रमण किया और लाखों मनुष्यों के प्राण लेने के लिये कतल आम का नक्कारा पिटवा दिया। दूसरे मनुष्यों की आपत्तिओं और दुःखों के ऊपर ध्यान न देकर उनको अपना उपासक बनाने के लिये, इष्ट देव बनने का प्रयत्न किया। संसार रूपी नाट्य शाला में एक सिकन्दर आता है, थोड़े समय के लिये संसार के श्रद्धा और आदर का पात्र बन बैठता है कई देशों के ऊपर उसने विजय प्राप्त की। परन्तु यह कार्य उस के साहस मात्र का एक उदाहरण था। संसार रूपी रंगभूमि में में एक नेपोलियन आता है। उसने अपने साहस और वीरता से कई देशों को परास्त किया। यहां तक कि उसने कई वर्षों के कठिन परिश्रम से सम्राटपद तक को ग्रहण कर लिया। किन्तु इन सब कार्यों का वही परिणाम हुआ जिसके होने की सम्भावना हो सकती है। उसकी व्यक्ति ने फ़्रान्स देश को बिल्कुल खोखला कर दिया और उसको अवनति का मार्ग दिखा कर वह इस संसार से चल बसा। आज उसका नाम भय के साथ उच्चारण किया जाता है। नादिरशाह ने अपने कतल आम से क्या कर लिया ? क्या तैमूरलंग हजारों मनुष्यों को गुलाम बना कर उनके हार्दिक प्रेम का पात्र बन सका ? किञ्चित मात्र भी नहीं। इन नेताओं ने मनुष्यों के शरीर के ऊपर जय प्राप्त की किन्तु उनके मन को, उनके आत्मा को वश में न कर सके। अतः वे मनुष्यों के सच्चे उपकारक नहीं कहे जा सकते क्योंकि उनके अन्दर नितान्त कर्म की प्रधानता थी। उनको Men of action कह सकते हैं। आज उन के नाम भी संसार से लुप्त हो गये हैं। उन्हों ने अपने लाभ से, अपने प्रसिद्ध बनने की अभिलाषा से कार्यों का सम्पादन किया था। उनके कार्य मनुष्यों के हृदय ग्राही नहीं हुये।

इतिहास के अन्दर एक अन्य प्रकार के मनुष्य दृष्टि गोचर होते हैं। उनके अन्दर वैराग्य और त्यागशीलता की प्रधानता पाई जाती है। उपरोक्त मनुष्यों से इन मनुष्यों की श्रेणी बिल्कुल विपरीत है। जहां एक मनुष्यों में कर्म प्रधान है और आशा की पूर्णता है, वहां दूसरे मनुष्यों में त्याग शीलता की अधिकता है और उनके हृदय के अन्दर आशा की ऊष्णता नहीं है। अपने कर्त्तव्यों को पालन न करके, संसार से मुख मोड़ कर वे एकान्त में निवास करने लगते हैं जिस में वे संसार के झंझटों से बच जांय। इतिहास के पृष्ठों में ऐसे एकान्त वासी मनुष्यों के नामों की अभावता नहीं है। जो मनुष्य उनके समीप आ जाता, उसको वे उपदेश देते और उसके हृदयगत के सन्देहों को निवृति कर देते। यद्यपि किसी अंश में मनुष्यों के वे भी उपकारक थे, तौभी वे सच्चे उपकारकों की श्रेणी में नहीं गिने जा सकते क्योंकि उन्हों ने जीवन के एक पहलू को तिलाञ्जलि दे दिया था। यद्यपि वे मनुष्यों के प्रत्यक्ष शत्रु न थे, तौ भी उन्हों ने जीवनोद्देश्य को अपने दृष्टि से पृथक कर दिया था। हम इस श्रेणी में भी स्वामी दयानन्द सरस्वती को नहीं रख सकते हैं। त्यागी तो वे अवश्य थे किन्तु इस से भी वे अधिक थे। ईश्वर भक्त होते हुये भी उन्हों ने धर्म के मर्म को समझा तदनुसार अपना जीवन बनाया था।

सम्प्रति दो प्रकार की अवस्थायें दृष्टि गोचर होती हैं। एक ओर पाश्चात्य युरोप देशों की कर्म प्रधानता, दूसरी ओर प्राच्य भारत वर्ष देशों की झूठी त्यागशीलता और वैराग्य दिखाई पड़ते हैं। एक ओर सांसारिक सुखों की प्राप्ति और साधन में जीवन व्यतीत किया जाता है, दूसरी ओर यहां पर नाना प्रकार के दुखों को सहन करते हुये, इस संसार को नरक बनाते हुए, पारलौकिक सुखों के असम्भव साधनों में जीवन व्यतीत किया जाता है, चाहे वे दासपन को भी न जानते हों किन्तु स्वामी बनने की इच्छा की जाती है। युरोप को कर्म प्रधानता रूपी ज्वर ने तप्त और देदीप्यमान कर दिया है और वह ज्वर की गर्मी में अण्ड बण्ड बक रहा है। दूसरी ओर भारतवर्ष को झूठ वैराग्य और त्याग शीलता रूपी सन्निपात ने शिथिल और निरुत्साही कर दिया है और शोक से कहना पड़ता है कि वह भी सन्निपात की असीम सदा में आंय बांय

सांय बक रहा है। यदि हम चाहते हैं कि संसार में वैदिक धर्म-रूपी सूर्य्योदय हो, यदि हम चाहते हैं कि संसार में सुख और शान्ति का राज्य हो, तो हम को यह कर्त्तव्य है कि महर्षि दयानन्द सरस्वती के जीवन की मुख्य शिक्षाओं का प्रचार करें और दोनों देशों को उनके जीवनरूपी औषधि का सेवन करावें जिसमें योरप का ज्वर और भारतवर्ष का सन्निपात दूर हो जावे। यही दयानन्द के जीवन की शिक्षाएं हैं जिन को हम अपने जीवन में घटित कर सकते हैं।

अद्य काल युरोप की सभ्यता महान कही जा सकती है इस बात में कोई भी सन्देह नहीं कर सकता है। वहां के मनुष्यों में उत्साह और उद्योग की लाली वर्त्तमान है। उन्होंने प्राकृतिक नियमों का सदुपयोग किया है। वे इस जीवन को मिथ्या जीवन नहीं बताते हैं। पदार्थ विषयक अनेकानेक आविष्कारों से, अन्वेषणों से जीवन का स्वाद ले रहे हैं। रेल और तार से कार्य लिया जा रहा है। उन्होंने पदार्थ विषयक सुखों का एक विशाल मण्डप तैयार किया है। देखो, अच्छी तरह देखो, उनका यह सुन्दर मण्डप निराखोखला है। उसमें बाहरी सुन्दरता ही दृष्टिगोचर हो सकती है। उसमें नींव कुछ भी नहीं है और ठोस भी न होकर वह स्थायी भी नहीं है। ईश्वरीय प्रकोप रूपी विद्युत के एक धक्के से वह सुन्दर मण्डप भूमि पर गिराया जा सकता है। जहां तक पता लगता है और आप स्वयम उनके सामाजिक राजनैतिक और सम्पत्ति सम्बन्धी संस्थायों के नियमों को निरीक्षण कर सकते हैं कि जिन नियमों के आधार पर उनकी ये संस्थायें और सभायें स्थापित की गई हैं, उनका सम्बन्ध केवल बाह्य जीवन से है। उनका जीवन शुष्क जीवन हो रहा है। उनके जीवन में सच्चे प्रेम और सच्चे वैराग्य की अभावता सी देख पड़ती है। वे जिस बात को स्वीकार करेंगे उसको अपने इन्द्रियों की चार दीवारी में परिणत करने की चेष्टा करते हैं। सच्चे त्याग और वैराग्य से युरोप की नूतन सभ्यता की जड़ सुदृढ़ हो जायगी। उनको चाहिये कि स्वामी दयानन्द सरस्वती की भांति अपने जीवन में त्याग शीलता के भाव लावें। त्याग शीलता का भाव जीवन का लवण है। जिस प्रकार लवण (नमक) के लगाने से कोई पदार्थ

खराब या सड़ नहीं जाता है उसी प्रकार त्याग शीलता के भाव से जीवन शुष्क या प्रेम से रहित नहीं हो सकता है। यदि पाश्चात्य अपनी प्यारी सभ्यता को सड़ने से बचाना चाहते हैं तो अपनी सभ्यता के ऊपर इस त्याग शीलता रूपी नमक लपेट चाहिये। यह त्यागशीलता का भाव स्वामी दयानन्द के जीवन से मिलता है और किसी से नहीं। उनको स्वामीजी की भान्ति भक्त बनना चाहिए। लोगों ने समझा कि स्वामीजी समाज सुधारक के सिवाय कुछ नहीं है। लोगों ने समझा कि स्वामीजी वेद भाष्य कर्ता के सिवाय और कुछ विशेष नहीं है। कोई समझता कि वे केवल धार्मिक सुधारक ही हैं। कोई समझता था राजनैतिक पुरुष हैं। इन सब बातों के ऊपर सब से प्रथम वे भक्त थे। उन्हों ने ईश्वर की सर्वव्यापकता का अनुभव किया उनको ईश्वर के न्याय के ऊपर पूर्ण श्रद्धा थी। जब उनके का समय समीप है और वे अपनी अन्तिम प्रार्थना करने के उठ बैठते हैं और अन्त में कहते हैं "ईश्वर ! तेरी इच्छा हो"। इन शब्दों ने पं० गुरू दत्त यम० ए० की काया पल उसको नास्तिक से सच्चा आस्तिक बना दिया। पं० गुरुदत्त समझा कि ये शब्द एक पाखण्डी और दम्भी मनुष्य के शब्द हैं। मरते समय कोई भी मनुष्य पाखण्ड नहीं कर सकता जीवन में मरना वह समय है जब मृत्यु के भय और दुखों से रस्थ आत्मा विह्वल हो जाता है। पाखण्ड करने की बात कौन कोई अपने होश तक नहीं सम्हाल सकता है। ईश्वर अवश्य पं० गुरुदत्त को ईश्वर की आस्तित्व का पूर्ण अनुभव हो गया।

आइये, पाठक गण। देखिये, नवीन भारत वर्ष स्वामीजी के जी से कौन गुण ग्रहण कर सकता है। आजकल हर एक स्था यही सुनाई पड़ता है कि जो कुछ भाग्य में होगा, वही होगा, संसार असार है,' 'यह संसार मिथ्या है,' 'कार्य करना निरर्थक इसी प्रकार के शब्द हर एक बालक के कान में जन्म ही से भरे हैं। इसका परिणाम यह होता है कि कोई तो युवावस्था संसार में मुखमोड़कर सन्यास धारण कर लेता है और कोई भोजन करने के सिवाय अन्य कर्त्तव्य नहीं करते हैं। ऐसे म को स्वामी जी के जीवन से उपदेश मिलता है कि संसार कार्य

के लिये है, और ईश्वर की यह सृष्टि बहुतही सुन्दर है। यदि स्वामी दयानन्द चाहते, तो वे अपने जीवन को अन्य सन्यासियों की भांति हिमालय पर्वत पर व्यतीत कर सकते थे। जिस प्रकार महात्मा बुद्ध को एकान्त वास, कठिन तपस्या संसार से बिना कुछ सम्बन्ध न रक्खे हुये, निरर्थक प्रतीत हुई, उसी प्रकार जब स्वामी दयानन्द के मनको संतोष और आत्मा को शान्ति न मिली और जब वे हिमालय पर्वत की बर्फ में गलकर अपने प्राण त्यागने पर उद्यत हुये, तब एकाएक उनके मनके अन्दर यह भाव उत्पन्न होता है कि संसार में पग रक्खो क्योंकि अन्य मनुष्य भी दुख पारहे हैं और उनको कल्याण पहुंचाना चाहिये। बस यह भाव उनको कब एकान्त वास करने देता जबकि उनके लिये संसार ऐसा महान कार्य क्षेत्र पड़ा हुआ था जहां पर अविद्या की अटल राज्य थी और जहां मनुष्यों को सत्यासत्य का विवेक न था और न तो धर्म के मर्म कोही वेसमझे थे, जहां पर धर्म के नाम से ऐसी कुरीतियां प्रचलित होगई थीं जो कि मनुष्य को अपने दूसरे भाई से पृथक करती थीं, यहां तक कि प्रेम की अभावता सी होगई थीं। सम्प्रति भारतवर्षमें ५२ लाख ऐसे मनुष्यों की संख्या है जो अपने को त्यागी और सन्यासी कहते हैं परन्तु जो सच्चे त्याग के अर्थ नहीं समझे। सोचिये तो सही ये ५२ लाख मनुष्य ऐसे हैं जो संसारमें कार्य करना वृथा और निरर्थक समझते हैं यही नहीं वरन अपना सारा जीवन बाह्य आडम्बरों, आलस्य और प्रमाद में व्यतीत करते हैं अन्य को भी ऐसाही करने की शिक्षा देते हैं। क्या ये देश के, संसारके धर्म के सच्चे उपकारक कहे जासकते हैं—नहीं, नहीं वे संसार में भार हैं। उन्हों ने अपनी ईश्वर दत्त शक्तियों को निरर्थक नष्ट कर दिया है और करते जाते हैं। स्वामी दयानन्द के जीवन से उपदेश मिलता है कि "Live and work in the world but be not of the world" अर्थात 'संसार में रहो और कार्य करो किन्तु संसार के न हो जाव। यही कर्म योग की उच्च शिक्षा है जिसको हर एक मनुष्य को अपने जीवन में घटित करना चाहिये।

परिवर्तिनिसंसारे मृतः कोवा न जायते।
सजातो येन जातेन यातिवंशः समुन्नतिम्॥

यदि आप स्वामी दयानन्द के जीवन चरित्र को पढ़ें तो यह बात

हो सकता है कि वे सत्य के प्रचार और धर्म के प्रसार में
निर्भय थे। उनको यह निर्भयता और सत्यपरायणता कहां से
थी। यह उनके आत्मिक बल का प्रभाव था। उनके अन्दर
Moral courage थी। आप स्वयम सोच सकते हैं कि कैसी
त्तियों और कैसे विरोध का सामना उन्हें करना पड़ा होगा।
समुद्रयात्रा पर एक अभियोग (मुकद्दमा) चलता है उसी में
महामहोपाध्यायों, बड़े धुरन्धर पण्डितों और वाक युद्ध करने
वैय्याकर्णियों, बड़े धनाढ्यों और अमीरों के आत्मिक बल का
मिल जाता है। वे लोक रीति के विरुद्ध काम नहीं करना चा
चाहे वह घृणित से घृणित क्यों न हो। वे शारीरिक बल, वि
और सम्पत्ति बल रखते हुये भी एक बालक के समान आत्मि
में नितान्त कमज़ोर और निर्बल हैं। कौन बुद्धिमान पुरु
खानपान की कड़ी रीतियों को अच्छा कह सकता है। कौन
भाविक जातिपांति का सर्थन कर सकता है। किसको घृणित
जिक कुरीतियां अच्छी मालूम होती हैं? किसको परदे की हा
रक और रोग उत्पादक रीति पसन्द है? कौन मनुष्य भला
को पशु बनाना चाहता है? कौन उनको अविद्या के अन्ध
रखना चाहता है? कौन बाल्यविवाह के विरुद्ध नहीं है? ए
दो नहीं, सैकड़ों ऐसी बातें हैं जो समय और देश को देख
हिन्दू समाज या किसी सभ्यसमाज के लिये नितान्त हानि
हैं। परन्तु प्रश्न उत्पन्न होता है कि किसके अन्दर आत्मिक
जो इनके विरुद्ध आन्दोलन करे और स्वयम उन बातों को
जीवन, अपने कुटुम्ब और अपने बाल बच्चों से निकालने का
करे। हम देखते हैं जब समय आता है तब हम मध्यस्थावलम्ब
Compromise कर लेते हैं उन कुरीतियों के विरुद्ध शब्द उठा
कौन कहे, हम चूं तक नहीं करते हैं। येही Compromise
वाले मनुष्य सुधार के महा शत्रु हैं। उनको चाहिये कि
दयानन्द के जीवन से आत्मिक बल की शिक्षा ग्रहण करें
समय आवे तब पर्वत के समान अपने सिद्धन्तों पर अटल
तभी और तभी धार्मिक सुधार, समाजिक सुधार हो सकता

स्वामी दयानन्द के समय की अवस्था को आप देखें तो
आश्चर्य होगा कि कितना आत्मिक बल उनके अन्दर रहा

उन्होंने अपने जीवन के उदाहरण से अपनी व्यक्ति से ब्रह्मचर्याश्रम को पुनरुद्धार करने के लिये आन्दोलन किया। उन्होंने अपने सन्यास धर्म से पाखण्डी सन्यासियों के कर्त्तव्यों का खण्डन किया। उन्होंने अपने वेदाध्यायन से मूर्तिपूजा को नितान्त अवैदिकपाषाण पूजा बतलाई। उन्होंने प्रचलित जाति पांति का घोर खण्डन किया। मुर्दों का श्राद्ध और अपव्यय का खण्डन सर तोड़ किया। यहां तक कि हमको कोई भी ऐसी बात नहीं दिखलाई पड़ती है जिसके ऊपर उन्होंने अपनी सम्मति न प्रगट की हो। एक समय की बात है जब वे अजमेर में थे और वहां पर धर्म का प्रचार कर रहे थे तब उन्होंने जोधपुर जाने की इच्छा प्रगट की। किसीने उनसे कहा कि आप जयपुर न जांय, नहीं तो वहां के पण्डित आपको मरवा डालेंगे। इसका उत्तर जो कुछ स्वामीजी ने दिया, वह हर एक मनुष्य को मनन करने योग्य है। उन्होंने कहा, "हम जयपुर में धर्म प्रचार करने के लिये जायेंगे, चाहे हमारे विरोधी हमारी अंगुली के एक पोर के सौ टुकड़े करके, बत्ती बनाकर जलादें परन्तु तौभी हम सत्य के प्रचार के लिये अवश्य जायेंगे"। अहा! यह उत्तर कैसा आत्मिक बल का परिचय देता है। यही, नहीं, वे बहुधा यह श्लोक कहा करते थे।

निन्दन्तु नीति निपुणा यदि वा स्तुवन्तु,
लक्ष्मी स्समाविशतु गच्छतु वा यथेष्ठम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा,
न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः॥

आवो यदि हम सब लोग धर्म का प्रचार करना चाहते हैं, यदि सत्य फैलाना चाहते हैं, यदि देश का उद्धार करना चाहते हैं, तो हम अपने जीवन में आत्मिक बल का संचार करें। तभी देशोन्नति होगी, सुख और शान्ति का राज्य होगा।

———o———

स्त्री शिक्षा

(ले० श्रीयुक्त परमेश्वरी दयालु, देवदत्त)

सच्चिदानन्द परमात्मा ने इस जगत को पूर्ण रूप से रच कर

प्रत्येक जीव के कर्म भोग के लिये नाना प्रकारके देह रचे हैं, जिन् से मनुष्य भी एक शरीर के दो भाग हैं, प्रथम पुरुष द्वितीय स्त्री पुरुष और स्त्री आपस में समान हैं, परन्तु भारतवर्ष में दृष्टि पड़ है कि पुरुष तो अधिक सभ्य और बुद्धिमान हैं, मगर स्त्रियां अधि अनपढ़ी और असभ्य हैं। इसका क्या कारण है कि स्त्रियां अनप और असभ्य पाई जाती हैं? इसका कारण स्त्री शिक्षा के अतिरि और कोई दृष्टि नहीं पड़ता क्योंकि इस देश में अधिक ऐसे पुरुष जो कि स्त्री शिक्षा के प्रतिकूल हैं, वह कहते हैं कि स्त्रियां पढ़ने विगड़ जाती हैं पति की परवाह नहीं करतीं, घर के काम में नहीं लगातीं, अपने धर्म्म को तुच्छ समझने लगती हैं। इसलि गृहस्थी का सारा सुख जाता रहता है, परन्तु यह समझना है। सीता, गंधारी, अनसूया, सुमित्रा के जीवन चरित्रों से यह साफ प्रत्यक्ष है कि विद्या पढ़ने से स्त्रियां बिगड़ नहीं जातीं, उल सुधर जातीं हैं, पति से अधिक प्रेम करने लगती हैं, और मू स्त्रियों की अपेक्षा गृह-कार्य्य भी अधिक उत्तम करती हैं।

यदि हम गृहस्थ को एक गाड़ी की उपमा दें तो स्त्री, पुर उसके पहिये कहे जा सक्ते हैं। जिस प्रकार एक पहिये के खरा होने से गाड़ी प्रथम तो देखने वालों को बुरी मालुम होती है, द्विती अभिलिषित यात्रा को सुख पूर्वक पूर्ण नहीं कर सकेगी, इसी प्रका यदि पुरुष विद्वान परिश्रमी है और घर में स्त्री मूर्खा काला अक्ष भैंस-समान जानने वाली है तो वह पुरुष के लिये विपत्ति मूर्ति है देखते नहीं हो जब पुरुष परिश्रम करके घर आता है तब डां फटकार से अपना थकान दूना करके चुप पड़ रहता है मानो सु का नाम तक नहीं जानता गृह प्रबन्ध ठीक नहीं पाता। इस कारण पुरुष का चित्त सदैव दुखी रहता है।

प्यारे! क्या यह वही भारत वर्ष नहीं है? जिसमें कि मन्दो दरी, अनसूया आदि जैसी स्त्रियां हुई हैं। मन्दोदरी ने अपने पति को सीता जी के लौटाने को जो शिक्षा दी थी वह जगत विख्या है, और जिस समय श्रीरामचन्द्रजी सीता लक्ष्मण सहित बन अत्रीऋषि के स्थान पर पहुंचे तो ऋषि की स्त्री अनसूया ने सीताजी को पतिव्रत धर्म्म के विषय में एक अमूल्य शिक्षा दी, रामायण लिखा है कि—

चौपाई।

मात पिता भ्राता हितकारी। नित सुख प्रद सुनु राजकुमारी॥
अमित दान भर्त्ता वैदेही। अधम सो नारि जो सेव न तेही॥
धीरज धर्म्म मित्र अरु नारी। आपत काल परखियहि चारी॥
वृद्ध रोग बश जड़ धन हीना। अन्ध बधिर क्रोधी अति दीना॥
ऐसहु पतिकर किय अपमाना। नारि पाव यमपुर दुख नाना॥
एकै धर्म्म एक व्रत नेमा। काय वचन मन पति पद प्रेमा॥

शोक! हा शोक! कि आज हम हिन्दी, उर्दू, अंग्रेज़ी पढ़कर बाबू जेंटिलमैन (Gentleman) कहाते हैं परन्तु घर में स्त्री महा मूर्खा है, जब बाबू जी घर में जाकर वाटर (water) मांगते हैं उनकी स्त्री पाथर लाकर उनके सन्मुख रख देती है, वह नहीं समझती कि वाटर किसे कहते हैं। देखिये यही तो कारण है कि आज भारतवर्ष की यह दुर्दशा है।

देखते नहीं हो कि कैसे २ बड़े कार्य्य पढ़ी हुई स्त्रियां सुगमता से कर लेती है; और सास ससुरादि की सेवा किस प्रकार से, निर्णय से करती हैं। जब दो बच्चे लड़ते हैं तो उसको अति उत्तमता से निर्णय करती, किसी को धमकाकर किसी को प्यार करके सकल क्लेशों को मिटा कर आपस में मेल करा देती हैं मानो वह फौजदारी के बिभाग की अधिकारिणी हैं। जब पिता पुत्रों में कुछ अप्रसन्नता उत्पन्न हो जाती है तो उनके मनों के क्लेश को दूर करके आपस में मेल कराकर वकील कही जा सक्ती हैं। आय व्यय का लेखा रख कर बचत करने के ढंग सीखती हैं जिससे कोष में वृद्धि होती है; गृह में बाहर से आई हुई वस्तुओं को भागानुसार बांट कर मुंसिफ और जज कहलाती हैं। जब बालक रोगी होजाते हैं तो उनको मिष्ठान्नादि का लोभ देकर बहला फुसला कर कड़वी से कड़वी औषधि पिलाकर आरोग्य करलेती हैं मानो डाक्टर हैं। भोजनादि उत्पन्न चतुराई से शीघ्र बनाती हैं। इसीसे ही बड़े बड़े बिद्वान महान धुरन्धर ईश्वर भक्ति महाराजाधिराज ऋषि मुनी महात्मा विद्या कला कौशल के निर्माता ज्ञानी विज्ञानी आदि उत्पन्न हुए हैं; और होंगे, मानो जगत जननी है। फिर क्या आपकी सम्मति में स्त्रियों को मूर्खा रखना उचित है? नहीं कदापि नहीं।

कैसे पश्चाताप की बात है कि विद्या पढ़ने से पुत्रों के आचरण

तो सुधर जांय और कन्याओं के आचरण बिगड़ जांय, क्या वि
ऐसी वस्तु है जिसमें दो विरुद्ध गुण रह सक्ते हैं और यह स
भी, पति की परवा नहीं करेंगी; गृह कार्य्य में मन नहीं लगायेंगी,
अपने धर्म्म को तुच्छ समझने लगेंगी वृथा है। क्योंकि विद्या प
से जिस प्रकार मनुष्य को अपने कर्त्तव्यों का ज्ञान हो जाता है उ
प्रकार स्त्रियां भी पढ़ कर पातिव्रता आज्ञापालक; सुसम्मति दात्री
कर प्रत्येक दशा में पति को सुख देंगी, गृहस्थी का उचित प्रब
करके गृहस्थी को स्वर्ग धाम बनावेंगी।

प्यारो ! कन्याओं को विद्या पढ़ने से रोकना यथार्थ में मनु
जाति की विद्या, बुद्धि की उन्नति को रोकना है। स्त्रियों का कर्त्त
अति अगम्य और गम्भीर है, उनके अधिकार में देश की उन्न
और अवनति है। और यही मनुष्य जाति की सुख दुख का कार
हैं, उनके अधिकार में केवल यही नहीं है कि अपने गर्भ के ब
को स्वरूपवान सांचे में ढाल दें वरन उसके जीवन के प्रथम के
वर्ष के भाग को जिस आचार विचार का चाहें बना दें, इ
लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि स्त्रियों को ऐसी उत्तम शि
दी जाय कि वह अपने सन्तान के चित्तों में शुभ गुण धर्म्म
आचार और अन्य प्रतिष्ठित सिद्धान्त जमा दें, उनके कोमल हृद
में प्रेम, हितैषिता ईश्वर भय राज्य भक्ति का बीज बो दें सिवा
इनके वायु जल पृथ्वी, सूर्य्य, चन्द्रमा, इत्यादि ईश्वरीय वस्तु
में दोनों पुरुष, स्त्री का तुल्य भाग है, फिर यह कैसे स्वीकार कि
जावे कि विद्या में स्त्री का भाग नहीं क्योंकि यदि ऐसा होता त
आत्मिक शक्तियां स्त्रियों को पुरुषों की नाईं ईश्वर न देता। क्या
यह अन्याय नहीं है कि स्त्रियों को विद्या-भूषण से नग्न रक्खा जावे
इसलिये मेरी आर्य्य भाईयों से और आर्य्य कुमारियों से सविनय
प्रार्थना है कि इस लेख को प्रेम दृष्टि से पढें और स्त्री-शिक्षा प
पूर्ण ध्यान दें॥ इति॥

—:*:—

सतसंग।

मनुष्य संसार में संगत का जीवित उदाहरण है। हम त

सफल मनोर्थ हो सकते हैं जब अपने धर्म को दिनों दिन दृढ़ करत जावें। परस्पर के प्रेम, दया उपकार अनुकंपादि गुणों से संयोग और संगति बढ़ती है। तथा मनुष्य समाज बलवान होता है। कर्मेन्द्रियों और ज्ञानेन्द्रियों के संयोग से ही जीवन चलता है। विचार करने से प्रगट होता है कि परमाणुओं तथा मानसिक विचारों के संयोग पर मनुष्य की स्थिति है। बच्चे को प्रारम्भ में जैसे विचारों का अनुकरण करना पड़ता है उसकी जीवन यात्रा में उसका वही स्वभाव हो जाता है। पुनः उसका सुधार होना एक प्रकार से बड़ा कठिन हो जाता है। आज बहुत से पठित व्यक्तियों में यह भ्रम वर्तमान है कि भूत एक विशेष योनि है। भूतों का स्थान झाड़ियों तथा निर्जन बनों में होता है। ये शिवजी के गण हैं। आग लगाते हैं। ऊपर चढ़ जाने से मार डालते हैं। जटा (सिर का बाल) काट लेने से वश में हो जाते हैं, फिर खूब काम करते हैं। जटा पान पर भाग जाते हैं गड़े हुये धन को बतला देते हैं। बेवकूफ और मूर्ख बना कर भ्रम उत्पन्न कर देते हैं। हैज़ा, ज्वर, प्लेग .... बीमारियां उत्पन्न कर देते हैं। इसी प्रकार की एक नहीं सहस्रों ऊटपटांग बातें कहा करते हैं, कहते ही नहीं वरन् सनातन धर्म समझ कर उसके सिद्ध करने में अपने अमूल्य शक्तियों का हनन करते हैं। ऐसे लोगों के विचारों में परिवर्तन होना कितना कठिन है? यदि इनको भूत भविष्यत और वर्तमान काल की व्याख्या समझाते हुये पहिले ही बतलाया गया होता कि भूत का अर्थ बीत जाना, अन्त हो जाना तथा मर जाना होता है। क्यों वे अमुक व्यक्ति इस स्थान पर भूत हो गया इतना कहते ही जान जाते कि मर गया। अब उस अंध परम्परा के कुत्सित विचारों को दूर करने का साहस किसमें है? सतसंगही इस रोग की जड़ नाश करने की अपूर्व औषधि है। यदि उत्तम विचारों के बनन का साधन है तो सतसगंही है। इसी का आश्रय लेकर मनुष्य उत्तम गुणों से अलंकृत हो सकता है। उत्तम विचारों की वृद्धि इसी के शरण में जाने से हो सकती है। वास्तविक सुख की मर्यादा सतसंगही पर निर्भर है। प्रातः स्मरणीय महावीर भीष्म पितामह ने गुरुकुल में सतसंगही का रसास्वादन लेने के कारण अखिल ब्रह्मचारी रह कर इस अनित्य शरीर को छोड़ा। अर्जुन को

कृष्ण से निष्काम उपदेश के उपदेश सुनने ही का फल था कि अत्याचारी कौरवों के समक्ष विजयी हुये। धनुर्विद्या में यश करने का कारण महात्मा द्रोणाचार्य से शस्त्रज्ञ का शिष्य और उनके साथ रहने ही का प्रतिफल कहा जा सकता महर्षि विश्वामित्र के साथ ही रहने का फल है कि महा रामचन्द्रजी अवतार रूपी स्मारक से स्मरण किये जाते हैं। महाराजा जनक से योगी के साथ में रहने के कारण जानकीजी विवेक उत्पन्न हो गया। जिसका परिणाम श्रीरामचन्द्रजी की होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। तात्पर्य यह है कि आदर्शता बिना संग किये कदापि प्राप्त नहीं हो सकता। सत्पुरुषों का समागम के जीवन को सफल कर देता है, श्रेष्ठ पुरुषों की संगति बुद्धि जड़ता को हर लेती है, वाणी को सत्य में सींचती है, मान का उपदेश करती है। पापों को दूर करके चित्त को प्रसन्न है और चातुर्दिक यश बिस्तृत कर देती है। यथा कहा है।

श्लोक—जाड्यं धियो हरति सिञ्चति वाचि सत्यं,
मानोन्नतिं दिशति पापमया करोति ॥
चेतः प्रसादयति दिक्षु तनोति कीर्तिं,
सत्सङ्गतिः कथय किन्न करोति पुंसाम् ॥

सतसंग से दुष्ट पुरुषों के स्वभाव में भी साधुता आजाती परन्तु सत्पुरुषों की प्रकृति में खल का साथ करने से पारिवर्तन खलत्व प्राप्त नहीं हो सकता। जैसे पुष्पों से उत्पन्न गन्ध मृतिका कर लेती है परन्तु मिट्टी का गन्ध पुष्प में नहीं आता। कहा

श्लोक—सत्संगात् भवतिहि साधुता खलानां
साधूनां नहि खल सङ्गमात् खलत्वम् ॥
आमोदं कुसुमभवं मदेत धत्ते
मृदगन्धं नहि कुसुमान धारयन्ति ॥

चौ०—शठ सुधरहिं सत संगति पाई। पारस परसि कुधातु सुहा
विधि वश सुजन कुसंगति परहीं। फनि मनि सम निज गुण अनुसर

महाजनों का संसर्ग किसकी उन्नति करने वाला नहीं अर्थात् जो मनुष्य आप, सज्जन तथा अनेक उत्तम गुण

दर्श पुरुषों का साथ करता है । उसके उत्तम उद्देश्य के पूर्ति
ने में कुछ भी विलम्ब नहीं लगता । उसकी कीर्ति तथा ऐश्वर्य
हर्निशि उन्नत होता जाता है । उसकी थोड़ी शोभा भी अधिक
त होने लगती है। जैसे पद्म पत्र में स्थित जल बिन्दु-मुक्ता की
भा को धारण करती है । ज्ञान जिसके शून्य होने से मनुष्य
ा शरीर मृतक है बिना सतसंग के प्राप्त नहीं हो सकता—विचार-
क्ति की वृद्धि करने वाला एक मात्र सतसंगही है—कहा है ।

महाजनस्य संसर्गः कस्यनोन्नति कारकः ।
पद्म पत्र स्थितं वारि धत्ते मुक्ता फल श्रियम् ॥

०-जलचर, थलचर, नभचर नाना । जे जड़चेतन जीवजहानां ॥
मति कीरति गतिभूति भलाई । जब जेहि जतन जहां जोइ पाई ॥
सो जानत सत्संग प्रभाऊ । लोकहु वेद न आन उपाऊ ॥
बिनु सतसंग विवेक न होई । रामकृपा बिनु सुलभ न सोई ।

सज्जनों के साथ में रहने से मनुष्य सुविचारों का उपासक
जाता है, यदि दुर्जन भी सत्संग में रत हो जाय तो वह सज्जन
सकता है । उसके आचार, व्यवहार की लोक में सज्जनों के
मान कीर्ति होने लगती है । पंडितों का साथ करने वाला मनुष्य
नके निर्मल गुणोंसे भूषित होकर आत्म ज्ञान को प्राप्त होता है,
सके आलस्य का नाश होकर स्फुर्ति की वृद्धि होती है, सुख,
ख, हानि, लाभ, मानापमान, निन्दा, स्तुति में हर्ष शोक कभी
हीं करता, धर्म ही में नित्य निश्चित् रहता है, पुनः अच्छे से
च्छे पदार्थ तथा विषय वासनाओं से आकर्षित नहीं हो सकता,
दा धर्म युक्त कार्यों का सेवन, अधर्म युक्त कार्यों का त्याग, ईश्वर,
र सत्याचार की बड़ाई करने वाला; ईश्वरास्तित्व को जानने
ला, शास्त्र व्यसनी, निःस्वार्थी, सत्यमानी, सत्यवादी और
त्यकारी हो जाता है । जैसे मलयाचल के गन्ध से इन्धन भी
न्दन सा सुगंधित हो जाता है इसी प्रकार सत्पुरुष के संग से
र्जन, सज्जन सा हो जाता है—कहा है ।

मलयाचल गन्धेन, त्विन्धने चन्दनायते ।
तथा सज्जन संगेन दुर्जनः सज्जनायते ॥

बुद्धि ऊर्ध्वगति को उसी समय प्राप्त होती है जब श्रेष्ठ पुरुषों
साथ किया जाता है—संसार के उत्तम कार्यों को मनुष्य उसी

समय पूर्णरूप से सम्पादन कर सकता है जब बुद्धि, विचा
सहायता से करे। छोटा से छोटा तथा सहल से सहल काम
हीन पुरुष कदापि नहीं कर सकता अतएव बुद्धि की वृद्धि
मान ही के साथ हो सकती है। कहा है।

हीय तेहि मतिस्तात हीनैः सहसमागमात्
समैश्च समता मेति विशिष्टैश्च विशिष्टताम्

तात हीन चरित मनुष्योंके समागम से बुद्धि नष्ट हो जा
योग्यता तथा आचार, विचार रखने वालों की संगति से
समता को प्राप्त होती है और निर्दोष शिष्टों की संगति से
ष्ठता को प्राप्त होती है। सतसङ्ग का प्रभाव मनुष्य ही पर नहीं
चिड़ियों प्रभृति जीवों पर भी पड़ता है-एक कहानी यों प्रसिद्ध
एक बार लूट में दो पिञ्जरे बड़े सुन्दर सुहावने पहाड़ी तो
आ गये वे राजा को बहुत प्रिय लगे आज्ञा दी कि इन्हें हमारे
निवास स्थान में टांग दो। राजा ने एक पिञ्जरे के तोते को चुम
तो उसने वेद मंत्र सूत्र, श्लोक, कवित्त, दोहे और अनेक
के उत्तम उद्देश्य रखने वाले पद्य सुनाये जिस से राजा अति प्र
हुआ जब दूसरे तोते को चुम्कारा तो उसने राजा को अप
अश्लील बातें सुनाना प्रारम्भ किया जिसको सुन कर राजा
ही अप्रसन्न हुआ और उसके मार देने की आज्ञा दे दी। तब प
तोते ने उत्तर दिया कि हे राजन्! इसमें न तो मेरा कोई विशेष
है न इसका दोष है इसलिए कि मैंने मुनियों के बचन सु
और इसने दुष्टों के वाक्य सुने हैं। इसी कारण इन्हों ने अपश
च्चारण किया—यह सब संसर्ग का प्रभाव है।

अहं मुनीनां बचनं शृणोमि शृणोत्ययं वैयवस्यवाक्यम्।
नचास्य दोषो नचमे गुणो वासंसर्गतो दोष गुणान् वदन्ति

आप क्यों क्रोधित होते हैं। जैसा सुना है वैसा बोलते हैं
संगति रही वैसा प्रभाव आया। जो कुछ हमारे में न्यूनता है
हमारी नहीं बरन हमारे रक्षकों की है। राजा विचारवान् होने
कारण तोते को मुक्त कर दिया। सच तो यह है

यदि सत्संगनिरतो भविष्यसि भविष्यसि।
अथ दुर्जनसंसर्गे पतिष्यति पतिष्यति॥

यदि तू सत्सङ्ग में तत्पर होगा तो होनहार कहलावेगा।
यदि दुर्जनों की संगति में पड़ेगा तो पतित हो जायगा।

उदितमिश्र—कूंड़ी निवा

विचित्र धोखे बाज की सजा।

(लेखक भवानी प्रसाद गुप्त—शकलडीहा निवासी)

* गुजरात के काठियावाड प्रान्त में अवर्षण के कारण भयानक दुर्भिक्ष पड़ा हुआ है, अन्न की पैदावार बिल्कुल नहीं हुई, पानी का पूरा अभाव हो गया है। सहस्रों घर निर्जन पड़े हुए हैं उनके स्वामी अपने पुत्र कलत्र तथा ढोर डोंङ्गरों को लेकर प्राण रक्षार्थ घर से निकल गए हैं। और इतस्ततः घूमते घामते जहाँ जलाशय दृष्टि पड़ा पड़ रहे, भूख और प्यास की सख्ती रास्ते का कष्ट और ऋतु की प्रतिकूलता ने एक २ करके मृत्यु का ग्रास बना दिया है।

ओह! अत्यन्त हृदय बेधक दृश्य है, माता अन्न जल के अभाव से तड़फ रही है ४ दिन से अन्न के दर्शन नहीं हुये हैं, और नन्हा सा नवजात बालक क्षुधातुर होकर दुग्ध पान के लिये माता की ओर हुमक कर आता है, किसके हाथों में बल है जो उसे सम्हाल कर छाती से लगावे और छाती में दुग्ध कहां से आवे? बच्चे की असह्य यातना और उस पर अधमुयी माता की बेबशी मृत्यु शय्या पर पड़ी माता को बिकल कर देती है। वह सजल नेत्रों से आर्तनाद करती हुई प्राणों से प्यारे बच्चे की ओर देखती और तड़फ २ कर जान तोड़ती है। इधर बच्चे का कोमल शरीर नव-पल्लव की भांति कुम्हलाया जाता है। (हमसाय) अड़ोसी पड़ोसी सब चुप हैं, उन्होंने ऐसे दृश्यों से आंख छिपा लेना ही इनका सब से बड़ा इलाज़ समझा हुआ है। चारों ओर हा—हा कार मचा हुआ है।

ओह! इस कठिन आपत्ति से अभी नजात नहीं हुई दूसरी बलाय यह क्या शिर पर धहरा पड़ी? वह देखो तालाब के किनारे कई एक कन्याएं दृष्टि गोचर हो रही हैं जिनकी ओर ध्यान पूर्वक देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि इन बिचारी अबलों के साथ बुरे तौर से बर्ताव किया गया है, जबही इनकी आंखों से अश्रुपात होने के सिवाय जिह्वा से रुक २ कर आह भरे शब्द निकल रहे हैं।

एक—अहा! मुझ अबला की कोई भी खबर नहीं लेता है। बारह वर्ष की सुकुमारी का ब्याह आठ वर्ष के छोकड़े के साथ,

* अनाथ रक्षक मासिक पत्र से उद्धृत किया गया।

१४ वर्ष की कन्या का व्याह ५० वर्ष के मनुष्य के साथ और वर्ष की नव युवती का व्याह ६० वर्ष के सफेद केश के साथ जाता है। मा बाप कुटुम्ब परिवार कोई भी इस सम्बन्ध को चित नहीं कहता.................................... ।

दूसरी—हे बहिन ! माता अपने कलेजे को पत्थर से कर लिया, बाप सिर का बोझा समझने लगा, भ्राता के लोभ में पड़ गया, कुटुम्ब परिवार एक रोज खाकर तोंद फुलाने के फिक्र में लग गये, हमसाये और रण्डी के नाच तथा आतिशबाजी देखने का इ करने लगे और उपरोहित यों कहने लगा " वर मुये कन्या दक्षिणा से काम " भला फिर बतलाओ ईश्वर के और कौन बाकी बचा जो हम दुखियों की ले यहाँ तो सभी अपने मतलब की ओर झुके हुए हैं।

तीसरी—हाँ बहिन ! सत्य कहा है । आओ हम सब मिलकर मेश्वर से प्रार्थना करें।

हे परमेश्वर सर्वेश्वर विभु, दीनों का दुख दूर करो।
सदा करो अमृत की वर्षा, क्रोध, लोभ, मद, मोह हरो॥
दीन दयालू बहुत दुखी हैं, तब शरणागत आये हैं।
नाना भाँति विविध क्लेशों से, हे जगदीश सताये हैं॥
नहीं ठिकाना अन्न वस्त्र का, जल नहीं पीने को मिलता।
नहिं कोई मात पिता हमारे, किन्हे कहें हम जा विपता॥
ताप ग्रीष्म में जल वर्षा में, आकर हमें सताता है।
शिशिर रात्रि में ओश गिरा कर, हमको सदा कपाता है॥
ऋतुओं का यह कोप दया मय, हमसे सहा नहीं जाता।
रक्षा करो त्रिविध तापों से, यही प्रार्थना है दाता॥
एक तुम्ही हो रक्षक त्राता, भय हारी हम दीनों के।
तुम्ही पिता हो तुम्ही हो माता, तुम्ही हो भ्रात जन दीनों के॥
तुम्हीं सखा हो तुम्ही कुटुम्बी, तुम्ही हो जगके पालन हार।
विनय यही अंतिम है प्रभु जी कर दो दीनों का उद्धार॥

चौथी—ऐ बहिन ! यह निश्चय जानो कि यदि यह असह्य हुई तो ये तीनों कन्या आत्मघात कर डालेंगी।

पांचवीं—ऐ बहिन ! मैंने एक उपाय सोचा है, अगर किया

तो यह अनीति भी न हो, और आत्मघात भी न करना पड़े॥

सब एक साथ—कौन उपाय बहिन ? बतलाओ अवश्य किया जायगा ।

पांचवीं—उपाय यह है कि एक प्रार्थना पत्र लिख कर श्रीमान् न्यायाधीश न्यायव्रत सिंह के सेवा में भेजा जाय, उम्मेद है कि श्रीमान् इस पर विचार करेंगे ॥

सब की सब—हां, हां, ऐसा करने से ताज्जुब नहीं कि हम अबलों...

इतनी बातें ज़बान से निकली थीं कि एक स्त्री को अपनी तरफ आती देखकर सब की सब उठीं और घर चली आईं, और घर आकर निम्नलिखित मजमून का प्रार्थना पत्र लिखकर उक्त महाशय के पास भेज दिया ।

प्रार्थना पत्र ।

धर्म सागर !

श्रीमान् न्यायाधीश न्यायव्रत सिंहजी महाशय

"कोटिशः धन्यवादः"

मैं आपके नगर के सुप्रसिद्ध रघुनंदनलाल कायस्थ की कन्या हूँ मेरी अवस्था वर्तमान समय केवल १४ वर्ष की है, और मेरी प्यारी लघु भगिनी की वय १२ वर्ष की है, अस्तु मेरे लिये ५० वर्ष का वर तथा प्यारी बहिन के लिये ८ वर्ष का छोकड़ा मेरे अधम पिता ने तलाश किया है, और यह भी सुना है कि ५० वर्ष वाले वर से ५००) पांच सौ रूपया लिया है, और छोकड़े को ५००) रू० तिलक दिया है, यह बलिदान परसों सोमवार को होना निश्चय है । कृपा सागर ! यह सम्बंध बिलकुल वेद विरुद्ध और सरासर अन्याय है, वरञ्च मुझ कन्याओं की पुकार व गुहार सिवाय आप ऐसे सज्जन और धर्मानुरागी के कोई सुननेवाला नहीं है । इस लिए सविनय निवेदन करती हूँ कि मुझ दीनों को इस बलिदान होने से बचा कर जन्म पर्यन्त के लिए यश का झण्डा फहराइये । आशा करती हूं कि अवश्य आप की कृपा दृष्टि इस ओर आकर्षित होगी ।

शनिवार— { कृपाभिलाषिणीः— गंगाजली—निर्जली

दूसरा प्रार्थना पत्र ।

न्याय सागर ! महाशय वर !

संसार में जितने प्राणी हैं उन सबों में मनुष्य श्रेष्ठ है क्यों अन्य सांसारिक कार्यों के साथ समानता होने पर भी मनुष्य की विशेषता यह है कि उसमें धर्म और विद्या पाये जाते हैं। किसी विद्वान ने कहा है:—

आहार निद्रा भय मैथुनं च सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्।
धर्मोहितेषामधिको विशेषो धर्मेण हीनाःपशुभिःसमानाः॥

परन्तु उसी मनुष्य का यह धर्म रुपी गुण विशेष श्रेष्ठ है, जो श्रेष्ठ योनि में जन्म लेकर विचार पूर्वक, धर्म युक्त, न्याय दृष्टि धर्म का संचार करता है. क्योंकि निम्न लिखित श्लोक से स्पष्ट है कि धन सम्पत्ति, घोड़ा हाथी, स्त्री बालक सखा, मित्रदेह सब को छोड़ कर एक धर्म ही साथ जाने वाला है । जैसे:—

श्लोक ।

धनानि भूमौ पश्वश्च गोष्ठे, नारी गृहद्वारे सखा श्मसाने।
देहश्चितायां परलोक मार्गे, धर्मानुगो गच्छति जीवएकः॥

अतएव इस प्रार्थना पत्र द्वारा एक असहाय कन्या विनय पूर्वक एक विचित्र घटना न्यायार्थ आपके सम्मुख ला आती है। वह यह है कि असहाय दीन कन्या की उम्र इस समय लगभग १६ वर्ष है, जिसका व्याह ६० वर्ष के बूढ़े वर के साथ नाई, ब्राह्मण द्वारा लालची अधम पिता ने १०००) हजार रूपया लेकर नियत किया है जो ज्येष्ट शुक्ल १२ सोमवार को होने वाला है । आप स्वयं अनुमान कर सक्ते हैं कि यह कैसी अनीति है, यदि यह कुप्रथा आपके राज्य में हुई तो दीन कन्या के प्राण हत्या के सिवाय आप के न्याय में धब्बा लगने का भयानक भय है। इस लिए निवेदन है कि इस भयानक कुप्रथा को रोक, इस कन्या को मृत्यु से बचा न्याय का डंका बजाते हुए, हमेशा के लिए यश भाजन बनिए। दीन कन्या के पिता का नाम पंडित रघुवीर ब्राह्मण है जो इसी ग्राम में रहते हैं ॥ विशेष धन्यवाद:—

ज्येष्ठ शुक्ल १० शनिवार { कृपाभिलाषिणी:—
असहाय दीन कन्या (अमो

प्रिय पाठको ! उक्त न्यायाधीश महाशय ने एक लेटर बाक्स (letter box) चिट्ठी छोड़ने का बम्बा ठीक न्यायालय के सामने वाले नीम के वृक्ष में टँगवा दिया था कि रिआयों को जो कुछ गुप्त रीति से कहना हो, गुप्त प्रार्थना पत्र इस बम्बे में छोड़ दें, उस पर न्याय दृष्टि से बिचार किया जायगा, और (Inquiry) जाँच वो तहकिकात के पश्चात यथा योग्य दण्ड दिया जायगा। यह प्रबंध उक्त महाशय ने इस प्रयोजन से किया था कि कोई रक्षक या कर्मचारी, पुलिस इत्यादि रिआयों को कष्ट न पहुँचा सके। उसी लेटर बाक्स में उपरोक्त दोनों प्रार्थना पत्रों को कन्याओं ने छुड़वा दिया। नियमित समय पर वह खोला गया और न्यायाधीश महोदय के सामने पहुँचा। न्यायाधीश महोदय ने पढ़ा और फिर पढ़ा फिर पढ़ा, फिर प्रधान के हाथ में दिया, प्रधान जी ने उच्च आवाज़ में पढ़ कर सब को सुनाया, सर्व उपस्थित जनों ने ओह २ किया अति शोकातुर हो गए। सब लोग अनीति २ कहने लगे। तत्पश्चात सर्व सम्मति द्वारा यह कुप्रथा रोकने का इन्तज़ाम किया गया ज्येष्ठ शुक्ल १२ सोमवार आ गया, बारात भी आ गई, ग्राम के उत्तर तरफ एक आलीशान सुन्दर रमणीक बाग में बारात पड़ गई। बाजार के लोग लड़के औरत मर्द बाजार से बारात तक चहल कदमी करने लगे। बाजार में यों बातें होने लगीं।

एकस्त्री—अरे बहिन ! क्या रघुनन्दन लाल को बर नहीं मिलता था क्या ?

दूसरी—वर नहीं मिला होगा तभी तो ऐसी कोमल लड़कियों के लिए ८ बर्ष और ५० बर्ष के अयोग्य बर ढूँढ़े गए हैं जो देखने में बाप पूत मालूम होते हैं।

तीसरी—इन्हीं दोनों को झखती हो अरे रघुबीर पण्डित के दामाद को जरा चल कर देखो सिर व मूँछ के तमाम केश सफेद हो गए हैं शरीर के चमड़े झूल रहे है मुँह में दाँत नहीं हैं और लकड़ी के सहारे चलते हैं। इन्हीं के ऊपर प्यारी भोली अबोध बलिदान चढ़ेगी।

पहली—इन बिचारियों की भाग फूट गई।

चौथी—भाग नहीं, क्या फूट गई। मा बाप अधम लालची होगए कि भाग फूट गई।

एक—सत्य है, भाग्य व किस्मत का दोष नहीं है, बिला संशय मा
व पिता लोभ के बस हो कर अपनी प्रिय कन्याओं
बलिदान करते हैं।

इधर तो स्त्रियों में यों बातें हो रही हैं और दूसरे त
जहाँ तहाँ आदमियों की जमाअत में भी इसी ओर ध्यान है
बिषय में बातें हो रहीं हैं।

एक आदमी—अरे यार! पण्डित रघुवीर जी को दिखलाई नहीं प
था। उनको क्या सूझी है? भला वैसी सुन्दर युवती
लिए यह सफेद केश वाला वर।

दूसरा आ०—आँख तो दोनों अच्छी हैं, किसी प्रकार की शिका
नहीं है। बल्कि चाँदनी रात में सत्यनारायण की
लकड़ हारे व बनिए का किस्सा बिला लैम्प जलाये
पट पढ़ १।) सवा रूपया दक्षिणा धरा लेते हैं।

तीसरा आदमी—अरेभाई! हजार रूपये के थैली के लोभने न अ
बना दिया हो।

यह सब बात होही रही थी कि इतने में एक नव जवान
बर्ष का लड़का हाँफता कांपता दौड़ता हुआ इसी ओर आया का
पूछे जाने पर सिल सिलेवार यों कहने लगा। चाचा साहब
बरात वाली बाग में नाच देखने के लिए चला जाता था कि रास्ते
मेरे प्रिय मित्र नागेश्वर प्रसाद से मुलाकात हुई जिनके ज
मालूम हुआ कि बारात की हालत खराब है। विशेष पूछने पर उ
ने कहा मैं बारात के सुन्दर तवायफों का नाच देख रहा था महफि
खूब सजी हुई थी कि एक दरोगा साहब एक पुलिस जमा
और १० जवान कानिष्टबिल के साथ पण्डित रघुवीर तिवारी औ
लाला रघुनन्दन लाल को साथ लिए हुए आए जिन्हें देखकर न
बन्द हो गया। पुनः रघुनन्दन लाल अपने दोनों दामाद से और तिवा
जी अपने दामाद से नहीं मालूम क्या गुफ्तगू कर दोनों आद
दामादों और बारात प्रबंधकर्ताओं और दोनों ओर के उपरोहि
को साथ लेकर दरोगा साहब के सहित न्यायालय के तरफ ग
उन लोगों को जाते देर नहीं कि बाराती अपना २ कपड़ा सम्हा
लगे, बहुत तो जैसे तैसे कपड़ा छाता काँखतले दबाते दुबाते घर
राह लिए। बहुत शख्त दिल वाले कपड़ा इत्यादि सम्हाल हा

लाठी लेकर मुस्तैदी के साथ बैठ आपस में कहने लगे जो आता है उसकी लाठी से खबर लो फिर देखा जायगा १९ बर्ष के लड़के ने इतनाही कहाथा कि एक आदमी और आया और कहा अरे भाई साहब ! तिवारीजी और लाला साहब मय दामादों के न्यायालय में बुलाये गए हैं।

दूसरा—हां हां, मैंने भी सुना है, पर कुछ कारण नहीं जान पड़ता

पहला—अच्छा चलो न्यायालय में चलैं देखैं क्या होता है ?

पाठक वृन्द ! बाजार की यह हालत बारात की वह गति अब चलैं देखैं न्यायालय में क्या होता है ? आज न्यायालय में चारों तरफ आदमीही आदमी नज़र आते हैं सबके मुँह से त्राहि २ निकल रहा है। श्वसुर दामाद श्रीहत हो गये हैं रङ्ग पीला हो गया है। सब कर्मचारी अपने २ स्थान पर बैठे हुए हैं इतने ही में न्यायाधीश के आज्ञानुसार मंत्री ने दोनों कन्याओं के प्रार्थना पत्र को पढ़ा जिसको सुनकर सब लोग घबड़ा गए और श्वसुर दामाद के तो होश न रहे।

न्यायाधीश—आपके लड़की की क्या उम्र है ?

रघुवीर—सरकार ! मेरी लड़की की अवस्था इस समय १६ वर्षकीहै

न्यायाधीश—नाम क्या है ?

पं०रघुवीर—अबोध नाम है।

न्यायाधीश – (रघुनन्दन लाल से) आपकी लड़की की क्या उम्र है और नाम क्या है ?

रघुनन्दन लाल—उतनीही उम्र है जितनी उस अर्जी में लिखी है।

न्यायाधीश—(क्रोधित होकर) कायस्थपना मत दिखलाओ, ज़बान से साफ २ बयान करो।

रघुनन्दन लाल—(डरते हुए) हुजूर ! एक का नाम गंगजली जिसकी उम्र १० वर्ष और दूसरी का नाम निर्जली १५ की है।

न्यायाधीश—आज दोनों की शादी होना निश्चय है।

रघुनन्दन—जी हाँ।

न्यायाधीश—उन दोनों वरों को बुलाओ, जिनके साथ व्याह होना नियत है। दोनों दुलहे हाथ जोड़ खड़े हो गए, जो पहिले ही से हाजिर थे। रघुनन्दन लाल उनके तरफ इशारा कर के बोले "यही हैं"

न्यायाधीश—(हंस कर) क्या आप पिता पुत्र हैं ? (सब लोग हंस
एक दुलहा—(लज्जित होकर) जी नहीं ।
न्यायाधीश—आप का नाम क्या है ?
एक दुलहा—मेरा नाम अत्याचार लाल है, जात का कायस्थ हूं
न्यायाधीश—ग्राम का नाम क्या है ?
अत्याचार—शरारत पुर ।
न्यायाधीश—(दूसरे दुलहे के तरफ इशारा करके) यह छो
आप का कौन है ?
अत्याचार ला.—यह मेरा कोई नहीं है, पर हमारे ही यहां रह
वकील—(ज़िरह) वाह वाह जब यह तुम्हारे यहां रहते हैं
ज़रूर कोई न कोई होंगे ।
अत्याचार ला.—ये हमारे यहां नहीं रहते ।
वकील—वाह, वाह, अभी आप ने कहा है ये हमारे यहां रहते
अत्याचार—मैंने यह थोड़ा ही कहा है कि ये हमारे घर पर रह
वलिक मेरा यह कहना है कि ये भी उसी ग्राम के बाशिन्दे
वकील—तो भी मुमकिन है कि कोई न कोई रिश्ता हो ।
अत्याचार ला.—यह रिश्ते में कोई रिश्ता नहीं है । वैसे तो
दोनों भाई का सम्बन्ध रखते हैं ।
वकील—तारीफ है । धन्य रे सम्बन्ध ५० वर्ष के आप ८ वर्ष
छोकड़ा सम्बन्ध भाई का । वाह, वाह, बिस्मिल्लाह !
न्यायाधीश—(छोटे दुलहे से) क्यों जी तुम्हारा क्या नाम
तुम इनके कौन हो ?
छोटा दुलहा—हुजूर ! सलामत ! मेरा नाम होशियार लाल
पर लोग मुझको शियार कहते हैं । मेरे पिता का देह
हो गया है, इससे मेरा और मेरे रांड माता का परव
मेरे चाचा ही करते हैं । ये महाशय रघुनन्दन लाल
चाचा हैं मैं उनका भतीजा हूं । चाचा ने भाई का सम्ब
भूल से कहा है :
न्यायाधीश—(रघुवीर तिवारी से) कहिए पंडित जी ! आप
अबोध की भी शादी आज होने को है, तो आप के दा
किधर हैं ?
आपके मित्र दामोदर भी पहिले ही से उपस्थित थे हाथ

खड़े हो गए, जिनकी उम्र ६० वर्ष की थी. गाल के मांस लटक रहे थे। एक मुसलमान मुहर्रिर (लेखक) कहने लगा " हिन्दुओं की मंगनी भी खूब होती है भला देखो यह सफेद केश वाला वर उस नव यौवना १६ वर्ष की उम्र वाली लड़की से ब्याह करने आया है। इसे कुछ भी शर्म नहीं है बुड्ढा हो गया पर दुलहे (नौशा) बनने का शौक नहीं गया। अगर सरकारी राज्य न होता तो लालची वाल्दैन नहीं मालूम क्या कर डालते "।

न्यायाधीश—आप का नाम क्या है ? और आप की उम्र क्या होगी।

तीसरा दुलहा—मेरा नाम अधरमी मिश्र है, मेरी अवस्था ६० के लग भग होगी।

न्यायाधीश—कहां रहते हो ?

अधरमी मिश्र—हरारत गंज में रहते हैं।

न्यायाधीश—आप की जीविका कैसे चलती है।

अधरमी मिश्र—यजमानी और ज़मीन्दारी।

न्यायाधीश—आप की अवस्था ६० वर्ष की है। भला आप को यह भी ज्ञात है कि उस लड़की की क्या उम्र है जिसके साथ आप की शादी होगी।

अधरमी मिश्र—हां मैं खूब जानता हूं। लड़की १५½ व १६½ के करीब है।

वकील—१५½ व १६½ क्या ?

अधरमी मिश्र—१५½ व १६½ वर्ष जी !

न्यायाधीश—यह तुमको कब मालूम हुआ ?

अधरमी मिश्र—यह मुझे पहलेही से ज्ञात था।

वकील—पहिलेही से कबसे ?

अधरमी मिश्र—अरे जिसरोज़ बात चीत चली, उसी रोज़ मुझे मालूम हुआ कि लड़की १६वर्ष की है। अगर यह न मालूम होता तो हम १०००) गिनते क्यों ?

वकील—"१०००) गिनते क्यों—" के क्या मानें मैं नहीं समझा।

अधरमी मिश्र—अरे ! शादी ब्याह में दुलहा लड़कीवाले से १०००), २०००) औकात मुवाफ़िक तिलक लेता है। यहां मैंने उलटाही नकद दिया है।

वकील—भला, पंडित जी ! यह तो बतलाइए कि यह सम्बन्ध

आपके शास्त्रानुसार ठीक है कि अनुचित है ?

अधरमी मिश्र—अनुचित काहे को यह तो जाती रिवाज़ है।

वकील—क्या यह जाती रिवाज भला है ?

अधरमी मिश्र—वह बात जो परम्परासे चली आती है भली है। वह कदापि बुरी होही नहीं सक्ती।

वकील—अच्छा आप की यह पहिली शादी है कि दूसरी ?

अधरमी मिश्र—जी नहीं यह मेरी तीसरी शादी है । पहिली गई दूसरी भग गई, तीसरी यह है ?

वकील—पहिली स्त्री से लड़के वाले हैं ?

अधरमी—हां दो। एक लड़का एक लड़की।

वकील—दोनों व्याहे हुए हैं ? दोनों की क्या उम्र है ?

अधरमी—दोनों का व्याह हो गया है । लड़के की उम्र २५ वर्ष और लड़की की उम्र २२ वर्ष की है।

वकील—पतोहू और दामाद की क्या अवस्था होगी ?

अधरमी—पतोहू २० वर्ष के लगभग की होगी, और दामाद अवस्था भी करीब २८ वर्ष के है।

वकील—ठीक है, जब आप जाती रिवाज बतलाते हैं, तो आप लड़की के लिए ७० वर्ष का बूढ़ा वर और लड़के के लि ५०,६० की बूढ़ी स्त्री क्यों नहीं ढूंढ़ लिया।

अधरमी—मुझे रूपया थोड़ाही लेना था, मुझे तो देना था, क्यों में उम्र का ख्याल करूं ?

वकील—हां ठीक है। बैठ जाइए।

न्यायाधीश—(रघुवीर से) आपको मालूम था कि आपकी लड़ की शादी कितने अवस्था वाले बर के साथ होगी !

पं० रघुवीर—जी नहीं। मुझसे मेरे परोहित पंडित केदारना जी ने बीस वर्ष कहा था।

न्यायाधीश—(केदारनाथ से) क्यों जी पंडित केदारनाथ ! पु हित-यजमान के यही माने हैं। कि उस समय भांग तो नहीं छाने थे कि ६० वर्ष के बूढ़े को २० वर्ष का जव बतला दिया।

पं० केदारनाथ—जी नहीं सरकार ! मैंने साफ बीस बीस बीस दिया था।

पं० रघुवीर—देखिए सरकार ! आपके सामने २० कबूल कर रहे हैं।
पं० केदार नाथ—जी नहीं सरकार ! केवल बीस मैंने नहीं कहा था।
न्यायाधीश—फिर क्या कहा था ?
पं० केदार नाथ—बात ऐसी है सरकार ! जिस समय मैं वर देखकर आया, पं० रघुवीर तिवारी ने पूछा दुलहे की उम्र क्या है ? तब मैंने साफ २०, २०, २० कह दिया। भला सरकार। तीनों बीस जोड़ा जाय, देखिए ६० होता है कि नहीं, २०, २०,४० और २० कुल ६० हुआ।
पं० रघुवीर—सरकार ! मैं चाल बाज आदमी नहीं हूँ कि इनकी चाल बाजी समझ जाऊं। मैं सीधा सादा आदमी २० वर्ष समझा !
पं० केदार—हां आप काहे को समझेंगे। आपतो १०००) हजार रूपये के नशे में फूल गये।
पं० रघुवीर—अरे महाराज ! सच सच बोला करिए। झूठ क्यों बोलते हैं ? (सत्य बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप। जाके हृदय सत्य हैं, ताके हृदय आप।) भला सच तो कहिए ७००) रूपया दिया था कि १०००) रूपया। अलियार हजाम के सामने की तो बात है। बुलाना तो अलियार को।
न्यायाधीश—क्यों रे ! अलियार ! सच २ कहना क्या बात है ?
अलियार—हुजूर ! पंडित केदारनाथजी मुझको लेकर महाराज अधरमी मिश्र के यहां गये वहां पर उनकी और मेरी खूब ज्याफत हुई पंडित जी ने वहां ही १०००) रूपये पर १६ वर्ष की कन्या देना स्वीकार किया। चलते समय ५० रूपया केदारनाथ को और ५ रूपया मुझे न्यौछावर मिला। रास्ते में पण्डित जी ने मुझसे कहा देखो यदि कोई तुमसे वर की उम्र पूछे तो बीस, बीस, बीस, कह देना फिर हम देख लेंगे। हजूर घर आकर के १०००) रुपये में ७००) रुपया तो पण्डित रघुवीर तिवारी को दिये और २५०) ढाई सौ रुपया खुद आप लिए, ५०) मुझको दिये। सिवाय इतनी बातों के मैं और कुछ नहीं जानता।

अलियार हज्जाम का इजहार समाप्त हुआ था कि अत्या

चार लाल के भतीजे होशियारलाल ने कहा सरकार मैं कुछ अर्ज करना चाहता हूं। न्यायाधीश महाशय ने कहा कहो।

होशियारलाल—हुजूर! मैं अपने निज ग्राम से १० मील के फासिले पर विद्या भंडार नामक ग्राम में मिडिल क्लास में पढ़ता हूं। जहाँ चाचा साहब का प्रथम पत्र मुझे प्राप्त हुआ जिसमें लिखा था प्रिय बेटे! तुम्हारे पढ़ने में अवश्य हानि होगी मगर तुम्हारी शादी भी होनी ज़रूरी है। इस लिए तुमको इस पत्र द्वारा मजबूर करते हैं कि हेड मास्टर साहब से १० रोज की छुट्टी लेकर शीघ्र चले आवो" सरकार! मैं इस पत्र को पढ़ कर बहुत घबड़ाया फिर किसी कदर ढाढ़स बांध इस मजमून का पत्र लिख दिया कृपालु चाचा साहब! मेरी अवस्था अभी शादी करने की नहीं है। इस लिए मैं अभी शादी नहीं करूंगा। आप लड़की वाले महाशय को लिख दें कि अपनी बेटी का कहीं और प्रबंध कर लें। तत्पश्चात सरकार! मेरे चाचा का दूसरा पत्र पहुंचा। जिसमें लिखा था "मेरे दुखदाई पुत्र! तुम्हारा पत्र पाया तुम्हारे करतूत से आगाह हुआ, भला तुम्हें क्या सनकपन सूझा है मुझे ताना क्यों दिलवा रहे हो? कोई कहता है साधू होगा कोई कहता है सन्यासी होगा कोई कहता है ब्रह्मचारी होगा। खैर जो लिखा सो लिखा पर अब इस पत्र के जवाब लिखने में ज्यादा अक्ल मत खरच करना और शीघ्र चले आना। तुम्हारे ही शादी के सहारे मेरी शादी भी हो जायगी, वरनः ऐसा मौका मिलना दुश्वार है फिर क्या मेरे दौलत खर्च कर के पढ़ाने का यह नतीजा है। सरकार! मैं इस पत्र को पढ़ता जाता था और रोता जाता था कि इतने ही में मेरे चाचा साहब भी आते हुए, उन्हें देख कर तो मेरे शरीर में खून न रहा अब तो चाचा साहब इधर उधर की युक्ति युक्त बात कह कर हेडमास्टर साहब से छुट्टी ले ही लिया और मुझे घर लिवा य लाए, जहां पर एक परात, एक थान मलमल, नारियल आदि पुष्कल सामग्री इत्यादि मेरे सामने रक्खा गया और कुछ

मिठाई और ५००) रुपया नक़द कैश मेरे हाथ में रख कर रोरी का टीका मेरे माथे में लगा दिया। फिर वह पांच सौ रुपया महाशय रघुनन्दन लाल जी को फेर दिया। सरकार! यह व्याह बिल्कुल ज़बरदस्ती के साथ किया जा रहा है, मेरी बिल्कुल राय नहीं है, अब तक मैं इस व्याह से पनाह चाहता हूं। यदि आप के कृपा से यह व्याह न होने पावे तो मैं जन्म भर आप का इहसान मानूंगा।

न्यायाधीश—अच्छा बैठ जाव।

न्यायाधीश—(बारात प्रवन्धकर्ताओं और बारातियों से) क्यों महाशय! आप लोगों के समझ में यह व्याहोत्सब मनाना अनुचित है कि उचित?

एक प्रबन्ध कर्त्ता—न्याय सागर! अब तमाम रसूमात हो गए महज़ सिन्दुर डालने की देर है, इस लिये अनुचित हो या उचित अब बिवाह हो ही जाना बेहतर है?

न्यायाधीश—(निज परोहित से) क्यों जी परोहितजी महाराज! यह व्याह सम्बन्ध आप के जांच में शास्त्रानुसार कैसा है।

राज्य परोहित—धर्म सागर! यह व्याह एक तरह की कुरबानी है। शास्त्रानुसार सरासर अन्याय और अनर्थ है। क्योंकि शास्त्र का वचन है "कन्यायां द्विगुणं वरः" अर्थात् २४ वर्ष की स्त्री और ४८ वर्ष के पुरुष का व्याह होना उत्तम है. १८ व २० वर्ष की स्त्री का सम्बन्ध ४० व ४५ वर्ष के मनुष्य के साथ होना मध्यम है, और १६ वर्ष की लड़की का व्याह २५ वर्ष के जवान के साथ निकृष्ट है। देखिए मुनिबर धन्वतरी जी सुश्रुत में इसके विरुद्ध निषेध किया है।

श्लोक।

ऊन षोडश घर्षायामप्राप्तः पंचविंशतिम्।
यद्याधत्ते पुमान् गर्भं कुक्षिस्थः सविपद्यते॥
जातो वा न चिरञ्जीवेज्जीवेद्वा दुर्बलेन्द्रियः।
तस्मादत्यन्त बालायां गर्भाधानं न कारयेत्॥

सुश्रुत सारीरस्थाने अ०। १६। श्लोक ४७। ४८

(अर्थ) १६ वर्ष से न्यून वय वाली लड़की में पच्चीस वर्ष से

न्यून आयु वाला मर्द जो गर्भ को स्थापन करे तो
कुक्षिस्थ हुआ गर्भ विपत्ति को प्राप्त होता है । अ
पूर्णकाल तक गर्भाशय में रह कर नहीं पैदा होता । अ
पैदा हो तो फिर चिरकाल तक न जीवे, वा जीवे
दुर्बलेन्द्रिय हो इस कारण से बाल्यावस्था वाली
गर्भ स्थापन न करे । सरकार ! विशेष मैं कुछ नहीं
सक्ता सिवाय इसके कि यह ब्याह नहीं हत्या है ।

न्यायाधीश—(मंत्री को) फैसला लिखो ।

१—आज हालत सुने गए । मेरे परोहित पंडित श्रीदेव
का कथन ठीक और यथार्थ है, वास्तव में यह सम्बन्ध
विरुद्ध बिलकुल अन्याय है । पं० अधरमी मिश्र एक दौलत
व्यभिचारी मनुष्य है । यह कोई जाती रिवाज भी नहीं है
दौलत मन्द व्यभिचारियों और घमंडियों की आपत्ति है जो
अधरमी मिश्र के इज़हार और वकील साहब के जिरह के
ध्यान देने से साफ मालूम होता है । अधरमी मिश्र यह जान
कि मेरा ब्याह १६ वर्ष के लड़की के साथ किया जायगा १०
हजार रुपया दिया, इस लिए हज़ार और जुर्माना किया जाता
और फिर ऐसा काम न करने के लिए सख्त ताक्कीद की जाती है

२—पंडित रघुबीर तिवारी अपने परोहित का दोष
कर दोष भागी होने से नहीं बच सकते हैं, मुमकिन है
७००) रु० के लोभ में आकर इन्हों ने कुछ बिचार नहीं
पस जो ७००) रुपया पाया है वह और ५०० पांच सौ और जु
किया जाता है । पुनि ऐसा काम न करने के लिये सख्त ता
की जाती है ।

३—परोहित केदारनाथ एक चाल बाज़ मक्कार और
बाज आदमी है । मक्कारी और चालबाजी इसकी जीविका पे
ऐसे मनुष्य को राज्य में रहने से अनेक प्रकार के उपद्रव पैदा
का भय है । इस लिए २५० जो १००० में से लिया है, वह
जो दक्षिणा पाया है, कुल ३००) और ५०० और जु
किया जाता है । कुल ८००) रूपया इस चाल बाज
वसूल करने के बाद मूँछ बना कर डाढ़ी बना कर मुँह में का
लगा कर गदहे पर सवार कर [illegible] में [illegible] तरफ घुमा कर

से निकाल दो, मकान जगह सब ज़प्त कर लो।

४—अलिमार नाऊ तमाम बातें सच सच कह दिया, लेकिन उसने पहिले आकर मुझसे नहीं कहा इससे ज्ञात होता है कि यह नाऊ भी उक्त पंडित का मिलकी यार उपयुक्त पात्र है। इस लिए ५) विदाई ५०) नज़राना ५५) जो पाया है वह और २५) जुर्माना किया जाता है। कुल ८०) रूपया वसूल कर इसका भी काला मुख कर गदहे पर घुमा कर पंडित केदारनाथ के सदृश गाँव से बाहर निकाल दो।

५—लाला अत्याचार लाल लड़कियों की उम्र जानकर अपना भी विवाह हो जाने के लालच से अपने भतीजे होशियार लाल को मज़बूर किया। और उम्र का व न्याय धर्म का कुछ भी विचार नहीं किया। इस लिए १०००) हजार रूपये इन्हें भी जुर्माना किया जाता है। ये कायस्थ हैं इस लिए इनसे और रघुनन्दन लाल से फैलजामिनी मुचलिका भी लिया जायगा।

६—रघुनन्दन लाल भी वरों को अपने आंखों से देख लिया था, मगर कम किफायत खर्च के तरफ ख्याल कर अपने कंजूस पने से यह सम्बन्ध कर डालना चाहा। इस लिए १०००) रू० इनको भी दंड किया जाता है।

७—होशियार लाल ने सच सच सब बातें कह दिया। अपने चाचा के दबाव से मजबूरन ऐसे शादी में सामिल हुआ है, अब इस शादी से पनाह चाहता है। इस लड़के को जब तक पढ़े स्कूल फीस (शुल्क) खाना कपड़ा पुस्तकों का मूल्य इत्यादि राज्य से मिलेगा।

८—बारात प्रवन्धकर्ताओं ने अपनी राय जाहिर करने में शास्त्र विरुद्ध प्रमाण हीन पक्ष लिए हुए अनुचित वाक्य कहा है। फिर ऐसा काम न करें वरनः कड़ा दण्ड दिया जायगा।

९—कुल बारातियों और ब्रादरियों को हुक्म दिया जाता है कि ऐसे बारात में कभी सम्मिलित न हों।

१०—१०००) हजार रूपया पं० अधरमी मिश्र से।
१२००) बारह सौ रघुबीर तिवारी से।
८००) आठ सौ पं० केदारनाथ से।
१०००) एक हजार अत्याचार लाल से

,०००) ,, ,, रघुनन्दन लाल से।
८०) अस्सी रूपया अलियार नाऊ से।
५०८० टोटल

यह सब रूपया तीनों कन्याओं के व्याह में व्यय किया जाय और योग्य सुन्दर वर तलाश करने के लिए पंडित श्रीदेव नियत किए जायं। और कई एक समाचार पत्रों में भी वर की आवश्यकता जाहिर किया जाय, सम्भव है कि ऐसा करने से शीघ्रता हो। और राज्य भर में ऐसा सम्बन्ध न करने की मुनादी हो जाय।

प्रिय धर्मानुरागी सज्जनो! यह फैसला लिखकर महा न्यायाधीश के तरफ से सुनाया गया। सब लोग बहुत खुश। पंडित श्रीदेव शर्मा ने कहा "अहा, आज क्या ही प्रशंसनीय न्याय हुआ, बिलासंशय न्याय के यही माने हैं। ऐ परमेश्वर! ऐसे न्याया-धीश के पश्चात ऐसा ही न्यायाधीश पृथ्वी पर उत्पन्न कर जिससे तेरी इच्छा पूर्ण हो"। अहा! महाशय न्यायाधीश की जय, जय हो, जय हो।

जुर्माना का रूपया सब लोग जमा किए। धोखेबाज केदार और अलियार हज्जाम गांव से निकाल दिए गए। होशियारलाल के पढ़ने का प्रबन्ध हो गया और १०, १५, रोज के पश्चात तीनों कन्याओं का योग्य वरों के साथ शादी हो गई। गांव-गांव, नगर नगर यह समाचार पहुंचा। सब मनुष्य इस न्याय को सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुये॥ इति।

———o———

ओ३म् ।

THE ARYA PRATINIDHI SABHA.

UNITED PROVINCES OF AGRA AND OUDH.

—:o:—

(ESTABLISHED 1886.)

(*Registered 1897, under Act XXI of 1860.*)

—:o:—

SIR,

We make bold to encroach upon your valuable time and submit the following few lines for your kind consideration.

The Arya Pratinidhi Sabha—an assembly constituted by the representatives of about 250 Aryasamajes scattered all over the United Provinces of Agra and Oudh and representing almost all the districts of the said Provinces—has started a residential educational institution on the ancient lines of Gurukula.

2. The Kula is located in a spacious garden, the munificient gift of Kunwar Mahendra Pratap of the famous house of the Rajas of Hathras.

The seminary is situated at the distance of a few furlongs from Brindaban Railway Station towards the Jamna. It aims at the revival of the ancient Arya-Shastras and modern languages and sciences.

3. The chief fetures of the academy are the formation of character by imparting religious and moral instruction not merely through books but by the living example of the teachers, to make the inmates live a life of strict celibacy and extreme simplicity upto the age of twenty-five years at least, and to make

their bodies strong, their intellects keen and th
morals high.

4. The Sabha's aim is to give the scholars w
are about 80 in number at present and are divi
into 8 classes, a thorough grounding in (*a*) the Ve
with their Angas and Upangas (ancient Sanskrit lite
ture), (*b*) English Language and Literature, (
Modern sciences and philosophy, and (*d*) technical a
professional education in certain branches. A cert
number of fixed hours are regularly devoted to phys
exercise.

5. Unlike existing educational institutions
India, the medium of instruction in the Gurukula
modern sciences and philosophy and for technical a
professional education is Arya Bhâshâ (Hindi, t
mother tongue of the scholars). This one simp
contrivance saves a lot of trouble to the scholars a
prevents an enormous waste of energy and time whi
is inevitable in those schools where such subjects a
taught through the medium of English. The schola
thus get enough time to devote to other useful pursuit

6. All the expenses of tuition, lodging and board
ing of the scholars are borne by the Sabha. Th
guardians of some 50 of the 80 scholars pay a monthl
fee of Rs. 10 each for their boarding expenses only
the rest of their expenses are entirely borne by th
Sabha.

7. It may be noted that all scholars are treated
alike, no distinction being observed between one schola
and another, on the score of caste, position of parents
in life, etc.

This all is strictly in accordance with the sacre

teachings of the Vedas:

"यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः।
ब्रह्मराजन्याभ्या ँ शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय॥"
यजु० अ० २६। २॥

enjoining the dispensation of His knowledge even to the lowest of the low. This equal treatment engenders in the scholars brotherly feelings for one another and an *esprit de corps* which is so sadly wanting among the scholars of other institutions which observe such distinctions. We are sure you will extend your sympathies to this infant institution which gives such a fair promise of beneficial results.

8. It is not our chief purpose, at least in the present instance, to appeal to you for funds; though help in that direction too, however small it may be, would be most thankfully accepted; as the institution is badly in need of a school building and its ordinary expenses alone swallow a couple of thousand every month. What we require now is to arouse your interest in the institution; and to request you that if ever you chance to pass by Muttra, you may remember this academy and pay a visit to it. We need not tell you that the present system of education has proved a failure in more respects than one and already we are hearing voices which are clamouring for overhauling it. We claim for our academy that it combines the best elements of both systems ancient and modern, without copying the vices of the new, and the time-worn methods of the old, so unsuited to our young civilisation.

Any enquiries addressed either to the Chief

Superintendent of the Gurukula at Brindaban or to th Secretary of the Sabha, would be most gladly an promptly attended to.

With namaste, we are,
Yours faithfully,

(Sd.) Tulsi Ram Swami, commentator of Sa Veda, &c., President, Meerut.

(Sd.) Shyam Sunder Lal, B. A., LL. B., Main puri, Vice-President.

(Sd.) Narayan Prasad, Honorary Chief Superin tendent of the Gurukula, Brindaban.

(Sd.) Madan Mohan Seth, M. A., LL. B. Honorary Secretary, Bulandshahr.

(Sd.) Ram Prasad Sharma, Legal Practitioner Assistant Secretary, Bulandshahar.

(Sd.) Brij Nath, B. A., LL. B., Hony. Librarian Moradabad.

(Sd.) Kshetra Pal Sharma, Proprietor, Sukh Sancharak Co., Hony. Treasurer, Muttra

(Sd.) Ghasi Ram, M. A., LL. B., Meerut.

(Sd.) Salig Ram, Pleader, Agra.

(Sd.) Har Prasad Sinha, Vakil, Banda.

(Sd.) Baldeo Prasad, Pleader, Bareily.

(Sd.) Har Baksh Sinha, Zamindar, district Bulandshahr.

(Sd.) Keshava Deva Shastri, Editor, "Nava jiwan", Benares.

(Sd.) Ram Prasad, B. A., Vakil, Agra.

(Sd.) Shri Ram, Secretary, Aryasamaj, Agra.

(Sd.) Panna Lal, B. A., LL. B., Aligarh.

(Sd.) Alakh Murari, B. A., LL. B., Saharanpur.

(Sd.) Jiwan Mal, President, City Aryasamaj, Lucknow.

(Sd.) Har Narain, B. A., Agra.
(Sd.) Paushaki Lal, Member, Aryasamaj, Bareily
(Sd.) Banwari Lal, Editor, "Rahbar," Moradabad.
(Sd.) Mashal Singh Sombanshi, Manager Estate, Dist. Hardoi.

Members of the Executive Council.

भजन ।

(श्रीयु० जगदीशनारायणवर्म्मा लिखित)

प्यारे देखना तुम क्या २ करते हैं अब आर्य्य ॥
अच्छी रीति को त्याग तुमने कुरीति है पाला ।
छोड़ दिया जो सचा मत था ये क्या मनमें ठाना ॥ १ ॥
हटा के तुमको झूठ पोल से सचा मज़ब बताया ।
अविद्या के दो फोड़ नेत्र विद्या को पुनः चलाया ॥ २ ॥
नियोग को हो तुम बुरा बताते और कहते पाखंड ।
लेकिन हमल गिराते कैइ बार नहिं कछु उसका दंड ॥ ३ ॥
पत्थर को तुम ईश बताते मंदिर बिच बैठाई ।
इस बहम की भाईयो थोड़े दिनोंमें होगी सारी सफ़ाई ॥ ४ ॥
पोप लीला जो इतनी फैली सब होवेगी बंद ।
मिट जावेगा सारा एक दम ये अंड बंड पाखंड ॥ ५ ॥
फूट जो अब घर घर होती करेंगे उसका नास ।
मेल देवता सब के घर में करेगा आके बास ॥ ६ ॥
खोल गुरुकुल करेंगे उसमें विद्या का प्रचार ।
ब्रह्मचर्य्य की रीति चलावें कर भस्म व्यभिचार ॥ ७ ॥
पुराण का झगड़ा तोड़ देवेंगे करेंगे वेद प्रचार ।
उसका सूर्य्य उदय जब होगा मिटेंगे सारे तकरार ॥ ८ ॥
संध्या गायत्री जो अब नायब होवेगी फिर ये घर घर ।

ब्राह्मण सब थे भीख मांगना छोड़ देवेंगे दर दर॥
सचाई रास्ती होगी " जगदीश " घर घर में फिर
अपने को सब भाई समझेंगे आवे वो दिन शुभकारी॥
ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

नवीन समाचार ।

बांकीपुर की सभाएं

कुछ दिनों के पश्चात् बांकीपुर सभाओं का केन्द्र हो जायगा वहीं पर सब से प्रथम " नेशनल कांग्रेस " का अधिवेशन होगा उसके सभापति म० मधोलकर होंगे । सब से पहिले बांकीपुर के सज्जन चाहते थे कि मि० गोखले इस उच्च पद को ग्रहण करें परन्तु बड़े विवाद के पश्चात् यह निश्चय पाया गया कि म० मधोलकर सभापति बनाये जांय । हर्ष है कि हमारे माननीय मधोलकर ने इस निवेदन को स्वीकार कर लिया है हमारा सहयोगी " सद्धर्मप्रचारक " लिखता है कि " ऊंट गले बिल्ली " की कहावत के अनुसार " नेशनल कांग्रेस " के साथ २ " इन्डियन सोशल कान्फरेंस " भी होता है । इस वर्ष उसकी भी बैठक बांकीपुर में होगी जिसके सभापति म० रामावतार साहित्याचार्य एम० ए० होंगे । आप आत्मावलम्ब के साक्षात् उदाहरण हैं । आपने अपने परिश्रम और उद्योग से एम० ए० तक की शिक्षा उपलब्ध किया है आप संस्कृत के भी अच्छे पण्डित हैं । यह तो सब ठीक है किन्तु सामाजिक सुधारक होने के लिये यह आवश्यक है कि प्रत्येक सुधारक स्वयम सामाजिक सुधार में आदर्श बनने की चेष्टा करे क्योंकि मन्तव्य की अपेक्षा उदाहरण बहुत अच्छा होता है । यह बात हम साहित्याचार्य में नहीं पाते हैं जिससे सभापति का मूल्य घट जावेगा । अच्छा, जो कुछ हो गया सो हो गया ।

उक्तस्थान में " इन्डियन इनडास्ट्रियल कान्फरेन्स " भी होगी जिसके सभापति हमारे पञ्जाब के निवासी मा० लाला हरकिशन लाल होंगे । इसकी बैठक ३० दिसम्बर को होगी ।

इन सभाओं के साथ ही साथ बिहार प्रान्त के हमारे उत्साही आर्य पुरुष भी वैदिक धर्म का प्रचार करने के लिये पूर्ण उद्योग कर रहे हैं । वहां पर बाहरी उपदेशक भी पधारेंगे ।

तृतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन।

अन्त में हिन्दी साहित्य सम्मेलन का अधिवेशन कलकत्ते में होगा। उसकी बैठक २१, २२ तथा २३ दिसम्बर सन् १९१२ को होगी।

रूस में अकाल।

रूस में एक भयानक दुर्भिक्ष पड़ा है। आस्ट्राचान में किसान भूख से पीड़ित हो रहे हैं। अन्य कई प्रान्तों में भी अकाल पड़ने की सम्भावना की जा रही है।

वाइसराय का दौरा।

श्रीमान् वाइसराय जाड़े का दौरा कर रहे हैं। आप आज कल राजपूताना में भ्रमण कर रहे हैं। उदयपुर में श्रीमान् महाराणा का स्वास्थ्य ठीक न होने के कारण वहां पर श्रीमान् वाइसराय का स्वागत राजकुमार ने किया। वहां से आप विकानेर को पधारे जहां पर आखेट करने की पूरी तैयारी की गई थी। इसके पश्चात् वाइसराय ने महाराज विकानेर की बड़ी प्रशंसा की। हाल ही में महाराजा साहेब ने अपनी "सिलवर जुबिली" भी मनाइ थी।

भारतवर्षीय वैद्य सम्मेलन।

भारतवर्षीय आयुर्वैदिक कान्फरेन्स की बैठक कानपुर में सकुशल २ दिसम्बर को समाप्त हो गई। अनुमान १५०० मनुष्य वर्तमान थे और १९ प्रस्ताव "पास" किये गये।

गुरुकुल उत्सव।

गुरुकुल कांगड़ी का उत्सव बड़े समारोह के साथ "ईस्टर" की छुट्टियों में २० मार्च से २३ मार्च तक होगा।

स्वर्गवास।

पाठकों को शोक से सूचित करना पड़ता है कि लाहौर के लाला द्वारकादासजी एम० ए० का देहान्त देहरादून में होगया। आप आर्य समाज के पुराने सेवकों में से थे। आपकी विद्वत्ता प्रख्यात थी। आपने निर्भयता के साथ पटियाले वाले मुकद्दमा में काम किया था।

विद्यार्थियों को उपदेश।

इलाहाबाद युनिवर्सिटी के कनवोकेशन के समय जब प्रयाग में सब ग्रेजुएट एकत्रित हुये थे, हमारे स्थानिक उत्साही आर्य पुरुषों ने एक बृहद् अधिवेशन किया था जहां पर करिब २ सब ग्रेजुएट पधारे हुये थे । इसके सभापति महा म० गङ्गानाथ झा एम० ए० हुये थे. प्रो० घीसूलाल एम० ए०ने अंग्रेज़ी में और कविरत्न अखिला-नन्द ने संस्कृत में विद्यार्थियों को कुछ उपदेश किया था । ग्रेजुएटों को "फाउन्टेन हेड आफ़ रीलिजन्स" पुस्तक की २ प्रति बांटी गई थी । यह बड़ा प्रशंसनीय कार्य था और इससे वैदिक धर्म का प्रचार हुआ है।

उत्सव।

श्रीमती आर्य प्रतिनिधि सभा संयुक्त प्रान्त का अधिवेशन मथुरा में २६ दिसम्बर से होगा।

तैलिक सभा।

भारतवर्ष में भिन्न २ जातियों ने अपनी सभा संगठित कर लिया है और अपने छोटे दायरे में सफलता प्राप्त करने के लिये प्रयत्न कर रही हैं । इन्हीं में से हमारी तैलिक सभा है जिसमें बहुत से शिक्षित और उत्साही पुरुष कार्य कर रहे हैं इसी सभा की बैठक इस स्थान में चार पांच दिन तक होती रही और अच्छे २ व्याख्यान भी हुये थे। सामाजिक सुधार के ऊपर अनेक प्रस्तावों के समर्थन के लिये पूर्ण उद्योग किया गया था।

गो बध और मुसल्मान।

मुसल्मानों का त्यौहार बक़रईद हो गई और कई स्थानों में गो बध के ऊपर झगड़ा भी हो गया। अयोध्या नगर में बैरागियों और मुसल्मानों में बड़ा दंगा हो गया और यहां तक नौबत आ गई कि सिपाहियों ने गोली चलाई और बहुत से बैरागियों का पता नहीं चलता है । मुरशिदाबाद में नव्वाब साहेब ने बड़ी उदारता से गो बध की बन्दिश के लिये मनादी कर दी थी । इस वर्ष तुर्की की आपत्तियों ने यहां के मुसल्मानों को विह्वल कर दिया है और पहिले मुसल्मानों ने यह सलाह किया था कि हिन्दुओं की प्रसन्नता के लिये (अर्थात् इनसे चन्दा लेने के लिये) गो बध न किया जाय

किन्तु इससे भी शान्ति न हुई और कई स्थानों में झगड़ा फसाद हुआ।

गवालियर में प्रदर्शनी।

"जयाजी प्रताप" से ज्ञात हुआ है कि गवालियर में कृषि सम्बन्धी एक प्रदर्शनी होगी। इसका आरंभ १७ दिसंबर से होगा और अनुमान ५ जनवरी सन् १९१३ तक रहेंगी।

लाहौर का उत्सव।

लाहौर आर्य समाज का उत्सव बड़े समारोह के साथ समाप्त हो गया। वहां पर मनुष्यों की संख्या लगभग १२,००० और १६,००० के होती रही थी। व्याख्यान दाताओं में से महात्मा मुन्शीराम, महाराणी शङ्कर, प्रो० रामदेव और बालकृष्ण और ब्र० हरिश्चन्द्र थे। वैदिक धर्म प्रचार के लिये अनुमान १३०००० रुपया का चन्दा हुआ जिसमें से ३४,००० रूपया नक़द एकत्रित हुआ।

डा० विलसन का चुनाव।

संयुक्त राज्य अमेरिका के सभापति के आसन के लिये मि० टैफ्ट और रुजवेल्ट दोनों महाशय प्रयत्न कर रहे थे। किन्तु अनुमान के बिलकुल विपरीत डा० वुडरोव विलसन का सभापति होने के लिये, निर्वाचन हो गया और मि० टैफ्ट और रूज़वेल्ट का पक्ष गिर गया। डा० विलसन एक अच्छे लेखक हैं। आप एक कालेज के प्रिन्सपल थे।

आर्य भ्रातृमण्डल।

उपरोक्त नामकी एक सभा बम्बई में स्थापित की गई है। उसका प्रथम अधिवेशन होगया जिसके सभापति हमारे माननीय जस्टिस चन्दावर कर हुये थे। इसमें नूतन जाति पांति के वितण्डा का सर तोड़ खण्डन हुआ था। और भी अनेक उपयोगी विषयों के ऊपर अच्छे २ व्याख्यान हुये थे।

सूचना।

तृतीय आर्य्य कुमार सम्मेलन के अधिवेशन के समय पर, जो चित्र सम्मेलन के अवसर पर प्रतिनिधि गणों का लिया गया था वह तैयार है, जो महाशय मंगाना चाहें वे बा० अलखमुरारीलाल बी० ए० एल बी० महामन्त्री भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् से मंगा सकते हैं।

Printed by Pt. Baijnath Jijja Manager Tara Printing

नवजीवन बुक डिपो काशी।

हमारे नवजीवन बुक डिपो में स्त्री शिक्षा की तथा अन्य उ[illegible] पुस्तकें विक्रयार्थ मंगाई गई हैं। अब ऐसा सुप्रबन्ध हो गया है [illegible] मांग के साथ ही पुस्तकें तुरंत भेज दी जाती हैं। पाठक यह [illegible] रक्खें कि नवजीवन का जैसा धार्मिक तथा सामाजिक उद्देश्य है [illegible] ही उत्तम २ पुस्तकें यहां से मिलती हैं। कुछ पुस्तकों का सू[illegible] यहां दिया जाता है। ५) रुपये से अधिक के खरीदने वालों को [illegible] कमीशन भी दिया जाता है। जो लोग पुस्तकें मंगाना चाह[illegible] वे निम्न लिखित पते से मंगावें:—

मैनेजर नवजीवन बुकडिपो, काशी।

—०पुस्तकों का सूचीपत्र०—

१ सीता चरित्र ५ भाग पृष्ठ ७०० के लगभग—— १।।≈)	ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका
२ नारायणी शिक्षा— १।)	संस्कार विधि
३ स्त्री सुबोधिनी १।)	महावीर जी का जीवनचरित्र
४ नारी धर्म विचार १ भाग ।।)	महात्मा बुद्ध का जीवनचरि[illegible]
... ... २ भाग १)	भीष्म का जीवनचरित्र
५ महिला मंडल २ भाग ।।।)	वीर्य्य रक्षा
६ रमणी पंचरत्न ।)	उपदेश मंजरी
७ गर्भ रक्षा विधान ।।)	स्वामीजी का जीवन?
८ धर्म बलिदान =)	श्रीरामविलास शारदाकृत
९ वनिता विनोद १)	धर्म शिक्षा १ भाग
१० भारत की वीर तथा विदुषी स्त्रियां २ भाग ।।=)।।	वीरबालक अभिमन्यु
११ सच्ची देवियां ।≈)	हलदी घाटी की लड़ाई
१२ चन्द्रकला सच्चा उपन्यास ।)	राणा प्रतापसिंह की वीरता
१३ लक्ष्मी एक रोचक और शिक्षा प्रद उपन्यास ।)	एकान्त वासी योगी
१५ रमणी रत्नमाला ।=)	भारत की वीर माताएं मूल्य [illegible]
सत्यार्थ प्रकाश १)	आर्य्यों का आत्मोत्सर्ग
	प्रोफेसर राममूर्ति की कसरत
	और अन्य २ पुस्तकें मंगाने का प[illegible]
	मैनेजर-नवजीवन बुकडिपो-का[illegible]

REG. NO. A. 474 [ओ३म्] रजिस्टर्ड नं० ४७४

नवजीवन

Nawajiwan

सम्पादक—केशवदेवशास्त्री

विषय सूची ।

भाग ४ (दिसम्बर १९१२) अङ्क. ६

वार्षिक मूल्य ... ... ३) रु०
एक प्रति का मूल्य ...... ।-)

नवजीवन के नियम

(१) नवजीवन का वार्षिक मूल्य ३) रुपये मात्र है।
(२) प्रतिमास की २० तारीख़ को काशी से निकला करेगा
(३) नवजीवन में कोई अश्लील विज्ञापन न छपने पावेगा।
(४) विद्यार्थियों, छात्राओं, कन्या पाठशालाओं की अध्यापिकाओं, पुस्तकालयों से केवल २) रुपये वार्षिक मूल्य लिया जावेगा।
(५) प्रतिमास प्रकाश होने की तिथि के १० दिन के अन्दर नवजीवन के न पहुंचने पर दूसरी कापी भेजी जावेगी, मूल्य देना पड़ेगा।

—:o:—

नवजीवन का उद्देश्य।

(१) वैदिक धर्म्म के प्रचारार्थ।
(क) आर्य्य कुमारों तथा कुमारियों में नवीन जीवन का संचार क
(ख) सामाजिक उन्नति के उपायों पर विचार करना।
(ग) आर्य्य जीवन की मर्यादा को स्थापित करने की चेष्टा करना
(घ) महानुभावों के सच्चरितों पर विचार करना और
(ङ) उपयोगी संस्थाओं के वृतान्तों को सर्वसाधारण तक पहुंचा

ओ३म्

उदयति यदि भानुः पश्चिमे दिग्विभागे
प्रचलति यदि मेरुः शीततां याति वन्हिः।
विकसति यदि पद्मं पर्वताग्रे शिलायां
न भवति पुनरुक्तं भाषितं सज्जनानाम् ॥

भाग ५. | दिसम्बर, १९१२ | अङ्क ९

प्रार्थना।

यन्मे छिद्रं चक्षुषो हृदयस्य मनसो वातितृणं बृहस्पतिर्मेतद्दधातु। शं नो भवतु भुवनस्य यस्पतिः॥

भगवन्! इस विश्व में जितने लोक दिखलाई पड़ते हैं और वर्तमान हैं उन सबके आपही पति हैं। आपही की आज्ञा को वे पालन कर रहे हैं। यदि हम आपकी आज्ञा के पालन करने में प्रमाद करते हैं और हमारी मानसिक वृत्ति अधर्म की ओर जाती है, परमात्मन्! तो हमारे अन्दर तप का सञ्चार करिये जिससे हम अपनी आँखों, हृदय और मन को अधर्म और असत्य से हटाने में समर्थ हो जाएं। सब इन्द्रिय द्वेष, आत्मिक निर्बलता, राग, चाञ्चल्य और इन्द्रिय छिद्रों का निवारण होकर हमको सुख प्राप्त होवे। हम जीव अल्पज्ञ हैं सो आपकी असीम दयालुता से ही हम भविष्य समय में अपने छिद्रों को हटा सकते हैं।

ओं शम्।

उपदेश ।

स्वस्य च प्रियमात्मनः ।

अहा ! इसी संसार में सुख का अटल राज्य हो सकता है, यही पृथिवी स्वर्ग बन सकती है, यदि हम इस पाठ को सच्चे सीख लें कि जिस प्रकार से और जिस कार्य के सम्पादन से हम को सुख और दुख मालूम होता है, उसी प्रकार से दूसरों को भी सुख और दुख अनुभव होता है । एक बार नहीं, हज़ारों बार मनुष्य इस उच्च शिक्षा को अपनी दृष्टि से हटा देते हैं, और वे विस्मित होकर कह उठते हैं कि यह संसार सुख से शून्य है और इस लोक में न्याय नहीं है। धर्म के जिज्ञासु के लिये प्रथम आवश्यक बात यह है कि जिस प्रकार का कार्य वह करेगा वैसे ही उसका फल भी मिलेगा। इस संसार में कार्य और कारण का ऐसा घनिष्ट सम्बन्ध है कि जहां पर कार्य अवलोकन किया जाता है वहां पर अवश्य कारण वर्तमान होगा। यदि हम दूसरों में विश्वास उत्पन्न करना चाहते हैं, तो सब से पहिले हम उनका विश्वास करना सीखें । यदि हमको कोई निरर्थक शारीरिक कष्ट पहुंचाता है, तो हमको दुख प्राप्त होता है । इससे यह समझना चाहिये कि उसी प्रकार दूसरों को भी दुख पहुंचता है। 'अहिंसा' धर्म की यही मुख्य कसौटी है। यहीं से अहिंसा का आरम्भ होता है और इसका दायरा बढ़ता जाता है यहां तक कि किसी प्राणी को क्लेश पहुंचाने में भी हमारे मन को ग्लानि उत्पन्न होती है और किसी प्राणी को दुख पाते हुये देखकर हम दुख अनुभव करने लगते हैं। ऐसे उदार और विशाल हृदयों को सारा संसार मित्र दिखलाई पड़ता है । बहुधा ऐसा होता है कि जिन गुणों की अभावता हमारे अन्दर है दूसरों को दिखलाने के लिये हम उनको अपने अन्दर होने की कोशिश करते हैं । जो कुछ वास्तव में हम नहीं है वैसा दूसरों के प्रति प्रकाशित करने के लिये हम प्रयत्न करते हैं । यदि देखा जाय तो इस मिथ्या विचार से संसार में अनेकानेक दुखों की उत्पत्ति होती है । इस मिथ्या विचार के निवारण से ही संसार में हम सुख पा सकते हैं।

सम्पादकीय वक्तव्य ।

कन्याओं के रक्षार्थ 'बिल'

जो कन्यायें पूर्ण वयस को नहीं प्राप्त हुई हैं, उनकी रक्षार्थ मि० दादा भाई ने बड़े लाट की कौन्सिल में एक बिल उपस्थित किया है जो अभी कौन्सिल के विचाराधीन है। जो मनुष्य पाषाण मूर्ति पूजा के मर्म को समझते हैं उनको प्रायः ज्ञात होगा कि किस प्रकार पाषाण मूर्ति के ऊपर पैसे, कपड़े, अक्षत, चन्दन और अन्य सामग्री चढ़ाये जाते हैं वैसेही किन्हीं प्रान्तों में पाषाण मूर्ति की उप सेवा में उसके उपासक कुछ कन्याओं को (देवदासी कही जाती हैं) अर्पण करते हैं। ये कन्यायें अपने सारे जीवन को अविवाहित अवस्था में व्यतीत करती हैं। पाठक गण स्वयम् विचार सकते हैं कि इनके आचार व्यवहार कैसे रहते होंगे। कल्पना शक्ति से ही बहुत कुछ हमलोगों को ज्ञात हो सकता है। ऐसे कार्य को कोई भी ("सनातन धर्मी" विशेष करके) अधर्म नहीं बतलाता है। यदि यह 'बिल' पास होगई, तो हिन्दू समाज मि० दादा भाई के उद्योग और उपकार से बाधित रहेगी। एक प्रकार से देखा जाय, तो बाल्य विवाह की भी गणना इसी बिल में आ सकती है।

अन्यदेशों में पत्रों का प्रचार ।

कहा जाता है कि संयुक्त राज्य, अमेरिका के एक किसी कालेज के एक प्रिन्सिपल ने अपने विद्यार्थियों से कहा था कि जो विद्यार्थी समाचार पत्रों को नहीं पढ़ता है, वह वास्तव में विद्यार्थी कहलाने योग्य नहीं हो सकता है और न तो वह संसार में जीवित ही है। यदि हम इस कथन को थोड़ा और बढ़ा दें, तो वह मनुष्य किसी राष्ट्र का सभासद कहलाने योग्य नहीं है जो समाचार पत्र नहीं पढ़ता है भारतवर्ष की वर्तमान अवस्था को देख हृदय में विचित्र भाव उत्पन्न होते हैं । विद्यार्थियों की क्या बात, यहां के बहुत से पण्डितों ने भी पत्रों के दर्शन तक नहीं किये हैं। भारतवर्ष के पत्रों की संख्या प्रथम तो बहुत ही न्यून है द्वितीय उनकी ग्राहक संख्या भी बहुत कम रहती है। ऐसी दशा में पत्रों का चलाना लाभदायक

भी नहीं होता है इस अवस्था को यदि इङ्गलैंड आदि देशों की दशा से मिलान करते हैं तो पृथ्वी आकाश का अन्तर प्रतीत होता है। इङ्गलैंड और संयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मनी के कुली तक समाचार पत्र पढ़ते हैं और उनको संसार का दिग्दर्शन हो जाता है। इङ्गलैंड में 'डेली मेल' और 'वेस्ट मिनिस्टर गज़ेट' नामक दैनिक पत्रों के ५ संस्करण नित्यप्रति निकलते हैं। यहां के पत्रों की आर्थिक दशा भी बड़ी शोचनीय है। भारतवासियों की संसार से ऐसी पृथकता और अज्ञानता से उन्नति के मार्ग में बहुत सी रुकावटें आ जाती हैं।

पानी का खर्च।

संसार की उन्नति के ऊपर दृष्टि डालिये, तो सर्वत्र विज्ञान की ऊर्ध्वगति के चिन्ह दिखलाई पड़ते हैं। जो कुछ कार्य किया जाता है उसकी माप और वज़न प्रथम ही करली जाती है। समय का प्रभाव बड़ा पड़ता है। भारतवर्ष में जिस पानी की पम्प के प्रचार से सन् १८५७ का बलवा प्रज्वलित किया गया था आज उसी के लिये पूर्ण उद्योग किया जा रहा है कि नगरों में पानी बहुत कम मिलता है और 'पानी का दुखड़ा' बनारस ऐसे नगरों में भी रोया जाता है। इङ्गलैंड में प्रत्येक मनुष्य २७ गैलन पानी काम में लाता है। किन्तु यहां पर मद्रास ऐसे नगरों में केवल ७ गैलन पानी प्रत्येक मनुष्य को मिलता है।

काशी के पण्डितों की उदारता।

कदाचित हमारे पाठकगण काशी के पण्डितों के दक्षिणा और कार्य्यों को 'नवजीवन' के पृष्ठों में पढ़ते २ उकता गये होंगे। परन्तु ऐसे कार्य्यों को श्रवण से कुछ तो पुण्य और कुछ तो उपदेश भी मिलता है। प्रथम तो उनके अन्दर सुधार की आवश्यकता प्रतीत होती है और द्वितीय उनके आजीविका के प्रवाह का पता लगता है। हाल ही में काशी जैसी पवित्र भूमि में आश्चर्योत्पादक एक घटना हुई है। हमारा सहयोगी "भारत-जीवन" लिखता है कि यहां पर दशाश्वमेध घाट पर रहनेवाले अघोर बाबू को 'पदवी' देने के लिये एक सभा हुई। वहां पर म० म० पं०

शिवकुमारजी भी अन्य पण्डितों के सहित वर्तमान थे "किन्तु ऐसे धुरन्धर विद्वानों" की वर्तमानता में प्रधानता दियी गई थी हुसना तवायफ को और उसके कहने से पण्डितों ने अघोर बाबू को "सङ्गीत रत्नाकर" की उपाधि दी। इस पर हमारा सहयोगी बड़ा रुदन करता है और कहता है कि क्या काशी के पण्डितों की पण्डिताई अब इस दुरवस्था को पहुंच गयी? बलिहारी है काशी के पण्डितों की! काशी के पण्डित, जो अन्त्यज्यों के साथ बैठने से 'धर्म जाता है' ऐसा ख्याल करते हैं, वे ही ऐसा 'वाममार्गी' कार्य करते हुये अपने को बधाई देते हैं धन्य है ऐसी स्वार्थपरायणता और धर्मनिष्ठता की!

कर्त्तव्य और अधिकार।

यदि आप पाश्चात्य देशों के ऊपर दृष्टिपात करें तो आज उनका समाजरूपी आकाश अधिकार रूपी शब्दों की गूंज से भरा हुआ मिलता है। जिधर देखिये उसी ओर अधिकार प्राप्त करने के निमित्त पूर्ण यत्न किया जा रहा है। यद्यपि वहां पर कर्तव्य की मीमांसा भी की जाती है, तथापि कर्त्तव्यों की व्याख्या की अभावता सी प्रतीत होती है और मनुष्यों के कर्त्तव्यों के ऊपर बहुत कम ज़ोर दिया जाता है। इसी प्रकार यहां की अवस्था का अवलोकन कीजिये, तो शास्त्रों के प्रत्येक स्थल पर कर्त्तव्य पालन के निमित्त पूर्ण उद्योग किया गया है क्योंकि यदि हर एक मनुष्य अपने २ कर्त्तव्य पालन करना आरम्भ कर दे, तो संसार का कार्य्यक्रम बहुत अच्छी तरह से चल सकता है। कारण यह है कि समाज व्यक्तियों के समूह ही को कहते हैं। यदि प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्त्तव्य पालन में दत्तचित हो जांय, तो अवश्यमेव समाज उन्नति की ओर जा सकती है। यहां पर वर्णाश्रम तथा अन्य सामाजिक पृथाओं का निरीक्षण कीजिये, तो यह ज्ञात हो सकता है कि उन पृथाओं से कर्त्तव्य पालन के ऊपर पूर्ण ज़ोर दिया गया है। प्रथम मनुष्य अपने कर्त्तव्य करता था और इस बात के ऊपर ध्यान नहीं देता था कि अन्य पुरुष किस प्रकार अपना जीवन व्यतीत करते हैं आज समस्त युरोप और अमेरिका अधिकार प्राप्ति के लिये उद्योग कर रहे हैं। अभी तक इस बात का निश्चय नहीं हुआ है

कि वहां के पुरुषों को कहां तक और किस प्रकार के अधिकार उपलब्ध हो सकते हैं और इसका कुछ अन्त भी है या नहीं। यदि देखा जाय तो कर्त्तव्य पालन से अधिकार स्वयम् प्राप्त हो सकते हैं। बजाय इसके कि दूसरों से अधिकार पाने के लिये उनको धमकी दिया जाय, हम अपने कर्त्तव्यों को बड़ी सरलता से पालन कर सकते हैं।

कर्त्तव्य और आनन्द।

अपने कर्त्तव्य के पालन से हर एक मनुष्य को एक प्रकार का सच्चा आनन्द अनुभव होता है जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता है। यदि संसार में कोई मनुष्य सुख और प्रसन्नता का स्वाद लेना चाहता है तो उसको योग्य है कि जीवन पर्यन्त अपने कार्य करता जाय और अपनी शक्ति को सदुपयोग में लावे। सुख का निवास कहीं किसी बाहरी स्थान में नहीं है किन्तु उसका निवासस्थान हमारे मन में है। यदि हम पूर्णतया जानते हैं कि हमने समय निरर्थक नष्ट नहीं किया है और अपने कर्त्तव्य पालन किये हैं, तो हमारे मन को अकथनीय सुख और सन्तोष होगा।

कृत्रिम प्राण सञ्चार।

योरप के वैज्ञानिकों को जीव और निर्जीव पदार्थों में भेद करने का विषय हैरान कर रहा है। वैज्ञानिक कृत्रिम प्राण संचार करने की चेष्टा कर रहे हैं। हाल ही में इसी विषय के ऊपर गत सितम्बर चौथी तारीख को प्रो० शैफरने एक व्याख्यान दिया जिससे योरप में बड़ा हलचल उत्पन्न होगया है। आपने बतलाया कि वह समय समीप आ रहा है जब मनुष्य विज्ञान से जीवधारी पदार्थ उत्पन्न करने के समर्थ हो जायगा। यह तो इनका सिद्धान्त है परन्तु इसके विपरीत अन्य वैज्ञानिक विशारदों का, जैसे लार्ड केलविन और हेलमहोज और वैलस, मत है कि जड़ पदार्थों से जीवधारी पदार्थ उत्पन्न करना नितान्त असम्भव है और ऐसा हो नहीं सकता है।

——:o:——

स्वास्थ्य और स्वभाव।

(ले० श्री यु० कालिदास माणिक)

[गतांक से आगे]

आहार के दो विशेषकाम होते हैं (१) जो मसल्स और नर्वज़ काम करते करते थक कर कमज़ोर हो जाते हैं उनको मज़बूत करना। (२) शरीर में गरमी और ताज़गी बनाये रहना। संसार में जितने पदार्थ भोजन सम्बन्धी हैं उनमें दूध सब से उत्तम है। शरीर के लिये जो जो बातें चाहिये इसमें सब मौजूद हैं। बालकों और बीमारों के लिये इससे बढ़ कर और कोई पदार्थ नहीं है। हां युवा पुरुष के लिये खाली दूधसे काम नहीं चल सकता है क्योंकि युवा पुरूष दूध कितना पीयेगा। इसलिये उसको अन्न खाना पड़ता है।

आहार को खूब कूंच कर निगलना चाहिये। कूंच कूंच कर खाने में भोजन खंड खंड हो जाता है साथ ही कई प्रकार के रस मिल कर लुकमा पेट में जाता है। यदि भोजन जल्दी से निगल लिया जाय तो पेट को डबल काम करना पड़ता है। जो काम दांतों के सुपुर्द है उसको पेट संभालता है परन्तु इस काम को पेट अच्छी तरह नहीं कर सकता है।

. एक और बात भी ध्यान देने योग्य है कि भोजन के समय ज़्यादा पानी या और कोई पानी ऐसी चीज़ ज़्यादा नहीं पीना चाहिये। ऐसा करने से पाचन शक्ति कम हो जाती है जिसका परिणाम बुरा होता है।

भोजन का समय—अब इस बात पर विचार करना चाहिये कि दिन में कै बार भोजन करना चाहिये। भोजन के लिये समय निश्चित् करना बड़ा कठिन है क्योंकि लोग भिन्न भिन्न कार्यों में लगे रहते हैं। तथापि इस बात पर ध्यान करना चाहिये कि भोजन नियत समय पर करना चाहिये। और हर भोजन के बीच में कम से कम इतना अन्तर रखना चाहिये कि पहिला भोजन पच गया है। एक निरोग्य मनुष्य के लिये चौबीस घंटे में तीन बार भोजन करना काफ़ी है।

जो लोग घन्टे घन्टे पर खाया करते हैं वे बड़ी भूल करते हैं।

क्योंकि ऐसा करने से पचनेन्द्रियों को आराम नहीं मिलता पूरी मेहनत करने के बाद वे भी ज़रा आराम चाहते हैं। तीन भोजन से मेरा मतलब पूरा भोजन से है। दो दिन में और एक रात के समय।

पीना

संसार में जितने पदार्थ पीने के हैं उनमें से पानी सब से उत्तम है जैसा कि कहा है कि—

Pure water is the most wholesome of all drinks and is the natural drink of men." अर्थात-शुद्ध जल मनुष्यों को पीने के लिये सबसे अच्छा है, और जलही मनुष्य मात्र के पीने का पदार्थ है।

प्रतिदिन हर एक मनुष्य को दो अढ़ाई सेर पानी २४ घन्टे में पीना चाहिये। बहुत सा पानी हम लोगों को हमारे खाने के पदार्थ से मिलजाता है तथापि हमलोगों को अलग पानी पाने की आवश्यकता होती है। शुद्ध जल से मनुष्य का स्वास्थ्य अच्छा रहता है।

मद्य पान

बहुत से लोग ऐसे हैं कि जब वे काम करते२ थक जाते हैं या ठंडे होजाते हैं उस समय थकावट दूर करने के लिये अथवा गरमाने के लिये शराब पीते हैं और समझते हैं कि अब हमको फ़ायदा होगा। परन्तु ऐसा ख़्याल करना उनकी बड़ी भूल है। वास्तव में शराब पीने से क्या लाभ और नुक़सान होता है वह यह है। शराब पीने से हृदय की गति कुछ तेज़ हो जाती है। हृदय के तेज़ चलने से तमाम शरीर में खून जल्दी जल्दी चलने लगता है। और इस तरह से मस्तक भी उत्तेजित होजाता है। और थोड़ी देर के लिये आराम मालूम होता है रूधिरजो कि चमड़े के ओर दौड़ता है बदन को गरम करदेता है परन्तु यह कृत्रिम गर्मी जल्द बदन से बाहर निकल जाती है और सारा बदन पहिले से ज़्यादा ठंढा और कमज़ोर हो जाता है।

शराब का नशा मनुष्य के शरीर पर वैसाही काम करता है जैसा कि एक भाँति आग के ऊपर भाथी हाँकने से आग तेज़ होजाती है परन्तु जितनी तेज़ी से भाथी चलती है उतनीही तेज़ी से आग जल कर खतम हो जाती है। किंचित् समय के लिये मनुष्य के

शरीर में फुरती आजाती है परन्तु यह मनुष्य के ज्ञान की ग्राहक बनजाती है।

आग वही बराबर जलती है जो कि ईंधन डालने से प्रज्वलित हो। आग का भोजन ईंधन है। इसी तरह हमारे शरीर का ईंधन आहार है। शराब हमारा आहार नहीं है। शराब केवल उत्तेजक नशा है जिसको कि अंगरेजी में stimulant कहते हैं। थोड़े काल के लिये यह बदन को मज़बूत बना देती है जैसे कि भाथी आग को तेज़ बना देती है। परन्तु परिणाम बुरा होता है। बजाय ताक़त लाने के शराब हमारी असली ताकत को भी घटा देती है, जिस तरह कि भाथी आग को जल्द जला कर समाप्त करदेती है। हिन्दुस्तान में हिन्दू के नीच जात शराब पीते हैं मुसलमानों में भी यह नशा हराम समझा जाता है। परन्तु पश्चिम की सभ्यता ने शराब की नहर बहा रक्खी है। लाखों रू० की शराब हर साल देश को नाश करती है।

व्यायाम करना।

मनुष्य का शरीर एक सुन्दर तुला हुआ यंत्र (मशीन) है; इस मशीन के सारे पुरज़े आसानी से चलते फिरते हैं। यदि ऐसे मशीन को ख़ाली पड़े रहने दें, उससे कोई काम न लें, बल्कि बेपरवाही से एक कोने में रक्खे रहने दें, तो वह मशीन बहुत जल्द ज़ंग और गर्द से भर जायगी और इतनी निकम्मी होजायेगी कि उससे हम फिर कोई काम नहीं ले सकते। हर एक पुरज़े की जोड़ जोकि बड़ी होशियारी से लगाया गया है ढ़ीले पड़ जाते हैं और उनमें वह शक्ति नहीं रह जाती जैसा कि होना चाहिये।

हम बोलने का अभ्यास इसलिये करते हैं कि स्पष्ट और मधुर बोल सकें। हम मस्तक से इसलिये काम लेते हैं कि जल्दी से सोच सकें और बुद्धि बढ़ा सकें। इसी तरह हमको तमाम शरीर के अवयवों से काम लेना चाहिये ताकि वे सुडौल और फुरतीले बने रहें। काम करने के लिये सदा मुस्तैद रहें और संसाररूपी रणक्षेत्र में सदा लड़ने के लिये तय्यार रहें।

नवयुवकों के लिये व्यायाम करना परमावश्यक है। क्योंकि यही समय इनके बदन की बनावट का है चाहे उनका स्वास्थ्य अच्छा हो या बुरा, इस समय में उनको व्यायाम करना अवश्य

चाहिये। मनुष्य का युवाकाल उसकी बाल्यावस्था (Boyhood) के हरदिन की बनावट पर निर्भर है।

कसरत का फल।

शरीर के तीन भाग कसरत करने से लाभ उठाते हैं।

(१) रुधिर का संचार (२) फेफड़ों का मज़बूत होना

(३) मसल्स (पट्ठे) नर्वज़ (Nerves) का मज़बूत होना

कसरत से पूरा पूरा लाभ उठाने के लिये खुले मैदान (open air) में व्यायाम करना चाहिये। रुधिर तेज़ी से सारे शरीर में चलने लगता है और इस तरह हर एक अंग प्रतिअंग मज़बूत और गर्म हो जाते हैं। ख़ासकर फेफड़ा खूब मज़बूत होजाता है क्योंकि ज़ोर से सांस लेने से और निकालने से फेफड़े की जाली दृढ़ होजाती है और आक्सिजन हवा के रगड़ से दोनों फेफड़े ऐसे दृढ़ होजाते हैं कि उनमें कोई रोग आक्रमण नहीं कर सकता है।

व्यायाम से मुख्य लाभ उठाने के लिये इस बात पर पूरा ध्यान रखना चाहिये कि कसरत प्रतिदिन करना चाहिये और बदलते रहना चाहिये हफ्ते में दो एक दिन भिन्न भिन्न प्रकार की कसरत करना चाहिये। मनमाना दो तीन दिन खूब कसरत करना और फिर एक महीना चुप रहना अच्छा नहीं है। मसल्स (पट्ठे) जब कि काम में नहीं लाये जाते कमज़ोर पड़ने लगते हैं। यहां तक की मुलायम और फोफले बन जाते हैं। यह बात किसी टूटे हुये अंग के देखने से सिद्ध होजाती है क्योंकि जब तक वह अंग बन्धा रहता है कमज़ोर और पतला पड़ जाता है और जब तक उस अंग से फिर काम न लिया जाय बराबर कमज़ोर बना रहता है।

कसरत करना कितना ही अच्छा है तथापि "अति सर्वत्र वर्जयेत" अधिक कसरत करना भी बड़ी भारी भूल है। थकावट जब मालूम होने लगे फ़ौरन कसरत करना छोड़ दे। जो लोग थकने पर भी कसरत करते जाते हैं उनके मसल्स चीमड़े होते जाते हैं और कभी कभी ऐसा भी होता है कि कोई कोई अंग स्थायी रूप में बिगड़ जाते हैं। कभी कभी इस अधिकता का परिणाम लेखकों के हाथ पर देखा गयाहै जिसको कि Writerscramp. कहते हैं। इस रोग से हाथ के नर्वज़ इतने कड़े होजाते हैं कि

दहिने हाथ में ऐंठन होजाती है फिर ज़रा भी लिखने की ताकत नहीं रहती यह केवल अधिकता का परिणाम है।

आज कल भी नवयुवकों में एक प्रणाली बुरी पड़ती जाती है अर्थात् अधिक खेलना। लड़के थकावट मालूम करने पर भी खेलते जाते हैं हार जीत के जोश में इतना खेल जाते हैं कि उनका स्वास्थ्य हमेशा के लिये बिगड़ जाता है।

इस विषय में हमारे अंग स्वयं कह देते हैं कि बस करो अब अधिक काम करना हानिकारक होगा। परन्तु जो लोग इस पर विचार नहीं करते, बुरे परिणाम भोगते हैं और उलटेही कसरत को भला बुरा कहने लगते हैं। इससे यह बात सदा ध्यान में रखनी चाहिये कि थकावट मालूम होते ही व्यायाम, खेल बंद कर देना चाहिये; कसरत करने से केवल मसलस को लाभ नहीं पहुंचता जैसा कि कई लोगों का ख़्याल है, न मोटाई घट जाती है। वरन् यह एक ऐसा उपयोगी कार्य मनुष्य मात्र के लिये है कि जिससे उसका शरीर और मस्तिष्क दोनों उत्तम बने रहते हैं। कसरत करने से ब्रेन और बदन दोनों बढ़ते हैं और काम करने के योग्य बनते हैं।

नवयुवकों के लिये कसरत और खेल दोनों आवश्यक हैं। सुबह पंद्रह मिनिट कसरत करना और शाम को कम से कम आध घटा खेल लेना बड़ा उपयोगी होगा।

बहुत छोटे लड़कों को कसरत नहीं कराना चाहिये उनके लिये खेलना कूदना काफ़ी है।

कसरत खुले बदन और खुले मैदान में करना चाहिये। पसीना बदन पर न सूखना चाहिये वरन् किसी अंगछे से पोंछ लेना चाहिये।

भारतवर्ष के सभी महान् पुरुष कुछ न कुछ शारीरिक कसरत कर लेते थे। ऋषि वाक्य "शरीरमाद्यं खलु कर्म साधनम्" सब धर्मों का साधन इस शरीर ही से होता है इसलिये इस शरीर की सेवा करना हमारा पहिला धर्म है। जगद्मान्य प्रोफ़ेसर राममूर्ति ने अपने शारीरिक बल से सारे संसार को चकित कर दिया है। बल भी कैसा कि हाथी छाती पर से निकल जाय तो कुछ परवाह नहीं, मनुष्य ब्रह्मचर्य और व्यायाम से क्या नहीं कर सकता है।

'प्रोफेसर राममूर्ति और उन की कसरत' नामी एक स्वतन्त्र पुस्तक व्यायाम सम्बन्धी लिखी गई है। भारत सन्तान जो बल बढ़ाना चाहता है अवश्य एक एक प्रति इस पुस्तक की अपने पास रक्खे और नियमानुसार कसरत करे। सहस्रों विद्यार्थियों ने इस छोटी सी पुस्तक को पढ़ कर लाभ उठाया है।

तम्बाखू पीना

हमारे शरीर के लिये कोई मादक वस्तु लाभकरी नहीं है। इनसे बलक्षीण होता है। बुद्धि मलीन होती है। और कई प्रकार की हानि इन्द्रियों को पहुंचती है। यह केवल बिलासिता है। इन हानि कारक पदार्थों से बचकर हम सुखी रहसकते हैं परन्तु हम में बिलासिता ऐसी समा गई है कि हम हानि कारक वस्तुओं को उपकारी समझे हुये हैं।

इस देश के नवयुवकों में तम्बाखू का प्रचार बढ़ता जाता है यह भी एक तरह की बिलासिता है। क्योंकि तम्बाखू के बिना हमारा काम अच्छी तरह चल सकता है। वास्तव में तम्बाखू न पीना चाहिये न खाना चाहिये। प्रश्न यह पैदा होता है कि क्या तम्बाखू हमारे शरीर के लिये हानिकरक है। इसमें कोई संदेह नहीं कि नवयूवकों के लिये जिनकी अवस्था बीस बर्ष से कम है यह बड़ा हानिकारक है। इसके प्रयोग से हमारे नर्बज़ (Nerves) शिथिल हो जाते हैं और खास कर आंख की दृष्टि खराब हो जाती है। तम्बाखू पीने से अनेक लोग कम देखने वाले हो गये हैं और कई तो पीते पीते सूर बन बैठे हैं।

कच्ची उमर के बालक जो तम्बाखू पीते हैं उनका हृदय (heart) कमज़ोर हो जाता है। परिश्रमी खेल कूद जैसे कुश्ती, फुट बाल का खेलना दौड़ना आदि खेलों को नहीं खेल सकते हैं उनका सांस जल्दी फूल जाता है और ऐसे बालक थोड़े से परिश्रम में हांपने लगते हैं। तम्बाखू पीने से हृदय की गति बिगड़ जाती है। किसी बालक ने तम्बाखू पीकर लाभ नहीं उठाया है। विरुद्ध इसके बहुत से बालकों की जिन्दगी निष्फल हो गई है।

तम्बाखू के अधिक प्रयोग से कोमल हृदय अच्छी तरह अपना काम नहीं कर सकता और वह तमाम शरीर में तेज़ी के साथ रुधिर नहीं बहा सकता है। इस कारण बालकों की बाढ़ (growth)

में कमी हो जाती है। पेट को भी नुकसान पहुंचता है क्योंकि उसको न काफी खून मिलता है और न रस इसलिये भूख भी कम लगती है। इस प्रकार जो बालक तम्बाखू पीते हैं उनकी जठराग्नि मन्द पड़ जाती है। ऐसे बालक उतना भोजन नहीं खा सकते जितना कि उनके शरीर के लिये आवश्यक है। इस तरह भी उनकी बाढ़ में और हड्डियों की बनावट में त्रुटि रह जाती है और वे ठेंगने रह जाते हैं।

युवा पुरुष इसलिये तम्बाखू पीते हैं कि उनको थोड़ी देर के लिये आराम मालूम पड़ता है और वह उस काल के लिये थकावट भूल जाते हैं। वास्तव में तम्बाखू युवा पुरुषों को भी नुकसान करता है परन्तु उतना नुकसान नहीं करता जितना कि कम अवस्था वाले बालकों को होता है। हृदय की गति अवश्य थोड़े काल के लिये कम हो जाती है परन्तु मज़बूत होने के कारण फिर उसकी गति तेज़ हो जाती है और इसलिये कोई स्थायी हानि नहीं पहुंचती। परन्तु जब बड़े बड़े लोग भी तम्बाखू पीना बढ़ा देते हैं तो उनकी भी वही गति होती है। पेट और हृदय सदा के लिये कमज़ोर रह जाते हैं और तमाम नर्वज़ और नज़र कमज़ोर हो जाते हैं।

बालक क्यों तम्बाखू पीते हैं? कोई बालक तम्बाखू पीना पसन्द नहीं करता। जब कि वह पहिले पहिल पीता है तो उसको बड़ा बुरा मालूम पड़ता है चाहे २० रू० सेर का तम्बाखू उसको क्यों न पिलाया जाय, वह खांय खांय खांसता है और अरुचि प्रगट करता हैं फिर क्या बात है कि वही बालक हरवक्त मुंह में चुरुट लगये रहता है, तम्बाखू किसी को पीते देखता है तो लौट पोट होजाता है। इसका मूल कारण यह है कि वह अपने से बड़े लोगों को जिन को वह पूजनीय समझता है तम्बाखू पीते देखता है। वह भी पूजनीय बनने के लिये उन बड़े आदमियों की नकल करता है और अपने को नाश करडालता है। जो बालक बीस बर्ष से कम अवस्था में तम्बाखू पीते हैं वे अपनी जीवनलीला को करकरा बना देते हैं जीवन का सच्चा सुख वे नहीं भोग सकते हैं।

सिक्ख सम्प्रदाय में अभी तक तम्बाखू का पीना खाना या सूंघना हराम समझा जाता है। गुरूनानक इसके दुर्गुणों को जानते थे। इसलिये उन्हों ने अपने अनुयायियों को इस विष पदार्थ से

दूर रक्खा। महात्मा दयानन्द सरस्वती परमहंस राम कृष्णादि भारत के महापुरुष इस व्यसन से बचे रहे।

जापान में यदि किसी का बालक जिसकी अवस्था २० वर्ष से कम हो यदि वह चुरुट, सिगरेट या तम्बाखू पीता पाया जाय तो उसके माता पिता को जुरमाना होता है।

इंगलेण्ड के PeaceScowts बीर बालक वृन्द कभी नहीं तम्बाखू पीते इस बल हीन भारत के भाग्य में न मालूम क्या लिखा है कि दूध पीते बालकों के हाथ में भी बम्बई की बीड़ी दृष्टि गोचर होती है।

"अधिक श्रम।"

अधिक श्रम अर्थात् सख्त मेहनत हमेशा करना अच्छा नहीं है अधिक श्रम करने से मनुष्य बहुत कमज़ोर हो जाता है। यद्यपि वह मनुष्य एकाएक नहीं मर जाता परन्तु उसके शरीर में घुन लग जाता है और वह धीरे धीरे सूखता जाता है।

बहुत लोगों का यह ख्याल है कि अधिक कसरत करने से खूब बलवान हो जायंगे। बली होने के लिये खाली अधिक कसरत करने से काम नहीं चलेगा वरन् भोजन, विश्राम और स्वच्छ हवा का सेवन भी अति आवश्यक है। इन सब बातों का मेल जहां रहता है तभी लोग बलवान होते हैं।

इस बात को हर एक मनुष्य जानता है कि कोई घोड़ा या बैल बहुत देर तक जोता जाय तो वह थक जाता है और यदि लगातार उस से कठिन मेहनत लिया जाय तो वह ज़रूर दुबला हो जाता है। यहां तक कि कई महीनों के बाद वह मर जाता है। हम लोगों की हालत भी ठीक जानवरों की तरह है। अगर हम दिन दिन कमज़ोर होते जाते हैं और इस बात पर ज़रा भी ध्यान नहीं देते कि क्यों कमज़ोर होते जाते हैं तो फिर हालत ऐसी बिगड़ जाती है कि ज़िन्दगी से हाथ धो बैठना पड़ता है।

कोई कोई मनुष्य शरीर के तमाम अंगों और मस्तक पर ध्यान नहीं देते वह किसी खास बात की साधना करते हैं ऐसे लोगों के तमाम मसल्स मज़बूत नहीं होने पाते, खास खास मसल्स मज़बूत हो जाते हैं पर उनको पूरा बलवान नहीं कह सकते। कभी कभी

ऐसा भी हुआ है कि साधना से लोग बड़ी बड़ी नाल तान देते हैं पर उनकी कई उपकारी इन्द्रियां कमज़ोर पड़ जाती हैं जैसे हृदय, फेफड़ा, लीवर इत्यादि । देखने में कोई मनुष्य कैसा भी बलवान मालूम पड़ता हो परन्तु यदि उसको कोई हृदयरोग या फेफड़े में कोई रोग होगा तो उसके दिन निकट आ पहुंचते हैं और वह शीघ्रही मौत के गोद में सो जाता है । ऐसे लोगों को हम बली कदापि नहीं कह सकते ।

किसी किसी के शरीर की बनावट ऐसी होती है कि कठिन परिश्रम उनका नुकसान नहीं करता । परन्तु इससे यह नहीं समझ लेना चाहिए कि कठिन श्रम सभी के लिए लाभ दायक होता है।

सब से पहिले यह जानना चाहिये कि हमारे शरीर की बनावट कैसी है । कहां तक हम मेहनत सहन कर सकते हैं और कौन सी प्रणाली (System) हमारे लिये अनुकूल होगी ।

कुछ लोग ऐसे होते हैं जोकि कठिन से कठिन परिश्रम कर सकते हैं और कुछ ऐसे भी नाज़ुक मिज़ाज होते हैं कि ज़रा काम करने से थक जाते हैं । दोनों के लिए एकही प्रणाली ठीक नहीं ।

विचार कर देखा जाय तो दोनों के कसरत करने की मनशा भिन्न भिन्न है । एक बड़ा बली होना चाहता है दूसरा अपना स्वास्थ्य रखना चाहता है । यहां पर ध्यान रखना चाहिये कि एक कपड़े सीने की कल से (Sewing Machine) रेल के एन्जिन का काम नहीं निकाल सकते । हरएक मनुष्य के शरीर की बनावट अन्य अन्य प्रकार की होती है इसलिये हरएक के खाने पीने और परि-श्रम में भी भिन्नता होती है ।

विश्राम और निद्रा ।

किसी काम को पूरा करने के बाद जब आराम किया जाता है उसी को विश्राम कहते हैं । कंस को मार कर भगवान श्रीकृष्ण ने विश्राम लिया था । मथुराजी में यमुना के किनारे यह स्थान विश्राम-घाट के नाम से विदित है । वास्तव में जो मनुष्य जिस उद्योग में लगा है जब तक वह काम खतम न हो जाय तब तक उसको विश्राम कहां जैसा कि हनुमान जी से किसी ने पूछा कि ज़रा आराम करके जावो, उसका उत्तर हनुमानजी ने कैसा अच्छा कहा है " राम काज कीन्हें बिना मोहि कहां विश्राम" । कठिन काम करने के बाद

थकावट आती है। उस समय सब काम काज छोड़ कर आराम करना चाहिये। प्रकृति के ओर से यह नियम है कि आराम करने से मनुष्य पुनर बल इकट्ठा कर लेता है और उसके अवयव दोबारा काम करने के लिये तय्यार हो जाते हैं।

सब से अच्छा विश्राम हमको निद्रादेवी के गोद में मिलता है निद्रा से बढ़कर बल वर्धक और कोई वस्तु इस संसार में नहीं है हिन्दू शास्त्रों में लिखा है। "स्वास्थ्य अच्छी नींद पर निर्भर है घोर निद्रा न आने से चिन्ता, निर्बलता और नपुंसकता उत्पन्न होती है। कुसमय का सोना, अति सोना, और कम सोना इनसे भी मनुष्य की तन्दुरुस्ती और बिगड़ती है।"

भिन्न भिन्न अवस्था के लोगों को न्यूनाधिक सोना चाहिये बालक और वृद्धों को ज़्यादा सोना चाहिये। बालकों की मास्तिष्क शक्ति जल्दी जल्दी बढ़ती है इसलिये उनको शान्ति के साथ निद्रा की आवश्यकत है। इस तरह वृद्धों को इसलिये ज़्यादा सोना चाहिये। क्योंकि वे अपनी तमाम शक्ति थोड़ी देर में खर्च कर डालते हैं। और फिर उनको ताकत बटोरने के लिये विश्राम चाहिये। निद्रा को अंगरेज़ी में "Tired nature's sweet restorer." कहते हैं।

परन्तु कठिन परिश्रम के बादही नींद नहीं आती हमें ज़रा ठंढे होकर तब सोने के लिये जाना चाहिये। शयनागार अथवा सोने का कमरा हवादार होना चाहिये सोने से पहिले उस कमरे में से रोशनी हटा देना चाहिये। गन्दे कपड़े और बहुत से असबाब उस कमरे में रखने से मच्छड़ों को आश्रय मिलता है साथही उतनी जगह साफ हवा को रोकती है।

डेनमार्क के प्रसिद्ध लेफटिनेन्ट मूलर जोकि यूरप में एक आदर्श-स्वास्थ्याचार्य हैं अपने सोने के कमरे में सिवाय एक टावल और एक ओढ़ने के वस्त्र के और कुछ भी नहीं रखते हैं।

कमरे में जलते हुये लैम्प या आग अंगेठी में सुलगा कर, कभी नहीं सोना चाहिये। ऐसी कई घटना हुई हैं कि अज्ञानता से कई मनुष्यों की मृत्यु हो गई है। चार पांच साल बीते काशी में थिआसोफिकल कन्वेन्शन था उसमें देशदेशान्तर के लोग सम्मिलित हुये थे। उस साल सरदी बड़ी पड़ रही थी, गुजरात के

प्रिन्स हरीसिंहजी ने अपने कमरे में आग तापने के लिये आग दी नौकरों से सुलगवाई और कमरा बन्द कर तीनों आदमी सो गये। सरदी पड़ती थी इसलिये घोर निद्रा में डूब गये, परिणाम यह हुआ कि सुबह दरवाज़ा तोड़ कर लोग अचेत अवस्था में निकाले गये जो नौकर दरवाज़े के पास सोया था वह औषधी करने से बच गया परन्तु प्रिन्स साहब और उनका एक सेवक हमेशा के लिये सो गये। लाख औषधी करने पर भी नहीं बचे। प्रिय पाठक! वह कौन सी ऐसी वस्तु थी जिसने प्रिंस को मार डाला? कारबन और कारबोनिक एसिड ग्यास (Carbon and Carbonic Acid gas)! स्वास द्वारा यह ग्यास लोगों के रुधिर में प्रवेश हो गया और मृत्यु का कारण हुआ।

निद्रा दोष।

किसी किसी को निद्रा दोष की बीमारी हो जाती है इसका क्या कारण है?

इसका मूल कारण, कसरत की कमी, बदहज़मी है। सख्त गरमी, स्वच्छ हवा का अभाव, और चिन्ता भी निद्रा नहीं लाती हैं कविवर गिरिधर दासजी ने कैसा अच्छा कहा है।

"वे नर कैसे जियें जाहि तन व्यापै चिन्ता।"

रात्रि का समय सोने के लिये अति उत्तम है क्योंकि रात्रि में कुछ ठंढक हो जाती है और नींद भी अच्छी आती है दिन में सूर्य्य की गरमी से अच्छी नींद नहीं आती और दिन का सोना अच्छा भी नहीं होता है। जो लोग दिन में सोते हैं वे रात्रि में अच्छी तरह नहीं सो सकते। कभी कभी दिन में कठिन परिश्रम के बाद ज़रा झपकी लेलेना बुरा नहीं है ख़ास कर गरमी के दिनों में।

बहुत से लोगों का स्वभाव पड़ जाता है कि बिना मुंह ढांके नहीं सो सकते। ऐसा करना स्वास्थ्य के लिये बहुत बुरा है।

क्योंकि ऐसा करने से वही हवा बार बार सांस लेना पड़ती है जोकि अति नाशकारी है। ऐसे लोग बहुत जल्द हृदय रोग से ग्रसित हो जाते हैं। कोई कोई कुत्ते बिल्ली के ऐसे शौकीन होते हैं कि उनको अपने साथ बिस्तर में सुलाते हैं ऐसे लोग भी हवा को विषैला बनाते हैं। कुत्ते के प्रेम में अपना प्राण खो बैठते हैं।

सारांश यह है कि मनुष्य के लिये विश्राम और निद्रा वैसाही

आवश्यक हैं जैसे कि भोजन करना, जो लोग इन पर ध्यान नहीं देते वे प्रकृति से उचित दंड पाते हैं।

"भारती भवन"

(श्रीयु० गोपालनारायण सिंह लिखित)

हमारे देश में मन्दिरों की बहुतायत है। बड़े २ नगरों की बात जाने दीजिये, छोटे गावों में भी ऊँचे पक्के और सुन्दर देवालय देखने में आते हैं। उन में प्राय: विरलेही ऐसे हैं जिनकी कुछ देख रेख भी होती हो, और उनके कंगूरों और छज्जों में दिन को कबूतर और जंगली तोते तथा रात को उल्लूक और गिद्ड़ बसेरा लगाया करते हैं। आज के दिन लंडन और न्यूयोर्क का कौन बात चलावे कलकत्ते और बम्बई में भी जब बैठने की एक मूठ जगह नहीं मिलती फिर हम इन अच्छे भवनों का क्यों न कोई उपयोग ढूँढ़ें तथा अपने पूर्वजों के धर्मार्थ बनाये मन्दिरों में सभा समाज वा सम्मेलन इत्यादि करके उन्हें सफलोद्देश करें। पश्चिमी शिक्षा ने मुझे मन्दिरस्थित मूर्तियों से भलेही पराङ्गमुख कर दिया हो, उसके घण्टा नाद सुनकर, उसके पुरोहितों का स्मरण कर मुझे भलेही जूड़ी आती हो पर मन्दिरों में चारजने एकत्रित होकर धार्मिक चर्चा वा विद्याव्यसन करना भी क्या किसी को असंगत बूझ पड़ता है! मन्दिरों में स्तोत्र पाठ, या रामायण पाठ, कथा इत्यादि कहने की विधि प्रचलित ही है वहां सहज ही में हम साहित्य काव्य का प्रसंग भी छेड़ सकते हैं। मतमतांतरों का निर्णय, सामायिक विचारों की समालोचना भी हम विना किसी आपत्ति के वहां कर सके हैं। जहां आज गंजेड़ियों का "वम रांक कर" और भंगेड़ियों का "जो न पिये भंग की कली, उस लड़के से लड़की भली" सुनने में आते हैं वहां यदि हमारे नवयुवकों में कुछ उत्साह और उद्योग हो तो बात की बात में जैमिनी और बादरायण, माधव और शंकर की विविध दार्शनिक समस्यायें गूंजने लगें।

लगभग २५०० वर्ष हुए प्राचीन यूनान की राजधानी "एथेन्स" में "एथीनियम" नाम का सुप्रसिद्ध मन्दिर था, उस में "मिनर्वा

धा एथेनी देवी की मूर्ति प्रतिष्ठित थी। वहां मिनर्वा की पूजा आराधना तो होता ही था वरन उसकी विशेषता यह थी कि वहां सारे एथेन्स की विद्वन्मण्डली समय २ पर आ कर अपनी विद्या का परिचय दे जाती थी। इससे यह नहीं मतलब है कि वे पण्डित केवल अपनी ख्याति ही के लिये इकट्ठे होते हों वा अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने के अभिप्राय से कलह-कारक वाक युद्ध करते हों। उनका इसमें एकमात्र उद्देश जन साधारण में सत्य और विद्या का प्रचार करना था।

जो अच्छे कवि थे वे अपनी मनोहारिणी कविता, जो नाटककार थे वे अपनी करुणारस पूर्ण रचनायें जो इतिहास वेत्ता थे वे अपने गवेषणा पूर्ण लेख तथा जो बड़े यात्री थे वे अपने भ्रमण की रोचक कथायें वहां के लोगों को सुनाया करते थे मन्दिर के मण्डप के सामने श्रोताओं की ख़ूब भीड़ लगती थी। उस समय मन्दिर के ड्योढ़ी (Porch) में खड़े हुए पण्डित गण बारी २ से अपने हस्तलिखित ग्रन्थों का मुख्य अंश पढ़ पढ़ कर जनसमुदाय की ज्ञानवृद्धि में योग देते थे। अच्छे व्याख्यान दाता वहां अनेक विषयों पर व्याख्यान देते और दार्शनिक पण्डितगण बहुकाल तक खड़े २ वहां अपने मत की पुष्टि किया करते थे। कवि वा ग्रन्थकार की रचनायें स्वयं उनके मुख से सुनकर लोग उसके अभिप्राय को अनायास हृदयाङ्गम कर सक्ते थे। उसका प्रभाव भी कुछ और ही होता था। देश का महादरिद्र पुरुष भी बे दाम कौड़ी के वहां अपनी विद्या पिपासा बुझाता था। आज के तरह छुद्र २ पुस्तकों के भी सत्वाधिकार की रक्षा करने वाले वहां नहीं खड़े होते थे। विद्या की "सदाव्रत" सभी जिज्ञासु के लिये खुली रहती थी इसका शुभ परिणाम यह हुआ कि वहां के पण्डितों ने क्रमशः अपनी रचनाओं की ओर देश वासियों की रुचि वा अरुचि देखकर अपने दोष सुधारें और त्रुटियां दूर की और अन्त में हम लोगों के लिये ऐसे अनुपम ग्रन्थ छोड़ गये जिन्हें देखकर आज भी संसार को विस्मित होना पड़ता है। एथेन्स वासियों में भी इसी प्रथा का प्रतिफल रूप ऐसा विद्या व्यसन बढ़ा कि वह अब भी सब राष्ट्रों में आदर्श माना जाता है। जगत के इतिहास में कोई ऐसा युग नहीं आया जब एथेन्स के बराबर देश का देश ऐसी

उच्च कक्षा की शिक्षा उपभोग करता हो तथा उसकी प्रजा एथीनिअन्स की भांति सुविज्ञ, उदार और सभ्य हों । यदि धर्म, न्याय और सद् व्यवहार की वास्तव में नींव विद्या है तो हमें एथेन्स के इस विषय में अवश्य अनुकरण करना चाहिये।

हमारे यहां भी अगणित मन्दिर सूने पड़े हैं एक नहीं हम सहस्रों Atheneum वा भारती भवन खोल सक्ते हैं । विघ्न क्या है? जगह की हमें कमी नहीं, पण्डितों का किसी प्रकार अभाव नहीं। हां अब भी हम यदि परस्पर का विरोध और वैमनस्य न त्यागेंगे और देश में अनिवार्य शिक्षा फैलाने का यत्न न करेंगे तो अवश्य निराशा होगी।

अभागिनी अम्बा ।

(श्रीयुत हरिदास माणिक लिखित)

१—किसी समय काशी नरेश ने एक बड़ा स्वयम्वर किया। उनकी तीन कन्यायें अम्बा, अम्बिका और अम्बालिका परम रूपवती थीं। उनके रूप की प्रशंसा चारों ओर फैल रही थी। जब भीष्म ने सुना कि काशी नरेश के यहां स्वयम्वर होने वाला है तब उन्हों ने भी सत्यवती पुत्र विचित्रवीर्य और चित्रांगद के लिए कन्या पाने की इच्छा से काशी गमन किया। काशी में अनेक देशों से राजा लोग आये थे। उन तीन कन्यायों को पाने के लिये बल तथा पराक्रम ही था। भीष्म ने इसको उत्तम अवसर जान सब नृपतिगण को ललकारा। मेरे आवाहन से समस्त नृपतिगण मेरी ओर झुके। मैंने सब को क्रमशः पराजित किया और उन तीन कुमारियों को रथ पर बैठा कर राजावों को धिक्कार कर कहा "हे राजा लोगो शान्तनुनन्दन भीष्म कन्यायों को हरण करता है इससे तुम लोग परम शक्ति के सहित उनको छुड़ाने का यत्न करो। हे नृपतियो तुम लोगों की आशा रहते पर भी मैं सब के सम्मुख ही इन कन्यायों को बलपूर्वक हरण किये लिये जाता हूं।" भीष्म के इन बचनों से सब राजागण क्रोधित हो भीष्म को मारने दौड़े पर जैसे इन्द्र दानवों का नाश करता है उसी प्रकार भीष्म ने सब का संहार किया। सब को हराने के

बाद भीष्म उन तीन कन्यायों को लेकर सत्यवती के सम्मुख लाकर उपस्थित हुए और हाथ जोड़ कर कहा—"हे तात! मैंने सब राजावों को जीत विचित्र वीर्य के निमित्त काशी राज की इन तीन कन्यावों को लाया हूं। पराक्रम ही इनका प्रण था, इसी से मैं अपने बाहुबल से सब राजावों को जीत कर इनको लाया हूं।" तदनन्तर सत्यवती ने आल्हादित हो आशिर्वाद दिया और अपने पुत्रों के विवाह की तैय्यारी करने लगी। विवाह की सब तैय्यारी हो चुकने पर जेष्ठी कन्या अम्बा ने हाथ जोड़ कर नम्रभाव से कहा-'हे भीष्म तुम सब शास्त्रों को जानने वाले और धर्मात्मा हो, इससे मेरे धर्म्म युक्त बचनों को सुन कर उनकी रक्षा करनी तुमको उचित है। पहिले पहल मैंने शाल्वपति ही को मन हीं मन अपना वर निश्चय किया था और उन्होंने भी एकान्त स्थान पर मुझे पाने की अभिलाषा की थी। हे राजन्! भीष्म, इससे तुम कौरवों के कुल में उत्पन्न होकर किस प्रकार से धर्म को अतिक्रम कर सकते हो? दूसरे की अभिलाषा करने वाली कामिनी को तुम कैसे अपने घर में रख सकते हो। हे महाबाहो! बुद्धि से इस विषय को अच्छी प्रकार से विचार कर जैसा उचित हो, वैसा ही कीजिये। हे राजेन्द्र! यह शाल्व राज अवश्य ही मेरी बाट जोहता होगा। हे भीष्म! इसकारण मुझे वहां जाने की आज्ञा दो। हे महाबाहो! मेरे ऊपर कृपा कीजिये मैंने सुना है, आप पृथ्वी में सत्यव्रत (ब्रह्मचारी) करके विख्यात् हैं"

भीष्म पितामह ने अपने विचार शील मन्त्रियों से सम्मति ले कर अम्बा को शाल्वराज के यहां जाने की अनुमति दे दी। अस्तु अम्बा बूढ़े ब्राह्मण और दासियों से रक्षित शाल्वराज के नगर की ओर चली। और कुछ दिनों में वहां पहुंच कर एक दिन सभा में कहा-"हे महाबुद्धिमान! मैं तुम्हारे निमित्त यहां पर आई हूं। हे राजेन्द्र अपनी पुरानी प्रतिज्ञा स्मरण करो।" इस पर शाल्वराज ने कहा—"हे सुन्दरी! तुम अन्य पूर्वा हो इसकारण मैं तुमको अपनी भार्य्या बनाने की अभिलाषा नहीं कर सकता हूं। हे भद्रे तुम फिर भीष्म के समीप जावो, भीष्म ने तुमको बलपूर्वक ग्रहण किया था, इससे अब मैं तुम से विवाह करने की इच्छा नहीं करता हूं। भीष्म ने जब सब राजावों को जीत कर हाथ पकड़ के

तुम्हें हरण किया था, उस समय तुमने उनके विलक्षण प्रीति की थी, हे सुन्दरी इससे मैं अन्य पूर्वा स्त्री को अपनी भार्या नहीं कर सकता हूं। शास्त्र और धर्म को जानने वाले मेरे समान राजा दूसरे की ग्रहण की हुई स्त्री को किस प्रकार से अपने घर में रख सकता है। इससे भद्रे तुम्हारी जहां इच्छा हो वहां गमन करो। शाल्वराज से ऐसा उत्तर पाकर अम्बा ने कहा—हे राजेन्द्र आपके मुख से ऐसे वचन शोभा नहीं पाते हैं आप जो कुछ कह रहे हैं वह किसी प्रकार से सत्य नहीं है। भीष्म के हाथ में हरण किये जाने पर मैंने कभी उनसे प्रीति नहीं की थी। भीष्म ने जिस समय सब राजाओं को जीत कर बलपूर्वक मुझको ग्रहण किया उस समय मैं रोदन करती थी। हे शाल्वराज! इससे आप इस दासी निरापराधिनी बाला को ग्रहण करें। देखो भले लोगों को त्यागना धर्म के विरुद्ध है। मैं युद्ध से अपराजीत गंगानन्दन भीष्म से बारम्बार अपने मनोरथों को निवेदन करके उनकी आज्ञा के अनुसार ही यहां पर आई हूं। हे राजेन्द्र! मैंने सुना है कि वह महाबाहु भीष्म स्वयम मेरी इच्छा नहीं करते थे, अपने भ्राताओं के निमित्त ही उन्होंने ऐसा किया था। भीष्म ने अम्बालिका और अम्बिका का विवाह अपने दो भ्राताओं से कर दिया और मुझे मेरी प्रार्थना पर छोड़ दिया। हे शाल्वाधिपति! तुम्हारे अतिरिक्त मैं और किसी वर की इच्छा नहीं करती हूं। हे राजन्! मैं पहिले दूसरे की हो कर तुम्हारे समीप नहीं आई हूं, यह मैं अपनी आत्मा की शपथ करके कहती हूं। हे प्रजानाथ! इससे दूसरे की इच्छा न करने वाली स्वयं उपस्थित हुई, मुझ कुमारी को आप ग्रहण करें।" अम्बा की इतनी प्रार्थना पर भी शाल्वराज ने टुक भी ध्यान न दिया वरन् केंचुली छोड़नेवाले सर्प की नाईं उसे परित्याग कर दिया। अम्बा ने फिर भी बहुत विन्ती किया पर शाल्वराज ने कुछ भी न सुना। अन्त में निराश हो अम्बा यह कहती हुई चली गई कि—"हे राजन्! तुमने मुझे परित्याग किया, पर मैं जहां २ जाऊंगी वहां पर ही साधु पुरुष मेरी रक्षा करेंगे।"

नगर से बाहर होकर अम्बा भांति २ की कल्पाना मन में करने लगी। उसने मनहीं मन कहा-"हा! पृथ्वी में मेरे समान भाग्यहीन राजपुत्री और कोई भी नहीं है; मैं अपने बन्धु बान्धवों से पृथक

हुई हूं, और शाल्व ने भी मेरा परित्याग किया है । हा ! अब हस्तिनापुर को जाने का साहस नहीं होता है, क्योंकि शाल्व राजके निमित्त भीष्मसे विदा होकर उनकी आज्ञा लेकर यहां आई हूं । इस से अपनी निन्दा करूं वा दुष्ट भीष्म काही तिरस्कार करूं वा जिन्होंने मेरा स्वयम्बर किया था उस मूढ़ पिताही की निन्दा करूं ?" इसी प्रकार नाना प्रकार की तर्कना वितर्कना करती हुई अम्बा रुदन करने लगी उसने फिर मन में सोचा—यह सब कर्मों का दोष है क्योंकि उस दारुण संग्राम के उपस्थित होने पर मैं भीष्म के रथ से उतर कर शाल्व राजके रथ पर क्यों न चली गई ? हा ! हा ! इस समय मूढा की भांति मैं उसी बुद्धि हीनता का फल पा रही हूं। जिसकी दुष्ट नीति से मैं इस भारी विपदमें पड़ी हूं उसे धिक्कार है; भीष्म को भी धिक्कार है जिसने पराक्रम का प्रण करके मुझे वेश्या की भांति हरण किया । उस मन्द बुद्धि मूढ़ पिता को और मुझको भी धिक्कार है । शाल्वराज और विधाता को भी धिक्कार है । मनुष्य अपने प्रारब्ध के अनुसार फल पाता है, यह ठीक है; परन्तु शान्तनु कुल भीष्म ही इस विपद का मूल कारण है । इससे चाहे तपस्या से हो अथवा युद्ध से हो सके मैं किसी न किसी प्रकार अवश्य बदला लूंगी ।" इसी प्रकार विलाप करती हुई अम्बा एक तपोवन में पहुंची जहां कतिपय ऋषि बालक और पुरुष अपने २ तप कर्मों में लीन थे । ऋषियों ने इस कन्या को आश्रय दिया और उसका सारा वृतान्त पूछा । अम्बा ने अपने हरण का सारा वृतान्त कह सुनाया जिसपर महातपस्वी शैखावत मुनि को दया आई । शैखावत ऋषि ने कहा हे भद्रे ! ऐसे विकट समय भला ऋषिगण तुम्हें किस प्रकार की सहायता दे सकते हैं । अम्बा ने कहा-"हे ऋषि मुनियो टुक मेरी ओर दृष्टि डालो और हमारी इस हीनावस्था पर विचार करो । मैं प्रव्रज्या धर्मको ग्रहण करूगी । मैंने मोह में पड़कर पूर्व जन्म में जो पाप किया था उसी का फल भोग रही हूं । इसमें कुछभी सन्देह नहीं है । हे पाप रहित तापस वृन्द अब पुनः बन्धु बान्धवों के बीच गमन करने की इच्छा नहीं होती है । जब शाल्व राज ने भी मुझे परित्याग की तब क्या । अब संसार मुझे सूना जान पड़ता है । मैं शुद्ध हृदय से कहती हूं कि सिवाय शाल्वराज के मैंने और किसी वर की इच्छा अपने मन में नहीं की थी । हे

देव तुल्य ऋषियो मुझपर कृपा करो और दुष्ट भीष्म के मारने का उपाय मुझे बतावो, क्योंकि वही दुष्ट मेरे सब दुःखों का कारण है। हे ऋषि लोगो मैं इस कार्य के लिये आपका जन्म पर्यन्त ऋणी रहूंगी"। अम्बा की इस प्रार्थना पर ऋषि गण वृद्ध ब्राह्मणों और ऋषियों से उपाय पूछने में प्रवृत हुए ।

तदनन्तर विचारशील ब्राह्मणों और ऋषियों ने इस पर विचार किया। किसी ने कहा इसे अपने पिता के ही पास जाना चाहिये किसी ने कहा कि इसे शाल्वराज के पास पुनः जाना चाहिये। अनेक ऋषियों ने सम्मति दी कि पिता वा पतिही नारीके लिए गति-स्वरूप है इस कारण हे भद्रे ! तुम यातो अपने पिता काशीराज के पास जावो अथवा शाल्वाधिपति के यहां जाकर एक वार फिर उसे समझाने का प्रयत्न करो। वहां पर कल्याण युक्त और सब गुणों से भूषित होकर तुम परम सुख से वास करोगी। हे भाविनी! तुम स्वभावही से राजपुत्री हो उसपर भी सुकुमारी कन्या हो, इस कारण तपस्या तुम्हारे लिए उपयुक्त न होगी। तपस्या करने में नाना प्रकारके कष्ट भोगने पड़ते हैं। तदनन्तर दूसरे ऋषि ने भी समझाकर कहा हे भद्रे ! तुम इस भयंकर वनमें रहने की इच्छा मत करो क्योंकि तुम्हारी रूप प्रशंसा सुनकर राजालोग तुम्हें यहां से बलपूर्वक रनिवास में लेजाने की प्रयत्न करेंगे। हे अभागिनी अम्बा तुम अपने पिताके घर जावो।" इसको सुनकर अम्बा ने कहा-हे तपस्वी लोगों ! आपका कल्याण हो,मैं फिर काशी नगरी में अपने पिता के पास नहीं जा सकती, ऐसा करने से बन्धु बान्धवों में अवश्य ही अपमान की पात्री हूंगी। बालक अवस्था में बहुत दिन तक पिताके घर में वास किया था इस समय अब वहां पर न जाऊंगी। अब मैं तपस्वियों से रक्षित होकर तप करने की अभिलाषा करती हूं। इस प्रकार अनेकवादानुवाद हो रहा था कि तपस्वी होत्रवाहन वहां पर आ पहुंचे। होत्रवाहन ने भी उस कन्या का पूर्ण विवरण सुना और सुनकर उसका बयान सोचने लगे। उन्होंने अम्बा को सान्त्वना वाक्यों से कहा-हे भद्रे ! तुम पिता के घर मत जावो मैं तुम्हारा पितामह (नाना) हूं इससे मैं ही तुम्हारे दुःख के दूर करने का उपाय ढूढूँगा। हे पुत्री, तुम मेरे संग रहो, तुम जिस प्रकार से तन क्षीण हो रही हो इससे बोध होता है, कि तुम्हारा

अन्तःकरण दुःख के मारे पूर्ण हो रहा है । इससे मेरे वचन के अनुसार तुम तपस्वियों में श्रेष्ठ परशुराम के समीप गमन करो । वह तुम्हारे इस परम सन्ताप को दूर करेंगे । यदि भीष्म उनकी बात न मानेगा तो वे अवश्य उसका बध करेंगे । इससे तुम इसी प्रलय काल की अग्नि के समान तेजस्वी परशुराम के समीप गमन करो । वह महाबलशाली तपस्वी तुम्हारा अवश्य दुःख दूर करेंगे" । अपने पितामह की बातों को सुनकर अम्बा ने कहा "हे पितामह ! वह परशुराम कहां पर मुझे मिलेंगे । हे महात्मा ! आपने इस उपाय को बताकर मेरा बड़ा उपकार किया ।" तत्पश्चात् होत्रवाहन ने कहा "हे पुत्री तुम परशुराम को महेन्द्र गिरि पर निवास करते हुऐ पावोगी, वे वहां पर ध्यानावस्थित तपस्या करते हैं । वीरवर जामदग्निपुत्र परशुराम मेरे सखा और प्रीति पात्र हैं इससे मेरा नाम लेनेही से वे तुम्हारा कार्य कर देंगे" ।

महात्मा होत्रवाहन कन्या से इसी प्रकार की बातें कर ही रहे थे कि परशुराम का अकृत व्रण नामक शिष्य वहां पर आन पहुंचे । सब ऋषि मुनियों ने खड़े होकर उनको प्रणाम किया और यथा २ स्थान पर बैठकर भांति २ की कथा कहने लगे । अवसर पाकर होत्रवाहन ने पूछा, हे ऋषिराज ! इस समय आपके गुरु का दर्शन कहां पर होगा । इस पर अकृतव्रण ने उत्तर दिया, हे राजर्षि होत्रवाहन हमारे गुरु तुम्हें निरन्तर स्मरण किया करते हैं, वे कदाचित इसी स्थान पर तुमसे मिलने आवेंगे । आप टुक धीरज धरें वे यहां आही पहुंचते हैं ।" फिर कन्या की ओर देख कर कहा-"हे राजर्षि ! यह किसकी कन्या है, यह यहां वनमें किस प्रकार आई है ।" होत्रवाहन ने उत्तर दिया-"हे विभो ! यह मेरी दोहिती काशीराज की पुत्री और इसका नाम अम्बा है । हे तपोधन यह काशिराज की जेठी कन्या है । अम्बिका और अम्बालिका नामी दो छोटी बहिनों के साथ इसका स्वयम्वर हुआ था, उसमें पृथ्वी के नृपति इसे लेने के लिए उपस्थित हुए थे । उस समय स्वयम्वर में भीष्म पितामह भी उपस्थित थे । उन्होंने इन तीनों कन्याओं का हरण किया और हस्तिनापुर ले आये । तत्पश्चात् दो छोटी कन्याओं का विवाह सत्यवती पुत्र विचित्र वीर्य और चित्रांगद से कर दिया और जेठी इस अम्बा को इसकी प्रार्थना पर छोड़ दिया । यह शाल्वराज को वचन

दे चुकी थी पर ईर्ष्या के कारण से शाल्वराज इसे स्वीकार नहीं करता है। यह कन्या मारे लज्जा के न तो अपने पिता के घर जाती है और न शाल्व ही के यहां। यह अब इसी बन में तपस्या के निमित्त रहैगी।" अम्बा की इस हृदय विदारक विवरण को सुनकर अकृतव्रण का हृदय भी पिघल गया। ततूपश्चात अम्बा ने कहा-हे द्विज उत्तम यह राजर्षि होत्रवाहन सब ठीक कह रहे हैं इसमें नाम मात्र भी शंका नहीं है। हे महामुनि! लज्जा और अपमान के भय से मेरा उत्साह पिता के गृह जाने का नहीं करता। मैं भीष्म को मारने के लिये इसी तपोवन में तपस्या करूंगी और कार्य्य साधन में व्यग्र हो व्रत धारण कर अपना प्राण त्याग दूंगी। आप हमें उपाय बताइये जिससे तेजपुत्र परशुराम से भेंट हो" इसपर अकृतव्रण ने कहा-हे भद्रे! तुम शाल्व से बिवाह करना चाहती हो या भीष्म को रण में पराजित हुआ देखा चाहती हो। महात्मा परशुराम अवश्य ही तुम्हारे इच्छित विचार को पूर्ण करने में समर्थ होंगे वे शाल्व को भी राजी कर सकते हैं और भीष्म को भी हरा सकते हैं। हे सुन्दरि! तुम दोनों में से एक निर्धारित कर कहो उसका वैसा उपाय किया जाय। इसके बाद अम्बा सोचने लगी और अन्य ऋषिगण भी परस्पर इस विषय पर तर्क वितर्क करने लगे।

अंबा ने विचार कर उत्तर दिया-"हे भगवन्! भीष्म ने विना जाने ही मुझको हरण किया मेरा मन जो शाल्वपति के संग था इसको वह नहीं जानता था। हे ऋषिराज! इसपर आप भली भांति विचार करिये उसी का विधान किया जाय। कुरु शार्दूल भीष्म, वा शाल्वपति के विषय में जो उचित हो वही करना चाहिये। हे भगवन्! मैंने अपने दुख का मूल कारण कह सुनाया है, इस समय युक्ति के अनुसार जैसा करना उचित होवे वैसाही आप लोग करिये। अकृतव्रण ने कहा हे भद्रे! तुमने धर्म की ओर लक्ष्य करके जो यह बचन कहा है वह ठीक है, इस विषय में मेरा विचार सुनो। हे भीरु! यदि भीष्म तुम्हें बल द्वारा हस्तिनापुर न लेजाते, तो शाल्व परशुराम की आज्ञा से तुम्हें भीजक के ऊपर धारण करते। हे भाविनि! भीष्म ने सब राजावों को जीत कर तुम्हें हरण किया है, इस कारण तुम्हारे ऊपर शाल्वराज को सन्देह हुआ है, हे कल्याणि! भीष्म पुरुषमानी और जय से युक्त है इससे उसीके साथ शत्रुता करना उचित है।" अम्बा ने कहा हे भगवन्! मेरी इच्छा भी यही थी,

कि येन केन प्रकारेण भीष्म का नाश करना चाहिए। जिस प्रकार मैं दुःखी हुई हूं उसी प्रकार मेरे तिरस्कार करने वाले हों। जिसको दोषी निरधारित करिये उसी का शासन करिये।" ऋषिगणों को इस विषय पर विचार करते २ कई दिवस व्यतीत हो गये। कुछ दिनों के बाद परशुराम स्वयं वहां उपस्थित हुए, सब ऋषियों ने उनका सन्मान किया। विविध भांति से पूजित परशुराम ने आसन ग्रहण किया और नाना प्रकार की कथा सुनाने लगे। तत्पश्चात् होत्रवाहन ने अवसर पाकर अम्बा का वृतान्त कहा। परशुराम ने कहा—हे राजपुत्री तुम जैसी इस राजसत्तम की प्रिय हो मुझे भी वैसीही हो। इससे जो कुछ दुख हो निर्भय होकर कहो। अम्बाने हाथ जोड़कर कहा—"हे भगवन्! हे महाव्रत आज मैं तुम्हारे शरणागत हुई हूं, इससे महा घोर शोक रूपी कीचड़ में फंसी हुई नौका की भांति तुम मेरा उद्धार करो।" कुछ सोच महात्मा परशुराम ने कहा—"हे सुन्दरी तुम्हारा क्या कार्य है उसे कहो।" परशुराम के मुख से ऐसे वचन सुन कर अम्बा ने अपना पूर्ण वृतान्त कह सुनाया। जिस पर परशुराम ने कहा—"हे भाविनि! मैं भीष्म के निकट अपना सन्देशा भेजूंगा वह अवश्य मेरे वचन को सुन कर स्वीकार करेगा। यदि वह मेरी बातों की अवज्ञा करेगा तो वह उसका समुचित दण्ड पावेगा। मैं उसको परिवार सहित भस्म कर दूंगा और यदि तुम्हारी शाल्वपति से फिर भी व्याह की इच्छा हो तो मैं उसे विवाह के निमित्त उपस्थित करूं"। अम्बा बोली "हे भृगुनन्दन! शाल्वराज के विषय में मेरे पहिले संकल्प को सुनकर ही भीष्म ने मेरा परित्याग किया था। मैंने शाल्वराज से बहुत विन्ती पूर्वक ग्रहण करने के लिये प्रार्थना किया पर उन्होंने मेरी ओर नाममात्र भी ध्यान नहीं दिया। इससे हे भृगुनन्दन! जैसा आप उचित समझें वैसा निर्णय कर व्यवहार करिये। मेरे विचार में महाव्रत भीष्म ही इस विपद का कारण है, क्योंकि बलपूर्वक मुझे ग्रहण करके इन्होंने अपने वश में किया था, इससे हे महा बाहो! जिनके निमित्त मैंने ऐसा दुख पाया है उसी भीष्म ही को आप युद्ध में नष्ट कीजिये। हे भृगुनन्दन, भीष्म अत्यन्त लोभी नीच और जय के अभिमान में भरा है इस से उसको बध करना ही ठीक है। हे विभो! जिस समय भीष्म ने मुझको हरण किया था उसी समय मेरे मन

में यह कल्पना उठी थी कि किसी न किसी प्रकार अवश्य एक दिन इस पापी चाण्डाल को बध कराऊंगी। हे महाबाहो! आप मेरी इच्छा को पूर्ण करिये और इन्द्र ने वृत्रासुर को जिस प्रकार संहार किया ठीक उसी तरह आप अभिमानी भीष्म को नष्ट करिए।" परशुराम ने कहा "हे भाविनि! शाल्व और भीष्म दोनों ही मेरे बशवर्ती हैं, पर विना ब्राह्मणों की आज्ञा के मैं शस्त्र धारण नहीं कर सकता"। अम्बा ने कहा "हे प्रभो! जिस प्रकार हो आप मेरा कार्य कर दें। अभिमानी भीष्म ही इन दुःखों का कारण है इस कारण जिस प्रकार हो उसका विनष्ट करिए"। परशुराम ने कहा "हे अम्बा तुम यदि कहो तो मैं भीष्म को बुला कर तुम्हारे पैरों पर गिरवा दूं"। अम्बा ने फिर थर थर कांपते हुए क्रोधपूर्वक कहा—"हे राम यदि तुम मेरा कार्य करना चाहते हो तो युद्ध में सिंह की भांति गर्जते हुए भीष्म को बध करो। आप ने जो कहा है उसे अब आप करिए"। अम्बा की अति नाद बाणी सुनकर अकृतव्रण ने भी कहा "हे महाबाहो! भृगुनन्दन यदि भीष्म यह कहदे कि "मैं परास्त हुआ" तब तो ठीक ही है नहीं तो आप उसके विरुद्ध शस्त्र ग्रहण करिये। आप ने पहिले प्रतिज्ञा की थी कि ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र तथा जो कोई पुरुष ब्राह्मणो का द्रोही होगा, उसे मैं विनष्ट करूंगा और भयभीत शरण आए हुए लोगों को जीते जी कभी परित्याग न करूंगा, और जो पुरुष क्षत्रिय-कुल को युद्ध में परास्त करेगा, उस तेजस्वी पुरुष का भी मैं बध करूंगा। हे भृगुनन्दन! वह कुरु कुल धुरन्धर भीष्म भी इसी प्रकार से विजयी हुआ है, इस से रण भूमि में आए हुए उसके संग युद्ध कीजिये।

अकृतव्रण की बातों को सुन कर परशुराम ने कहा—"मैं भीष्म को पराजित कर हे अम्बा तेरा कार्य अवश्य करूंगा। तूं निश्चिन्त रह"। इतना कह कर परशुराम तपस्वी उस कन्या को साथ ले कुरुक्षेत्र की ओर चले। और वहां पहुंच कर सरस्वती नदी के तीर पर विश्राम किया। तदन्तर तीसरे दिन परशुराम ने अपने आने की सूचना भीष्म को दी। भीष्म ने तुरन्त ही, एक दास और ब्रह्मचारी, ऋत्विक् और पुरोहित इत्यादि लोगों को लेकर गुरु की पूजा के निमित्त उपस्थित हुए। परशुराम उनकी पूजा ग्रहण की और भीष्म से क्रोध पूर्वक कहा— "हे भीष्म तुमने काम रहित होकर भी कैसे

बुद्धि ग्रहण की है, इस काशीराज कन्या के स्वयम्वर के समय में तुमने इसे हरण किया और फिर किस कारण एक क्षुद्र पदार्थ की नाईं इसका परित्याग किया? तुम्हारे परित्याग करनेही से यह राजकुमारी निज धर्म से भ्रष्ट हो रही है, क्योंकि जब तुमने स्पर्श किया है, तब कौन दूसरा पुरुष इसे ग्रहण कर सकता है? हे भारत। तुमने इसे हरण किया था इसी निमित्त शाल्वने इसका अपने गृह में नहीं लिया। इससे अब मेरी आज्ञा से तुम इसका पाणि ग्रहण करो। हे पुरुषसिहं! यह राजपुत्री निज धर्म का लाभ उठावे। हे भीष्म! इस कन्या का ऐसा अपमान करना उचित न था"। परशुराम की बातों को सुन कर भीष्म ने कहा—"मेरे भ्राता किसी तरह अब इसका पाणि ग्रहण नहीं कर सकते। इसने जाते समय कहा था कि "मैं शाल्व की" इस पर मैंने इसे छोड़ दिया पर अब मैं किस प्रकार दूसरे की कन्या को ग्रहण कर सकता हूं। इसने सोमनगर में जाकर अपने भाग की परीक्षा की इससे वह दुखी हो वा सुखी मैं इसका उत्तर दाता नहीं हूं। मैं साम दाम दण्ड भेद तथा लोभ और मोह माया से अपना क्षत्रिय-धर्म नहीं त्याग सकता"। इस पर परशुराम ने लाल २ नेत्र कर के कहा-"यदि तुम मेरी बातों को नहीं मानोगे तो मैं अभी तुम्हारा संहार करूंगा।" भीष्म ने हाथ जोड़ कर नम्र भाव से कहा—"हे भृगुनन्दन! आपके क्रोध का कारण क्या है बाल्यावस्था में आपने मुझे चार प्रकार की धनुर्विद्या में शिक्षा दी थी। मैं आप का शिष्य हूं"। तदन्तर परशुराम ने अपना फरसा सम्हाल कर कहा—"हे कुरुनन्दन! तुम मुझे गुरु भी समझते हो और मेरी आज्ञा भी नहीं मानते हो। तुमको इस कन्या को ग्रहण करना ही पड़ेगा। तुम्हारे ही हरण से अब इसे वर नहीं प्राप्त होता है। शाल्व ने भांति २ का तिरस्कार कर निकाल दिया अब तुम्हीं इसकी रक्षा करो"।

परशुराम के भांति २ समझाने पर भी भीष्म ने न माना वरन् प्रत्युत्तर में कहा—हे ब्रह्मर्षि तुम निरर्थक श्रम क्यों करते हो? यह किसी प्रकार से भी नहीं हो सकता। हे जामदग्नि परशुराम! तुम मेरे पुराने गुरू हो, इस ही से मैं तुम से विनय कर रहा हूं। हे भगवन्! इसको मैंने पहिले ही त्याग दिया है, स्त्रियों में जो सब दोष अनर्थ के मूल होते हैं, उसको जान कर भी कौन पुरुष साँपिनी की

भांति दूसरे पुरुष में आसक्त हुई स्त्री को अपने घर में रख सकता है ? हे महाव्रत करने वाले मैं इन्द्र के भय से भी धर्म को नहीं परित्याग कर सकता हूं इससे आप मेरे ऊपर प्रसन्न होइये। अथवा तुम्हें जैसा करना उचित होवे उसे शीघ्रही पूर्ण करो। हे विभो ! हे पाप रहित पुराणों में महात्मा मरु के कहे हुए वचन कि "कर्म को जानने वाले, बुरे मार्ग से गमन करने वाले अभिमान से युक्त गुरु को भी परित्याग करना उचित है। आप मेरे गुरु हैं, इसी कारण प्रेम वश होकर मैं बार बार तुम्हारा सन्मान करता हूं, परन्तु आप गुरू के धर्मों को नहीं जानते हो इस कारण मैं युद्ध करने के लिये तैयार हूं। गुरू और विशेष कर तपोवृद्ध ब्राह्मण को युद्ध में नहीं मार सकता हूं यह विचार कर मैं क्षमा करता हूं परन्तु धर्मशास्त्र में लिखा है कि जो पुरुष ब्राह्मण को दुष्ट क्षत्रिय की भांति शस्त्र लिये हुए उद्यत और अपराजित तथा युद्ध में प्रवृत हुए देख कर मारता है, उसे ब्रह्म हत्या का पाप नहीं लगता। हे तपोधन ! मैं क्षत्रिय धर्म में निवास करने वाला क्षत्रिय हूं। जो पुरुष जिसके संग जैसा आचरण करता है उसके सङ्ग वैसा आचरण करने में पाप नहीं होता। हे परशुराम! जब आप अन्याय पूर्वक युद्ध में प्रवृत होते हैं अब मैं भी अवश्य ही तुम्हारे विरुद्ध कृपाण ग्रहण करूंगा। हे तेज से युक्त महावीर वृन्द युद्ध के निमित्त आप तैय्यार होइये। हे राम जिस स्थल में सैकड़ों बाणों से पीड़ित होकर तुम मर कर पृथ्वी में सोवोगे और महा युद्ध में शस्त्रों से जल कर सब निर्जित लोगों को प्राप्त करोगे, उसी कुरु क्षेत्र में गमन करो। हे राम पहिले जिस स्थल पर तुमने पिता की शुद्धि की थी मैं भी उस स्थान पर तुमको मार कर क्षत्रिय कुल के वैर को पूर्ण करूंगा। हे अभिमानी विप्र तुम शीघ्र वहां पर गमन करो, मैं तुम्हारे घमण्ड को अवश्य ही चूर्ण विचूर्ण करूंगा। तुम जो संसार के क्षत्रियों के जीतने का घमण्ड किया करते हो उसका कारण सुनो। उस समय में भीष्म अथवा भीष्म के समान कोई क्षत्रिय पुरुष नहीं उत्पन्न हुए थे। हे तपोधन तुम इस समय केवल तृण समूह में ही प्रजलित हुए थे, परन्तु तेजस्वी क्षत्रिय अब उत्पन्न हुए हैं। आज आप का सब गर्व दूर करूंगा।"

अपने शिष्य के मुख से ऐसे भयमान उनके वचनों को सुनकर

परशुराम ने सक्रोध अपना खड़ग उठाया और भीष्मको युद्धक्षेत्र में आनेके लिये कहा तदन्तर दोनों वीर युद्ध स्थलमें पधारे, तब भीष्म ने कहा कि हे परशुराम! यदि युद्ध की इच्छा है तो कवच धारण कर रथारूढ़ होइये। तब परशुराम ने हँसते २ उत्तर दिया हे भीष्म! पृथ्वी मेरा रथ है, वेद सब उत्तम वाहन, वायु सारथी और वेद माता गायत्री, सावित्री और सरस्वती मेरे कवच हैं। हे भीष्म! मैं इन्हीं सामग्रियों से युक्त होकर घनघोर संग्राम करूंगा। यह कहकर परशुराम तीव्र बाण वृष्टि करने लगे। भीष्म ने भी उसका प्रत्युत्तर दिया और कहा हे ब्रह्मन्! तुम्हारे मर्य्यादा रहित होने पर भी मैं तुम्हारे गुरूपने को सन्मान करता हूं और धर्म-संग्रह विषय में और भी कुछ कर्त्तव्य कर्म को कहता हूं उसे सुनिये। तुम्हारे शरीर में जो वेद और अत्यन्त ही ब्राह्मणत्व है, और उस से जो तुमने तपस्या संचित की है उन सब के ऊपर मैं प्रहार नहीं करता हूं। तुमने जो क्षत्रिय धर्म का आसरा ग्रहण किया है मैं उस ही के ऊपर प्रहार करता हूँ क्योंकि शस्त्र धारण करने ही से ब्राह्मण क्षत्रिय को प्राप्त करता है। हे वीर तुम मेरे धनुष के पराक्रम और बाहुबल को देखो मैं इस उत्तम पानी में बुझाए हुये बाण से तुम्हारा कार्मुक काटता हूं। ऐसा कह कर भीष्म ने ऐसा बाण चलाया जिस से परशुराम मूर्छित होकर गिर पड़े। उनके शरीर से रक्त बहने लगा। उस समय परशुराम बल पूरित देह से ऐसे शोभित हुए जैसे धातुओं के बहने से सुमेरु पर्वत, तथा हेमन्त ऋतु के अन्त में अशोक और बसन्त ऋतु में किंशुक का फूल शोभायमान लगता है। थोड़ी देर के उपरान्त जब परशुराम की मूर्छा गई तब वे सर्पकी नाईं फुफकार मारते हुए बाण छोड़ने लगे। उन्होंने भीष्म पर ऐसे २ बाण प्रहार किये जिस से वह भी किंचित समय के लिये मूर्छित हुए। मूर्छा के बाद भीष्म ने परशुराम पर प्रहार नहीं किया। तदन्तर सूर्य भगवान पश्चिम दिशा में रक्त वर्ण धारण कर डूबने लगे, तब युद्ध बन्द कर दिया गया।

अनन्तर प्रातःकाल सूर्य के उदय होने पर फिर युद्ध आरम्भ हुआ। भीष्म प्रथम गुरु के पास जाकर नम्रभाव से बोले कि—हे गुरूजी यह धृष्ट शिष्य आप को प्रणाम करता है। आप आशिर्बाद दें जिससे युद्ध में विजय प्राप्त करूं। परशुराम ने हर्ष पूर्वक आशिर्बाद

दे कहा-" हे कुरु बीर तुम निर्भय होकर युद्ध करो । मुझे आज मालूम हो रहा है कि हमारी ही विद्या से तुम हमारा सामना कर रहे हो। हे भीष्म तुम वास्तविक सच्चे क्षत्रिय हो। भारतवर्ष में तुम्हारे ऐसा वीर विरला ही हुआ या होगा। आज अपनी सब अस्त्र विद्या हमें दिखावो। " यह कह कर परशुराम अपने रथ पर चले गये और भीष्म अपने रथ पर विराजमान हुए । अस्तु युगल पत्त से बाण वृष्टि होने लगी । इस बार घोर संग्राम हुआ । परशुराम ने इन्द्र वज्र के समान एक विचित्र शक्ति चलाई जिससे भीष्म कुछ विचले पर सम्हल कर घोर संग्राम करना आरम्भ किया । भीष्म ने भी ऐसा तीख के वाण मारा जिससे वह परशुराम बिह्वल हो रथ की एक ओर झुक गये । अकृतव्रण ने स्वस्ति पाठ कर शान्ति की फिर पूर्ववत युद्ध आरम्भ हुआ। परशुराम ने क्रोधित हो ब्रह्मास्त्र चलाया तब भीष्म ने उसके निवारणार्थ परम ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया । दोनों अस्त्रों का आकाशही में समागम हुआ तब सम्पूर्ण प्राणी अत्यन्त पीड़ित होने लगे । थोड़ी देर के बाद भीष्म ने क्रोधित हो प्रस्वापास्तु अस्त्र चलाया जिससे हा हा कार मच गया पर देवों के मना करने से उन्होंने उसे नहीं चलाया। देवों ने परशुराम और भीष्म दोनों को शस्त्र धरने के लिये कहा पर किसी ने कुछ न सुनी। भीष्म ने कहा-" मैं क्षत्री हूं; मुझ से यह कदापि नहीं हो सकता कि रण शस्त्र रख कर अपनी लोक निन्दा कराऊं । परशुराम ने भी यही उत्तर दिया । पर बहुत समझाने बुझाने से परशुराम मान गये । अस्तु युद्धोपरान्त भीष्म अपने गुरु परशुराम के पास जाकर बोले-" हे गुरु यह शिष्य आपको प्रणाम करता है, मैं आप से लज्जित हूं जो गुरुत्व का कुछ भी विचार न कर आपके विरुद्ध अस्त्र उठाया। हे प्रभो! मैं क्षमा प्रार्थी हूं। " तदन्तर परशुराम ने हंस कर कहा-" हे भीष्म इस पृथ्वी के बीच सम्पूर्ण क्षत्रियों में भी तुम्हारे समान कोई क्षत्रिय पुरुष विद्यमान नहीं है । इस युद्ध में तुमने मुझे अत्यन्त ही सन्तुष्ट किया है तुमने क्षत्रिय धर्म को पूर्ण रूप से दर्शा दिया। मेरी आत्मा अन्तःकरण से धन्यवाद देती है कि तुम्हारा यश संसार में अटल रहै। " भीष्म से ऐसा वचन कह महात्मा परशुराम ने अम्बा से कहा-" हे भाविनि ! मैंने अपने पुरुषार्थ के

अनुसार पराक्रम को प्रकाशित करके जो युद्ध किया उसे सब ने देखा ही मैंने अनेक उत्तम २ अस्त्र चलाये पर शस्त्रधारी श्रेष्ठ भीष्म को परास्त न कर सका । इससे हे भद्रे ! अब जहां इच्छा हो वहां जावो । इस पर अम्बा ने कहा–हे महात्मन् आप जो कुछ कहते हैं सब सत्य कहते हैं । यह उदार बुद्धि भीष्म वास्तव में देवताओं से भी अजय है । आपने यथा शक्ति मेरे लिये प्रयत्न किया पर यदि कार्य में फलीभूत न हुए तो इसमें आपका क्या दोष । मैं अब स्वयं इस दुराचारी भीष्म के संहार का उपाय करूंगी ।

इतना कह अम्बा एक बन में तपस्या के निमित्त चली गई । वह कन्या आश्रम मण्डल में पहुंच कर यमुना के तीर पर अलौकिक तपस्या करने लगी । उसने अहार को त्याग दिया, कृशित जटाधारिणी धूल और कीचड़ के संग २ बहने वाली, सूखी लकड़ी की भांति स्थिर होकर छः महीने वायु भक्षण करके तपस्या करती रही । फिर एक वर्ष तक यमुना जल के आसरे निराहार व्रत धारण किया; फिर केवल वृक्ष से गिरे हुए एक २ सूखे पत्तों को खाकर एक वर्ष बिताया । वह महा कोप करनेवाली तपस्विनी अपने पांव के अंगूठे के अनुभाग के बल से खड़ी होकर इसी प्रकार से बारह वर्ष तपस्या करके स्वर्ग और पृथ्वी को तपाने लगी । उसने अनेक तीर्थों की भी यात्रा की । लोगों ने उसे बहुत समुझाया कि ऐसा कठिन व्रत तू न कर पर अम्बा अपने व्रत में व्रती रही । बन के तपस्वियों ने भी उसे बहुत समुझाया पर उसने किसी की बातों पर कुछ ध्यान न दिया । ऋषियों के पूंछने पर उस कन्या ने कहा–हे तपोधन वृन्द मैं भीष्म के हाथ से ग्रहण की जाने से पति धर्म से रहित हूं; इसी से उसी के बध के निमित्त मेरी यह तपस्या है । मैं स्वर्ग पाने के लिये तपस्या नहीं करती हूं । मैं बिना गंगा-पुत्र भीष्म के मारे शान्त नहीं होऊंगी । ऋषियों ने उसे बहुत समुझाया पर उस दृढ़व्रती कन्या ने नाम मात्र भी न सुना । ऋषिगण चले गये पर वह कन्या तपस्या करती रही । अन्त में ऋषि मुनियों ने उसे बरदान दिया कि "तू फलीभूत होगी ।" तदन्तर थोड़े दिनों तक और तपस्या कर उस कन्या अम्बा ने यमुना के तीर पर बनकाष्ठों की एक सुन्दर चिता

बनाई और उसमें आग लगा कर यह कहती हुई कूद पड़ी कि मैं भीष्म के बध के निमित्त इस चिता में प्रवेश करती हूं।" यह कह कर उसने अग्नि में प्रवेश किया और देखते २ जल कर राख हो गई। धन्य है ऐसी वीरांगनावों को जो अपने व्रत में व्रती रह कर अन्त में अपने कार्य साधन कर ही लेती हैं। हा! शोक यह वही भारत भूमि है जहां ऐसे २ बीरों ने जन्म लेकर वीरों से वीर के सम्मुख अस्त्र धारण किया और अपना मनोवाञ्छित फल पाया और एक आज कल की स्त्रियां हैं जो मार्ग से जाते मृतक को देख कर घुंघुट काढ़ लेती हैं और ईर पीर मना कर मसजिद और कबरों के पास इस कारण बच्चों को लेकर खड़ी रहती हैं कि उन का दुःख दूर हो। बलिहारी है समय का हा! हम लोग कैसे हो गये सत्य है जब वीर माताएं नहीं तो वीर पुत्र कहां से हों। हा! भारत माता तेरे वे दिन फिर कब आवेंगे जब भीष्म ऐसे वीर और अम्बा ऐसी वीरांगना तेरी कोख में खेलेंगे।

मुसल्मान और भारतवर्ष।

(ले० श्रीयु० रामप्रसादजी त्रिपाठी बी० ए०)

१

अरब

हम पाठकों को सन् ७१२ के दुःखान्त नाटक का दृश्य दिखलाना चाहते हैं जिसकी कि रङ्ग भूमि सिन्ध देश है। महा भारत के युद्ध के साथ ही भारत-सौभाग्य-नाटक का पटाक्षेप हो गया था और हृदय विदारक भारत-अधःपतन नाटक का पर्दा उठ गया था। जिन्होंने इसका पहिला सीन देखा वे यह न समझ सके कि ज्यों २ पर्दे खुलते जाँयगे करुणारस परिपक्व होता जायगा। उन्हें यह नहीं मालूम हुआ कि रङ्ग भूमि आगे रक्त- रञ्जित दीख पड़ेगी। अतएव उन्होंने बड़ी बेपरवाही के साथ नाटक देखना प्रारम्भ किया और यह समझते रहे कि यह घर के झगड़े हैं और घर ही में इनका निबटेरा हो जायगा। परन्तु उनको यह शीघ्र ही ज्ञात हो गया कि उनका यह विचार भ्रम-मूलक था क्योंकि दूसरे दृश्य में उन्होंने भारत माता पर यूनानियों तथा अन्यान्य

असभ्य जातियों को कुठार चलाते देखा । अब उनके नेत्र खुलने लगे और वे समझने लगे कि वास्तव में यह नाटक साधारण कल्पित नहीं है प्रत्युत सच्चा और भया हुआ है ।

भारत माता के सुपुत्र इस तरह पर अपनी माता की दुर्दशा न देख सके और चन्द्रगुप्त और विक्रमादित्य ऐसे वीर शिरोमणि उसकी रक्षा करने को अग्रसर हुए । परन्तु स्वार्थी स्थूल बुद्धि पुत्र मूर्खता की निद्रा में ग्रस्त रहे और खेल को खेलही समझते रहे ।

इसी गम्भीर नाटक के दूसरे अङ्क का पहिला दृश्य सिन्ध देश में है आज हम पाठकों को यही सीन दिखाना चाहते हैं ।

सन् ७१२ में जबकि मुसल्मानों का अर्द्धचन्द्र संसार में फहरा रहा था और अरब जाति के वेग के आगे संसार की जातियें बहती चली जाती थीं । सिन्धु देश में ब्राह्मण राजा दाहिर राज्य करता था । भारतवर्ष के पश्चिमी भाग से अरब देश का वाणिज्य-सम्बन्ध पुराने समय से चला आता था । यहां के धन और ऐश्वर्य की कहानियें सुनकर अरब के बच्चे बहल जाते थे, वयोवृद्ध विस्मय सागर में मग्न होने लगते थे और जवान जी मसोस कर रह जाते थे । परन्तु क्या करते, मोहम्मद साहब के आने के पूर्व इनमें कोई ऐसा जातीय अथवा धार्मिक संगठन न था जिसके द्वारा वे अपनी तृष्णा को बुझाते । परन्तु प्रभावशाली मोहम्मद साहब ने अपने भुजबल और बुद्धिबल द्वारा उनकी गुह्य शक्तियों को उत्तेजित कर एक बार संसार में अरब-शक्ति ऐसी प्रबल कर दी जिसके सामने पूर्वात्य और पाश्चात्य सिंहासन कांप उठे और बड़े २ सम्राटों को शिर झुकाना पड़ा ।

इस स्थान पर विषयान्तर होने के कारण हम इस बात का निरीक्षण नहीं करते कि इस प्रबल शक्ति ने संसार-चक्र को आगे चलाया वा रोका या संसार की सभ्यता के प्रति उपकार वा अपकार किये-हम यहां पर केवल यह दिखाना चाहते हैं कि अरबवासियों ने और अरबी सभ्यता ने भारतवर्ष पर क्या प्रभाव पहुँचाया.

अरबी-प्रवाह के वेग के सन्मुख मानवी शक्तियें तो नष्ट भ्रष्ट होती और बहती चली जाती थी, उनकी विजय पताका के आगे मनुष्य-द्रोह क्षीण होता जाता था परन्तु उसमें अभी यह बल न था

कि प्रकृति का सामना कर सके और प्राकृतिक अड़चनों का उल्लंघन कर सके यही कारण था कि उत्तर-पश्चिमी मार्गों (से) से अरबवाले भारत पर आक्रमण न कर सके-

यह कहा जाता है कि ४४ हिज़्रा (सन् ६६४ ई०) में मोहालिब मुलतान तक आया और वहां से बहुत से मनुष्यों को बन्दी बना लेगया-परन्तु इस घटनाको हम नियंत्रित-आक्रमण नहीं कहसकते उपरोक्त सन् में जब कि अरब सेना ने काबुल पर आक्रमण किया था मोहालिब कतिपय सैनिकों सहित प्रधान सेना से अलाहदा होकर किसी तरह मुलतान तक आया था-किसी २ विद्वान की यह सम्मति भी है-कि वह भारतवर्ष (उत्तरीय) की अवस्था देखने को भेजा गयाथा और यहां से लौटकर उसने कुछ सन्तोष-जनक समाचार न सुनाये जिसके कारण उत्तरी-पश्चिमी मार्ग से आक्रमण करने का विचार उन्होंने छोड़ दिया।

अस्तु जो कुछ हो हम मोहालिब का कुछ सैनिकों के साथ आना अरबी आक्रमण की श्रेणी में नहीं ले जा सकते और न उस घटना का कुछ प्रभाव भारतवर्ष पर पड़ा । दूसरा खलीफा उमर (६३४-४३) जल-मार्ग से आक्रमण करने का बड़ा विरोधी था अतएव उसने एक नियंत आज्ञा प्रकाशित की जिसके द्वारा इस प्रकार के आक्रमण न हो सके । परन्तु जब खलीफा वलीद (७०५-१५) सिंहासनारूढ़ हुआ तो यह नियम तोड़ दिया गया क्योंकि फारिस के गवर्नर (राज-प्रतिनिधि) ने हिचकिचाते हुए खलीफा से भारत पर (वास्तव में सिन्ध देश पर) जल-मार्ग द्वारा आक्रमण करने की आज्ञा ले ली ।

अब क्या था द्रोह का कारण ढूँढने के लिये दूर न जाना पड़ा। दीवल बन्दरगाह में एक अरबी जहाज़ पकड़ लिया गया था क्योंकि इन जहाज़ों के आदमी वहां बड़ी लूट खसोट मचाते थे और स्त्रियों पर भी प्रायः अत्याचार किया करते थे। इस पर अरब-राजा ने क्रोध प्रकाशित किया और सिन्धु राजा दाहिर से नुक़सान पूरा करने को कहा। दीवल वास्तव में सिन्धु राज्य-मण्डलान्तर्गत न था अतएव दाहिर ने किसी प्रकार से उस क्षति का ज़िम्मेदार होने से इन्कार किया परन्तु वहां तो कुछ और ही बड़े २ विचार ठन रहे थे वहां न्याय अन्याय का विचार क्या था मानों जिसकी तलवार

उसके सब हैं तावेदार" ही उसका राजनैतिक सिद्धान्त (मोटो) था।

बस सन् ७१२ ई० में हज्जाज ने अपने भतीजे (इलियट साहब के कथनानुसार बान्धव और जामाता) को छ सहस्र मनुष्यों सहित सिन्ध विजय करने के निमित्त भेज दिया। क़ासिम की अवस्था अभी सत्रह वर्ष ही की थी। युवा के नस नस में गर्म रक्त बहता था अतएव उसने विजय प्राप्त करने की दृढ़ प्रतिज्ञा करली और अपनी सेना को दीवल की दीवलों के सन्मुख सुसज्जित कर दिया। दीवल में एक विशाल देव मन्दिर था जिसके चारों ओर पत्थर की बड़ी मजबूत दीवलें थीं। इस स्थान में ब्राह्मण ही नहीं रहते थे वरन् क्षत्रिय रजपूत वीरों की यहां एक दृढ़ सैनिक दल भी नियुक्त था और हर प्रकार से भी यह देव मन्दिर दीवल का किला समझा जाता था।

कासिम के पास आज कल की तरह मशीन गन्स तो थी नहीं परन्तु वह अपने साथ बड़ी २ पत्थर फेंकने वाली कमानें लाया था। कासिम ३ मन्दिर जीतने की कठिनाइयों पर विचार ही कर रहा था कि किसी भेदिये ने आकर यह सूचना दी कि मन्दिर की दृढ़ता उसके ऊपर लहराती हुई लाल पताका ही पर निर्भर है और यदि वह किसी प्रकार गिरादी जावे तो मन्दिर जीतना बड़ा सरल कार्य हो जाय। अस्तु कासिम ने अपनी कमानें मन्दिर के झण्डे की ओर फिरवा दीं और कई बार प्रयत्न करने पर वह कृतकार्य हुआ। पताका के टूटते ही सब लोगों का साहस टूट गया और निराशा ने अपना भयानक पट उन पर डाल दिया क्योंकि उनका यह विश्वास था कि पताका टूटने से देव अप्रसन्न हो जांयगे और नाश में विलम्ब न रहेगी। हा! इस मूर्खता की भी कोई सीमा है? इस प्रकार के अज्ञान ने अनेकों बार भारत माता को दुःख दिया और अब भी देता ही जाता है। न जाने किस दिन यह हम-लोगों का पल्ला छोड़ेगा। अब हिन्दुओं ने सब उद्योग और प्रयत्न करना व्यर्थ समझा और नगर क़ासिम के हाथ में आ गया।

कासिम ने सब ब्राह्मणों की मुसलमानी (खतना) करने की आज्ञा दी इस का ब्राह्मणों ने विरोध प्रकाशित किया जिससे कि क़ासिम ने क्रोध में आकर सत्रह वर्ष से ऊपर के सब ब्राह्मणों को मरवा डाला और उससे नीचे वालों को गुलाम बना दिया।

तदुपरान्त नगर में एक मसजिद बनाने की आज्ञा दी गई।

इस नगर में महाराजा दाहिर का एक पुत्र भी कुछ सैनिकों सहित न जाने अधिपति वा सहायक की अवस्था में था। नगर के हस्त-गत हो जाने पर वह अपने सैनिक दल सहित ब्रह्मनाबाद चला गया परन्तु कासिम ने उसका पीछा कर उसे परास्त किया और सिन्ध की राजधानी अलोर तक बढ़ गया, जहां पर राजा दाहिर स्वयं अपनी सेना सहित कासिम का विरोध करने आया परन्तु दुर्भाग्य वश उसका हाथी चोट लगने के कारण उसे लेकर भाग गया जिससे सेना तीन तेरह हो गई। यद्यपि राजा थोड़ी देर के उपरान्त घोड़े पर चढ़ कर आया परन्तु पैर-उखड़ी सेना को वह पुनः एकत्र न कर सका और बीरता पूर्वक लड़ कर वीर गति को प्राप्त हुआ।

दाहिर के बड़े लड़के ने ज्योंहीं यह अमङ्गल समाचार सुना अलोर छोड़ कर भाग गया परन्तु दाहिर की रानी ने वीरता पूर्वक सैनिक एकत्रित कर नगर की रक्षा इस प्रकार की कि एक बार शत्रु घबड़ा उठे। परन्तु अभाग्य ने यहां भी पीछा न छोड़ा और भोजन सामग्री क्षीण हो गई। महाराणी ने कुछ भी साहस में शिथिलता न पड़ने दी और सब वीरों को बुला कर किं-कर्तव्य पर विचार करने लगी। अन्त में उसी 'जोहर' व्रत का निश्चय किया गया जिसके कि नाम से हृदय कांप उठता है और जिसका वृत्तान्त हम मेवाड़ के इतिहास में विस्तृत रूप से पढ़ते हैं। वीराङ्गनाओं ने तो सत्य साक्षी अग्नि देव को सतीत्व रक्षार्थ अपने प्राण देना निश्चय किया और वीर पुरुषों ने तलवार हाथ में लेकर स्वतन्त्रता के लिये रण नृत्य में जाना निश्चय किया। परिणाम यह हुआ कि स्त्री और पुरुषों ने प्राण त्याग दिया और अलोर कासिम के हाथ में आ गया।

हम पाठकों को केवल यह बतला कर कि मुसलमानों ने अपनी विजय पताका मुल्तान तक पहुंचाई अब रणाङ्गण से हटने की प्रार्थना करते हैं। मनोरञ्जन के निमित्त मुझे यह सिन्ध विजय वृत्तान्त कुछ विस्तृत रूप से वर्णन करना पड़ा। अब हम एक दृष्टि मुसलमानों के नैतिक सिद्धान्तों पर डालने चाहते और यह दिखाना चाहते हैं कि सिन्ध वासियों और मुसलमानों में कैसा व्यवहार था।

जिस स्थान को क़ासिम लेना चाहता था वहाँ की प्रजा से यह प्रश्न करता था कि वे मुसलमान होने को तैय्यार अथवा कर देनेको ? यदि वे इन दोनों बातों में से एक को मान लेते थे तो फिर कोई झगड़ा न होता था यदि वे विरोध करते तो नगर पर हमला किया जाता और हस्त-गत करालिया जाता। इस सिलसिले में एक बात अवश्य ध्यान देने योग्य है, जिस स्थान पर क़ासिम हमला करता तो वहां के शिल्प, वाणिज्य और व्यवसाय में कभी हस्ताक्षेप न करता था, कारीगर सौदागर और व्यापारी निर्विघ्न पूर्वक अपना काम करते थे, उसकी प्रजा अपने धर्म और व्यहारों के विरुद्ध कोई काम करने के लिये मजबूर नहीं की जाती थी। यही नहीं राजा और प्रजा में इतना प्रेम पूर्वक व्यवहार था कि क़ासिम ने उन मन्दिरों और देवस्थानों को जोकि लड़ाई में टूट फूट गये थे पुनः बनाने की आज्ञा दी और ब्राह्मणों को राजा की ओर से राज्य-कर से तीन फीसदी देने का जो नियम था उसे पुनः स्थापित कर दिया नित्यप्रति हिन्दू और मुसल्मान प्रजा का पारस्परिक प्रेम उत्तरोत्तर बढ़ताही गया।

पाठकों को यह आश्चर्य होगा कि मन्दिरों के पुनरुद्धार की आज्ञा देना कौन बड़ी सराहनीय बात है परन्तु जो लोग अबसे १२०० वर्ष पूर्व के मुसल्मानों के विचारों को समझते हैं वे इस प्रकार की असाधारण आज्ञा की अवश्य प्रशंसा करेंगे प्रायः सबही पुराने मुसल्मान लोग और विशेषकर उस समय के जब 'बुतशिकन' होना अभिमान पूर्वक देखा जाता था इस सरल, असाधारण व्यवहार को कदापि पसन्द न करते होंगे।

क़ासिम यद्यपि थोड़ी अवस्था का था परन्तु उसके विचारों में बुद्धिमानी भरी हुई थी उसने दाहिर राजा के हिन्दू मंत्री को अपना मंत्री बनाया जिससे कि वह भूलकर भी प्रजा के प्राचीन प्रथाओं और व्यवहारों का उल्लंघन न करे नगरवासी और ग्रामवासी स्वयं टैक्स जमा करनेवाले चुनते थे, ब्राह्मणों तथा अन्यान्यों को भी उच्च पद मिलते थे और किसी प्रकार की इस विषय में तरफदारी नहीं दिखाई जाती थी, उसने सब कर्मचारियों को आज्ञा दे रक्खी थी कि वे किसी प्रकार के अनुचित व्यवहार और अत्याचार से प्रजा को कष्ट न दें—'Deal honestly he commanded, between

the people and the governor; if there be distribution, distribute equitably and fix the revenue according to the ability to pay. Be in concord among yourself and wrangle not, that the country be not vexed.'

हालही में कासिम के शोकजनक मृत्यु ने इन शान्ति नियमक सिद्धान्तों को ही नहीं बिगाड़ दिया वरन् भारत में से अरब राज्य की जड़ ही खोद दी थोड़ेही वर्षों के अनन्तर अरब आधिपत्य का अनेकानेक कारणों से, जिनका यहां पर आज के दिन अरब निवासियों के नाम मात्र के बंशजोंके नाम इधर उधर सुनाई पड़ते हैं अरबवासियों की उपनिवेशियां नष्ट होगईं, उनके आचार व्यवहारों में इतना भारी परिवेतन होगया कि आज दिन यह पहिचानना कठिन होगया कि वास्तव में यहां उनके कोई वंशज है वा नहीं थे टूटे फूटे क़िले, और नगरही उनके सिन्ध में आने की साक्षी कर रहे हैं, स्थानाभाव से वर्णन नहीं किया जा सकता, नाश होगया और एक वार राजपूतों ने पुनः अपना सिक्का जमा लिया-

एक बात और लिखकर हम इस लेख को समाप्त करेंगे और यदि परमात्मा की कृपारही तो इस माला के दूसरे लेखों में इस बात के वर्णन करने का प्रयत्न करेंगे कि पठानों और मोग़लों के आने से हमें क्या २ लाभ और हानियां हुई, उन्होंने हमारी धार्मिक और सामाजिक संस्थाओं में क्या परिवर्तन किये और उनका क्या परिणाम हुआ, और इस सब परिश्रम और लेखों का प्रयोजन हम अन्तिम लेख में प्रकट करेंगे-

हाँ-हमें यह कहना है कि अरब वासिओं के इस आगमन से भारतवर्ष की सभ्यता में कुछभी न्यूनता वा अधिकता न हुई, देश प्रचलित व्यवहारों और प्रथाओं में लेशमात्र भी परिवर्तन न हुआ परन्तु जो कुछ भी हो मुसलमान धर्म के बीज भारतवर्ष में इसी हवा से आने प्रारम्भ होगये—

रामप्रसाद त्रिपाठी-

———o———

पंडित जी की शुभ साअ्त।

[ले० श्रीयुत रामगोपाल मिश्र]

(१)

" आर्त्तीं·आ·आर्त्तीं-आ-ा-र्त्तीं· ीं "
आ-ा-ा ————

" आर्त्तीं-आ·आर्त्तीं·आर्त्तीं· ीं " ईश्वर बचावे एक तो काना तिसपर ठनाठन के तीन फेर-मैं यही सोच रहा था कि शुक्राचार्य्य की वैस्किल लड़खड़ाई और " हां·हां-हां-हां " करते २ वेग चाल से सड़क के बगल वाले कीचड़ के गढ़े में जा पड़े, आप तो आप उनकी लतड़ पतड़ में मेरा घोड़ा भी जो बिचका तो लगाम तोड़· मुंह मोड़ दूसरी तरफ वाले गढ़े में मुझे लिये दिये जा रहा, मुझे फेंक वह तो चलता बना, ज्यों त्यों कर मैं उसमें से निकला और अब बरात में कैसे शरीक होता, अपने कपड़ों को उलटता पुलटता मैं घर को लौटा, देखें तो काने राजा अभी गोते ही खा रहे हैं, बांह पकड़ उन्हें भी निकाला पर आपने न माना फिर स्टेशन की ओर चल पड़े, भला बारात में दो रुपये मिलेंगे सो कहीं वह छोड़ सक्के थे।

शाम को कपड़े बदल मैं लाला पोंदू मल के घर बारात में शरीक न हो पाने के लिये क्षमा प्रार्थना करने गया, देखूं तो लाला साहेब और ललाइन साहबा में बड़ी गरमी से बात चीत हो रही है, लाला साहेब तो दबी आवाज़ से बोलते हैं पर ललाइन साहबा गरज २ उनको धिक्कार रही हैं " ऐ लो तो साअ्त निकल जावेगी, फिर बारात क्या भेजाओगे अपना सर-र·र·र— गाड़ी न मिली, गाड़ी न मिली, सो कैसे ना मिली-पंडित जी से कहिते तो घंटा भर पहिले ही साअ्त न बना देते, घंटा राम ने देखो ' कैसा अपना काम बना लिया, पंडित जी कहे थे दिन भर बुरा किसी भांत साअ्त तो बनतीई ना, उन्होंने एक अधेली पंडित जी को दी सो भली चंगी साअ्त बन गई, देखो ना चन्दा सी बहू घर में बैठी है, तुम्हारे बुद्धी हो तब तो, अब कहूं किस· से, " लाला जी धीरे से बोले " पंडित जी ने कहा था कि इस से अच्छी साअ्त तो न कभी बनी थी न बनेगी, बड़े भाग्य से ऐसा होता है नहीं, तो रुपया अधेली खर्चते मुझे क्या लगे था,

देखो ना जनमपत्री ना मिले थी सो तो मैंने १०) रु. देके मिल गयी ली भला यह कितनी सी बात थी" मुंह बनाये लाला पाँदू मल बाहर आये, बात चीत हुई तो मालूम हुआ कि, केवल गाड़ी छूटने के १० मिनट पहिले बारात स्टेशन पहुंची टिकट बाबू २०० आदमियों की भीड़ देख चौंधिया गये, टिकट नहीं दिये, हार मान बारात लौट आई ८ साल के दुल्हा को वहीं एक बाग़ में छोड़ दिया, गरमी के दिन ज्येष्ठ की धूप, मारके की लू और तिस पर कोई आड़ नहीं- शाम की गाड़ी से फिर बारात जावेगी तीसरे पहर ही से दौड़ धूप मच गई, ललाइन साहेबा स्वयम् स्टेशन पर आई कहीं यह गाड़ी भी न छूट जाय नहीं तो लग्न ही निकल जावेगा, मुझे भी जाना पड़ा, इतने में पंडित जी भी लम्बी धोती पहिने, बदन पर केवल एक दुपट्टा डाले, सर पर चौकोल टोपी और पैरों में चमरौधा जूता पहिने-मुंह से मनों फेनों फंकते हुए निकाल, राम २ कहिते हुये आ पहुंचे यह बिचारे ललाइन के भय से घर पर नहीं गये थे परन्तु उनको स्टेशन ही पर उपस्थित देख भौंचक्के से मुंह फैला कर खड़े हो गये, चट एक तर्क याद आया ललाइन के कोप से बचने के लिये लाला पर बिगड़ कर उनकी ओर रपट पड़े "और क्या और क्या जेहैसजइं तो करोंगे-सकारे की गाड़ी छूटी यह भी छुटवाओगे, वस, क्या नाम के काम न धाम जो श्रीललाइन साहेबा स्टेशन न आतीं तो जेहैसे क्या यह भी गाड़ी मिलती, कदापि नहीं—"हरे कृष्ण २ ऊं हूं, बड़ी गरमी है" धीरे २ पंडित जी लाला साहेब को हटा उनके स्थान पर पधार गये इधर उधर के दो शख़्स पिचने लगे इधर पसीने की भी धाड़ बिचारे उठ गये पंडित जी पाउं फैला. बैठ गये और पंखे से अपने पेट की सेवा करने लगे, लाला साहेब कहीं अपना ठिकाना न देख लड़के के पास बाग़ की ओर चल पड़े वहां देखा कि लड़के को गरमी के कारण बड़े ज़ोर का बुख़ार आ गया है, भला ललियाइन को यह समाचार कैसे पहुंचावें, कहीं अपनी जान थोड़े ही भारू पड़ी है. उधर पंडित जी और ललयाइन में बात चीत होने लगी " पंडित जी कहिये तो- ो- ो-अब कैसी सायत है, " " " चट पंडित जी बोल उठे " बहुत अच्छी बहुत अच्छी परम मंगल होगा, क्या नाम के बड़े आनन्द से बारात लौटे

कर आवेगी, क्या नाम के ऐसी साअत तो सवेरे की भी ना था पांच बजे तक बहुत ही अच्छी साअत है, वाह जेहैसे क्या कहिनेहैं तुम्हारे भाग्य हैं ललियाइन साहेब हैं-हैं और क्या हैं, "पर गाड़ी तो ६ बजे जावे है," "ना-ा-ा" "व-व-व, बस छः छः ही बजे तक तो क्या नाम के शुभ साअत है, शुभ साअत" इतने में लाला जी लड़के को लिये हुये पहुंचे और धीरे २ सब बारात जमा हो गई, लाला जी पर जो कुछ भी बीती धीरे २ सारी बारात इस गाड़ी से चल दी, प्रबन्ध कर्ता लाला या पंडित जी ॥ "पं-पं-पंडित जी अब क्या करें, आं-ां-ां-हां-ां-ां" ॥

अभी गाड़ी दो स्टेशन भी न गई थी कि ड्राइवर साहेब ने गार्ड साहेब से दुखना आ रोया कि अंजन में पानी नहीं रहा। गार्ड साहेब पहिले तो बैठ गये, फिर लेट गये, फिर इधर उधर दौड़ने लगे। अन्त में ड्राइवर से बोले, "यहां से पांच मील पै जो गढ़ा है किसी माफ़िक वहां तक चलो, फिड़ अम डेख लेगा" ड्राइवर ने कहा "यह मुमकिन है" गाड़ी स्टेशन से चली और पांच मील पर जाकर फिर रुक गई, लग भग एक घंटे में यह पांच मील तै हुए होंगे, अब अंजन देव व गाड़ी महरानी को बिल्कुल ही शिथिल देख सबके सब मुसाफिर खिड़कियों में से आधा आधा धड़ निकाल देखने लगे, पंडितजी भी अपना डुपट्टा सम्भाल बोले "का कारण होत भयो" बड़बड़ाते हुये उठे और चट गाड़ी का किवाड़ खोल डाला, अभी तक इनको आशा थी कि कोई उनको उतरने से रोकेगा परन्तु जब किसी ने कुछ न कहा तो विचारे स्वयम् किवाड़ भेड़ खिड़की में से झांकने लगे, दरवाजा बन्द तो किया था नहीं, खिड़की में ज़ोर जो लगा तो दर्वाज़ा खुल गया और पंडित जी उस्की खिड़की में टंग गये, अब क्या था हांथ पैर फेंकने लगे, आंखे निकलने लगीं परन्तु ऐसे अटके थे न आगे जा पावें न पीछे आ पावें, सब मुसाफ़िर इन्हीं का तमाशा देखने लगे, मुंह में कपड़ा ठूंस २ सब हंस रहे थे इधर लड़के तालियां बजा रहे थे, परन्तु कोई सहायता न करता था, अन्त में लाला साहेब जो अभी तक बराबर पंडित के मुख की अनुपम शोभा देख रहे थे; मुंह बना बोले, "पं. पं. पंडित जी अब क्या करें—आं-ां-ां-हआं-ां-ां" लगे चिल्ला चिल्लाके रोने अब मेरी हंसी का ठिकाना न रहा, परन्तु

पंडित जी की जान पर बीत रही थी आकर मैंने इनके पैर खींचना आरम्भ किया, ईश्वर मोटा करे तो छोटा कदापि न करे, पंडित जी चारों ओर से बराबर थे, बनाते समय बनाने वाला जल्दी में गर्दन बनाना भूल गया था, इधर पेट और पीठ की वाहिनी थी जो पेट १ फूट आगे चले तो पीठ दो फूट पीछे को खिसक जाय, हांथो और पांव में इसी प्रकार झगड़ा था, किसी प्रकार पंडित जी ने मेरे खींचने से टस से मस भी न की, मुझे खींचते देख अब तो सब के सब बराती जुट गये, जिसके हाथ में जो कुछ पड़ा वह उसी को खींचने लगा, है है कुलो उड़ाओ को यह भी न सूझी कि एकही तरफ़ को खींचे, कुछ लोग खिड़की के इधर और कुछ लोग उधर टग आफ़ वार [Tug of War रस्सा खिंचउल होने लगा, मैं यह तमाशा देख अलग जा बैठा और वहीं से "हां भाइयो, लगाये जाइयो ज़ोर, हां·और" करता रहा, पंडित जी के मुख से बोली न निकलती थी केवल "हां-हां·हं-हं" कर रहे थे भीतर जगह कम था बाहर से अधिक लोगों का ज़ोर पड़ रहा था एक बेर जो "देखना है भाइयों" कर के बाहर वालों ने ज़ोर किया तो पंडित जी भी भड़ाक से बाहर निकल आये भीतर वालों ने टांगे न छोड़ीं इससे पंडित जी का मुंह पटरी में जा कर धांई से बैठा, लोगों ने एक संग तालियां बजा दी, गार्ड साहेब की आंखें लग गईं थीं इतना सतर होते ही जगे और गंढ़े के पास गाड़ी को खड़ी देख चट बोल उठा निकल खड़े हुये और वहां से गालियों की गोलियां मारते पास वोल गांउ की ओर बढ़े स्वयम् तो कोलता का बारनिश कराये थे परन्तु कोला से बड़ी घृणा करते थे खटा खट नलिामी जूता पहिने वाभी हिलाते "ओ शाला लोग काला शाला, गाडी खाड़ा है डैम पानी नाईं डेरा निकलो निकलो शाला लोग निकलना नाईं मांगटा" इत्यादि वाक्यों से गाउं को पवित्र करते आप उसमें धंसे कुछ समय में पन्द्रह बीस गांउ वाले घड़े लिये निकले गार्ड, साहेब भी आसतीन चढ़ाये हुये बड़ी गरमी से काम लेरहे थे आपने अपना काला सफ़ैद लाल पीला टोप उतार कर अलग रख दिया था सब ने मिलकर अंजन में कीचड़ भर एक चार बरस वा तीन ही बरस का बालक यह देखता रहा, उसे जाने क्या सूझी साहेब का टोप उठा उसमें कीचड़

भर वह, भी अपने बाप के पीछे २ लेकर "आंआं" करता हुआ दौड़ा, साहेब से न रहा गया वाभी छोड़ दौड़ हो तो पड़े उस्का बाप बालक को बचाने लगा इस छीना पते में कीचड़ का घड़ा साहेब के ऊपर टूट गया लिये दिये वहां से गाड़ी बढ़ी अगले स्टेशन पर सब के सब गार्ड की गाड़ी को घेरके तमाशा देखने लगे वह बाहर तो आता था नहीं जब मुसाफिर लोग शोर मचा २ कहिने लगे कि गोंडे में गाड़ी न मिलेगी हम रहि जांयगे तो साहेब भीतर ही से गुर्रा दिया करते " हो फर्स्ट सेकिन्ड क्लास में कोई साहेब लोग नाईं है गाड़ी नाईं मिलने से अम नाईं जानता काला लोग भाग जाओ" मैं बोल उठा "गोरे साहेब ब्लैक सी (Black Sea) में कै डुबकियां खा गये थे"—

(३)

" राम राम जो का भयो "

गोंडे में लखनऊ की गाड़ी तय्यार थी परन्तु उसमें बड़ी भीड़ थी पटरी के दूसरे ओर एक खाली गाड़ी खड़ी थी, पंडित जी ने आव न देखा न ताव वहीं खड़े हो गये " अरे जोमको, जोमको, का अंधो है, जे है से दीख नाहीं पड़त है, खाली गाड़ी छोड़के उनग क्या किते को जात है, अरे धमधय्या सारे इनेग आउ, मकुना का है, हां ऊई रख, बुला भी सब को जे है से, सब को कहिये पंडित जी कहिन हैं " सब इस गाड़ी में बैठ के पंडित जी की प्रशंसा करने लगे, लाला ने पांव ही पकड़ लिये, मैं भी सोता हुआ आया तो उसी गाड़ी में आके फिर सो रहा, पंडित जी सब के पास जाजा के अपनी प्रशंसा कराते जाते थे, मैं सो रहा है, सो मेरे कान पर आकर " रमदिनवां सलरुवा भवनिआं " की धुन लगा दी, मेरी जो आंख खुली सोई पंडित जी बोल उठे " बरा खूब आनन्द सों सोओ " मैंने झुँझला के कहा " तुम्हारे भरोसे मिले तब ना " हम लोगों को देख एक गंवार स्त्री और इस गाड़ी में आ बैठी थी, पंडित जी की बड़ी प्रशंसा सुन अपनी लड़की का नाम निकलवाने इनके पास आई " का नाम के कऊं बिनै " दत्तणा के नाम निकरत हैं, भगजा, जे है से, हम ऐसे वैसे

पंडित हैऐं " उसने -) इनके सामने रख दिया, पंडित जी का पत्रा उस खींचा तानी में गिर गया था परन्तु आपने अपने पुत्र को बारात के लिये एक नया जूता पिन्हाया था उस पर एक रद्दी कागज़ लिपटा था, आपने उसके हाथ से जूता छीन उसी कागज़ पर " कन्या, तुला मीन मकर " करना शुरू किया, कुछ देर आंखें मीच बोलेः " दो का नाम निकले, क्या नाम के, पुतुभद्दो और सितिया " " दो पंडित जी दुइये नांउ निकसे " " और है निकस्ते, जे है से चार पैसा में और कै नांउ निकस्ते दुइ निकसे इतने में टिकट कलेक्टर ने " टिकट २ " किया पंडित जी ने बड़े गर्म से अपना तम्बाखू का बटुआ खोला, राम राम जो का भयो" सब टिकट जैसे साहेब बहादुर का रंग चूना उगिल पड़ा था, " अच्छा तुमको कहां जाना है " " काका माऊं " " ऐं उतरो २ यह बहिराइच की गाड़ी है तुम्हारी गाड़ी छूट गई, उतरो जल्दी नहीं यह गाड़ी भी छूटती है, "

रोते रीकते उतरे मैं ने कहा "पंडित जी अच्छा साअत घर से नहीं चले थे" "मैं ने तो क्या नाम के लेकर की साअत बताई थी संका को थोड़ेऊ सबेरे को चले होते तो अवश्य गाड़ी मिल जाती जे है से मैं क्या कहूं"

'यह देखो सबेरे तो वहां ले गाड़ी न मिली, गोंडे की कौन कहे और फिर आपने तो कहा था कि शाम को भी अच्छी साअत है"

" हां साअत तो क्या नाम के अवश्य अच्छी रही परन्तु दिन तो नीको नाहीं रहे था योका मैं क्या करूं"

"हां हां, यह तो मुझे याद ही न रही थी सबेरे सोमवार अब शाम को बुद्ध होगया ठीक ठाक"

"सो बात नाई जेहै से अंग्रेजी पढ़ेक लोग कृष्टान हुइ जात हैं सो बात सत्य है अरे भाई दिन तो वोई रहो, पै, क्या नाम के भद्रा तो लग गई, तुम्हारी समझ में तो अउतै नाई है जैहे से ता को मैं क्या करूं"

काना राजा यह सब सुन रहे थे बोल उठे "पंडित जी सबेरे की भद्रा, तो और भी बड़ी थी सबेरे तो हम कीचड़ में भी गिर पड़े थे "

"तुम दोनों आरिया हो" कहिकें पंडितजी खसक गये।

(४)

" बड़ा गांउ होय, लखनऊ, बड़ा गांउ होय"

चार ही घंटे में दूसरी गाड़ी मिलेगी यह सुन पंडित जी फिर शुभ साअत की मट्टी पलीद करने लगे "क्या नाम के, भला कहूं लगुन निकस सकत है, ऐसी बात कहूं होय है जेहै से महाराज मैं ने सैकड़न बराइतैं करांई परन्तु तुम्हारा नाम गंगा दुहाई एक की लग्न ना निकसन पाई भला क्या नाम के शुभ साअत से चले हैं कि हंसी ठिठा-" गाड़ी आई ज्यूं त्यूं लखनऊ पंहुचे। हम लोगों के साथ एक मौलवी साहेब वहदुद्दीन थे पर गांउ वाले वहदुद्दीन न कहि सकने के कारण इनको मौलवी हुदहुद कहा करते थे इनके मित्रों का कथन था कि उनकी सूरत शकल पै यह हुदहुद नाम बड़ी शोभा पाता है, मौलवी साहेब लखनऊ से ५० मील पर एक गांउ के रहिने वाले थे परन्तु सदा अपने को मौलवी वहदुद्दीन लखनवी लिखा करते थे, लखनऊ में तीन घंटे रुकना था आपने कहा "चलो जरा शहर देख आवें वरसों से नहीं देखा है वल्लाह लखनऊ की सैर को जी उमड़ा आता है" हम दोनों चल दिये लाला साहेब भी साथ हो लिये बातों से जान पड़ा कि मौलवी साहेब कभी पहिले लखनऊ में घुसे भी नहीं थे अब अच्छा तिगड्डा तय्यार हुआ, हमहीं लाल बुझक्कड़ थे, दो एक वेर रस्ता भूले एक, आधे वेर धोका खागये, लाला साहेब की एक यही धुन लगी थी "बड़ा गांउ होय, लखनऊ बड़ा गांउ होय" अमीनाबाद में भीड़ लगी थी खनाखन चारों ओर से घंटियां वज रहीं थीं, मेरा एक हाथ मौलवी साहेब पकड़े थे दूसरा लाला साहेब इतने में एक वैसकिल खनखनाती हुई आन पंहुची लाला और मौलवी दोनों दो ओर को दौड़ पड़े परन्तु हाथ किसी ने भी न छोड़ा, इतने ही में वैस्किल में और सवार तीनों एक ही में गड़बड़ होगये जब मैं गिरने लगा तब दोनों ने हाथ छोड़ दिये थे सौभाग्य से वैस्किल की सवार एक विलायती रमणी थी, मैं नाली में तो गिरा परन्तु वड़ा आनन्द आया उस रमणी को देख लाला और मौलवी दोनों हीं बचाने को दौड़ पड़े, तमीज़ थी नहीं दोनों

हाथ पकड़ खींचने और मुंह फैला बत्तीसी दिखाने लगे, "लेई लई" हैं यह क्या देखूं तो एक पुलिस के वागड़ बिल्ले ने दो २ हाथ लाला और मौलवी पर साफ करदिये हैं, जल्दी से पुलिस वाले की जेब में मैंने १) छोड़ दिया, कहीं ऐसा न हो अब की मेरी भी वारी आवे और छुट्टी पाते ही एक यक्का लिया तीनों लदगये अब तो यह पड़ी थी कि कब यहां से जान बच्चके निकल जावें "तिक, तिक, तिक, हो हो" पर घोड़ा पीछे ही को चार कदम चला, इक्के के पीछे दाने की वाल्टी बंधी थी एक दूसरे इक्के के घोड़े ने उस में मुंह अड़ा दिया, क्या बात थी अब आगे पीछे दोनों ही तरफ को जोर लग रहा था, लाला समझ लखनऊ के इक्कों में दो घोड़े जुतते हैं, एक आगे एक पीछे मौलवी साहेब तनिक अधिक बुद्धिवान थे बोल उठे "दोनों को एक ही तरफ जोतो तब यक्का ज़्यादा तेज़ चलेगा समझे नहीं स्यां, ऐसे कैसे चलेगा" इक्का वाला अपनी ही धुन में था उसका दाना उड़ा जाता था बेंत ले बे तहाशा दूसरे घोड़े को मारने लगा, अब दोनों घोड़ों पर बे भाव हंटर पड़ रहे थे, मौलवी साहेब "या अल्लाह या खुदा, मुश्किल कुशा" आदि २ नामों से ईश्वर को याद करने लगे, लाला साहेब पहिले तो समझे थे कि जिधर को दूसरा घोड़ा है उधर ही को इक्का चलेगा क्योंकि उसपर अधिक मार पड़ रही थी परन्तु मौलवी साहेब की घबड़ाहट देख वे भी "पंडित जी, अरे पंडित जी, हाय पंडित जी" के नाम को रोने लगे, मैं उस इक्के को छोड़ दूसरे पर आन बैठा, मौलवी साहेब और लाला साहेब भी कूदने लगे, इक्का वाले ने झपट के घुड़का "वाह वाह मियां होश में भी हो, इक्का किराये किया है या कुछ दिल्लगी है, मेरा किराया दिये जाओ नहीं अभी सब भूल जाओगे, हो, हो, रहे, कौन से गाउं में रहो हो मियां" वह दोनों तो सहम गये, लाला ने तो अपने गाउं का नाम भी बता दिया, वह बोला "जभी," हार झकमार मैं भी उसी इक्के पर जा लदा, गाड़ी छुटने से आध घंटा पहिले स्टेशन पहुंचे, अब इक्केवाले ने और भी फैल मचाये दो घंटे में वह स्टेशन पहुंचा होगा किराये ≡) था, उसने फैल मचाया कि दो घंटे लगे हैं घंटे के हिसाब से किराया लूंगा, मौलवी हड़हड़ बिगड़ उठे "लगा घंटों के हिसाब से, एक तो

इतना वक्त लगा दिया " " कभी पहिले भी लखनऊ आये थे लिये तो फिरो हो साढ़े तीन हाथ की दाढ़ी " मौलवी साहेब चुप " मैंने कहा भाई इस से किसी प्रकार जान भी छुड़ाओ " ॥) दे उसे विदा किया, गाड़ी डेढ़ घंटे भर (late) थी, सुना बहुत कम खड़ी होगी इससे सब तैय्यार खड़े थे कि आते ही चढ़ बैठेगें। हड़वड़िया और पंडितजी बड़ी फुर्ती दिखा रहे थे।

(५)

" वह देखौ पंडित हो अरेऊ उहै करतीं तौ बना है तुम्हार मात छुई "

पों २ करती गाड़ी आई पर ठसाठस भरी थी कहीं जगह नहीं, पंडित जी गाड़ी के छत पर चढ़ गये " लाओ, क्या नाम के असबाब ऊपर छत पर बांध देउँ लाउ रे हड़वाड़िया, रस्यू निकास दे जे हैसे छत्त ससुर र र कौनों बनाइस है, तौने से असबबवा रुकत नाहीं " हड़वड़िया बोला " अरे जौन ऊ ऊंच २ बना है तौने से वांध देव, वह देखो, पंडित हो, अरे ऊ उहै करतीं तौ बना है तुहार मात छुई " पंडितजी ने लम्पों से कस २ के छत पर असबाव बांधा, शाम होगई थी लम्प जलानेवाला जो आया तो यह तमाशा देखा, गार्ड को खबर की गई, पंडितजी हड़वड़िया और ४-६ आदमी पकड़े गये। असबाब नीचे फेंक दिया गया, भला बिना पंडितजी के कोई बाराती कैसे चढ़े, मुकद्दमा स्टेशन मास्टर साहेब के पास पहुंचा ५) उनको दे पंडित जी को छुड़ा के लाया तो देखूं कि गाड़ी चल निकली है और सब के सब बाहर ही खड़े हैं। मुझ से और कुछ न बन पड़ी दुलहा को उठा एक गाड़ी में ठूसने लगा, किसी प्रकार भांवरें तो पड़ जावेंगी। कमवख्त़ जामा तेरा सत्यानाश हो, पहिले में हिलग गया, भीतर के मुसाफिर दुल्हे को भीतर की ओर खींच रहे थे। इधर पहिया ज़ोर कर रहा था इतने में पीठ की तरफ का जामा झट से निकल गया। जान तो बच गई, जामे ही पर बीत के रांहे गई, लाला चिल्ला पड़े " अरे फाफा माऊ में उतर पड़िये, हाय रे " गाड़ी के भीतर से आवाज़ आई " घबड़ाओ मत फाफा माऊ में उतार देंगे "।

फाफा माऊं स्टेशन पर लोग बेतहाशा दौड़ रहे थे। " अरे

बारात तो इस गाड़ी से भी नहीं आई" "अब क्या हो सकता है सत्यानाशहो कल्लापुर वालों का" "अरे उधर तो देखो" इतने में दुल्हा को लोगों ने उतार दिया। बेचारे का मुंह पारसल बना हुआ था, चारों ओर से सहिरा और पगड़ी में लिपटा था, कोई उसे देख ही नहीं सक्ता था, पीठ पर जामा गाइब आगे पैरों को भी ढेक था, पहिले किसी ने भी ध्यान न दिया। पीछे केवल एक दुल्हा को स्टेशन पर खड़ा देख एक आदमी उस ओर बढ़ा-"भय्या तुम्हारा नाम क्या है"-"फ, फ फकीरचन्द" "बाप का नाम" "पों, पों, पोदूं मल्ल म, म," "दादे का" "प ग, ग ग, गरीबदास" "तुम्हारे बड़े भाई भिकारीलाल है न" "ह, हां" "अरे दुल्हा तो जे है, हियां हो" अब क्या था सब के सब उधर ही को दौड़ पड़े धत्तेरे की मच गई, इतनी भीड़ देख लड़का लगा धाड़ मार चिल्ला चिल्ला रोने "पुतुआ बेटा" करते हुए सब उसे ले गये। एक बुड्ढा बोला "अरे भाई भांवरे तो जल्दी से चल के डाल लों, बाकी फिर देखा जावेगा।

(६)

"धत् लगे मरे"

"जिया, जि-या,ऊं, मैं तो जिया के पास जाऊंगी" उधर पंडित जी ब्याह रचा रहे हैं और इधर दुलहिन यह फैल मचाय है, बाप बेचारे बेटी, बेटी' करके चुमकारते जाते हैं और ज्यूं त्यूं कर बेचारी चार साल की बालिका को पकड़े बैठे हैं, उधर पंडित जी कुछ बड़बड़ाये जा रहे हैं, दुल्हा को कठिन ज्वर पीड़ा दे रहा है उसको अपनी सुधबुध नहीं, दुल्हिन को जिया की पड़ी है। इधर लग्न निकली जाती है, सब लोग बेर २ पंडितजी से जल्दी २ करने को ताड़ना दे रहेहैं,पंडितजी महाराज ओघ मन्त्र तो उच्चारण करते हैं चौथाई अपने मुंह ही में कहिलेते हैं और चौथाई बड़बड़ाहट का रूप धारण कर लेते हैं, अन्त में पंडितजी ने आज्ञा दी अच्छा भांवरे डालो परन्तु न लड़का चल सके न लड़की, लोगों ने खड़े होकर घेरा बनाया पकड़ २ दोनों को घूमाने लगे। दुल्हा तनिक आगे बढ़ गया था, गंठबन्धन का दुपट्टा तन गया दुल्हिन से न रहा गया बढ़ के एक घूंसा लगा ही तो दिया "धत् लगे मरे" जब तक लोग रोक २ तबतक उसने एक धक्का और दे ही दिया

दुल्हा बेचारे में पाहिले ही से दम नहीं था लड़खड़ाके पानी के कलश पर आ रहे, ससुर ने लड़की के तनिक कान थाम लिये, अब क्या था, मंड़वे के नीचे प्रलय मच गई, दुल्हिन वहीं लेट के घोर चीत्कार करने लगी, सब सामग्री उठा २ फेंक दी। कुछ लातों को झाड़ तोड़ दी, दुल्हा ने अलग सुर खोल दिया। अग्नी बुझ गई कुण्ड में पानी भर गया, सहिरा घी के दिया पर जा गिरा था, एक बेर लपट जो बढ़ी तो मंड़वे का छप्पर भी धक २ करके नीचे आ रहा, मां दौड़ी आई बेटी को उठा ले गई,ससुर दुल्हा को बगल में दाब भाग पड़े, पंडितजी दूर खड़े हाय २ कर रहे थे उनकी सड़ी गली पुस्तकें भी स्वाहा होगई थीं, कुछ बुद्धिमान लोगों ने जलते हुये छप्पर ही को साक्षी बना रहे सहे फेरे उसके चारों ओर करवा दिये। झगड़ा मिटा, विवाह होगया, प्रातिज्ञायें पंडित ही जी ने कहलीं सुन लीं और कर भी लीं।

---

(७)

"............अबकी बेर जो बचे बेंचै जाऊब तौ सार का इही मां ठहराउब"

दूसरे दिन बारात आई, पंडित जी आगे २ गरजते चले आते थे. हड़बड़िया उनके पीछे २ पेंठता, इधर उधर देखता बिज्जू के से दांत निकाले चला आता था, "कैरे कस, क्या नाम के सारे की धुतकार बताइन, जे है से फिर नाहीं आवा काहरे" "हां, का, फिर तुहरे समनवां कोऊ बोल पावत है, वैसै खीस काढ़ चला गा कौनौ वीतऐ न बन पड़ी, बोलत सार का" "जान पड़त है हम्मै पहिचानत नाहीं रहा, जे है से नाहीं"–" नाहीं का नकचात, यी तो बीतये होये, तोर मात छुई सार डराइगा" "हीं, हीं, हीं" पंडित जी और हड़बड़िया में बात चीत हो रही थी, एक स्टेशन पर पंडित जी पानी पीने उतरे थे दुर्भाग्य से अव्वल दर्जे पर दृष्ट जा पड़ी, पानी पीना तो भूल गये चट हड़बड़िया को बुलाया और दोनों उसमें घुस गये, एक ओर आप टांग फैला बैठ गये और दूसरी ओर हड़बड़िया जा डटा, "भल पंडित जौन गुदगुद है हो लेउ ई शिशल्य काहे जड़ा है, यहीं दिखात है" आपने

उसके सामने खड़े होकर टोपी ठीक की बाल सम्भाले और अपने रूप पर मोहित हो बैठ गये, पंडित जी इधर उधर आंखें दौड़ा रहे थे, पैखाना के दर्वाज़ा को देख उठ खड़े हुये, ज़ोर किया न खुला, हड़बड़िया ने भी ज़ोर किया न खुला, दोनों ने खूब अपना बल दिखाया फिर चुप चाप बैठ गये, पंडित जी ने कहि दिया, "जे है से ई खुलत कभौ नाहीं है, हम, हम जानत हैं" थोड़ी देर में गाड़ी चलने पर दर्वाज़ा आप से आप खुल गया, दोनों घुस गये, परन्तु वहां की कोई बात समझ में न आई, कमोड पर हड़बड़िया जा बैठा "ई कुर्सिया होइ का"—भला पंडित ई पनियां काहे भरा हैं, तुहै प्यास भाग रही ई पीत्यो ना" पंडित जी ने झट हाथ धोने वाले तश्त में से चुल्लू भर २ पानी पी लिया, फिर लम्बी आंस भरी, पेट पर हाथ फेरा और सब चीज़ों को ध्यान से देखने लगे "अरे हम, जे है से, जानते हैं, जे हौज़ घोड़ा गदहा के लये, क्या नाम के, है, अब जो हम हीं जे है से अपना टट्टू लाउते तो कहां रखते, क्या नाम के इसैई में तो रखते, सो जे उनके पानी पीने के लिये है—" हड़बड़िया ने कमोड खोल लिया था, रहा सहा मंसूबा उसने पूरा कर दिया "भल कह्यो पंडित उहयां ससुन्न कै मुहां कर देत हु हैं, जेमा दाना पानी खांय और जो हग्गैं तो ई हरहियां से निकस जात होई, और की ले गाय भैंस लावै तो केमां राखै" दोनों बाहर आये ऊपर जाली लगी देख हड़बड़िया ने एक बात और जान ली "वा देखौ, ऊ हर वर रक्खै करतीं बना है, अब की बेर बर्ध बेंचै जाऊब तौ सार का इहै मां ठरिआइब" दूसरा स्टेशन आया हड़बड़िया औरों को बुलाने दौड़ गया गार्ड ने एक नंगे मुसन्डे, भद्दे देव को जो फर्स्ट क्लास में देखा सो, विलायती और हिन्दोस्तानी के बीच का तो वह था ही. गरदानियां पकड़ पंडित जी को निकाल के बाहर फेंक दिया, हड़बड़िया जो धम धय्या आदि को बुलाने आया सोई में समझ गया कि कुछ गड़ बड़ है बाहर निकला सो देखा कि पंडित जी औंधे मुंह पड़े हैं, हड़बड़िया झट गाड़ी में चढ़ गया, ज्यों त्यों कर मैंने पंडित जी को छुड़ाया सो अब वे और हड़बड़िया अपनी प्रशंसा कह रहे थे।

---

(८)

" स, स सारे, मे, मेरे चचा हैं "

विवाह हो चुका परन्तु पंडित जी ने न माना द्वाराचार्य्यादि सब ही रस्म फिर से हुये, पंडित जी तो फिर से व्याह कराने के लिये नई लग्न ही दूसरे दिन बनाये लेते थे पर लोगों के कहिने सुन्ने से मान गये, लड़का क्योंकि तुतुलाता था लाला पोंदू मल ने ससुराल में बोलने को मना कर दिया था. पाहिले दिन बोलने की नौबत ही न आई थी, दूसरे दिन स्त्रियों ने घेर कर बात चीत करना चाहा पर फ़क़ीर चन्द चुप, सब ने बहुतेरा चाहा पर इन्होंने एक बात मुंह से न निकाली. मार पटि तक बात बढ़ी, आप वहां से किसी तरह रोते धोते जनमासे आये और दूर ही से आवाज़ लगाई " द, द, दद्दा मैं बो, बो, वो बोलो तो ई नाईं, ललुनि ब, ब, बहुतेरो मा, ा, ा, रो, म, मैं, बो बो लोई नाईं, द, दादा बि. बि, बिलनन से उ, मा, मारो, मैं बो बो बो लोई नांई " दादा ने दो दुहत्तड़ और जमाये " सारे बोलो क्यों नांई, अब की बुलिए " कुंवर कलेवा खाने गये, लड़के के दो चचा भी उससे छोटे थे वे भी साथ हो लिये किसी कारण आपस में लड़ाई हो गई, फ़क़ीर चन्द का मौनव्रत तो समाप्त हो ही चुका था बोले " क, क, क, क, कहि दिन गो " स्त्रियों को शक पड़ गया आग्रह कर पूछा " लल्ला कौन हैं जे " " स, स. सारे मे, मेरे च, चचा हैं " " सम्धी २" की ध्वनि लग गई छोटा तो भाग गया था बड़े की बिलनों में खूब कुन्दी हुई, फ़कीर चन्द बहुत खुश थे पर जनमासे में आकर दोनों ने इनकी जी भर के मरम्मत की, पलंग पर फिर झगड़ा पड़ा एक तो लड़का पिट कुट के गया था दूसरे अब की लड़की ने नहीं माना दूध पीने जिया के पास भाग ही तो गई।

(९)

" या अल्लाह हिन्दुओं की भद्रायें बिरचोद तीन २ मन की होये हैं "

पंडित जी ने बहुत विचार के बतलाया कि विदा की साअत सवेरे की ठींक नही है, एक तो भद्रा और फिर दिया शूल शाम की

साश्रत बहुत ठीक है, दिशा शौच्य से निबटे पंडितजी न जंगल की ओर रात ही को जाया करते थे. इनके एक चेला था, वह सर्वदा इनके साथ राहिता था, स्वयम् तो पंडितजी कुछ न जानते थे परन्तु यदि चेला संस्कृत छोड़ भाषा बोले तो बिना मारे न छोड़ते थे, चाहें संस्कृत न हो अंग्रेज़ी ही क्यों न हो यदि पंडितजी की समझ में न आवे तो वह संस्कृत ही करके मानी जाती थी। अभी अंधेरा था, नगर के चौराहे पर से जो निकले तो देखते हैं कि एक आदमी कुछ दिये जलाये पूजा सी कर रहा है चौका भी लगा है एक सूप में कुछ सामान है, इनको देख उसने वह सब सामान और दिया इनकी ओर फेंक वहां से सर पर पैर रखके भागा पंडितजी समझ गये कुछ टुटिका है, उलटे पाउं " तेरो तोई पै, दुष्ट चांडाल जे हैसे तेरो तोई पै " करते हुये भागे, मौलवी हुदहुद सवेरे हवा खाने जाया करते थे. आज दुर्भाग्य से बड़ी भारी आंधी आ गई, मौलवी साहेब अंधेरे में कुवें में जा रहे, इतने में बहुत सी भेंड़ें भी आंधी में उसी कुवें में लदालद टपकने लगीं, मौलवी साहेब के सर पर भेंड़ें गिरें तो कहिते थे, " या अल्लाह, हिन्दुओं की भद्रायें, विरचोद तीन २ मन की होवे हैं," पंडित जी भी उलटे पाउं अपनी धुन में आ रहे थे कुवां तो देखा नहीं उसी में धड़ाक से जा रहे " खुदा खैर करे पांच मन का दिशा शूल भी आही गया" उजेला हो चला था मौलवी साहेब ने पंडित जी को पहिचाना, मौलवी साहेब थे लांबे पर पंडित जी बस ढ़ाई फुट के रहे होंगे कुछ हो वे चारों ओर से बराबर थे इस कारण लोग उन्हें गोल मटोल पंडित कहा करते थे कुंवे में पानी कम होने के कारण मौलवी साहेव तो खड़े थे पर पंडित जी को डुबकियां लग जाया करती थीं, चेला ऊपर से झांकता था गुरुजी से मत सदा के लिये छुट्टी ही मिल जाय जब बहुत गुरुजी ने आग्रह किया तो आपने आवाज़ लगाई "ग्राम वासियो धाइयो रासिका लाइयो गुरुजी ने कूपिका में बासिका कीनो है" गुरुजी भीतर से बोले " अरे जेहै-है-से-भाषा-बोवोले" "गुरुजी तुम मारोगे"ना-ना-ना मारेंगे"

"ना-गुरुजी तुम मारोगे" फिर उसने अपनी "ग्राम वासियो धाइयो रासिका लाइयो गुरुजी ने कूपिका में वासिका कीनो है

की ध्वन लगाई उधर मौलवी साहेब अपनी लगाये थे "कहो पंडित हम अच्छे कि तुम" जब कुंवे से लोग पानी भरने आये तब पंडित जी और मौलवी साहेब निकाले गये परन्तु चेला अपनी संस्कृत ही बोलता रहा–

(१०)

"ढांख घर"

फाफामाऊ में सब लोगों ने रास्ते के मारके सुन लिये थे इस से लड़की के बाप बलभद्र और भाई भद्रसेन साथ जा रहे थे केवल गंवारों ही की बरात होने का भी एक कारण था, लाला पोंदू मल के भाई बन्द पढ़े लिखे भी थे और उच्च पदों पर भी थे परन्तु एक दिन जब सब डाक से जाने वाले निमंत्रण पत्र तय्यार थे तब दुर्भाग्य से पंडित गोल मटोल जी आ उपस्थित हुए और लगे पत्रों को देख २ पेट पीटने "क्या नाम के-हाय! हाय! शुभ साअत पत्रों को जेहै से डाक में डाल देनो उचित है, न घड़ी पूंछें जेहै से न सुहूर्ति फिर अमंगल होय तो हम ना जानें क्या नाम के तुम्हारे को अभी से हम बताये राखते हैं-इसई साअत जेहै से जो पत्र डाक में पड़ जायं तो खैर, नांई तो एको कोई तो आवे गोई नाईं,इसई दम जेहै से अभी भेज देउ, आज दिन और साअत क्या नाम के दोनों ही नीके हैं,हां,बस!" कोई और नौकर वा बन्धु वहां न था और पत्र एक घड़ी नहीं रुक सक्के थे नहीं तो कोई आवे ही गा नहीं, पंडित जी ने अपने चेले को समझा बुझा पत्र देकर भेज दिया "तेरो नामरे वो जो मिश्र पोखरा हनां क्या नाम के वाके बाई कोने पे ढांख घर हेनां जेहै से ताई में सम्हार के तेरो नांउ सब कूं डाल दे,जा,जा,जा" चेला जी महाराज पत्र लेके चले विचारे की खोपरी संस्कृत रटते २ खाली होगई थी, तालाब के चारों कोने देखे कुछ समझ में न आया इस में "ढांख घर" किधर है बहुत खोजने पर एक ओर एक बड़ा लट्ठा नहाने के लिये पड़ा था, हो नहो यही ढांख घर" है चेला जी ने बहुत संभाल २ के सब पत्र उस्के नीचे पानी में दबा दिये, ऊपर से थोड़ी कीचड़ भी लाद दी जिस से "ढांख घर" ही में रहें बाहर न निकल आवें, जिस दिन में कीचड़ में आ पड़ा था तो रास्ते में

मुंह हाथ धोने इसी तालाब पर चला आया था कागज़ों का मलीदा बन गया था उसी दिन यह भेद खुला तब हो ही क्या सक्ता था गांउ से हखारादि को पकड़ २ के बारात बना लीगई थी परन्तु पंडित जी सदा यही कहिते रहे कि डाक मुंशी ने ऐसा किया होगा भला उन का चेला कही ऐसा अनुचित कार्य्य कर सक्ता है वह तो संस्कृत की मध्यम परीक्षा में इमतिहान देने जारहा है वंल्कि चार साल से बराबर इमतिहान देरहा है

(११)

"जेहैसे-धत्त तेरे की"

लखनऊ तक बारात आगई, वहां से भी चलदी, अब दुर्भाग्य वश कोई क्या करे, लड़की के बाप. भाई वेचारे पूरे मिहनत करते सब काम बनाये जाते थे सब की देखा भाली किये रहिते थे और साथ २ अपने माग्यों को भी ढांकेत बजाते जाते थे, परन्तु क्या हुआ धनाड्य घर तो है बाप बेटे में कभीं २ चल जाती थीं, बाप थे पुराने ढंचर के बेटा, नई रौशनी का, एक तो इस अवस्था में ब्याह और फिर ऐसे घराने में ? स्टेशन मेजापूर पर अंजन का बाइलर (Boiler) फट गया, बस जय शंकर की, तब न बनी तो अब बनी, गोंडे पंहुचे तो गाड़ी छुट चुकी थी, पंडित जी ने दन से प्रस्ताव करही डाला "ऊंट गाड़ियों पर चलो दो दिन में जेहैसे कव्वा पूर होरहेंगे" शाम की गाड़ी से बारात कव्वा पूर को चली दूसरे दिन सवेरे शुकास्त होगया बस बहू घर में नहीं ली जा सक्की उस्के भाई, बाप स्टेशन ही से उसे लौटा लेगये पंडित जी किसी से भय नहीं खाते थे परन्तु ललियाइन से बहुत डरते थे विचारे "जेहै से, जेहैसे" करते २ वहीं स्टेशन ही पर से खिसकने लगे घर तक जाने का साहस नहीं पड़ता था, काना बोल उठा "जाते कहां हो चलो ललियाइन के पास यह सब दुर्घटना तुम्हारी ही शुभ साअत ने कराई है नहीं तो भला चंगा विवाह होगया होता, चला नुदुआ सत्यानाशी कहूं कै" पंडित जी के आग ही तो लग गई "तैंका बोलत हसरे, क्या नाम के, तो कनवां तैं तैं का बोलत तोर, क्या नाम के, तोर घर मां जेहैसे, तो चार जनन मां नौर आंसैं हैं सावा नप नाहीं तो जेहैसे बात तो

सच था काने राजा के घर में केवल चार ही आदमी थे. स्वयम्, उनकी एक कानी पत्नी, एक दोनों आंख वाली पत्नी और एक अन्धी मां, हिसाब से चार जनों में चार ही आंखें पड़ती थीं और चार आंखें भी पंडित जी के दिशाशूल ही ने एक दफे फोड़ दीं थीं परन्तु काने से जो काना कहा जाय तो वह बहुत चिढ़ता है, धाइ से पंडित जी के एक घूंसा जमा ही दिया, दोनों गुथ भये ललि· याइन की कचहिरी की नौबत ही न आई वहीं फैसला होने लगा चेला की भी बन पड़ी बचाते ही बचाते उसने भी दोचार घूंसे पंडित जी के जमा दिये मैं भी "बस, बस" करता आन पहुंचा मैं ने कहा भाई इस में पंडित जी का क्या दोष है उनका शकुन तो बहुत ही उत्तम था परन्तु दुर्भाग्य से पंडित भी तो हमारे ही पंडित जी की तरह चतुर होंगे वे भी अपने जिजमानों को शुभ साअत ही तो घर से भेजते होंगे पंडित जी की सांस फूल रही थी बहुत पिटे थे पहिले तो मेरी ओर देख २ गरदन हिलाया किये फिर कुछ समझ बूझ मुंह बनाबोले "जैहै से धत् तेरे की"।

रामगोपाल मिश्र
बलरामपुर।

तृतीय भारतवर्षीय आर्य्यकुमार सम्मेलन का विवरण।

(१) भारतवर्षीय आर्य्यकुमारपरिषद् का वार्षिक विवरण पढ़ा गया और स्वीकार हुआ।

(२) निश्चय हुआ कि आर्य्यकुमार सभाओं के निम्नलिखित उद्देश्य हों:—

उद्देश्य।

[१] आर्य्यकुमारों की शारीरिकोन्नति के लिये उपयोगी साधनों का प्रबन्ध करना।

[२] आर्य्यकुमारों में वैदिक सदाचार तथा ब्रह्मचर्य्य प्रणाली का प्रचार करना और बालविवाह के रोकने के लिये यत्न करना।

[३] आर्य्यकुमारों के जीवन में सेवा धर्म्म को परिणत करने के साधन उपस्थित करना ।
[४] आर्य्यकुमारों में धार्मिक ग्रन्थों के स्वाध्याय का प्रचार करना।
[५] आर्य्यभाषा तथा नागरी लिपि का प्रचार करना ।
[६] आर्य्यकुमारों की वक्तृता शक्ति बढ़ाने का प्रबन्ध करना।
[७] समय २ पर सुबोध व्याख्यानों का प्रबन्ध करना ।
[८] आर्य्यसमाजों की सेवा करना, और आर्य्यपुरुषों के साथ सम्मान तथा विनीत भाव से व्यवहार करना ।
[९] आर्य्यकुमारों में प्रीतिभोजनादि द्वारा पारस्परिक तथा सामाजिक प्रेम की बृद्धि करना ।
[१०] दीन विद्यार्थियों, अनाथों तथा कुमारों की रक्षा करना।

(३) निश्चय हुआ, आर्य्यकुमार सभाओं के निम्न लिखित नियम होंगे। इस वर्ष के लिये कुमार सभायें इन्हीं नियमों के अनुसार कार्य्य करेंगी और आगामी वर्ष स्वीकृति के लिये यह नियम सम्मेलन में उपस्थित किये जावेंगे ।

नाम–[१] इस सभा का नाम आर्य्यकुमार सभा होगा ।

सभासद होने का नियम ।

[२] इस सभा के सभासद वे ही कुमार होंगे जिनकी अवस्था २५ वर्ष से अधिक और १२ वर्ष से न्यून न होगी और जो उपरोक्त दश उद्देश्यों को मानते हों ।
२५ वर्ष की अवस्था की समाप्ति पर आर्य्यकुमारसभा का सदस्य आर्य्यकुमारसभा का सभासद न रह सकेगा यदि वह आर्य्यसमाज का सभासद न बने परन्तु आर्य्यसमाज के सभासद होने पर यह आवश्यक नहीं कि वह कुमार सभा का सभासद न रहे ।

साप्ताहिक साधारण सभा ।

[३] यह सभा प्रत्येक सप्ताह में एक बार हुआ करेगी इसमें धार्म्मिक ग्रन्थों का पाठ, उपासना, भजन, व्याख्यान, डिबेट व निबन्ध पढ़े जाया करेंगे ।

वार्षिक साधारण सभा ।

[४] यह सभा प्रत्येक वर्ष निम्न लिखित प्रयोजनों के लिये होगी।

[१] सभा के वार्षिकोत्सव करने के लिये ।
[२] अन्तरंगसभा के सभासद व अधिकारी नियुक्त करने के लिये ।
[३] सभा के पिछले वर्ष का वृतान्त सुनाने के लिये ।

[५] इस सभा के होने आदि का विज्ञापन एक महीना पहिले दिया जावेगा ।

नैमित्तिक सभा ।

[६] यह सभा जब कभी आवश्यकता हो किसी विशेष काम के लिये नीचे लिखी हुई दशाओं में की जावेगी ।
[क] जब प्रधान व मन्त्री चाहें ।
[ख] जब अन्तरंग सभा चाहे ।
[ग] जब सभासदों का पंचम अंश लिख कर भेज देवें ।
[घ] इस सभा के होने का विज्ञापन समयानुकूल दिया जावेगा ।

अन्तरङ्गसभा ।

[७] सभा के कार्य्य के प्रबन्ध करने के लिये एक अन्तरंग सभा नियुक्त की जावेगी जिसके सभासदों की संख्या सात ७ से कम न होगी ।

[८] प्रतिनिधि सभासद अपने २ समुदायों के प्रतिनिधि होंगे और उन्हें उनके समुदाय नियत करेंगे, कोई समुदाय जब चाहे अपना प्रतिनिधि बदल सकता है ।

[९] प्रतिनिधि सभासदों के विशेष काम ये होंगे ।
[क] अपने समुदायों की सम्मति से अपने को विज्ञ रखना ।
[ख] अपने अपने समुदायों को अन्तरंग सभा के कार्य, जो प्रकट करने योग्य हों, बतलाना ।
[ग] अपने २ समुदायों से चन्दा इकठ्ठा करके कोषाध्यक्ष को देना ।

[१०] जब वर्ष से पहिले किसी सभासद व अधिकारी का स्थान रिक्त हो, अन्तरंग सभा स्वयं ही उसके स्थान पर किसी योग्य पुरुष को नियत कर सकेगी ।

[११] अन्तरंग सभा आर्य्यसमाज के किसी विशेष सभासद को

जो सभा का सभासद न हो अपनी अन्तरंग सभा का प्रतिष्ठित सभासद बना सकती है।

[१२] अन्तरंग सभा का कोई सभासद मन्त्री को एक सप्ताह पहिले विज्ञापन दे सकता है कि कोई विषय सभा में निवेदन किया जावे और वह विषय प्रधान की आज्ञानुसार निवेदन किया जावेगा, परन्तु जिस विषय के निवेदन करने में अन्तरंग सभा के चार सभासद सम्मति दें निवेदन अवश्य करना ही पड़ेगा।

[१३] प्रतिमास एकबार अन्तरंग सभा की बैठक अवश्य हुआ करेगी और प्रधान की आज्ञा से वा जब अन्तरंग सभा के तीन सभासद मन्त्री को पत्र लिखें तो भी हो सकती है।

[१४] सभा के अधिकारी अन्तरंग सभा के अधिकारी होंगे सभा की कार्य्यवाही तृतीयांश संख्या के उपस्थित होने पर आरम्भ होगी।

[१५] अन्तरंगसभा किसी विशेष कारण से किसी सभासद को सभा से पृथक् कर सकेगी।

सभा के अधिकारी।

[१६] प्रधान, उपप्रधान, मन्त्री, उपमन्त्री, कोषाध्यक्ष, पुस्तकाध्यक्ष और आवश्यकता पड़ने पर और भी हो सक्ते हैं और तब अन्तरंग सभा उन्हें काम बांट देगी।

प्रधान।

[१७] प्रधान के नीचे लिखे अधिकार और काम होंगेः—

[१] प्रधान अन्तरंगसभा और सभा के और सब अधिवेशनों का सभापति समझा जावेगा।

[२] सदा सभा के सब कामों के यथावत् प्रबन्ध करने में और सर्वथा सभा की उन्नति और रक्षा में तत्पर रहेगा, सभा के प्रत्येक कामों को देखेगा कि वह नियमानुसार किये जाते हैं या नहीं और स्वयं नियमानुसार चलेगा।

[३] यदि कोई विषय कठिन और आवश्यक प्रतीत हो तो उसका यथोचित प्रबन्ध उसी समय करे, और उसके बिगड़ने का उत्तर दाता वही होगा।

[४] प्रधान अपने प्रधानत्व के कारण सब उपसभाओं का जिन्हें अन्तरंग सभा संस्थापन करेगी, सभासद होगा।

उपप्रधान।

[१८] उप-प्रधान, प्रधान के अनुपस्थित होने पर उसका प्रतिनिधि होगा। यदि दो वा अधिक उपप्रधान हों तो सभा की सम्मति अनुसार उनमें से कोई एक प्रतिनिधि किया जावेगा। सभा के सब कामों में प्रधान को सहायता देना उसका मुख्य काम होगा।

मन्त्री।

[१९] मन्त्री के नीचे लिखे गये अधिकार और काम होंगेः—

[१] अन्तरंग सभा की आज्ञानुसार सभा की ओर से सब के साथ पत्र व्यवहार रखना और सभा सम्बन्धी चिट्ठी और सब प्रकार के विशिष्टपत्रों को सम्भाल कर रखना।

[२] सभा की सभाओं का वृत्तान्त दूसरी होने से पहिले ही पुस्तक में लिखना वा लिखवा देना।

[३] मासिक अन्तरंग सभाओं में उन सभासदों के नाम सुनाया करना जो पिछली मासिकसभा के पीछे सभा में प्रविष्ट हुए हों वा उस से पृथक् हुए हों।

[४] सामान्य प्रकार से सभा के भृत्यों के काम पर दृष्टि रखना और सभा के नियम, उपानियम और व्यवस्थाओं के पालन पर ध्यान रखना।

[५] इस बात का भी ध्यान रखना कि प्रत्येक सभासद किसी न किसी समुदाय में हो, और इसका कि प्रत्येक समुदाय ने अपनी ओरसे प्रतिनिधि दिया हो।

[६] पहिले विज्ञापन दिये जाने पर माननीय पुरुषों को सभा में सत्कार पूर्व्वक बैठाना।

[७] प्रत्येक सभा में नियत काल पर आना और बराबर ठहरना।

कोषाध्यक्ष।

[२०] कोषाध्यक्ष के नीचे लिखे अधिकार और काम होंगेः—

[१] सभा के सब आय धन का लेख, उसकी रसीद दे... और उसको यथोचित रखना।

[२] किसी को अंतरंग सभा की आज्ञा बिना रुपया न देना; वरन् मन्त्री और प्रधान को भी उस परिमाण से जितना कि अंतरंग सभा ने नियत किया हो, अधिक न देना। और उस धन के उचित व्यय के लिये वह अधिकारी, जिसके द्वारा वह व्यय हुआ हो, उत्तर दाता होगा।

[३] सब धन के आय व्यय का रीति पूर्वक बही खाता रखना और प्रतिमास अंतरंग सभा में हिसाब के बहीखाते समेत परताल और स्वीकार के लिये निवेदन करना।

पुस्तकाध्यक्ष।

[२१] पुस्तकाध्यक्ष के अधिकार और काम निम्न लिखित होंगेः- पुस्तकालय में जो सभा की स्थिर पुस्तक और विक्रेय पुस्तक हों उन सबकी रक्षा करें और पुस्तकालय सम्बन्धी हिसाब किताब रक्खे, और पुस्तकों के लेने देने मंगवाने और बेचने का काम भी करना।

विवाद।

[२२] विवाद के लिये पूर्व एक विषय विश्चित कर दिया जावेगा और दोनों पक्ष के लिये यदि सम्भव हो सके तो वक्ताओं की संख्या भी नियत कर दी जाया करेगी।

[२३] वक्ता इस नियम से बोलेगा।

[१] पहिले वादी।

[२] प्रति वादी।

[३] वादी का अनुमोदन कर्त्ता।

[४] प्रति वादी का अनुमोदन कर्त्ता।

फिर इसीप्राकार।

[२४] वाद विवाद में कोई व्यक्तिगत आक्षेप नहीं किया जावेगा।

[२५] सभापति-सभा को यदि कोई वक्ता विषयान्तर में चला जावे, तो उसे रोक देने का अधिकार होगा।

[२६] समय विभाग तथा तरतीब वक्ताओं की सभापति किया करेगा।

[२७] सभापति की अन्तिम वक्तृता होगी और उसके पश्चात कोई न बोल सकेगा।

[२८] अंतरंग सभा को अधिकार होगा कि वह वादानुवाद के नियमों में यथोचित परिवर्तन कर सके।

मिश्रित।

[२९] सब सभाओं और उप सभाओं का वृत्तान्त लिखा जाया करेगा और उसको सब सभासद देख सकेंगे।

[३०] जब किसी सभा में थोड़े समय के लिये कोई अधिकारी उपस्थित न हो तो उस के स्थान में उस समय के लिये किसी योग्य पुरुष को अंतरंग सभा नियत कर सकती है।

[३१] सब सभासद आपस में भ्रातृभाव बढ़ावें और सभा को यथाशक्ति दृढ़ करने पर तत्पर रहें।

[३२] सभाओं और सभाओं के सारे काम बहुपक्षानुसार निश्चत होंगे, परन्तु समानता होने पर कास्टिङ्ग वोट (Casting Vote) से निर्णय होगा

[३३] ये नियम साल २ में यथोचित विज्ञापन देने पर आर्य्य कुमार सम्मेलन के अवसर पर शोधे व बनाये जा सकते हैं।

(शेष फिर)

समाचार

जब समस्त भारतवर्ष में शान्ति का शासन और सुख का राज्य था, जब राजा और प्रजा का सम्बन्ध बहुत कुछ ठीक हो गया था, दिल्ली की एक दुर्घटना ने सारे भारतवर्ष में हल चल मचा दिया है और भारत निवासियों के हृदयों को विह्वल कर दिया है। २३ दिसम्बर को प्रोसेशन के समय किसी दुष्ट पुरुष ने महामान्य महोदय लार्ड हार्डिंग पर बम फेंका, जिससे बड़े लाट महोदय को कुछ चोट पहुंची है किन्तु बड़े हर्ष और आनन्द का विषय है कि श्रीमान् वाइस-राय सपत्नीक जगत्पिता जगदीश्वर की रक्षा से बचगए। हम ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि हमारे [illegible] शीघ्रही

इस दुखदायी पीड़ा से आराम हो जांय । काशी आर्य समाज के मंत्री ने इस दुर्घटना के ऊपर शोक प्रकाशित करने के लिये एक तार भेजा था ।

हमको यह समाचार पूरी तौर से ज्ञात हुआ है कि पं० गंगा प्रसाद जी एम० ए० ने आर्यकुमार परिषद की अन्तरंग सभा के प्रधान पद से अपना त्याग पत्र भेज दिया है ।

श्रीयुत् म० अलखमुरारी जी महामंत्री के पत्र से ज्ञात हुआ कि गत सम्मेलन के निश्चित प्रस्ताव व आर्यकुमार सभाओं की नियमावली तथा आर्यकुमार परिषद के नियम (जो अन्यत्र छापे गये हैं) पुस्तकाकार छपकर तय्यार हो गये हैं कार्यालय की ओर से एक २ प्रति भारतवर्ष की सर्व कुमार सभाओं के पास भेजी गई हैं और उन से प्रार्थना की गई है कि वह शीघ्रही अपनी सभा को परिषद में प्रविष्ट करालें। आशा है कि कुमार सभायें इस ओर शीघ्र ध्यान देवेंगी जब तक भिन्न २ सभाएं परिषद में प्रविष्ट न हो जावेंगी। तबतक हमारे उद्देश्य पूर्ति में सुगमता तथा सफलता न होगी। बड़े हर्ष का विषय है कि पं० गंगा प्रसाद जी एम० ए० तथा पं० घासी रामजी एम० ए० ने अन्तरङ्ग सभा परिषद का सभासद होना स्वीकार कर लिया है।

परिषद की अन्तरङ्ग सभा की पहली बैठक ३० तथा ३१ दिसम्बर, १२ को मथुरा में होवेगी ।

पाठकों को यह सुनकर हर्ष होगा कि जो दयानन्द हाई स्कूल काशी में कुछ मास हुये स्थापित हुआ था, वह जनवरी मास सन् १९१३ से रेकगनाइज़ हो गया है ।

श्रीमान् पं० केशवदेवशास्त्री अपनी वर्मा की लम्बी यात्रा से काशी में इसी मास में आजावेंगे। आपको वहां पर वैदिक धर्म प्रचार में बड़ी सफलता प्राप्त हुई है। वहां पर आपने दयानन्द हाई स्कूल के लिये भी पूर्णयत्न किया है ।

— —o— —

Printed by Pt Baijnath Jijja Manager, Tara Printing Works, Benares.

नवजीवन बुक डिपो काशी।

हमारे नवजीवन बुक डिपो में स्त्री शिक्षा की तथा अन्य उत्तम पुस्तकें विक्रयार्थ मंगाई गई हैं। अब ऐसा सुप्रबन्ध हो गया है कि मांग के साथ ही पुस्तकें तुरंत भेज दी जाती हैं। पाठक यह स्मरण रक्खें कि नवजीवन का जैसा धार्मिक तथा सामाजिक उद्देश्य है वैसी ही उत्तम २ पुस्तकें यहां से मिलती हैं। कुछ पुस्तकों का सूचीपत्र यहां दिया जाता है। ५) रुपये से अधिक के खरीदने वालों को उचित कमीशन भी दिया जाता है। जो लोग पुस्तकें मंगाना चाहें वे निम्न लिखित पते से मंगावें:—

मैनेजर नवजीवन बुकडिपो, काशी।

—०पुस्तकों का सूचीपत्र०—

१ सीता चरित्र ५ भाग पृष्ठ ७०० के लगभग—— १॥=)
२ नारायणी शिक्षा— १।)
३ स्त्री सुबोधिनी १।)
४ नारी धर्म विचार १ भाग ॥)
... ... २ भाग १)
५ महिला मंडल २ भाग ॥।)
६ रमणी पंचरत्न ।)
७ गर्भ रक्षा विधान ॥)
८ धर्म बलिदान =)
९ वनिता विनोद १)
१० भारत की वीर तथा विदुषी स्त्रियां २ भाग ॥=)॥
११ सच्ची देवियां ।=)
१२ चन्द्रकला सच्चा उपन्यास ।)
१३ लक्ष्मी एक रोचक और शिक्षा प्रद उपन्यास ।)
१५ रमणी रत्नमाला ।=)
सत्यार्थ प्रकाश १)

ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका
संस्कार विधि
महाबीर जी का जीवनचरित्र
महात्मा बुद्ध का जीवनचरित्र
भीष्म का जीवनचरित्र
वीर्य्य रक्षा
उपदेश मंजरी
स्वामीजी का जीवन चरित्र
श्रीरामविलास शारदाकृत
धर्म शिक्षा १ भाग
बीरबालक अभिमन्यु
हलदी घाटी की लड़ाई
राणा प्रतापसिंह की वीरता
एकान्त वासी योगी
भारत की वीर माताएं मूल्य
आर्य्यों का आत्मोत्सर्ग
प्रोफेसर राममूर्ति की कसरत
और अन्य २ पुस्तकें मंगाने का पता
मैनेजर नवजीवन बुकडिपो काशी

REG. NO. A. 474.

The Nawajiwan

सम्पादक—केशवदेवशास्त्री

भाग ४ | ज्येष्ठ १९६९—अप्रैल १९१२ | अङ्क १
मासिक पत्रिका ॥ मासिक पत्रिका ॥

विषय सूची ।

नवजीवन के नियम

(१) नवजीवन का वार्षिक मूल्य ३) रुपये मात्र है।

(२) प्रतिमास की २० तारीख़ को काशी से निकला करेगा।

(३) नवजीवन में कोई अश्लील विज्ञापन न छपने पावेगा।

(४) विद्यार्थियों, छात्राओं, कन्या पाठशालाओं की अध्यापिकाओं और पुस्तकालयों से केवल २) रुपये वार्षिक मूल्य लिया जावेगा।

(५) प्रतिमास प्रकाश होने की तिथि के १० दिन के अन्दर अन्दर नवजीवन के न पहुंचने पर दूसरी कापी भेजी जावेगी, अन्यथा मूल्य देना पड़ेगा.

—:o:—

नवजीवन का उद्देश्य।

(१) वैदिक धर्म्म के प्रचारार्थ

(क) आर्य्य कुमारों तथा कुमारियों में नवीन जीवन का संचार करना

(ख) सामाजिक उन्नति के उपायों पर विचार करना।

(ग) आर्य्य जीवन की मर्यादा को स्थापित करने की चेष्टा करना।

(घ) महानुभावों के सच्चरितों पर विचार करना और

(ङ) उपयोगी संस्थाओं के वृतान्तों को सर्वसाधारण तक पहुंचाना

ओ३म्

नवजीवन।

उदयति यदि भानुः पश्चिमे दिग्विभागे
प्रचलति यदि मेरुः शीततां याति वन्हिः।
विकसति यदि पद्मं पर्वताग्रे शिलायां
न भवति पुनरुक्तं भाषितं सज्जनानाम् ॥

भाग ४. | ज्येष्ठ १९६९ | अङ्क १

प्रार्थना।

यथेमां वाचम् कल्याणी मावदानि जनेभ्यः।
ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वायचारणाय।
प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिह भूयासमयं
मे कामः समृध्यतामुपमादो नमतु ॥

———

भगवन्! मनुष्य कैसे कुमार्गगामी बन रहे हैं। जिस आप के ज्ञान द्वारा मनुष्य मात्र का कल्याण हो सक्ता है. उसे स्वार्थवश हम छिपाते हैं और मनुष्यों को प्रकाश से वञ्चित रख कर अन्धकार में ले जाना चाहते हैं। आपका तो आदेश ही है कि स्वयं वेद को पढ़कर सब मनुष्यों को पढ़ाया और सुनाया करो। क्योंकि यह वेदवाणी सब का कल्याण करनेवाली है। ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य, शूद्र, पुत्र, भृत्य और अतिशूद्र तक को अधिकार है कि ईश्वर रचित पदार्थों से लाभ उठावें। पक्षपात रहित होकर विद्वानों के प्रिय बनें, और विद्या के प्रचार द्वारा अनन्त सुख के पात्र बनें। परमात्मन्! हम में शारीरिक बल और धर्म बल का संचार कीजिये ताकि हम अहर्निश आपकी आज्ञा पालन करते हुए मनुष्यमात्र तक आप की शुभ वाणी पहुंचाने की कामना कर सकें।

उपदेश !

नाविरतो दुश्चरितान्नाशान्तो नासमाहितः।
नाशान्तमानसो वापि प्रज्ञानेनैवाप्नुयात् ॥

कोई समय था कि इस देश के विद्वान भी ज्ञानमात्र से ही मुक्ति मानते थे और ऐसे भ्रान्त मनुष्यों की अब भी कमी नहीं। संसार कर्मक्षेत्र है। यहां अहर्निश काम करने की आवश्यक्ता है। क्रिया बिना साधारण शरीर की स्थिति भी असम्भव है। क्रिया द्वारा ही जगत शोभायुक्त बन रहा है जहां क्रिया नहीं वहां जीवन भी नहीं। संसार के प्रलोभन मनुष्य को प्रतिक्षण आ घेर रहे हैं। मन अशान्त हो जाता है और बुद्धि विक्षिप्त होने लगती है ऐसे मनुष्य अपनी आत्मिक शक्तियों को ही ठीक अवस्था में नहीं रख सक्ते। उनके चंचल मन स्थिर नहीं रहते हैं, इसी लिये ऋषि बतलाते हैं कि "नाविरतो दुश्चरितात्" जब तक दुष्ट गुणों से अलग नहीं हुए अर्थात् बुरे कामों से मन को नहीं हटाया। बुरे कामों से मन हटता तब ही है जब भले कामों में लगा दिया जावे। जब तक मन शान्त नहीं हुआ-और भीतर के व्यवहारों की शुद्धि द्वारा आत्मा पुरुषार्थी नहीं बना तब तक मनुष्य कितना ही क्यों न पढ़े व सुने उसको परमेश्वर की प्राप्ति कभी नहीं हो सक्ती। भ्रान्त मनुष्य समझते हैं कि पुरुषार्थ विहीन जड़ मनुष्य अपने आप को शान्त कर सक्ता है कदापि नहीं। योगाराज भी क्रियाओं द्वारा ही चंचल मन की शक्तियों को किसी विषय पर सन्नद्ध करते हैं। संसार के लोग यदि अपना कल्याण चाहें तो उन्हें अहर्निश पुरुषार्थी बनाना चाहिये। काम, काम और काम यही उनका आदर्श होना चाहिये हां दुष्ट कर्म्मों के स्थान में उपकार के भावों को स्थान दो। दिन रात परमात्मा की आज्ञाओं को पालन करते हुए मनुष्यमात्र की सेवा करो, मन प्रफुल्लित और शान्त होगा। भीतर के व्यवहारों को शुद्ध करते हुए मानसिक शक्तियों को कर्मकाण्ड में लगा दो, बुरे भाव और बुरे संस्कार सब दूर हो जावेंगे।

सम्पादकीय वक्तव्य ।

वेदविद्यालय और दयानन्द हाई स्कूल, काशी।

काशी तथा उसके बाहर वेद विद्यालय और दयानन्द हाई स्कूल के लिये कार्य्य आरम्भ होगया है। श्रीमान् स्वामी धर्म्मदेव जी शक्तिभर इस कार्य्य की सफलता के निमित्त काम कर रहे हैं। जिन छोटी जगहों अथवा दूर के स्थानों में डेप्यूटेशन नहीं जा सक्ता वहां के लिये एक रुपये निधि (One Rupee Fund) की किताबें छपवा ली गई हैं प्रत्येक पुस्तक में २५ रसीद हैं। जो सज्जन सुगमता से अपने अपने स्थान पर २५, रुपये एकत्रित करके भेज सक्ते हों वे इन पुस्तकों को मंगवा सक्ते हैं विद्यालय और स्कूल की नियमित रजिस्टरी शीघ्र हो जायगी। जो लोग किसी प्रकार की सहायता देना चाहें वे मन्त्री महाशय से पत्र व्यवहार करें।

बा. सुरेन्द्रनाथ बेनर्जी और समाज सुधार।

गत ईस्टर में चिटीगाङ्ग में सोशल कान्फरेन्स का अधिवेशन हुआ था जिसके सभापति माननीय बा. सुरेन्द्रनाथ बेनर्जी जी थे बा. सुरेन्द्रनाथ जी प्रायः अब तक राजनैतिक आन्दोलन करते रहे. उनका समाज सुधारक की अवस्था में उपस्थित होना एक आश्चर्य्य उत्पादक दृश्य था। आप ने स्पष्ट कहा कि राजनैतिक सुधारों से पूर्व सामाजिक सुधार होना चाहिये। अमृत बाज़ार पत्रिका ने बड़े भद्दे शब्दों में कटाक्ष किये हैं इधर बङ्गाली पत्रों में "धर्म की दुहाई" "समाज पर आपत्ति" "समाज में शत्रु का समावेश" आदि लेख लिखे जा रहे हैं। सारे बङ्गाल की समाज में कुलाहल उठ खड़ा हुआ है चारों ओर से अपशब्दों की वृष्टि हो रही है। निस्सन्देह बा. सुरेन्द्रनाथ ने ९९ फ़ी सदी विद्यार्थियों और नवयुवकों के विचारों को समाज में उपस्थित कर दिया है, जो सज्जन बङ्गाल की हीन सामाजिक दशा से परिचित हैं उन्हें इस आन्दोलन से लाभ उठाना चाहिये॥

माननीय गोखले महोदय विलायत गये।

गत शनिवार को श्रीमान् माननीय गोखले महोदय विलायत को पधारे। आप ने अपने मित्रों को विश्वास दिया है कि वह प्रारम्भिक शिक्षा के सम्बन्ध में वहां भी आन्दोलन करेंगे। निस्सन्देह यदि यहां के लोग अपने कर्तव्य से यह सिद्ध करदें कि वे शिक्षा को चाहते हैं और भारत वर्ष तथा विलायत में बराबर आन्दोलन होता रहे तो माननीय गोखले को अवश्यमेव सफलता होगी। आपने अपनी वक्तृता में स्पष्ट कहा था कि Falures are the pillars of success. असफलताएं सफलता के आधार स्तम्भ हैं। भारत वर्ष के वर्तमान राजसचिव तथा उनके सहकारी दोनों इस बिल के पक्ष में है। हमें आशा रखनी चाहिये कि इसका परिणाम अच्छा होगा यदि दो चार वर्ष तक यह बिल पास न हुआ और हमारे लोगों ने इस ओर ध्यान देकर अपने कर्तव्य का पालन किया तो देशोन्नति का मार्ग और भी अधिक सुगम हो जायगा।

टीटेनिक जहाज़ डूबा

संसार का सब से बड़ा सुन्दर और उत्तमोत्तम सामग्री से विभूषित जहाज गत एप्रिल को बर्फ़ के भयङ्कर तोदों या पहाड़ से टकरा कर डूब गया। यह जहाज़ अभी नया बना था। अनेक सुप्रसिद्ध और धनाढ्य सज्जन महीनों से यह प्रतीक्षा कर रहे थे कि इंगलिस्तान से अमेरिका के लिये इस जहाज़ पर सफ़र करेंगे। २३ सौ मुसाफिरों में से १५३५ डूब कर मर गये। अनेक देवियों ने अपने प्राणनाथों का साथ दिया। ऋतु में परिवर्तन हो गया। आज समुद्र के उस भाग पर जहां जहाज डूबा था कई जहाज पहुंच गये हैं। चारों ओर हज़ारों मील जल के दृश्य में जहाजों का एक नगर बस रहा है और मुर्दों की लाशों तथा डूबे जहाज और सामान को निकालने का प्रयत्न हो रहा है। दैवयोग से देहली ओशिनया और टीटेनिक तीन बड़े जहाज इसी वर्ष में डूबे हैं। अब समाचार मिला है कि एक और जहाज जिसका नाम टेक्सास है स्मरना के निकट डूबा है। अनुमान १४० मनुष्य डूब गये। जहाज़ों का इन दुर्घटनाओं के कारण चाहे मनुष्यों को कष्ट पहुंचा हो परन्तु बुद्धिमान पुरुष पूर्व से अधिक सावधान होकर जल पर विजय पाने की चेष्टा करेंगे क्योंकि बचने के उपायों के सोचने के लिये लाखों की आंखें खोल दी हैं।

आर्य्य समाजों में शिथिलता।

प्रतिवर्ष नई आर्य्य समाजें खुलती हैं। उन आर्य्यसमाजों की संख्या भी बढ़ती जाती है जो अपना वार्षिकोत्सव मनाते हैं। कहीं कहीं लोकल (स्थानिक) संस्थाओं के कारण उत्साह भी अधिक देखा जाता है परन्तु बहुत सी समाजों में शिथिलता आरही है। कारण स्पष्ट है कि वहां वेद प्रचार की न्यूनता है। आर्य्य समाजों की शक्ति वेद प्रचार के स्थान में अन्य संस्थाओं पर खर्च होरही है। इन समाजों के सदस्यों में स्वाध्याय की प्रणाली कम होती जाती है। साधन सम्पन्न मनुष्यों के अभाव के कारण साधारण सभासद भी निरुत्साहित होजाते हैं और निराश होकर समाज से विमुख होने लगते हैं। प्रतिनिधि सभा की ओर से ऐसा कोई भी प्रबन्ध नहीं कि इन समाजों का निरीक्षण हुआ करे और जहां शिथिलता के चिह्न अथवा परस्पर के व्यक्तिगत झगड़े उपस्थित होगये हों, उन्हें दूर करने के उपायों पर विचार किया जावे। जहां आर्य्य सभासदों में धार्मिक-जीवन नहीं, वहां समाज की दृढ़ता भी नहीं होसक्ती अतएव आर्य्य पुरुषों को वेद प्रचार की ओर अधिक ध्यान देना चाहिये॥

प्रारम्भिक शिक्षा पैसा फ़ण्ड।

गत मङ्गलवार को हरिश्चन्द्र हाई स्कूल के मैदान में प्रारम्भिक शिक्षा समिति का अधिवेशन हुआ विद्यार्थियों तथा नगर निवासियों ने बड़ा उत्साह दिखलाया श्रीयुत मास्टर लक्ष्मीचन्द जीने रिपोर्ट पढ़ी और बतलाया कि इस समय तक १८७, रुपये संग्रह हुए हैं। अनुमान १००, रुपये माहवार का चन्दा लिखा गया है ७०० के करीब सभासद बन चुके हैं। तीन स्कूल उन मुहल्लों में खोले गये हैं जहां पहिले स्कूल नहीं थे और कई एक स्थानों पर नवीन स्कूलों के खोलने का प्रबन्ध किया जा रहा है। कई एक प्रसिद्ध व्याख्याताओं के व्याख्यान हुए। समिति के अधिकारी चुने गये और प्रायः सभी मतों के लोगों को सम्मिलित किया गया। इस समिति का उद्देश्य केवल शिक्षा का प्रचार करना है। धार्मिक अथवा राजनैतिक विषयों से इस समिति का कुछ सम्बन्ध नहीं होगा। हम बाबू लक्ष्मीचन्द तथा उन उत्साही नवयुवकों को जो इस कार्य्य को दत्तचित्त होकर कर रहे हैं इस सफलता के लिये बधाई देते हैं और आशा करते हैं

कि वे उस समय तक विश्राम न लेंगे जब तक इस कार्य्य के निमित्त १०००) रुपये मासिक की आय न कर दिखलावें।

कांजीवरम की पण्डित परिषद।

मद्रास के पण्डित निस्सन्देह उत्तरीय भारत वर्ष के पण्डितों से उन्नत माने जाते हैं। गत चार महानों से समाचार पत्रों में आन्दोलन हो रहा था कि काञ्जीवरम में पण्डितों की एक परिषद संगठित होगी और वह भारत वर्ष के हित के लिये उपयोगी २ विषयों पर विचार करेगी। सर सुब्राहमनी आयर इस परिषद के सभापति चुने गये थे। आप ने अपनी वक्तृता में कहा कि " हिन्दू शास्त्रों में अनेक ऐसे धर्म गिनाये गये हैं जो ' देश की वर्तमान अवस्था के अनुसार बहुत हैं ' और उनमें से बहुत कुछ बुद्धिविरुद्ध तथा हिन्दू शास्त्रों के प्रतिकूल भी हैं। इस के अतिरिक्त पुरोहित बिलकुल अयोग्य हैं और क्रियाएं नितान्त उपहासजनक तथा निकम्मी प्रतीत होती हैं। इस के अतिरिक्त आप ने पुरुष स्त्री के विवाह के महत्व तथा आयु के सम्बन्ध में शास्त्रों के विचार बतलाये। इसी प्रकार समुद्र यात्रा के सम्बन्ध में कहते हुए आप ने फ़रमाया कि यहां लाखों मनुष्य उपनयन के दिन से पाप पर पाप करते जाते हैं उन्हें तो बिरादरी में रखा जाता है और जो विद्याध्यान के प्रशंसनीय विचार से देशान्तर जावे उसे निकाला जाता है क्या यह मूर्खता नहीं। दूसरे दिन पण्डितों में साधारण सी बातों पर विरोध हो गया और बहुत से पण्डित रुष्ट होकर चले गये। शेष कुछ पण्डितों ने प्रस्तावों पर विचार करना चाहा परन्तु नियम बद्ध कार्य्य प्रणाली को स्वीकार न करने के कारण सभापति ने परिषद को बीच में ही बन्द कर दिया। कितने शोक का विषय है कि जो लोग देश के नेता बनना चाहते हैं उनकी अपनी अवस्था ही शोचनीय हो रही है॥

नागराक्षर और नवीन सिक्का।

कई कारणों से गवर्नमेन्ट ने यह निश्चित किया है कि रुपये के सिक्के को बदल दिया जावे। सम्राट पञ्चम जार्ज के सिक्कों

के बनने के समय काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने इस विषय में आन्दोलन किया था कि सिक्कों पर नागराक्षर अङ्कित किये जावें। परन्तु उस समय इस पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया गया था। भारतवर्ष की आधी जन संख्या जिन अक्षरों को पहचानती हो और जिन अक्षरों को दिनों दिन अधिक प्रचार होरहा हो, यही नहीं वरन जिन अक्षरों में सिक्कों को लिखना गवनमेंन्ट ने स्वयम् स्वीकार भी करलिया हो, हम नहीं समझते कि रुपये के सिक्के पर उन अक्षरों को क्यों न लिखा जावे। श्रीयुत बा० सुरेन्द्रनाथ बनर्जी ने इस ओर सर्वसाधारण की रूचि दिलाई है और वे निस्सन्देह नागरी के प्रेमियों के धन्यवादार्ह हैं। इस समय इस विषय पर पुनः आन्दोलन होरहा है सभा समाजें अपने प्रस्ताव भज रही हैं। हमें विश्वास रखना चाहिये कि गवनमेंन्ट इस विषय की ओर अवश्य ध्यान देगी। रुपये आदि सिक्कों पर नागराक्षर लिखे गये तो करन्सी नोटों पर भा इन अक्षरों का लिखा जाना आवश्यक समझा जायगा।

भारतवर्ष के नवाबों और महाराजों को शुभ सम्मति।

शिक्षा सब के लिये उपयोगी है। मूर्ख शिक्षा विहीन कदाचित अपना निर्वाह कर भी सक्ता है परन्तु राजकुमार शिक्षा विहीन होकर निन्दा का पात्र बनता है कुछ दिन व्यतीत हुए, हमारे पूजनीय वायसराय महोदय ने अवध के कुमारों का अभिनन्दनपत्र लेते हुए उत्तम शब्दों में एक सारगर्भित उपदेश दिया था। यह उपदेश हमारे सेट साहूकारों और नवाबों तथा महाराजों सब के लिये हितकर है। आपने कहा "अब वह समय नहीं रहा कि कोई मनुष्य हाथ बान्धे हुए आराम से बैठा रहे और अपने ख़ानदान का गर्व करे। वह ज़माना गया जब अपनी योग्यता और सदाचार की अपेक्षा अपने बुज़ुर्गों के कारनामों के कारण सत्कार होता था। यदि ख़ानदान की उच्चता और बुज़ुर्गों के खून का गौरव हो सक्ता है तो उससे आप को उत्साह मिलना चाहिये न कि आप आलसी बन कर स्वप्न

देखते रहें और अपनी जाति पर बोझ बनें, वरन आपको उत्तम और सदाचारी बनना चाहिये ताकि आप सर्वसाधारण के अग्रसर कहला सकें और यह कदापि हो नहीं सक्ता जब तक आप अपने लोगों के मुकाबले में योग्य सिद्ध न हों, और इस कर्मक्षेत्र में सफलता प्राप्त करने के लिये सब से पहिली और ज़रूरी बात विद्याप्राप्ति है।"

हम समझते हैं कि हमारे देश के कल्याण के लिये क्या राजा क्या रङ्क। क्या धनी मानी क्या दरिद्री-क्या ब्राह्मण क्या चाण्डाल प्रत्येक व्यक्ति को विद्या पढ़ने की आवश्यक्ता है और जो सज्जन इस पहेली को हल करने में सचेष्ट होंगे-वे सच्चे देश-भक्त बनेंगे।

संसार की उन्नति में एक रुकावट।

प्रकाश शारीरिक तथा आत्मिक रोगों को दूर करता है। जहां प्रकाश नहीं वहां मानासिक दुखों की न्यूनता भी नहीं। हमारे देश की बहुत सी कुरीतियों और त्रुटियों की एक मात्र चिकित्सा विद्या-रुपी प्रकाश है। एसी ही अन्य देशों की दशा है। युरोप में टर्कीही एक ऐसा देश है जहां के लोग विद्या के गुणों से कम अलङ्कृत हैं क्रमशः उस देश में जागृति आरही थी। प्रजा तन्त्र राज्य के कारण अन्य देशों के लोग ध्यानपूर्वक उसकी अवस्था पर विचार कर रहे थे। स्त्रियों को भी आशा थी कि उन्हें स्वतन्त्रता मिल जावेगी परन्तु मौलवियों के नवीन फ़तवों ने उस देश की उन्नति में बाधा डाल रखी है। जो स्त्रियां अपने बस्त्रों में परिवर्तन कर रही हैं उन को अनेक कष्ट दिये जा रहे हैं। ट्रामकार में एक कुमारी के वस्त्रों में अङ्गरेज़ी पोशाक के ढङ्ग को देख कर एक मनुष्य ने कैंची से उसके बस्त्र को काट दिया। एक पिता ने इस स्वतन्त्रता के कारण अपनी पुत्री को मारही डाला। स्त्रियों की स्वतन्त्रता को रोकने के लिये एक नियम बनाया गया है कि यदि कोई खातून किसी योरोपियन दुकान पर अकेली कुछ खरीदने जायगी तो उसे २२५) रुपये जुर्माना होगा। एक देवी ने वहां स्त्री शिक्षा पर कुछ ग्रन्थ लिखे हैं। वह एक दिन बिला परदे अमेरिकन स्कूल में स्त्री पुरुषों में व्याख्यान देने चली गई थी उसे क़ैद करने के लिये चारों ओर से शोर उठा है।

मौलवी लोग शरायत की दुहाई देते हैं। शिक्षा ने स्त्रियों की आँखें खोल दी हैं परन्तु अभी अन्धकार की प्रबलता है जिसके कारण अभी इन बहिनों को अनेक प्रकार के कष्ट सहने पड़ेंगे। इस से तो भारतवर्ष की नारियों की दशा उनकी तुर्की बहिनों से कई गुनी अच्छी है।

सुजीवन सरोवर—कविराज महेता सीताराम जी दत्त रावल पिण्डी छावनी रचित। ग्रन्थ कर्ता महोदय ने भिन्न २ ग्रन्थों से संग्रह करके आयुर्वेद के सिद्धान्तों पर एक उत्तम ग्रन्थ प्रस्तुत कर दिया है। उर्दूदाँ वालदैन को अपने बच्चों को गुमराही से बचाने के लिये ऐसे ग्रन्थ उनके हाथों में रखने चाहिये। ग्रन्थकर्ता ने व्याह सम्बन्धी पश्चिमी तथा वैदिक सिद्धान्तों पर भी बहस की है। इसी में आपने जल चिकित्सा के कुछ सिद्धान्तों पर भी विचार किया है। पुस्तक ३२८ पृष्ठ की है मूल्य २।) है जो कुछ अधिक है। मिलने का पता, ग्रन्थकर्ता। आदित्य औषधालय रावलपिण्डी।

प्रो० राममूर्ति और उनका व्यायामः—देश विख्यात प्रोफ़ेसर राममूर्त्ति के नाम नामी से कौन अपरिचित होगा और किसे उन्हें देखकर शरीर पुष्टि की इच्छा उत्पन्न न हुई होगी। यह निर्विवाद है कि The Glory of a man is his Strength मनुष्य का महत्व उसकी शक्ति में है। आपकी शैली को श्रीयुत बाबू कालिदास जी माणिक ने सीखा और एक व्यायामशाला

खोलकर काशी में इस विधि का प्रचार किया । उन्हीं प्रोफेसर कालीदास माणिक जी ने इस ग्रन्थ को रचा है । हम चाहते हैं कि देश का प्रत्येक युवक इन खेलों को अपने जीवन में परिणत कर ब्रह्मचर्य्य के महत्व को अनुभव करे ।

मूल्य केवल ≈) मात्र ।

मिलने का पता
हरिदास माणिक
मिश्रपोखरा-काशी ।

—o—

प्रतापसिंह की वीरता—हरिदास माणिक रचित, ग्रन्थ पद्य में ओजस्विनी भाषा के अन्दर निर्माण किया गया है आकार २०+३० साइज़ के ५६ पृष्ट है मूल्य ≡) मात्र ।

मिलने का पता-
नवजीवनबुकडिपो—काशी ।

—o—

जैनधर्म्म का महत्व—प्रथम भाग इस ग्रन्थ में जैन धर्म्म सम्बन्धी महत्वपूर्ण लेखों का संग्रह किया गया है । यह लेख समय समय पर पत्रों में निकल चुके हैं । जैनमित्र के उपसम्पादक महाशय सूर्य्यमल जी ने स्वधर्मावलम्बियों के लिये यह एक उत्तम संग्रह किया है । इस ग्रन्थ में अनेक विज्ञान विरुद्ध विषय दिये गये हैं । उदाहरण के लिये जैनियों के चारों वेदों का आदीश्वर भगवान ने लिखा 'वह 'स्वर्ग से आये थे । उनकी आयु ८४ लाख पर्व की थी, इत्यादि । ग्रन्थ श्रीजैन ग्रन्थ रत्नाकर कार्य्यालय बम्बई से मिलता है ।

—o—

कलकत्ता नागरी प्रचारिणी सभा का वार्षिक विवरण—इस २८ पृष्टों के लघु पुस्तक में सभा का वृत्तान्त दिया गया है । यह एक सन्तोषजनक विषय है कि कलकत्ता में नागरी के प्रचारार्थ अच्छा उद्योग किया गया है । पण्डित सुन्दरलाल मिश्र जो इस सभा के सभापति हैं उनके प्रभाव से हमें आशा है कि सभा दिनों दिन उन्नतावस्था को प्राप्त करेगी ।

सामयिक पत्रों की समालोचना में अनाधिकार चेष्टा की भलक प्रतीत होती है ।

पारिवारिक दृश्य ।

कानपुर का विशाल नगर गङ्गा के तट पर बसा है । यहां कुछ पक्के घाट भी बने हैं । भागीरथी का जल प्राय: ग्रीष्म ऋतु में कम हो जाता है घाटों के निकट पानी नहीं रहता । नदी की शोभा अतिशय कम हो जाती है तिस पर भी लोग किसी न किसी प्रकार कुछ जल तट की ओर ले ही आते हैं जहां लोग स्नान करते हैं । यहां काँबड़ी वालों की बड़ी रौनक रहती है । बन्दरों की भी अधिकता मिलती है । घाट दरिया से बड़े ऊंचे बने हैं इसी लिये बड़ी शीतल वायु चलती है । इसी वायु का सेवन करने के लिये दो सज्जन ट्रामकार से उतरे और घाट पर पहुंच कर नदी की ओर मुख करके बैठ गये ।

सत्यव्रत:-मित्र भद्रसेन ! आज एक विचित्र समाचार छपा है । बरेली में कोइ कमबोरा का कुआँ है । वहां एक युवती डूब मरी है । खोजने पर पता चला कि वह एक बणिक की कन्या थी २५ वर्ष की अवस्था में उसके माता पिता ने उसका विवाह किया और आप जानते हैं किस के साथ, एक १४ वर्ष के बालक के साथ, विवाह के अनन्तर यह कन्या इस अनमेल बिवाह के कारण कुँएं में डूब कर मर गई ।

भद्रसेन:-यह कौन सी आश्चर्य्य की बात है । यहां सहस्रों अबलाएं नित्यप्रति इस प्रकार की मृत्यु से मर रही हैं । यदि आप ध्यान पूर्वक देखना चाहें तो आप को भारत वर्ष की आश्चर्य्य जनक रसें मिलेंगी । इस देश में कहीं स्त्रियों की संख्या अधिक है किसी स्थान पर कम जिन जातियों में वर कम मिलते हैं वहां कन्याएं बड़ी आयु तक वर न मिलने के कारण कुमारियाँ बैठी रहती हैं और उन पुत्रियों के विवाहों पर माता पिता को पुष्कल धन देना पड़ता है । जहां लड़की की संख्या कम होती है वहां कन्याओं के पिता खूब धन बटोर कर विवाह करते हैं ।

सत्यव्रत:-भारत वर्ष में यह प्रथा कैसी और कब चली और किस प्रान्त में कैसी रिवाज हैं ।

भद्रसेन:-मित्र सुनिये ! पंजाब में पुरुषों से स्त्रियों की संख्या

कम है। वहां ग्रामों में प्रायः अब तक कन्या पक्ष वाले रुपये लेकर विवाह करते हैं। जहां इसे बहुत बुरा माना जाता है वहां तबादले का रिवाज है। तीन चार घर मिल जाते हैं (क) अपनी कन्या (ख) के घर देता है (ख) तीसरे (ग) को और (ग) (क) के यहां विवाह करता है। चाहे कन्याएं रूपवती हों अथवा कुरूपा, इस तबादले में चली जाती हैं। सिंध में प्रायः रुपये देकर विवाह होता है। गुजरात के भाटियों में कन्याएं बहुत कम मिलती हैं। उनमें कई एक पर्वत की कन्याएं जाती हैं जिन्हें ज्वालापुर के पण्डे विवाह कर लाते हैं और आगे बेंच देते या हवाले कर देते हैं। अनेक घरानो में अन्त्यज जाति तक की कन्यायें धोखे में पहुंच जाती हैं। संयुक्त प्रान्त में कान्य-कुब्जादि कई जातियों में बड़ी आयु की कन्यायें बैठी रहती हैं और प्रायः प्रत्येक विवाह में वर पक्ष हजार दो हजार नकद लेने का वायदा करा लेता है। बङ्गाल में तो तरह ही निकली हुई है। ऐन्ट्रेंस पास वर को ३०००) रुपये और बी. ए पास को चार पांच हजार विवाह करने के कारण मिल जाते हैं। बड़े २ घरानों में १० १५ कभी २ पचास २ हजार रुपये मिलते हैं और जिन कुलीन ब्राह्मणों की लड़कियों के लिये वर नहीं मिलते अथवा देने को धन नहीं मिलता वे यमवरा कहलाती हैं। मद्रास प्रान्त में कन्या पक्ष को धन देना पड़ता है।

सत्यव्रतः--यदि सारे भारतवर्ष में लोगों के रिवाज़ों को इकट्ठा किया जावे तो विचित्र सामाजिक नियमों का वृत्तान्त ज्ञात हो जायगा।

भद्रसेन--:यही नहीं वरन यह भी ज्ञात हो जाये कि आज कल लोग क्यों बाल विवाह कर देते हैं। जहां बङ्गाल के समान कन्याएँ अधिक हैं वहां बड़ी आयु में विवाह करने से धन अधिक देना पड़ता है और जहां सिन्ध के समान कन्यायें कम हैं वहां बाल्यावस्था में सगाई करके रोक न लें तो कुंवारे रह जाने का भय बना रहता है। लोग अपनी २ बिरादरियों में विवाह करते हैं। छोटे से दायरे में यदि वर हैं तो कन्या नहीं या कन्यायें हैं तो वर नहीं मिलते। बिरादरी से बाहर विवाह करने और अपने आत्मीय बन्धुओं का विरोध करने का बल नहीं तब शास्त्रोक्त विवाह कैसे हो। आज कल शिक्षित लोग अपनी कन्याओं को पढ़ाते हैं। १५ वर्ष की आयु

हुई बिरादरी में वर ढूंढा, नहीं मिलता जो १०,१२ वर्ष का मिल गया पढ़ा हो या अनपढ़, धनपात्र हो अथवा दरिद्री उसके साथ कन्या का विवाह हो जाता है यही तो कारण है कि २५ वर्ष की कन्या का विवाह १४ वर्ष के वर के साथ और १० वर्ष की कन्या का विवाह ४० वर्ष के पुरुष के साथ हो जाता है।

सत्यव्रतः-मित्र; यह तो बड़ा दुख है जब गृहस्थाश्रम का मूल ही बिगड़ा है तो शेष आश्रम कैसे सुधरेंगे, क्या आपने सोचा, इन कुरीतियों को मिटाने का कोई उपाय भी है या नहीं ?

भद्रसेनः-अवश्य है और वह वही है जिस का शास्त्रों में वर्णन है। कन्या और कुमार जो विद्या प्राप्त कर चुकें, तो गुण कर्म और स्वभावनुसार उनका शास्त्रोक्त मर्यादा से विवाह हो, जात पांत के बन्धन शिथिल किये जावें, माता पिता अपने पुत्र और पुत्रियों को उनके अधिकार दें जिन्हें सारी आयु व्यतीत करनी है उनके सुख और दुख का विचार न करके अपने मान और आदर के लिये बिरादरी को खुश करना नितान्त अधर्म्म है। शिक्षित कुमारों तथा कुमारियों के लिये एक परिमित या छोटे से दायरे में से उत्तम वर या वधू को चुनना अत्यन्त दुस्तर है। यही कारण है कि शिक्षित पुरुषों के विवाह प्रायः दुख जनक विवाह हो रहे हैं। इस पहेली को हल करने के लिये दूर दूर देशों और भिन्न भिन्न जातों में परस्पर विवाह या Intermarrige की प्रथा चलानी चाहिये। अभी आर्य्य पुरुषों में भी ऐसे दृढ़ आत्मा के पुरुष कम मिलते हैं जो गुण कर्म और स्वभावानुसार विवाह करने पर उद्यत हों। नवयुवकों में इस भाव का प्रचार होना चाहिये।

सत्यव्रत—बहुत अच्छा ! तब क्यों न हम दोनों आज से प्रतिज्ञा करें कि हम २५ वर्ष से पूर्व विवाह न करेंगे। जब करेंगे, शास्त्रोक्त मर्यादानुसार और तिस पर अपनी बिरादरियों में तो गुण कर्म स्वभावानुसार कन्या के मिलने पर भी न करेंगे क्योंकि इतनेही (Loophole) बहाने से प्रायः समाज के बड़े २ नेता स्वयम् गिरते जाते हैं।

यह कह कर उन दोनों ने प्रतिज्ञा की और अन्य युवकों में इस भाव को फैलाने के विचार से उत्साहित होकर उठ खड़े हुए और ग्राम में बैठ कर अपने २ स्थान को वापस गये।

वेद विद्यालय और दयानन्द हाई स्कूल बनारस।

हम पहले सूचना दे चुके हैं कि १ जूलाई से काशी में वैदिक आश्रम और दयानन्द हाईस्कूल खुल जावेंगे। मकान का प्रबन्ध किया जा रहा है। धन संग्रह के लिये सम्पादक नवजीवन तथा श्रीयुत स्वामी धर्म्मदेवजी मिरज़ापुर, देवरिया, गोरखपुर और आजमगढ़ में गये। अब तक अनुमान ६॥ हज़ार रुपये नकद और वायदा चन्दा हुआ। १ जूलाई तक १००००) रुपये के लगभग एकत्रित हो जाने की आशा की जा रही है। श्रीयुत स्वामी धर्म्मदेवजी(Mr. Geo. Robertson) के अथक पुरुषार्थ और उत्साह के लिये आर्य्य समाज काशी उनका अत्यन्त अनुगृहीत है। एक रुपया फ़राड की पुस्तकें तय्यार हैं जो भाई मुफ़स्सिल से २५ २५ रुपये इकट्ठे कर के सहायता प्रदान कर सक्ते हैं उनकी सेवा में पत्र आने पर पुस्तकें भेजी जाती हैं। बहुत सी पुस्तकें भेजी जा चुकी हैं। इनके अतिरिक्त

दस हजार रुपये।

की जायदाद श्रीयुत स्वामी नित्यानन्द तथा स्वा० विश्वेश्वरानन्दजी ने वेद विद्यालय को प्रदान की है। यह जायदाद सीतला घाट के तीन मकान हैं। आपने किसी समय यहाँ एक पाठशाला खुलवाई थी जो कुछ वर्ष चल कर बंद होगई थी इस जायदाद की नियमित रजिस्टरी होजाने पर वेदविद्यालय को एक अच्छी सहायता मिल जायगी।

नियमोपनियम।

दयानन्द हाईस्कूल में फ़ीस गवर्नमेन्ट स्कूलों से कम रखी जायगी। वैदिक आश्रम में प्रत्येक विद्यार्थी से १२) रु० मासिक लिया जायगा। इसी में दूधादि भोजन तथा अन्य आवश्यक वस्तुओं का प्रबन्ध किया जायगा। आश्रम के नियम तय्यार होचुके हैं। जिन्हें ज़रूरत हो पत्र लिख कर मंगवालें।

गौरीशंकर प्रसाद।

मन्त्री

वेदविद्यालय व दयानन्द हाईस्कूल कमिटी।
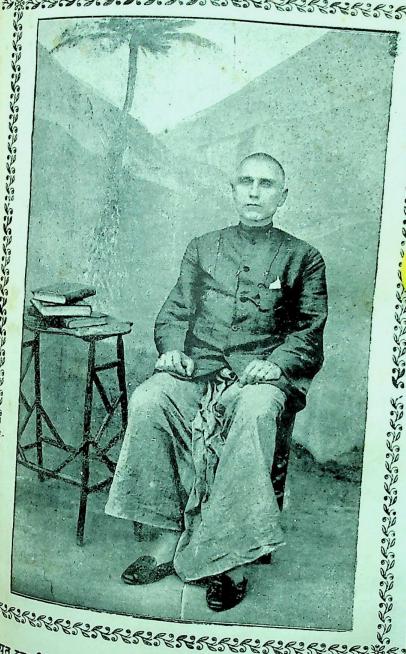
श्रीयुत स्वामी धर्म्मदेव जी (Mr. Geo. Robertson B. A. B. Sc. Aberdeen) जो आजकल आर्य्य समाज काशी की नवजात संस्थाओं अर्थात् वेदविद्यालय तथा दयानन्द [illegible] काशी के सम्बन्ध में बड़े उत्साह के साथ काम कर रहे हैं ॥

भारतवर्ष के ६ महापुरुष

प्रकाश के सम्पादक ने कई सप्ताह से नोटिस दे रक्खा है कि जो भारतवर्ष के ६ महान् पुरूषों के नाम लिखकर भेजदे ती उसे ५०) रु० इनाम दिया जायगा। इसकी अवधि १५ जून तक है ये सब रायें इसी समय के अन्दर आजानी चाहिये। सैकड़ों सम्मतियां अभी आचुकी हैं परन्तु सब की परीक्षा एकही साथ होगी।यह भी एक प्रकार की दिल्लगी है। भारतवर्ष के छः महा पुरुषों का पहिचानना कोई सरल काम नहीं वरन एक प्रकार से असम्भव है क्योंकि एकही प्रकार के काम करने वालों में छः आदमियों की और सबसे श्रेष्ठ होने का संकेत करना केवल धृष्टता नहीं तो क्या है प्रमाण क लिये यदि हम १० ब्राह्मणों में सबसे उत्तम दो ब्राह्मणों को चुनना चाहें तो सम्भव है चुनलें परन्तु यदि ब्राह्मण, क्षत्री और वैश्यों में से दो श्रेष्ठ मनुष्यों के चुनने का साहस करें तो नितान्त ही असम्भव होगा क्योंकि यदि ब्राह्मण अपने कर्तव्य में श्रेष्ठ हैं तो क्षत्री भी अपने कार्य्य को भली प्रकार सम्पादन करता हुआ उस ब्राह्मण से कम नहीं है और यही बात वैश्य और शूद्रों में घटेगी। वैश्य और शूद्र अपने २ कर्तव्यों को भली प्रकार पालन करते हुये उस ब्राह्मण तथा क्षत्री से कम नहीं हैं। अतः कार्य्य विभाग (Division of Labour) के अनुसार सब अपने २ कार्य्यों में कुशल होते हुये बराबर हैं उनमें कोई छोटा या बड़ा नहीं हो सक्ता।इस प्रमाण से जनसमूह के प्रत्येक विभागों में अपने २ कर्तव्यों को उचित रीत्यानुसार सम्पादन करते हुये सब महापुरुष बराबर हैं कोई एक दूसरे से श्रेष्ठ नहीं हो सक्ता अपने२ कार्य्यों में सभी श्रेष्ठ हैं। अस्तु हमभी अपने पाठकोंकोसूचना देते हैं वे भी यदि इस लाटरी में अपनी सम्मति देना चाहें तो १५ जून तक प्रकाश के एडीटर के नाम भारतवर्ष के ६ महान् पुरुषों के नाम चुनकर भेजदें

———o———

एक पारसी रमणी का प्रशंसनीय दान।

मिस हमाबाई फ्रमजी पेटिट नामी एक पारसी रमणी ने पारसी बालिकाओं के लिये एक अनाथालय बनवाया है इस रमणी ने अपने १२ लक्ष रूपये के जवाहिरात अनाथालय को दान दिये हैं। अब प्राय: ६ लक्ष के जवाहिरात बिक चुके हैं। जब तक सब जवाहिरात नहीं बिक जांयगे तब तक वे ४०००) रू० मासिक अलग से देंगी। प्राय दो वर्ष से श्रीमतीजी अनाथालय को उपरोक्त धन मासिक देती जांती हैं। पूरे जवाहिरात बिकते २ यही मासिक प्राप्ति की एक ख़ासी रक़म होजायगी। धन्य है बाई जी के उदार भाव को। हमारे भारत की प्रत्येक स्त्री को इस दान से उपदेश लेना चाहिये यह दान जीवित और जागृत दान है। इसमें कोई संशय नहीं हमारे देश की स्त्रियों में बड़ा धर्म्म भावहै परन्तु आजकल अविद्या के कारण वे पात्र और कुपात्र का विचार नहीं करती। यदि पता लगाया जाय तो लाखों रुपये का दान व्यर्थ पत्थरों पर खर्च किया जाता है अर्थात् सैकड़ों धर्मशाले, शिवमंदिर और घाट आदि प्रतिसाल बनते चले जाते हैं परन्तु खेद है उनकी इस समय इतनी आवश्यकता नहीं क्योंकि इस समय तो विद्यालयों की आवश्यकता है जिनके द्वारा भारत की भावी सन्तान विद्वान होकर विद्या के प्रकाश से अविद्यान्धकार दूर करके अपने अस्तित्व को संसार में स्थिर रख सके। प्यारी बहिनों! अब यह समय सजग होने का है देखो, आपकी एक पारसी बहिन ने यह अनाथालय खोल करकैसी उदारता दर्शाई है धन्य है वह जाति व समाज जिसमें मिस हमाबाई जैसी उदारस्त्रियाँ उत्पन्न हों। इन्हीं कुलाङ्गनाओं के कारण पारसी जाति विद्या और वैभव में भारतवर्ष की सिरमौर हो रही है। इन्हीं कुल कामिनियों की कोख में मि० टाटा और वडिया से दानशूर पुरुष उत्पन्न होते हैं। आशा है आपलोग भी अवश्य हमारी आदर्श दानशील बाई जी का अनुकरण करेंगी।

—:०:—

धर्म शिक्षा ।

गताङ्क से आगे

——:०:——

सत्य:-धर्म का नवां लक्षण

संसार के अन्य अमूल्य पदार्थों के सदृश मनुष्य सत्य को भी सहसा पासक्ता है, परन्तु इसके पाने में बड़ी सावधानता की आवश्यक्ता है। जब कभी कोई मनुष्य हमारे विचारों का विरोध करता है और हमें एक ज़ख़म लगाता है तो अहङ्कार के भाव हमारे मन में उत्पन्न होजाते हैं और हम अपने बचाओ के निमित्त शत्रु को कुचलने पर कटिबद्ध होजाते हैं। विचारें तो न कोई हमारा शत्रु और न हमें अपने विचार के खण्डित होने पर कष्ट होना चाहिये, परन्तु विचारों में आत्मा का इतना ममत्व होता है कि हमारे लिये उसका विरोध असह्य होजाता है। इसी अहङ्कार के कारण से व्यक्ति गत झगड़े उठ खड़े होते हैं और भिन्न मत के कारण जो विरोध उठा था वह व्यक्ति गत विरोध में आकर विश्राम लेता है। तब शोर, झगड़े और मूर्खता के अनेक उपायों का अवलम्बन होता है जिस से कि बुद्धि और सत्य आंखों से बिलकुल दूर हो जाते हैं।

यदि मनुष्य सत्य के ग्रहण और असत्य के परित्याग करने में उद्यत रहें तो संसार के आधे क्लेश एक ही दिन में समाप्त होजावें। यदि हम बिला बिचार किये किसी विषय को सत्य मान लें तो सहसा हमें उसे परित्याग भी करना पड़ेगा। जगत में ऐसे डांवां डोल मनुष्यों की संख्या अधिक है। यदि आप प्रत्येक विषय के भले बुरे दोनों पक्षों की जांच करके सत्य का ग्रहण करें तो आपको बड़ा लाभ पहुंचे। इस प्रकार जो मनुष्य सत्य को धारण कर चुके हैं वह कभी नहीं डगमगाते और इसी से उनका जीवन बनता जाता है। सर टामस बरबनी एक प्रसिद्ध विद्वान हुए हैं। जिस दिन वह लण्डन के लार्ड मेयर बनाये गये और गिल्ड-हाल में एक भोज दिया गया तो बिला किसी को पता दिये वह अपनी प्रार्थना के समय घर चले गये और वहां से निवृत होकर फिर सभा में आसम्मिलित हुए। इस प्रकार के जीवन के उदाहरण

वन की आग के सदृश शीघ्र ही फैल जाते हैं और अनेक मनुष्यों को अपनी ओर आकर्षित कर लेते हैं। ऐसे ही मनुष्य चट्टान के समान दृढ़ होजाते हैं। जगत के कष्ट उन्हें आज़माते और हिलाने की चेष्टा करते हैं परन्तु इतिहास को देखो वह दृढ़ से दृढ़ बनते चले जाते हैं। गलीलो के समय से पूर्व लोग मानते थे कि पृथिवी अचल है। गलीलो ने इस के विरुद्ध प्रचार किया और उसे अनेक प्रकार के कष्ट दिये गये। जब हारवे ने खून की गरादिश का विचार उपस्थित किया तो विद्वानों ने उसके विचारों का उपहास किया था। सुकरात को सिद्धान्तों और सत्य के प्रचार के कारण विष पिलाकर मार डाला गया। अनक्सेकोरस ने जब देवी देवताओं के स्थान में एक परमात्मा की सत्ता का प्रचार किया तो उसे पकड़ कर जेल में डाल दिया गया था। अरस्तू को उसकी दार्शनिक विद्या के कारण अनन्त कष्ट उठाने पड़े और अन्त को विष खाकर प्राण छुड़ाये। जब पादरी बरजीलियस ने पाताल देश की सत्ता को मान लिया तो मेन्टज के आरकबिशप ने उसे जिन्दा जलवा दिया था। इसी प्रकार अनेक विद्वानों ने सत्य सिद्धान्तों के मानने और प्रचार करने के कारण अनेक कष्ट उठाय, परन्तु वह सत्यनिष्ट थे इस लिये प्राणादपि प्रिय सत्य को नहीं छोड़ा। वह जो सत्यवादियों को उन के सत्य के कारण कष्ट देते हैं वह स्वयम् सत्य के स्वरूप के जान लेने पर पीड़ित और लज्जित हो जाते हैं। जिस प्रकार प्रकाश को देखते ही टर्राने वाले मण्डक चुप हो जाते हैं इसी प्रकार सत्य की आभा मिलने पर पापी मनुष्य लज्जित होकर चुप हो जाते हैं।

सत्य से अनुराग करना एक ऐसा सद्भाव है जो मनुष्य की सहस्रों दुर्बलताओं का निवारण कर सक्ता है। जो मनुष्य सत्य के ग्रहण करने पर तत्पर रहते हैं उनके जीवन अमूल्य जीवन बन जाते हैं अत एव सत्य को खरीदो, महंगा सस्ता जैसे मिले सत्य को खरीदना चाहिये। एक बार एक बहरे और गूंगे से पूछा गया कि सत्य क्या है! उसने अपनी अङ्गुली सीधी करदी। फिर पूछा गया कि झूट क्या है? तो उसने अपनी अङ्गुली को टेढ़ा करके बता दिया। स्मरण रखो कि सत्य सर्वदा सीधा मार्ग बतलाता है और झूट अनेक प्रकार की पालिसी सिखला कर टेढ़े मार्ग से लेजाना चाहता है। कोई चाहे कैसे ही वक्र मार्ग से गुजरे परन्तु अन्त

जीवन की कामना करने वालों को तीर के समान सीधा जाना चाहिये, और झूट से ऐसे ही बचना चाहिये जैसे कि मनुष्य विषैले सांप से बचते हैं।

सत्य ही पवित्रता की नींव है! अर्हनिश इस का ध्यान रखना जीवन को अत्यन्त उपयोगी बना देता है। जो मनुष्य सत्य पर चलता है वह मध्यान्ह काल के सूर्य्य की ज्योति के समान प्रकाश को पाता है, परन्तु वक्रगामी पुरुष अन्धकार और घोर अन्धकार में चलता है। सत्य से बढ़कर कोई मार्ग ही नहीं कि जिसके द्वारा मनुष्य अपने आत्मा को बलवान बना सके और दूसरों के आदर का पात्र बन सके। ऐसे मनुष्यों का मार्ग सीधा और सच्चा होता है। वह हमारे पूर्वज ऋषियों के समान अर्हनिश प्रार्थना करते हैं कि भगवन्! असत्य से हटाकर सत्य की ओर, अन्धकार से हटा कर प्रकाश की ओर और मृत्यु के भय से हटाकर हमें मोक्ष की ओर ले चलिये। ऐसे सज्जनों के विचारों में सहसा परिवर्तन नहीं आता। जिनकी राय आज एक है तो कल दूसरी होजाती है। उन के सामने सत्य वैसे ही अचल है जैसे कि पर्वत का शिखर, जिसे हृदय में रख कर वह बढ़ते चले जाते है, और आनन्द पूर्वक अपने आदर्श पर जा पहुंचते हैं।

विपरीत इसके जो सत्य से भागते और झूट से अनुराग करते हैं उनकी अवस्था किश्ती के बादबान के समान होती है जो जिधर की हवा चलती है उधर ही झुक जाता है। नौका के समान उसकी गति का कुछ ठिकाना नहीं और वह किसी अज्ञात चट्टान से टकरा कर नष्ट भ्रष्ट होजाता है। अतएव सत्य से सफलता और असत्य से नाश होता है।

जीवन यात्रा को उत्तमता से निभाने के लिये शास्त्रों में सत्य की महिमा का गायन किया गया है। यहां तक कहा है कि "सत्या-न्नास्ति परो धर्मः अर्थात् सत्य से बढ़ कर कोई धर्म ही नहीं।

जिन महानुभावों ने इस महत्व के विषय को अनुभव कर लिया उनकेलिये सत्य प्राणादपि प्रिय बनजाता है, उन्हें विश्वास होजाता है कि सत्य को कितना दबाओ फिर उठेगा और इतिहास के पृष्ठों पर बलपूर्वक चमकेगा, जब कि असत्य अपने भक्तों के हृदयों में जख्म करता, उन्हें पीडा पहुंचाता और उन की मृत्यु के साथ साथ

स्वयं भी भस्मसात हो जाता है। प्रसिद्ध इतिहास लेखक हेरोडे-टस लिखता है कि प्राचीन ईरान के निवासी अपने बालकों को पांच और बीस वर्ष की आयु के भीतर केवल तीन बातें सिखलाया करते थे, और वह यह थीं (१) घोड़े पर चढ़ना (२) होशयारी से निशाना मारना और (३) सत्य बोलना। इसी से ज्ञात हो सक्ता है कि मनुष्यत्व के संचार के लिये सत्य के जीवन की कितनी आवश्यक्ता है ऐसे मनुष्यों के लिये असत्य की गन्ध भी बुरी प्रतीत होती है।

यूरीपाइडस यूनान का एक प्रसिद्ध कवि था उसने एक बार एक नाटक में एक अभिनेता के मुख से यह कहलवाया कि "प्रतिज्ञा की क्या बात ? मैंने जब प्रतिज्ञा की थी तो मुंह सी की थी न कि दिल से" नाटक में जब यह बात आई तो बड़ा शोर मचा। सुकरात वहां से उठ कर चला गया। उस कवि के विरुद्ध यहां तक जोर फैला कि इस अपवित्रता के प्रचार के कारण राज्य की ओर से उस पर अभियोग चलाया गया। भगवान भीष्म पितामह की रक्षा प्रतिज्ञा किसे ज्ञात नहीं, जिस ने कहा था—

परित्यज्यं त्रैलोक्यं राज्यं देवेषु वा पुनः।
यद्वाप्यधिकं एतेभ्यां न तु सत्यं कथंचन॥

मैं त्रिलोक की सम्पति और देवताओं में बास करने तक के भाव को छोड़ दूंगा, परन्तु सत्य को कभी न छोडूंगा। सूर्य्य, वायु, चन्द्रमा, अग्नि, पर्वतादि अपने धर्मों को छोड़ दें तो छोड़ दें परन्तु मैं अपनी प्रतिज्ञा से ज़रा भी न हटूंगा। पुरुषोत्तम भगवान राम-चन्द्र जी के मर्मभेदी शब्द आज भी भारत सन्तान को जीवन प्रदान कर रहे हैं।

रघुकुल की रीत यही चलि आई।
प्राण जायें पर साख न जाई॥

या जैसा कि बाल्मीकि जी ने इस भाव में प्राण डाल दिये हैं और कहा कि—

लक्ष्मी श्चन्द्रादपेयाद्वा हिमवान् वा हिमं त्यजेत्।
अतीयात्सागरो वेलां न च प्रतिज्ञामहं पितुः॥

चन्द्रमा लक्ष्मी को छोड़ दे तो छोड़ दे, हिमालय चाहे हिम

को त्याग कर हिमालय कहलाये, सागर अपने तट को छोड़ जाय तो छोड़े परन्तु मैं अपनी प्रतिज्ञा को कदापि नहीं छोड़ सक्ता। इसी उज्ज्वल भाव ने भारत के नर नारियों के हृदय में ऐसा विद्युत का संचार किया कि हज़ारों परवानों के सदृश अपनी जान पर खेल गये, परन्तु सत्य को न त्यागा। मासूम हकीकतराय का खून अभी तक ऋषि सन्तान के हृदयों को ऊष्णता प्रदान कर रहा है। सिख वीरों के कारनामे अब भी खुष्क हड्डियों में जीवन पैदा करदेते हैं। इस पुण्यभूमि में मुसल्मानों के समय में अनेक धर्मवीर होगये। इन्हीं पर ही क्या निर्भर है। इतिहास को देखो, सत्य और असत्य तो देव और असुरों का संग्राम है। रावन ने सत्य को त्याग असत्य का आश्रय लिया। रामायण बनी, लङ्केश का नाश हुआ, सत्य की विजय हुई। कौरवों ने सत्य को दबाना चाहा, महाभारत का घोर सँग्राम हुआ। भारत के अतिरिक्त अन्य देशों में भी सत्य को दबाने के लिये बड़े२ घोर अत्याचार हुए। फ्रांस में एक सम्प्रदाय के दृढ़ लोग सतरहवीं सदी में रहते थे उनका नाम Waldenses वालडेनीसिस था। १६५५ में प्यानिजा ने पोप की आज्ञा से इन्हें अपना अनुयायी बनाना चाहा। जब इन्हों ने इन्कार किया तो वह १५००० फौजी सिपाही लेकर अपने मत का प्रचार करने आया। उसने ल्यूसरना की वादी में पंहुच कर रक्तपात करना आरम्भ कर दिया। उन्हों ने वृद्धों को कत्ल किया और उन्हीं वस्त्रों में लिपटाकर आग लगाकर जला दिया। इन्हों ने पुरुष स्त्री को पकड़ा और कसाइयों की तरह उनके गले काट डाले। उन्हों ने बच्चों को पाओं से पकड़ा और धोबी के कपड़ों के समान उन के सिरों को चट्टानों से पटक कर तोड़ा। माताओं की छाती से बच्चों को छीन कर उनके अङ्ग अङ्ग को काटा और उन्हें माताओं के आगे रख कर अपने मज़हब के मान लेने की प्रेरणा की। जब इस प्रकार मारते मारते थक गये तो उन फौजी नहीं नहीं मज़हबी ठेकेदारों ने लोगों का केस्टलेज़ पर्वत पर इकट्ठा किया और सब को नङ्गा कर दिया। एक के सिर को दूसरे के पाओं से बान्धा और तब पर्वत की शिखर से नीचे की चट्टानों पर लुड़का दिया। इसी भयानक और हृदय विदारक समाचार को सुन कर क्रामवेल उठा। उसने धन संग्रह किया और अनुमान १५ लाख रुपये इन सत्य-निष्ट धर्मात्मा पुरुषों के सहायता के लिये इंगलैण्ड से भिजवाये

और ड्यूक आफ सेवाय को कहला भेजा कि यदि परमात्मा के स[च्चे]
सच्चे भक्तों के ऊपर से अत्याचार करने वाले हाथ को तत्काल
हटाओगे तो मैं जहाजी बेड़ा भेजकर तुम्हारे घर को नष्ट करदूंगा।

पस जिधर देखो, इतिहास में यही संग्राम मिलता है। मतभेद
सर्वदा से रहा है और प्रकाश में चलने वालों की संख्या भी हमेशा
थोड़ी रही है। इस लिये अन्धकार में पड़े मनुष्यों के परित्राण के
लिये यह अत्यावश्यक है कि हम अपने सत्यनिष्ठ जीवन से उनको
अपनी ओर आकर्षित करें और इस क्षेत्र में विरोध या अपमान का
लेशमात्र भी ध्यान न करें। असत्य उस तिनके के समान होता है
जो जल की सतह पर तैरता है परन्तु सत्य उन रत्नों के समान
होता है जो जल की तेह में बैठ जाते हैं। रत्नों के सदृश सत्य
को ढूंढने मे परिश्रम करना पड़ता है, विरोध होता है, कष्ट सहने
पड़ते हैं। ऐसी अवस्था में दृढ़ता और गम्भीरता की आवश्यकता है।
गम्भीरता का सब से बड़ा शत्रु क्रोध है। इसी लिये अक्रोध को धर्म
का लक्षण माना है। शान्तचित्त होकर ही हम अपने उद्देश्य को प्राप्त
कर सकते हैं। क्रोध की उत्पत्ति के कारणों और उसके शमन के
उपायों पर विचार करने से हम शीघ्रता से सत्य को ग्रहण करसकेंगे।

अक्रोधः-धर्म का दशवाँ लक्षण

ममत्व और अहंकार को पिसता हुआ देखकर मनुष्य कैसे
किंकर्तव्य विमूढ होजाता है। उसका शरीर, उसकी इन्द्रियां, उसका
मन सभी वश से बाहर होने लगते हैं। वह तेज को धारण करता
है परन्तु यह विषैला तेज जो मुंह तथा आंखों से बरसता है, जो
समग्र शरीर को ही कम्पायमान करने लगता है, अग्नि का रूप
धारण कर जलाना आरम्भ करदेता है। क्रोधी दूसरों को जलाने से
पूर्व अपने आपको ही भस्म सात करता है। होसकता है कि उसकी
चिङ्गारियां दूसरे के घरों को भी जला दें परन्तु ऐसा भी देखा जाता
है कि जल सदृश दूसरों के शान्तचित्त पर चिङ्गारियां पड़कर
बुझतीं और शान्त होजाती हैं। भक्त ज़ेवियर एक बार जापान
के एक नगर में धर्म का प्रचार कर रहा था। लोग उपहास कर रहे
थे। एक जापानी क्रोध में आगया और उद्दण्ड बन कर भक्त जी के

समीप पहुँचा। निकट पहुंच कर कहा कि मुझे एक बात आप के कान में कहनी है। इस पर ज़ेवियर ने झुक कर अपना कान उस के मुंह के पास कर दिया। उस धूर्त्त ने सब के सम्मुख भक्त के मुंह पर खूब थूका और हंसते २ भाग गया। उस महात्मा ने बिना कुछ कहे रूमाल से मुंह पूंछ डाला और उपदेश देने लग गया। ऐसे महात्माओं के साधन सम्पन्न शान्त हृदयों पर क्रोधाग्नि आकर स्वयम शान्त होजाता है परन्तु जहां दूसरों के हृदय फूस के समान शुष्क और साधन विहीन हैं वहां यह क्रोधाग्नि दावानल अग्नि के सदृश पहुंचते ही प्रचण्डाग्नि को प्रज्वलित कर देती है। जो मनुष्य स्वयम शान्त नहीं, जिसके हृदय में अग्नि तपाने के लिये सर्वदा उद्यत रहता है वह दूसरों को क्या शान्त करेगा। क्रोध क्लैवत्व का चिह्न है। यह कुछ भी उत्तम प्रभाव नहीं डाल सक्ता और जिसके हृदय में इसका निवास है उसे दूसरों से कहीं अधिक कष्ट पहुँचाता है।

एक क्रोधी ने एक बार क्रोध में आकर एक ऐसा पत्र लिख दिया जिससे उसका तथा उसके सम्बन्धी दोनों का जीवन तलख हो जाता। जब चिट्ठी डाक में डाल दी गई तो शान्तचित्त हो कर विचारने पर उसे बड़ा दुख हुआ। वह भागा हुआ पोस्ट मास्टर के पास पहुंचा और बड़ी कठिनाई से पत्र निकलवाया। पत्र को पाते ही फाड़ डाला और कहने लगा कि "मैं ने अपने मित्र को बचा लिया"। यह सच है कि लिखे हुए सब्द चिरस्थायी होजाते हैं इस लिये क्रोध की अवस्था में कभी पत्र न लिखना चाहिए। पत्र ही क्या क्रोध में कभी कुछ कहना भी न चाहिये। यदि आप क्रोध में कुछ देर के लिये एकान्त में चले जावें तो सरकश घोड़े के सदृश जो थक कर स्वयम् खड़ा हो जाता है, क्रोध स्वयमेव शान्त होजावे। इस क्रोधाग्नि को भी कुछ देर जलने के लिये ईन्धन चाहिये। संसार में ऐसे भी मनुष्य मिलेंगे जो क्रोध वश दूसरों को कष्ट देने के लिये दृढ़ प्रतिज्ञा कर बैठते हैं और दोनों पक्षों के नाश करने पर उतरू होजाते हैं।

पादरी हेस्टिङ्गस ने अपने ग्रन्थ Memories of a Million Miles में एक विचित्र कथा लिखी है। नोवा स्कोशिया द्वीप में एक किसान रहता था। वह अपने नियत समय पर खेत से आया

करता था। एक दिन कुछ पहिले आगया। अभी खाना तय्यार नहीं था उसने क्रोध में आकर अपनी पत्नी को सख्त सुस्त कहना शुरू किया। वह भी शान्त न थी, गुस्से में उत्तर देती ही रही। गृहपति क्रोध से उठा और यह कहकर बाहर चला गया कि "मैं अब तुम से कदापि न बोलूंगा"। क्रोध तो शान्त हुआ परन्तु वह अपने इस वचन पर दृढ़ होगया। निरन्तर १७ वर्ष पर्यन्त वह दोनों एक स्थान पर रहे। बाल बच्चे भी पैदा हुए, परन्तु पति अपनी भार्या से नहीं बोला। जब कभी उसे कुछ कहना होता, कुछ मांगना होता तो वह स्लेट पर लिख कर दिखला देता। सतरहवें वर्ष उसकी स्त्री बीमार हुई। उस ने बड़ी कोशिश की कि वह किसी प्रकार अन्त के समय में कुछ कहे, जब आसनमृत्यु होगई तो उसने कहा। "जाहन! प्रणाम, मेरा अन्तकाल आगया, मुझे विश्वास है कि दूसरे जन्म में मिलकर हम अधिक आनन्द भोगेंगे। जाहन का वज्रादपि कठोर हृदय इस पर भी न पिघला। उसने स्लेट पर इतना "प्रणाम, मुझे आप के वियोग का बड़ा दुख है' लिख कर उसकी आंखों के सामने कर दिया। वह पढ़ नहीं सकी थी, पांसा बदल लिया और ठण्डी सांस भरी। जाहन ने इस हृदय विदारक दृश्य को देखा और बेवश होकर बोल उठा, 'सुसन! मुझे वस्तुतः आप के वियोग का बड़ा दुख है, परन्तु उसके प्राणान्त होचुके थे। यह शब्द उसके कान में न पहुंचे और वह तड़पती हुई मर गई! पाठकवृन्द! विचारिये। इस क्रोधाग्नि ने जीवन को कैसे कटु और नीरस बना दिया। भारतवर्ष के महानुभावों को तो यह गौरव प्राप्त है कि यहां अनेक सज्जन ऐसे हुए हैं जो शान्त और गम्भीर थे। महात्मा बुद्धदेव जी के गम्भीर तथा शान्तजीवन ने लाखों भिक्षुकों को शान्त बना दिया था। वर्णन है कि एक बार एक सज्जन उनके पास गया, और बगला भक्त कहकर बुरा भला कहने लगा। जब कुछ काल तक गालियां देता रहा तब भगवान बुद्ध ने पूछा, सज्जन! यदि तो बतलाओ कि यदि कोई राजा किसी साधु के पास कुछ बहुमूल्य पदार्थों की भेंट ले जावे और वह साधु स्वीकार न करे तो वह भेंट किस की हुई। उसने कहा उसी राजा की जो भेंट को ले आया था। महात्मा बुद्ध ने कहा, इसी प्रकार यह जो गालियों की भेंट तुम लाये हो। मुझे नहीं स्वीकार नहीं आप इसे स्वयम

जाइये वह लज्जित हुआ और महात्मा जी के पाओं पर सिर रख दिया। एक शान्तचित्त महानुभाव ने अपने जीवन से क्रोधाग्नि को क्षण में शान्त कर दिया। केवल उसे ही ताप नहीं पहुंचा किन्तु सन्तप्त हृदय भी शान्त होगया। ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं जिन में इस देश के वीर भक्तों और महात्माओं ने अक्रोध द्वाराही लोगों के जीवन पर प्रभाव डाला। यह उसी प्रभाव का परिणाम है कि उनके कल्पित सम्प्रदाय भी चले गये। आज भारतवर्ष में सदाचारी पुरुषों की आवश्यकता है, आज नवयुवकों में नवीन जीवन के संचार करने की ज़रूरत है। तब सहृदय पाठक! विचार कीजिये कि हमें किस प्रकार का जीवन व्यतीत करना चाहिये। जो कुछ हम चाहते हैं उसके प्रचार का सब से सुगम, सब से उत्तम और सब से उपयोगी उपाय यही है कि हम भारत के नवयुवकों के समक्ष में ऐसा जीवन्त और ज्वलन्त उदाहरण उपस्थित करें जिससे वह आकर्षित हों और अपने सदाचार के निर्माण की ओर ध्यान देना आरम्भ करदें। आप कुछ वीर महानुभावों के जीवन युवकों के सामने रखिये और अपने जीवन द्वारा उनको शान्त और गम्भीर बनने की शिक्षा दें तो आपको ज्ञात होगा कि क्रोध को वश में करलेना बड़ा सुगम कार्य्य है! भारतवर्ष के प्राचीन इतिहास पर दृष्टि डालो तो ज्ञात होगा कि यहां सहनशीलता का गुण पराकाष्ठा तक पहुंचा हुआ था। भगवान् बुद्धदेवजी का तो यह नियमही था कि घृणा को घृणा से कदापि नहीं जीत सक्ते किन्तु प्रेम से घृणा को जीत सक्ते हैं। यदि यह उच्चभाव हमारे सामने हो तो हमारे ममत्व और अहंकार को कदापि चोट नहीं पहुंच सकी। हम पर कोई कितना ही क्रोध करे हम हंसते २ सह लेंगे। न केवल हमारा आत्मा सुरक्षित रहेगा वरन हम दूसरों की आत्माओं को भी वशीभूत करने के लिये समर्थ होजावेंगे। भारत के नवयुवक, यदि विचार करेंगे तो उन्हें इन पृष्ठों में ऐसी कोई भी बात न मिलेगी जिसे वे अपने जीवन में घटाना चाहें तो न घटा सकें। विपरीत इसके यदि वह क्रोध को दबाकर क्रमशः धर्म के लक्षणों का अपने जीवन में पालन करेंगे तो उनका जीवन अमूल्य जीवन होजायगा। वह अमृत पिता के अमृतपुत्र बन कर अपने जीवन के महत्व को अनुभव करने में समर्थ हो जावेंगे।

उपसंहार ।

मनुष्य जीवन एक पहेली है । सृष्टि की उत्पत्ति के दिन से आज पर्य्यन्त बुद्धिमान इस पहेली को जानने की चेष्टा करते रहे हैं और जितने अंश में सज्जनों ने इसे समझा है उतने ही वह सुखी हुए हैं। मनुष्य जीवन एक सुन्दर और टेढ़ी गली के समान है जिस के दोनों तरफ़ खूबसूरत बेलें और शोभायुक्त फलों के पेड़ लगे हैं। मार्ग के दाएँ बाएँ ऊपर नीचे मनोहर तितलियां (Butter flies) उड़ रही हैं। वृक्षों पर लुभानेवाले फलों की डारें लटक रही है। मन ललचाता है परन्तु हम न तो फलों की प्रशंसा करते और न फलों का आस्वादन करते हैं। हम इतने वेग से उस गली के मुख या फाटक की ओर जा रहे हैं जिस के सम्बन्ध में हमें विश्वास है कि वह इस मार्ग से भी अधिक लावण्ययुक्त होगा । परन्तु जितना हम आगे बढ़ते हैं हम देखते हैं कि वृक्ष फल और फलों से शून्य हो चले हैं Butter flies भी नहीं मिलतीं। जीवन शुष्क और नीरस होता प्रतीत होता है। और हम अपने आप को खुश्क रेगिस्तान में पाकर दुखी होते हैं। वस्तुतः पाठकवृन्द ! हमारी यही दशा है । युवावस्था में हम धर्म कर्म की ओर ध्यान नहीं देते और जब इन्द्रियां शिथिल हो जाती हैं तो हम जीवन को नीरस पाते हैं । वे भूले हैं जो भोगों और विषयों में सुख ढूढते हैं। वह भी गुमराह हैं जो शारीरिक आवश्यक्ताओं की पूर्त्ति के लिये कोशिश नहीं करते। शारीरिक हो अथवा आत्मिक, जीवन बुद्धि का नाम है । शारीरिक उन्नति के विना आत्मिक सुख मिलना दुस्तर है । बुद्धि ही जीवन का विशेष चिन्ह है। जब किसी वृक्ष की शाख फलती फूलती नहीं तो हम कहते हैं कि वृक्ष की इस शाखे में जीवन नहीं रहा। बच्चा जब उत्पन्न होता है तो वह बढ़ता है उस के शरीर के अङ्ग मांस से भरने लगते हैं जो आयु पर्य्यन्त काम में आते हैं । ठीक ऐसे ही बाल्यावस्था से हमारे अन्दर धर्म अथवा अधर्म के संस्कारों का संचार होने लगता है । इन्हीं संस्कारों से हमारा आत्मिक जीवन बन जाता है और समग्र आयु पर्य्यन्त हम इसी जीवन से जीते हैं। जो लोग बाल्यावस्था अथवा युवावस्था में अपने उत्तम संस्कार नहीं बनाते वे अपने जीवन को वृद्धावस्था में बड़ी कठिनता से ही ...

सके हैं। जीवन निस्सन्देह एक यात्रा है जिसमें हम सुखों और दुःखों के दृश्यों को देखते हुए आगे बढ़े चले जा रहे हैं । यह तो हमारे आधीन है कि हम अपने जीवन को पवित्र अथवा अपवित्र, उत्तम अथवा निकृष्ट, सुखी अथवा दुखी बना लें । जिन्होंने मन्तव्य तथा कर्तव्य को जान लिया और वह कर्तव्य कर्मों को निष्काम भाव से करते गये उनके लिये जीवन बंजर या बियाबान नहीं, वरन वह सौन्दर्य और लावण्य युक्त है । जिनके आत्मा बलवान हैं और जिन्हें सृष्टि नियमों में विश्वास तथा सर्वव्यापी परमात्मा के न्याय की आशा है उनके लिये यह जगत उत्तमता से परिपूर्ण होरहा है । परन्तु वाह्य लावण्य के लिये हमारे मन में लावण्य का भाव होना चाहिये और बाहर की सुन्दरता को जानने के लिये हमारा हृदय भी सौन्दर्यमय होना चाहिये । यदि हम ने अपने हृदय और मन को सुन्दर नहीं बनाया तो हमें जगत में भी कहीं सौन्दर्य नहीं मिलेगा । इसी को योग दर्शन में चित्तप्रसादन कहा है । संसार में मनुष्य जीवन का माप जीवन के वर्षों से नहीं किया जाता वरन उस के उत्तम कर्मों से जीवन का मूल्य पाया जाता है । जीना तो उसी का है जो धर्मपूर्वक कर्तव्य धर्मों का पालन करता हुआ जीता है । एक विद्वान ने कहा है कि ज़ङ्ग लगने से तो कट फट जाना अच्छा है । मनुष्य जीवन की अवस्था भी लोहे के समान है । यदि प्रयोग में लाते २ कोई शस्त्र टूट जावे तो उस से जीवन और उसके आनन्द को देख कर सुख मिलता है परन्तु पड़े २ ज़ङ्ग लगजावे तो वह मृत्यु के समान है । जीवन यात्रा में प्रकाश की आवश्यकता है । प्राचीन ऋषि मुनि अहर्निश प्रकाश या ज्योति के लिये प्रार्थना किया करते थे । संसार के ऐश्वर्य्यों को तुच्छ मान कर और अपने अमूल्य जीवन के उद्देश्य को लक्ष्य में रख कर वह सायं प्रातः प्रार्थना किया करते थे ।

येनाहं नामृतं स्याम् किमहं तेन कुर्याम् । असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्युर्मा अमृतं गमयेति । हे रुद्र ! यत्ते दक्षिणं मुखं तेन माम् पाहि नित्यम् ॥

जिन कर्मों द्वारा हम अमृत पुत्र बन सकें, उन कर्मों के

करने से हमें क्या लाभ है ! हे जातवेद ! हमें असत्य से हटाकर सन्मार्ग की ओर ले चलिये, हमें अन्धकार से हटाकर ज्योति की ओर ले चलिये, हमें मृत्यु के भयों से मुक्त कराकर अमृत के पात्र बनाइये । हे रुद्रस्वरूप परमात्मन् ! आप प्राणियों को उनके पापों के लिये दण्ड देते हैं । आप के अटल नियमों से पाप करके कोई भी दण्ड से नहीं बच सक्ता । समग्र संसार के दुखी, पतित और पीड़ित मनुष्य अपने जीवन द्वारा आप के रुद्र स्वरूप की साक्षी देते हैं, परमात्मन् ! हमें ज्योति दो ताकि पाप के जीवन से बच कर हम आप के दण्ड के भाजन न बनें ।

जिस विवेकी मनुष्य ने पुनर्जन्म के मर्म को समझ लिया, वह अपने चारों ओर दुखियों को देख कर त्राहिमाम् त्राहिमाम् कर उठेगा । वह पाप से, असत्य से, हां, अन्धकार से बचने के लिये ज्योति की कामना करेगा, क्योंकि ज्योति चाहे भौतिक हो अथवा आत्मिक सब से श्रेष्ठ सुधारक है । वेद भगवान इसी ज्योति के निरूपण के लिये कहते हैं ।

"वेदाहमेतत्पुरुषं महान्तं तमादित्य वर्णं तमसा परस्तात्" ।

यह ज्योति उस परम पिता से मिलती है जो स्वयम् तमसा परस्तात् हैं अर्थात् जहां अन्धकार का नामोनिशान नहीं ! उस से तीनों लोकों को प्रकाश मिलता है । उस से वाह्य जगत में सृष्टि को और अभ्यन्तरीय जगत में बुद्धि को प्रकाश मिलता है । बुद्धि के लिये प्रकाश मिलने की वेद में बड़ी महिमा हैं । गायत्री या सावित्री मन्त्र का इतना मान इसी लिये है कि उस मन्त्र में "धीमहि धियो योनः प्रचोदयात्" का वर्णन है कि वह परमात्मा हमारी बुद्धियों को सत्कर्मों की ओर प्रेरित करे । महापुरुषों का आदर और सम्मान भी हम इसी लिये करते हैं कि वे साधारण मनुष्यों के समान नहीं थे । उनके जीवन से भी हमें प्रकाश मिलता है । उन के कारनामें और उनकी जीवनज्योति हमारे जीवनों में ज्योति का संचार करती और हमारे अन्दर भी पवित्रता के गौरव का सेचन कर देती है । जिस से पुनीत जीवन के बीज का वपन हो जाता है । अपने देश अथवा संसार के इतिहास में जहां कहीं देखे

पवित्र महात्माओं के जीवन का वर्णन मिलता है हम उसे मन लगा कर पढ़ते हैं, निशान करलेते हैं और उन से जीवन के व्यतीत करने की शिक्षा ग्रहण करते हैं । इन महात्माओं ने सत्य के लिये, प्रकाश के लिये और अमर जीवन की प्राप्ति के निमित्त अनेक कष्ट उठाये और अन्त में ज्योति को प्राप्त किया उनके जीवन और प्रातः स्मरणीय जीवन हमें ज्योति का मार्ग दिखलाते हैं, इसीलिये वे हमें बहुत भाते हैं । केवल इतनाही नहीं परन्तु महापुरुष हमें सिखलाते हैं कि हमारे अन्दर कितनी दिव्य और अनुपम शक्तियां हैं । यदि हम उनका सत्प्रयोग करें, यदि हम धर्म के तेज से अभिभूत हो कर सन्मार्ग की ओर चल पड़ें तो हम क्या कुछ नहीं कर सके । मनुष्य निस्सन्देह अल्पज्ञ है परन्तु तिस पर भी उस में इतनी शक्ति है कि वे एक सृष्टि को वश में कर सकता है । इतिहास के पृष्ठों पर दृष्टि डालो तो ज्ञात होगा कि मनुष्य में कितनी अथाह शक्तियां हैं। वह समुद्र को वशीभूत करलेता, और आन्धी वा तूफानों पर अपना आधिपत्य जमा लेता है । वह आकाश पर चढ़ता और तारों घा सय्यारों के गुप्त भेदों को जानकर लौटता है, वह तेज़ से तेज़ ज्योति को लगाम लगाकर अपने क़ाबू में लाता है । वह पर्वतों को पाश २ कर डालता और नज़र न आनेवाले परमाणुओं को क़ैद कर के उनके नाम, गुणों और नियमों को जान लेता है । वह जगत के ऐश्वर्य्यों को वश में करलेता और अग्नि तथापानी की शक्तियों को वश में करके उनसे नौकरों का सा काम लेता है। वह नियम बनाता और युद्धक्षेत्र में जाकर बड़े से बड़े राज्यों को पादाक्रान्त करके शासन करता है । वह ऐसे मार्मिक शब्दों का उच्चारण करता है जो कभी नाश को प्राप्त नहीं होते। वह ऐसे गीत गाता है जो सहस्रों वर्षों तक जीते और दूर दूर देशों में गाये जाते हैं । संक्षेपतः वह सभी कार्य्य करता है कि जिनका इतिहास में वर्णन है । इस से स्पष्ट ज्ञात होता है कि मनुष्य में एक अद्भुत और महती शक्ति है जो प्रायः विद्या के प्रत्येक विभाग में देखी जाती है । वह सृष्टि की प्रत्येक वस्तु में परिवर्तन करदेता है । संसार में परिवर्तन लाने के लिये तमाम हवाओं, आन्धियों, भूकम्पों, समुद्रों और ऋतुओं ने इतना परिवर्तन नहीं किया जितना कि मनुष्य ने उत्पत्ति के दिवस से आज तक किया है, और क्यों न हो यह सृष्टिही

मनुष्यों के लिये बनी है वेद भगवान का आदेश भी तो यही है कि "तेन त्यक्तेन भुंजीथा" सृष्टि को भोगो. मगर त्याग पूर्वक भोगो। सृष्टि या जगत हमारेही लिये तो बना है। उपनिषदों में वर्णन है कि श्रेय और प्रिय दो मार्ग हैं। ऐहिलौकिक सुखों की कामना करने वाले प्रिय मार्ग का आश्रय लेते हैं परन्तु संसार रूपी कर्म-क्षेत्र में आकर संसार के रङ्ग मंच पर आनने वाले अभिनेता और अभिनेत्रीगण अपना २ भाग भली भान्ति खेलकर हट जाते हैं। दर्शक अच्छे अभिनेताओं की प्रशंसा करते हैं। इतिहास में इनका वृतान्त लिखा जाता है और यह महापुरुष इतिहास रूपी आकाश में चमकते हैं। इन महापुरुषों के जीवन में एक मात्र कर्तव्यपराय-णता का सद्भाव मिलेगा। भगवान् कृष्ण के उपदेश का निचोड़ निष्काम सेवा तथा कर्तव्य परायणता है। गीता में कहां है।

"कर्मण्येव अधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन"

अभिनेता का धर्म है कि वह अपने पार्ट (कर्म) को भली भान्ति से निभावे, फल जो हो उससे उसे कुछ भी सरोकार नहीं। जगत में देखा जाता है कि हज़ारों लोग नित्यप्रति थियेटरों में जाकर एक्ट करते हैं, वहां वह हरिश्चन्द्र से सत्यवादी बुद्ध के से शान्त राणा प्रताप से बीर और युधिष्टर के समान धीर बन कर दिखलाते हैं परन्तु नाटक के अनन्तर बनावट के खोल के उतर जाने पर फिर वही के वही भूट, अशान्त, भीरु और अधीर बन जाते हैं। इनका जीना न जीना बराबर है। जिन महात्माओं का वे अनुकरण करते हैं वह भी निष्फल जाता है। वस्तुतः संसार में कोई भी ऐसी बात नहीं जो मनुष्य की इतनी शान्ति प्रदान कर सके जितना कि ड्यूटी या कर्तव्य के भाव से पैदा होता है। कविवर टनीसन ने सत्य कहा है कि

The Path of Duty is the way to glory

आर्य्य जीवन आद्योपान्त हमें कर्तव्य परायण बनना सिखलाता है। सोना, जागना, खाना, पीना, मनुष्यों से व्यवहार तथा परमात्मा के उपकारों को स्मरण करने के लिये उपासना. प्रार्थना या स्तुति करना यह सभी कुछ हमारे लिये धर्म या कर्तव्य बन जाता है। वैदिक धर्म के समान ड्यूटी या कर्तव्य का उच्च आदर्श कहीं भी न मिलेगा। भगवान रामचन्द्र का बनवास, सीता का पातिव्रत

धर्म, भरत का राजसिंहासन का त्याग, लक्ष्मण का भ्रातृ स्नेह, विभीषण जैसे भाई का निरादर करना इत्यादि कर्तव्यपरायणता के जीवित उदाहरण हैं। जिन सज्जनों ने धर्म के मर्म को समझ लिया है उनको प्रतिक्षण धर्म या कर्तव्य duty का भाव सामने उपस्थित हुआ दीखता है। वह परमात्मा के सदृश उसे भी सर्व व्यापी मानते हैं और कभी भी आत्मा के गिरने का अवसर नहीं पाते। मनुष्य के आदर्श पर एक विद्वान ने क्या अच्छा कहा है।

Had I an arm to reach the skies,
Or grasp the ocean in a span
I, d not be measured by my size
The mind's the standard of the man

यदि मेरा हाथ इतना लम्बा होता कि आकाश को पहुंच सक्ता या समुद्र को मुठी में बन्द कर सक्ता तो लोग मुझे मेरे क़द से न मापते। मनुष्य का आदर्श उसके मन से ही पहिचाना जाता है। महात्माओं की महानता उनके उच्च आदर्शों से प्रतीत होती है। यही कारण है कि उच्च भावों के रखते हुए उनके मन हृदय और आत्मा भी विशाल होजाते हैं और वे अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिये किसी भी सांसारिक भय की परवाह नहीं करते उनकी दशा उस वीर के समान होती है जो कहता है कि-

Bullets around me fly,
Bayonetsto left and right,
Hands are quite steady
Willing and ready,
And heart that knows no fear.

रणक्षेत्र में गोलियां चल रही हैं। नेज़े बाएँ और दाएं बढ रहे हैं परन्तु मेरे बाहु दृढ़ हैं जो मेरी आज्ञा पर तत्पर खड़े हैं और मेरे मन में लेश मात्र भी भय नहीं। पाठक! यदि इन पृष्ठों में आप को आत्मोन्नति के उपायों में विश्वास होजाय तो अपने जीवन को सफल और उच्च बनाने के लिये धर्म के लक्षणों को धारण करो तब आप आर्य्य जीवन के अमृत को आस्वादन करने के भागी बनेंगे।

परन्तु वीर और धीर महात्मा भी यहां आकर गिरजाते हैं हमारे

देश में अनेक ऐसी कथाएं प्रचलित हैं जिन में यह सिद्ध किया जाता है कि बड़े बड़े योगी भी अधीर हो जाते हैं और अपने तप को गँवा बैठते हैं। वह भय यह है कि जीवन यात्रा में हम कभी २ अनेक उत्तम वस्तुओं को देखना भूल जाते हैं। हमें अपनी मानसिक अवस्था का पता उस समय लगता है जब हम किसी की अनुपस्थिति में उसका वर्णन करते हैं। किसी का स्वभाव होता है कि अनुपस्थिति में पुरुषों की खूबियों का विचार करते हैं, कोई उन के गुणों और दोषों दोनों को देखते हैं और तीसरी श्रेणी के वे मनुष्य होते हैं जो केवल छिद्रान्वेषण ही करते रहते हैं। जैसे चूहे का शिकार करनेवाली बिल्ली चूहे से दृष्टि हटाकर इधर उधर नहीं देखती चाहे पास से हाथी भी क्यों न गुज़र जावे, इसी प्रकार वह छिद्रान्वेषण पर इतना विचार करते हैं कि मनुष्यों के उत्तम गुणों पर उनका ध्यान हीं नहीं जाता। यह नितान्त निन्दनीय भाव है। वह दूसरों के दोषों को मनके बनाते हैं और उन मनकों की माला को हर समय ऐसे फेरते हैं जैसे कोई ईश्वरभक्त ओ३म का जप कर रहा हो। हमारे विचार में ये एक अग्नि की भट्टी के सदृश हैं जो हमारे मन को तपा कर अशान्त करता है। मनुष्य अल्पज्ञ है, कौन है जिस में न्यूनाधिक दोष नहीं। हम आत्मिक उन्नति चाहते हैं। हमें जगत को सुन्दर बनाना और सुन्दर देखना है तब दृढ़ विचार कर लो कि यथा सम्भव हम जब विचार करेंगे तो दूसरोंके गुणों पर क्योंकि गुणों की सम्मति हमें उत्साहित करेगी विपरीत इसके छिद्रों त्रुटियों और दोषों का विचार हमारे मन को ग्लानि के बुरे संस्कारों से दूषित करदेगा।

चित्रकूट यात्रा

(श्रीयुत पं० रामनारायण मिश्र बी. ए. लिखित)

प्राचीन ऋषियों ने तीर्थों के स्थान निश्चय करने में अपनी विशाल बुद्धि का परिचय दिया है, जिस तीर्थ स्थान पर जाइये वहां किसी न किसी रूप में प्रकृति अपनी शोभा दिखलाती है। मनुष्यों के कला कौशल कहीं २ प्रकृति की इस शोभा को दुगुना कर देते हैं, इस में कोई सन्देह नहीं कि इन तीर्थों में, वर्तमान काल में ऐसे सामान भी देखने में आते हैं कि जो यात्रियों की श्रद्धा को कम करते हैं, परन्तु ये दोष ऐसे नहीं हैं कि जो सुधर न सकें, सुधर जाने पर हमारे तीर्थ मनुष्य को संतोष और शांति देने के स्थल बन सकते हैं, ऐसेही तीर्थों में से एक चित्रकूट है।

यात्रा

वर्षा काल में यह स्थान बड़ा ही रमणीक होजाता है। हम लोगों ने २३ सितम्बर सन् १९११ई० को सकुटुम्ब काशी से चित्रकूट के लिये प्रस्थान किया। ईस्टइंडियन रेलवे की जो शाख़ जब्बलपुर को जाती है उसी लाइन पर मानिकपुर जंक्शन है, यहां से एक लाईन झांसी को चली गई है इसी लाइन पर करवी स्टेशन है। चित्रकूट आने के लिये बैलगाड़ी और घोड़े मिल जाते हैं। करवी के आगे एक स्टेशन चित्रकूट नाम का भी है परन्तु वहां से चित्रकूट दूर है। रास्ता ख़राब है और यहां किसी प्रकार की सवारी नहीं मिलती, न मालूम रेलवे कंम्पनी ने ऐसा भ्रम में डालनेवाला स्टेशन क्यों बनाया।

करवी

करवी स्टेशन पर इस प्रान्त के स्कूलों के सब डेप्युटी इन्स्पेक्टर ठाकुर शिवकुमार सिंह मिले। इन्होंने अत्यन्त अनुग्रह से हमलोगों के ठहरने का पूरा प्रबन्ध कर दिया। करवी ज़िला बांदा का एक सबडिवीज़न है। यहां ज्वाइंट मजिस्ट्रेट, डिप्टी कलक्टर, तहसीलदार इत्यादि हाकिम रहते हैं। यहां एक मिडल स्कूल भी है। यह स्थान पेशवाओं के समय में बड़ा प्रसिद्ध था। ऐसा मालूम होता है कि करवी नाम कामद गिरि पर्वत के कारण पड़ा है, यह पर्वत करवी से छः मील पर है। सन् १८१८ ई० में जब कि पेशवा बाजीराव के भाई अमृतराव

ने अंगरेज़ों की शरण ली और जब उनको अंगरेज़ी सरकार की ओर से पेंशन मिलने लगी, तब उन्हों ने इसी स्थान को अपना निवास स्थान किया क्योंकि यहां पर उनको एक जागीर भी मिली थी, अमृत राव की मृत्यु के बाद उनके पुत्र विनायक राव ने यहां बड़े सुन्दर महल, तालाब और कोठियां बनवाई, उन्हीं के परिवार के इस समय श्रीमन्तमारेश्वर राव करवी में रहते हैं। २३सितम्बर को सायंकाल हमलोगों को इनके दर्शन प्राप्त करने का सौभाग्य हुआ। करवी पयस्वनी नदी के किनारे है।

चित्रकूट

चित्रकूट के पंडे या उनके दलाल मानिकपुर स्टेशन ही से मिलने लगते हैं और यात्रियों के बाप दादा के नाम की पूछ शुरू कर देते हैं। करवी से चित्रकूट ६ मील है। कुछ दूर तक बांदा की पक्की सड़क मिलती है। पर कच्ची सड़क बहुत ही ख़राब है। चौबीस तारीख़ के प्रातःकाल हम लोग जब करवी से चले तो पानी बरसने लगा, ठाकुर शिवकुमारसिंह और मैं घोड़े पर सवार हुए। स्त्रियां और बच्चे बैल गाड़ी में बैठे। इस समय कच्ची सड़क पर चलना कठिन था, हिंदु यात्रियों और बांदा ज़िले के अफ़सरों को इस ओर ध्यान देना चाहिये जिस स्थान पर वर्ष में सहस्त्रों स्त्री और पुरुष आते हैं वहां की सड़कों की ऐसी अवस्था न होनी चाहिये।

कार्त्तिक और चैत्र में यहां बहुत भीड़ होती है। प्रायः तीस, चालीस हजार यात्री बाहर से आते हैं। उस स्थान की शोभा मन्दाकिनी नदी और चारों ओर के पर्वतों से बहुत बढ़ जाती है।

सीतापुर

मन्दाकिनी नदी के बाईं ओर सीतापूर का कस्बा है। चित्रकूट के बहुत से मन्दिर इसी ओर हैं। पंडे भी प्रायः यहीं रहते हैं। खाने पीने की चीज़ें यहीं बिकती हैं। इस कस्बे में एक संस्कृत पाठशाला और एक डिस्ट्रिक्टबोर्ड का प्राइमरी स्कूल है। संस्कृत पाठशाला चंदे से चलती है। इसमें बहुत से विद्यार्थी बाहर के रहनेवाले हैं जिन को भोजन भी मिलता है। खेद का विषय है कि पंडे और पुजारियों के लड़के इस में पढ़ने नहीं आते।

हनुमान धारा।

२५सितम्बर के प्रातःकाल हम लोग हनुमान धारा गये। वहां

दिन खूब वर्षा हुई। हनुमान धारा, मन्दाकिनी के दाहिने तरफ़ दो मील है। ऊपर जाने के लिये पक्की सीढियां बनी हैं जिनकी संख्या ३६० कही जाती है। यह अत्यन्त रमणीक स्थान है। यहां पर्वत से सर्वदा पानी गिरा करता है। झरने के नीचे एक हनुमान की मूर्त्ति बनी है। पानी एक कुण्ड में जमा किया जाता है। कुण्ड के बग़ल में एक बारहदरी है। उस में भी पानी जमा रहता है। यहां से कुछ ऊपर सीता रसोई का मन्दिर है। यहां से जंगल शुरू होता है।

कामदानाथ

२६ सितम्बर को हम लोगों ने कामदानाथ की परिक्रमा की, परिक्रमा का रास्ता पक्का है। जिसको राजा पन्ना ने डेढ सौ वर्ष हुआ बनवाया था। पहाड़ों पर सुन्दर पौदों और वृक्षों से ढका है। परिक्रमा में कई अच्छे २ मन्दिर मिलते हैं। इस पहाड़ी पर अधिक बन्दर हैं। जिनको यात्री चने खिलाते हैं। कामदानाथ पर्वत के पास ही लक्ष्मण गिरि है। जिसके ऊपर लक्ष्मणजी का एक मन्दिर है जहां जाने के लिए दो सौ से अधिक सीढ़ियां बनी हैं। इस पहाड़ी पर एक कुआं भी है।

कोटि तीर्थ

२७ सितम्बर को हम लोग कोटितीर्थ के लिये रवाना हो गये। यह नदी के उस पार है। बहुत सीढ़ियां चढ़ने पर यात्री यहां पहुँचते हैं। यहां एक झरने से बड़ा शुद्ध पवित्र जल गिरा करता है जो एक कुण्ड में जमा होता है। कहा जाता है कि किसी समय में यहां एक करोड़ ऋषियों ने मिलकर यज्ञ किया था। यह स्थान भी अत्यन्त रमणीक है। यहां से पहाड़ी के ऊपर ही ऊपर हम लोग देवांगना गये। यहां भी एक झरना है और एक मन्दिर। यहां से नीचे आने में हमारा पण्डा जो हमारा पथप्रदर्शक था रास्ता भूल गया वह हमको ऐसे रास्ते से लाया कि जो नदी के बहाव से बन गया था रास्ते ही में हम लोगों को अन्धेरा होगया। गिरते पड़ते रात के ग्यारह बजे घर पहुंचे।

प्रमोदबन

२८ तारीख को हम लोग यहां आये। महाराजा रीवां का बनाया हुआ यह विशाल मन्दिर है जो क़िले की तरह बना हुआ है। यहां से एक मील पर सीताकुंड का स्थान है। मन्दाकिनी का बहाव

यहां बहुत प्रबल है । नदी के बीच में पहाड़ी चट्टानों के ढोके गिरे हुए दिखलाई देते हैं। यहां पर साधुओं की कुटियां भी बनी हैं इस स्थान को जानकी कुंड भी कहते हैं।

स्फटिक शिला

दूसरे दिन हम लोग स्फटिक शिला आये । कहा जाता है कि यह वही स्थान है जहां सीताजी को इन्द्र के पुत्र जयन्त ने काग बन कर चोंच मारी थी । एक चट्टान भी दिखलाई जाती है जिस पर कहा जाता है कि सीता जी बैठी थीं । यह कथन ठीक नहीं हो सकता भूगर्भ विद्या जानने वाले लोग इस बात को सिद्ध कर चुके हैं कि चट्टानों की अवस्था हमेशा बदला करती है। विशेष कर जब कि वह चट्टान नदी के किनारे पर हो। यहां हम लोगों ने खूब स्नान किया। नदी के बीच में बहुत सी झाड़ियां हैं। पानी गहरा नहीं है परन्तु बहाव बहुत है । इसलिये स्नान करने में बच्चों को भी विशेष आनन्द मिला। इसी के निकट उदासी लोगों का अखाड़ा है।

राम शय्या

कामदा गिरि की ओर राम शय्या एक परम रमणीक और अत्यन्त सुहावना स्थान है। यहां बड़ा एकान्त रहता है। यहां जल पक्के कुएं से प्राप्त होता है । यदि कोई झरना होता तो इससे अच्छा स्थान चित्रकूट में मिलना कठिन था। यह स्थान एक घाटी के तौर पर है हर तरफ पहाड़ियां हैं बीच में मैदान, यहीं एक मंदिर के पास ही एक बड़ी चट्टान है जो शय्या की नाईं प्रतीत होता है। कहते हैं कि इसी चट्टान पर श्रीरामचन्द्र और सीताजी विश्राम करते थे। उससे हटकर एक दूसरी चट्टान दिखलाई जाती है कि जिस पर लक्ष्मण जी रात को पहरा देते थे। यहां हमें एक कार निवासी साधु मिले जिनका वर्णन आगे आयेगा। इनसे मालूम हुआ कि यहां कभी २ चीते और शेर दिखलाई देते हैं।

पर्ण कुटी

यह स्थान सीतापुर ही में है। बड़ा एकान्त मंदिर है। लोग कहते हैं कि जो घास पात की कुटी लक्ष्मण जी ने श्रीरामचन्द्र जी के लिए बनाई थी वह इसी स्थान पर थी ।

यज्ञवेदी

यह भी विशाल मंदिर है। कहा जाता है कि यहां ब्रह्मा ने

किया था। इस प्रकार प्रायः सभी रमणीक स्थलों पर कुछ न कुछ निशान बना कर स्थान की प्रसिद्धि की गई है।

चित्रकूट के पंडे और साधु

हिन्दुओं के तीर्थ स्थानों में पंडे, घाटिये और साधुओं की संख्या बहुत होती है। इनमें से अधिकांश अनपढ़, लोभी, कोलाहल प्रेमी, आलसी और दुष्ट होते हैं चित्रकूट में भी यही अवस्था है। घाट पर बैठे हुये बहुत से पंडे जुआ खेलते दिखलाई देते हैं। कहीं बड़े २ डंडे हाथ में लिये खड़े रहते हैं और यात्रियों के बाप दादा का नाम पूछते हैं एक भी उन में से शिक्षित नहीं, बहुतेरे कारागृह की भी रोटी खा आये हैं। चित्रकूट के कुछ सज्जनों ने इस स्थान पर एक संस्कृत पाठशाला खोल रक्खा है इनमें नाम गिनाने को केवल एक पंडे का लड़का पढ़ता है। ये पंडे यात्रियों को भी-जिनको यजमान कहकर पुकारते हैं—कोई विशेष सहायता नहीं करते, किसी देव-स्थान पर अथवा मंदिर में चलने के लिये प्रातः काल ६ बजे बुलाइये तो ९ बजे मुंह दिखायेंगे। २७ सितम्बर को हमलोगों की इच्छा कोटि तीर्थ और देवांगना के देखने की हुई। पंडे महाराज सवेरे में पहुंचे उनसे कहा गया कि तीसरे पहर २ बजे आइयेगा, आप स्वयं तो उपस्थित न हुये, ४ बजे अपने एक नौकर को भेज दिया जिसने कहा कि इन स्थानों पर जाने में केवल २ घंटा लगेगा, हम लोगों के साथ स्त्रियां और बच्चे भी थे, सबके सब चल पड़े, परन्तु पहिलेही स्थान पर पहुंचते पहुंचते अंधेरा होगया, कोटि तीर्थ जाने के लिये पहाड़ पर पक्की सीढ़ियें बनी हैं परन्तु देवांगना का रास्ता नीचे से कोई ठीक नहीं हैं। पानी के बहाव से पहाड़ों पर जो रास्ते बन जाते हैं ऐसेही रास्ते से लोग देवांगना जाते हैं। पंडे महाशय को हमलोगों के सुविधे का इतना भी ध्यान न हुआ कि पहिले देवांगना ले जाता जिसमें अंधेरा होने पर पक्की सीढ़ियां उतरनी पड़तीं। हमलोगों को विवश होकर पहाड़ी रास्ते से उतरना पड़ा और जो कष्ट बच्चों और स्त्रियों को हुआ वह अकथनीय है इस पर तुर्रा यह कि एक २ मील चल कर आप कहते थे कि रास्ता भूलगये और हमलोगों को फिर वापस ले जाते थे, इस प्रकार के कष्ट सहते हमलोग ग्यारह बजे रातको अपनी ठहरने की जगह पर पहुंचे। यहां यह लिख देना आवश्यक है कि मानिकपुर स्टेशन ही पर पंडे

या नौकर पहिले मिलते हैं और यजमानों की जय मनाते हुये यात्रियों के पीछे पड़ जाते हैं। यदि उनमें से कोई पंडा आपसे अथवा आपके परिवार से परिचित निकला तो बस आपको उसी को अपना पंडा मानना पड़ेगा, पहले दिन यह पंडे आप से बड़ा स्नेह प्रगट करेंगे, आपके लिये बाज़ार से सौदाभी ला देंगे परन्तु दूसरे या तीसरे दिन से आपकी तरफ़ से लापरवाह होजायेंगे पर जब आपके विदा होने का समय आयेगा तब अपनी विदाई के लिये आपके पीछे पड़ेंगे, कभी २ तो यजमानों को निर्धन करके यहां से जाने देते हैं।

साधुओं की अवस्था भी शोचनीय है। हिन्दू जाति इस समय में सब से पीछे पड़ी हैं, और जो धनाभाव के कारण देश और धर्म के हितार्थ अनेक अच्छी संस्थाओं को स्थापित नहीं कर सकी ऐसी निर्धन हिन्दूजाति के धन से ये निरुद्योगी साधु पलते हैं। ता० २८ सितम्बर को हमलोग सीता कुंड से स्नान करके रात्रि समय घर की ओर लौट रहे थे कि भूल से एक ऐसी चढ़ाई पर निकल गये कि जहां एक दुर्गमस्थान पर कठिनाई से एक पैर रक्खा जा सक्ता था हमारे साथ बालक और स्त्रियां थीं, इस दुर्गम स्थान के ठीक ऊपर साधुओं की एक कुटी थी जहां साधुगण ज़ोर ज़ोर से राम, सीताराम, सीताराम कह रहे थे। इस स्थान पर हमलोग एक दूसरे को पकड़ कर एक दूसरे का हाथ खींच कर लकड़ी और पत्थरोंकी मदद से किसी तरह ऊपर चढ़े। साधु गण यह सब वृतान्त देखते बैठे रहे जब हमलोग ऊपर चढ़ गये तब हमलोगों से कहा कि आपलोग "कठिन रास्ते से चले आये" हमलोगों ने उत्तर दिया कि आप के सीताराम की कृपा से" इन साधुओं के चित्त में इतनी दया भी न आई कि हमलोगों की ऊपर चढ़ने में सहायता करते—दूसरे दिन हम लोग फिर इसी स्थान पर गये और देखा कि ऊपर आने के लिये दूसरा बहुत ही अच्छा रास्ता बग़लही में है हमारे राम भक्त साधुओं ने अपने स्थान से बैठे हुये इतना बतला देने की भी कृपा नहीं की कि दूसरा रास्ता भी यहां है।

कामदागिरि की परिक्रमा में अनेक वैरागी ऐसे मिलते हैं कि जिनका बिवाह हुआ है और उनकी स्त्रियें उनके साथ रहती हैं। अनेक साधुओं को माफी ज़मीन मिली हुई है। जिनको हज़ारों रुपये साल की आमदनी है। इनमें से एक साधु करवी में रहते हैं उनके

पास लाखों रुपये की जायदाद है। गाड़ी घोड़ों पर सवार होते हैं।

चित्रकूट में श्रीरामचन्द्र जी ने निवास किया था इस का रखा अनेक वैष्णव वैरागी और साधु यहां आते जाते रहते हैं। बहुतों ने अपनी कुटी बना ली है। कई नंगे रहते हैं अथवा पहाड़ों की कन्दराओं में बस्ती से दूर रहते हैं पर इनमें विद्वान हज़ार में दो एक होते हैं बाक़ी सब गांजा भंग पीने वाले समय को नष्ट करने वाले हैं। रामशय्या में हमको एक सच्चे साधु मिले, यह महाशय पहले कलक्टरी में बड़े ओहदे पर थे। इनके एक भाई महाराजा बनारस के यहां कलक्टर के उच्च पद पर हैं। एक भतीजा तहसीलदार है परन्तु सब त्याग कर वे ईश्वर उपासना में मग्न हैं। अपनी पेंशिन को देश सेवा में लगाने की इच्छा है। जिस स्थान पर यह रहते हैं वहां कोई दूसरा आदमी नहीं रहता। यह कभी भिक्षा मांगने नहीं जाते। दूसरे एक साधु ख़ास सीतापुर में मौनी बाबा के नाम से प्रसिद्ध हैं। इन्हों ने बारह वर्ष तक मौन साधा था। इन्हों ने एक मन्दिर बड़ा हवादार एकान्त में बनवाया है। यह सर्वदा रामायण का पाठ किया करते हैं। ये अपने मन्दिर को बहुत साफ़ रखते हैं। इनको किसी धर्म से द्वेष नहीं है, मुसलमान ईसाई सब इनके पास आते हैं और सब से ये प्रेम से मिलते हैं। आश्चर्य की बात तो यह है कि हिन्दी के अतिरिक्त और इन्हों ने कुछ नहीं पढ़ा। अंगरेज़ी पढ़ा अगर ऐसा करता तो कोई आश्चर्य की बात न थी।

जब हम लोग चित्रकूट में थे तो संयोग से एक बंगाली जो कलकत्ता यूनिवर्सिटी के पढ़े हुये नवयुवक हैं उनसे भेंट हुई। उन्होंने बंगाल में अध्यापक का भी काम किया है। ये भी शुद्ध पुरुष हैं और लालच से दूर हैं। हम लोगों से अत्यन्त प्रेम से वार्तालाप होता था। इनका ध्यान देश के हित की ओर बिल्कुल नहीं है। इनकी सम्मति में साधू लोगों का कर्त्तव्य केवल अपनी मुक्ति प्राप्त करना है। वह समझते हैं कि जो सन्यासी रात दिन मुक्ति की खोज में पड़े रहते हैं वे देश के सच्चे भक्त हैं! ये महानुभाव अपने शरीर को शुद्ध और पवित्र रखना भी अच्छा नहीं समझते जब जब ये हम लोगों से मिले इनको बहुत मैले वस्त्र और शरीर में पाया। खेद है कि इन पर शिक्षा का भी प्रभाव पड़ा। वर्तमान काल में श्रीरामकृष्ण परमहंस और आर्यसमाज में

श्रीरामदास जी बैराग्य की पराकाष्ठा को प्राप्त हुए थे। ईश्वर उपा-
सना में ये महात्मा अद्वितीय थे। परन्तु ईश्वर की सृष्टि में मनुष्यों
की उन्नति के हेतु भी इन लोगों ने जो चेष्टा की उसको संसार का
इतिहास नहीं भूल सकता। भारत में यह समय एकान्त में निवास
करके अपने जीवन को बिताने का नहीं है। इस समय कर्मयोग
की आवश्यकता है। श्री कृष्णजी ने जिस समय कर्म का उपदेश
दिया था उस समय भी भारत की अवस्था शोचनीय थी। उससे अधिक
शोचनीय इस समय की अवस्था नहीं है। घोर अविद्या छाई हुई है
निर्धन भारतवासी आलस्य से और भी निर्धन हुए चले जाते हैं
ऐसे समय में जिसके पास धन हो वह देश के हेतु धनका त्याग करे
जिसको विद्या प्राप्त हो वह अविद्यान्धकार को दूर करने का
प्रयत्न करे। जिनमें साहस और बल हो वे आलसी और निर्बल
लोगों में जीवन प्रदान करें। इसी प्रकार प्रत्येक श्रेणी के मनुष्यों को
देश सुधार के काम में योग देना उचित है। देश का धन जितना
तीर्थों पर खर्च हो रहा है यदि इस का दशांश भी विद्याके प्रचारमें लगे
तो हमारे क्लेश आज ही आधे होजावें। देशके नवयुवक सहसा इधर
और सर्व साधारण का ध्यान दिला सके हैं और हमारा विश्वास है
कि स्थान स्थान पर नवयुवकों के मण्डल बनने से हमारे दान
प्रणाली में एक असाधारण परिवर्तन आजायगा और तभी
तीर्थ स्थान उपयोगी स्थान बनेंगे॥

अर्थ-स्वामी दयानन्द खुल्लमखुल्ला कहता है, कि यदि अंग्रेज
यहां से चले जावें तो आजही तुम और मैं और प्रत्येक मनुष्य
मूर्तिपूजन का खण्डन करता है भेड़ की न्याई उसका गला
दिया जायगा। [मैडमब्लैवस्टकी]-मदनमोहन सेट क्या आर्य
समाज पोलिटीकल है पृष्ट १४॥

ब्रिटश सरकार इस समय हमारे धन और तनकी स्वामिनी है
हमारा इन दोनों वस्तुओं की रक्षा का भार उसी के ऊपर ई-
च्छा पड़ा है-इसको वह किस प्रकार उठा रही है उसका उत्तर
की हमें आवश्यकता नहीं शान्ति तथा सौम्यता से उन्नति को
हुई देशीय शिक्षा बिना किसी रोक टोक के अपने अपने धर्म
प्रचार करने वाली धार्मिक सभाएं और निडर होकर अनेक वि-
को प्रगट करते हुए मध्यमावलम्बी राजनैतिक नेता. बृढिय

आर्य्य समाज के उद्देश्य ।

संख्या २

आर्य्य समाज का अन्य समाजों से भेद ।

अन्य उपकारक सभायें सन्यासीवत क्यों नहीं ?

प्रश्न-यदि "संसार का उपकार" होने से एक सभा अपने उद्देश्य में सन्यासी कही जा सकती है तो स्वामी दयानन्द, नियमित गो कृषि रक्षणी सभा भी-"सब विश्व को विविध सुख पहुँचाना इस सभा का मुख्य उद्देश्य है" इति जिसका पहला नियम है-तथा अन्य नाना सभायें जो अपने कर्म से संसार का प्रत्यक्ष उपकार कर रही हैं-अथवा ऐसा करना अपना कर्त्तव्य जानती हैं-जैसे हेग की सार्वदेशिक राजसभा (The Hague Conference) अथवा सारे मतों की सुसाइटियां (Religious or missionary socities) भी सन्यासी सभाएँ क्यों नहीं ?

उत्तर-किसी सभा के उद्देश्य में सन्यासी के लिये कम से कम इन पांच बातों की जो सन्यासी के उद्देश्य तथा कर्त्तव्य में पाई जाती हैं आवश्यकता है (१) संसार का उपकार (२) धर्मोपदेश (जिसमें चारों वर्णों तथा आश्रमों के लिये परा तथा अपरा विद्या सम्मिलित है) (३) सत्य (४) पक्षपात त्याग (५) केवल ब्रह्म में आधार क्योंकि इसी लिये सन्यासी "ब्रह्म संस्थ" कहलाता है।

केवल एक दो बातों की समानता से कोई मनुष्य सन्यासी अथवा सभा सन्यासीवत नहीं कहला सकती ॥ ये पाँचों बातें दर्शाई जा चुकी हैं-कि आर्य्य समाज के नियमों में स्पष्ट पाई जाती हैं-गो कृषि रक्षणी के नियम केवल एक अंश में सन्यासीवत हैं क्योंकि दूसरी शर्त के अन्दर सब वर्णाश्रमों के धर्म परा तथा अपरा विद्या सम्मिलित हैं "गो कृषि रक्षणी" का उद्देश्य यद्यपि बहु उपकारक है-तथापि केवल अपरा विषयक वैश्य वर्ण सम्बन्धी सा है-इसी प्रकार कोई एक राज सभा अथवा विद्यासभा

(१) देखो आर्य्य समाज का नियम सं० ६ ॥
(२) देखो आर्य्य समाज का नियम सं० ८ ॥
(३) देखो आर्य्य समास का नियम सं० ४ तथा ५ ॥
(४) देखो आर्य्य समाज का नियम सं० ७ ॥
(५) देखो आर्य्य समाज का मियम सं० १ । २ । ३ ॥ [ब्रह्म = वेद तथा ईश्वर]

समझ लीजिये ॥ आज कल की सम्प्रदायी सुसाइटियां (Religious or Missionary Socities) यदि मनुष्य का सहारा छोड़ कर केवल ब्रह्म का आधार रख लें तथा आर्य्य समाज के नियमों की भांति अपने नियम बना लें-तो वे भी अपने उद्देश्य में सन्यासी हो जाएँगी-अर्थात् यह कहा जायगा कि अमुक सभा के उद्देश्य वही हैं जो एक सन्यासी के होते हैं ॥

दो भारी भेद—अथवा आर्य्य समाज की अन्य सुसाइटियों से भेद दो वाक्यों में इस प्रकार कहा जा सकता है कि [१] आर्य्य समाज की नींव "ब्रह्म पर है और अन्य सुसाइटियों की "वर्तमान सभ्यता के चकाचौंध" पर ॥

[२] आर्य्य समाज की पुस्तकों में सत्य पहिले है और उद्देश्य पीछे-और अन्य सुसाइटियों के लिये उद्देश्य पहिले और सत्य पीछे ॥

पांच उदाहरण---आगे इस भाग में कुछ उदाहरण देकर यह प्रगट किया जायगा-कि किस प्रकार आर्य्य समाज के उद्देश्य तथा कर्त्तव्य सन्यासी के उद्देश्य तथा कर्त्तव्य हैं-और इन पवित्र उद्देशों को जिनका प्रथम अध्याय में वर्णन किया गया है उद्देश्य समझ कर अन्य समाजों से कितना तथा "किस प्रकार का" भेद हो जाता है जिससे समझ में आ जावे-कि "आर्य्य समाज एक सन्यासी है"--सन्यासी का काम कैसे वेद प्रचार है, सन्यासी वेदवत तथा ईश्वरवत कैसे देश समय तथा जाति व्यक्ति के बन्धन से पार होता है ॥ इस विषय में कई प्रकार के उदाहरण दिये जा सकते हैं"-परन्तु जोकि इस लेखमाला का तात्पर्य आर्य तथा अन्य लोगों में विशेष प्रकार से आर्य्यसमाज की बाबत आन्दोलन आरम्भ करना है-इसलिये निम्न लिखित पांच उदाहरण ऐसे लिये गये हैं जो आजकल विवादास्पद हैं जो प्रायः संसार

---

[१] वेद तथा ईश्वर ॥

[२] सर्व शास्त्रों ने 'सत्य" को ही सर्व उद्देश्यों का उद्देश्य माना है ॥ ... न जाय, चाहे उद्देश्य चला जाय" यह वैदिक धर्म्म की विशेषता है ॥ आर्य समाज के नियमों में भी सच्चाई के प्रतिपादक नियम उद्देश्य सूचक नियमों से पहिले रक्खे गये हैं, सच्चाई के लिये प्रमाण वेद. और उद्देश्य के लिये सच्चाई और तत्पश्चात् उद्देश्य के अन्य साधन—इससे आर्य समाज के नियमों के क्रम [तरकीब] को समझ लें यह क्रम आकस्मिक [इत्तफाकिया] नहीं व्याख्या के लिये देखो इस नियमों का ... ॥

न्नति का मुख्य कारण है,—आशा है कि विद्वान लोग मेरे उपस्थित किये हुये भावों पर विचार करेंगे-उदाहरण ये हैं।

(१) राज नैतिक विषय [२] विधवा विवाह [३] " विद्याध्ययन [Education] [४] गौ [५] ब्राह्मण, इन में से " विद्याध्ययन " " ब्राह्मण " और "गौ" यथा क्रम अधिक देखने के योग्य हैं।

१-राजनैतिक विषय--राजनैतिक समाजों तथा आर्य्यसमाज में वही भेद है जो एक देश का पूर्णांग से अर्थात् अवयव का अवयवी से, शरीर का आत्मा से, भोजन का विद्या से, बिना शरीर के जैसे आत्मा नहीं रह सकता, वैसे ही बिना राजा वा राज सभाओं के धर्मात्माओं की रक्षा वा धर्म प्रचार भी नहीं होसकता, परन्तु केवल चन्द एक को छोड़ कर वर्तमान राजनैतिक लोग रोटियों के पीछे मर रहे है-देश के स्वराज्य की इच्छा तो अच्छी है-परन्तु अपने शरीर पर राज्य करना कर्त्तव्य नहीं समझते-देश का भला हो जाये चाहे आत्मा का वध होता हो-झूठ आज कल की नीति का आवश्यकांश है-देश के लिये पैसे आ जावें चाहे वेश्या का मुजरा कराने से इकट्ठा हो हमारी प्रदर्शणी (Exhibtion) में बहुत मनुष्य आजाऐं चाहें शराब की दुकानें खोलनी पड़ें-इसके विरुद्ध आर्य्यसमाज राजनैतिक उन्नति का कारण धर्महीं को समझते हैं-धर्म पर ही सामाजिक और धर्म पर ही राजनैतिक उन्नति का आधार है-यूरप तथा अमरीका के सब लोग उचित कहते हैं-"जो लोग अर्ध पशु हैं अर्थात् कन्याओं तथा स्त्रिया को अविद्या तथा अन्धकार के बन्धन में रखना अच्छा समझते हैं जो लोग अपने करोडों भाइयों को छू नहीं सकते उनको स्वराज्य मांगते क्या लज्जा नहीं आती ?" अब यह सब सुधार अर्थात् हमारी समाज विरादरी या पांचायतों का सुधार हो,हम में स्त्रीशिक्षा फैले,नीच जाति को समझा जावे,इत्यादि सबके सब सामाजिक सुधार हैं अर्थात् साधारण सामाजिक सुधार राजनैतिक सुधार का आधार है-किन्तु यह साधारण सामाजिक सुधार भी नहीं हो सकता—जब तक कि हम स्त्रियों तथा नीच जातियों को अपने बराबर न जाने—पंचायतों का सुधार नहीं हो सकता जब तक कि एक दूसरे पर बिश्वास-कुछ स्वार्थ तथा हठ का त्याग, कुछ दूसरे की सम्मति का सहन सत्कार, कुछ समूह

वा सभा में भक्ति भाव. और आलस्य तथा प्रमाद का त्याग, सदाचार तथा मर्य्यादा में प्रीति, सबको आत्मवत जानने की शक्ति, कुछ अन्य के अधिकार की रक्षा, और अपने बचन, कर्म तथा स्वभाव की पवित्रता इत्यादि गुण पैदा नहीं होते-और इन बातों का नामही हम धर्म रखते हैं क्योंकि यही धर्म के लक्षण हैं तो बस साधारण

सामाजिक उन्नति जहां राजनैतिक उन्नति का कारण है वहां धर्म इन दोनों का आधार है ॥

जो लोग समझते हैं कि आर्य समाज डर कर अपने आपको राजनैतिक हल चल से प्रथक रखता है-उनको भली भांति स्मरण रखना चाहिये कि उन्हों ने सन्यासी की अवस्थिति [Position] को कभी अनुभव नहीं किया-आर्य्यसमाज को राजनैतिक कहना आर्यसमाज का अपमान करना है-क्योंकि आर्य्यसमाज सब गवर्न्मेंन्टों तथा राजनैतिक सभाओं से ऊपर है—जैसे सन्यासी सब राजाओं से ऊपर होता है ॥ व किसी एक समय में किसी एक देश की गवर्न्मेंन्ट को सन्यासीवत अपने आत्मा के बल पर पाप के बिरूद्ध डाट सकता है-झिड़क सकता है तथा उपदेश कर सकता है। वह संसारी शक्तियों के भय से पार है-उसका सहारा परमपिता सर्व राजाओं के राजा, सर्व शक्तिमान् सर्व व्यापक सर्वाधार परमात्मा में है-वह किसी भय अथवा नीति के कारण अपने आपको राजनैतिक कामोंसे प्रथक नहीं करसकता प्रत्युत उसका विश्वासही यह है-"*धर्मही सब उन्नतियों का मर्म है-कि अर्थात धर्म के बिना न इस,लोक की उन्नति हो सकती है और न परलोक की कि जिस निर्भयता तथा स्वतन्त्रता से वह प्यारे वैदिक धर्म का प्रचार कर रहा है-वह परमात्मा ने इसको †बृटिश राज द्वारा ही दी

* व्याख्यान की समाप्ति पर कलेक्टर साहिब ने स्वामी जी की बड़ी प्रशंसा की और कहा कि "यदि ऐसे महात्मा कुछ दिन पहिले होते तो सन १८५७ ई० का अनिष्ट कभी न होता"। लेक्चर मुरादाबाद जुलाई १८७६ "धर्मेन्द्रजीवन" पृष्ठ (अगले पृष्ट पर)

† And yet Great Britain has in him not an enemy but rather an ally. He, (S. Dayanand) says openly "If you expell the English, then no later than tomorrow, you and I and every one who rises against idol-worship will have our throats cut like mere sheep

है वह दिल से मानता है कि वर्तमान गवर्न्मेन्ट ही इस समय देश के लिये आवश्यक है।

सरकार के प्रति आर्य्यसमाज का कर्त्तव्य।

आर्य्य समाज जहां वर्तमान सरकार की बरकतों से अभिज्ञ है वहां सरकार की ओर अपने कर्त्तव्य को भी भली भान्ति जानता है और कातर की पदवी दिया जाने पर भी वह अपनी अवस्थिति [Position] वैसी की वैसी प्रगट करने से नहीं झिजकता-"सरकार के प्रति हमारा इस समय वही कर्त्तव्य है जो एक प्रजा का राजा के प्रति होना चाहिये।

ब्रिटिश सरकार इस समय हमारे धन और तनकी स्वामिनी है हमारी इन दोनों वस्तुओं की रक्षा का भार उसी के ऊपर ईश्वरेच्छा पड़ा है-इसको वह किस प्रकार उठा रही है उसका उत्तर देने की हमें आवश्यकता नहीं शान्ति तथा सौम्यता से उन्नति करती हुई देशीय शिक्षा बिना किसी रोक टोक के अपने अपने धर्म को प्रचार करने वाली धार्मिक सभाऐं और निडर होकर अनेक विचारों को प्रगट करते हुए मध्यमावलम्बी राजनैतिक नेता बृटिश सरकार की रक्षा करने की योग्नता की दुन्दभी चारों ओर बजा रहे हैं" इस बात को एक अन्धा भी देख सकता है-कि ब्रिटिश सरकार ने भारत वर्ष की उन्नतिकर तथा बाह्य शत्रुओं से बहुत अच्छी रक्षा की हुई है तब इस दृष्टि से हमें सरकार को अपना उपकारक समझना चाहिये। और उसके लिये कृतज्ञता का भाव हृदय में रखना चाहिये। साथही इस रक्षा के कार्य में सरकार की सहायता देते रहना ही हमारे लिये उचित है ॥ चोरों डाकुओं या सामाजिक स्थिति में अशान्ति उत्पन्न करने वालों का दमन करना हमारे लिये भी वैसाही आवश्यक है जैसा सरकार के लिये।

Madame Blavatsky in her book, "From the caves and jungles of Hindustan" Arya Samaj a politicle bodyP, 14

अर्थ-स्वामी दयानन्द खुल्लमखुल्ला कहता है, कि यदि अङ्गरेज़ यहां से चले जावें तो आजही तुम और मैं और प्रत्येक मनुष्य जो मूर्तिपूजन का खण्डन करता है भेड़ की न्याई उसका गला काट दिया जायगा। [मैडमब्लीवस्टकी]-मदनमोहन सेट क्या आर्य्यसमाज पोलिटीकल है पृष्ट १४ ॥

इसमें देश का बहुत भला है कि उसे अपनी उन्नति करने के लिये शान्त तथा रक्षित अवस्था में उसे रखने के लिये हमें ब्रटिश सरकार इश्वरेच्छया प्राप्त हुई—इश्वरेच्छा के सामने सिर झुकाते हुये हमें स्वीकार करना चाहिये तथा अपनी सारी शक्तियों का उद्देश्य अपनी भावी उन्नति के करने में लगा देना चाहिये॥

(सद्धर्म प्रचारक २८ भाद्रपद स० १६१८)

२ विधवा विवाह—आज कल की एक साधारण सामाजिक सुधार करने वाली सभा (Social Society) बिधवाओं के विषय में इस प्रकार कह सकती हैं-"विधवाओं" का विवाह न करना सामाजिक अत्याचार है, पुरुष स्वार्थ में रहते हैं । विधवाओं पर सदा आपत्ति है । अतः विधवा विवाह का सर्व साधारण में प्रचार जान तोड़ कर करना चाहिये । इससे सुसाइटी का आचार तथा स्वभाव सुधरेगा-आओ हम सब मिल कर विधबाओं के लिये हल चल पैदा करें । फिर गवर्नमेन्ट को प्रेरें कि विधवाओं के लिये हिन्दुओं में राज नियम बना देवें इत्यादि । परन्तु आर्य्यसमाज वेद अर्थात् सत्य ज्ञान को अपना धर्म रखता हुआ जहां बिधवाओं के लिये इन लोगों से अधिक दुःखित होता है वहां ऊपर लिखित प्रकार से विवाह के लिये हलचल नहीं मचा सकता वह सामयिक हानि से व्याकुल होकर सदैव के सत्य तथा लाभकारी वैदिक नियम को नहीं विगाड़ सकता यदि विधवा विवाह के लिये सब पढ़े लिखों में हल चल मचाई जावे यदि विधवा विवाह का सर्व आर्य्य सन्तान के लिये राज नियम बनाकर उचित ठहराया जावे तो इसके लिये सर्व साधारण में प्रशन्सा का भाव फैल जावेगा । विधवा विवाह के विरुद्ध आर्य्य सन्तान में जो भाव पूर्व से वर्तमान हैं वह सर्वथा उड़ कर सब द्विजों में उसके पक्ष में एक भाव पैदा हो जायगा, जो उलटा हानि कारक होगा । और दुबारा उखाड़ना अत्यन्त कठिन हो जायगा । अतः वैदिक धर्मी होते हुए आर्य्यसमाज का यह कर्तव्य होगा कि यह सन्यासी ब्रत विचार पूर्वक तथा निर्भय होकर अपने

"Dont you know what a just government it is that watches over us now a days," [Life of Truth p. 502] क्या आप नहीं जानते कि हमारी वर्तमान सरकार कैसी न्यायकारिणी है सत्यार्थ प्रकाश ॥ यदि और अधिक देखना चाहें तो देखो आर्यसमाज पोलिटीकल बाडी मदनमोहन सेठ की खुली चिट्ठी

कर्तव्य तथा अकर्त्तव्य के साधन को समझ,पूरा करे तथाप्रगट करे। अतः विधवा विवाह के विषय में आर्य्य समाज अपना कर्त्तव्य यह समझता है। कि—

(१) छोटी अवस्था के विवाह का इस देश से दूर करना।

(२) विद्या तथा ब्रह्मचर्य का प्रचार करना।

(३) वर्तमान विधवाओं के लिये विधवा भवन आश्रम अथवा विद्यालय खोल कर विद्या का प्रबन्ध करना कि जिससे पढ़ने पढ़ाने तथा ईश्वर के ध्यान में वह अपनी आयु व्यतीत कर सकें—

[४] जो विवाह अवश्य करना चाहें, उनको विवाह की आज्ञा दी जावे परन्तु विवाह करने वाले स्त्री वा पुरुष को सुधारक Reformer कभी न समझा जावे। क्योंकि द्विजों में विधवा विवाह के प्रचार हो जाने से अन्त में निम्न लिखित हानियां होती हैं।

(१) "जब स्त्री वा पुरुष पति वा स्त्री के मरने के पश्चात् दूसरा विवाह करना चाहे तब प्रथम स्त्री का प्रथम पति के पदार्थों को उड़ा ले जाना और उनके कुटम्ब वालों का उनसे झगड़ा करना॥

[२] बहुत से भद्र कुल का नाम व चिन्ह भी न रह कर उसके पदार्थ छिन्न भिन्न हो जाना॥

[३] पातिव्रत और स्त्री व्रत धर्म नष्ट होना। इत्यादि दोषों के अर्थ द्विजों में पुनर्विवाह वा अनेक विवाह कभी न होना चाहिये।

(स्वामी दयानन्द सरस्वती सत्यार्थ प्रकाश पृष्ठ ११२)

इसलिये ऐसा काम करना चाहिये जिससे वर्तमान आपत्ति का प्रबन्ध हो जावे तथा आगे के लिये हानि भी न हो–ऐसा कराना ही वैदिक धर्म है, और यही सन्यासी का कर्तव्य है।

प्रश्न—भारतवर्ष में जो एक मास से लेकर अत्यन्त छोटी आयु की विधवाएँ हैं, जो जानती भी नहीं कि विवाह क्या होता है पति किसको कहते हैं और जिनके पुर्नविवाह में आपकी वर्णन की हुई हानियों में से एक की भी सम्भावना नहीं है उनको बिना विवाहे रखना क्या अत्याचार नहीं है?

उत्तर—अवश्य अत्याचार है। ऐसी अवस्था में विवाह की आज्ञा अवश्य देनी चाहिये इस प्रकार की बिधवाओं के पुर्नविवाह का जितना तथा जिस प्रकार प्रचार किया जावे वैदिक धर्म के विरुद्ध नहीं क्योंकि:—

सा चेदक्षत योनी स्यादगत प्रत्यागतापि वा पौनर्भवेन भर्त्रा सा पुनः संस्कार मर्हति । मनु० ९ । १७६

जिस स्त्री वा पुरुष का पाणिग्रहण मात्र संस्कार हुआ हो और संयोग न हुआ हो अर्थात् अक्षतयोनि स्त्री और अक्षतवीर्य पुरुष हो उनका अन्य पुरुष वा स्त्री के साथ विवाह होना चाहिये किन्तु ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य वर्णों में क्षत योनि स्त्री वा क्षतवीर्य पुरुष का पुनर्विवाह न होना चाहिये ॥ मनु. अ० ९ श्लो० १७६ ॥

परन्तु ऐसी विधवाओं का विवाह कुमारियों की भांति कुमारों से ही होना चाहिये-अर्थात् यह न हो कि अक्षत योनि विधवा का विवाह क्षतवीर्य पुरुष से हो जावे ॥ किञ्च पुनर्विवाह बचपन में ही न किया जावे, सोलह वर्ष की आयु को पहिले पूरा होने दिया जावे-जैसी शास्त्रों की आज्ञा है-क्योंकि वास्तविक औषधि इस रोग की यही है कि बचपन के विवाह का बन्द किया जावे ॥

(३) विद्याध्ययन (Education)

विद्याध्ययन का प्रयोजन मनुष्य को पुरुषार्थी (complete man) बनाना है-पुरुषार्थी वही है जो कृतकृत्य हो, कृतकृत्यता का अर्थ अपने उद्देश्य को पा लेना है-आर्य्य समाज मनुष्य तथा मनुष्यजाति का उद्देश्य अभ्युदय १ तथा २ निश्रेयश को समझता है और इन दोनों का साधन ३ " धर्म " को मानता है-जो धर्म सृष्टि के आदि से वेदों द्वारा मनुष्यों को मार्ग दर्शाने के लिये परमात्मा देते हैं वह आर्य्य समाज विद्याध्ययन अर्थात् मनुष्य जीवन का उद्देश्य भाव, कर्म तथा विज्ञान से वेदों का जानना समझना है अतः ! आर्य्य समाज की एक नियत पाठविधि (Scheme of studies) है जो वेदों को जानने के लिये नियत की गई है-इस पाठविधि के विषय में निम्न लिखित मूल बातें ध्यान के योग्य हैं इनमें से प्रत्येक पृथक् पृथक आर्य्य लोगों के विचार तथा प्रीति पूर्वक शास्त्रार्थ के योग्य हैः—

---

१ इस लोक में उन्नति तथा सुख
२ मोक्ष ॥ ३ "यतो ऽभ्युदय निश्रेयस स धर्म ! " अर्थात् धर्म वह है जिस से अभ्युदय और निश्रेयस की सिद्धि हो ॥ [वैशेषिक द० अ० १ सू० २]

क्या श्रीमद्भागवत
व्यास कथित है ?

श्रीमद्भागवतका आज दिन पौराणिक मण्डली में खूब ही आदर है। आदर होनेके दो तीन कारण भी हैं। प्रथम तो भागवत के रचयिता भगवान् वेदव्यास कहे जाते हैं। दूसरे भागवत, धर्म का प्रधान ग्रन्थ माना जाता है, तीसरे उसके द्वारा पण्डितों की जीविका बहुत कुछ चलती है, चौथे उसमें वर्णित विषय अधिकांश शृङ्गारपरक हैं, पांचवें संस्कृतका वह एक अद्वितीय काव्य है, इसी प्रकार से और भी अनेक कारण हो सकते हैं। यदि वेदव्यास रचित अठारह पुराण बताये जाते हैं किन्तु उन अठारहों पुराणों में भागवत ही का विशेष आदर है। कहा गया है कि महाभारत आदिके बनाने पर भी जब भगवान् वेद व्यास के मनका त्रास नहीं मिटा और उनकी पूर्ण तुष्टि नहीं हुई तब उन्हों ने भागवत लिखा। यह बात भागवत ही के प्रथमस्कंधके ४ चतुर्थ अध्याय में लिखी है। हिन्दू पौराणिकोंका यही विश्वास भी है। किन्तु यह विश्वास बहुत ही सच्चा है और युक्तिप्रमाणशून्य निराधार है। युक्ति, प्रमाण, इतिहास से इसमें व्यास कथितकी गन्ध भी नहीं पाई जाती है। आज हम इसी पर भारतीय विद्वानोंकी सम्मति तथा प्रमाणों के द्वारा यह दिखलाने का यत्न करेंगे कि यथार्थ में भागवत के कर्त्ता कौन हैं कब भागवत लिखा गया।

(१) ऋग् यजुः सामाथर्वाख्या वेदश्चत्वार उद्गता।
इतिहासः पुराणञ्च पञ्चमो वेद उच्यते॥ भा० १।४॥

प्रथम व्यासने इतिहास पुराण रचे किन्तु तृप्ति न हुई तब भागवत प्रस्तुत की। यह वचन क्या वास्तव में व्यास कह रहे हैं या व्यास के नाम से भागवतकर्त्ताने कहा है ?।

(२) भागवत में बुद्ध को अवतार पद प्रदान किया गया है जो पाखण्ड मतका प्रचारक हुआ है किन्तु बुद्ध सन् ईसवी से प्रायः ५०० वर्ष पूर्व और व्यास देवसे प्रायः २६०० वर्ष पश्चात हुआ है अतः व्यासजी की रचना में बुद्ध का नाम नहीं आना चाहिये

(३) म्लेच्छ, यवन, राज्याधिकारका प्रसङ्ग भागवत में आया है कि सिन्धु तट, चन्द्रभागा नदी तटसे लेकर काश्मीर तक यवन धावमान हुये हैं। यथा—

सिन्धोस्तटं चन्द्रभागा कौन्ति काश्मीर मण्डलम्
भोक्षयान्ति शूद्रा व्रात्याद्य म्लेच्छा अब्रह्म वर्चसः।

गमनागमन सिन्धु तटसे काश्मीर तक सन् ईसवी के बारह शताब्दी में हुआ है अतः व्यास देव के ३८०० वर्ष पश्चात् की बात भागवत में विद्यमान है। इस कारण से भी भागवत व्यास रचित नहीं ठहर सकता है। पुनः इनमें भविष्य काल भी नहीं पड़ा है।

(४) शूद्र राज्याधिकारका उल्लेख उपरोक्त श्लोक में आया है और शूद्र राज्याधिकारका समय चन्द्रगुप्त से पश्चात्का ही समझना चाहिये अतः व्यासदेव से यह बात बहुत पीछे की है।

(५) सूर्य्यवंशीय नृपतिगण तथा महाराज चन्द्रगुप्त का बृत्तान्त भागवत में आचुका है इसी के साथ महामति नीति निपुण चाणक्यका नाम आया है और ये दोनों ही बुद्धके पश्चात् हुये हैं इससे यह बात प्रत्यक्ष है कि भागवत की रचना चन्द्रगुप्त के पीछे की है। जब कि चन्द्रगुप्त और चाणक्यका नाम विद्यमान है।

(६) पण्डितवर बराह मिहिरने अपने समय के प्रचलित पुस्तकोंका एक सूचीपत्र प्रस्तुत किया था उस तालिका में पुराण का नाम नहीं आया है बराह मिहिर और महामति कालिदास एक समय के हैं और राजा विक्रमादित्यकी सभाके नवरत्नों में से थे बुद्ध गयाके देवालय में यह बात खोदित है देखो (Asiatic Researches Vol I P. P. 286) सन् ईसवी से ५६ वर्ष पूर्व राजा विक्रमादित्य विद्यमान थे जिनकी सभाके यह नवरत्न थे।

धन्वन्तरि क्षपणकोऽमरसिंह शङ्कु
वेतालभट्टघकर्परकालिदासः।
ख्यातो वराहमिहिरो नृपते सभाया
रत्नानि वैवररुचिरोति विक्रमस्य॥

अतः व्यासदेवसे बहुत काल पश्चात् ये हुये हैं इस कारण से भी भागवत व्यासरचित नहीं।

(७) पौड़ वासुदेवका प्रसंग भागवत में विद्यमान है, किन्तु उक्त राजाओं के समयको जो मैंने युद्ध प्राप्त हुये हैं उनमें

ईसवी का द्वितीय शताब्दि पड़ा हुआ है इससे भी भागवत व्यासोक्त नहीं है यही सिद्ध होता है।

(८) कपिल और ऋषभ देव का उल्लेख भागवत में स्थान २ पर हुआ है किन्तु इन दोनों का समय बुद्ध देवसे कुछ पूर्व और व्यास देवसे बहुत पीछेका है। इन उपरोक्त प्रमाणों से यह बात प्रत्यक्ष है कि भागवत के रचयिता वेदव्यास नहीं है वरन् व्यास देवके बहुत पीछे भागवत रचा गया है जब कि सन् ईसवी की अष्टम शताब्दी तककी घटनायें भागवत में विद्यमान हैं तब कुछ भी सन्देह नहीं कि व्यास देवके नाम से किसी चतुर चूड़ामणि विद्वान् ने भागवत रचकर उसकी प्रसिद्धि के लिये वेदव्यासकी छाप लगाई हो।

हम अपने पक्षकी पुष्टिके अर्थ यहां पर कुछ साक्षियां भी प्रदर्शित करते हैं॥

६ भागवत के आदि टीकाकार श्रीमान् श्रीधर स्वामी हैं आप टीका करते हुये प्रथम ही यह शंका उठाते हैं कि यथार्थ में विष्णु भागवत ही भागवत है। यह शंका क्यों? इस शंका के साथही दूसरे की ध्वनि निकलती है इससे ज्ञात होता है देवी भागवत भी उस समय विद्यमान था, उसके साथ कुछ मतिद्वन्द्वता थी, व्यासोक्त भागवत पर ऐसी शंका नहीं उठ सकती है।

१० देवी भागवत के टीकाकार नीलकंठ टीका करते हुये भागवत के विषय में यह कहते हैं कि "विष्णुभागवत वोपदेव कृतमिति वदन्ति" विष्णु भागवत के रचयिता वोपदेव हैं ऐसा लोग कहते हैं अर्थात् उस समय यह प्रवाद प्रचलित था कि भागवत के रचयिता महामति पण्डित वोपदेव हैं अत. यह दूसरी साक्षी व्यासरचित न होने की है।

(११) भागवत के लिखे जाने के समय इसके द्वेषी भी बहुत थे और इसके अनुकूल तथा प्रतिकूल बहुत कुछ वादाविवाद भी चला था जिसका पता इन पुस्तकों के नामों से ही लगता है। "दुर्जन मुख चपेटिका" "दुर्जन मुख पद्म पादुका" "भागवत स्वरूप विषय शंका" निराश त्रयोदश आदि विस्तार के साथ देखना हो तो "केटलॉग गारम" छापा जरमन मंगा कर देखे।

(१२) भागवत के साथ ही उक्त ग्रन्थ में लिखा है कि भागवत

के रचयिता पण्डित वर वोपदेव हैं जो देवगिरि (दौलताबाद) के हेमाद्रि के आश्रित थे जो राजा रामचन्द्र का मन्त्री था। हेमाद्रि स्वयम् भी पण्डित था उसके नाम का एक ग्रन्थ भी आज दिन विद्यमान है देखो (H. H. wilson Mackenzee Collection Vol I P, P, 32 34,

(१३) भागवत, विख्यात श्रीमान् कोलब्रूक साहब वोपदेव कृत हर लीला की क्रमणिका नामक ग्रन्थ में आलोचना करते हुये लिखते हैं कि यह ग्रन्थ देवगिरि के राजा रामचन्द्र के मन्त्री हेमाद्रि के अनुरोध से वोपदेव ने लिखा है इन्हीं का बनाया भागवत प्रसिद्ध ग्रन्थ है देखो (Royal A, S, Journal Vol. V P, P, 26-28

(१४) श्रीमान् वालटर एलियर साहब दक्षिण पथ के अन्तर्गत नाना स्थानों की बहुसंख्यक खोदित लिपियों की व्याख्या करते हुये देवगिरि के यदुवंशीय नृपति गणों के दानपत्र का विवरण प्राप्त कर राजा रामचन्द्र का ११९३ शाके में अर्थात् सन् १२७१ में सिंहासना रूढ़ रहना निर्णय करते हैं जब कि राजा का मन्त्री हेमाद्रि और वोपदेव विद्यमान थे देखो (The Bhagwat Puran for E, Burnof P, P, L IV c, IV,

(१५) भागवत में श्रीमान् स्वा० शंकराचार्य्य का अभाव पाया जाता है और यह बात प्रमाणिक हो चुकी है कि कुमारिल का आना और शंकर का प्रकट होना एक कालीन है ब्रह्मसूत्र शंकरभाष्य में कुमारिल का नाम आता है और सारनाथ का ध्वंस शंकराचार्य्य की आज्ञा से हुआ इसका उल्लेख भागवत में विद्यमान है।

(१६) श्रीमान् पण्डितवर ज्ञानेश्वरमिश्र ने अपने किये हुये गीताभाष्य में महामति वोपदेव का होना और भागवत की रचना काल का समय १२७२ शाकाब्द निश्चय किया है और भागवत चूर्णिका का यह श्लोक उद्धृत किया है।

श्रीमद्भागवतस्यानुक्रमणी रमणी कृता।
विदुषा वोपदेवेन भिषक्केशव सूनुना ॥
श्रीमद्भागवत स्कन्धाध्यायार्थादि निरूप्यते।
विदुषा वोपदेवेन मन्त्रिहेमाद्रितुष्टये ॥

(१७) महामति वोपदेव के पिता का नाम केशव, गुरु का धनेश

वोपदेव, देवगिरि के राजा महादेव के यहां थे महादेव का समय १२६०-१२७१ इनके पिता का नाम चतदेव था, महादेव के पश्चात् १२७१ १३०७ तक राजा रामचन्द्र गद्दी पर बैठे, इन्हीं का मन्त्री हेमाद्रि, हेमाद्रि के पिता का नाम चैत्रपाल था हेमाद्रि के ही आश्रित रह कर वोपदेव ने भागवत, कालमाधव, मदनपारिजात, आयुर्वेद रसायन. कविकल्पद्रुम, काव्य कामधेनु, मुग्धबोध, धातु-पाठ आदि ग्रन्थ रचना किये देखो केटलाग गारम छापा जरमन सन् १६६१ ।

(१८) सनातन धर्मियों का प्रसिद्ध पत्र हिन्दी बङ्गवासी १२ नवम्बर सन् १६०० के अङ्क में लिखता है कि " श्रीशङ्कराचार्य्य महाराज के दो सौ वर्ष पीछे दाक्षिणात्य देश में वारदा तट पर वोपदेव नामक एक महा पण्डित का आविर्भाव हुआ था अनेक लोग कहते हैं कि श्रीमद्भागवत महापुराण व्यास के नाम से उन्हीं पं० राज ने लिखा था "।

(१९) पण्डितवर ग्राउस साहब ने अपने वनाये हुये मथुरा मेमोरियल ग्रन्थ में भागवत के वनाने वाले वोपदेव हैं ऐसा लिखा है। इत्यादि साक्षियों से यह विदित होता है कि भागवत के रचयिता पण्डित वोपदेव हैं न कि व्यासदेव। यहां पर हम परमपदारूढ़ ऋषि दयानन्द का मत जान मान कर नहीं लिखा है। इसके अतिरिक्त जो भागवत को व्यासदेव रचित मानते हैं उनके पास कोई भी प्रमाण नहीं है न कोई प्रबल युक्ति ही है जिससे वह व्यासोक्त बता-सकें। अब हम यहां पर पुराण मात्र पर कि वे व्यासदेव रचित नहीं हैं कुछ साक्षियां उपस्थित करना चाहते हैं।

(२०) श्रीमान् बाबू बंकिमचन्द्र जी अपने प्रसिद्ध पत्र बङ्गदर्शन के खण्ड ४ अंक १ सन् १८१५ में देवतत्त्व पर लिखते हुये मूर्ति पूजा की युक्ति प्रमाण से खण्डन कर पौराणिक गाथाओं और उनकी रचना को आधुनिक सिद्ध किया है।

२१ श्रीमान् पण्डित माधव प्रसाद जी मिश्र भारतधर्ममहा-मण्डल के महोपदेशक लिखते हैं कि नरेशों का जीवन वृत्तान्त न लिखना और लिखना तो घृणा के साथ बिगाड़ कर लिखना यह ब्राह्मणों का एक कुलक्रमागत स्वभाव है इसमें प्रमाण यही है कि अशोक ऐसे महा प्रतापी महाराज का किसी पुराण आदि में इतिहास

नहीं मिलता । विक्रमादित्य का भी वृत्तान्त किसी पुराण में नहीं लिखा है देखो सुदर्शन वर्ग १ सं० १२ सन् १९०० पृष्ठ ११ । १४।

२२ भारत के अद्वितीय विद्वान पण्डित ईश्वरचन्द्र विद्यासागर अपने संस्कृत लिटरेचर नामक व्याख्यान में लिखते हैं कि "यह कदापि नहीं होसकता कि पुराणों को व्यास ने रचा हो। पुराणों की संस्कृत और उसके परस्परही विरोध हो इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं किन्तु समस्त पुराण आधुनिक हैं । वरन् जो कालिदास के बनाये हुए श्लोक कुमारसम्भव में है वह शिवपुराण में विद्यमान हैं यह भी नहीं हो सकता कि कालिदास ने पुराणों से श्लोक चोरी किये हों वरन् कालिदास के ही श्लोक चोरी से पुराणों में मिलाये हैं"। उन श्लोकों को विस्तार भय से हम लिखना उचित नहीं समझते हैं

२३ मान्यवर डाक्टर राजेन्द्रलाल मित्र अपने विविधार्थ संग्रह के खण्ड ३७ पृ० ७ सन् १८७४ में लिखते हैं कि जितने पुराण हैं वे सब के सब आधुनिक हैं प्रमाण में भारत में कहीं भी पुराणों का नाम नहीं है वरन् पुराणों में महाभारत का बार बार नाम आता है ।

बंग भाषा का प्रसिद्ध पत्र 'साहित्य' वर्ष १० सं० ८ पृ० ४६४ शाका १३०३ में लिखा है कि पौराणिक सृष्टि बौद्धों के द्वारा हुई है व्यास के पुराण के देवता पौराणिक हैं न कि वैदिक ।

ब्रह्मपुराण में शिवमन्दिर का उल्लेख है जो सन् ६५७ में प्रस्तुत हुआ तथा जगन्नाथ का मन्दिर ११९८ में सूर्य्य मन्दिर १२४१ में बना अतः वह पुराण १२४१ के पूर्व का नहीं है ।

पद्मपुराण में श्रीरङ्ग मन्दिर वृन्दादि रामानुजाचार्य्य तथा आलू गोभी का विस्तार के साथ में प्रसङ्ग आया है किन्तु रङ्गमन्दिर १०५० सन् और आलू आदि सन् १६०० ई० से पूर्व भारतवर्ष में न था इस कारण यह पुराण और भी आधुनिक है इसी प्रकार से कूर्म, ब्रह्मवैवर्त्त विष्णु पुराण आदि की व्यवस्था है ।

बहुत कुछ खोज के पश्चात् पुराणों के बनाने का समय निम्न लिखित जाना गया है ब्रह्मपुराण १३ वीं और चौदवीं शताब्दि में पद्मपुराण १४-१६ वीं शताब्दि में विष्णुपुराण १० वीं शताब्दि, श्रीमद्भागवत नारदपुराण १७ वी शताब्दि मार्कण्डेय ९-१०शताब्दि लिङ्गपुराण ८-९ शताब्दि स्कन्द, वामन और मत्स्यपुराण १५-१६

शताब्दि में लिखे गये हैं। विस्तार के साथ देखना होतो Religious Sects of Hindns देखो पुराणों के पाठ करने से यह बात अनायास ही अवगत हो जाती है कि जिस समय पुराणों की चर्चा चली तो विद्वानों का तमाम झुकाव पुराणों की ही रचना की ओर होगया और उस समय सैकड़ों ही पुराण लिखे गये। यदि ३ पुराणों और उपपुराणों के ही द्वारा अनुसन्धान किया जाय तो १८पुराणों से ४२ पुराणों और १८ उपपुराणों से ३६ उप पुराणों का पता लगता है किन्तु इनसे कहीं अधिक पुराण उपपुराण लिखे गये हैं। भिन्न २ पुस्तकालयों की सूचीपत्र पढ़ने से अब तक कुल १४२ पुराण उपपुराणों का पता लगता है। जिनके नाम हम यहां पर न देकर पुनः छाप देंगे।

सब से प्रथम अर्थात् चन्द्रगुप्त के पश्चात् उपनिषदों की रचना आरम्भ हुई और कई सौ उपनिषद् लिखे गये जिनमें प्रायः १२५ उपनिषदों के नाम की सूची प्राप्त होती है। इसके वाद पुराण और पुराणों के वाद तंत्र ग्रन्थ लिखे गये। सब से पीछे तन्त्रग्रन्थ लिखे गये इस कारण वे प्राप्त भी अधिक होते हैं जो संख्या में प्रायः ३०० अधिक हैं। पुराणों के विषय से पुराण मीमांसा अप्रकाशित हैं देखना चाहिये।

तमाम प्राचीन ग्रन्थकारों ने पुराण शब्द के जो लक्षण लिखे हैं भागवतकार ने उन्हें अस्वीकार किया है प्राचीन आचार्य्य ब्राह्मण ग्रन्थों ही का पुराण बना कर पांच लक्षण करते हैं और महामति अमरसिंह ने अपने अमरकोश में भी पुराण शब्द के पंचलक्षण किये हैं यथा।

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तरासि च।
वंशानुचरितं विप्र पुराणं पंचलक्षणम्॥

किन्तु श्रीमद्भागवतकार पं० वोपदेव ने इन पंच लक्षणों से उपेक्षा करते हुए पुराण शब्द के दश लक्षण किये हैं "**दशभिर्लक्षणैर्युक्तं पुराणं तद्विदो विदुः**" इससे यथार्थ रूप से ब्राह्मण ग्रन्थ ही पुराण हैं यह भी पाया जाता है। १८ पुराणों में एक ब्रह्मवैवर्त पुराण भी है उसमें भी १० लक्षण करते हुए एक लक्षण कृष्ण कीर्तन करना भी पुराण का लक्षण कहा है

समस्त पुराणों में पद्मपुराण ही ऐसा है कि जिसमें सभी विषयों का पूर्ण विवरण तथा खण्डन मण्डन पाया जाता है। रामानुज माधवाचार्य्य आदि के विषय में पद्मपुराण में लिखा है-

सम्प्रदायविहीना ये मन्त्रास्ते निष्फला मताः।
अतः कलौ भविष्यन्ति चत्वारः सम्प्रदायिनः॥
श्रीमाध्वीरुद्र सनकावैष्णवाः क्षितिपावनः॥

इसी पुराण के उत्तरखण्ड में रामानुज का नाम विद्यमान है यथाः—

यदूर्द्धपुण्ड्रतिलक शोभनं तन्मध्ये पीतरेखाञ्च श्रीमद्रामानुजं विदुः।

रामानुज का नाम ही नहीं वरन् उनके तिलक तथा तिलक के बीच में मध्य रेखा तक का उल्लेख है। रामानुजाचार्य्य सन् ईसवी की द्वादश शताब्दि में विद्यमान थे यही नहीं कि रामानुज ही का नाम प्राप्त होता हो वरन् मोहम्मद का नाम पुराणों में विद्यमान है जैसा कि

"कलौ द्वौ राक्षसौ जातौ रामानुजमुहम्मदौ।
गायत्रीघातकश्चाद्यो द्वितीयो ब्रह्मघातकः॥

हम ऊपर लिख चुके हैं कि भागवतकार ने भारत आदि के पश्चात् व्यास ने पुराण रच ऐसा लिखा है किन्तु पद्मपुराण में उसके विरुद्ध यह लिखा है कि ": पुराण सर्वशास्त्राणां प्रथमं ब्राह्मणानां स्मृतम्" अर्थात् सब से प्रथम व्यास ने पुराण रचे, पद्मपुराण के पाखण्ड अध्याय में सब प्रकार की मूर्त्तिपूजा, तीर्थ, माला, तिलक, छाप, हिंसा, भस्मधारण, जटा रखना, अवैदिक कर्म करना, शंख, चक्र, पुण्ड्र धारण, नक्षत्र गणना श्राद्ध में भोजन करना, लक्ष्मी, सरस्वती. गङ्गा यमुना स्नान करना इन सब के करने वाले को पाखण्डी कहा है। अर्थात् तमाम पुराणों के वर्णन का इसने खण्डन कर दिया है।

यह तो हम पुनः कभी लिखेंगे कि यथार्थ में पुराण किसे कहते हैं और इन प्रचलित पुराणों की उत्पत्ति किसके द्वारा कब और क्योंकर हुई है किन्तु इस पुराण प्रसंग में लिख देना मनुचित

न होगा कि प्रचलित पुराण न तो धर्मग्रन्थ हैं न ब्राह्मणों द्वारा रचे ही गये हैं वरन् यह सब नीच वर्णसङ्कर सूत कथित हैं और व्यवसायजनित उपन्यासरूप में रचे गये हैं। जो इनके पढ़ने मात्र से ही जाना जाता है। पाठक गण देखेंगे कि समस्त पुराणों में हिन्दू देवी, देवताओं की जो कुछ भी कल्पना इन पुराणकारों ने की है वह कैसी प्रकृतिस्वभावविरुद्ध तथा निन्दनीय है।

इनकी उत्पत्ति ही पर पाठक थोड़ा सा ध्यान दें यद्यपि हम स्थाली पुलाकन्याय से थोड़ा ही लिखते हैं। गंगा से भीष्म मत्स्य से शम्बु, शिवा की भैंसे महाकाली, भैंस से महिषासुर, सोना चांदी तांवा रूपा शिववीर्य्य से, अरणी से शुकदेव,जंघा से निषाद, जटा से वीरभद्र विष्णु की नाभि से ब्रह्मा,अंगूठे से सत्यरूपा, ललाट से रुद्र, वनिता से पक्षी आदि की उत्पत्ति पुराणकारों ने मानी है।

(आर्य्यमित्र से)

सामाजिक समाचार।

दयानन्द आश्रम अजमेर।

दयानन्द एंग्लो वैदिक हाई स्कूल आश्रम अजमेर के पूर्व व वर्तमान विद्यार्थियों का प्रथम सम्मिलन ता० ४ व ५ मई को सानन्द हुआ। सम्मिलन में माननीय पं० मदनमोहन मालवीय जी भी पधारे थे। दीवान बहादुर पं० गोविन्द रामचन्द्र जी खांडेकर सभापति थे। मालवीय जी के व्याख्यान से श्रोतागण सन्तुष्ट हुए।

बिहार प्रान्त में आठ सौ मुसलमानों की शुद्धि।

बिहार प्रान्त के एक ज़िले में बहुत दिनों से कई सौ ऐसे मुसलमान रहते थे जो किसी समय हिन्दू कहार थे परन्तु कई कारणों से मुसलमान हो गये थे अब ये लोग भारत शुद्धि सभा के परिश्रम से दुबारा शुद्ध किये जाकर हिन्दू बनाये गये हैं। बिहार प्रान्त के नामी पंडितों ने इस शुद्धि का विरोध किया है। शुद्धि संस्कार भी प्रसिद्ध पं० द्वारिका नाथ जी ने करवाया। यह और भी हर्षकी बात थी कि हिन्दू समाज ने इन शुद्ध लोगों को अपने में पूरे तौर पर सम्मिलित करलिया। और इस कार्य्यवाही के सम्बन्ध में यहां किसी प्रकार का विरोध नहीं हैं कुछ पंडितों ने शुद्धि के विषय पर

विरोध-प्रगट किया था परन्तु उनको शास्त्रोक्त प्रमाण देकर चुप कर दिया गया जो लोग इस पर भी अपनी हठ पर स्थिर रहे उनके लिये हींगू सराय में एक विशेष शास्त्रार्थ होगा जिसमें शास्त्रों के प्रमाण से शुद्धि का उचित होना निश्चय किया जायगा।

नवजीवन बुक डिपो काशी।

हमारे यहां बहुत से नवयुवक ऐसे मिलेंगे जो विविध विषयों पर स्वच्छन्द लेखिनी चला सक्ते हैं तथा उत्तमोत्तम पुस्तकों का अन्य भाषा से हिन्दी भाषा में अनुवाद कर सक्ते हैं परन्तु प्रकाशक के अभाव से उनकी मन की तरंगे मन हीं में बिलाय जाती हैं। किसी तो विचारे जोश में आकर पुस्तकें लिख तो डालते हैं परन्तु कोई छापने वाला न मिलने से निरुत्साही होकर चुप चाप बैठ जाते हैं यदि किसी पुस्तक विक्रेता तथा यन्त्रालय के स्वामी ने छापना स्वीकार भी कर लिया तो फिर वह उनको सिवाय दस पांच पुस्तकों के और कुछ पुरस्कार नहीं देता इससे भी वे फिर अपना अमूल्य समय किसी पुस्तक के बनाने में खर्च नहीं करते। यदि किसी लेखक ने अपने आप ही एक पुस्तक छपा भी ली तो फिर उसका बिकना मुश्किल हो जाता है क्योंकि वे विचारे बेचने का ढंग क्या जाने अतः उन बिचारों का समय और द्रव्य दोनों का नुक्सान होता है इस प्रकार एक बार फंस जाने पर फिर वें दूसरी बार निरुत्साही होकर कभी पुनः ऐसे काम में हाथ नहीं डालते। इस अभाव को दूर करने के लिये नवजीवन बुक डिपो के उदार स्वामी ने स्त्री शिक्षा, सामाजिक सुधार, धार्म्मिक, ऐतिहासिक तथा बालकोपयोगी पुस्तकों के प्रकाशन का भार लिया है। जो लोग इन विषयों पर पुस्तकें लिख कर भेजेंगे, एक नियमित समिति के सामने उनकी पुस्तकें पेश की जावेंगी स्वीकार होने पर वे उनका प्रकाशन करेंगे। जिन मनुष्यों को इस विषय पर कुछ पूछना हो तो निम्न लिखित पते से पत्र व्यवहार करें।

मैनेजर-नवजीवन बुक डिपो काशी

आवश्यक सूचना।

प्यारे पाठकों! आज यह नवजीवन अपने तीन वर्ष पूरे करके

चतुर्थ वर्ष में पदार्पण करता है। यह तो आपको भली भांति विदित है कि यह पत्र किस प्रकार अपने पाठक पाठिकाओं में नवजीवन का संचार करता हुआ अपने नाम को सार्थक कर रहा है इसने बालक और वृद्धों के अतिरिक्त नवयुवकों के जीवनों को सदाचारी बनाने में कितना परिश्रम किया है जिसका फल थोड़े ही दिनों में आप के सन्मुख आ उपस्थित होगा। इस समय तक नवजीवन के ग्राहकों की संख्या इतनी नहीं हुई जिसमें इसका पूरा २ खर्च निकल सके क्योंकि प्रत्येक साल के अंत में इस पत्र के उदार जन्म दाता को अपनी गांठ से सैकड़ों रुपये लगाने पड़ते हैं। इसका कारण यह है कि प्रत्येक समाचारपत्र में विज्ञापनों की छपाई विशेष कर सुधासिन्धु,नमक सुलेमानी आदि के विज्ञापनों से एक अच्छी आमदनी होती है परन्तु इस पत्र के संचालक महाशय इन गन्दे नोटिशों से अपने प्यारे नवजीवन का पोषण नहीं करना चाहते और न वे अपने ग्राहकों की द्रव्य व्यर्थ लुटवाना ही चाहते हैं क्योंकि इन उत्तेजक विज्ञापनों के पढ़ने से संभव है कि हमारे भोले भाले पाठक धोखे में आ जावें अतः इसका पूरा भार ग्राहक संख्या के ऊपर ही निर्भर है। इस पत्र के स्वामी इसकी आमदनी से अपने कोष को नहीं भरना चाहते किन्तु उनका अभीष्ट सामाजिक सुधार है। सामाजिक सुधार को वे अपने इष्ट की पूर्ति मानते हैं इस लिये मैं नवजीवन के प्रत्येक पाठक से विनय करता हूं कि वे कम से कम दो ग्राहक अधिक बनाने की चेष्टा करें और जो महाशय ५ ग्राहक बनाने की कृपा करेंगे उनकी सेवा में नवजीवन एक साल तक बिना मूल्य भेजा जाया करेगा। विद्यार्थियों के लिये एक और रिआयत की गई है कि जो केवल दो ग्राहक नवजीवन के बनाकर भेजदें उनको एक साल तक बराबर नवजीवन भेजा जाया करेगा

इस प्रकार ५०० ग्राहक अधिक होने पर नवजीवन के आकार और चित्रों में भी अधिक वृद्धि की जायगी। इसमें कोई सन्देह नहीं यदि हमारे पाठक थोड़ा भी प्रयत्न करेंगे तो प्रत्येक के लिये कम से कम दो ग्राहक अधिक बना लेना कुछ कठिन काम नहीं है। आशा है कि हमारे प्रिय पाठक अवश्य हमारी प्रार्थना पर ध्यान देंगे।

भवदीय निवेदक
मैनेजर नवजीवन काशी,

विशेष सूचना।

जो ग्राहक महाशय नवजीवन के सम्बन्ध में कुछ पूछना चाहते हों या अपना पता बदलाना चाहते हों तो वे कृपा कर के अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिख दिया करें क्योंकि ग्राहक संख्या न देने से यदि उत्तर जाने में देरी हो तो मैनेजर जिम्मेदार न होगा।

भवदीय निवेदक
मैनेजर नवजीवन—काशी

बिना बीते नहीं सूझती।

टिटैनिक जहाज के डूबजाने से अब सब जहाजों में लाइफ बेल्ट और किस्तियों की अधिकता होने लगी है सच है बिना गिरे मनुष्य सावधान नहीं होता। इसीसे धीरे जहाज में सैकड़ो आविष्कार होजाने की संभावना है केवल एक बार ठोकर खाने की जरुरत थी।

नवयुवक कान्यकुब्ज महामंडल।

नवयुवक कान्यकुब्ज महामंडल की प्रथम कान्फरेंस तारीख ३० मई १ व २ जून को स्थान डायमंड जुबिली हाईस्कूल कन्नौज में बड़े समारोह के साथ होगी सब कान्यकुब्ज भाईयों से प्रार्थना है कि उक्त समय पधार कर उत्सव को सुशोभित करें।

भवदीय कृपाभिलाषी
मन्नालाल तिवारी
मंत्री
नवयुवक कान्यकुब्जमंडल
आगरा

विज्ञापन ।

नवजीवन के टाइटल का तीसरा तथा चौथा पेज खाली है जो सच्चा फ़र्म या कम्पनी अथवा जो महाशय उत्तम पुस्तकों का विज्ञापन देना चाहें उनको निम्न लिखित रेट देने पड़ेंगे। नवजीवन बर्मा, सीलोन अफ्रिका आदि कई देशों में जाता है इसकी ग्राहक संख्या दिनों दिन बढ़ती जाती है। अप्रैल से नया साल शुरू होता है। जो लोग विज्ञापन देना चाहें वे निम्न लिखित पते पर पत्र व्यवहार करें।

एक पेज एक मास का			८)
,, तीन	,,	,,	२१)
,, ६	,,	,,	४०)
,, एक साल का		,,	७५)
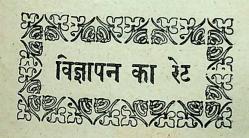
हिन्दी वैज्ञानिक कोष।

Hindi Scientific Glossary

हिन्दी वैज्ञानिक कोष:—यह काशी नागरीप्रचारिणी स[भा] की ओर से एक विद्वानों की सभा द्वारा रचा गया है, जो अंग्रे[जी] जाननेवाले अपनी मातृ भाषा हिन्दी का कोष अनुवाद द्वारा [बना]ना चाहते हैं उनको कम से कम एक कापी अवश्य ही अपने [पास] रखनी चाहिये। मूल्य ४) रु० है, किन्तु नवजीवन के ग्राहकों से [...] ही रुपया लिया जायगा।

अन्य उपयोगी पुस्तकें।

नाम पुस्तक	मूल्य
१. ऋतुचर्या सम्पादक नवजीवन द्वारा रचित)	१)
२. लक्ष्मी एक शिक्षा प्रद उपन्यास	।)
३. माणिकआदर्श(राजपूतों की वीरता।)	
४. मनुस्मृति भाषा … … …	१)
५. भारत की प्रसिद्ध तथा विदुषी स्त्रियों के संक्षिप्त जीवन चरि[त्र] भागों में समाप्त)	
६. ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका(उर्दू)	
७. बर्नियर की भारतयात्रा३भाग	
८. उपदेश मंजरी हिन्दी	
९. ,, ,, उर्दू	

मिलने का पता

मैनेजर—नवजीवन-काशी

लक्ष्मी

यह कन्याओं के लिये एक बड़ी लाभदायक पुस्तक है इसमें आदर्श रमणी का चरित्र दिखाया गया है कि किस प्रकार माता पिता सास ससुर आदि की सेवा करती हुई कन्या तथा [न]ारी अपने पति की आज्ञानुवर्ती बनकर गृहस्थ जीवन को सफल [कर] सकती है। धन्य वे भारत ललनायें हैं जो इस प्रकार अपने चरित्र की विमल कीर्ति से भारत का मुख उज्वल करती हैं। ८० पृष्ठ की पुस्तक है और मूल्य केवल ।) है परन्तु जो लोग [भारत] की वीर और विदुषी स्त्रियां और लक्ष्मी एक संग मंगायेंगे [उन्हें] मय डाक महसूल केवल १) एकही रुपया देना होगा।

कन्याओं को इनाम देने के लिये ये पुस्तकें बड़ी ही उत्त[म हैं] एक बार मंगा के देखिये।

पुस्तक मंगाने का पता—
मैनेजर नवजीवन
काशी।

REG. NO. A. 474.   रजिस्टर्ड नं॰ ४७

नवजीवन

Nawajiwan

सम्पादक—केशवदेवशास्त्री

विषय सूची।

भाग ४ (मई, जून १९१२) अङ्क २, ३

चित्र-मिस्टर स्टेड का चित्र व चरित्र

वार्षिक मूल्य ... ... ३) रु॰

एक प्रति का मूल्य ... ... ।=)

नवजीवन के नियम

(१) नवजीवन का वार्षिक मूल्य ३) रुपये मात्र है।
(२) प्रतिमास की २० तारीख़ को काशी से निकला करेगा
(३) नवजीवन में कोई अश्लील विज्ञापन न छपने पावेगा।
(४) विद्यार्थियों, छात्राओं, कन्या पाठशालाओं की अध्यापिकाओं ... पुस्तकालयों से केवल २) रुपये वार्षिक मूल्य लिया जावेगा।
(५) प्रतिमास प्रकाश होने की तिथि के १० दिन के अन्दर ... नवजीवन के न पहुंचने पर दूसरी कापी भेजी जावेगी, ... मूल्य देना पड़ेगा.

——:o:——

नवजीवन का उद्देश्य।

(१) वैदिक धर्म्म के प्रचारार्थ
(क) आर्य्य कुमारों तथा कुमारियों में नवीन जीवन का संचार क...
(ख) सामाजिक उन्नति के उपायों पर विचार करना।
(ग) आर्य्य जीवन की मर्यादा को स्थापित करने की चेष्टा करना।
(घ) महानुभावों के सच्चरितों पर विचार करना और
(ङ) उपयोगी संस्थाओं के वृतान्तों को सर्वसाधारण तक पहुंचा...

उदयति यदि भानुः पश्चिमे दिग्विभागे
प्रचलति यदि मेरुः शीततां याति वन्हिः।
विकसति यदि पद्मं पर्वताग्रे शिलायां
न भवति पुनरुक्तं भाषितं सज्जनानाम् ॥

भाग ४. | मई और जून १९१२ | अङ्क २,३

प्रार्थना।

ब्रह्ममुहूर्ते बुध्येत धर्म्मार्थौ चानुचिन्तयेत्।
कायक्लेशांश्च तन्मूलान् वेदतत्वार्थमेव च ॥

भगवन्! मनुष्य अपने २ संस्कारों से प्रेरित होकर कर्मक्षेत्र में काम कर रहे हैं। प्रायः हम ऊर्द्धगति की ओर जाने की चेष्टा करते हैं परन्तु जब कभी हम अपने जीवन के कार्यक्रम पर दृष्टि डालते हैं तो हमें ज्ञात होता है कि हम सन्मार्ग के स्थान पर कुमार्ग में जा रहे हैं। प्रभो! हमें बल प्रदान करें कि हम उन नियमों का अवलम्बन करें, जिन्हें ऋषि मुनि मानते आये हैं। प्रातःकाल ही उठकर हम धर्म और अर्थ का चिन्तन किया करें। शरीर के रोगों से बचने के लिये रोगों का निदान किया करें और वेदार्थ के तत्व को समझने की चेष्टा किया करें। हमारा समग्र प्रयत्न वेद की आज्ञाओं के पालन करने तथा उन्हें अपने जीवन में चरितार्थ करने में व्यतीत हो। सोते, उठते, बैठते, जागते हम धर्माचरण का विचार करें और कदापि अधर्म का भूल से भी आचरण न किया करें।

उपदेश ।

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः ।

यूनान के सुप्रसिद्ध वाग्मी डिमास्थीनज़ (Demosthenes) से जब कामयाबी का राज़ पूछा गया तो उसने उत्तर दिया Action, Action and Action " कर्म करो, ' कर्म करो ' हमारे दुखों का मूल निदान या अन्तरनिहित भेद ही यही है कि हम बिना कर्म के सफलता की आशा करते हैं । वेद एक स्वर से पुकार कर कहते हैं कि सौ वर्ष की आयु पर्य्यन्त निरन्तर कर्म करो । शरीर की रचना ही उपदेश देती है कि इस शरीर को खूब थकावो तभी बल की वृद्धि, स्वास्थ्य की रक्षा तथा जीवन का सुख मिलेगा । परन्तु कर्म २ में अन्तर है । कर्मों द्वारा मनुष्य धर्मात्मा और कर्मों द्वारा ही पापात्मा बनते हैं । जो लोग धर्मात्मा हुए हैं उन के जीवन पर दृष्टि डालो, उनके इतिहास को पढो, आपको ज्ञात होगा कि वह निरन्तर वेद या सत्य के ज्ञान की प्राप्ति, धर्म के लक्षणों का अनुष्ठान, ज्ञान की वृद्धि की चेष्टा और पवित्रता की रक्षा के लिये सत्संङ्ग या उत्तमोत्तम पुस्तकों का स्वाध्याय करते हैं, वह इन्द्रियों के निग्रह करने में तत्पर होते हैं और अहर्निश धर्म क्रिया और आत्मा का चिन्तन किया करते हैं ।

जब मनुष्य सांसारिक पदार्थों में अनुराग करता, धैर्य्य को छोड़ता, बुरे कर्मों को ग्रहण करता, और निरन्तर विषयों में प्रीति करने लगता है तब वह गिरने लगता और धर्म के उच्च मार्ग से पतित होने लगता है । परन्तु जो पुरुष अत्यन्त आलसी बन कर दिन रात सोता रहता, धैर्य्य को छोड़ हर समय अधीर बना हुआ दिखलाई देता, क्रूर स्वभावयुक्त हो जाता, नास्तिक बन कर वेद और ईश्वर से श्रद्धा को हटाता, विक्षिप्त मन से काम करता और व्यसनों में फंसता है वह मनुष्यत्व को छोड़ता और अपने जन्म को निष्फल गंवाता है । यही तीन अवस्थाएं सतोगुणी, रजोगुणी, और तमोगुणी पुरुषों की मिलती हैं । वेद हमें सत्वगुण की ओर प्रेरणा करते हैं अतएव कल्याण की इच्छा करने वाले को सर्वदा उत्तम कर्मों में प्रविष्ट होना चाहिये ।

सम्पादकीय वक्तव्य ।

हिन्दू विश्वविद्यालय ।

कुछ मास व्यतीत हुये जब मालूम होता था कि हिन्दू विश्वविद्यालय के सञ्चालकों के समूह के अन्दर शिथिलता सी आगई है, परन्तु उन दिनों श्रीमान् मालवीय जी महोदय कुछ रुग्णावस्था में थे और कुछ कौंसिल के कार्य में लगे थे । उसी से छुट्टी पाकर श्रीमान् मालवीय जी ने कार्य करना प्रारम्भ कर दिया । विद्यालय की भिक्षामण्डली मुरादाबाद, नैनीताल आदि कई स्थानों में पधारी । वहां पर सभाएं की गईं और बहुत कुछ चन्दा भी एकत्रित किया गया है । वहां से श्रीमान् दरभङ्गा नरेश तो काश्मीर राज्य में चन्दा एकत्रित करने के अभिप्राय से गये और मालवीय जी अपने अथक उत्साह से इन्हीं प्रान्तों में दौरा कर रहे हैं ।

विशाल पुस्तकालय ।

श्रीमान् महाराज बड़ोदा ने जो कुछ अपने राज्य में शिक्षाप्रचार, वैज्ञानिक शिक्षा की वृद्धि और सामाजिक तथा राज्य सम्बन्धी सुधार के लिये यत्न किया है और कर रहे हैं वह किसी शिक्षित पुरुष से छिपा नहीं है । यह जान कर पाठकों को महान हर्ष होगा कि अभी हाल ही में महाराजा साहेब ने बड़ोदा में एक विशाल पुस्तकालय की नींव डाली है जिस में अनुमान १८ लाख रूपया खर्च होगा । केवल ३-४ लक्ष रुपया इमारत ही में लगेगा, इसी पुस्तकालय से अन्य राजकीय पुस्तकालयों का निरीक्षण और पोषण होगा ।

टीटेनिक जहाज़ के डूबने से शिक्षा ।

ऊपर लिखित शीर्षक टिप्पणी को पढ़ कर हमारे पाठकों को आश्चर्य होगा कि टीटेनिक जहाज़के डूबने के विषय में कौन सी नई बात सम्पादक को ज्ञात हुई है जिसको वह अपने पाठक गणों को बतलाना चाहते हैं जब कि संसार के सारे के सारे पत्रों ने टीटेनिक जहाज़ के ऊपर थोड़ा बहुत लिख ही डाला है । हमारे पास इतना वैज्ञानिक विद्याओं का भण्डार नहीं है कि हम कोई नवीन वैज्ञानिक यन्त्र की रचना कर सकें कि जिस से जहाज़ को बर्फ के भयङ्कर पहाड़ों की समीपता ज्ञात हो सके और आने वाली सन्तति को लाभ पहुंच सके । हमारे पास इतना सामान नहीं है कि जिससे जहाज़ ऐसा मजबूत बन सके कि उसको पञ्चतत्वों के समूहों से

कोई भय न रहे । हमारे पास इतना पर्य्याप्त ज्ञान भी नहीं है कि हम अपनी अनुमति दें कि जहाज़ों में लाइफ बेल्ट और किश्तियों की अधिकता होनी चाहिये जब कि सब इसी के ऊपर ज़ोर दे चुके हैं । हमारा उद्देश्य सामाजिक उन्नति के उपायों पर विचार करना, महानुभावों के सच्चरितों पर चिन्तन करना और अत्याचार से पीड़ित निर्बलों का पक्ष करना मात्र है । टीटेनिक जहाज डूबा और उस पर बैठे हुए निर्बलों के बचाने के लिये पूर्ण यत्न किया गया । टीटेनिक जहाज में धक्का लगा कि लाइफ बोट इत्यादि पानी पर नीचे लटका दी गई और उनमें छोटे २ बालक और स्त्रियां बिठलादी गई जिससे इनके प्राणों की रक्षा हो सके । आज हमारे गौराङ्ग भ्राताओं ने सिद्ध कर दिया कि उनके अन्दर स्त्रियों और बालकों का मान और आदर करने का कितना उत्साह होता है और यह कि उनके मन्तव्य और कर्तव्य में भेद नहीं है । हम को इससे शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये कि मनु जी के वाक्यों को मानते हुए भी हम स्त्रियों पर कितना अत्याचार कर रहे हैं । आज कल मेलों, तीर्थों और रेलगाड़ियों में जितना कष्ट स्त्रियों को दिया जाता है वह किसी से छिपा नहीं है । बुद्धिमानों को इतना ही कह देना पर्य्याप्त होगा । हमको टीटेनिक जहाज के डूबने से स्त्रियों और निर्बलों को आपत्ति पड़ने पर भी सहायता प्रदान करने की शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये ।

स्मरण शक्ति का अद्भुत उदाहरण ।

मानव जाति में भला ऐसा कौन मनुष्य है जिसको स्मरण शक्ति की शरण किसी न किसी समय में न लेनी पड़ती हो । स्मरण शक्ति के द्वारा ही कभी तो हमारा हृदय बाल्यावस्था के कर्तव्यों और विचारों के चिन्तन में मोद से भरजाता है, कभी तो व्यतीत दुख और आपत्तियों की चिन्ता की चिता से पञ्चतत्वों का बना हुआ हमारा शरीर भस्मीभूत होने लगता है । कभी इतिहास की पुस्तकों के अन्दर वर्णित की हुई कथाओं को एकान्त में बैठकर स्मरण करने से हमको अकथनीय आनन्द प्राप्त होता है । अभिप्राय यह है कि साधारणतया देखने से प्रतीत होता है कि स्मरण शक्ति ही आनन्द और दुखदायिनी होती है। स्मरण शक्ति से इस संसार में सफलता और असफलता प्राप्त होती है। स्मरण

शक्ति ही से हम अपने व्यतीत अनुभवों और व्यतीत काल की घटनाओं को वर्णन करके पुस्तकों द्वारा मनुष्यों को लाभ पहुंचाते हैं।

भारतवर्ष स्मरण शक्ति की उन्नति के लिये जगद् विख्यात है। सम्प्रति भी यहां के संस्कृत के विद्यार्थियों और अध्यापकों को प्रायः व्याकरण सम्बन्धी बहुत सी पुस्तकें कंठाग्र होती हैं। अतः ऐसी अवस्था को देखकर पता लगता है कि स्मरण शक्ति को बढ़ाने में घोखना और बार २ पढ़ना ही कृतकार्य्य होना है। स्मरण शक्ति ही मानसिक उन्नति का आधार है। इसका अभाव पठन पाठन में घोर विघ्न और बाधायें डालता है। स्मरण शक्ति तीन प्रकार से कार्य करती है। प्रथम स्मरण शक्ति से अभिप्राय निकलता है कि कोई विचार मस्तिष्क में अङ्कित किया गया है, द्वितीय यह कि वह अङ्कित किया हुआ विचार अपनी इच्छानुसार स्मरण में आसकता है अथवा विचारों को एकत्रित करना और उनका स्मरण करना, तृतीय यह कि आङ्कित किये हुये विचार व वस्तु वही है जिनको प्रथम देखा, सुना वा विचारा था। मन को एकाग्र करने से स्मरणशक्ति को बहुत सहायता मिलती है।

आज हमारे सामने स्मरण शक्ति का एक अद्भुत उदाहरण आता है। वह महाशय लैस्टन हैं जो पत्रों में "मिमोरा" (memora) के नाम से विख्यात हैं। इन्होंने चार वर्ष के अन्दर अमेरिका और आङ्गल देशों में अपनी इस कौतूहल जनक शक्ति से बहुत ही प्रतिष्ठा लब्ध की है। आप उन से कोई ऐतिहासिक घटना-प्राचीन समय से लेकर इस समय तक की पूंछें तो वे उसका उत्तर विद्युत की न्याई शीघ्रता से देंगे जिससे आप को विस्मित हो जाना पड़ेगा। इनकी परीक्षा करने के पश्चात् महाशय स्टेड ने जिनका शोक सारा संसार कर रहा है, लैस्टन की बड़ी प्रशंसा की थी। इनको बाल्यावस्था ही से घटनाओं की तिथियां और अङ्क बहुत ही शीघ्र स्मरण हो जाते थे। संसार के इतिहास के जानने में वे अद्वितीय हैं। उन्हों ने चैलेंज दिया है कि जो कोई उन के ऊपर जय प्राप्त करलेगा उसको वे १५०० सौ रुपये देंगे। जाड़े के मौसम में वे भारतवर्ष में आवेंगे।

हमारे शास्त्र सत्य प्रतिपादन करते हैं।

शनैः २ पाश्चात्य विद्वान् ... सिद्धान्तों के ... रहे हैं

जिनका उल्लेख वैदिक धर्म में है और जिनको ऋषि महर्षियों ने
माना है । वहां के बहुत से विद्वानों का मत है कि जिन मनुष्यों के
श्वेत कुष्ट और क्षय इत्यादि रोग हों उनको मरवा डालना चाहिये
और उनके साथ कोई आचार व्यवहार न करे क्योंकि यह रोग स्पर्श
से होजाते हैं अतः आनेवाली सन्तति भी रोग ग्रसित हो जायगी।
परन्तु यहां के शास्त्रकार निर्दयता का व्यवहार नहीं करते हैं।
मनुजी ने बतलाया है:—

हीनक्रियं निष्पुरुषं निश्छन्दो रोमशार्शसम् ।
क्षय्यामयाव्यपस्मारिश्वित्रकुष्ठि कुलानि च ॥मनु०३।७॥

अर्थात् जो कुल सत्क्रिया से हीन, सत्पुरुषों से रहित, वेदाध्ययन
से विमुख, शरीर पर बड़े२ लोम अथवा बवासीर वाले, क्षयी, दमा,
खांसी, आमाशय, मिरगी, श्वेतकुष्ठ और गलित कुष्ट वाले हों उन कुलों
की कन्या वा वर के साथ विवाह न होना चाहिये, क्यों कि ये सब
दुर्गुण और रोग विवाह करने वाले के कुल में भी प्रविष्ट हो जाते
हैं । मनुजी दूरदर्शी थे और मनुष्यों के उपकार करनेवाले थे।
एवं यदि विवाह काल निर्णय के ऊपर शास्त्रकारों की अनुमति
ढूंढते हैं तो हमको मिलता है कि

ऊनषोडशवर्षायामप्राप्तः पञ्चविंशतिम् ।
यद्याधत्ते पुमान् गर्भं कुक्षिस्थः स विपद्यते ॥ इत्यादि
सुश्रुत अ० १०।४॥

अर्थात् सोलह वर्ष से न्यून आयुवाली स्त्री में पच्चीस वर्ष से
न्यून आयु वाला पुरुष जो गर्भ को स्थापन करे वह कुक्षिस्थ हुआ
गर्भ विपत्ति को प्राप्त होता अर्थात् पूर्णकाल तक गर्भाशय में रह
कर उत्पन्न नहीं होता । सोलह वर्ष से लेके चौबीसवें वर्ष तक
कन्या और पच्चीसवें वर्ष से लेके अड़तालीसवें वर्ष तक पुरुष
का विवाह समय उत्तम है । डाक्टर आर० जे० इवर्ट
यूजिनिक्स रिव्यू (Eugenics Review) में बतलाते हैं कि
किस समय गर्भ स्थापित करना चाहिये । वे कहते हैं कि माता
२५ वर्ष से ३० वर्ष तक अच्छा बालक उत्पन्न करती है और पिता
की आयु ३० वर्ष से ३५ वर्ष तक अच्छा बालक उत्पन्न करने के
लिये होनी चाहिये। इसके ऊपर बाल्य विवाह के पक्षपातियों को
अवश्य मनन करना चाहिये ।

भारतवर्ष में शिक्षा की गति।

इस में कुछ भी सन्देह नहीं है और इसपर बार २ ज़ोर भी दिया गया है कि किसी देश को उन्नति के शिखर पर पहुंचाने का एकमात्र उपाय शिक्षा का प्रचार करना ही है। हाल ही में एक पुस्तक प्रकाशित हुई है जिससे हमको शिक्षा के विषय में अपनी अवस्था मालूम हो सकती है। देशी रियासतों को छोड़ कर सारे भारतवर्ष में सब प्रकार के विद्यार्थियों की संख्या सन् १९१०-१९११ ईसवी में ६,३५८,६६५ थी। गत दश वर्षों की अपेक्षा इस संख्या में १,८२८,२५३ की वृद्धि हुई है। उपरोक्त संख्या में से पुरुष विद्यार्थियों की संख्या ५,४६२,४२२ है और स्त्रियों की संख्या केवल ८६६२४३ है। इस से प्रकट होता है कि अभी देश में स्त्री शिक्षा की कितनी आवश्यकता है। सब प्रकार के स्कूलों की संख्या सन् १९११-१९१२ में १,४२४७८ थी जिस में से पुरुषों के लिये १२७४०१ हैं और स्त्रियों के लिये १५०७७ है। इस से विदित होता है कि चार ग्रामों में केवल एक ही ग्राम में बालकों के लिये एक स्कूल है और ४० ग्रामों में केवल एक ही ग्राम में कन्याओं के लिये एक स्कूल है। हमारे देश में शिक्षा की कैसी शोचनीय दशा है। यद्यपि अब यह सिद्ध होगया है कि हमारे सत् शास्त्रों में स्त्री शिक्षा की आज्ञा है, यद्यपि देश और कालको भी देखकर यहां पर स्त्री शिक्षा की आवश्यकता प्रतीत होती है तो भी नहीं मालूम इस देश में स्त्री शिक्षा और साधारणतः सर्व प्रकार की शिक्षा की ऐसी क्यों अवस्था है ? इसका मुख्य कारण हमारे भाइयों में उत्साह का अभाव और न्यूनता ही दिखाई पड़ती है। शिक्षा के प्रत्येक पक्षपाती को ऊपरोक्त संख्याओं पर ध्यान देना चाहिये जिससे वह और भी अधिक उत्साह पूर्वक इस ओर कार्य करें।

विद्युत से लाभ।

जिन वस्तुओं को हमारे हिन्दू भाई पूजते हैं उन्हीं से हमारे यूरोप और अमेरिका निवासी भाई कार्य लेते हैं। यदि हम भारतवर्ष के ऊपर दृष्टि डालते हैं, तो यह बात और भी स्पष्ट हो जाती है। हमारे हिन्दू भाई हज़ारों नदी नालों में पैसा चढ़ा कर पूजा करते हैं किन्तु किसी के मन में विचार नहीं उत्पन्न होता कि आओ इसके पानी से अपने खेतों को सींचें जिससे दुर्भिक्ष न

पड़ सके । इस के बिल्कुल विपरीत दशा हम यूरोप में पाते हैं। वहां पर पम्पों और यन्त्रों द्वारा बड़ी २ दूर की नादियों से पानी लेकर अपने खेतों को उपजाऊ बनाते हैं, वहां पर अग्नि का प्रयोग किया जाता है, वहां पर इस के द्वारा इंजन इत्यादि चलाते हैं जिससे मनुष्यों और व्योपार को बहुत लाभ पहुंचता है । इसी प्रकार से हमारे पाश्चात्य भाइयों ने विद्युत को अपने वश में करके कार्य लिया है । आजकल अमेरिका में इसी द्वारा रेलगाड़ी, तारघर, बेतार की तारबर्की, आकाश में उड़नेवाले व्योमान और भी अगणित कार्य चलाये जाते हैं । हाल ही में यूरोप के एक डाक्टर ने एक नया आविष्कार किया है कि विद्युत के प्रयोग से मनुष्यों की आयु बढ़ सकती है । वैज्ञानिक विद्वान् जो कुछ न करडालें वही थोड़ा है ।

बनारस में एक अनाथ ।

जो पाठकगण पत्र पढ़ते होंगे उनको ज्ञात हुआ होगा कि यहां काशी में एक अनाथ कन्या सरकार को मिली थी जिसको सरकार ने ईसाइयों को पालन पोषण करने के लिये सौंप दिया है यद्यपि सरकार ने बचन दिया है कि वह किसी व्यक्ति के धर्म में विघ्न बाधा नहीं डालेगी और दुर्भिक्ष समय में जो बालक और कन्यायें अनाथ प्राप्त होंगी वे जिस २ धर्म की होंगी उन्हीं धर्मावलम्बियों को पालन पोषण करने के लिये दी जायेंगी । यदि पता करने पर उसको कोई न ले अथवा उसके धर्मावलम्बी लेने से इन्कार करें तब अन्य धार्मिक सम्प्रदायों को अनाथ सौंपना चाहिये अन्यथा नहीं । किन्तु काशी में इस के विपरीत ही दशा दिखाई पड़ती है । यहां पर उस अनाथ के हिन्दू भाई ही उसको ले लेते यदि उनको कुछ खबर दी जाती किन्तु ऐसा भी नहीं किया गया । इस के पश्चात् सब से अधिक अधिकार उस अनाथ के ऊपर आर्य समाज ही का था जो सर्वदा ऐसे बालकों को अपने दायरे के अन्दर लेने के लिये उद्यत रहता है किन्तु ऐसा भी नहीं किया गया । जब आर्य समाज के मन्त्री को ज्ञात हुआ कि वह अनाथ कन्या ईसाइयों को सौंप दी गई है तब मन्त्री जी ने अनाथ के प्राप्ति के अभिप्राय से श्रीमान् कलेक्टर महोदय को प्रार्थना पत्र दिया । उसके ऊपर कलेक्टर महोदय लिखते हैं कि प्रथम आर्य

कर्तव्य परायण, धर्म्मवीर श्री. डबल्यु. टी. स्टेड महोदय

सम्पादक—रिव्यू आफ रिव्यूज़ ।

T. P. W.

समाज के सभापति को इसके विषय में सूचना दे दी गई थी जब वे नहीं मिले तब वह कन्या ईसाइयों को सौंपी गई है। हम को जहां तक ज्ञात होता है कि आर्य समाज के पास कोई ऐसी सूचना भेजी ही नहीं गई है नहीं तो मन्त्री जी प्रार्थनापत्र ही क्यों देते। यदि मान भी लिया जाय कि आर्य समाज के समीप सूचना आई थी और कुछ उस के ऊपर ध्यान नहीं दिया गया, तौ भी उचित तो यही मालूम होता है कि जब मन्त्री जी ने प्रार्थना पत्र दिया और सूचना की अनभिज्ञता प्रकाशित की तब तो अनाथ को वापस कर देना चाहिये था। खेद के साथ कहना पड़ता है कि ऐसा नहीं हुआ। हिन्दू जाति तेरी क्या दशा होगी!

———o———

मिस्टर स्टेड की अकाल मृत्यु।

(पं० ओंकारनाथ वाजपेयी)

आज संसार में कोई ऐसा समाचारपत्र नहीं है जिसने मि० स्टेड की अकाल मृत्यु पर थोड़ा बहुत न लिखा हो। जिस पत्र को उठाइये वह शोकपूर्ण शब्दों में उन के कुछ न कुछ जीवन वृतान्त का अवश्य उल्लेख कर रहा है। धन्य है वह पुरुष जिसकी मृत्यु पर सारा संसार शोकाकुल हो। पाठक विचारेंगे कि एक सामान्य श्रेणी का बालक किस प्रकार अपने प्रयत्न तथा पुरुषार्थ से समस्त भूमण्डल में प्रसिद्ध तथा सम्मानित हो गया। किसी संस्कृत कवि की उक्ति यहां क्या ही ठीक संघटित होती है।

विद्वत्वं च नृपत्वं च नैव तुल्यं कदाचन।
स्वदेशे पूज्यते राजा विद्वान् सर्वत्र पूज्यते॥

मि० स्टेड की जीवनी का उल्लेख करने से पहले हम पाठकों को उस रोम हर्षण दुर्घटना का कुछ वृतान्त-बताना चाहते हैं जिसके कारण हमारे चरित्र नायक को इस संसार से सदा के लिये मुख मोड़ना पड़ा।

अमेरिका में एक धार्म्मिक सभा होने वाली थी उसमें सम्मिलित होने के लिये मि० स्टेड गत अप्रैल मास में टीटेनिक नामक जहाज से रवाना हुये। कहा जाता है यह जहाज़ दुनिया का सबसे बड़ा जहाज़ था। इसकी लम्बाई ८८० फुट, चौड़ाई और ऊंचाई ९९ फुट थी इसका वज़न ४५००० टन था। इस जहाज के इञ्जन

की ताकत ४६००० घोड़ों की थी । इसकी चाल भी फी घंटे २१ समुद्री मील के हिसाब से थी । इसके बनवाने में १७,६२५,००० रुपये खर्च हुये थे । पहिले पहिल ही यह जहाज यात्रा कर रहा था। इस पर यात्रा करने के लिये लोग कुछ महीनों से तय्यार हो रहे थे । यह समझा जाता था कि यह जहाज़ कभी न डूब सकेगा। परन्तु अहंकार नाश का प्रथम चिन्ह है (pride goeth before distruction) कौन सी शक्ति शाली चीज़ है जिसे इन पंच महा भूतों ने छिन्न भिन्न न कर दिया हो ।युधिष्ठिर की मय रचित सभा कहां है ? बड़े २ प्राचीन धुरन्धर अभिमानी राजाओं के राज महल अब कहां है? जिनका केवल वर्णन मात्र पुस्तकों में रह गया है। भला टीटेनिक बिचारे की एटलान्टिक महासागर के सम्मुख क्या हस्ती है ? पाठक भला विचारें तो सही ।

यह जहाज़ सौथेम्पटन बन्दर से २३४० मनुष्यों को लेकर न्यूयार्क को रवाना हुआ। इसमें लगभग १½ करोड़ के तो हीरा मोती थे। इसमें सैंकड़ों धनिक तो केवल सैर ही के लिये गये थे । कहते हैं एक करोड़पति की स्त्री १८ लाख रुपये के तो केवल गहने ही पहने थी ।

उत्तरीय समुद्र में इन दिनों बहुधा बर्फ के टीले उतराया करते हैं । इनकी शोभा बड़ी ही मनोहर होती है । उन टीलों के पानी के ऊपर के भाग से एक बड़ा हिस्सा जल में रहता है । इनके ऊपर सूर्य्य की किरणों पड़ कर नाना प्रकार के रंगों की आभा दिखाती हैं। इस कौतुक को देखने के लिये यूरोप के सहस्रों लोग वहां जाते हैं।

गत १४ अप्रैल को ग्यारह बजे के लग भग रात्रि के समय न्यूफाउण्ड लैंड की ओर से एक दीर्घाकार पर्वत बहता हुआ चला आ रहा था । उस समय हमारा नौकाकार टीटेनिक भी अपनी पूरी चाल से समुद्र तल पर जल क्रीड़ा करता जा रहा था। हिम पर्वत भी स्पर्धा से टीटेनिक की चाल को न सहन कर उसकी ओर चला । इस समय टीटेनिक पर बैठे हुये यात्री अपने २ कार्य्य में मग्न थे । कोई तो निद्रा देवी के अङ्क में पड़ा घुर्राटे मार रहा था कोई समाचार पत्र में लिखे हुये लार्ड ग्रे से कियेहुये प्रश्न का उत्तर पढ़ रहा था अथवा मि० रुज़वेल्ट और टेफ् की वक्तृताओं को पढ़ता हुआ अपनी भी सम्मति निश्चय कर रहा था । कोई ताश के खेल

मस्त था। कोई कुर्सी पर बैठा हुआ पैर के ऊपर पैर रखकर शान्त चित्त हो कुछ सोच रहा था अर्थात् किसी को यह खबर न थी कि हमारे जहाज़ का हिमटिले के साथ मुठ भेड़ होगी जिसका परिणाम सारे संसार के लिये दुखदाई होगा। देखते ही देखते उस भीमाकार पर्वत ने टीटेनिक के मर्म स्थल में एक ऐसी चोट दी जिससे यात्री किञ्चित भी विचलित न हुये क्योंकि वे जानते थे कि यह हलका धक्का टीटेनिक का क्या कर सकेगा। परन्तु कप्तान ने तुरन्त ताड़ लिया कि यह धक्का कोई साधारण धक्का नहीं है इस की चोट से अब टीटेनिक का अस्तित्व संसार में नहीं है।

कप्तान ने तुरन्त जहाज़ रोक दिया। जहाज़ी किश्तियां छोड़ दी गई। रबड़ के गोले और नलियां यात्रियों को बांट दी गईं जिनसे यात्री अपने प्राण बचा सकें। किश्तियों में पहले स्त्रियों और बालकों को बैठालने के लिये आज्ञा हुई इधर चार इटालियन लोग भी ज़बरदस्ती बैठने के लिये आगे बढ़े परन्तु मार्ग में खड़े हुये रक्षकों ने बन्दूक से उनका काम तमाम कर दिया। शेष सब लोग शान्त खड़े रहे। कुछ लोगों को तो अब तक जहाज़ के सुदृढ़ होने का इतना विश्वास था कि वे कप्तान की इस कार्यवाही को केवल फजूल दूरअन्देशी समझते थे परन्तु जब जहाज का एक सिरा धीरे २ जल की ओर झुकने लगा तब लोगों की आंखें खुलीं।

बहुत सी स्त्रियां तो अपने प्राण लेकर किश्तियों में बैठ गईं परन्तु अनेकों ने अपने प्राण बचाने की अपेक्षा अपने पतियों के संग डूब कर सती होना अच्छा समझा। लग भग ७० स्त्रियां तो जबरदस्ती किश्तियों में बैठाली गई थीं। जो लोग रबड़ के गोले लेकर तथा नालियां बांध कर उतरे थे उनमें बहुत से पानी की ठंडक ही से अकड़ गये थे।

हमारे चरित्र नायक मि. स्टेड को भी यही विश्वास था कि यह जहाज़ नहीं डूबेगा। इस लिये वे अपने कमरे में चले गये, परन्तु जब जहाज डूबने ही लगा तो इन्हों ने अपने प्राण रक्षा के लिये एक तख्ते का सहारा लिया, शोक! कि वे अपने उद्योग में निष्फल हुये।

कप्तान ने धक्का लगते ही बेतार के तार द्वारा चारों ओर रक्षा के समाचार भेज दिये थे और बारूद के बाण भी छोड़े थे। जब प्राण रक्षा का कोई उपाय न सूझा तब सब लोग मिलकर परमात्मा की

उपासना करने लगे। पश्चात बेंड बाजा बजा और राष्ट्रीय गीत गाया गया। दो बज कर २५ मिनट पर जहाज का एक सिरा डूब गया और दूसरा १५० फीट खड़ा हो गया। पानी में जाते ही बौइलर फट गया जिस से कान के पर्दे फटे जाते थे। यह दशा लगभग ५ मिनट रही होगी, पश्चात जहाज एक दम समुद्र के उदर ही में प्रवेश कर गया और दो मील नीचे चला गया। वेतार के तार का समाचार पाते ही कारपेथिया जहाज ने साढे चार बजे आकर १६ किश्तियों पर चढ़े हुए तथा रबड़ की नालियां बांध कर तैरने वाले मृत प्रायः ८६८ मनुष्यों की रक्षा की परन्तु खेद है कि हमारे स्टेड साहब के प्राण पखेरू उड़ चुके थे।

हमारे चरित्र नायक मि० स्टेड का जन्म सन् १८४६ की पांचवीं जुलाई को नार्थम्बर लैंड के इब्लीटन ग्राम में हुआ था। आपके पिता डब्ल्यू-स्टेड पुरोहिताई करते थे। अतः हमारे स्टेड साहब का पालन-पोषण एक धार्मिक सद्वंश में हुआ था। आपने वेकफील्ड के सिलकोट्स नामक स्कूल में शिक्षा पाई थी। वे विचारे एक साधारण श्रेणी के बालक थे। १४ वर्ष की अवस्था में वे उस पाठशाला को छोड़ कर न्यूफेसिल के एक व्यापार गृह में साधारण वृत्ति करने लगे। इसी दशा में आप ने समाचार पत्रों में लेख देना आरम्भ कर दिया। २३ वर्ष की अवस्था में आपने "दी-नार्दर्न ईको" नामक पत्र का सम्पादन करना आरम्भ किया। इस पत्र की शैली तथा मनोहर लेखों को देखकर सुविख्यात नीतिकुशल मि० ग्लेडस्टन ने आप की बड़ी प्रशंसा की और इन्हीं की सिफ़ारिश से मि० (अब लार्ड) मार्ले ने उनको पालमाल गज़ट का सहायक सम्पादक बना लिया। अंत में १८८३ में आप उस के प्रधान सम्पादक बन गये। इस पत्र का आप ने बड़ी उत्तमता से ६ वर्ष तक सम्पादन किया परन्तु उक्त गजट के स्वामी से इनके स्वतन्त्र विचार न मिलने के कारण इन्होंने उसे छोड़ दिया। इस बीच में आप बड़े २ विद्वानों तथा राजनैतिक पुरुषों से मिल कर उस समय की देश स्थिति और अन्य विषयों पर उत्तम २ लेख लिखकर साहित्य की वृद्धि करते रहे।

इन्हीं के सन् १८८४ में जहाज़ी शक्ति पर लेख लिखने के कारण जलसेना-विभाग में अनेक परिवर्तन और सुप्रबन्ध हो गये। इस

समय इङ्गलैंड के जहाजी बेड़े के संसार में सब से श्रेष्ठ बनाने में यदि कोई कारण थे तो उनमें मि० स्टेड के लेख ही मुख्य थे। सन् १८८५ में आपने "मेडन ट्रिब्यूट टु माडर्न बेबिलन" शीर्षक लेखावली प्रकाशित की जिस से लोग बहुत चिढ़े। आपको जिस बात पर सच्चा विश्वास हो जाता था उसके आप प्रबल पक्षपाती हो जाते थे। इस लेखमाला के कारण आपको तीन मास तक कारागार वास करना पड़ा। पर आपको जेल में भी लेख लिखने की आज्ञा मिल गई थी।

सदा उनकी शुभ कामनाएं केवल अपने देश के लिये ही नहीं होती थीं। रूस के वे सदा सच्चे मित्र रहे। सन् १८८८ में उन्होंने रूस की यात्रा की जहां बड़े २ लोगों से मिले। आपने "रूस की सच्ची अवस्था" नामक पुस्तक प्रकाशित की। दूसरे साल आपने रोम की यात्रा की और वहां आप पोप से मिले। इस यात्रा से आने पर आपने पोप और नवीन युग (The pope and the new era) नामक पुस्तक प्रकाशित की जिसका लोगों में बड़ा आदर हुआ। दिसम्बर सन् १८८९ में आप ने पालमाल गजट से पृथक होकर सन् १८९० में उस जगद्विख्यात रिव्यु आफ रिव्युज को जन्म दिया जिसको आप सागरशायी होने तक बड़ी योग्यता से सम्पादन करते रहे। सन १८९१ तथा ९४ ई० में आपने इसी पत्र की यथाक्रम अमेरिकन और आस्ट्रेलियन आवृत्तियां निकालीं और १८९३ में आप ने बार्डर लैंड निकाला जो १८९७ ईसवी तक भली प्रकार चलता रहा। दूसरे साल आपने "डेली पत्र" निकाला। यह भी अपने ढंग का एक निराला ही पत्र था परन्तु यह न चल सका। इसके पश्चात आपने बच्चों के लिये पुस्तक माला और बड़े २ लेखकों के प्रबन्धों का संक्षिप्त संग्रह किया।

आप का उद्देश्य बड़ा विशाल था, विचार बड़े उच्च थे, पक्षपात तो आप में छूकर भी नहीं निकला था। आप ने अपने रिव्यू आफ रिव्यूज में सेएट निहाल सिंह के बारे में लिखा है कि उक्त महाशय उत्तम अंग्रेजी लिखने वालों में सब से श्रेष्ठ हैं। समय २ पर आप भारत के पक्ष में बहुत कुछ लिखा करते थे। जिस समम भारत वर्ष में अशान्ति के प्रबल चिन्ह दिखाई देते थे उस समय आप ने लाला लाजपति राय तथा लार्ड रिपन से इस सम्बन्ध में प्रश्नोत्तर कर

को अपनी स्पष्ट राय प्रगट की थी । आप बड़े निर्भय और विशाल चित्त पुरुष थे । आप की समालोचना शक्ति विचित्र थी। जो लोग यथार्थ रुप से समालोचना करना सीखना चाहते हैं वे मि० स्टेड के विचित्र ढंग को सीखें । आपने हेग की शान्ति सभा और बोअर युद्ध के सम्बन्ध में बड़े जोश पूर्ण लेख लिखे थे । वे सत्य के सामने अपना और बेगाना नहीं समझते थे किन्तु अपनी सम्मति को स्पष्ट कह दिया करते थे। वीटो बिल के समय आपने लार्डों की अयोग्यता बड़ी खूबी से प्रगट की थी । आपने इटली और टर्की के पक्ष में यहां तक लिखा था कि अनेक शत्रुओं तक ने उनकी बड़ी प्रशंसा की थी। आप का सारा जीवन राजनैतिक निर्णय, पुस्तक लेखन, समाचार पत्र सम्पादन, सहित्य सेवा में ही बीता । इन्हीं सब कारणों से आप संसार में बड़े आदर की दृष्टि से देखे जाते थे। आप गरीबों से लेकर राजाओं तक एक समान हिल मिल कर रहते थे। यही कारण है जो आप के मरण से सारे संसार के साहित्य प्रेमियों को वही दुःख हुआ जो अपने आत्मा के वियोग से हुआ करता है । मि० स्टेड की मृत्यु से आज संसार को क्षति पहुंची है । उसकी पूर्ति न जाने ईश्वर कब करेगा ।

स्त्रियों का सौन्दर्य ।

परमत्मा ने मनुष्येतर योनियों में नारी को नर की अपेक्षा कम सुन्दर बनाया है परन्तु मनुष्यों में पुरुषों से स्त्रियों को अधिक सौन्दर्य्य प्रदान किया है। स्त्री पुरुष को जहां सृष्टिकर्ता ने समान गुण प्रदान किये हैं वहां कुछ गुणों का आधिक्य पुरुषों में और कुछ गुणों का बाहुल्य स्त्रियों में पाया जाता है । पुरुष वीरता और पराक्रम युक्त होता है तो स्त्रियों में प्रेम, सौन्दर्य्य और कोमलता की अधिकता पाई जाती है । प्रायः सभी देशों में स्त्रियों का प्रधान भूषण रुप ही माना जाता है इसी लिये रुप की अभिवृद्धि के लिये वह सदा सचेष्ट रहती हैं । यह भाव तो सर्वत्र पाया जाता है परन्तु साधनों में बड़ा अन्तर मिलता है। यथा

स्याम में पुरुष और स्त्रियों की पोशाक समान होती है परन्तु स्त्रियां धोती पर एक दोपट्टा ओढ़ती हैं और रंगों से उसे अतिशय

सुन्दर बनाती हैं । जापान में स्त्रियां साढी या दोपट्टा ओढती हैं वह उसे "ओवी" कहती हैं । इनमें भी उत्तम से उत्तम रङ्गों का समावेश पाया जाता है और यह कपड़ा सारी पोशाक को सुन्दर बना देता है । स्त्रियां वहां अपने केशों में फूलों का शृंगार करती हैं। स्पेन में स्त्रियां शिरोवस्त्र धारण करती हैं और हाथ में एक पङ्खा रखती हैं । इटली में किसानों की स्त्रियां घूंगों को पहिनती हैं, अमीर गरीब सब ही माला बनातीं और इन्हीं द्वारा शृंगार करती हैं नारमण्डी में सब स्त्रियां टोपी में लेस लगाती हैं । उनकी पोशाक में आस्तीन ढीली होती है और कपड़ों पर नीले, लाल, पीले और काले रङ्ग में कीमखाब का काम होता है । इनकी टोपियों में सोने की पिनें होती हैं । रोमानियां की स्त्रियां चार भाग करके केशों में वेनीशृंगार करती हैं, उनके जूते लाल रङ्ग के होते हैं । टर्की की स्त्रियां बाहर तो पर्दा करती हैं परन्तु घरों में खूब ज़ेवर, हीरे और जवाहरात पहिनती हैं । उनके पायजामे मखमल और रेशम के बनते हैं । वह अपनी आंखों को सुरमे से, भ्रुकुटियों को सुनहरी रङ्ग से सजाती हैं। पेरुवियां की स्त्रियां नाक में नथनी पहिनतीं और जितनी बड़ी और मोटी नथनी होती है उतनी ही वह रुपवती कहलाती हैं । हबशी और असभ्य जातियों की स्त्रियां जो अधिक वस्त्र नहीं पहिनतीं वह अपने बदन के प्रत्येक इंच पर सूई से बेल बूटे बनाकर अपने आप को सजाती हैं । उत्तरीय अमेरीका की स्त्रियां श्वेत, लाल और पीले रङ्गों से अपने शरीर को सजाती हैं । अरब की स्त्रियां अपने दान्तों को नीले रङ्ग से रङ्गती हैं और जापान की स्त्रियां अपनी दान्तों पर सोने का पत्ता लगाती हैं और विवाह के पीच्छे काले रङ्ग से रङ्ग देती हैं । मलाया के जज़ीरों में दान्तों को छीलकर नोकीला बनातीं और उनमें सुराख करके सोना चांदी भर देती हैं । अफरीका में स्त्रियां पीले रङ्ग से अपने नाखूनों को रङ्गती हैं । भारतवर्ष में भी रुप को बढाने के अनेक उपाय हैं । पुरुषों की गुलामी ने स्त्रियों से क्या २ नहीं करवाया । ज्ञान के सूर्य्य के उदय होने पर यह सब वहिम दूर हो जावेंगे ।

नोटः-पत्र व्यवहार करते समय अपना ग्राहक नम्बर अवश्य लिखा करें, अन्यथा तामील में विलम्भ होने की सम्भावना है- प्रबन्धकर्ता

आर्य्य समाजों के प्रति आवश्यक घोषणा।

आर्य्य समाज सङ्गति के नियमों पर स्थित है । आर्य्य समाज का संगठन सुदृढ नियमों पर बनाया गया है । किसी शाखा के आर्य्य पुरुषों का कष्ट समग्र आर्य्यों का कष्ट समझना चाहिये यही तो कारण था कि पटियाला का अभियोग आर्य्य समाज का अभियोग माना गया था। ऐसी ही एक विपत्ति इस मास में आर्य्य समाज पर आई है । पीलीभीत आर्य्य समाज का वार्षिकोत्सव गत १, २ और ३ जून को था। ७से ११ बजे पर्य्यन्त शास्त्रार्थ के लिये समय रखा गया था। पीलीभीत के कोतवाल साहिब ने सुपरिन्टेन्डेन्ट पोलीस को सूचना दी कि आर्य्य समाज के विज्ञापन को पढ़ कर सनातनियों ने अपने पण्डित और मुसलमानों ने अपने मौलवी बुलवाये हैं इस लिये हुक्म दिया जावे कि तीनों मज़हबों के लोग किसी मकान या शारे आम में जमा न होने पावें क्योंकि मुबाहिसे से फिसाद का डर है। सुपरिन्टन्डेन्ट ने जिलाधीश के पास रिपोर्ट भेज दी और लिखा कि शास्त्रार्थ न होने पावे। यदि शास्त्रार्थ करना चाहें तो प्रतिवादियों से मुचलके लिये जावें । दुर्भाग्यवश उस समय जिलाधीश १० दिनों के लिये मिर्जा इफीन अली नियुक्त हो चुके थे, उन्हों ने हुक्म दिया कि आर्य्यों के ५ मुखिया लोगों के नाम बतलाये जावें और २ जून को हुक्म दिया कि वह पांचों व्यक्तियां ३ जून को प्रातःकाल उन के घर पर हाज़िर हों। इस बीच में २ जून प्रातःकाल ब्रह्म जीव और प्रकृति के अनादित्व के विषय पर मौलवी महमद्दी सदीक ने मुबाहिसा भी किया । शास्त्रार्थ सभ्यता तथा शान्ति पूर्वक हुआ । मिर्जा साहिब ने इस पर भी ३ जून को आर्य्यों को अपने घर बुलवाकर आज्ञा दी कि एक २ हजार रुपये के मुचलके लिख दिये जावें ताकि फिसाद न होने पावे । आर्य्यों ने उज्र किया मगर सुनता कौन ? जलसा बन्द करदिया गया। लोग निराश अपने २ घरों को लौटे। इस पर महात्मा मुन्शीराम जी प्रधान आर्य्यवर्तीय सार्वदेशिक सभा ने समस्त आर्य्यसमाजों से अपील की है कि वह इस निन्दित आज्ञा के विरुद्ध प्रस्ताव पास करें और गवर्नमेन्ट संयुक्त प्रान्त से न्याय की प्रार्थना करें। आशा है कि आर्य्य समाजें शीघ्रही इस ओर ध्यान देंगी ॥

धर्म शिक्षा ।

द्वितीय भाग

सदाचार निर्माण (Character Building)

घृतवती भुवनानामभिश्रियोर्वी
पृथिवी मधुदुघे सुपेशसा ।
द्यावापृथिवी वरुणस्य धर्मणा
विष्कभिते अजरे भूरिरेतसा ॥

अर्थात् अजर पृथिवी और द्युलोक जो (घृतवती) शक्ति तथा रस से परिपूर्ण (अभिश्रिया) प्राणियों का निवास स्थान (भुवनानां) अनेक स्थानों के केन्द्र. (उर्वी) अनेक वस्तुओं के आधार (मधुदुघे) रसप्रद (सुपेशसा) शोभनरूप, (भूरिरेतसा) तेज से अभिभूत हैं वह परमात्मा के धर्म अर्थात् बल पर ही स्थित हैं।

पृथिवी कैसी सुन्दर है। इसमें कितने शक्तिमान् पदार्थ उपजते हैं। रसमय पदार्थों का कितना बाहुल्य है। कितने असंख्य जीव इस पृथिवी पर जीवनयात्रा को व्यतीत कर रहे हैं। कितनी अनगिनित वस्तुएं विस्तीर्ण हो रही हैं। इन सब का दृश्य कैसा सुहावना और मनोरंजक प्रतीत होता है। इन दृश्यों में अनेक फल फूल, वनस्पति मिलती है। उनका सदुपयोग तेज, बल और पराक्रम को उत्पन्न करता है। ऐसी पृथिवी हमारे लिये रङ्गमंच का काम दे रही है। हम इसी मनोहर स्थान पर अपना अपना कार्य्य करने के लिये उपस्थित हो रहे हैं। परमात्मा ने इस पृथिवी और द्युलोक को जिसमें अनन्त पृथिवियां चन्द्रमा और असंख्य दिव्यगुणयुक्त सूर्य्य हैं बनाया है और यह सब सृष्टि उस के धर्म्म पर स्थित है। परमात्मा का धर्म्म उनके नियम हैं। वह नियन्ता स्वयम् नियमों को पालन करनेहारा है। प्राकृतिक जगत उस के अटल नियमों के भय से भयभीत और कम्पायमान होता हुआ चलता है। ऐसे जगत में वही प्राणी जीवित और स्थिर रह सक्ता है जो स्रष्टा के नियमानुकूल चल रहा हो। मनुष्येतर योनियों में केवल भोग का नियम है परन्तु मनुष्य संचित कर्मों का भोग करता और स्वतन्त्र कर्म करने का अधिकारी है।

जीवात्मा तथा परमात्मा

शरीरा में मनुष्य योनि ही एक ऐसी योनि है जिस में कि मनुष्य अपनी वास्तविक स्थिति को जान सक्ता है। इसी जन्म में आकर वह पुण्य तथा पापकर्म द्वारा ऊर्द्ध गति या अधोगति को प्राप्त हो सक्ता है, देवता या असुर बनना उसके लिये अपने आधीन है। प्रभु ने सृष्टि के समग्र पदार्थों को उस का अनन्त शक्तियों के विस्तार खोल दिया है। साथ ही नियम भी बतला दिये हैं और उसे स्वतन्त्रता भी प्रदान कर दी है। वह इन शक्तियों का बुरा या भला प्रयोग करता है और तदनुसार ही बन्धन में पड़ता है।

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्न्योभिचाकशीति॥

इस मन्त्र में दोनों को सखा, अमर और स्वभाव से निर्देश आना है। एक फलों को खाता और दूसरा उसके कर्मों का साक्षी होकर उसे पुण्य के लिये सुख तथा पाप के लिये दुख रूपी दण्ड देता है।

संसार में देखा जाता है कि राजा के भय से बचने का एकमात्र उपाय यह है कि हम उस के नियमों का उल्लंघन न करें। इसी प्रकार न्यायकारी परमात्मा के रुद्रस्वरूप से बचने का सब से सुगम मार्ग यह है कि हम उनके अटल नियमों का भूल से भी उल्लंघन न करें। अज्ञानरूपी अन्धकार में बहुधा मनुष्य टकराता और गिरता है परन्तु ज्ञानरूपी प्रकाश में वह निर्भय होकर चलता और अपने उद्देश्य को प्राप्त करता है। इसी लिये वेद में अनेक ऐसे उपदेश मिलते हैं जिनमें मनुष्यों को आदेश दिया गया है कि वह प्रार्थना करें कि मैं धर्मवर्धक और आत्मिक विद्यारूपी अग्नि को याचना करता हूं कि जिस के तेज से पाप रूपी वृत्र का नाश हो और धर्मरूपी सूर्य्य का उदय हो। वेद में शतशः ऐसे मन्त्र मिलते हैं जिनमें वृत्र (काले बादल) और इन्द्र (सूर्य्य) का वर्णन और इनके परस्पर के युद्ध का कथन मिलता है। वृत्र शब्द के अर्थ ढकना के हैं। पुराणों में वृत्र को दस या बादल से उपमा दी गई है जो सूर्य्य को छिपा लेता और उस के साथ युद्ध करता है। सूर्य्य उसे छेदता और नष्ट भ्रष्ट कर देता है और वह पाश दूर होकर पर्वतों पर गिरता और मूसलाधार बारिश बन कर बहता है।

वस्तुतः यह मानसिक अज्ञान है जो आत्मा को ढाँपता और परमात्मा के साक्षात करने में बाधक बनता है। यदि आत्मा इस अज्ञानरूपी तिमिर को हटादे तब उस की किरणें समग्र संसार में प्रकाश को फैलाती हैं। इस आत्मिक भोजन से अभिप्राय उस ज्ञान से है जो ब्रह्मविद्या का बोधक कहलाता है। इसी ज्ञान द्वारा मनुष्य परमात्मा को अपना मित्र, सखा, बन्धु तथा माता पिता समझता है और उस के गुणों से अलङ्कृत होने के लिये इस प्रकार की प्रार्थना करता है।

अप नः शोशुचदघमग्ने शुशुग्ध्या रयिम्
अप नः शोशुचदघम् १।
सुक्षेत्रिया सुगातुया वसुया च यजामहे।
अप नः शोशुचदघम् २॥
प्र यद् भन्दिष्ठ एषां प्रास्माकासश्च सूरयः। अप...३
प्र यत् ते अग्ने सूरयो जायेमहि प्र ते वयम्। अप...४
प्र यदग्नेः सहस्वतो विश्वतो यन्ति भानवः। अप...५
त्वं हि विश्वतो मुख विश्वतः परिभूरसि। अप...६
द्विषो नो विश्वतो मुखाति नावेव पारय। अप...७
स नः सिन्धुमिव नावयाति पर्षा स्वस्तये। अप...८

ऋग्वेद म. १. सू ९७

परमात्मन्! हमारे पाप रूपी मलों को दूर कीजिये। इस समग्र जगत को पवित्र बनाइये ताकि पवित्र जगत में रह कर हम अपने पापों को धो सकें (१)

भगवन्! वसुधा के रत्नों से लाभ उठाने के निमित्त तथा यात्रा द्वारा जीवन को सफल करने के लिये व धनादि के लिये हम कर्म क्षेत्र में प्रविष्ट होते हैं। आप हमारे पापों को दूर करें। (२)

प्रभो! हमारे अन्दर जो मेधावी धीर और वीर पुरुष हैं वह सब के लिये कल्याणकारी हों। हम भी वैसे ही बन सकें इस लिये आप हमें बल दें कि हम पापों से दूर रहें। (३)

हे अग्ने! जैसे विद्वान लोग आप का आश्रय लेकर मेधावी बनते हैं, वैसेही आपको पतित पावन समझ कर हम पापों से दूर रहें (४)

हे सूर्य्य स्वरूप परमात्मन् ! आपके दिव्य सूर्य्य की करणें जैसे जगत को पवित्र बनाती हैं ऐसे ही आप सर्वव्यापी हमें पापों के मैल से पवित्र करें। (५)

हे सर्व व्यापक पिता ! आप निस्सन्देह सर्वत्र विराजमान हैं। अपनी सत्ता द्वारा हामारे मन से पापों को दूर भगाइये। (६)

हे सवर्ज्ञ ! जैसे नौका समुद्र से पार करती है वैसे ही शत्रुओं [पापरूपों] से सुरक्षित रख कर भवसागर से पार कीजिये। (७)

हे आनन्द के केन्द्र ! आप हमें सांसारिक मलों से शुद्ध और पवित्र बनाकर आनन्द की ओर ले चलें। (८)

मनुष्य मात्र को वेद में आदेश मिलता है कि इस प्रकार की प्रार्थनाओं द्वारा वह अपने आपको शुद्ध और पावत्र बनावे। स्वभाव से मनुष्य अमृतपुत्र है, जन्मजन्मातर के संस्कारों से दूषित और कलुषित होकर वह पाप के गढ़े में गिरता है मनुष्य जन्म द्वारा ही उसे पुनः उठने और अपने को पवित्र बनाने का अवसर मिलता है निस्सन्देह वह कुछ संस्कारों को लेकर मनुष्यजन्म को धारण करता है। यह संस्कार भी उत्तम जीवन के आश्रित मनुष्यत्व का संचार करते हैं। जगत में आकर मनुष्य कर्मों द्वारा अपना देव बनाता है। कवि ने कहा है—

न कश्चित्कस्यचिन्मित्रं न कश्चित्कस्यचिद्रिपुः।
व्यवहारेण हि जायन्ते मित्राः रिपवस्तथा॥

जन्म से न कोई किसी का मित्र, न कोई किसी का शत्रु होता है, केवल व्यवहार द्वारा ही हम किसी को मित्र और किसी को शत्रु बना लेते हैं, इसी लिये व्यवहार तथा आचार की शुद्धि का स्थान २ पर शास्त्रों में उपदेश मिलता है। भगवान् मनु जी ने कहा है—

आचाराल्लभते ह्यायुराचारादीप्सिता प्रजाः।
आचाराद्धनमक्षय्यमाचारो हन्त्यलक्षणम्॥

अच्छे चाल चलन (Character) से दीर्घ आयु, मनोवांछित सन्तान, अक्षय धन मिलता है, और तमाम दुगुण तथा दुर्व्यसन दूर होजाते हैं—

सर्वलक्षणहीनोऽपि यः सदाचारवान्नरः।
श्रद्दधानो ऽनसूयश्च शतं वर्षाणि जीवति॥

गुणज्ञान न होने पर भी जो मनुष्य सदाचारी है, श्रद्धालु है और द्वेष रहित है वह पूर्ण आयु अर्थात् एक सौ वर्ष पर्यन्त जीता है।

एक सौ वर्ष का जीवन।

सृष्टि की प्रत्येक जीवित वस्तु को जन्म, वृद्धि, स्थिति, ह्रास तथा मृत्यु इन पांच अवस्थाओं से गुज़रना पड़ता है। मनुष्य जन्मधारण करता, बढ़ता (बाल्यावस्था से यौवन और यौवन से वृद्धावस्था को पहुंचता है) स्थिति को प्राप्त करता, फिर क्रमशः दुर्बल होकर मृत्यु को प्राप्त होता है।

इन सब अवस्थाओं के लिये नियम हैं। शारीरिक रक्षा के लिये नियम हैं। आत्मिक उन्नति के लिये नियम हैं। जिस ने आहार, ब्रह्मचर्य और निद्रा के नियमों का याथातथ्य पालन कर लिया, उसका शरीर सुदृढ़ और बलिष्ठ होजायगा परन्तु जिस ने आत्मिकोन्नति नहीं की उसका बलवान शरीर भी चिरकाल पर्यन्त स्थिति नहीं रह सकता अतएव शारीरिक तथा आत्मिकोन्नति द्वारा ही मनुष्य पूर्ण जीवन को भोग सकता है। जितने काल में प्राणी यौवनावस्था को प्राप्त होते हैं उसका चौगुणा काल जीवन का काल होता है, मनुष्य चूंकि २५ वर्ष की आयु में यौवनावस्था को प्राप्त करता है इसालिये साधारणतया मनुष्य की आयु एक सौ वर्ष की बतलाई गई है। जो मनुष्य इस आयु तक पहुंचने का यत्न नहीं करता वह एक प्रकार से आत्महत्या करता है। आर्यपुरुष नित्यप्रति प्रार्थना करते हैं कि हम सौ वर्ष पर्यन्त जीवें, अदीन होकर और तब तक बराबर वेद की आज्ञाओं का पालन करते हुए उत्तमोत्तम कर्म करते रहें। अढ़ाई हजार वर्ष व्यतीत हुए कि स्पार्टा देश में राज्य की ओर से नियम था कि सुदृढ़ और संस्कृत बालक उत्पन्न किये जावें। दुर्बल सन्तान चिरकाल पर्यन्त नहीं जी सकती। इसी लिये वहां ऐसे नियम बनाये गये थे कि व्यभिचार का नाम तक न रहे और माताएं उत्तम संस्कारों द्वारा ऐसी सन्तान उत्पन्न करें जो न तो अल्पजीवी और न दुर्बलेन्द्रिय हों, और जो माताएं इन नियमों का उल्लंघन करती थीं उनकी सन्तति को पर्वत से गिरा कर मार दिया

जाता था यह नियम ठीक था या नहीं परन्तु जो भाव इसके मूल में काम कर रहा था वह निस्सन्देह प्रशंसनीय था। इन उत्तम संस्कारों द्वारा उत्पन्न किये हुए बच्चे निस्सन्देह सौ वर्ष पर्यन्त जीते हैं और यदि उन्हें आत्मिकोन्नति के लिये भी उचित आहार मिले तो वह इससे भी अधिक काल पर्यन्त जी सके हैं।

सदाचार के जीवन में एक अद्भुत प्रभाव होता है। वह एक आकर्षण शक्ति है जो सब को अपनी ओर खेंचती है। महात्मा योगी पुरुषों के समक्ष बड़े बड़े चक्रवर्ती खिचे चले आते हैं। दर्शनों में से योगदर्शन का उद्देश्य ही यही है कि वह चित्त की वृतियों का निरोध करना सिखलावे, बाहर से वृतियों को रोक कर एकाग्र करना और उन्हें किसी उद्देश्य की प्राप्ति में लगा देना योग की प्रधान शिक्षा है। आत्मा तथा परमात्मा के सम्बन्ध को बतलाना और जीवात्मा का परमात्मा को साक्षात करना योग का उद्देश्य है। परमात्मा के साक्षात करने से पूर्व मनुष्य को उन तमाम अवस्थाओं में से गुज़रने की जरुरत है जो उसे सदाचारी, दृढप्रतिज्ञ तथा समाधि का पात्र बनाने के लिये जरुरी हैं।

इसी उद्देश्य से योगशास्त्र में मनुष्यों से व्यवहार करने की शैली भी बतलाई है और उस में यह भी शिक्षा दी है कि इन चार साधनों द्वारा चितप्रसादन होता तथा मलीनता का निवारण होता है। वह सूत्र यह है।

मैत्री करुणामुदितोपेक्षाणां सुखदुःखपुण्या-पुण्यविषयाणां भावनातश्च चितप्रसादनम् ॥३३॥

अर्थात् सुखी, दुखी, धर्मी और अधर्मी चार प्रकार के पुरुषों में (१) मैत्री (२) करुणा (३) मुदिता (४) उदासीनता की भावना से चित निर्मल होता है वस्तुतः संसार में चार प्रकार के ही मनुष्य मिलते हैं, इन से व्यवहार करने की रीति द्वारा ही हम अपने आप को उन्नत कर सक्ते हैं। जहां हम इस रीति अथवा इन चार साधनों से गिरे वहां ही हम अपने चित को मलीन और विक्षिप्त कर देंगे अत एव आओ हम इन साधनों पर विचार करें।

मैत्रीः—चितप्रसादन का पहिला साधन।

मैत्री के मूल में प्रेम के भाव निहित हैं। संसार में प्रेम से ...

कर और कोई बलवती शक्ति नहीं । जाओ, कोमलाङ्गी तथा सती देवी के आचरणों द्वारा देखो कि वह अपने प्राणनाथ की ओर कैसे प्रेम के भावों की वर्षा कर रही है । उस ममता की मारी माता के हृदय तल को पढ़ो जो रातों जाग २ कर अपनी छाती पर पड़े हुए शिशु के पालन पोषण में दत्तचित हो रही है । उस प्रेमपात्र भृत्य की ओर निहारो जो अपनी इच्छा के अनुकूल स्वामी को पाकर प्रसन्न हो रहा है और उसके संकेत पर मरने मारने के लिये उद्यत है । संसार में निरन्तर दुराप और दुस्तर कार्य्यों में प्रेम क्या कुछ नहीं कर दिखलाता । कौन से क्लेश और कष्ट इसके मार्ग में ठहर सके हैं । प्रेमी अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिये कैसे मन से प्रसन्नता से और हंसते हंसते काम करता है । प्राणनाथ के वियोग से सन्तप्तहृदया दमयन्ती ने महाराज नल को ढूंढने में क्या २ कष्ट नहीं सहे । स्वयम्वरा संयोगिता ने पृथिवीराज के लिये कैसे कैसे कष्टों का सहन नहीं किया । प्रेमी जनों के लिये कम सुख साध्य और कष्ट प्रसन्नता का हेतु बनते जाते हैं ॥ घोर से घोर विरोध भी प्रेम के संस्कारों के उज्जागृत हो जाने पर चकनाचूर हो जाता है । हल्दीघाटी की लड़ाई से चलनी बदन हुए २ राणा प्रताप को देखकर कठोर हृदय सक्ता से अपने ज्येष्ठ भ्राता का कष्ट देखकर जब न सहा गया तो उसने दो मुग़लों को मृत्युशय्या पर सुलाकर प्रताप को बचा लिया और अपना घोड़ा देकर उसके प्राण रखलिये ॥ मनुष्य धन में कृपण हो सके हैं, वह अपनी योग्यता को भी छिपा सके हैं, वह अपनी कीर्ति को भी दबा सके हैं, परन्तु प्रेम को वह छिपा नहीं सके । प्रेम का तो स्वभाव ही है कि प्रकाश की न्याईं विस्तृत हो जावे । प्रेम घर में बन्द नहीं हो सक्ता, हां प्रेम तो सर्वदा प्रकाश के सदृश चलता रहता है । इसे खर्च करना पड़ता है और इच्छा से अथवा इच्छा विरुद्ध दूसरों को देना पड़ता है ।

संसार में उच्चेस्तम धर्म वही है जो प्राणी मात्र से प्रेम करने की शिक्षा देता है ।

• दृते दृहँ मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम् । मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे । मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे ॥

परमात्मन् ! मुझे उन्नत करो, मुझे मित्र की दृष्टि से सब प्राणी देखें। मैं मित्र की दृष्टि से सब भूतों को देखूं। हम मित्र की दृष्टि से परस्पर व्यवहार करें।

मित्र ही सब से उत्तम अलङ्कार है। मनुष्य को इससे अधिक उपयोगी कोई भी वस्तु जगत में नहीं मिल सक्ती। कल्पना कीजिये कि हम ने संसार के सब पदार्थों को पा लिया। हमारे सब पुष्कल धन धान्य और ऐश्वर्य की सामग्री भी उपस्थित होगई, परन्तु यदि उस समय हमें मनुष्यों से मिलने का निषेध कर दिया जावे तो क्या हमें सुख मिल सकता है ? ऐसा कोई भी पाषाण हृदय मनुष्य न होगा जो इसे पसन्द करेगा। एक विद्वान ने कहा है कि "यदि मनुष्य को स्वर्ग मिल जावे और तमाम जगत का सौंदर्य उसकी आंखों के सामने रख दिया जावे तो उसे जरा भी इस अद्भुत दृश्य से लाभ न पहुंचेगा" यदि उस के पास कोई ऐसा मनुष्य न हो जिसे वह उन उत्तम दृश्यों को सुना सके जो उसने देखे व अनुभव किये हैं। आत्मिक जगत के अन्य नियमों के सदृश मनुष्यों में परस्पर मित्रता भी नियमों के पालन करने से ही होती है।

मित्रता के नियम

मित्रता केवल उनहीं मनुष्यों में स्थिर रह सकती है जो पवित्र आचरणों और आत्म सम्मान के दृढ़ नियमों में जकड़े हुए हैं। जो मनुष्य अपनी इन्द्रियों को बुद्धि पूर्वक काम में लाता और न्याय के अनुकूल अपना आचरण बनाता है, जो आत्मसम्मान, न्याय, और उपकार के नियमों पर चलता है वही सदाचारी पुरुष बन सकता है और ऐसे सदाचारी पुरुषों में ही मित्रता हो सकती है। यह सत्य है कि एक परिवार के लोगों में भी प्रेम होता है। रिश्ते नाते के लोगों में प्रेम के भाव पाये जाते हैं परन्तु सच्चा प्रेम वहां ही होता है जहां कि विचारों का सम्मिलन हो। यदि मित्र के लक्षण करने हों तो इन शब्दों में किये जा सकते हैं।

"जहां विचारों का पूर्णतया सम्मिलन हो, चाहे विचार धार्मिक हों अथवा लौकिक, और जहां हों व्यक्तियों में परस्पर प्रेम और सम्मान की गांठ अतिशय वृद्धि को पहुंच गई हो"। संसार में स्वास्थ्य और धन ऐश्वर्य और मान आदि प्रत्यक्ष श्लाघा करने वाले मनुष्य मिलते हैं और ऐसे मनुष्यों को भी कमी नहीं जो इन्द्रियों के विषयों में ही प्रेम को मानते हों परन्तु पुण्य जीवन के लि...

मैत्री के स्थायी भावों को पाना अत्यन्त कठिन है। हां, मैत्री का आधार पवित्रता के जीवन पर रहता है। जब इस प्रकार के मनुष्य मिल जावें और उन में मित्रता का संचार होजावे तो इस से अनेक लाभ हो सकते हैं।

मित्र के बिना जीवन नितान्त शुष्क और नीरस हो जायगा। यदि किसी धनिक के पास असीम सम्पत्ति हो, और उस के धन तथा सम्पत्ति से लाभ या सुख भोगने वाला कोई भी न हो, तो उस सम्पत्ति से कुछ भी आनन्द न मिलेगा। मित्रता के बहुत से उद्देश्य होते हैं उन में से एक प्रधान उद्देश्य यह है कि कष्टों में मित्रता मन की ग्लानि को दूर भगाती है, अच्छे आने वाले दिनों की आशा बन्धाती है, और दुखित आत्मा को दुर्बलता तथा भीरुपन के गढ़े में गिरने से बचाती है। इस सम्बन्ध से रङ्गे हुए मित्र ऐसे हो जाते हैं कि कोई सुख दुख ऐसा नहीं जिसे वह मिलकर न भोगते हों। एक के बल में दोनों बली, एक के धन में दोनों धनी, और एक की शक्ति में दोनों शक्तिमान बन जाते हैं। जो प्रेम का भाव दो आत्माओं को मिला देता है यदि वह संसार में से निकाल दिया जावे, तो क्या परिवार और क्या समाज कोई भी जीवित न रह सके। देखते नहीं हो, जहां भाइयों में कलह और वैमनस्य होता है वह घर बरबाद हो जाते हैं। विपरीत इसके जहां प्रेम या अतिशय मैत्री का भाव विद्यमान होता है वहां सुख, सम्पत्ति हाथ बान्धे आ उपस्थित होते हैं। संसार के तो परमाणु २ में प्रेम विदित हो रहा है। यूनान में एक बार थियेटर में बादशाह के सामने पेक्यूवीयस महोदय ने अपने अभिनेताओं द्वारा एक दृश्य दिखलाया था जहां दो मित्रों में से एक को फांसी की आज्ञा मिली थी, दोनों मरने के लिये अहमहं करते हुए झगड़ने लगे और कहने लगे कि मैं ही वह पुरुष हूं, मुझे फांसी दो। केवल इस भाव को नाटक द्वारा दरशाने में बहुत प्रभाव फैल गया। यदि वास्तविक दृश्य हो तो उसका कितना प्रभाव पड़े। प्रेम और मैत्री की अद्भुत शक्ति का दृश्य तो जानवरों में भी पाया जाता है और उसकी पराकाष्ठा को दृश्य मनुष्यों का अपनी सन्तति की ओर जो प्रेम होता है उसमें मिलता है। यह भाव यदि पापजीवन के जघन्य कर्मों द्वारा टूट जाय तो टूटे, अन्यथा कभी भी नहीं मिटता। प्रेम कैसे उत्पन्न होता है इसका संचार उन

निहित स्वीकृति के भावों से उठता है जब हम प्रथमबार किसी से मिलते हैं, उसके आचार व्यवहार को अपने अनुकूल पाते हैं और उनमें हमें सच्चे और पवित्र जीवन के लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं। यही कारण है कि जिन महात्माओं को हम ने देखा भी नहीं परन्तु उनकी सुकीर्ति का बोध हमें इतिहास द्वारा हुआ है उन से भी हमें प्रेम हो जाता है। मनुष्यों को छोड़ कर कहीं २ पशुओं के अतिशय प्रेम के दृश्य भी मिलते हैं। महाभारत में एक अलङ्कार द्वारा बतलाया गया है कि जब महाराज युधिष्ठिर स्वर्गारोहण करने लगे तो उन्हों ने यमराज के दूतों से प्रार्थना की कि मैं कुत्ते के संग स्वर्ग में जाऊंगा। जब उन्हें बतलाया गया कि स्वर्ग में कुत्ता नहीं पहुंच सक्ता तो उन्हों ने उत्तर दिया कि जिस आज्ञाकारी कुत्ते ने सुख दुख में मेरा साथ कदापि नहीं छोड़ा उसे त्याग कर स्वर्ग प्राप्ति के लिये मैं कदापि उद्यत नहीं हूं। वस्तुतः कहीं २ जानवरों में प्रेम के विचित्र दृश्य दिखाई देते हैं। मनुष्य प्रायः स्वार्थ से या भ्रम से इन नियमों का उल्लंघन कर बैठते हैं परन्तु जानवरों में बहुत कम वैसा स्वभाव मिलता है। मनुष्यों में मित्रता के लिये सब से प्रथम नियम यह होना चाहिये कि दोनों सत्यमानी, सत्यकारी और सत्यवादी हों। दूसरे यह कि परस्पर मृदुता का व्यवहार हो। इन्हीं दोनों नियमों को लक्ष्य में रखकर प्रेम की वृद्धि के लिये कभी भी मित्र से ऐसा काम न ले जिसमें उसे आत्मविरुद्ध कार्य करना पड़े, और स्वयम भी उसी नियम पर कटिबद्ध होकर अपने समय पड़ने पर सहायता करे। मित्र को सर्वदा खुले दिल से निर्भय होकर सच्ची राय देनी चाहिये। वह भूलते हैं जो समझते हैं कि मित्रता केवल लाभार्थ होती है। हां, मित्रता में लाभ अवश्य होता है परन्तु लाभ ही मित्रता का मूलकारण नहीं है। प्रत्येक व्यवहार में मित्र से हमें उतनी ही आशा रखनी चाहिये जैसे कि हम अपने लिये कर सके हैं। दूसरे शब्दों में हमें उन पुरुषों से मित्रता की आशा रखनी चाहिये जो साधनशील और सदाचारी हैं और जो एक दूसरे के सम्मुख अपने हृदय के विचारों और उद्देश्यों को निश्शंक हो कर रख सके हैं।

मित्रता के लिये स्थिर स्वभाव का होना अत्यन्त आवश्यक है। इसी लिये विश्वास करने से पूर्व खूब पड़ताल करने की आ-

करता है। प्राय: प्रलोभनाएं और धन की प्रलोभनाएं मनुष्य को शीघ्र ही अपने स्वरुप में प्रगट कर देती हैं। सुतराम्, विपत्ति में मित्र को छोड़ देना और सम्पति में भूल जाना इन्हीं दो बातों के परखने से ज्ञात हो जाता है। सच तो यह है कि सच्ची मैत्री सदाचारी पुरुषों में ही पाई जाती है, वह न्याय के विरुद्ध नहीं चल सकते, उनके मृदु वचन और रसीले शब्द प्रेम को अतिशय बढ़ा देते हैं।

मित्रों में छोटे बड़े अवश्य मिलते हैं। जो धनपात्र हों उन्हें व्यवहार में अपना गुरुत्व न जतलाना चाहिये और न छोटों को अपने बड़े अर्थात् अपने मानी मित्रों से द्वेष या ईर्षा के भावों को प्रगट करना चाहिये। बाल्यावस्था के सम्बन्धों द्वारा मैत्री का परिज्ञान नहीं हो सकता। विचार जब निश्चित और परिपक्व होजावे, वही मित्रों के बनने बनाने का समय है क्योंकि बाल्यावस्था के विचार प्राय: युवावस्था में बदल जाया करते हैं और जब विचारोंमें मत भेद होगया तो प्रेम का सम्बन्ध शिथिल होकर टूट जाता है। प्राय: यह बात उन मित्रों में भी मिलती है जिनसे हम युवावस्था में जांच पड़ताल के पश्चात सम्बन्ध करते है। उन में भी कुछ ऐसे दुर्व्यवहार होजाते हैं कि जिनके कारण उनके मित्रों को भी लज्जित होना पड़ता है। ऐसे मित्रों से मेल जोल कम कर देना चाहिये और मित्रता की ज्वाला एक दम बुझा देने के स्थान में इतनी कम कर दी जाय कि वह शनै:२ मन्द होते २ बुझ जावे। इस प्रकार की भूलों और तकलीफों से बचने के लिये ज़रुरी है कि प्रथम तो शीघ्रता में मित्रता के भाव प्रगट हो नहीं करने चाहिएं दूसरे उन मनुष्यों से मित्रता न कीजाय जो इसके पात्रही नहीं हैं। प्राणी मात्र में अपने से प्रेम करने और अपने समान जीवों से सम्बन्ध रखने के भाव पाये जाते हैं। मनुष्यों में उन्नति करते २ यह भाव ऐसी अवस्था को पहुंचते हैं जब दो तन और एक आत्मा के भाव चरितार्थ होते हैं। इस उच्च गति पर पहुंचाने के लिये अत्यावश्यक है कि हम अपने जीवनमें सद्गुणों को धारण करें और फिर ऐसे मित्र का अन्वेषण करें जो ठीक हमारे ही गुणों का प्रतिबिम्ब [अक्स]हो। जब दो मनुष्यों में एक समान आत्मसम्मान, न्याय और सत्य के भाव विद्यमान हैं तो वह हर समय एक दूसरे की सेवा करने में पूर्णतया सचेष्ट होंगे। इन कारणों से उन में न केवल प्रेम की धारा

प्रवाहित होगी वरन वह हृदय से एक दूसरे का आदर करने लगेंगे, क्योंकि जहां मित्रों में एक दूसरे के लिये आदर के भाव नहीं वहां प्रेम अपने सब से उत्तम और सुन्दर भूषण से वंचित हुआ २ प्रतीत होगा। धर्म के मार्ग पर चलने के लिये पाप से घृणा करने और सत्य से प्रेम करना सीखना चाहिये। प्रायः समाज में खुशामदी लोग सत्य के स्थान में असत्य की मात्रा दे देते हैं। यह विष मित्र द्वारा जब दिया जाता है तो बलयुक्त हो अधिक हानि पहुंचाने के योग्य बन जाता है, कारण यह कि इस प्रकार कि मित्रता के मूल में धर्म के भाव नहीं। यह पवित्र आचरण ही हैं जिनमें मित्रता को जन्म मिलता, दृढता आती और स्थिरता होती जाती है, परन्तु कुछ ऐसे हेतु उपस्थित हो जाते हैं जिन से मित्रता में बाधा पड़ता है।

मित्रता से उदासीनता।

हमारी मानसिक शक्तियां अति सूक्ष्म और कोमल संस्कारों पर निर्भर रहतीं हैं। जैसे कोई योधा सैकड़ों बार युद्ध में विजय प्राप्त कर चुका हो और एक बार हार जावे तो उसके प्रथम के सभी कार्य्यों पर पानी फिर जाता है इसी प्रकार एक बुरे संस्कार के उपस्थित हो जाने पर जन्म भर के उत्तम संस्कार मलया मेट हो जाते हैं, इसी लिये मित्रता के विषय में भी अत्यन्त सावधान रहने की आवश्यक्ता है। मित्रता कभी स्वार्थ के लिये चिरस्थायी नहीं हो सक्ती, इसी लिये एक विद्वान ने कहा है कि जीवन पर्य्यन्त निरन्तर और स्थायी मित्रता को स्थापित करना अत्यन्त दुस्तर है। कभी अनुचित प्रार्थना करने से मित्र के हृदय में ग्लानि के संस्कार उत्पन्न हो जाते हैं अतएव कदापि अनुचित प्राथना नहीं करनी चाहिये क्योंकि जब उसे दूसरा स्वीकार नहीं करता तो समझा जाता है कि मैत्री के धर्म्म के विरुद्ध 'आचरण किया गया है। इस प्रकार के मतभेद से पुराने मित्रों के हृदयों में भी छिद्र हो जाते हैं और कहीं २ तो वह अतिशय विरोध के भयानक रूप को धारण कर लेते हैं। मित्रता चाहे कितनी हो परन्तु यह कदापि न होना चाहिये कि मित्र के दोषों अथवा पापों को गुण या पुण्य सिद्ध किया जावे। जो लोग जघन्य और निन्दनीय कर्मों में भी मित्रों का साथ देते

उन्हें शीघ्र ही अपनी मूर्खता का परिचय हो जाता है। भय में मित्रता नहीं रह सक्ती। कौन मनुष्य है जो भयदाता से प्रेम कर सक्ता है। भय के स्थान में प्रेम के भाव ही कैसे ठहर सक्ते हैं? प्रेमियों में बनावट और दोरङ्गी के भाव कदापि उपस्थित न होने चाहियें। इसी लिये जिनके हृदय मिले नहीं, जिनके विचार समान नहीं और जिनकी रुचियां भिन्न भिन्न हैं उनमें सच्चे प्रेम का अभाव दिखलाई देता है। मित्रों में कटु शब्दों का व्यवहार और असभ्य आचार कदापि न होना चाहिये। मित्रता में धन, मान और ऐश्वर्य्य का गर्व नहीं ठहर सक्ता। भारतवर्ष का प्रत्येक बालक भक्त सुदामा के सच्चरित्र से परिचित है। योगीराज कृष्ण ने अपने मित्र सुदामा का कैसा सत्कार किया। किस प्रकार उसे मान द्वारा राजसिंघासन पर बिठलाया और कैसे अपनी विभूति के एक अंश को उसकी शारीरिक ज़रुरतों की निवृत्ति के निमित्त समर्पण कर दिया। विपरीत इसके भक्त सुदामा ने अपने मित्र के उच्च आसन और मान को ईर्षा की दृष्टि से देखने के स्थान में कैसे स्वत्व और प्रेम के भावों से देखा। जहां मित्रों में परस्पर सन्देह, गिल्ला शिकायत के भाव उत्पन्न हो गये वहां से प्रेम भागना शुरु कर देता है और शनैः २ हटते हटते एक दिन नितान्त छिप जाता है। बहुधा देखा जाता है कि कोई पाप का छिपा हुआ संस्कार उज्जागृत हो जाता है या कहीं क्रोध वश अपशब्दों का उच्चारण होता, अथवा कोई और दोष मित्र में प्रतीत होता है तब भी मित्रता की जड़ खोखली होनी आरम्भ हो जाती है। जहां मित्रों में एक पक्ष सत्य को सुनने और दूसरा पक्ष ठीक २ कहने पर उद्यत नहीं वहां सच्ची मित्रता की सम्भावना नहीं हो सक्ती।

मित्रता के विभाग।

मित्रता के साधारण नियमों और उस में आघात पहुंचने के हेतुओं को बतलाकर अब हम भिन्न भिन्न प्रकार की मित्रता पर विचार करना चाहते हैं। यदि साधारण दृष्टि से देखा जावे तो जो नियम मित्रों में प्रेम के लिये अत्यावश्यक हैं प्रायः वही नियम अन्य-

तर भी चरितार्थ होते हैं। माता और पुत्र, पति और पत्नी में कितना घनिष्ट सम्बन्ध होता है परन्तु नियमों के उल्लंघन करने से पुत्र पिता के खून के प्यासे और पत्नी पति को विष खिला देने के कारण बने हैं और जहां इन नियमों का उल्लंघन नहीं किया जाता, वहां पर भिन्न २ सम्बन्धियों में प्रेम के विचित्र २ दृश्य उपस्थित होते हैं। भगवान कनफियोशस ने वैदिक धर्मानुसार संस्कारों या शिक्षा पर इस का आधार रखा है। वह बतलाते हैं कि यदि प्रजा दुष्ट हो तो राजा का, स्त्री दुष्ट हो तो उस के स्वामी का, सन्तान दुष्ट हो तो माता पिता का और भृत्य दुष्ट हो तो स्वामी का अपराध है। राजा प्रजा को, पति पत्नी को, माता पिता सन्तान को और स्वामी भृत्य को ऐसी शिक्षा प्रदान करें कि जिस से वह धर्म के पथ पर चलते हुए अपने अपने कर्तव्यों का पालन कर सकें। जहां इन मन्तव्यों और कर्तव्यों में भेद पड़गया वहां पत्नी और पति में, माता और पुत्र में भी प्रेम नहीं रह सक्ता। विपरीत इस के जहां प्रेम की अटूट जड़ें दृढ़ बनी रहती है वहां मैत्री के सच्चे दृश्य उपस्थित होते हैं।

माता की मैत्री।

मातृस्नेह कभी समाप्त नहीं होता, कभी परिवर्तित नहीं होता हां, कभी भी न्यूनता को प्राप्त नहीं होता। पिता पुत्र से विमुख हो जाये तो हो, भाई और बहिन विरोधी बन जावें तो बनें। पति पत्नी को त्याग दे अथवा पत्नी से विमुख होजाय तो हो परन्तु माता का स्नेह सदा हरा भरा बना रहता है। नेकनामी अथवा बदनामी हो, संसार में चाहे कितना अपयश फैल जावे परन्तु पुत्र के लिये माता का प्रेम घटने नहीं पाता और वह तब भी आशा करती है कि मेरा पुत्र कुमार्ग से हट कर भला बन जायगा और अपने दुष्कर्मों के लिये पश्चाताप करेगा। वह बाल्यवस्था के उन Smiles को याद करती है जिनसे उसका हृदय गदगद हो जाता था। वह उसको अयोग्य अथवा निकम्मा नहीं समझ सकती। एक विद्वान ने कहा है कि माता की गोद के समान उत्तम से उत्तम मखमल भी नरम नहीं होती। उसकी मुसकराट का सुन्दर से सुन्दर गुलाब के फूल भी मुक़ाबला नहीं कर सकते। यही तो कारण है कि सच्ची मैत्री का आ

हरण देने के लिये विद्वान लोग मातृस्नेह से उपमा दिया करते हैं। एक बार स्काटलेण्ड में एक माता अपने कुछ सप्ताह के बच्चे को लेकर खेत में गई। बच्चे को लिटाकर वह काम में लग गई। उसी समय एक सुनहरी हुमाय उड़ती हुई आई और बच्चे को अपने चङ्गुल में डाल कर उड़ गई। उड़ते २ वह एक शुष्क पर्वत की नोकीली चोटी पर जा पहुंची और वृक्ष के ऊपर अपने घोंसले में लेजाकर बच्चे को रख दिया। माता ने इस अवस्था को देख कर सहायता के लिये वावेला किया, काम को छोड़ा और उस हुमाय के पीछे दौड़ी। इर्द गिर्द के खेतों के किसान भी जिन्हों ने उस हृदय-भेदी शब्द को सुना अपना २ काम छोड़ कर भागे। वह सब भागते २ एक भयानक खड्ड के मूल में पहुंचे। सभी किसान बच्चे को छुड़ालेने के लिये उत्सुक थे और अपने जीवन को जोखों में डालने पर तत्पर दिखाई देते थे। एक किसान ने ऊपर चढ़ने की चेष्टा की परन्तु वह उतर आने पर बाध्य हो गया, दूसरा चढ़ा परन्तु ज़खमी होकर उतरा, तीसरा व चौथा चढ़ा परन्तु निराश हो कर उतरे। तब वह सब निराश तथा हतोत्साह होकर ठण्डी सांस भरने लगे। उनकी आंखों की टिकटकी उस शिखरस्थ वृक्ष पर लगी थी जहां कि बालक पड़ा हुआ था। इसी अवस्था में उन्हों ने देखा कि एक स्त्री पर्वत पर चढ़ी चली जाती है। एक एक करके कई चोटियों से गुज़रती हुई वह ऊपर की ओर जा रही थी, सभी किसानों के हृदय डर से कम्पित हो रहे थे। उन्हें उसके पांओं के फिसलने और गिर पड़ने का भय प्रतीत हो रहा था। अन्ततः वह वृक्ष पर जा चढ़ी, बच्चे को उठाया और प्रेम से छाती के साथ लगाया। मुख को चूमा और उसे छाती तथा बाहुलता के पाश में बांध कर नीचे उतरी। उसी प्रकार वह सुवेग चोटियों से उतरने लगी। जब कि सब की आंखें उन पर लगी हुई थीं और वे डर रहे थे कि अब फिसली, अब गिरी और चकना चूर हुई। वह देवी उस बच्चे को लेकर नीचे आगई। जहां सब पुरुष हतोत्साह निराश खड़े थे वहां यह कोमलाङ्गी बाला आनन्दपूर्वक बच्चे को सुरक्षित ले कर उन में आ मिली। यह देवी उस बालक की मां थी।

माता के प्रेम के उदाहरण एक नहीं अनेक मिलेंगे। ऐसे जीवन्त उदाहरणों का भी अभाव नहीं जहां पुत्रों ने माता के लिये

अपने आपको खतरे में डाला हो । जब नैपोलियन बोनापार्ट अपनी सेना लिये बोलोन में ठहरा हुआ था, उन दिनों एक अङ्गरेज़ी मल्लाह ने बन्दीखाना से भागने का यत्न किया। यह समाचार नेपोलियन को मिला उसने तत्काल उस मल्लाह को बुलवाया और उससे पूछा कि तुम क्यों भागते थे और कैसे तुम भाग कर समुद्र के पार पहुंचते। उसने उत्तर दिया कि मैंने लकड़ी के टुकड़े इकट्ठे किये और वृक्ष के छिलके उन पर बांध कर नौका सी बनाली इसी नौका को समुद्र में डाल कर मैं घर की ओर प्रस्थान करता और इस के द्वारा बृटिश चैनल से पार होजाता और यदि आप मुझे अब भी छोड़ दें तो अभी चला जाऊं। नैपोलियन ने कहा "ज्ञात होता है तुम अपनी स्त्री के मिलने के लिये इतने उत्सुक हो रहे हो"। मल्लाह ने कहा "नहीं । मैं केवल अपनी वृद्धा और दुर्बल माता के देखने के लिये उत्कण्ठित हूं। नैपोलियन ने कहा। हां तब आप उसे देखेंगे। यह कह कर उसने एक अङ्गेज़ी जहाज़ में इसे टिकट दिलवा दिया और कुछ रुपये भी दिये और कहा कि मेरी ओर से अपनी माता की भेंट कर देना क्योंकि वह अवश्यही अच्छी माता होगी जिसका ऐसा प्यारा पुत्र उपस्थित है।

स्त्रियों की पति भक्ति ।

भारतवर्ष की पुण्य भूमि में एक नहीं दो नहीं, सौ नहीं, हजार नहीं लाखों ऐसी पति भक्ता नारियां हो गई हैं जिन्हों ने परवानों के समान अपने प्राणों को न्योछावर कर दिया। उनकी भक्ति, उनकी वत्सलता, उनका पातिव्रत धर्म जगत विख्यात है। जब सीता को रावण ने बहुत सताया और अपने आप को रामचन्द्र से श्रेष्ठ सिद्ध करने की चेष्टा की तो पातिव्रता सीता ने इन शब्दों में उसका तिरस्कार किया।

यदन्तरं सिंह शृगालयोर्वने यदन्तरं स्यन्दनिका समुद्रयोः।
सुराग्र्यसौवीरकयोर्यदन्तरं तदन्तरं दाशरथेस्तवैव च॥
यदन्तरं काञ्चन सीसलोहयोर्यदन्तरं चन्दन वारिपङ्कयोः।
यदन्तरं हस्तिविडालयोर्वने तदन्तरं दाशरथेस्तवैव च॥
यदन्तरं वायसवैनतेययोर्यदन्तरं मुद्गमयूरयोरपि।
यदन्तरं हंसकगृध्रयोर्वने तदन्तरं दाशरथेस्तवैव च ४७

जो भेद बन के सिंह और शृगाल में पाया जाता है, जो अन्तर समुद्र और क्षुद्र नाले में मिलता है, हां जो भेद अमृत और काञ्जी में पाया जाता है वही अन्तर भगवान रामचन्द्र और तुझ में है (४६) जो अन्तर सोने और लोहे में होता है, जो अन्तर चन्दन के सुगन्धित जल तथा बदबूदार कीचड़ में होता है, वही अन्तर भगवान रामचन्द्र और तुझ में है। (४७) जो अन्तर गरुड़ और कौवे में है, जो अन्तर मोर और जलकाक में होता है, जो अन्तर बन के हंस और गीध में देखा जाता है हां, वही अन्तर भगवान रामचन्द्र और तुझ में है।

भगवती सीता ने इन शब्दों को उच्चारण करके अशोक वृक्ष के नीचे पड़े रह कर क्या २ दुख सहन न किये होंगे। ऐसे पवित्र आचरणों ने इस देश में सहस्रों स्त्रियों को उत्साहित किया और वह हंसती ज्वाला के विकाल मुख में चली गईं। आज भी भारतवर्ष में सती देवियों का अभाव नहीं। अन्य देशों में भी अनेक अनेक ऐसी पतिव्रता देवियां हुई हैं।

जब कौन्ट कलफलोनेरी का अपराध सिद्ध हो गया। सम्राट ने उसे फांसी की आज्ञा दे दी और आज्ञा पत्र भी राजधानी से रवाना कर दिया उस समय उसकी पतिव्रता भार्य्या को समाचार पहुंचे। उसने तत्काल वियाना को प्रस्थान किया परन्तु उस के वियाना पहुंचने से पूर्व ही फांसी का परवाना लेकर डांकिया "मिलन" नगर को रवाना हो चुका था। यह आधी रात का समय था। कौन्टस ने मर्मभेदी विलाप शुरू किया। राज्य भवन के [नौ]करों ने उसके हृदय विदारक शब्दों को सुनकर उसे राजभवन में [जा]ने का अवकाश दे दिया। महारानी का हृदय भी उसकी दुखित [अ]वस्था को देखकर मोम के समान पिघल गया। वह उसी समय [म]हाराज के पास पहुंची और उस पतिव्रता देवी की ओर से जा निवे[द]न किया। महाराज ने उसी समय फांसी की आज्ञा को रद्द कर दिया [औ]र छोड़ देने का हुक्म दे दिया। इस आज्ञा पत्र को लेकर वह देवी [दे]वी के नगर मिलन, की ओर चली परन्तु डांकिया फांसी का आज्ञा-[पत्र] लेकर रास्ते में जा रहा था-यदि वह पहले पहुंच जाता तो [प्रा]णों के बचाने की सम्भावना न थी क्योंकि उन दिनों योरुप में तार [क]ा प्रबन्ध नहीं था। देवी ने उसी समय गाड़ी के लिये चौगुने घोड़ों

का प्रबन्ध किया । गाड़ी वाले को पुष्कल धन देने का प्रलोभ दिया और बिला विश्राम बिला खाये पीये प्राणनाथ की रक्षा के लिये चल पड़ी । नितान्त घण्टों के श्रम के अनन्तर वह "मिलन" में उस समय पहुंची जब फांसी की तय्यारी की जा रही थी, परन्तु वह समय पर आ पहुंची और पति के प्राण बचा लिये । इस कष्टदायक यात्रा में जिस सिरहाना पर उसने अपने कोमल सिर को धरा था वह अश्रुधारा से तर बतर हो गया था ॥

पति पत्नी का सम्बन्ध कैसा अटूट सम्बन्ध है । अर्द्धाङ्गिनी अपने पति का कोश है और पति उसका रक्षक है । अन्धकार के समय में पति को चाहिये कि वह सूर्य्यवत प्रज्जलित होकर प्रकाश पहुंचावे और भय के समय में ढाल बन कर उसकी रक्षा करे । आर्ष ग्रन्थों में पति और पत्नी को सूर्य्य तथा पृथिवी के साथ उपमा दी है । वसुन्धरा जैसे वेगवती बनकर प्राणनाथ के वियोग को एक क्षण के लिये सहन नहीं करती और उच्छलती, कूदती हुई अपने स्वामी की ओर आकर्षित होती है वैसे ही पत्नी को पति का सर्वदा ही सामीप्य उपलब्ध करना चाहिये । पत्नी के लिये जहां पतिव्रत धर्म है, वहां पति के लिये भी स्त्रीव्रत धर्म है । भगवान रामचन्द्रजी ने स्त्री व्रत के पालने में कितने क्लेश सहे । वेदों में स्त्री पुरुष को विद्युत की दो शक्तियों प्राण (Positive) और रयि (Negative) से उपमा दी है जो मिलकर विद्युत की लहर को उत्पन्न कर देते हैं । स्त्री पुरुष को आप दो बत्तियें समझिये जो एक ही दीपक में जल कर घर को दीप्यमान कर रही हैं । उन्हे आप दो सुगन्धित पुष्प मान लीजिये जो गुलदस्ता बनकर मन को लुभाते और सुगन्धि को प्रदान करते हैं, आप दो गान विद्या के यन्त्र मान लीजिये जिनके मिले हुये से उत्तम गान निकलता है, उन्हें आप दो ऐसे जल के समझ लीजिये जो भिन्न भिन्न स्थान से प्रवाहित होकर एक स्थान पर आ मिलते हैं और मिलते ही अपना अपना नाम भूल कर एक नदी के आकार को ग्रहण कर लेते हैं और दो के स्थान में एक हो जाते हैं इसी लिये मैत्री दोनों ओर से होनी आवश्यक है । स्त्री पुरुष के पारस्परिक प्रेम का एक अद्भुत उदाहरण इतिहास में मिलता है । जब साईरस ने आरमीनिया पर विजय पाई तो उसने रानी

पकड़ कर अपने कारागार में डाल दिया । उनमें राजकुमार टिगर-नेस की स्त्री भी थी। राजकुमार ने अपनी भार्या को मुक्त कराने के लिये अनेक उपाय किये। जब कामयाबी न हुई तो उसने साईरस को अपने प्राण देकर स्त्री को मुक्त कराने का निश्चय किया। साई-रस ने पति की इस भक्ति को देख कर उन सब देवियों को छोड़ दिये। सभी अपने २ स्थान पर साईरस के गुणों का गीत गाने लगी। टिगरनेस ने अपनी स्त्री से पूछा कि आपकी साईरस के विषय में क्या सम्मति है। उसने उत्तर दिया कि मैं नहीं जानती वह किस प्रकार का रूपवान या कुरुप पुरुष है क्योंकि मैं ने उसे नहीं देखा। राजकुमार ने कहा "क्यों ! इतनी देर तक तुह्मारी आंखें कहां थीं जो तुमने उसे देखा तक नहीं"। देवी ने उत्तर दिया कि मेरी दृष्टि तो बराबर आपके मुखकमल की ओर रही, जिसने मेरी रक्षा के निमित्त अपने प्राणों तक की बाजी लगा दी। क्या अनुपम और सुन्दर दृश्य है। पति भक्ति तथा स्त्रीव्रत का कैसा अद्भुत उदाहरण है। ऐसे ही पुरुषों तथा ऐसी ही स्त्रियों में मैत्री के सच्चे अद्भुत संस्कारों की उत्पत्ति होती है और विवाह के दिन से मृत्यु पर्य्यन्त उनकी एक दूसरे में अनन्य भक्ति, अनन्य वत्सलता और अनन्य सम्मान के भाव देखे जाते हैं।

स्वामी और भृत्य की मैत्री।

आज कल गुलामी का समय नहीं, किसी को अधिकार नहीं कि बिना इच्छा दूसरे को अपना भृत्य बना ले और नहीं ऐसे भृत्यों और उनके स्वामियों में कभी प्रेम का भाव अङ्कुरित हो सकता है। जहां भय है वहां प्रेम हो ही नहीं सकता। इतिहास में ऐसे कई उदाहरण मिलेंगे जहां स्वामी ने अपने भृत्य की ओर कष्ट के समय में भक्ती या मैत्री के भाव जतलाए हैं। नेलसन की गाथा कितनी उत्साह जनक है कि जब मृत्यु तट पर पड़े २ उसने जल मांगा और उसे जल दिया गया तो जब उसे ज्ञात हुआ कि समीपवर्ती सिपाही प्यासा मर रहा है तो उसने यह कह कर कि तुम्हें मुझ से अधिक ज़रूरत है अपने मुख से हटाकर जलपात्र उसे दे दिया। मृत्यु का समय और प्यास तिस पर भृत्य के लिये इतना आत्मसमर्पण कैसा शिक्षाप्रद है। जगत के इतिहास में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं परन्तु उन उदाहरणों की भी कमी नहीं जब स्वामी के लिये भृत्यों

ने अपने प्राण गंवा दिये। यह ऐसी ही अनन्य मैत्री का फल था कि रानाप्रताप की सहायता के लिये भील अपने प्राण खोते थे। हल्दी घाटी के घोर संग्राम में प्रताप के प्रेम से प्रेरित हो भीलों ने पर्वतों पर से पत्थर लुढ़काकर अकबर की फौज पर वार किया था। जब न्यायविरुद्ध सुप्रसिद्ध बरथेलमी को देश से निकाल देने की आज्ञा मिली तो उसका नौकर ला टेलियर भागता हुआ अपने स्वामी के समीप आया और साथ जाने की इच्छा प्रगट की। न केवल यही बल्कि उसने राज द्वारा आज्ञा भी प्राप्त करली कि मुझे अपने स्वामी के सङ्ग जाने दें। यह आज्ञा पत्र उसने पाकर उस समय अफ़सर को देदिया जब कि वह उसे गाड़ी में बिठला कर ले जा रहे थे। अफ़सर ने नौकर से पूछा कि क्या तुम इनके सङ्ग कष्टों को सहने पर उद्यत हो। उसने उत्तर दिया कि मैंने दृढ़ विचार कर लिया है कि मैं अपने स्वामी के कष्टों में उसकी सेवा करता हुआ प्रसन्न रहूंगा। अफसर ने कहा "जाओ, दीवाने तुम भी इन्हीं धूर्तों के सङ्ग दुख भोगो। ला टेलिर ने अपने स्वामी के सम्मुख गुठने टेक दिये। स्वामी ने ऐसे कष्ट के समय पर वफ़ादार सेवक को पाकर परमात्मा को धन्यवाद किया और उसे सेवक नहीं किन्तु मित्र समझ कर ज़मीन से उठाया और छाती से लगा लिया॥

——o——

मित्रों की मैत्री।

डाक्टर गथरी ने प्राचीन यूनान के इतिहास की एक कथा को इस प्रकार से वर्णन किया है। डेमन और पीथियास दो मित्र थे। डेमन पेथोगोरस का अनुयायी था। उसे उन विचारों के कारण कि जिनका वह प्रचार किया करता था डायोनीसियस ने फांसी की आज्ञा दे दी। डेमन ने मृत्यु से पूर्व घर जाने और अपने परिवार को मिलने के लिये छुट्टी मांगी। उसे छुट्टी की आज्ञा तो मिल गई परन्तु निर्दयी शासक ने शर्त यह लगाई कि फांसी के दिन पर पहुंचाने के लिये कोई ज़ामिन दो जो स्वयम् फांसी पर चढ़ना स्वीकार करे यदि उस समय तक तुम न पहुंच सको। इस समय डेमन के मित्र पेथियास ने मित्र की सहायता करने का दृढ़ विचार किया और ज़ामिन बनकर मित्र को घर जाने की आज्ञा दिलवादी। अन्त

वह समय और तिथी आ पहुंची परन्तु डेमन न आया । पीथियास को फांसी की आज्ञा मिली और वह तय्यार हो कर फांसी के स्थान पर आ पहुंचा । विरुद्ध वायु के आक्रमण के कारण जहाज़ को लौटने में देर लग गई पीथियास ने शुक्रिया किया और परमात्मा से प्रार्थना की कि डेमन न पहुंचे ताकि उसे सच्चे मित्र की सेवा करने का अवसर मिल जावे। उधर जल्लादों ने पीथियास को फांसी पर लटकाया इधर दूर से घोड़े को दौड़ाता हुआ और पसीना में तर बतर हुआ हुआ डेमन उस स्थान पर आ पहुंचा। अब उन दो मित्रों में विचित्र और सनेह युक्त विवाद आरम्भ हुआ । हर एक दूसरे के लिये अपने प्राण देने पर उद्यत है दोनों ने डायोसीसियस से अपील की कि मुझे फांसी मिले परन्तु मेरे मित्र का छोड़ दिया जावे डायोसीसियस यद्यपि अपने समय का निर्दयीशासक था तथापि इस विचित्र दृश्य को देख कर वह कम्पित हो गया। उसने फांसी की आज्ञा रद्द कर दी दोनों को छोड़ दिया और उनसे प्रार्थना की कि मुझे भी अपना विश्वास पात्र बनाओ और मैत्री के आनन्द को आस्वादन करने के अवसर प्रदान करो । ऐसी ही एक विख्यात कथा सोकीथियन जाति के लोगों में प्रसिद्ध है । सिकिथिया के लोग बडे निर्दयी, खूंख्वार और असभ्य माने जाते थे । इतिहास से ज्ञात होता है कि नरबली देते और मनुष्यों को मारकर यह लोग खाया करते थे और उनकी खोपरियों को जल पीने के प्याले बना कर प्रयोग में लाते थे । यूनान की जाति के दो पुरुष जो आपस में मित्र थे और दोनों साहसी थे अपने देश से चलकर इस देश में आए । यहां उन्हें ज्ञात हुआ कि वह एक ऐसी निर्दयी जाति के आधिपत्य और राज्य में पहुंचे हैं जहां से बचकर निकलना असम्भव नहीं तो दुस्तर अवश्यमेव है । इन दोनों को पकड़ लिया गया और राज्य की ओर से आज्ञा मिली कि देश की रीत्यनुसार इनकी नर बली डियाना के मन्दिर में दी जावे। डियाना के मन्दिर की पुजारिन एक स्त्री थी जिसका नाम " इफीजीनिया " था । यह दोनों उस के पास बध करने के निमित लाये गये। उसने अपनी छुरी निकाली और उनकी छातियों पर चभोने के निमित्त तय्यार हो गई । इसी समय उसे ज्ञात हुआ कि ये दोनों यूनानी हैं, वह स्वयम् भी यूनान की रहने वाली थी। यह जानकर उस ने संकल्प किया कि

एक को मार दूं और दूसरे की जान इस शर्त पर बचालें कि वह मेरा पत्र यूनान ले जावे और उसका उत्तर वहां से लादे। अब प्रश्न उपस्थित हुआ कि कौन जावे और किसे बध किया जावे। जिन मित्रों ने मिलकर अनुभव किया था, जिन्हों ने दरबार और रणक्षेत्र में एक दूसरे का साथ दिया था, अब उन्हे विचारना पड़ा कि कौन वियोग के दुख को सहे। उच्च भावों में पले हुए दोनों सज्जनों ने उदारता से उत्तर दिया कि मैं मरूंगा, मेरे मित्र को छोड़ दिया जावे। दोनों ने अपनी२ बारी से उस पुजारिन से सविनय प्रार्थना की कि मेरे मित्र को बचा लिया जावे। जब वह झगड़ते थे देवी को ज्ञात हो गया कि उन में से एक उसका सहोदर भाई है। उसने उसे आलिङ्गन किया और दोनों को छोड़ दिया। छोड़ा ही नहीं वरन नीति द्वारा दोनों को बचा कर और स्वयम् भाग कर अपने देश यूनान को ले आई। इस कथा से उनकी सुकीर्ति का विस्तार हुआ, घर घर में उनकी मैत्री की चर्चा हुई। जगत के लोग इस अचम्भे को सुनकर गदगद प्रसन्न हुए। देश देशान्तर में यह सुसंवाद पहुंच गया। इस कथा की इतनी प्रशंसा हुई कि सिकाथिया जैसी असभ्य जाति ने आरस्टीज और पाईलाडस को साधारण मनुष्यों से उठाकर देवताओं की श्रेणी में रखा और उनकी मूर्तियां बनाकर नियम पूर्वक उनकी पूजा करनी आरम्भ करदी।

पड़ोसियों में प्रेम।

ऊपर जो कुछ मैत्री के सम्बन्ध में वर्णन किया गया है वह सम्भव है स्वार्थ पर ही निर्भर है। माता को पुत्र से पति को पत्नी से, मित्र को मित्र से और स्वामि को भृत्य से सुख दुख में सहायता की आशा होती है परन्तु जब मनुष्य अपने स्वार्थ को त्याग कर दूसरे का परोपकार करना चाहता है तो उसके भाव उच्च होने लगते हैं निस्सन्देह मनुष्य जीवन एक सामाजिक जीवन है। समाज के बिना हम मनुष्य धर्म का पालन ही नहीं कर सकते। ऐसी दशा में भी हम स्वार्थ तत्पर पुरुषों के जीवन में देखते हैं कि वर्षों एक दूसरे के समीप रहते हुए भी वह एक दूसरे को नहीं जानते। आज कल की सभ्यता मनुष्य को Isolation तटस्थ रहने की शिक्षा देती है। परन्तु विचार करें तो पड़ोसी के सुख दुख का हमारे

जीवन पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। कल्पना कीजिये कि हम एक सुन्दर स्थान पर रहते हैं हमारे भाई या मित्र का स्थान हमारे मकान से दो मील पर है। हम दोनों के स्थान साफ़ सुथरे हैं परन्तु हमारे पड़ोसी के स्थान मैल और दुर्गन्धी युक्त हैं। उसके घर में प्लेग होगया। अब हमें अपने भाई या मित्र के शुद्ध स्थान से क्या लाभ जब कि पड़ोसी के गन्दे स्थान के कारण हमारा मकान भी प्लेग युक्त होगया। ऐसी अवस्था में हमें अपने कल्याण के लिये पड़ोसी के मकान को साफ़ सुथरा रखने की आवश्यकता पड़ी। यदि हम दीर्घ दृष्टि से देखें तो प्रत्येक सुख तथा दुख के भाव में हमें सम्मिलित होना पड़ता है। इसीलिये प्रत्येक धर्म में पड़ोसियों से प्रेम करने की शिक्षा मिलती है।

किन्तु मानवी शक्तियों के विकास के लिये भी हमें पड़ोसियों से स्नेह तथा मैत्री के भावों को प्रदर्शन करने की ज़रुरत है। इन्हीं भावों द्वारा ही तो देश भक्ति के उत्तम विचार उत्पन्न होते हैं। शान्ति के समय में देश भक्ति यही है कि हम अपने २ कर्तव्य को पालन करना सीखें। पड़ोसियों से प्रेम करते २ हम अपने नगर निवासियों और उनसें बढ़ कर देश के निवासियों से प्रेम करें। यदि प्रत्येक मनुष्य शारीरिक तथा आत्मिक पवित्रता को धारण करे, अपने घर में रोग को आने न दे, अपने कर्तव्य का पालन करे अपने गृह को आर्य्य परिवार बनादे तो वह देश की सेवा करता है।

देश भक्ति

के जीवन के उदाहरण उस समय मिलते हैं जब देश पर कोई आपत्ति हो। ऐसे ही समय में देश सेवा के मद में अनेक धर्मात्मा पुरुष अपने प्राणों तक को न्यौछावर कर देते हैं। जिस देश के अन्नपान से उनका शरीर बना जिस देश की मट्टी से उन्हें वसुन्धरा ने नाना पदार्थ प्रदान किये, हां, जिस देश के वासियों से उन्हें दुख सुख में सहायता मिली। वह उनका परिवार बन जाता है। परिवार के लोगों से जैसा अनन्य प्रेम होजाता है, इसी प्रकार देश भक्तों को अपने देश के मनुष्यों से अनन्य स्नेह, और अनन्य मैत्री हो जाती है। अपने लोगों के हितार्थ वह अपने प्राणों को देने के लिये भी उद्यत होजाते हैं। उनके सच्चे हृदय में शत्रु का भय नहीं होता। वह देश के अशुभ चिन्तक राजा के

न सामने सर झुकाते और न उस के भय से कम्पित होते हैं।
उनके शरीर को चाहे कितना कष्ट दो, परन्तु उनका आत्मा कभी भी नहीं गिरता। महाराणा प्रतापसिंह जी का विख्यात जीवन किसे ज्ञात नहीं। उस प्रातः स्मरणीय महानुभाव ने चितौड़ के हितार्थ क्या २ कष्ट सहे। सम्राट अकबर की फौजों ने कितनी बार उसे परास्त किया परन्तु उसके तेजस्वी आत्मा ने अकबर के सामने झुकना स्वीकार नहीं किया। राजपूतों का स्नेह, देशभक्ति, वंश का गौरव और प्रजा वत्सलता के ऐसे उच्च भाव उनके सम्मुख काम कर रहे थे कि उनके मुकाबले में बाल बच्चों के क्लेश, अनेक असीम कष्ट और पुनः २ परास्त होने और सहस्रों योद्धाओं के रक्तपात ने भी उनके हृदय को निर्बल नहीं बनाया। यह मैत्री के उच्चस्तर भावों का एक विचित्र उदाहरण है। देश के लोगों की मैत्री के विचारों से प्रेरित होकर मनुष्यों ने राज्य तक को त्याग दिया। जब रूस के ज़ार इवनोविच का काल हो गया तो राज मन्त्रियों ने उसके भांजे मीकाईल रोमानफ को राज तिलक देने का दृढ़ संकल्प कर लिया। इस निश्चय पर दूतोंके द्वारा राजकुमार तथा उसकी माता को मास्को में बुलाया गया परन्तु माता तथा पुत्र दोनों ने राजसिंहासन को अस्वीकार किया और जब मन्त्रियों ने बल पूर्वक कहा कि राजकुमार मीकाईल को रूस के लोग शाहनशाह बनाना चाहते हैं तो उसकी माता ने उत्तर दिया कि "मुझे भी देश के लोगों से प्रेम है उन पर शासन करने के लिये बड़ा योग्य पुरुष चाहिये, मेरे पुत्र को राज्य की कठिन विद्या के सीखने का सौभाग्य नहीं मिला, अतएव मैं नहीं चाहती कि मेरा पुत्र राज्य ले किन्तु किसी योग्य व्यक्ति को यह भार सौंपा जावे जो अपने कर्तव्य को पालन कर सके" जब मन्त्रियों ने न माना, तब उस देवी ने उन दूतों से कहा कि "अच्छा, तब मेरी इस प्रार्थना को स्वीकार कीजिये अर्थात् अपनी संरक्षता में मेरे पुत्र को शिक्षित कीजिये क्योंकि उसे यह विद्या ज्ञात नहीं। आप लोगों ने उसे अपना बादशाह चुन लिया, यदि वह आपकी आशाओं को पूरा न कर सका परमात्मा के सन्मुख आप ही उत्तर दाता बनेंगे। और जहां तक मेरा कर्तव्य था मैंने अपने परमात्मा, अपने देश तथा अपने के सम्बन्ध में अपने कर्तव्य का पालन किया है। शेषफिर

पारिवारिक दृश्य ।

सायङ्काल के ७ बज गये । गङ्गा के मनोहर तट पर एक विशाल भवन में कुछ हिन्दू रमणियां एकत्रित हो रही हैं । शीतल चान्दनी की किरणें ठण्डी २ वायु को गोद में लिये हुये भवन में प्रवेश कर रही हैं । गम्भीर सलिला भागीरथी के दृश्य को देखने के स्थान में सभी रमणियों की दृष्टि सिद्धमाता के क्लान्त मुख की ओर जा रही है । माता की आयु ४५ वर्ष से अधिक न होगी । वयोवृद्ध होने में कई एक वृद्धा यहां उपस्थित हैं परन्तु वह भी श्रद्धेया माताजी को माता के अति पुनीत नाम से याद कर रही हैं । सिद्धमाता के तन पर यद्यपि उत्तमोत्तम वस्त्र नहीं तथापि श्रद्धा के भावों से प्रेरित हो अनेक रमणियां अपने २ गृह से उनके लिये वस्त्र लाई हैं । कोई ओढ़ने को देती, कोई बिछौने का वस्त्र लाती और कोई पुष्प मालाओं से शय्या को सजाती है । हिन्दू रमणियों की ऐसी श्रद्धा अनन्य प्रेम का बोधक है । आओ, पाठक ! इस सिद्धमाता के आश्चर्य्य जनक वृत्तान्त को जानने के लिये उन के परस्पर के वार्तालाप को सुनें । इस समय एक विदुषी बाला ने जिसका शुभ नाम मनोरमा था अपनी अन्य बहिनों की प्रेरणा अनुसार सिद्धमाता जी से वार्ता करनी आरम्भ की ।

मनोरमाः—माता जी ! आपके कृश शरीर को देखकर हम सभी दुख सागर में डूब रही हैं । आपके उपकार के जीवन को याद करके हम अपने आप को पुण्यभाग्या समझती हैं । जब से आपके पवित्र चरणकमलों का इस तीर्थ स्थान पर आगमन हुआ तब से हमारी श्रद्धा दिनों दिन आप की भक्ति के लिये बढ़ती ही गई । आज मध्यान्ह को हमें ज्ञात हुआ कि आप का रोग असाध्य हो गया है और कदाचित आप के दुर्बल शरीर को अधिक जीवित रहने का अवकाश न मिले इस लिये हम आपके अन्तिम उपदेश को सुनने के लिये एकत्रित हुई हैं, यदि विशेष कष्ट न हो तो आप हमें कुछ आदेश और उपदेश दें ।

सिद्धमाताः—पुत्रि ! आनन्दित रहो । निस्सन्देह शरीर दुर्बल हो रहा है । मन में क्लान्ति और ग्लानि के भाव उठ रहे हैं । जिस

श्रद्धा से आप बहिनें मेरा सम्मान कर रही हैं उसके लिये मैं अनुगृहीत हूं। हमारे शास्त्रकारों ने लिखा है कि मनुष्य की जैसी भावना अन्तिम काल में होती है वैसे ही उसको जन्म मिलता है। मैंनें इस भाव को आज अनुभव किया। मेरा जामा संन्यास का है। आप सब देवियां मेरा आदर कर रही हैं परन्तु मैं अपने व्यतीत जीवन के बुरे भले कर्मों को स्मरण करके दुखित हो रही हूं। मेरा मन तो चाहता है कि जहां मैं ने सज्जीवन में अपने भाव आप को बतलाये हैं वहां मैं उन दुर्घटनाओं को भी वर्णन करदूं जो मेरे जन्म में हुई हैं। कदाचित आपको लाभ न हो परन्तु आनेवाली सन्तानें इन दुर्घटनाओं से अवश्यमेव लाभ उठावेंगी॥

मनोरमाः—हां, माता जी! आप अपनी बीती सुनाइये, हम ध्यान से सुनेंगी। भला आपके पवित्र जीवन में कैसे पाप के संस्कार प्रविष्ट हो सक्ते हैं? हमें तो पग पग पर आप से शिक्षा मिलती है।

सिद्धमाताः—देवियो! यदि आप की इच्छा है तो सुनो, मैं दुर्बल हूं, आहिस्ता २ बोलूंगी। जिन्हें अवकाश न हो वह अपने बच्चों तथा गृह कार्य्य के लिये जा सक्ती हैं।

सब नेः—नहीं, नहीं, हम बैठेंगी—ऐसा अवसर फिर कब मिलेगा, अभी तो ७½ बजे हैं, १० बजे तक बैठ सक्ती हैं।

मनोरमाः—माता जी! आप सुनावें, परन्तु न शीघ्रता करें और न ही ऊंचे बोलें। हम शान्तचित तथा ध्यानपूर्वक सुनेंगी।

सिद्धमाताः—मैने अपने जीवन में बड़े २ क्लेश सहे। अनेक आपत्ति काल देखे और बड़ी कठिनता से अपने सतीत्व तथा स्वत्व की रक्षा की। मैंने अनेक उदाहरणों सहित आप को कथाएं सुनाई हैं उन में अधिकांश मेरे शरीर पर ही बीती हैं। इन कथाओं का जब आप वृतान्त सुनेंगी वास्तविक जान कर कदाचित आप को मेरे जीवन से घृणा हो जाय। हां, मुझे उसकी भी अब चिन्ता नहीं संन्यासी को तो स्तुति निन्दा का ध्यान भी न होना चाहिये (इतना कहते ही गला रुक गया और अश्रुधारा बहने लगी)

मनोरमा ने अपने वस्त्र से उन गरम २ अश्रुओं को पोंछा और माता जी के हाथ अपने हाथों में लेकर कहने लगी।

मनोरमाः—हां, धैर्य्य से कहिये, विश्राम लेकर वर्णन कीजिये हमें जल्दी नहीं।

सिद्धमाता:-पुत्रि ! मुझे एक ही विचार दुखित कर रहा है और वह यह कि कहीं मेरे वृतान्त आप के कोमल हृदयों पर आघात न पहुंचावें । तुम जानती हो, मैं तो स्वप्न में भी किसी का बुरा नहीं चाहती । तुम ने मेरे मुख से कटु शब्दों का उच्चारण भी नहीं सुना और उन दुर्घटनाओं में तो बुरे भले भाव सभी आवेंगे । जिस समाज में हमारा पोषण हुआ है उसकी बुराइयां भी आवेंगी । हां, तुम चाहोगी तो इन दुर्घटनाओं से अपनी सन्तानों को सुधार सकोगी ।

मनोरमा-माता जी ! आप विश्वास रखें हम आप के उपदेशों द्वारा गुण ग्रहण करना सीखी हैं । पाप किस मनुष्य में नहीं होता । हम कब पाप से वची हैं परन्तु पापों की चोट खाकर यदि आप का पवित्र जीवन सुधरा है तो अहोभाग्य हैं । कूप खोदने वाला खोदते समय मट्टी, कीचड़, रेत और कोयले से लिप्त हो जाता है परन्तु कूप के शुद्ध जल को पाकर और उसमें स्नान करके फिर पवित्र बन जाता है, तिसपर स्त्री और रत्न को तो शास्त्रों में भी पवित्र ही माना गया है । आप बाल्यावस्था से अर्थात् अपने जन्म दिन से हमें सब वृतान्त सुनावें ।

सिद्धमाता:-पुत्रि । सुनो, मेरा जन्म कलकत्ता के समीपवर्ती श्यामनगर कालीघाट में हुआ । मेरी आयु इस समय ४५ वर्ष की है, इसी से कल्पना करलें कि अनुमान मेरा जन्म १८६७ सन् में हुआ होगा । बाल्यावस्था में मेरे पिता जी ने मेरे दो भाइयों और मुझ को बड़े प्रेम से पाला था । मैं अभी ५ वर्ष की थी कि विशूचिका रोग से मेरे दोनों भाई जाते रहे । दुर्भाग्य वश पिता जी का पवित्र साया जब मैं ७ वर्ष की थी उठ गया । हमारी कुछ ज़मीन थी उसे चचा जी दबा बैठे । माताजी को पिता के मरने पर कुछ कम ५ हज़ार रुपये मौत फण्ड से मिला था । मुझे सङ्ग लेकर माता जी अपने ननसाल में चली गई और दूसरे ही वर्ष अर्थात् जब मैं ८ वर्ष की हुई तो माता ने मेरा विवाह कर दिया । विवाह प्रणाली तो यहां भी ठीक नहीं परन्तु बङ्गाल की चाल तो अत्यन्त निन्दनीय और गर्हित है । हम जन्म से ब्राह्मण थे । कुलीन ब्राह्मण के हां मेरा विवाह हुआ और मेरी माताजी को ३००० रुपये नकद वर पक्ष को देना पड़ा । अनुमान एक हज़ार रुपये मेरे विवाह पर व्यय हो

गया। मैं क्या जानती थी कि विवाह किस बला का नाम है। सुसराल में आई और अपनी गुड़ियों से पूर्व वत खेलना आरम्भ कर दिया। कोई छ महीने ही व्यतीत हुए होंगे कि मेरे पति का देहान्त हो गया। अनुमान सवेरे ८ बजे का समय था, मैं ऊपर छत पर खिलानों के साथ खेल रही थी कि मेरी मां रोती पीटती मेरे पास आई और कहने लगी "उठ रांडी! तेरा भर्ता मर गया"। मैं उस की बात को न समझी और उत्तर दिया 'तो जाओ, मुझे खेलने दो मर गया तो मरे'।

घर भर में हाहाकार मच गया। देखते २ नाई आया और स्त्रियों ने पकड़ कर मेरे सिर के बालों को कटवा दिया। मैं रोती रही, इस लिये नहीं कि मेरे प्राणनाथ का वियोग हो गया, किन्तु इस लिये कि बलात्कार से मेरे आभूषणों को मुझ से छीन लिया गया। मेरे वस्त्र भी उतार लिये गये और एक सुफेद धोती पहिनने को दे दी गई। इस पर मेरी माता मुझे मारने लगी और कहनी लगी कि तुम भी ... जब मैं अपने खिलौने उठाने लगी तो उसने उन्हें उठाकर फेंक दिया और तोड़ दिया, तब तो मैं भी ज़ोर से रोने लगी। मुझे याद नहीं कि किस प्रकार से अन्तेष्टि कर्म किया गया, परन्तु उस दिन के पश्चात मुझे सुख नहीं मिला। मेरे लिये हंसना तो निषिद्ध था ही परन्तु जो असह्य क्लेश मुझे दिये गये उन्हें याद करके मेरा हृदय अब भी कांप उठता है। मुझे याद है कि एक बार जब मेरी आयु ... वर्ष की थी हमारे ग्राम में कालरा या हैज़ा पड़ा, लोग सैकड़ों की संख्या में मर गये, ग्राम बिलकुल उजड़ गया, जहां देखो बरबादी ही बरबादी दीख पड़ती थी, वृक्षों के रुण्डमुण्डों पर कौवों की करखत आवाज़ हृदय को विदीर्ण कर डालती थी। मुझे भी रात के एक बजे हैज़ा हो गया, ज्यों त्यों करके दस्तों और क़यों में रात बिताई, सवेरा हुआ, व्याकुल चित से मैंने पानी मांगा। गृह में उपस्थित नारियां मेरी माता, सास और अन्य सभी स्त्रियां उपस्थित थीं कहने लगीं "आज अनन्त चौदश का व्रत है, तुम्हें कैसे जल ... भगवान पशुपति और वरुण देवता को स्मरण करो, वह तुम्हारे व्रत का पालन करेंगे, शरीर का क्या भरोसा, धर्म का ... भूल से भी न करना चाहिये" मैं दिन भर तड़पती रही, न जाने यह पापी रुह शरीर में कैसे रह गई। औषधियों का सेवन करना ...

तो एक ओर रहा। मुझे निरन्तर ८ पहिर तक पीने को जल तक भी न दिया गया। मैं ने सम्बन्धियों की क्रूरता को अनुभव किया। १५ वर्ष की आयु तक मैं ने उसी गृह में निवास किया। दिन रात के कलह ने मेरे जीवन को कटु बना दिया। मैं नहीं जानती थी कि मेरा क्या अपराध था, परन्तु मेरी माता को मेरी सास हज़ारों गालियां सुनाती और मेरे कोमल हृदय को अहर्निशं वेधन किया करती थी। प्रातःकाल मेरा उठकर नीचे आना अशुभ माना जाता था, न मुझे पढ़ने को पुस्तक मिलती, न कोई मेरे साथ कभी हँस कर बोलता। एक मात्र पेट पालन के निमित्त मैं प्रातःकाल से सायङ्काल के ११ बजे पर्य्यन्त घर का सब कार्य्य करती थी, तिसपर भी निरन्तर मेरे व्यवहार को बुरा, मेरे काम को खराब और मेरे आचरणों को निन्दित माना जाता था। जब मैं १५ वर्ष की हुई तो मानसिक क्लेशों के कारण मैं दुख अनुभव करने लगी। इन्हीं दिनों एक पड़ोसिन ने मेरी दशा को देख मुझ पर दया के भाव प्रगट किये। मैं थी तो अनघड़ झट उसके दाओ फरेब में आ गई। उसने मुझे फुसलाया और ३०रुपये का मेरा एक ज़ेवर बेच कर मुझे रात के समय घर से निकाल कर बरद्वान में ले आई। इस समय ज़ेवर और नकद सब मिलाकर अनुमान एक सहस्र रुपये का माल मेरे पास था। बरद्वान में हम एक वृद्ध संन्यासी के पास आये। उस ने अपने किसी परिचित पुरुष द्वारा नगर में हमारे रहने का प्रबन्ध कर दिया। एक सप्ताह भी नहीं गुज़रा था जब विश्वास वश मैं ने वह सारी सम्पत्ति उस संन्यासी स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज को सौंप दी। दो दिन के पश्चात् उस पड़ोसिन का भी पता न चला। अकेली मैं घबराने लगी। मेरी अवस्था उस समय उस बालक के समान थी जिसे निर्जन बन में फेंक दिए जावे। मेरे रुदन करने पर उस संन्यासी ने मुझे काशी तक पहुंचाने का मार्ग-व्यय प्रदान किया और उसके लिये भी मैं उसकी अनुगृहीत हुई। काशी में विधवाओं की जो गति होती है वह अकथनीय है। मैं ने रो धो कर कुछ महीने व्यतीत किये। भद्र लोगों के हां चाकरी कर के उदर पूर्त्ति की, परन्तु सती नारियों के लिये स्थल स्थल पर कांटे बिछे हैं। रक्षक भक्षक बन बैठते हैं। मैं नहीं जानती परमात्मा ने मुझे कैसे बचाया, कैसे मैं ने प्राणादपि प्रिय धर्म की रक्षा की। काशी

में एक धर्मात्मा वृद्धा मेरी रक्षक बनी। मैं ने उसे धर्म की माता बनाया। उस पर पूरा विश्वास किया। उसी के गृह में रहने लगी। वह नित्यप्रति ६, ७ घण्टे पूजा पाठ में दिया करती थी। मैं डर के मारे मन्दिरों में नहीं जाती थी। एक दिन उस ने संकटेश्वर महाराज की बड़ी प्रशंसा की। मैं भी संकटों के मारे परेशान थी, मन ने चाहा, दर्शन करूं परन्तु फिर घबराने लगी। उस के आश्वासन दिलाने पर कि वह मन्दिर नगरी से दूर एकान्त स्थान में है और यह कि पहिर दिन चढ़ने पर वहां कोई भी पुरुष नहीं होता, मैं दर्शन करने के लिये उद्यत होगई। दूसरे दिन हम दोनों वहां पहुंचीं। ६ बजे का समय था। सूर्यभगवान की तीक्षण किरणें पृथिवी पर अग्नि बरसा रही थीं। वह एक चार दीवारी घिरी थी। फाटक खुला था। हम अन्दर गईं सङ्कटेश्वर के मन्दिर में पुरुषों का पत्ता तक न था। पुरुषों का ही क्या कोई एक स्त्री भी न थी। मैं बे खटके टहलने लगी। इसी समय उस वृद्धा ने कहा, सुशीला। (यह मेरा जन्म का नाम था) यह तो नकली महादेव हैं असली षोड़श कला वाले महादेव जी की मूर्ति अन्दर है, आओ, उसका भी दर्शन करलें। आज एकान्त स्थान भी है और तुम्हारी इच्छा के अनुकूल कोई पुरुष भी नहीं। मैंने 'तथास्तु' कहा और पीछे २ चल पड़ी। दरवाज़ा खुला और बन्द होगया। ८ सीढ़ियां उतरी होंगी कि एक बड़ा विशाल भवन नज़र आने लगा। झाड़ फानूस और शाही महल को देख कर मेरा माथा ठनका। इतने में दक्षिण दिशा से ५ पुरुष निकल आये—मैं कांपने और थरथराने लगी। इस भय से मैं बेहोश होगई। जब होश आई तो देखती क्या हूं कि एक सुन्दरी मेरे सिरहाने बैठी है। न वह वृद्धा और न वह युवक। मैं उठी और विनीतभावेन उस सुन्दरी के पावों पर सिर रख दिया और प्रार्थना की कि मुझे सुरक्षित स्थान में पहुंचादो। उसने उत्तर दिया, 'तुम अब बन्दीगृह में हो, यहां से छुटकारा असम्भव है, उठो मैं तुम्हें निर्दिष्ट स्थान पर पहुंचा दूं। मैं वहां चिरकाल पर्य्यन्त रोती रही और उसके कहने सुनने पर भी न मानी। अन्तत जब उसने बहुत धमकाया और कहा कि यदि न मानोगी तो तुम्हें पुरुष उठाकर ले जायेंगे, तब मैं उठी और उसकी अनुगामिनी बन कर एक कमरे में आई। वहां खाने पीने की पुष्कल सा-

धरी थी,परन्तु मुझे तो पराणों की चिन्ता और धर्म के विनिष्ट होने का भय था, उसने बाहर से ताला लगा दिया। मैं हताश होकर पलङ्ग पर जा पड़ी। मेरे वस्त्र अश्रुधारा से तर बतर हो रहे थे और मैं भगवान को स्मरण करती करती सोने ही लगी थी कि अधिष्ठात्री ने आकर द्वार खटखटाया, मैं डर से उठी। द्वार खोल दिया देखा तो उस सुन्दरी के संग संग एक नव युवक था और वह उसके संकेत करने पर मेरे कमरे में घुस आया। सुन्दरी तत्काल चली गई। द्वार बन्द हो गया। मेरा हृदय काम्पने लगा। उस भयानक समय को याद करके अब भी मेरा हृदय बल्लियों उछल रहा है (यह कहकर वह चुप हो गई) (मनोरमा ने देखा कि चेहरा श्वेत होगया है और सिद्धमाता को बेहोशी तारी होगई) देवियों ने सिद्धमाता के हाथ पाओं मलने शुरू किये। अनुमान आध घंटे में होश आई। सिद्धमाता उठकर बैठी और कहने लगी 'वह युवक चिमनी के पास जाकर बैठ गया और कहने लगा। देवि! डरो मत, मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूं कि मेरे द्वारा तुम्हारा कल्याण होगा। मैं पापी नहीं हूं। हां, जिस स्थान पर तुम पहुंची हो, वह पाप और घोर नरक का स्थान है। मैंने उत्तर दिया, 'हे दुष्ट! तुम मेरा क्या कल्याण करोगे, मैं जानती हूं, तुम मेरे सतीत्व को नाश करने आये हो'। उसने हाथ बान्धकर कहा, 'देवि! कदापि नहीं, मैं आर्य वीर हूं। स्त्रियों की रक्षा करना मेरा धर्म है, मैं इस पाप केन्द्र में अपनी बेगुनाह बहिन को ढुण्ढने के लिये आया हूं। उसके आश्वासन दिलाने पर मुझे शान्ति मिली परन्तु मेरा हृदय न्यूनाधिक मारे भय के काम्पता रहा। तब उसने अपनी मासूम बहिन के समाचार सुनाये और मुझे भी बहिन के प्रेम बश भगिनी के प्रिय शब्दों से सम्बोधन करने लगा। मैंने अपनी करुणा जनक कहानी सुनाई। बस, फिर क्या था न मालूम उसने उन कारागार के दुष्ट हत्यारों को क्या धमकी दी कि उन्हों ने मुझे छोड़ दिया। मन्दिर से प्रातःकाल के बजे मुक्त होकर मैं अपने रक्षक भ्राता के पीछे २ चली। वह मुझे अपने धर्मात्मा पिताजी के पास ले गया। उसका पिता एक प्रसिद्ध धनिक था, उसने मुझे अपने घर में आश्रय दिया। इसी धनिक की कन्या प्रेमकला नाम की थी। मरा उससे प्रेम होगया। यहां ही और पढ़ने का प्रबन्ध था। मैंने शास्त्रों को पढ़ा और धर्म के मर्मों

पर खूब ध्यान दिया। जब प्रेमकला की आयु १६ वर्ष की हुई तो उसके पिताजी ने उसका विवाह बम्बई में कर दिया। प्रेमकला और मेरा प्रेम कोई साधारण प्रेम न था। उधर विवाह हुआ, इधर मैंने संन्यास ले लिया। इस समय मेरी आयु २१ वर्ष की थी। ज्ञान से मेरे हृदय की ग्रन्थियां टूट गईं। धर्म के बल ने मेरे अन्दर सत्पुरुषों का बल पैदा कर दिया। मैंने अपनी शक्तियों पर विचार किया स्त्री जाति के क्लेशों की ओर ध्यान दिया और उन क्लेशों के दूर करने के लिये घर घर जाकर प्रचार करना आरम्भ किया मेरे सामने वह दृश्य उपस्थित हो गया जब भगवान बुद्ध के समय में भिक्षुणियों ने अपनी बहिनों के कल्याण के लिये घर घर जाकर आग लगाई थी, स्त्रियों को शिक्षा मिली उन्हों ने अपने अधिकारों को समझा था। तब न तो अन्यायी पिता अन्याय कर पाते थे और न ही स्त्रियों के अधिकारों को कोई पादाक्रान्त करने का साहस कर सका था। अनुमान १२ वर्ष पर्यन्त मैं ने स्थान स्थान पर फिर कर प्रचार किया। यद्यपि दुष्ट पुरुषों का भी कई बार सामना करना पड़ा तथापि सत्पुरुषों के रहने तथा अज्ञात पुरुषों पर विश्वास न करने का यह फल हुआ कि निर्विघ्न काम करती रही। १२ वर्ष हुए कि दानशीला श्रीमती जानकी देवी के परोपकारी जीवन को जानने का मुझे इस नगरी में अवसर मिला था। तब से मैं ने भी सेवाव्रत को धारण किया और गंगा के इसी तट पर बैठकर मैंने अपने व्रत को निभाया है। आप जैसी देवियों की सहायता से सहस्रों नारियों का सुधार हुआ हजारों कुमारियों को शिक्षा मिली। लाखों दारिद्रियों और पात्रों को अन्न मिला। प्यासों को पानी, भूखों को अन्न का दान और सब से बढ़कर ब्रह्मदान का बीज वपन किया गया। मैं भवसागर में गोते खा रही थी, एक धर्मवीर आर्यकुमार ने मुझे बचा लिया। देवियो! ऐसी ही वीरसन्तति को उत्पन्न करो ताकि तुम्हारी कुल और तुम्हारे देश का कल्याण हो और तुम्हारी सन्तानें नहीं २ कोमल कलियां उन कल्पित जंजालों से बचें जिनमें जकडे जाकर हम ने अनेक कष्ट उठाये हैं। यह कहकर वह चुप होगई। सभी देवियों ने धन्यवाद दिया और प्रतिज्ञा करके अपने २ घर को चली गईं।

आर्य्यसमाज के उद्देश्य ।

[गताङ्क से आगे]

[१] वेद ही विद्या है-अर्थात् वेद पढ़ना पढ़ाना ही सत्य शिक्षा है यही सृष्टि नियम तथा ईश्वर नियम (Science) के अनुसार एक धर्म है इसमें बड़े२ विद्वानों का प्रमाण है:— " बुद्धि पूर्वा वाक्या कृति वेदे " वैशेषिक अ० सू० १ ॥ अर्थात् वेद का कोई मन्त्र बुद्धि के विरुद्ध नहीं है महर्षि मनु जी लिखते हैं कि " यस्तर्केणानुसन्धत्ते स धर्म वेद ते नरः " अर्थात् जो तर्क से सिद्ध हो वह ही वेद, वेद का मत है अन्य नहीं निरुक्तकार यास्क महर्षि कहते हैं " तर्क मेव ऋषिः " तर्क ही हमारा ऋषि है ॥ स्वामी दयानन्द लिखते हैं " मैं वेदों में कोई बात बुद्धि विरुद्ध वा दोष की नहीं देखता और उन्हीं पर मेरा मत निर्भर है " वेदों में बुद्धि की प्रार्थना को सर्वोत्तम प्रार्थना माना है गुरुमन्त्र (गायत्री मन्त्र) बुद्धि ही की प्रार्थना है ।

(२) वेदों की व्याख्या. अङ्ग, उपाङ्ग, उपवेद तथा स्थूल सृष्टि है। वेदों के जानने के लिये इनकी आवश्यकता है ।

(३) वेदों में सब विद्यायें हैं वे ईश्वर का ज्ञान होने से निर्भ्रान्त (Perfect) हैं।

(४) जो यह नहीं जान सकते कि इस दीवार की ओट में क्या पड़ा है । मेरे अन्दर क्या है । नाड़ियां कितनी और किस अवस्था में है। वीर्य किस अवस्था में हैं । दो मिनट के पश्चात् क्या होगा-मैं पूर्व जन्म में क्या था अगले जन्म में क्या बनूंगा । मेरी आत्मा कैसी है-इस शरीर में कहां बैठा है किस रास्ते से आता जाता है-हमारा ज्ञान इन ठोस इन्द्रियों से परे जाता ही नहीं-हम क्या जानते हैं ? क्या विद्या है ? इस समय में जिस सभ्यता का शिखर कहा जाता है निश्चय—वास्तविक विद्या के सम्मुख आज कल का समय ऐसा ही है—जैसे समुद्र के मोती छोड़ कर कोई किनारे पर के सीप चुन रहा है-अष्टाङ्ग योगही एक साधन है जिससे मनुष्य विद्वान बनता है इसके बिना वेद आदि सत्य शास्त्रों के अर्थ का साक्षात् करना असम्भव है ।

(५)* नवीन रचना तथा आविष्कार Invention or discovery

---

* Carlyle,' Andrew Jackson, Davis कारलाइल तथा एन्ड्रयू जेक्सन. डेविस भी एताही मानते हैं कि नई से नई उन्नति सीधी लकीर की भांति नहीं होती प्रत्युत संसार की उन्नति चक्र में चलती है ।

असम्भव है। अर्थात् कोई ऐसी रचना नहीं हो सकती जो वेदों के लिये नवीन हो। अथवा पूर्व से ही वेदों में न पाई जाती हो।

"एतद्धस्मवै तद्विद्वा ८ँस आहुः पूर्वे महाशाला महाश्रोत्रिया न नो रद्य कश्चना श्रुतम्, मतमविज्ञात मुदाहरिष्यतीति ह्येभ्यो विदाञ्चक्रुः" ॥

(छान्द० उप० प्र० ६ ख० ४ प्र० १)

अर्थ—(ततः+एतत+ह+वै) उस उत्तम विज्ञान को (विद्वांस जानते हुये (पूर्वे) अति प्राचीन (महाशालाः) महाशाला वाले (महा श्रोत्रियाः) महा वैदिक (आहुः+स्म) कहा करते थे कि [नः] हम लोगों में [अद्य] सम्प्रति [कश्चन] कोई पुरुष [अश्रुतम्] अश्रुत [अमतम्] अतर्कित [अविज्ञातम्] अविज्ञात वस्तु को (न+उदाहारिष्यति) नहीं कहेगा (हि) क्योंकि वे लोग [एभ्यः] इन दृष्टान्तों से [विदाञ्चक्रुः सब कुछ जाना करते थे अर्थात् हम लोगों की कोई ऐसी वस्तु नहीं जो न विदित हो इस हेतु हम लोगों से कोई मनुष्य नवीन वस्तु नहीं कह सकेगा।

(६) वेद शास्त्र विरुद्ध परीक्षाओं की आवश्यकता नहीं।

वेदः स्मृतिः सदाचारः स्वस्यच प्रियमात्मनः एतच्चतुर्विधिम्प्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम् ॥ मनु० ॥

परीक्षण चौथे दरजे पर वर्णन किये गये हैं और वह उस अवस्था में वैदिक विद्वान करता है जब पहिले तीन साधनों से उसका संशय निवृत्त न हो क्योंकि धर्म के अभिलाषियों के लिये

"धर्म जिज्ञासमाना नाम परमं प्रमाणं" श्रुतिः।

वेदही परम प्रमाण है अतः हमारे विद्यालय किस प्रकार के हों कहां हों, किस आयु में लड़के प्रविष्ट हों, कितनी आयु तक रहें बार्डिंग स्कूल हों या साधारण. पाठ विधि वर्तमान हो या कि और गाना बजाना सीखें या नहीं, अथवा कब सीखें विवाह किस आयु में करें, गुरु तथा शिष्य का क्या सम्बन्ध हो इत्यादि बातों का परीक्षण से सीखने की पाश्चात्यों की न्याईं अन्धेरे में टटोलने की आवश्यकता नहीं है। निस्सन्देह पश्चिम हम से विद्या में अधिक है—क्योंकि वह जागता है और हम सोये हैं। परन्तु हम इस बात

नहीं भूल सकते कि "हम वेद भगवान् के प्रकाश में सोये हुये हैं" और पश्चिम अन्धेरे में जागता है—किन्तु अन्धेर में टटोलते हुये वह हम में टकराया है—और हम जाग कर दिन का प्रकाश उसको देंगे। अर्थात् प्रकृति की खोज से उसने हमारी निद्रा को आन बिगाड़ा है-और हम जाग कर वेद रूपी सूर्य को प्राप्त हो के पश्चिम को भी प्रकाश से सुप्रकाशित करेंगे"। रात के अन्धेरे के भीतर जो थोड़ा सा प्रकाश होता है—उससे जागता हुआ पश्चिम लाभ उठा रहा है। परन्तु हम वेद रूपी दिन के होते हुये सोये होने के कारण प्रकाश से सर्वथा वञ्चित हैं। इसी लिये हम कहते हैं—कि पश्चिम हम से अधिक आर्य्य है। परन्तु स्मरण रखना चाहिये कि वेद रूपी दिन के सामने उनकी उन्नति तुच्छ है उनकी theories तथा परीक्षण experiments अन्धेरे में टटोलने की भांति है और जब तक वह वेद रूपी सूर्य की ओर नहीं आते—मनुष्य जीवन का उद्देश्य कभी न पायेंगे। रात के समय सब सोए हुए पर आधिपत्य जमाने वाला, एक जागने वाला मनुष्य अन्धेरे में किसी गढ़े में गिर कर अपने आप को नष्ट कर बैठे तो कोई आश्चर्य न होगा।इस लिये आर्य्य को वर्तमान सभ्यता से चकाचौंध न होना चाहिये प्रत्युत अपने श्रेष्ठ पित्रों की भांति वेद शास्त्रों को पढ़ें पढ़ावें जिससे सारे पश्चिम तथा सारे संसार के लिये सुख का प्रकाश करें।

[७] वेद किसी देश की भाषा में "नहीं" है

[८] वेदों से पूर्व संसार में कोई भाषा न थी वेद वाणी से संस्कृत और संस्कृत से सारे संसार की भाषाएँ निकली हैं-वेद वाणी परमात्मा की प्रकाश की हुई है।

(९) जितनी विद्याएँ इस भूगोल पर मनुष्य को ज्ञात हैं:—पदार्थ विद्या [Physics] शरीरतत्व विद्या [Physiology] रसायन विद्या (Chemistry) भूगर्भ विद्या [Geology) यन्त्र विद्या [Mechanics] ब्रह्म विद्या [Theology] न्याय [Logic] विचार विद्या [Psychology] इतिहास [History] प्राणी विद्या [Zoology) वनस्पति विद्या [Botany] खनिज विद्या (Minerology) ज्योतिष (Mathematics) (Geography and Astronomy)शल्य विद्या(Surgery) चिकित्सा (Medicine) नीति विद्या (Politics) कृषि विद्या (Agriculture) व्यापार

विद्या (Trade) व्याकरण, अस्त्र शस्त्र, युद्ध विद्या इत्यादि सर्व का निकास वेद है।

(१०) वेदों का राज्य संसार में वर्तमान है। क्योंकि जितने सृष्टि नियम (Laws of Nature] हैं। वह वेदों का राज्य ही है सृष्टि नियम के विरुद्ध कोई बात संसार में नहीं हो सकती है। सृष्टि नियम का तथा सृष्टि नियमानुकूल मानुष्य कर्तव्य तथा उद्देश्यों का वर्णन जिन पुस्तकों में है। और जो परमात्मा ज्ञान में पहिले दिन से मनुष्यों को देता है, वह वेद ही है, क्योंकि जो कपड़ा बनाना, दाल पकाना, भोजन बनाना, आग जलाना मनुष्य जानते हैं, वह भी पहिले २ वेदों ही से सीखा गया सो मूर्ख से मूर्ख देश में भी वेदों का कुछ न कुछ प्रकाश अवश्य है।

(११) मनुष्य भाषाएं अधूरी तथा झूठ फैलानेवाली हैं। इनके प्रचिरित होने का कारण झूठ आलस्य. अशुद्धोच्चारण निर्बलता भिन्न २ प्राकृतक अवस्थाएं तथा वेदों से अनभिज्ञता तथा अविद्या पाई जाती है।

(१२) वेदों का अनुवाद साधारण तथा कुछ एक बातों के लिये लाभदायक हो सकता है। जैसे वेदों में हिंसा नहीं है, मूर्ति पूजा नहीं है। वेद एक ईश्वर की उपासना सिखाते हैं, वेदों में बहुत से विषय हैं, इत्यादि बातों को सिद्ध करने. और विदेशियों के लगाए हुये दोषों का उत्तर देने के लिये। परन्तु वास्तविक ज्ञान इस से नहीं हो सकता। उसके लिए वैदिक विषयों से तथा उस विधि का ज्ञान जिसके अनुसार वह विषय वर्णित है आवश्यक है जो बिना अङ्गोपाङ्ग के नहीं हो सकता। तथा योग समाधि से साक्षात्कार की आवश्यकता है। जो एक शुद्ध अन्तःकरण (Unambitious mind) ही प्राप्त कर सकता है अन्यथा बड़े से बड़े विद्वान् को भी सम्भव है कि यह अनुभव हो कि—" वेदों में कोई क्रम नहीं एक विषय कई स्थानों में फिर २ कहा गया है। और एक ही स्थान में कई विषय बिना कारण ही इकट्ठे कर दिये गये हैं। पुनरुक्ति का भी कोई ठिकाना नहीं। फिर कई मन्त्र निरर्थक से भासते हैं, फिर कई मन्त्रों के ऐसे अर्थ किये गये हैं जो मन्त्रों से निकल नहीं सकते, इत्यादि, इत्यादि "।

(१३) अङ्गोपाङ्ग का अनुवाद भी वास्तविक रचना का काम

हो सकता जब एक * अधूरी बोली से दूसरी अधूरी बोली में किया हुवा अनुवाद अपनी वास्तविक शक्ति को खो बैठता है । तो भला एक सर्वोत्तम भाषा के स्थान में एक अधूरी बोली कैसे योग्य आदेश (substitute) हो सकती है ।

(१४) बिना वेद-ज्ञान कोई पूर्ण विद्वान (complete man) नहीं हो सकता- क्योंकि ईश्वर की शिक्षा के बराबर किसी विद्वान् की शिक्षा नहीं हो सकती ।

(१५) पूर्ण विद्वानों की संस्कृत ही होगी क्योंकि वेद वाणी विना आत्मिकज्ञान न आ सकेगी—

(१६) स्वामी दयानन्द तथा आर्यसमाज के प्रचार का कारण राजनैतिक (political) नहीं प्रत्युत धार्मिक है- क्योंकि जैसे संस्कृत शब्द सारे संसार की बोलियों में पाये जाते हैं- उसी प्रकार आर्य भाषा भारत में जहां एक ओर बोली जाती है दूसरी ओर भारत की शेष सारी बोलियों में व्यापक हो रही है। और दोनों अवस्थाओं में यह व्यापक, भाग अत्यन्त समान है- अर्थात् आर्य्य भाषा संस्कृत की सीढ़ी है जिस से कि भारतीय विद्वानों के लिये वेद शास्त्र पढ़ना और प्रचार करना सहज होगा।

(१७) ऋषि प्रणीत ग्रन्थों को इसलिये पढ़ना चाहिये कि वे बड़े विद्वान सर्व शास्त्रवित् और धर्मात्मा थे और अनार्ष अर्थात् जो अल्पशास्त्र पढ़े हैं और जिनका आत्मा पक्षपात सहित है-- उनके बनायें हुये ग्रन्थ भी वैसे ही हैं (सत्यार्थ प्रकाश पृष्ठ ६६) शेष फिर।

———o———

विद्या बड़ा धन है ।

प्यारी बहिनों व भ्राताओं ! कन्याओं की शिक्षा के वास्ते बहुत ज़ोर शोर मच रहा है लेकिन अभी बहुत से घर ऐसे हैं जिनके घर की स्त्रियां और प्रायः पुरुष कन्याओं की शिक्षा के बिल्कुल विरुद्ध हैं । उनका यह कहना है कि पढ़ी लिखी लड़कियों के चार आंखें होजाती हैं सो एक तरह से उनका कहना बिल्कुल ठीक है

* संस्कृत के सामने प्रत्येक भाषा अधूरी है ॥ अधिक सिद्धि के लिये देखो (Fountain head of religions) सब मतों का श्रोता पं० गंगाप्रसाद निर्मित ।

यानी दो आखें तो ईश्वर ने सबको दी हैं परन्तु दो आखें इल्म की होती हैं। ईश्वरीय आखों से तो सिर्फ हमें पास की ही चीज़ देख पड़ती है किन्तु विद्या की आखों से हमें दूर २ की चीज़ें दिखलाई देती हैं परन्तु हमारी बहिनें इसे बुरा समझ कर उस पर नहीं चलतीं। बहिनो! विद्या से कभी भी बुराई नहीं हो सकती यह विचार रखो सब बहिनों को चाहिये कि अपनी लड़कियों को अच्छी शिक्षादें उनको अच्छी २ किताबें पढ़ावें जिससे उनके दिल में धर्म्म और भलाई पैदा हो। पढ़ने से दुनियां की हालत भी मालूम होगी भलाई व बुराई के नतीजे समझेंगी। अगर तालीम के साथ लड़कियों को अकल व सहूर भी सिखाती रहोगी तो विद्या की वृद्धि बहुत जल्दी होगी और लड़कियों के बुद्धिमान होने से आपको भी प्रसन्नता होगी। कन्या का भी जीवन अच्छी तरह प्रसन्नता में बीतेगा अगर किसी पढ़ी लिखी लड़की को ऐसी ससुराल मिले जो उसकी शिक्षा को बुरा समझे तो उसे कितना दुःख होगा। विद्या पढ़ने के कारण कुछ भी हानि नहीं होती। विदुषी को सब भला कहतेहैं क्यों कि विद्या सीखने से बुद्धि अच्छी होजाती है पढ़ी लिखी कन्या सब काम सफ़ाई से करती हैं बहुत से लोग कहते हैं लड़की को तालीम सिर्फ संस्कृत की ही देनी चाहिये मेरी समझ में स्त्रियों को हिन्दी अङ्गरेज़ी संस्कृत सब सीखनी चाहिये। हिन्दी तो हमारी मातृभाषा है इसका सीखना तो जरूरही है और अंगरेजी हमारी राजभाषा है आजकल हमें इसकी ज़रूरत है लेकिन विद्या जो सीखो सब अच्छी है इल्म ऐसा धन है जिसे ग्रहण करने से गरीब भी अमीर हो सकता है, यह एक ऐसा रिश्तेदार है जो बिना एहसान के रोटी खाने को देता है, यह ऐसा नेता है जो आदमी को भलाई के रास्ते पर ले जाता है, यह एक ऐसा मित्र है जो मरते दम तक साथ नहीं छोड़ता यह ऐसा गुण है जिसकी बदौलत सैकड़ों हुनर आदमी सीख सकता है और इज्जत पाता है; यह ऐसा सौन्दर्य्य है जिसके कारण बदसूरत भी सुन्दर बन सकता है लेकिन फिर भी हमारा ध्यान इस ओर नहीं बहिनों! जिस विद्या में इतने गुण हैं। उन गुणों को अगर हम ग्रहण न करें तो अभाग्य समझना चाहिये। कोई वस्तु भी दुनिया में ऐसी नहीं है कि जिसके व्यवहार करने से टूटने फटने या चूराने का ख़याल न हो लेकिन एक विद्या ऐसी चीज़ है जिसके टूटने फूटने

घिसने और खो जाने का डर नहीं है नतो यह आग में जल सकती न पानी में डूबाई जा सकती और न कोई इसको बांट कर हिस्सा लगा सकता है बल्कि देने से और अधिक बढ़ती है अगर सोचें तो आपको मालूम होगा कि इलम से ज़्यादह प्यारी चीज़ कोई नहीं है जिसकी वजह से दुःख दूर हो या जिसकी फ़ायदे की उम्मेद रक्खें। विद्या सीखने से हमें सिर्फ यही फ़ायदा नहीं है कि हम अख़बार या किताबें पढ़ या कभीर किसी को ख़त डालें किन्तु बच्चों के पालन के लिये भी माँ को लायक़ होना चाहिये। बच्चों की परवरिश तो हर एक औरत करती है मगर अनपढ़ और पढ़ी लिखी में बहुत फर्क़ है। बच्चे के पालन से सिर्फ यही मतलब नहीं कि मा बच्चों को दूध पिला दिया कर बल्कि उनको बचपन से ही अच्छे रास्ते पर चलाए जिस्से बड़े होने पर उन्हें कुछ कठिनाई न झेलनी पड़े। जैसे छोटे से पौधे को सीधा करदें तो वह तुरंत सीधाहो जायगा और बड़ा होने पर अच्छा सुन्दर वृक्ष होगा इसी तरह हमारी बहिनें अपने छोटे २ बच्चों को सुमार्ग पर चलावें तभी हमारा और उनका कल्याण होगा अब मैं इस लेखको ख़तम करती हूं, मैं इतनी ज्यादह पढ़ी लिखी नहीं हूं। अतः मुझे अपनी हालत पर खुदही अफ़सोस आता है इसलिये मेरी यही प्रार्थना है कि कोई बहिन हमारी अनपढ़ न रहें और आगे बच्चों की उम्र भी हमारी गफ़लत से ख़राब नहो।

शिवदेवी।

——o——

भारत वर्ष में सुधार।

(४)

श्रीयुत पं० मन्नन द्विवेदी लिखित।

हिन्दुस्तान के सुधार के तीन युगों का मैं बयान कर चुका हूं। इस देश में सुधार की चौथी कोशिस ब्रह्मसमाज ने की है ब्रह्मसमाज इस देश में अपने ढंग में पहली ही संस्था थी। अभी तक हिन्दुस्तान के किसी समाज ने किसी विदेशी महात्मा को अपना महात्मा नहीं माना था और न साफ़ तौर से किसी विदेशी मज़हब की बातों को अपने में शामिल किया था।

संत सुधारकों की किताबों में अक्सर अल्लाह का नाम आया है लेकिन वहां 'अल्लाह' सिर्फ़ ईश्वर का दूसरा नाम है। मुसलमानी मज़हब से उससे कुछ मतलब नहीं है और न मुहम्मद साहब का नाम कहीं साफ़ तौर से आया है।

लेकिन ब्रह्म समाज ने तमाम दुनियां के महात्माओं को महात्मा माना। ब्रह्म समाज की प्रार्थना में ईसा, मूसा, मुहम्मद नारद, प्रहलाद सबके नाम आते हैं।

मेरे एक मित्र कहा करते थे कि ब्रह्म समाज ईसाई मज़हब से फ़र्क सिर्फ़ यही है कि वे लोग ईसा को ईश्वर नहीं मानते हैं।

इसमें कोई शक नहीं है कि ब्रह्म समाज में ईसाई मज़हब की नकल बहुत कुछ की गई है। जिस तरह कुछ२ मुसलमानी ढंग को अख्तियार कर संत महात्माओं ने मुसलमानी धर्म से हिन्दू धर्म की रक्षा की, उसी तरह "विषस्य विषमौषधम्" के अनुसार ब्रह्म समाज ने ईसाईपन को लेकर ईसाई धर्म के हमले से हिन्दू धर्म को बचाया।

अठारहवीं सदी में बंगाल की वही हालत थी जो बुद्ध भगवान के अवतार के पहले हिन्दुस्तान की थी।

पशुबलि के खून से बंगाल की वीर भूमि तर हो रही थी। धर्म में बुद्धि से कुछ भी काम नहीं लिया जाता था। उस वक्त और नौजवानों के लिये सिर्फ़ दो रास्ते थे। या तो वे आंख में पट्टी बांध, बुद्धि को बंधक रख कर प्रोहित जी की हां में हां मिलाते या पूर्वजों के चिर संचित धर्म से मुंह मोड़ कर ईसाई धर्म की शरण लेते।

ऐसे ही वक्त में राजा राम मोहन राय पैदा हुए। सन् १८३० में आप ने पहला ब्रह्म समाज खोला।

आप में एक ख़ास बात यह थी कि और मज़हब की बातों को ले लेने पर भी आप ने ब्रह्म समाज को हिन्दू रखा।

आदमी में एक स्वाभाविक बात यह होती है कि वह अपने देश, धर्म और जाति की बातों को ज़्यादे पसंद करता है। यह ज़रूर है कि समझ दार आदमी सत्य को सब जगह से ढूंढ लेता है लेकिन अपने मज़हब के अंदर सत्य पाजाने से उसको कुछ ज़्यादा ही खुशी होती है।

स्वामी रामतीर्थ महाराज एक दफ़े अंगरेज़ी जूता पहने और नारंगी साफ़ा बांधे अमेरिका में लेक्चर दे रहे थे।

एक अमेरिकन ने कहा।

"स्वामी जी, जूते तो हमारे देश के पहनते हो लेकिन पगड़ी अपने देश की बांधते हो।"

राम ने जवाब दिया

"प्यारे! पैर तुमारे ले लूंगा लेकिन सर तो अपना ही रखूंगा"

अफ़सोस की बात है कि ब्रह्म समाज के दूसरे मुखियों ने इस बात का ख्याल नहीं किया।

बढ़ते २ महात्मा केशव चंद्रसेन के वक्त में तो ब्रह्म समाज पूरा ईसाई मज़हब हो गया।

केशव चन्द्रजी ने कहा भी है :—

"Our religion is a Christianised Hinduism or a Hinduised Christianity and I can say that we are not Hindus"

महात्मा केशवचन्द्र के मरने के बाद ब्रह्म समाज की हालत बिल्कुल ख़राब हो गई।सारे हिन्दुस्तान में ब्रह्म समाजियों की तादाद कई हज़ार से ज्यादे नहीं है।

इसकी क्या वजह है?

मेरे ख्याल में ब्रह्म समाज में कुछ ऐसे मसाले हैं जिनकी वजह से ब्रह्म समाज विद्वानों और फ़िलासफ़रों के लिये तो सबसे अच्छा मजहब है लेकिन साधारण लोगों के लिये वह बेकार है। ब्रह्म समाज अपने ढंग का एक अनूठा मज़हब है। और मज़हबों की तरह इसने अपना रास्ता महदूद नहीं रखा है। और न यह किसी (Dogma) या इलहाम को मानता है। अपनी आत्मा और बुद्धि इसके लिये पैग़म्बर है और मंद २ चलने वाली हवा के ठंढे २ झोंके और अठखेलियां करने वाली नदी की धारा उनको परमात्मा का संदेश और उपदेश देते हैं।

यही एक मज़हब है जो सत्य को सब जगह से लेने को तैयार है चाहे वह वेद में हो या जिन्दावस्ता में, बाइबल में हो या क़ुरान में।

ऐसा मज़हब बड़े २ विद्वानों और फ़िलासफरों के लिये बहुत ही मुनासिब है।

यही वजह है कि हमारे बड़े २ विद्वान करीब २ सब ब्रह्म समाजी हैं।

डाक्टर पी० सी० राय, डाक्टर जे० सी० बोस, मिस्टर एस० पी० सिंह, सर गोविंद नारायण चन्द्रावरकर आदि विद्वान एक तरह से ब्रह्म समाजी हैं।

लेकिन संसार में बड़े २ फ़िलासफ़रों और विद्वानों की संख्या बहुत थोड़ी है।

इसी लिये ब्रह्म समाज भी इने गिने लोगों में फैल कर रह गया। मज़हब वह चल सकता है जिसमें अपढ़ लोगों के लिये भी काफ़ी मसाला हो और विद्वानों के लिये भी।

साधारण लोग वही मज़हब पसंद करेंगे जहां उनको ईश्वर की दी हुई किताब मिले। सूरत शकल वाला बहादुर और हमदर्द ईश्वर जहां पूजने को मिले। तकलीफ़ के वक्त में आह की आवाज़ सुनकर ईश्वर कभी २ नंगे पैर आसमानी तख्त छोड़ कर हमारी मदद को भी आ जाय। ऐसी एक भी बात ब्रह्म समाज में नहीं थी इसलिये उसकी तरक्क़ी नहीं हुई।

ब्रह्म समाज के रास्ते में दूसरी रुकावट की बात यह है कि विदेशी मज़हब क्रिश्चियैनिटी (Christianity) के ठप्पे इस पर ज़रूरत से ज्याद लग गये हैं।

जो हो इन ऐबों के होते हुए भी और सर्व साधारण में न फैलने पर भी ब्रह्म समाज ने बहुत काम किया है। चाहे ब्रह्म समाजियों की तादाद बहुत थोड़ी ही हो लेकिन ब्रह्म समाज ने तमाम बंगाल पर अपना असर डाला है।

सामाजिक सुधार के काम में भी ब्रह्म समाज का नाम सबसे आगे है।

ब्रह्मसमाज का जन्मदाता पहला हिन्दू था जिसने सती के उठाने की कोशिस की।

ब्रह्मसमाज ने परदे को तोड़ा छुआछूत के आडम्बर को दूर किया। ब्रह्मसमाज ने बंगाल के बहु विवाह को रोका, स्त्री शिक्षा का प्रचार किया।

ब्रह्म समाज ने जन्म से जातियों की प्रथाको तोड़ा। विधवा विवाह का भी इसने प्रचार किया। अबभी जब हम घोष, बोस, मुकर्जी और भट्टाचार्य्य को एक साथ सगे भाई की तरह "माशार" करते देखते हैं, एक साथ भोजन करते पाते हैं अब भी जब हम पचीस तीस

बर्षकी बंग बालिका को अविवाहितावस्था में बी० ए० एम० ए० का इम्तहान पास करते हुए पाते हैं, परदे को परदे में डाल प्लैट-फ़ार्म पर धड़ीले से खींच देते हुए देखते हैं, काली के भयंकर स्वरूप के उपासक बंगालियों को जब हम एक परम पिता, सर्वान्त-र्याम, सर्वनियंता की सेवा में सन्नद्ध पाते हैं तब स्वर्गीय राजा राम मोहनराय राय की मधुर मूर्त्ति सामने नाचने लगती है।

आज कल राजा राममोहन रायकी बहुतसी बातें बिल्कुल मामूली मालूम होती हैं। अबतो एक मामूली स्कूली लड़का भी खड़ा होकर मूर्तिपूजा के खिलाफ में दो बात कह देता है। छुआ छूत के कानून को तोड़ता है। अब वह दिन आगया है कि सना-तनधर्म सभायें तक स्त्रीशिक्षा का प्रचार कर रही हैं। अब ऐसे लोग बहुत कम हैं जो स्त्री शिक्षा को बुरा या पाप बतलावें। ज्यादे से ज्यादे वे लोग स्त्री शिक्षा के साथ में अगर और लेकिन लगाते हैं। लेकिन स्वर्गीय राजा राममोहनराय उस वक्त में पैदा हुए थे जब मुसलमानों खानेकी महक नाक में आने से हिन्दू पतित समझा जाता था, जब मूर्तियों की निंदा करने से बाप बेटे को निकाल देता था।

बीर लोग मिहनत करके भयानक और गुंजान जंगल को साफ़ कर देते हैं तो मामूली से भी मामूली मुसाफ़िर बे खटका चला जाता है। राजा राम मोहनराय खुद एक बड़ी ऊंची जाति के ब्राह्मण थे। अगर वे चाहते तो दूसरों से अपनी पूजा करवाते हुए, सुख से दिन बिताते। लेकिन सत्यके लिये उन्हों ने क्या २ कोशिसे नहीं की? क्या २ तकलीफें नहीं उठाई?

हमी लोगों की बिहतरी के लिये वह बहादुर रिफ़ार्मर. भारत माता का सच्चा सपूत दूर देश समुद्र पार में जाकर मरा।

राम मोहनराय नहीं हैं लेकिन उनके यश, नाम और काम सदा अमर रहेंगे।

महात्मा मैक्समुलर ने कहा है "इसमें शक नहीं कि जब राम-मोहन ने आखिरी प्रार्थना करके स्टैपल्टेनग्रोव में अपना प्राण वायु छोड़ा तब उनको अच्छी तरह मालूम था कि चाहे जो कुछ हो मूर्तिपूजा मिटेगी और उनका नाम अचल रहेगा"

मन्ननद्विवेदी गजपुरी।

—o—

दक्षिण में लेदे की यात्रा ।

पं० रामगोपाल मिश्र लिखित ।

बड़े दिनकी छुट्टी थी- बैठे २ जी में आया आओ कहीं की यात्रा करें, चट के पट एक दर्जन विद्यार्थी कपड़े लत्ते से रैट हो तय्यार हो गये, मदरास की यात्रा की ठानी । कानसेशन मंगा कलकत्ते होते हुये हमलोगोंने मदरास की राह ली । एक दिन कलकत्ते में ठहरकर जहां तक होसका वहां के प्रसिद्ध २ स्थानों की देखा भाली की । हमलोगों के सौभाग्य से उन दिनों वहां एक जंगी जहाज आया हुआ था, बस समाचार मिलते ही सब को उधरही की धुन समाई, आव देखा न ताव ज्यों त्यों करके जहाज तक पहुंची तो गये और बिना पूछे गछे खटाखट उसपर चढ़ने लगे । अभी दोही चार सीढ़ी चढ़े होंगे कि एक अंग्रेज़ मल्लाह (Sailor) ने रोका । मैं अभी तक तो सबसे आगे २ था परन्तु उसको देखतेही झट खिसक के पीछे हो रहा, खैर बात चीत करने से विदित हुआ कि बिना कप्तान साहेब की आज्ञा के हमलोग जहाज पर नहीं जासक्ते । अब कप्तान साहेब की आज्ञा लेने का जतन ढूंढ़ना पड़ा । हम सब वहां से लौटं पड़े, मैं फिर सबके आगे होलिया । हमारे सुप्रसिद्ध सर्वप्रिय प्रिनसिपल मिस्टर आरन्डेल हमलोगो कें संग कलकत्ते ही में थे अब सबने उनकी ओर धावा किया, भाग्य वश वे अपने स्थान हीं पर मिल गये और उनकी सहायता से हमको जहाज देखने की आज्ञा प्राप्त हो गई। अब क्या था लतड़ पतड़ हम सब के सब दोही मिनट में जहाज के ऊपर दिखाई देने लगे । किसी की कुछ समझ में तो आता न था जिसका जिधर को मुंह उठा उधर ही को दौड़ निकला और भौं-चक्का हो आंखे फाड़ २ मशीनरी को घूरने लगा । हमारे संग दिखाने और समझाने को एक मल्लाह कप्तान साहब ने नियत करादिया था, परन्तु हम सबोंने एकही संग सहस्रों प्रश्न करके उसको ऐसा चकरा दिया कि उससे एक का भी उत्तर देते न बन पड़ा । अब किसको ताब थी जो दो चार उसके साथ थे वे भी उसे छोड़ औरों की भांति इधर उधर दौड़नें लगे । हमलोग कभी तहखाने में पहुंचें और कभी छत पर दौड़ जायं, कभी तोप के मुंह में हाथ डालें और कभी रेलिंग पर सवार होजायं हमारे चंचलपन धृष्टता पर अथवा बुद्धिमानी वा मूर्खता पर सब मल्लाह खूब हंसते

थे। हम सबको भी उन्हें देखकर हंसी आती थी। घंटे भरकी दौड़ धूप के बाद जब हमलोग थके तब जहाज से उतरने का विचार किया परन्तु इस भयसे कि नीचे जाकर फिर ऊपर न आने पावेंगे उसी पर बैठ कर आराम करने लगे इतने में किसीने आकर कहा यदि आप लोग देख चुके हों तो जाइये। अब क्या करते हैं परन्तु हम सबने एक और दौड़ लगाने का निश्चय किया अबकी बेर बड़ी सावधानी से धीरे २ चले, दौड़ने की तो सामर्थ्य ही न थी और सब पुर्जों को भली भांत देखा जहाज बहुतही साफ़ था सब चीज़ें अपने २ ठिकाने पर धरी थीं चारों ओर तोपें लगी थीं और मल्लाह लोग बाल्टी में पानी भर भर के ऊपर के तख्ते धो रहे थे, कुछ सिगरट पीरहे थे और कुछ समुद्र की शोभा देख रहे थे। जहाज इतना सुन्दर सुडौल और मज़बूत था कि हमलोगों को आश्चर्य होता था। अन्त में हम सब को नीचे उतरनाही पड़ा दिन भर के थके थकाये अपने स्थान पर पहुंचे और जो कुछ सबेरे से सांझ तक देखा था उसको याद करने लगे। मुझे तो म्यूज़ियम (Museum) में सबसे अच्छी जो वस्तु जान पड़ी वह बर्मा नरेश थीबा का राजसिंहासन था और जूआलाजिकल गार्डिन (Zoological garden) में जो सब से विचित्र जीव देखा वह हिपापाटेमस (Hippopotamus) था यह जानवर केवल मिश्र की नील नदी में ही पाया जाता है और कहा जाता है कि संसार में इससे बेडौल और कोई जानवर नहीं होता। यह कलकत्ते में भी विशेष कर पानी ही में रहता है। हम लोगों ने अपने हाथ से उसे कुछ खिलाया भी और उसके रूपकी प्रशंसा करते हुये वहां से चले आये। अभी थोड़े दिन हुये हैं कि इसने अपने रखवाले को मारडाला।

कलकत्ते से हमलोग वालटेयर को रवाना हुये। रास्ते में सूझी भला हिन्दू होके श्रीजगन्नाथ जी के दर्शन करने का ऐसा सुन्दर अवसर छोड़ देंगे झट सबके सब खुर्दा जंक्सन पर उतर पड़े यहां से एक लैन पुरी को गई है। पंडोंने हम सबको आ घेरा इस आपत्ति से बचने के लिये हमने स्टेशन मास्टर साहेब के दफतर के निकट अपना डेरा डाला परन्तु भय यह था कि हम सब पर असबाब का ज्यादा इससे नीचे बक्सादि पाट कर उसके ऊपर सबने अपने बिछौने खोल दिये। इससे निश्चिन्त होकर मैं पंडों की तमाशा

देखने को स्टेशन पर टहलने लगा। बस अब क्या था सबोंने
की तरह मुझे आन घेरा मैं तो इसलिये गया ही था और मी
से मुंह बना चलने लगा। सभोंने प्रश्नों की बौछार आरम्भ करदी
मैंने पहिले दो एक का उत्तर दिया परन्तु एक उत्तर का अर्थ
प्रश्न अधिक समझ, अंत में चुप हो रहा जब देखा कि अब तमाशा
देखने के स्थान पर स्वयम् ही तमाशा बने जाते हैं तब मैं ज्यों
करके उनसे पीछा छुड़ा अपने साथियों की ओर लपका वहां आ
देखा कि सब बोरिया बन्धना बांध रहे हैं डर तो पहिले ही
लगा था मालूम हुआ कि एक गार्ड साहेब असबाब तौलने को
गये हैं। मैंने उनका पीछा पकड़ा और ज्यों ही एकान्त में
इनसे उनके हाथ में १) रु० रखदिया चौंधिया के पीछे को जो
सोई मैंने अंग्रेज़ी के दनादन लम्बे २ फ़िक़रे उगल डाले। गार्ड
भी विलायती थे-मुंह बना के बोले. नहीं २ मैं रिश्वत नहीं
मैंने कहा जी हां यह तो मैं भली भांति जानता हूं। पर यह रिश्वत
थोड़ेही है यह तो आपके मिठाई खाने के लिये है और मुझे
यह विचार है कि आप कोही असबाब तौलवाने में कष्ट हो
साहेब बहादुर राजी तो होगये पर रुपया देख २ के कुछ
लगे। मैं समझा शायद इनका मतलब यह है कि एक रुपया में
बोतल न मिलेगी। जी पर पत्थर रख १) और चढ़ाया
बहादुर बहुत प्रसन्न हो 'थन्कयू' (Thank you) करके
को बढ़े। मैं पीछे को लौटा और फिर बिछौना बिछा रात को
लोग आनन्द से सोये।

सवेरे तड़के पुरी की गाड़ी में बैठे। ड्योढ़े दर्जे के दूसरे
में एक मारवाड़ी यात्री और उनकी धर्म पत्नी थीं। हमलोग
हंस खेल रहे थे, एक के मुंह से निकल गया भाई हम तो जगन्नाथ
पुरी देखेंगे यदि समय मिला तो दर्शन भी करलेंगे। कहीं
शब्द सेठजी के कान में पड़ गये, लगे "आरिया आरिया"
शोर मचाने हमलोगों की हंसी का अब क्या ठिकाना था।
जी बहलाने को बहाना मिला, लगे सब के सब दयानन्द सर
की प्रशंसा करने, सेठ जी का कोप अब इतना होगया कि वे
होकर गाड़ी में कूदने लगे और हाथ पांउ फेक २ शिक्षा
जभी वो कुछ मंदे पड़े हमलोग ... कहिदें और फिर

कूदने लगें उनकी धर्मपत्नी विचारी बहुतेरी चुटकी काटें हाथ दबावें पर सेठ जी किस की मानने वाले थे। अन्त में हाय कर भद्द से अपनी जगह पर गिर पड़े। एक हम में से बोल उठा भाई प्रसाद तो हम कभी न खायेंगे मैंने कहा "अजी वाह प्रसाद क्या खाते क्या मुसलमान हैं जो सब का छुआ खालें जहां चाहें वहीं भोजन करने लगें। न चौका न औका।" बस निकाली सेठ जी ने बिल्ली की सी आखें और दौड़े भूके कुत्ते की तरह काटने। वह तो भाग्य वश वीच में लोहे की जाली लगी थी, सेठ जी इधर न आ सके। भला मुसलमान शब्द वे कैसे सहन कर सक्ते थे। "तुम कोढ़ी हो जाओगे, तुम्हारी आखें फूट जायंगी, तुम सब के सब समुद्र में डूब जावोगे" इत्यादि २ वाक्यों से सेठ जी कमरे को गुंजाते रहे। हम सब हंस २ के कहते जाते थे "देखो भाई पास न जाना काब ही तो खायंगे" मैंने कहा "कि दांत तो टूट गये हैं पर बकोट अवश्य ही लेंगे।" इसी प्रकार कलोलें करते हम लोग पुरी स्टेशन पर पहुंचे। उतरते समय उनकी पत्नी से हम लोगों ने क्षमा मांगी कि माता हम लोग बालक हैं। चंचल स्वभाव हैं अपराध क्षमा कीजियेगा। जब सेठ जी उतर गये तो हम लोग भी उनकी श्रद्धा की प्रशंसा करते हुये उतरे देखते क्या हैं कि सेठ जी पेट के बल स्टेशन पर लेटे हैं। अब और भी हंसी न रुकी एक दूसरे को बुला २ के तमाशा दिखाने लगे। मैंने कहा कहीं ऐसा न हो सेठ जी लपक के तमाम रास्ते का क्रोध अब अवसर पाके निकालने लगे। मैं ने भली भांति मुंह बना के हंसी रोक कर कहा "भाई सेठ जी अपने पंडा महाराज को साष्टांग दंडवत कर रहे हैं यात्रा का फल ऐसे ही ऐसे भक्तों को होता है और क्या हम ऐसे दुष्टों को होगा" सेठजी के मुख पर प्रसन्नता के चिन्ह झलकने लगे सेठजी तो सस्ते छुटे अब पंडों ने हमलोगों को घेरा "कहां से आते हो? कौन तुम्हारा पन्डा है? तुम्हारे बाप का क्या नाम है?" इत्यादि प्रश्नों से सर गंजा कर दिया। यहां एक बाप हो तो बताया जाय आज दर्जन लड़कों के एक दर्जन बाप किसका किसका नाम बतावें मैं खुदही इस बिपत में पड़ चुका था। सब से कह दिया। भाई यदि प्राण बचाना चाहते हो तो मौनव्रत धारण करो। बस सबके सब चुप साध गये। इस पर भी उन्होंने पीछा न छोड़ा। हमलोग

ठेले पर असबाब लाद मन्दिर की ओर चल तो दिये पर यह नहीं
जानते थे कि कहां जांयगे इधर यह डर लगा था यदि यह
पंडे जो पीछे पड़े हैं एक एक पुलिन्दा भी उठाकर चलते बने
हमलोग क्या करेंगे। मैंने कुली से पूछा "यहां कोई धर्मशाला है"
उसनें कहा "हां" मैं ने कहा "बस वहीं चल" मुंह सुनते
फिर क्या कहिना था प्रश्नों का ढेर लगने लगा। मार २ के हमने
धर्मशाला के फाटक पर पहुंचे अब पंडों ने ठेला पकड़ लिया
घुसनेही न दें। अन्त में हम सभों को क्रोध आया और कुछ
बुरा कहा तब उन्हांने ठेला छोड़ा परन्तु सबके सब फाटक
जम के बैठ गये। हमलोगों को शान्ति मिली तो जी में जी आया
कमरे खुलवा के देखे और एक को साफ़ करा उसमें असबाब
और कुछ देर आराम किया। सुनते हैं नगर भर में केवल यही
धर्मशाला है और यह बड़ी अच्छी दशा में है क्योंकि प्रायः
यात्री पंडों के यहां ठरते हैं इस धर्मशाले में बड़ी शान्ति रहती है
कुछ देर पंडे फाटक पर ठहिरे, अंत में हम में से किसी को बाहर
आते न देख श्राप देकर वहां से विदा हुये हमलोगों ने एक ब्राह्मण
देवता को बुलाकर अपना मुखिया बनाया उनके तीन लड़के भी
आगये और वे चारो जनें हमलोगों को काम धाम करने लगे।
बिछा ४-६ घड़े मंगा सब प्रकार संतुष्ट हो हमलोग समुद्र
को चले वहां पहुंचकर देखा तो सेठ जी नारयल हाथ में लि
पधार रहे हैं। मैंने झुक के सलाम किया। सेठजी ने मुंह फेर लि
अब लगे सब के सब तालियां बजाने सेठजी खड़ेही खड़े समा
आगये। हमलोग स्नानादि में लगे और फिर मन्दिर की ओर द
करने को बढ़े। सुना कुछ समय में फाटक बन्द होजावेगा इस
दर्शनों की जल्दी पड़ी। ज्यों त्यों कर समय पर मन्दिर के द्वार
पहुंचे।

यह मन्दिर देखने में कुछ भी सुन्दर नहीं है परन्तु बड़ा वि
है। आज कल के बहुतेरे किलों से कहीं मजबूत है। मन्दिर के
पर एक बड़ा खम्भ गड़ा है। यात्रियों की भीड़ लगी हुई थी।
लोग जब भीतर घुसनें लगे तब चाम की सब चीजें, फेल्ट
मनी वेग, कैमरा (Camera) आदि बाहर ही रखवा लिये
हमारे ब्राह्मण देवता हमारे संग थे। अब किसी पंडे ने हमें न छेड़ा

धोखा खा गये नहीं तो दर्शनों के भी लाले पड़ते। जाने कितनी कोठरियों में से होकर हम लोग भीतर भेजाये गये। अब ज्यों २ आगे बढ़े अन्धेरा ही अंधेरा दीख पड़। मेरा तो चित्त ठेकाने नहीं था। चारों ओर क्या हो रहा है कुछ जान न पड़ता था। अन्त में हम लोग ऐसे अंधेरे घर में पहुंचे कि एक दूसरे को कठिनाई से देख सक्ते थे, रास्ता भी ऊंचा नीचा था और अब गिरे तब गिरे की होरही थी। मैं तो दो एक बेर औंधा जा पड़ने से बचा सबने सहारा पाने को एक दूसरे का हाथ पकड़ लिया परन्तु जो ब्राह्मण हम लोगों के साथ था वह भी बताता चलता था कि अब नीचा है अब ऊंचा है और स्वयम् बड़ी सरलता से उलटा चलता जाता था। इससे निकल के हम लोगों को आगे कुछ उजेला दीख पड़ा, मालूम हुआ कि सामने के कमरे में मूर्तियां हैं और घी के बहुत से चिराग जल रहे हैं इस अंधेरे कमरे से मूर्तियों के कमरे में जानेको एक प्रकार की नीचे की ओर को सीढ़ियां हैं हम सब सीढ़ियों से उतरने लगे तो एक और विपत में पड़ें। प्रायः हर एक सीढ़ी पर दोनों ओर कुछ लोग झाडूसी लिये खड़े थे और सबको उससे छूते जाते थे या कहिये मारते जाते थे रास्ता वैसे नहीं सूझता था ऊपर से झाडू की मार पड़ रही थी और सो भी ज्यों २ आगे बढ़ते जांय झाडुओं के वार भी अधिक होते जांय लेदे के मूर्तियों तक पहुंच ही गये। अब तनिक सांस लेनेका समय था क्योंकि ज़मीन हमवार थी और झाडूवाले भी पीछे रहिगये थे सो भीड़ भाड़ के धक्कोंने रही सही बुद्धि भी ले डाली हमारे साथियों में से एक साहब हमसे भी अधिक चकरा गये थे और जगन्नाथ जी की काली मूर्ति को देख कर लगे "who is the black fellow, who is that black fellow" (वह काला आदमी कौन है वह काला आदमी कौन है) कहने यहां डरके मारे वैसेही प्राण सूखे जाते थे इनकी गरजना सुन के और भी जीवन की आशा जाती है यदि कोई पंडा समझ पाता तो वहीं काटके डाल देता किसी को पता भी न चलता। मार मार के उन्हें चुप किया अब तो यह पड़ी थी कि कब यहां से निकलें मन्दिर में तीन मूर्तियां हैं श्री जगन्नाथ जी की, श्री बलदाऊ जी की और श्री सुभद्रा जी की ये मूर्तियां देखनें में तनिक भी सुन्दर नहीं हैं मैंने पहिले बलदाऊ जी और सुभद्रा जी को साधा-

रखा प्रणाम करके निपटाथा। जब श्री जगन्नाथजी की बारी आई तो अधिक श्रद्धा दिखानेके लिये तनिक मस्तक भी अधिक झुकादिया। मस्तक झुकाना था कि मूर्तियों के आगे की चौखट जिस पर चढ़ने के लिय प्रति मूर्ति के आगे एक २ लोटा सा रक्खा है ठांइ से मेरी खोपड़ी में बैठा, गिरते २ बचा और बाहर की ओर दौड़ा, मेरा ख्याल था कि मेरा सर फट गया है हाथ सर में लगा के देखा तो हाथ पर लाली पाई। जी में समझ लिया कि सेठ जी के वाक्य सत्य होगये अब पुरी ही में हमारी अन्त गति हो गई सभी लोग दौड़ाये हुये थे और मेरे पीछे २ लपके सीढ़ियों पर पहुंचते ही जिन्हें पहिले झाडुओं से ख़बर ली थी अब कपड़े थामें, मैं तो अपनी धुन में था आधा कुर्ता झर्र करके पन्डे के हाथ में रहगया और आधा मेरे बदन पर खैर मैं तो किसी प्रकार निकल आया अब साथियों की छीना झपटी पड़ी जिन महाशय के यहां हमलोग जा ठैरेथे वे भी साथ हो लिये थे। हमलोगों के सौभाग्य से और अपने दुर्भाग्य से वे तनिक ज़रुरत से ज़्यादा मोटे हैं। किसी प्रकार उनकी देह में पेट का अंश अधिक है बस सब ने मोटा सेठ समझ सब को छोड़ उन्हा का पीछा लिया। वे बिचारे थैली में हाथ डाल और निकालते महा कठिनाई से बाहर निकले उनकी ऐसी दशा देख मैं बड़े अदब से उनके पीछे खड़ा होगया। सब साथियों ने ऐसाही किया। तब न बनी तो अब बनी। इतना आदमियों के सेठ समझ सबने मोटे सेठ से जी खोल के भेंट की अब जिधर जाते उधरही कुछ मूर्तियां दिखाई पड़ें और मोटेसेठ को कुछ न कुछ चढ़ानाही पड़े। इस प्रकार हमलोग भीतरी द्वार तक पहुंचे और सुस्ताने को बैठगये। जब कुछ चित्त ठिकाने आया तो उठकर मन्दिर का बाहरी भाग देखने लगे। मैं भी अब फिर उछलने कूदने लगा था क्योंकि जिस लाली को मैं अपने मस्तक पर खून समझा वह असल में सेंदुर था, असभ्यता की निशानी इस मन्दिर में कुछ ऐसी अश्लील मूर्तियां हैं कि जिनका वर्णन नहीं कर सकता दुष्ट पन्डों की दुष्टता इससे अधिक और किसी बात से नहीं जानी जा सक्ती और उस पर विशेषता यह कि समस्त मन्दिर तो पुराना मालूम पड़ता है परन्तु यह मूर्तियां बहुतही साफ रंगीन लिपी चुपड़ी और वारनिश की हुई हैं जिससे जाना जाता है कि प्रति वर्ष

उन पर रंग फेरा जाता है और सारे मन्दिर में केवल उन्हीं की बड़ी सावधानी से मरम्मत होती है। और मूर्तियों से तुलना करने से यह साफ़ जान पड़ता है कि यह अश्लीलमूर्तियां अभी हालही की बनी हुई हैं। पन्डों को धिकारते इन अश्लील मूर्तियों के दर्शनों से रूष्ट होते हमलोग मन्दिर के बाहर निकले। भीतर द्वार बन्द हो चुके थे देखें तो सेठ जी भौंचके बने कमर पर हाथ रक्खे पेट निकाले खड़े हैं। हमलोगों से न रहा गया खिलखिला के हंस पड़े। सेठ जी झटसे दूसरी ओर को खिसक गये हम लोगोंने अपनी चाम की चीजें लीं और वहांसे चलते बने। कुछ दूर पर देखें कि एक अंग्रेज़ बन्दूक लिये एक बन्दर की ताक में घूम रहा है। बन्दर मन्दिर पर बैठा था परन्तु अंग्रेज़ महाशय कभी२ अपनी एक आंख मीच २ के निशाना भी मारते हैं अब हमलोगोंसे न रहा गया कूदही तो पड़े पूछने से मालूम हुआ कि यह कलेक्टर साहेब हैं और बड़े पन्डे की आज्ञा से मन्दिर ही पर बन्दर का शिकार करेंगे यह सुन तमाम शरीर में आग लग गई भला कलेक्टर साहेब और बड़े पन्डे की बात में कौन हाथ डाले। हम सब अपने मोटे सेठ को प्रसाद लाने के लिये छोड़ धर्मशाला की ओर चल पड़े।

सवेरे से सोलहो दंड एकादशी होरही थी अब पेट में बिल्ली और चूहों का युद्ध आरम्भ हुआ. धत्तेरे की धत्तेरे की करते करते मोटे सेठ की गाड़ी आती दिखाई पड़ी। जान में जान आई सबके सब प्रसाद लेने बाहर ही दौड़ आये परन्तु मोटे सेठ कोरे कारे आये थे वहीं से आवाज़ लगाने लगे "हम प्रसाद नहीं लाये" मैं तो अपना सर पकड़ रास्ते ही में बैठ गया बाद को मालूम हुआ कि जिस समय यह प्रसाद मोल ले रहे थे एक किसी नीच जाति के लड़के ने एक हांडी में से कुछ दाल निकाल के मुंह में रक्खी और "अच्छी नहीं है" कहिके मुंह मे से निकाल उसे उसी में फिर डाल दिया यह देख इनकी रुचि ऐसी फिरी कि आव देखा न ताव कोरे कारे महादेव की तरह भाग पड़े। मोटे सेठ जी भूक के मारे और भी भिन्ना रहे थे यद्यपि इन्होंने पाउभर मीठा लेके भोग लगा लिया था परन्तु एक पाउ मीठा विचारे की किस २ कोख को शान्ति देता। यह फिर नगर में घुस और एक घंटे में ढूंढ़ ढूंढ़ के किसी मथुरा के हलवाई से पूरी बनवा के लिये दिये पहुंचे इधर

धर्मशाला में बहुत से नारियल छुहारे के पेड़ थे हमलोगों से और कुछ न बन पड़ी तो कच्चे पक्के फलों पर वार करना आरम्भ किया पत्तों और धूल सहित पहिले तो भक्षण करनेकी ठानी फिर ज्यों २ पेट में पड़ने लगा बुद्धि भी ठिकाने आने लगी। पहुंची लो खड़ेही खड़े रास्ते में भस्म होगई परन्तु अब सब का पेट भरा था, फिर मगरमस्ती सूझी लेकिन नींद का ऐसा झोंका आया कि सब के सब घोड़ा बेच सो रहे। संझा को कुछ सूखा प्रसाद मठा आदि मोल ले वालटियर को कूच किया।

जगन्नाथ पुरी यथार्थ में कोई बस्ती नहीं है केवलमन्दिर के कारण उसके आस पास मकान बन गये हैं और वस्ती भी अच्छी होगई है यहां की मिट्ठी लाल होती है और नारियल के पेड़ोंसे चारों ओर बड़ी शोभा फैल रही है। यहां का दृश्य बड़ाही मनोहर है और समुद्र तट की बड़ी प्यारी माया है स्त्रियां यहां हल्दी में तेल बहुत लगाती हैं और इससे उनका रंग पीला जान पड़ता है यहा पर्दा की रीति नहीं जान पड़ती। स्त्रियां अपना सर खुला रखती हैं और बहुत रूपवान होती हैं परन्तु पुरुष काले और प्रायः कुरूप होते हैं।

हमारे सुप्रसिद्ध प्रिनसिपल आरेन्डल वालटेयर पहिलेही पहुंच गये थे और उनकी ओर से सवारी आदि का प्रबन्ध था हम सब ज्यों ही रेलसे उतरे इतने में एक टी. टी. सी. ने कहा असबाब तौला जावेगा, जान सूख गई जब तक वे स्टेशन मास्टर साहेब के पास गये मैंने झड़ाके से एक बैलगाड़ा भर के असबाब लदवा दिया अब जो टी. टी. सी. महाशय स्टेशन मास्टर को लिये हुये आये खड़े चकराये इतने में मैंने जो नौकर हमलोगों को लेने आये थे उनको भी एक लैन में खड़ा कर दिया। स्टेशन मास्टर साहब असबाब और आदमियों को देख मुसकराते हुये चले गये। टी॰ टी॰ सी॰ जलके ख़ाकही तो होगया, लगा स्टेशन पर कुछ ढूंढ़ने अभाग्य वश जो बैलगाड़ी माल गोदाम के पास लदवादी थी उसे जाने को स्टेशन के सामने के अतरिक्त कोई रास्ता ही न था वह वहीं खड़ी रही टी. टी. सी. के मुख में तो कालिख पुत गई इससे वह भी जी छोड़ के हमलोगों के पीछे पड़ गया था असबाब भरी गाड़ी उसे दिखाई पड़ी सो फूल के कुप्पा होगया। असबाब फिर

उतारा गया टी० टी० सी० दौड़ा २ स्टेशन मास्टर के पास फिर से गया परन्तु अबकी वे न आये। दुर्भाग्य से मैं सारी पारटी का बनारस ही से मुखिया बनाया गया था। यार लोग चट तांगों में लद २ के चलते बने और केवल मैं और मोटे सेठ जी रहगये। हम दोनों ने बहुतेरा ज़ोर लगाया परन्तु यह देशी क्लर्क थे दाल न गली ३२) पूजा चढ़ाना पड़ा। रो पीट असबाब फिर से लदा हम दोनों भी एक तांगे में लदगये और संझा को विज़ीगापट्टम पहुंचे। स्थान पर पहुंचे तो ताला बन्द, सुना आरन्डेल साहेब का व्याख्यान टाऊन हाल में होरहा है। बस वहीं का रस्ता नापा, आधा व्याख्यान हो चुका था अंधेरी रात थी! हम दोनों धड़धड़ाहट की आवाज़ सुन व्याख्यान छोड़ टाऊन हाल के बाहर निकल पड़े किसी को कुछ ख़बर न थी कहां हैं। मैं बाहर टहलने लगा। सामनेही समुद्र था और मनोहर वायु चल रही थी। मैं रेत पर लेट गया। फिर न रहा गया कूदता फांदता आगे पहुंचा' कच्च से दोनों पाउं पानी में, अबकी मैं समझा कि बस यात्रा पूरी होगई। पीछे को प्राण लेकर भागा और पीछे २ समुद्र की मौज, धड़ाम से टाऊन हाल के जीने पर औंधे मुह जा पड़ा परन्तु चिन्ता यही लगी थी कि समुद्र ने पीछा छोड़ा वा नहीं जब जान पड़ा कि मैं सुरक्षित स्थान पर हूं तब चोट ओट सब भूल गई। मुस्कुराता हुआ ऊपर चढ़ गया। व्याख्यान समाप्त हुआ हम लोग अपने स्थान को लौटे। जूते में पानी भरा था फच २ होरही थी, यार लोगों ने पूंछा यह क्या है मैंने कहा बड़ी गरमी लगी थी। दोनों पांउ समुद्र में डाले कुछ देर बैठा रहा था। सब लोग बड़ी गरमी थी बड़ी गरमी थी करने लगे। मैंने कहा चलो बात बन गई हमलोगों के ठहरने का प्रबन्ध बाबू गोविन्द दास की ओर से था परन्तु घर में लम्प तो थे, तेल नदारद। एक मदरासी साथी को लिये बजार पहुँच यहां मिट्टी के बर्तन नहीं काम में लाये जाते। तेल मिला, पर बरतन न मिले मैंने कहा यार ऐसे न बनेगी एक नारियल मोल लिया और टिपन करलाये उसके ऊपर के खोल में तेल भरवाया ता विधि बनी दिन भर के थके थे खा पी के खुर्राटे भरने लगे। दूसरे दिन सूझी आओ यहीं का भोजन करें एक स्थान पर प्रबन्ध किया खाने पहुंचे तो दालही नहीं खैर और चीजें आईं ईश्वर बचावे उसमें चिन्ता पांडू भी था। अपने मदरासी साथी को देख हमने भी चिन्ता

पांडू का सड़ापा भरा पर ओहो अब न लीलते बने न थूकते कलख़ में मिरचेंही मिरचें थीं। जी कड़ा करके एक बेर भीतरही कोंस दिया। अब आंसुओं की धारा बहना शुरू हुई। सूखा भात सा खा के मैं तो उठ पड़ा हमारे मदरासी भाई बहुत दिनों के थे केवल चिन्ता पांडूही पीते रहे। चिन्ता पांडू दखिनी खाना और केवल मिर्च व इमलीही से बनता है, आधी मिर्च आधी इमली घर लौट के आये तो हम सब तो बच गये। मदरासी भाई के चिन्ता पांडू ने ज़ोर किया और हुये दस्त शुरू, बिचारे ने तीन दिन चार सेई। (शेष फिर)

अपूर्व घटना।

[म० चांदकरण शारदा बी० ए० लिखित]

संध्या का समय है दो स्त्री पुरुष घोड़ों पर सवार हुये एक दुर्गम जंगल में भ्रमण कर रहे हैं। दोनों वर्षा काल की प्राकृतिक शोभा को देख रहे हैं वहां वे कई बन, उपवन, पर्वत गुफायें नद या सरोवर और आश्रम इत्यादि को देखकरईश्वर की महिमा वर्णन करते जाते हैं। कहीं नाना प्रकार के पक्षी स्वर करते हुवे अपने घोंसलों की तरफ उड़ रहे हैं, कहीं सिंह बाघ आदि की गर्जन सुनाई देती है और कहीं झरने झर रहे हैं यह सब दृश्य देखकर उनके हृदय में आनंद होता है परन्तु साथही प्राचीन भारत वर्ष की याद आजाती है वो सारा ऋषि मुनियों और यज्ञ भूमियों का पवित्र चित्र सामने खिच जाता है और जब वे अपनी मातृ भूमि की बर्तमान अधोगति को सन्मुख रखते हैं शोक से व्याकुल होजाते हैं वो स्त्री अतीव सुन्दर और सुडोल महिला है और श्वेत वस्त्र धारण किये साक्षात् पवित्रता की मूर्ति प्रतीत होती है। वो पुरुष एक शिक्षित नवयुवक है। उसके लंबे चौड़े क़द से, गठीले शरीर से और अस्त्र शस्त्रों से वो सच्चा क्षत्रिय प्रतीत होता है। उस स्त्री का नाम सत्यवती है और पुरुष का नाम 'पवित्र पावन' है। दोनों ने अपने जीवन का मुख्य उद्देश्य संसारोद्धार करने का कर रखा है उन्होंने संसार के उपकार के लिये गलतफ़हमी के भूत, बगुलाभगत मिथ्या देवी, अकृतज्ञता, अन्धपरम्परा और जादूटोना इत्यादि को संसार से बहुत कुछ निकाल फेंका है। धर्म के नाम

भोले पुरुषों से द्रव्य लूटनेवाले राक्षसों, अराजकता, अविद्यान्धकार, घमण्ड, अप्रसन्नता, जंगलीपन और विषयभोग इत्यादि को अपनी बुद्धि तर्कशक्ति, सत्यधर्म, बल, बहादुरी और दिलेरी से नाश कर दिया है, परभी वे इतने उपरोक्त भूतों को नाना प्रकार के दुःख सहन कर, बड़े २ युद्धों में हराकर चुपचाप नहीं बैठे हैं, परन्तु रात्रि दिन संसार के उपकार का ध्यान इनके सन्मुख है। वो अभी थोड़ीही दूर गये होंगे कि एक भयानक आंधी आई और काल २ बादलों ने गगन मण्डल को आच्छादित कर दिया, इतने में उन्होंने एक हथियार बंद सवार को अपने घोड़े को दुड़की चाल से दौड़ाते देखा, वो ऐसा मालूम होता था मानो वो किसी दुश्मन के डर से भागा है या कोई दूसरी भयानक चीज उसे डरारही है, ज्यों २ वो भागता जाता था पीछे फिर कर देखता जाता था मानो-कोई भयभीत करनेवाली वस्तु उसका पीछा कर रही है ज्योंही वो निकट आये उन्होंने उसके बिखरे हुये बाल देखे ' उसका चेहरा जर्द पड़ा हुआ था, बदन में काटो तो खून नहीं, उसके अङ्गों में मानो जीवन ही नहीं। उसके गले में एक सन का रस्सा पड़ा हुआ था जो कि बहादुर सिपाही के नाम को कलंक लगाने वाला था "पवित्रपावन" ने अपने घोड़े को तेजी से बढ़ाया यह मालूम करने के लिये कि कौनसा मनुष्य ऐसा भयभीत होकर क्यों जा रहा है उसने बड़ी मुश्किल से उस भागते हुवे सवार को रोका और यह प्रश्न किया " सज्जन कहिये किसने आपको ऐसा भयभीत किया है, आप किसके भय से ऐसी तेज़ी से भाग रहे हैं, मैंने, कभी भी दिलेर सिपाही को ऐसे भागते नहीं देखा है " परन्तु उसने कुछ भी उत्तर नहीं दिया और अधिक भयभीत होगया और अपनी पथरीली आखों से घूरता हुवा, थर थर कांपता हुवा अचम्भित हो ठहरगया, गोया कि उसने नर्क की राक्षसनियों को देख लिया है। उससे बार बार "पवित्रपावन" सवाल पूछता था, पर वो केवल कांपता था और आखिर में मुश्किल से हकलाते हुवे यह शब्द उसके मुखसे निकले "परमात्मा के लिये मुझे न ठहराइये देखो २ वो मेरे पीछे चला आ रहा है" इतना कह कर वो भागनेवाला ही था कि "पवित्रपावन" ने उसे ज़बरदस्ती ठहरालिया। वो भागनेवाला सवार बोला " क्या मैं यहां उस पुरुष से जो कि अभी मुझसे खुदकुशी करवालेता, भय

रहित हूं ? क्या अब मेरी मृत्यु टलगई है सो मैं आपको अपनी कहानी सुनादूं " पवित्रपावन " ने कहा "डरो मत, यहां कोई भय नहीं है उस भगोड़े सवार ने जबाब दिया तो मैं आपको उस दुःखदायक कथा को सुनाता हूं जो कि मैंने अभी अपनी आंखों से देखी है और यदि विवेक से काम न लेता तो मेरी भी उसमें आहुति हो जाती ।

मैं थोडी देर पहिले एक दिलेर सवार से मिला जिसका कि नाम "तारासिंह" था वो बडा बहादुर था उसने कई लड़ाइयों में जय प्राप्त की थी। वो एक युवती से प्रेम करता था परन्तु वो युवती उसके प्रेम का कभी उत्तर नहीं देती थी और इसलिये वो दिन रंज और गम से दुबला होता जाता था वो घूमता घूमता मुझे रास्ते में मिलगया और कुछ देर बाद ही हम दोनों को पथ में एक मनुष्य मिला जिसका नाम " निराशसिंह " था, राम रे राम ! उसका नाम लेते हृदय कांपता है। परमेश्वर ऐसे मनुष्योंसे बचावे उस निराश सिंह ने हमको नमस्ते किया और सामाजिक समाचार और संसार की गति पर वार्तालाप प्रारम्भ किया वो झाड़ी में छिपे सर्प के समान हमारे निकट आता गया और हमारी दशा और दिलेरी के कामों पर प्रश्न करने लगा। जब उसने हमारा सारा वृत्तान्त जान लिया और यह मालूम करलिया कि हमारे कोमल चित प्रेम में कृतकार्य्य न होने के कारण शोक पूरित है तब उसने सारी आशा जो हमारे चित में वर्तमान थी छीन ली और तत्पश्चात हमको निराश हीन, असहाय, पाकर वह दुष्ट हमको खुदकुशी करनेके लिये उकसाने लगा, और कहने लगा कि संसार के सारे झगड़े और दुःख मृत्यु से ही मिट सक्ते हैं और फांसे मुझे तो एक रस्सा फांसी खाने के लिये दिया और मेरे साथी को एक चाकू दिया मेरा साथी तो उस चाकू को पाकर ही जीवन से हाथ धो बैठा परन्तु ज़्यादा डरपोक या यों कहिये ज़्यादा खुशकिस्मत होने के कारण उस भयानक दृश्य को देख कर भयसे अधमरा होकर भागा। सज्जन यदि आप भी किसी के प्रेम में लिप्त हैं तो निश्चय है ही दुःख आपको उठाना पड़गा परमेश्वर करे आप कभी भी निराशसिंह की जादूवाली वाणी को न सुनें।

पवित्रपावन ने कहा यह हमारी समझ में नहीं आता कि कि

तरह से मनुष्य केवल शब्दों मात्र से ही अपना प्राणाहनन करे लेते हैं सवार ने जवाब दिया सज्जन मेरा अभी का अनुभव मुझे बताता है कि किस तरह से शहत टपकाती हुई वाणी दिल और रग रग पिघाल देती है और पहिले इसके कि मनुष्य होश में आता है यह उसको सर्वथा निर्बल बनादेती है, सज्जन उसके धोखे में आप कभी भी न आवें "पवित्रपावन" ने यह श्रवण कर आज कल के नवयुवकों की तरह चुप नहीं साधी परन्तु प्रण किया "निश्चय ही मैं आज से तब तक विश्राम नहीं करूंगा जब तक कि मैं उस दुष्ट निराशसिंहकी चालाकी और धोखेबाज़ी स्वयं न निरीक्षण करलूं और सवार से कहा सज्जन मैं आप से विनय पूर्वक प्रार्थना करता हूं कि आप मुझे उसके घर तक ले चलें। सवार ने जबाब दिया, मैं केवल आपकी ख़ातिर अपनी इच्छा के प्रतिकूल उस दुष्ट के गृह तक ले चलता हूं आप मुझे चाहे जितनी धनसम्पत्ति दें तो भी मैं उस दुष्ट निराशसिंह के गृह के सन्मुख नहीं ठहरूंगा क्योंकि मैं निराशा के भूत के देखने के बनिस्वत मरना, अच्छा समझता हूं थोड़ी ही देर में वो उस स्थान पर आगये जहां वो दुष्ट निराशसिंह रहता था वो एक अंधेरी पथरिली गुफ़ा में रहता था उस जगह मरे हुये आदमियों के मांस की बदबू आती थी और उस गुफा पर उल्लू बैठा हुवा भयानक शब्द उच्चारण कर रहा था उस स्थान के वृक्षों में न तो पत्ते, फूल, इत्यादि ही लगे हुये थे और न फल। केवल वृक्षोंके डंठल पथरीली चट्टानों पर पसरे हुवे दृष्टि गोचर होते थे। उन डंठलों पर सैकड़ों आदमी फांसी खा खा कर मरचुके थे और उनकी लाशें नीचे पड़ी २ सड़ रही थीं, वहां पहुंच कर वो नंगे सिरवाला सवार भागनाही चाहता था कि "पवित्रपावन" ने उसे जबरदस्ती ठहरालिया और उसको दिलासा दिया वे उस अंधेरी गुफ़ा में घुसे जहां कि उन्होंने उस दुष्ट निराशसिंह को ज़मीन पर नीची गर्दन किये बैठे देखा। वो अपने सुस्त मन में शोकसे पूरित हुवा कुछ सोच रहा था उसके कंधों पर बिखरे हुवे लंबे २ बालों ने उसके मुख को ढांप दिया था और उनमें से उसकी गड़ी हुई आंखें और बैठे हुये जबड़े और गाल दिखाई देते थे उसके मुख पर मांस नाम मात्र को नहीं था मानों उसे कई दिनोंसे भोजन नहीं मिला है उसके कपड़े बिलकुल फटे चिथड़े थे उसके सामने ही एक लाश पड़ी

हुई थी जिसके पेट में चाकू घुसा हुआ था और ताज़ा २ खून बह रहा था यह उसी तारासिंह की लाश थी जिसका हम ऊपर वर्णन कर आये हैं।

यह दृश्य देख कर "पवित्रपावन" की आंख गुस्से से लाल हो गई और एक दिलेर सिपाही का जीवन नाश करने का बदला लेने का दृढ़ संकल्प कर उस दुष्ट को इस प्रकार ललकारा "ऐ दुष्ट तू ने इस प्राणी का जीव लिया है इस लिये तुझे ही न्यायानुकूल अपने खून से इस खून का बदला चुकाना पड़ेगा" निराशसिंह बोला ऐ बेवकूफ, मूर्ख तुझे यह क्या पागलपन सूझा है सो ऐसा कड़ा हुक्म देता है, न्याय सिर्फ़ यह कहता है कि वो ही मनुष्य मरे जो जीवित रहने के योग्य न हों यह मनुष्य केवल अपनी दूषित आत्मा के कारण मृत्यु को प्राप्त हुवा है। इसको किसी दूसरे ने मरने को उद्यत नहीं किया। क्या प्रत्येक को अपना हक़ देना पाप है! क्या हम उस मनुष्य को मरने दें जो कि इस संसार में एक पल भी जीवित नहीं रहना चाहता, क्या उस मनुष्य को कीचड़ से निकालना और नदी के पार करना हमारा धर्म नहीं है जो कि कीचड़ में फंस गया है और नदी के बहाव में बहा चला जाता है? हमें प्रत्येक पथिक को उसके आदर्श तक पहुंचाने में सहायता देना चाहिये तू बड़ाही द्वेषी पुरुष है जो अपने पड़ोसी की भलाई में दुःखित होता है तू मूर्ख है जो तू अपने दुःखों को ही सुख समझ कर चैन करता है, यदि तू अपने आपको नदी के बहाव से नहीं बचाता तो दूसरे को क्यों नहीं बचाने देता इस तारासिंह ने खुदकुशी करने से अतीव आनन्द उठाया है। वो अब उस अनन्त शान्ति की ओर सुख को प्राप्त हुआ है, जिसकी कि तू इच्छा करता है, परन्तु नित्यप्रति उस मार्ग से दूर हटता जाता है। यदि थोड़े से दुख से हमको अनन्त शान्ति और सुख मिल जावे तो हमको थोड़े दुःख से डरना नहीं चाहिये। मिहनत के बाद नींद, तूफ़ान के बाद बन्दरगाह लड़ाई के बाद आराम। जीवन के पश्चात् मृत्यु सदा सर्वदा आनन्द प्रद होती है।

निराश सिंह के उपरोक्त बचनों को सुन कर पवित्र पावन असमञ्जस में पड़ गये और बोले जीवन का समय नियमित है मनुष्य इसको न तो बढ़ा सक्ता है, और न घटा सक्ता है सिपाही को अपनी जगह कभी न छोड़नी चाहिये जब तक कि कप्तान हुक्म न दे दे।

निराश सिंह ने उत्तर दिया—जिसने सिपाही को मुक़र्रर किया है वोही प्रातः काल बिगुल बजाकर उसकी जगह छोड़ने का हुक्म देता है। जो कुछ वस्तुएं संसार में हैं, और जो कुछ काम होते हैं क्या वो परब्रह्म परमेश्वर के नहीं। क्या उसने सब वस्तुओं को फिर नाश होने के लिये नहीं बनाया। जो कुछ प्रारम्भ हुआ है सब का नाश होगा। उन सब का समय परमेश्वर ने नियत कर दिया है फिर कौन उस मौत को जो कि किस्मत में बदी है रोक सक्ता है। जब मृत्यु का समय आगया किसी को भी नहीं पूछना चाहिये यह कहां से आई क्यों आई। मैं जानता हूं जितना अधिक जीवन होगा उतना ही अधिक पाप होगा और जितना अधिक पाप होगा उतना ही अधिक (दण्ड) सज़ा होगी। वो तमाम भयानक युद्ध जिनमें तू ने विजय प्राप्त की है और जिनके लिये तू इतना मान करता है, तेरे दुःख के कारण हैं और तू उनके लिये पछतावेगा। क्योंकि जीवनही का बदला जीवन और खून का बदला खून मिलेगा। क्या इतना जीवन भोगना काफ़ी नहीं है। जिस पुरुष ने पहिले सच्चा रास्ता छोड़ दिया वो ज्यों २ आगे बढ़ेगा त्यों त्यों ही भटकेगा और रास्ता सर्वथा भूल जायगा इसलिये तुम आगे न बढ़ो न भटको, परन्तु यहां पर प्राणान्त करलो' इस जीवन में सैकड़ों दुःख हैं जैसे भय, बीमारी, बुढ़ापा कुटम्बियों का बिछुड़ना, नुकसान होजाना मिहनत मज़दूरी करना, लड़ाई झगड़ा करना, शारीरिक दुख, भूख सर्दी, गर्मी, और नाना प्रकार की पराधीनता इत्यादि, ऐ दुःखी पुरुष तुझे मरने की बहुत अधिक आवश्यकता है यदि तू ज्ञान तुला में अपनी सच्ची हालत को तोले तो तेरे तुल्य कोई अधम मनुष्य नहीं है तू अपने पिछले जीवन को याद कर तुझे कैसे २ दुःख भोगने पड़े, ऐ पापी! तू क्यों अब अधिक जीवन चाहता है, क्यों तेरे पाप इतने अधिक नहीं होगये हैं जिससे परमात्मा तुझसे अतीव क्रुद्ध है, क्या परमात्मा न्यायकारी नहीं है! वो तेरे घट २ की बातों को जानता है। क्या वह परमेश्वर का कानून नहीं है कि प्रत्येक पापी नाश को प्राप्त हो। और सर्व देहधारी भी नाश को प्राप्त होंगे। इसलिये क्या करना चाहिये, क्या यह बेहतर नहीं है कि पहलेही मरजावे बनिस्बत इसके कि रह कर जीवन के और भी दुखों को उठावे मृत्यु से सब शोक दूर होजाते हैं। इस-

लिये हे देवपुत्र " पवित्र पावन ' जल्दी आत्म हनन करो । पवित्र पावन यह बातें सुन कर बहुत विचलित हुआ । यह बातें तलवार की नोंक के समान उसके हृदय पर चुभीं इस मिथ्या मार्ग पर लेजाने वाली निराशसिंह के मिथ्या तर्क ने एका एक पवित्र पावन को निराशा के वशीभूत करदिया उसकी सारी दिलेरी जाती रही और वो बेहोश होगया और कांपने लगा । जब कि दुष्ट निराशसिंह ने उसकी यह दशा देखी, तो वो नाना प्रकार से उसको पस्त हिम्मत करने लगा । वो उसके भयानक २ दृश्य दिखाने लगा, उसके पापों को द्विगुणित रूप में दण्डित बताने लगा, और फिर उसके पास खुदकुशी के लिये तलवार, चाकू रस्सी, ज़हर, अग्नि इत्यादि लाया और उससे कहा जिस तरह से चाहो उस तरह से प्राण पखेरू उड़ालो क्योंकि जिस पुरुष ने परमात्मा के क्रोध को भड़काया है वो मरने योग्य है । परन्तु जब 'पवित्र पावन' ने एक भी हथियार उनमें से न लिये तो वो घर से एक तेज छुरा लाया और यह उसके हाथ में दिया पवित्र पावन के हाथ कांपने लगे परन्तु आखिर उसने पक्का इरादा कर लिया और हाथ को उठा कर पेट में छुरा घुसाने ही वाला था कि चट से सत्यवती देवी ने उसका हाथ पकड़ लिया और छुरा छीन कर भूमि पर फेंक दिया, और इस प्रकार कहने लगी:-

सत्यवती के नेत्र क्रोध से रक्त होगये थे उसका सुन्दर चन्द्र मुख क्रोध से सुर्ख होगया था और उसके होंठ और अंग २ फड़क रहे थे । खैर ! जैसे तैसे अपने को सम्हाल कर क्रोध पूरित यह बचन बोली धिक्कार है ! धिक्कार ! तुझे ऐ " पवित्र पावन " क्या तू ऐसी ही लड़ाई से संसार में विजय प्राप्त करेगा ? क्या तू ऐसी ही निराशा के वशीभूत होकर संसार में शान्ति फैलावेगा ? और वैदिक धर्म का प्रचार करेगा ? ए दुर्बल चित्त वाले इधर आ ऐसी कपोल कल्पित बातों में मत फंस ऐसे झूठ तर्क से अपने संसारोद्धार के वृत्त को भंग मत होने दे हा ! न जाने तेरे जैसे कितने इस पुण्य भूमि के युवा और युवतियां ऐसी झूठी दलीलों में फंस कर अपने दुर्लभ मनुष्य जीवन को खो बैठते हैं । रे कायर परमात्मा न्यायकारी है । उसकी आज्ञा पालते हुवे १०० वर्ष तक ! जीने की इच्छा कर इतने में सत्यवती का क्रोध कुछ कम हुआ । उसको अपने परम प्रिय को इस प्रकार के कठिन शब्द कहने पर कुछ पश्चाताप

हुआ और वो इसको समझाती हुई मधुर स्वर से इस प्रकार कहने लगी ।

सत्यवती देवी—हे प्यारे, संसार में सुख और दुःख उसी प्रकार साथ है जैसे धूप के साथ छाया, गुलाब में कांटे । कभी २ कुछ ऐसा समय आता है कि अच्छे पुरुष भी संसार से दुखित हो जंगल की शरण लेते हैं । परन्तु याद रखिये और पक्का विश्वास रखिये कि जिस पुरुष ने अपना कर्तव्य पालन बहुत कुछ किया है फिर क्या निराशसिंह के धोखे में आते हैं । यह संसार दर्पण के समान है । यदि आप हंसते हैं तो वह भी हंसता है । यदि आप क्रुद्ध होतें हैं तो वह भी क्रुद्ध होता है । यदि इसको आप लाल कांच से देखते हैं तो सब लालही लाल दृष्टिगोचर होता है यदि आप आस्मानी कांच से देखते हैं तो सब वस्तुएं आस्मानी नज़र आती है यदि किसी धुंधले शीशे से देखते हैं तो सब चीजें मैली कुचैली दृष्टिगोचर होती हैं एक कवि ने सत्य कहा है "My mind to me my Kingdom is" मेरा मनही मेरा राज्य है इसलिये हमेशा । वस्तुओं के गुण ग्रहण करो । सदा प्रत्येक वस्तुओं की भलाई, और फ़ायदे को देखो । संसार में कोई भी वस्तु ऐसी नहीं जो कुछ न कुछ उपकार की न हो आप सदा प्रसन्न वदन रहें । संसार में कोई भी वस्तु इतना सुख नहीं दे सकती जितना कि कर्तव्य पालन से सुख मिलता है । वे मनुष्य मूर्ख हैं जो कि प्रकृति और परमात्मा को संसार के दुःखों के लिये दूषित किया करते हैं मिल्टन ने भी कहा है "Accuse not nature, she has done her part, do thou but thine." "प्रकृति को दोष मत दो । उस ने अपना कर्तव्य पूरा करलिया, तू अपना कर्तव्य पूर्ण कर हमको निराशसिंह के समान (Pessimistic) नहीं होना चाहिये । हमको सदा आशा पूर्ण रहना चाहिये । यदि संसार में मनुष्य दुखी है तो वह उन्हीं कर्मों का फल है । यदि मनुष्य धर्मानुसार कर्म करता जाय तो अवश्य अपने जीवन को सफल और सुखी बना सक्ता है मनु भगवान ने वेद, स्मृति, सदाचार और अपनी आत्माके अनुकूल कर्म करने में धर्म बताया है कुछ पाप तो आजकल हम जान्ते बूझते करते हैं और कुछ दुष्टों के बहकाने में आकर या और दूसरे प्रभावों के कारण करते हैं और यही सब दुःखों की जड़ है । निराशसिंह

किस्मत पर भरोसा करने वाला मनुष्य है । वह कहता है जो कुछ होना हो सो होगा । वह मनुष्य को दूसरी बलवान शक्तियों के हस्त में खिलौना मानता है परन्तु मैं आपको कहती हूं, हे परम प्रिय! पवित्र पावन मनुष्य है मर्द है वो स्वयम् अपनी किस्मत का स्वामी है । जो मनुष्य अपनी किस्मत का स्वामी नहीं तो इसमें दोष उसी का है मनुष्य चाहे जैसा अपने जीवन को बना सकता है । वो चाहे रावण जैसा अपना नाश कर सकता है या मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र के समान पवित्र और उज्वल बना सकता है । यदि हम सच्चे मन से प्रतिज्ञा करें और पुरुषार्थ करें तो अवश्यही जो कुछ हम होना चाहते हैं हम वहीं होजाते हैं । आप अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहें । आप अवश्य संसारोद्धार में कृतकार्य होंगे । जब हम अपनी किस्मत के स्वामी हैं तो प्रश्न उठता है हमको हमारे जीवन को किस तरह से काम में लाना चाहिये ? हमको हमारे जीवन का मुख्य उद्देश्य क्या रखना चाहिये ? क्या 'खाना पीना मौज उड़ाना' हमारे जीवन का उद्देश्य है ? प्यारे ये तो जंगली जानवर पशु पक्षी भी करते हैं । एक केवल धर्म है, जिससे हम मनुष्य संसार के मुकुटमणि गिने जाते हैं. प्लेटो, अरिस्टाटल, बुद्ध शंकर, दयानन्द अपने स्वार्थ में संतुष्ट न रहे, परन्तु परोपकार में तत्पर हुये, क्योंकि "परोपकाराय सतां विभूतयः" लार्ड बेकन ने कहा है "No man's private fortune can be an end anyway worthy of his existence केवल अपने लिये धन कमाना यदि किसी का उद्देश्य है तो वह संसार में रहने योग्य नहीं" इसलिये प्रत्येक का उद्देश्य परोपकार है, आप तो विद्वान हैं आपने पहिले से ही अपना उद्देश्य संसारोद्धार रखा है, मिथ्यावादी निराशसिंह आपसे कहता है कि "जितना अधिक जीना उतना ही अधिक पाप करना है" मानों जीवन वृथा ही है. आप सोचिये जीवन में कितने काम करने हैं, एक कवि ने सत्य कहा है " Art is long and time is fleeting " जीवन में इतने अधिक काम करने हैं कि हमको कहना पड़ता है कि कार्य क्षेत्र बहुत अधिक है और समय बहुत थोड़ा है, हमने इतना कम काम किया है कि हमको न्यूटन के समान कहना पड़ता है " We are but children playing on the seashore and gathering here and there a prettier shell or a more

delicate sea-weed than usual while the great ocean of tr th lies all undiscovered before us, " हम केवल बालकों के समान समुद्र के किनारे पर खेल रहे हैं, कभी २ हमको सुन्दर सीपी या साधारण से अधिक कोमल समुद्रीघास मिल जाती है परन्तु सत्य का महान् अथाह समुद्र हमारे सन्मुख बेपता पड़ा हुआ है, एक भी वस्तु ऐसी नहीं जिसके सारे के सारे फ़ायदे हमको मालूम हों, यद्यपि स्टीम, मशीनें बिजली (Eletricity) वायुयान इत्यादि मालूम कर लिये गये हैं तथापि ये कितने कम काम में लाये जाते हैं, सैकड़ों नदियां योंही फिजूल समुद्र में पानी बहाकर डाल देती हैं, हम कोई यन्त्र निकाल कर इन सब नदियों के पानी को काम में ला सक्के हैं और भारतवर्ष से दुर्भिक्ष भगा सक्के हैं, सैकड़ों जातियां आपस में लड़कर धन और मनुष्यों का वृथा नाश कर रही हैं, क्या हम अपने तेज और प्रभाव से शान्ति और ऐक्यता नहीं फैला सक्के ? केवल भारतवर्ष में ही कितना काम पड़ा है, कितने ज्यादा अशिक्षित है। धर्मशिक्षा कितने कम मनुष्यों को मिलती है। विद्यादान का सब से अच्छा तरीक़ा कौन सा है। किस प्रकार से हमारी सामाजिक स्थिति को सुधारें ? किस प्रकार स्त्री जाति पर समाज के अत्याचार को हटावें ? किस प्रकार बालविवाह इत्यादि कुरीतियों को भारत से जड़ से उखेड़ कर फेंक दें ? किस प्रकार विधवावों के आर्त्तनाद से विदीर्ण भारतभूमि के जरजर हृदय को बेचारी अबलाओं के दुःख दूर कर कर शान्त करें ? किस प्रकार भारत के घर घर में प्राचीन वर्णाश्रम मर्य्यादा को पुनर्जीवित करें ? प्यारे ! सैकड़ों ऐसे काम पड़े हैं जिनके गिनाने से कागज़ के कागज रंग जावें, क्या भारतवर्ष के ५२ लाख साधुओं को सुधारना और सन्मार्ग पर लाना कुछ छोटा काम है ? इस लिये हे सुहृद ! संसार में जीना हमारा धर्म है, भगवान ने ईशोपनिषद् में आज्ञा दी है,

कुर्व्वन्नेवेह कर्म्माणि जिजीविषेच्छतं समाः ।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म्म लिप्यते नरे ॥

"काम करते हुये १०० वर्ष पर्य्यन्त जीने की इच्छा करो, इसी प्रकार से, दूसरे प्रकार से नहीं, तुम कर्म्मों में लिप्त नहीं हो" अपने आपको संसार से अलग रखना, किसी बात में दख़ल न

देना, यह तो कमज़ोर, काहिल, सुस्त मनुष्य भी कर सक्ता है. धर्म इतना महान् है कि इस छोटे से निष्कर्म के दायरे में नहीं आ सक्ता. परमात्मा ने मनुष्य को अद्भुत बल और बुद्धि दी है। यह ईश्वर की विवेकशक्ति का देना बताती है कि मनुष्य के आदर्श उच्च हैं, स्वार्थपरता और पुरुषार्थहीन होना नहीं. मनुष्य में प्रकृति से ही चुलबुलापन जोश, बल और बुद्धि है, यह सब उस को सदा कार्य्य करने की स्वभावतः प्रेरणा करते हैं, यह सदा उस की अपनी और समाज की शारीरिक मासिक और आत्मिक उन्नति के लिये उद्यत करते हैं, पुरुषार्थ. न कि काहिली प्रकृति का नियम है संसार के चर और अचर जीव और वस्तुएँ पुरुषार्थ से पूर्ण दृष्टि गोचर होती हैं। कोई भी वस्तु निकम्मी नहीं प्रतीत होती। चिंउटी तक भी सदा अपने कार्य्य में मग्न रहती है, वह पृथिवी जिस पर हम निवास करते हैं सदा सर्वदा घूमती रहती है पौधे और वृक्ष सदा अपनी वृद्धि की चेष्टा करते रहते हैं, वायु सदा चलती रहती है, जल सदा बहता रहता है, कृपा कर आप अपने चहुं दिश देखें, देखिये प्रकृति आपको क्या शिक्षा देती है ! आम का वृक्ष किस निस्वार्थ भाव से अपनी युवावस्था में मीठे २ आम संसार को खिलाता है बुढ़ापे में थके पथिकों को छाया देकर विश्राम देता है, और मरकर भी अपनी सूखी लकड़ियों को हवन की समिधा में देकर गगनमण्डल में सुगन्ध फैलाता हुआ परोपकार करता है। प्यारे काम करो, पुरुषार्थ करो, उन्नति करो, परोपकार करो, यही प्रकृति का उपदेश है. वह मनुष्य जो अपना कर्त्तव्य पालन करता हुआ पुरुषार्थ में तत्पर रहता है। वह जो सुस्ती और काहिली में पड़ा रहता है वह सेठों के समान तोंद फुलाकर बिमारियों का घर बन जाता है। यह संसार सुख की खान है जिसमें केवल खान खोदने वाले की आवश्यक्ता है, अहा ! मनुष्य को परमात्मा ने कैसी २ शक्तियां दी हैं। हम अपनी वाणी से मधुर कोकिल शब्द उच्चारण कर किस प्रकार संतप्त हृदय की वेदना दूर कर देते हैं ! हम अपने बाहुबल से संसार से अत्याचार दूर भगा देते हैं और फिर संसार कैसा प्रफुल्लित और आनन्दित होता है। प्रत्येक अंग ईश्वर ने उच्च और पवित्र आदर्श तक पहुंचने के लिये दिये हैं क्या कोई मनुष्य इस शरीर की विचित्र रचना और

मनुष्य के पराक्रम और बुद्धि को देखकर मूर्खता, मद लोभ मोह में फंस कर आत्म हनन कर सक्ता है ? हे परम सुहृद ! दुष्ट निराशासिंह के मिथ्या तर्क में न फंस कर, कार्य्यक्षेत्र में कूद पड़ो * आप आत्म-हनन कदापि न करें क्योंकि भगवान् ने ईशोपनिषद् में भी कहा है।

असुर्या नाम ते लोका अन्धेन तमसा वृताः ।
तांस्ते प्रेत्यापि गच्छन्ति ये के चात्महनोजनाः ॥

"उन लोकों में जहां कि सूर्य्य कभी उदय नहीं होता, जो सदा अन्धकार से पूरित हैं वहां वे सब मनुष्य, जो आत्म हनन करते हैं अवश्यमेव मर कर जाते हैं" इस लिये वेदों की आज्ञा पालो, उठो इस अपवित्र स्थान को छोड़ो। देवी के इन वचनों ने "पवित्रपावन पर अमृत का काम किया और वो उठ खड़ा हुआ और घोड़े पर सवार होकर अपने वृत्त को पूरा करने की धुन में आगे बढ़ा, वो संसारोद्धार के वृत्त को पूरा करने के लिये संसार में ऋषि, मुनि, देवताओं के समान जीवन व्यतीत करने लगा, ईश्वर में पूर्ण विश्वास, आशा, संतोष पश्चाताप, दया, धर्म, धृति, पुण्य, ध्यान, ब्रह्मचर्य्य इत्यादि तपों से संसारोद्धार में कृतकार्य्य हुवा।

सुकरात की जीवनी

(गताङ्क से आगे)

यूथी फ़ाइरन। अच्छा ठीक है, मैं यह कहता हूं कि "जिसे सब देवता चाहते हैं वह धर्म्म है और सब देवता जिससे नफ़रत करते हैं वह अधर्म्म है"

सोक्रेटिस। बस, इसी व्याख्या की जांच पड़ताल करनी है न, मैं या और लोग जो दावा पेश करें या हम आपही जो कुछ कहें उसे बिना कुछ पूंछ पाछ किए मान लेना है, या इस दावे को उलट पलट कर खूब जांच पड़ताल करना है, क्या तुम क्या चाहते हो ?

यूथी फ़ाइरन। नहीं, नहीं जांच पड़ताल जरूर करेंगे पर इतना कहूंगा कि अबकी बार मैंने जो दावा पेश किया है वह बिल्कुल सहीह है।

सोक्रेटिस। मित्रवर ! यह तो अभी थोड़ी ही देर में साफ़ हुआ जाता है। अच्छा तो अब इस प्रश्न पर ज़रा ध्यान देवे तो। "देवता क्या धर्म्म (पवित्रता) को पवित्र होने के सबब से चाहते हैं, या किसी बात को चाहते हैं इस लिये वह पवित्र मी नाजानी

चाहिए अर्थात् वह पवित्रता को चाहते हैं या वह जिसे या जो कुछ चाहें या पसन्द करें वही पवित्र है"।

युथी फाइरन। मैं, भाई तुमारी बात ठीक समझा नहीं।

सोक्रेटिस। अच्छा मैं और खुलासा किये देता हूं। हम प्रायः यह कहा करते हैं कि अमुक वस्तु चल सकती है, चल रही है देखी जा सकती है, दीख रही है, इससे तुम समझ तो ज़रूर जाते होगे कि चल सकती है और चल रही है, देखी जा सकती है और दिख रही है इसमें क्या फर्क है।

युथी फ़ाइरन। समझ क्यों नहीं जाते हैं, समझ जाते ही हैं।

सोक्रेटिस। और हम यह भी तो कहते हैं कि अमुक वस्तु प्यारी है, प्यार पाने लायक है या अमुक वस्तु प्यार पाती है, प्रेम का आकर्षण करती है तात्पर्य यह है कि कोई चीज़ प्रेम आकर्षण करने की शक्ति रखती है (पर किसी कारण से लोगों की निगाह उस पर पड़ी नहीं कि प्रेम आकर्षण करती) या कोई वस्तु प्रेम आकर्षण करती है (लोगों की निगाह उस पर पड़ गई है), इसका फर्क तो समझते हो न।

युथी फ़ाइरन। हां क्यों नहीं!

सोक्रेटिस। अच्छा तो मुझे अब यह बताओ, कि जो चीज़ चल सकती है वह क्या चल भी रही है ऐसा क्या कह सकते हैं, केवल इसी कारण से कि वह चल सकती है।

युथी फ़ाइरन। नहीं, ऐसा क्यों कर कहा जा सकता है, जब वह चलेगी तभी कहा जायगा कि चल रही है।

सोक्रेटिस। हां, तो अब तुम हमारा अभिप्राय (मतलब) समझ गए न। मैं यह कहता हूं, कि कोई चीज प्रेम पाने के लायक या चाहने लायक हो सकती है पर वह जब तक किसी के प्रेम को न पावे या उसको प्रीति का गुण प्रगट न हो तब तक क्या उसे प्रीति कह सकते हैं?

युथी फ़ाइरन। नहीं कह सकते।

सोक्रेटिस। अच्छा तो फिर, यहां भी वही बात आई। किसी चीज़ को कोई प्यार नहीं करता प्यारी न होने के कारण, प्यारी होने से तो प्यार करता है या यह कहोगे कि किसी के प्यार करने ही से वह चीज़ प्यारी कहलावेगी।

युथी फ़ाइरन। प्यारी होगी तबही वह प्यार करेगा, प्यार करने ही से सर्वथा 'प्यारी' थोड़े ही हो जायगी।

सोक्रेटिस। अच्छा तो फिर पवित्रता के बारे में क्या कहा जाय ? तुम्हारी व्याख्या के अनुसार यह वही वस्तु है न जिसे सब ही देवता चाहते हैं ?

युथी फ़ाइरन। हां।

सो। केवल इसके पवित्र होने ही से या और भी कोई कारण है

युथी फ़ाइरन। नहीं, केवल पवित्र होने ही के कारण।

सो। तब तो यह पवित्र है इस लिये देवता चाहते हैं, न कि देवता इसे चाहते हैं इस लिये इसे पवित्र मानना चाहिये, ऐसा तो है नहीं।

यू०। हां, मालूम तो ऐसाही पड़ता है।

सो०। तब तो जो देवताओं के पसंद आने लायक चीज़ है उसी को वे चाहते है और वह है भी ऐसे ही प्रीति की गुणों वाली जिससे देवता उसे चाहते हैं॥

यु०। बहुत ठीक।

सो०। तब देवताओं को जो पसंद हो वही पवित्र (धर्म्म) नहीं ठहरा, और देवता जो कुछ पसंद करें या करलें उसी को पवित्र नहीं कह सकते, जैसा कि तुमने कहा है, वह तो (पवित्रता) कोई दूसरी ही चीज़ होगी॥

यु०। ऐसा क्यों ?

सो। क्योंकि यह बात हम लोगों में तय पा चुकी है, कि देवता गण धर्म को पवित्र होने ही के कारण पसद करते हैं, केवल उनके पसंद करने ही से कोई चीज पवित्र नहीं हो सकती। क्यों ऐसा ही है न ?

यूथीफ़ाइरन॥ है तो ऐसा ही।

सोक्रेटिस। तब तो जो देवताओं के पसंद, लायक चीज़ है उसी को वह पसंद करते हैं अर्थात् वह चीज़ अपनी उक्त योग्यता रखने के कारण ही देवताओं को पसंद आती है।

यूथीफ़ाइरन॥ और नहीं तो क्या ? सो तो है ही है।

सोक्रेटिस। तो फिर पवित्रता (धर्म्म) देवताओं को प्रिय नहीं ठहरी और देवताओं को जो कुछ प्रिय है वही धर्म्म नहीं है, जो कि तुम्हारा दावा है। यह दोनों वस्तु भिन्न भिन्न हैं॥

युथीफ़ाइरन। ऐसा क्यों ?

सोक्रेटिस। क्योंकि यह बात हम लोगों में तय पा चुकी है कि किसी वस्तु के पवित्र होने ही के कारण देवतागण पवित्रता को पसंद करते हैं, केवल उनके पसंद आने ही से कोई वस्तु पवित्र नहीं हो सकती। क्यों ऐसा ही है न।

युथीफ़ाइरन। हां।

सोक्रेटिस। और उन्हें कोई वस्तु प्यारी उनके प्यारही के कारण से है और ऐसा तो हो ही नहीं सकता कि उन्हें अमुक वस्तु प्रिय है और वह उसे प्यार नहीं करते।

युथीफ़ाइरन॥ बहुत ठीक।

सोक्राटिस। तो फिर मित्रवर! पवित्रता, और देवताओं को जो (वस्तु) प्रिय है यह दोनों एक वस्तु नहीं ठहरती, भिन्न भिन्न चीजें हैं। यदि देवता पवित्र ही को प्यार करते होते तो पवित्र जनों को भी अवश्य प्यार करते क्योंकि उन्हें (पवित्र) जनों की भी पवित्रता प्रिय है जनों पर जो पवित्र जनों को प्रिय है वह यदि देवताओं को भी प्रिय होता तो उनके प्रिय होने के कारण पवित्रता भी पवित्र होती, पर सो ता है नहीं यह तो ठीक इसके विपरीत है दोनों भिन्न भिन्न हैं क्योंकि एक तो इस प्रकार का है (जो देवताओं को प्रिय है) अर्थात् प्रिय है क्योंकि प्रीति पाता है, और दूसरा प्रीति पाकर प्रिय होता है (होगा) मैंने यह पूछा था कि "पवित्रता क्या है" पर तुमने हमें इसका मर्म (तत्व) समझाया नहीं, तुम केवल इसका एक गुण वर्णन करके बस कर गए अर्थात् यह "सब देवताओं का प्यारी है"। तुमने यह नहीं बतलाया कि वास्तव में "वह है क्या?" देवता पसद करें या न करें या और भी इसमें सत्तर प्रकार के गुण हों हमें इसमें क्या मतलब। हम यह बात साफ़ किया चाहते हैं कि पवित्रता (धर्म्म) क्या है अपवित्रता (अधर्म्म)?

यूथी फ़ाइरन। मैं तुम्हें क्यो अपने हिये का मर्म समझाऊं कुछ समझ में नहीं आता। जो कुछ हम कहते हैं या बात पकड़ते हैं वह ठहरती नहीं है चक्र की तरह घूमती रहती है॥

सुकरात। तुमारा दावा या तुमारी व्याख्या भी मेरे पुरुषा दाऊदयाल जी (डाएडेलस) की तरह है। यदि यही बात मैंने कही होती या इस प्रकार से उक्त व्याख्या उपस्थित किए होता तो तुम मेरी

पूरी खिल्ली उड़ाते और कहते कि हां " बहुरंगी दयालजी के वंस घर न हो। इसी लिए घड़ी घड़ी रंग बदलते हो, एक में स्थिर नहीं रहते"। पर ग़नीमत हुई कि यह सब व्याख्या तुमारी की हुई है इसी लिये मसखरी उड़ाने का कोई मौका तो है नहीं। तुम स्वयम् ही देख रहे हो एक बात स्थिर होने ही नहीं पाती।

युथी फाइरन। वाह! मसखरी उड़ाने का मौका नहीं क्या है? यह तुमारी ही करतूत है कि कोई बात तय नही होने पाती। तुम दाऊदयाल जी के अवतार हो, यदि मेरी व्याख्या मानी जाय तो फिर कुछ झगड़ा रहे ही काहे को।

सोक्रेटिस। वाह? यार! तुमने तो मुझ को दाऊदयाल से भी बढ़कर कारीगर ठहरा दिया, वह तो अपनी ही बनाई हुई चीज़ों को घुमाते फिराते थे, पर मैं दूसरों की चीज़ों को भी घूमा फिरा उलट पलट कर सकता हूं। और मज़ा यह है कि 'बुद्धिमानी' ज़बरदस्ती मेरे सिर मढ़ी जाती है। मैं तो यही चाहता हूं कि दयाल जी एक क्या सौ दयाल जी क्यों न आवे दूसरे को भंडार ही क्यों न खोल दिया जाय पर हम लोगों की बातें अचल रहें! खैर जाने भी दो, इन बातों में क्या तत्व रखा है। हमें तो असली बात से मतलब है, मैं अपने भर सक तुम्हें सहायता पहुंचाने में कसर नहीं रखूंगा जिसमें तुम मुझे किसी न किसी तरह (धर्म) समझा सको। क्योंकि मैं देखता हूं कि तुमें इसकी कुछ ऐसी फिक्र नहीं है। नाराज़ मत हो। धीरे, धीरे। अच्छा यह तो बतलाओ कि धर्म या पवित्रता सब की सब न्याय शील (उचित) अवश्य है न?

युथीफ़ाइरन। ज़रूर होती है।

सोक्रेटिस। अच्छा तो फिर कुछ न्याय भी पवित्र अवश्य होगा या सब पवित्रता, न्याय है और न्याय का एक भाग पवित्र है और उसका दूसरा भाग और कुछ है?

युथी फ़ाइरन। मैं तुमारा तात्पर्य समझा नहीं।

सोक्रेटिस। ऐसा क्यों? क्या उम्र में क्या बुद्धि में किसी बात में भी तुम मुझसे हीन नहीं हो। मैंने ठीक कहा था कि तुम में इतनी ज्यादा बुद्धि है कि तुम इन सब बातों में उसे खर्च करना व्यर्थ

* दाऊ दयाल (डाएडेल) यूनान का एक कारीगर था जिसकी बनाई मूर्त्तियें एक जगह स्थिर नहीं रहते थे, पेच पर घूमते ही रहते थे॥

समझते हो। मित्रवर, समझने की कोशिस करो, मैं तुमसे कोई पहेली नहीं पूछता हूं। किसी कवि ने जो बात कही है मेरा तात्पर्य ठीक उसके विपरीत है, कवि ने कहा है कि जहां भय होगा वहीं श्रद्धा भी होगी"। पर मैं इस कवि की बात नहीं मानता। क्यों नहीं मानता, बतलाऊं?

युथी फ़ाइरन। हां हां।

सोक्रटिस। मैं इस बात को ठीक नहीं समझता कि जहां भय होगा वहां श्रद्धा भी होगी। मैं रात दिन देखता हूं कि बहुत से लोग महामारी, अकाल इत्यादि से डरते हैं, पर उस पर श्रद्धा नहीं रखते तो फिर जहां भय हुआ वहां श्रद्धा कहां रही? क्यों मैं ठीक कहता हूं न?

युथी फ़ाइरन। ठीक।

सोक्रेटिस। पर हां 'यह अवश्य देखने में आता है कि जहां श्रद्धा रहती है वहां भय भी रहता है। देखो बड़ों के सामने जिन पर हम श्रद्धा रखते हैं। हमें पाप करते भय या लज्जा अवश्य आती है न, इसी से समझ लो, जहां श्रद्धा रहती है वहां भय भी रहता है और यह कहना सरासर ग़लत है कि जहां भय होगा वहां श्रद्धा भी होगी। पर श्रद्धा हमेशा भय के साथ रहती नहीं क्योंकि भय का घेरा श्रद्धा से अधिक फैला हुआ है। यह भय का एक हिस्सा है, जैसे कि 'ताक' (असमान संख्या) संख्या का एक हिस्सा है, क्योंकि जहां 'ताक' होगा वहां संख्या अवश्य ही होगी. पर यह कोई आवश्यक नहीं है कि जहां संख्या हो वहां 'ताक' (आसमान uneven संख्या) अवश्य हो। अब समझ गए न?

युथीफ़ाइरन। हां।

सोक्रेटिस। अच्छा तो फिर मैं भी यही पूछता हूं, कि जहां न्याय (इन्साफ है वहां क्या हमेशा पवित्रता रहती है अथवा जहां हमेशा न्याय है वहां पवित्रता हो भी पर वैसा भी होता है कि जहां न्याय है वहां हमेशा पवित्रता नहीं रहती, क्योंकि यह पवित्रता तो न्याय का केवल एक हिस्सा मात्र है। क्योंकि यही बात है न, या और कुछ॥"

युथीफ़ाइरन॥ हां ठीक है।

सोक्रेटिस । अच्छा, तो अब दूसरी बात लो । यदि पवित्रता न्याय का एक हिस्सा है तो, हमें यह भी बतलाना पड़ेगा कि वह कौन सा हिस्सा है ? मान लो कि यदि तुम मुझसे अभी पूछे होते, कि 'ताक' संख्या का कौन सा भाग है तो हम कहते ही हैं कि जो संख्या बराबर न हो उसी को 'ताक' कहते हैं । क्यों यही है न ?

युथीफ़ाइरन ॥ हां ।

सोक्रेटिस । अच्छा तो तुम हमें बतला सकते हो कि न्याय का कौन सा भाग पवित्र है । बतला दो तो बड़ा अच्छा हो. फिर मुझे भी कुछ भय न रहे । मैं बेखटके होकर मेलीटस् से कहूं कि 'अब मैंने युथीफ़ाइरन से अच्छी तरह सीख लिया है कि पाप और पुण्य क्या है, अब तुम मुझे अन्याय से अपराधी नहीं ठहरा सकते ।

युथीफ़ाइरन । अच्छा लो सुनो । पवित्रता और पुण्य. न्याय का वह हिस्सा है जो देवताओं के प्रति ध्यान देने अथवा ख़बरदारी से से सम्बन्ध रखता है अर्थात देवताओं के प्रति हमारा जो कर्त्तव्य है उसके साधन करने से सम्बन्ध रखता है; और बाकी का हिस्सा वह है जो मनुष्यों के प्रति कर्तव्य साधन से सम्बन्ध रखता है ।

सोक्रेटिस । जवाब तो तुमने अच्छा दिया । पर एक छोटी सी बात छूट गई है जिसे मैं पूछ कर और भी तसल्ली कर लिया चाहता हूं । असल मे मैं ठीक समझा नहीं कि तुम किस प्रकार से 'ध्यान देने' अथवा 'कर्तव्य साधन' करने के सम्बन्ध में कहते हो । यह तो हो होगा नहीं और वस्तुओं के प्रति हम जो ध्यान देते या ख़बरदारी करते हैं वैसा ही 'ध्यान' या ख़बरदारी या 'कर्तव्य साधन' देवताओं के सम्बन्ध में भी करने से तुम कहते हो । जैसे कि दृष्टान्त के तौर पर, देखो, यह तो हम खूब जानते हैं कि घोड़ों के प्रति कर्तव्य' या उनकी ख़बरदारी करना घोड़ों का शिक्षक (अश्वपालक) खूब जानता है ।

युथीफ़ाइरन ॥ बेशक ।

सोक्रेटिस । क्योंकि 'अश्वविद्या' से तात्पर्य उसी विद्या से है जिससे घोड़ों का पालन, रक्षण या उनके प्रति जो कर्तव्य है उसे करने से है ॥

युथीफ़ाइरन । हां ।

सोक्रेटिस । और यह भी तो ठीक है न कि शिकारी के अलावे

'कुत्तों' के प्रति जो कर्तव्य है उसे और लोग कम जानते हैं अर्थात् "शिकारी के इल्म" या आखेट विद्या से तात्पर्य उसी विद्या से है न जो 'कुत्तों को ख़बरदारी' करने से सम्बन्ध रखता है॥

युथीफ़ाइरन। यह तो ठीक है।

सोक्रेटिस। वैसे ही 'चरवाही विद्या' से तात्पर्य्य उसी विद्या से है जिसे "चरने वाले पशुओं की ख़बरदारी होती, उन पर मुनासिब ध्यान दिया जाता है या यों कहो कि उनके प्रति जो कर्तव्य है उसका उचित पालन किया जाता है।

युथीफ़ाइरन। बेशक ऐसा ही है।

सोक्रेटिस। और तुमारा यह कहना है कि 'पवित्रता या पुण्य वह है जिससे देवताओं की ख़बरदारी होती (उनके प्रति कर्तव्य साधन) है

युथी। हां।

सोक्रेटिस। अच्छा तो सब तरह की ख़बरदारी से तात्पर्य तो एक ही है न? जिसके प्रति यह यत्न किया जाता है उसकी भलाई हो उसे फ़ायदा पहुंचे, इसी लिये न किया जाता है? जैसे कि यत्न करने से घोड़ों को फ़ायदा पहुंचाता है उनके नस्ल की तरक्की होती है, तात्पर्य यह कि 'अश्व विद्या' का ठीक उपयोग होने से घोड़ों की सब तरह से उन्नति होती है॥

युथीफ़ाइरन॥ अवश्य होती है॥

सोक्रेटिस। इसी तरह से शिकारी के 'करतब' से कुत्तों को फ़ायदा पहुंचता है उनकी उन्नति होती है और गाय बैलों को ग्वालों के इल्म से लाभ पहुंचता है। यह बंधी बात है। क्यों यही है न कि जिसके प्रति यत्न किया जाता है उससे उसे हानि पहुंचने या कस्ट देने का अभिप्राय हो।

युथी। नहीं जी, ऐसा क्यों होगा।

सोक्रेटिस। उसे फ़ायदा पहुंचाने ही से मतलब है न।

सामाजिक शृङ्खला।

(म० सिद्धेश्वर एम० ए० लिखित)

यूरोपीय शिक्षित समाज आज कल परस्पर विरोधी सिद्धान्तों का केन्द्र बन रहा है। यदि कुछ विद्वान् मनुष्य की प्रत्येक चेष्टा को सामाजिक नियमों के अनुकूल बांधना चाहते हैं तो दूसरे सोसाइटी

के छोटे से छोटे नियम को भी मनुष्य की स्वतन्त्रता पर अत्याचार समझते हैं। वह प्रत्येक नियम (Law) को वस्तुतः बुराई (Evil) कल्पित करते हैं। उनके विचार में सम्पूर्ण विधि प्रतिषेध मनुष्य के लिये हानिकारक हैं। स्वतन्त्र प्रेम पर ज़ोर देते हुए वह विवाह संस्था को भी एक अनर्थोत्पादक बन्धन कल्पित करते हैं। इन की संमति में सदाचार सिद्धि का आरम्भ और परिसमाप्ति स्वतन्त्रता ही है, और जो वस्तु वा नियम उस स्वाधीनता के मार्ग में प्रतिबन्ध डालता है, वह सदाचार को बिगाड़ता है। यदि आज सर्व शृङ्खलाएं सोसाइटी से हटा दी जावें तो मनुष्य देवता बन जावे।

हम इस अत्यन्त भीषण और अपूर्व सिद्धान्त का अधिक विवरण करके अपने पाठकों को चकित नहीं करना चाहते। निःसन्देह इस सिद्धान्त के अनुयायी जो प्रायः अनार्किस्ट (Anarchist) होते हैं, मनुष्य स्वभाव को गूढ़ दृष्टि से नहीं देखते। हम कहते हैं कि जब तक मनुष्य की मानसिक वृत्तियां भौतिक और निकृष्ट विषयों के अधीन हैं, जब तक कि वर्तमान स्वार्थपरता के भाव प्रत्येक हृदय में विद्यमान हैं तब तक निरकुश स्वाधीनता मनुष्य के घोर अधः पतन का कारण होगी। साधारण मनुष्य के प्राकृतिक भाव बड़े लाभवान् होते हैं, इन भावों के दुःसह बल के विषय में भगवान् कृष्ण कहते हैं:-

"प्रकृति यान्ति भूतानि निग्रहः किं करिष्यति"

अर्थात् सब भूत प्राणी अपने स्वभाव के वश में हैं, किस की शक्ति है कि स्वभाव के वेगवान् प्रवाह को रोक सके ?

यह बात भी ध्यान रखने के योग्य है कि जब तक मानव समाज में सापेक्षिक दुर्बलता है, तब तक वास्तविक स्वाधीनता की स्थिति असम्भव है। यदि अनार्किस्टों की प्रार्थनानुसार कोई दिव्य शक्ति सोसाइटी को सम्पूर्ण शृङ्खलाओं से हटा दे, तो आप कल्पना कर सकते हैं कि बलवान् लोग कितने शीघ्र दुर्बलों को अपने पंजे में दबा लेंगे। यदि एक लाख में से एक मनुष्य स्वाधीन होगा तो शेष पशुओं से भी अधिक पराधीन होंगे। इतिहास के विद्यार्थियों को फ्रांस की महाक्रान्ति (French Revolution) के भयङ्कर अत्याचार स्मरण ही हैं। उस आभासमान स्वतन्त्रता के राज्य में कितनी रक्त की नदियां बहीं, कितने निरपराध शिरों का छेदन भेदन हुआ,

कितने निर्दोष सज्जन बन्दी गृहों में डाले गये, और कितनी गड़बड़ मनुष्य मंडल में पड़ गई वह एक साधारण इतिहास वेत्ता को भी विज्ञात है। फ्रान्स के लोगों का तरंगी (impulsive) स्वभाव इस निरंकुश स्वतन्त्रता के योग्य नहीं था।

अतएव सामाजिक शृङ्खलाओं Social laws का मुख्य उद्देश्य स्वतंत्रता को रोकना नहीं परन्तु उसको सुरक्षित करना है। जर्मनी के प्रसिद्ध तत्त्ववेता केन्ट Kant साहब का सारगर्भित वचन है कि सामाजिक नियम वास्तव में स्वतन्त्रता की वृद्धि का कारण होते हैं। अतएव इन नियमों को ज़ंजीर मत समझो, परन्तु इनको अपनी स्वाधीनता की रक्षा के लिये अभेद्य कवच निश्चित करो। इन शृङ्खलाओं के लिये भय के भावों को दूर करके प्रेम के भावों को अपनी हृदयभूमि में अंकुरित करो। हमारे कहने का यह अभिप्राय नहीं कि सोसाइटी का प्रत्येक नियम चाहे वह कैसा ही हो अनुकरणीय है, परन्तु जिस शृङ्खला को आप वेदस्मृति, शिष्टाचार विशेषतः अपने आत्माके अनुकूल समझें, उसका अनुसरण आपकेलिये आवश्यक है।

गतिमान् जगत सूक्ष्म पदार्थों अथवा परमाणुओं का सम्बन्ध विशेष है। प्रत्येक सम्बन्ध में सम्बन्धियों का बन्धन वास्तविक स्वतन्त्रता का अत्यन्ताभाव है? इस बन्धन द्वारा ही तो इन सूक्ष्म पदार्थों का गौरव और महत्त्व मनुष्यमात्र को प्रतीत होता है। यह वह बन्धन है जिसके द्वारा व्योम मंडल में अनेक ताराबिम्ब और ज्योतिर्मय सूर्य्य अपनी नियम पूर्वक स्थिति और गति द्वारा प्रकृति के सौन्दर्य्य को बढ़ाते हैं। यह वह बन्धन है जो पुष्प की पत्तियों को संगठित और उनमें मधुरस को एकत्रित करके हमारे जीवन को माधुर्य्यमय बनाता है। यह वह बन्धन है जिसका मोहनी स्वरूप समस्त भूमंडल में देख कर कवि वर्ड्सवर्थ (Wordsworth) ने निरंकुश स्वाधीनता से ग्लानि अनुभव की थी "(Me this unchartered freedom tires)"।

यह प्राकृतिक दृष्टान्त और भी स्पष्टता से मनुष्य समाज पर घटता है। मनुष्यसमाज व्यक्तियों का सम्बन्ध विशेष है प्रत्येक सम्बन्ध में सम्बन्धियों का बन्धन आवश्यक होता है। परन्तु क्या कोई वास्तविक स्वतन्त्रता का प्रेमी इस बन्धन का निषेध कर सकता है? इस बन्धन का मनुष्य समाज की स्थिति के साथ अन्वयव्यतिरेक

रके द्वारा सम्बन्ध है, अर्थात् मनुष्यसमाज की स्थिरता इस बन्धन विशेष पर निर्भर है । यह शृङ्खला विशेष जिसको धर्म, कर्त्तव्य वा ड्यूटी (Duty) के नाम से पुकारते हैं, निःसन्देह सामाजिक स्थिति का आधार है । इसी के द्वारा मनुष्य का निहित मनुष्यत्व प्रकट और उन्नत होता है । वादी यह भी शङ्का कर सकता है कि निःसन्देह समाज और शृङ्खला का परस्पर समवाय सम्बन्ध है, परन्तु, क्या मनुष्य और मनुष्य समाज का भी वैसा ही गूढ़ सम्बन्ध है ? इसका उत्तर स्पष्ट है । मनुष्य से नितान्त बाह्य मनुष्य यदि पशु कहा जावे तो अत्युक्ति न होगी । सोसाइटी ही मनुष्य के मनुष्यत्व का प्रगट और उन्नत होना सम्भव है । जन्म से मरण पर्यन्त जंगल में अकेले रहने वाले मनुष्य के लिये कोई व्यवहार वा सदाचार का नियम नहीं हो सकता । अतएव जो मनुष्य समाज की सब शृङ्खलाओं को तोड़ फोड़ कर उससे अलग होने का साहस करता है, वह नष्ट बुद्धि प्रणाश के महागर्त्त में गिरेगा, और आत्महत्या के महापाप का भागी बनेगा ।

यह कर्त्तव्य विचार यदि केवल परम विद्वानों और तत्त्ववेत्ताओं को उपलब्ध होता तो समाज का संगठित होना दुर्घट था । परन्तु प्रभु की कैसी अपार महिमा है कि उन्हों ने मूर्ख से मूर्ख मनुष्य में भी यह कर्त्तव्य भाव (Sense of Duty) अङ्कुरित कर दिया है । इसी कर्त्तव्यभाव से प्रेरित हो कर माता अपने जीवन को बच्चे के लिये न्योछावर कर देती है । इसी भाव से प्रचोदित हो कर देशभक्त योधा रणक्षेत्र रूपी यज्ञकुंड में अपने शरीर की आहुति समर्पण करता है । जहां इस कर्त्तव्य भाव की उपस्थिति विश्वजनीन है वहां इसके लिये प्रशंसा का भाव भी मनुष्य मात्र में विद्यमान है । जहां कवियों और तत्त्ववेत्ताओं ने इस कर्त्तव्य भाव को उच्च उपमानों से उपमित किया है वहां नीच से नीच मनुष्य का हृदय भी बुद्ध के आत्मत्याग, भीष्म के प्रतिज्ञापालन, सीता के पूर्ण सतीत्व और राणा प्रताप की धर्म भक्ति को श्रवण करके द्रवीभूत हो जाता है । इन महानुभावों की कल्पित उपस्थिति में अपने जीवन की नीचता का अनुभव करके अनेक चक्षुओं से अश्रुधारा का प्रवाह चलने लगता है । सुतराम् कुदरत भी इस बन्धन विशेष को मधुर करने की चेष्टा करती है ।

हमने अब यह तो निश्चय कर लिया कि मनुष्य के लिये कदापि सामाजिक शृङ्खलाएं त्याज्य नहीं है । अब हम सदाचार के उस विषेश पक्ष पर विचार करते हैं जो इन शृङ्खलाओं के अनुसर करने के लिये आवश्यक होता है । यह पक्ष आत्मसयम और आज्ञा पालन का है । सादाचर के यह लक्षण सुशिक्षा (Discipline) के साथ बिशेष सम्बन्ध रखते है । सुशिक्षि (Discipline) सदाचार सामाजिक नियमों के पालन के लिये अत्यन्त आवश्यक है । आत्म संयम और आज्ञा पालन से शिक्षा उपलब्ध करने के लिये गृहस्थ वा परिवार एक उत्तम शिक्षालय है । अनेक कलकल और कलह जो गृहस्थाश्रम को नरक बनाते हैं छोटी २ बातों में आत्मसंयम द्वारा दूर हो सकते हं । गृहपति के लिये जो गृहस्थी का मुख्याधिष्ठाता है संयमी होना अत्यन्त आवश्यक है । यदि वह संयम की वागों को लवमात्र भी ढीली कर दे तो उस गृह के अन्य सम्बन्धियों से आज्ञा पालन का भाव निरस्त हो जाता है, उस भाव के दूर होने पर गृहरूपी राज्य में गड़बड़ मच जाती है । जो गृहपति सर्प के समान छोटी२ बातों पर भी क्रोधरूपी विष निकालते रहते हैं और अपने स्वभाव (Temper) को बिगाड़ देते हैं वह गृह कदापि माननीय नहीं हो सकते और उनके अधीन सम्बान्धियों में विद्रोहादि भाव उद्दीप्त हो जाते हैं ।

जिस प्रकार गृह का प्रबन्ध करने के लिये सुशिक्षित सदाचार की आवश्यकता है वैसे ही महान् सामाजिक और राजनैतिक कार्यों को चलाने के लिये आत्म संयम और आज्ञा पालन अत्यन्त उपयोगी है । सोसाइटी और जाति चूंकि अनेक परस्पर विरोधी स्वभावों और अवस्थाओं वाले मनुष्यों का समुदाय है इस लिये इस भेदात्मक मनुष्य समूह को सुनियमित और सुखी रखना सचमुच किसी समाहित (Balanced) चित्त मनुष्य को कार्य्य है राजनैतिक कार्य्य जिनमें न केवल स्वजाति परन्तु भिन्न २ और प्रायः परस्पर विरोधी परदेशों के साथ व्यवहार करना पड़ता है, सुशिक्षित सदाचार की ओर भी अधिक अपेक्षा रखते हैं । जो मनुष्य आवश्यक गोपनीय रहस्य को प्रकट कर देते हैं । जो अपनी वाणी में अत्यन्त शिथिलता (Looseness) अत्युक्ति अथवा जनुचित क्रोध Bvindictiveness का परिचय देते हैं, जो साधारण मनुष्यों के व्यक्तिगत निन्दावाक्य

को श्रवण करके अन्धाधुन्द विश्वास कर लेते हैं, जो विरोधियों के कटाक्षों से भयभीत हो कर अपने आत्मा के प्रतिकूल आचरण कर बैठते हैं, वे मनुष्य महान् सामाजिक अथवा राजनैतिक कार्य्यों को चलाने के योग्य नहीं है । वर्त्तमान काल में भी हमको सुशिक्षित नीतिमानों के आदर्श मिलते हैं ! जिन पाठक महाशयों को समाहित (Balanced) वक्तृता और समाहितचित्त का नमूना देखने की अभिलाषा हो वह अंग्रेज़ी राज्य के आधुनित प्रधान वज़ीर एसकिथ साहिब (Mr. Asquith) के उस व्याख्यान को पढ़लें जो उन्हों ने गत जुलाई मास में "कान्स्टीटयूशन बिल " (Constitution Bill) के विषय में दिया था । इस कानून को पार्लीमेन्ट में पेश करने के कारण उन पर बड़े भयंकर और मिथ्या आक्षेप लगाये गये । उनके विरोधियों नें एस्किथ साहिब के विरुद्ध राजविद्रोह (Treason) का अभियोग खड़ा करने की धमकी दी । एस्किथ साहिब और उनके सहकारियों को सम्राट एडवर्ड का घातक कहा गया । परन्तु जिस शान्त और सुनियमित शील से उन्होंने इन आक्रमणों का उत्तर दिया उसका अनुभव करके रोम खड़े हो जाते हैं । उनके व्याख्यान का एक शब्द भी ऐसा नहीं था जो सभ्यता वा सुजनता के पथ की रेखा मात्र भी अतिक्रान्त करता हो । निःसन्देह ऐसे महानुभाव ही करोड़ों मनुष्यों और भिन्न २ जातियों पर अपना प्रभाव डाल सकते हैं ।

इसी प्रकार विदेष विभाग के मंत्री (Foreign minister) साहिब (Sir Edward Grey) ने जिस तरह गतमासों में जर्मनी प्रार्थनानुसार उस देश का भेद गुप्त रखा वह सचमुच हमारी हार्दिक प्रशंसा के योग्य है । समाचार पत्रों के पाठकों को विज्ञात होगा कि गत वर्ष फ्रान्स और जर्मनी का मोराको देश के विषय में [illegible] विवाद हो गया था । जर्मनी ने बहिरंग प्रभाव डालने के लिये अपना एक जंगी जहाज भी मोराको देश की ओर भेज दिया था, परन्तु गुप्तरीति से ग्रे साहिब को निवेदन करदिया कि " हमारा मोराको देश का विजय करने का लवमात्र भी विचार नहीं है । हम [illegible] डराना चाहते हैं । परन्तु आप हमारी इजाजत के बिना इस [illegible] को प्रकट न करें" । इस जंगी जहाज के भेजे जाने पर अङ्गरेजी [illegible] में बहुत क्रोधमय आन्दोलन हुआ, मंत्री साहिब से वास्तविक

वृत्तान्त वार २ पूछा गया, उन पर बहुत आक्षेप किये गये, यहां तक कि संभवतः उनको अपनी स्थिति पर भी आशङ्का होने लग गई होगी परन्तु वह शान्त और दृढ़ रहे और उन्होंने जर्मनी की आज्ञा के बिना इस भेद को प्रकट नहीं किया। पाठक वृन्द! ऐसे स्थितधी पुरुष ही सामाजिक और राजनैतिक बड़े २ कार्य्य चला सकते हैं।

हमारे देश के साहित्य के लिये आत्मसंयमादि गुणों के उदाहरण अपूर्व नहीं है। दृढ़ता और संयम हमारे पूर्वजों का विशेष गुण था। परन्तु आज कल हमारे परिवारों में शिथिलता और असंयम का इतना राज्य हो गया है कि जब कभी इन के प्रतियोगी सद्गुणों पर उपदेश दिया जाता है तो हमारे लोग प्रायः यही कह देते हैं कि "अब तो कलियुग का ज़माना है"। अत एव हमें अन्य वर्तमान जातियों के उदाहरण देने पड़ते हैं।

यह ज़माना स्वतन्त्रता का है। विद्या की वृद्धि के साथ २ स्वतन्त्रता के लिये आकांक्षा प्रतिदिन अधिकतर बढ़ रही है। विलायत में विशेषतः स्वतन्त्रता के लिये अशान्ति और उत्कंठा वृद्धि को प्राप्त हो रही है। स्वतन्त्रता की ध्वनि अब भारतवर्ष में भी गूंज उठी है। परन्तु इस कल्पित स्वतन्त्रता के ग्रहण करने में भारतनिवासियों के लिये अनेक ख़तरे भी हैं। वह स्वतन्त्रता जो अत्याचार और अन्याय को पद दलित करके देश की नियमानुसार उन्नति के लिये उपयोगी होती है, निःसन्देह ग्रहण करने के योग्य है। परन्तु वह स्वतन्त्रता जो आवश्यक सामाजिक शृङ्खलाओं को भी अतिक्रान्त करने का साहस करती है सर्वथा त्याज्य है। स्वाधीनता के भावों को अङ्कुरित करते हुए साथ २ सामाजिक शृङ्खलाओं के अनुसरण करने में ही मनुष्य का कल्याण है। इस में सन्देह नहीं कि स्वतन्त्रता और नियम का सहचार बहुत कठिन होता है। यदि किसी जाति में स्वतन्त्रता और शृङ्खलापालन का सहचार अपूर्व रूप से विद्यमान है तो वह अङ्गरेज़ जाति है। जब हम अङ्गरेज़ों का इतिहास पढ़ कर उनका आज़ादी के लिये जोश देखते हैं तो हम चकित हो जाते हैं। परन्तु साथही जब हम उनमें कानून की पाबंदी के भावों को देखते हैं तो हमारा आश्चर्य द्विगुण हो जाता है। जिन इतिहास रसिकों ने आङ्गलदेश की १६८६ वाली महाक्रान्ति (Revolution of 1689) का वृत्तान्त पढ़ा है वह निःसन्देह अङ्ग-

रेज़ों में स्वतन्त्र और सुशिक्षित भावों के सहचार को अवलोकन करके हैरान होगये होंगे कि किस प्रकार उस महाक्रान्ति में दो पार्टियां जो वर्षों से परस्पर विरोधी चली आती थीं देश को अमंगलसे सुरक्षित रखने के लिये आपत्काल में एकत्रित हो गईं, और स्वतन्त्रतागोचर प्रलोभनों के होते हुए भी उन्होंने देश में शान्ति और सुप्रबन्ध को सुस्थिर रखा। वर्त्तमान काल में ही गत मार्च में जो (strike) हड़ताल हुई थी उसमें यदि विरोधी पार्टी चाहती तो वर्तमान गवर्नमेन्ट को छिन्नभिन्न कर सकती थी परन्तु धन्य है यह आङ्गलदेश जिसमें उस आपत्काल में सब विरोध विस्मृत करके विरोधी पार्टी के प्रधान ने स्पष्ट कह दिया कि "हम देश के सुप्रबन्ध के मार्ग में प्रतिबन्ध नहीं डालना चाहते और वर्तमान गवर्नमेन्ट की सुप्रबन्धार्थ चेष्टाओं पर आक्षेप नहीं करेंगे"। इस प्रकार देश के मङ्गल के लिये उन्होंने अद्भुत शान्ति का परिचय दिया। हड़ताल में प्रायः मज़दूरोंने जिस स्वस्थ और शान्त अवस्था को धारण किया वह भी उदाहरणीय और सदास्मरणीय है।

परन्तु अङ्गरेज़ों का सुशिक्षित (disciplined) सदाचार टिटैनिक जहाज़ के डूबने के समय और भी स्पष्टतया आविर्भूत हुआ है। इस आपत्ति का रोमहर्षण वृत्तान्त प्रायः सब पाठकों को विज्ञात हो गया होगा। हमारे पाठकों को सुविज्ञात होगा कि कैसी शान्ति से जहाज के सब मुसाफ़िरों नें स्त्रियों और बच्चों को प्राण रक्षक नावों में जाने दिया और स्वयम मृत्यु के लिये कटिबद्ध होगये। उस समय एक आवाज़ भी शिकायत अथवा क्लेश को दर्शाने वाला सुनाई नहीं देती थी। वह पुरुष पत्थर के समान दृढ़ और अचल रहे। ओह! कैसा असाधारण संयम था! इस आपत्ति में एक छोटा सा परन्तु अङ्गरेज़ों के सदाचार पर विषेश प्रकाश डालने वाला वृत्तान्त उल्लेख के योग्य है। जब उस जहाज का एक अधिकारी कुछ निराश होरहा था तो दूसरे ने उसे यही कह कर उत्साहित किया कि "अङ्गरेज़ बनो" Be British मानों कि अङ्गरेज के नाम सेही आत्मसंयम और धैर्य्य टपकता है।

अभी थोड़ा ही समय हुआ कि जापान राज्य के उपमंत्री टोकोमानी साहिब (Tokomani) विलायत यात्रा करके अपने देश को वापिस आगये हैं। वह अङ्गरेज़ी जातियां (Anglo Saxon races)

में स्वतंत्रता और राज भक्ति के सहचार को देख कर चकित होगये हैं और उन्हीं ने यह निर्धारण किया है कि इस सहचर्य्या का कारण धर्मशिक्षा है। सुतराम उन्होंने अपने देश में धर्मशिक्षा के विस्तार के लिये विशेष चेष्टा आरम्भ कर दी है। वास्तव में हम उसी उपसंहार पर पहुंचते हैं। विचार शील सज्जन अनुभव करते हैं कि समाजिक शृङ्खलाओं का परित्याग करने में घोर आपत्ति का भय है. और शृङ्खलाओं की दृढ़ता से पालन करने के लिये सुशिक्षित सदाचार की अत्यन्त आवश्यकता है। इस विषय में अङ्गरेज़ जाति हम भारत निवासियों के लिये विशेष उदाहरण है। हम अपने पाठको से आशा रखते हैं कि वह ऐसे उत्तम उदाहरणों का अनुकरण करते हुए अपनी मानसिक शक्तियों का सामाजिक शृङ्खलाओं का अनुसरण करने के लिये सुशिक्षित सुनियमित करने का प्रयत्न करेंग ॥

" अनूठी घोषणा "

(गीतिकात्मक राजगीत)

३,१०,१७,२४ वीं मात्रायें अन्त में लघु, दीर्घ १४,१२ पर यति

——:o:——

धर्म की चरचा मिटाना, कोई हमसे सीखलो
आर्य्य से हिन्दू कहाना, कोई हमसे सीखलो ॥ १ ॥
झोपड़ी का नाम लेकर, महल पूरा चाहिये।
ढोंग से खाना कमाना, कोई हमसे सीखलो ॥ २ ॥
लोक में सत्कीर्ति जिनकी. आज तक फैली हुई।
हां! उन्हीं का कुल लजाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ३ ॥
सिद्ध सद्धर्मी न कोई, भी बनें वानक बना।
भीतरी भर्ती भराना, कोई हमसे सीखलो ॥ ४ ॥
हो चुकी कबकी समुन्नति छोड़िये इस ख्यालको।
दुर्दशा के नद बहाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ५ ॥
बैठ कर सत्सङ्ग में भी, दुष्टता मन में रही।
रङ्ग बेहूदा ज़माना, कोई हमसे सीखलो ॥ ६ ॥

एकता के पाठ पढ़ने का, नहीं अनुराग है।
भीतरी चोटें चलाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ७ ॥
खोचुके प्राचीन गौरव, दीन कब के होचुके।
ग़ैर लोगों का हँसाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ८ ॥
वेद सम्मत धर्म देखो, दूर है व्यवहार से।
नींच करनी कर निचाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ९ ॥
माङ्गलिक सद्भावों, का निरन्तर ह्रास है।
कोरी बातों से रिझाना, कोई हमसे सीखलो ॥ १० ॥
योग सत्युग का नहीं है ऐतिहासिक बल घटा।
नारकी जीवन जुड़ाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ११ ॥
वर्ण आश्रम मिट चुके हैं, जारही जातीयता।
पांच मत पाकर खिजाना, कोई हमसे सीखलो ॥ १२ ॥
हो न सकती है भलाई, दीन और ईमान से।
ठोकरें दिनरात खाना, कोई हमसे सीखलो ॥ १३ ॥
काम करना प्रेम से कब, ठीक समझा जा रहा।
न्यारे हो खिचड़ी पकाना, कोई हमसे सीखलो ॥ १४ ॥
दूर है दिन अभ्युदय का, यह हम्हीं दिखला रहे।
नींद में सोना सुलाना, कोई हमसे सीखलो ॥ १५ ॥
लाभ कर आदर्श जीवन, यश किसी का भी नहो।
नींच अपने को बनाना, कोई हमसे सीखलो ॥ १६ ॥
नेक भी रहने न पाये, इस जगह अत्युच्चता।
रीति पहले की झुठाना, कोई हमसे सीखलो ॥ १७ ॥
जानकर भी धार्मिकों की, सीख लेते हैं नहीं।
धूल में सद्गुण मिलाना, कोई हमसे सीखलो १८ ॥
कर्म करके भी भला अब, कौन ऊंचा चढ़ सके।
जाति को जीवन दिलाना, कोई हमसे सीखलो ॥ १९ ॥
नींच समझे जांय ऊंचे, भी महा अन्धेर है।
ऐंठ में ईंठना ईंठाना, कोई हमसे सीखलो ॥ २० ॥
नाम को छिजता रहा है, वेद विद्या त्यागदी।
धार्मिक आदर का घटाना, कोई हमसे सीखलो ॥ २१ ॥
काम कुछ होता नहीं, पूज्य सब के हैं बने।
टाँय फिस कर फिस फिसाना, कोई हमसे सीखलो ॥ २२ ॥

पा रहे विवृद्धि पापी, धार खोटी धारणा।
धार्मिकों को दुख दिलाना, कोई हमसे सीखलो ॥ २३ ॥
शुद्ध भावों से न होगा, देश का कुछ भी भला।
नीयतों में गन्द लाना, कोई हमसे सीखलो ॥ २४ ॥
न्यूनता हो जाय सच्चे, प्रेम धन की भी न क्यों ?
द्वेष की आदत बढ़ाना. कोई हमसे सीखलो ॥ २५ ॥
हो न सकता न्याय पंचों, में अदालत कीजिये।
नाश की अगनी जलाना, कोई हमसे सीखलो ॥ २६ ॥
सामुदायिक शक्ति सारी, मिट गई बाक़ी न है।
फूट का अङ्कुर उगाना, कोई हमसे सीखलो ॥ २७ ॥
दूर हो सङ्कल्प सारा, सद् विचारों से भरा।
ध्यान ध्रुवता से हटाना, कोई हमसे सीखलो ॥ २८ ॥
सिद्ध साधकता न होगी. शुद्ध वार्तालाप से।
व्यङ्ग वाणी में धसाना. कोई हमसे सीखलो ॥ २९ ॥
शास्त्र चरचा का निशाँ ही, आज बाक़ी है यहां।
नाविलें पढ़ना पढ़ाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ३० ॥
हो भला कैसे किसी का, शुद्ध आत्मा ज्ञान से।
बात इतकी उत भिड़ाना. कोई हमसे सीखलो ॥ ३१ ॥
हां ! न क्यों बरबाद होंगे, मेल कर प्रतिद्वन्दता।
धूल गौरव की उड़ाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ३२ ॥
हिन्दुओं में हास्य होगा, आर्य्य बनकर भी डरो।
आत्म-निर्बलता दिखाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ३३ ॥
धर्म वीरों को सुझादो, दान में कौड़ी न दें।
भारतोदय यों कराना, कोई हमसे सीखलो ॥ ३४ ॥
दीजिये चन्दा न बाक़ी, धन सभा का मारलो।
चाल ऐसी उर बसाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ३५ ॥
जो कि हैं विज्ञान भिक्षा, मांगते यति वर्ग से।
दोष दल उनके गिनाना. कोई हमसे सीखलो ॥ ३६ ॥
हो चुकी संसार में ध्रुव, धर्म की सद् घोषणा।
वार्षिकोत्सव का मनाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ३७ ॥
ध्यान अपनी नीचता पर, लेश भर भी तो नहीं।
डाँट औरों को बताना, कोई हमसे सीखलो ॥ ३८ ॥

लीडरों को कोसते पर, लीडरी मिलती नहीं।
ढीठ! लज्जा को भगाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ३९ ॥
क्यों भला आत्मा महाके, मेल से मानें मिला।
शख़्सियत पर वार पाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ४० ॥
तापसिक सद् वेष पाया, है जिन्होंने योग से।
दोष उनके सर मढ़ाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ४१ ॥
सत्य की सत्ता सनातन, से समादर पारही।
झूंठ से उसको दबाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ४२ ॥
धर्म की विविधानता को, दीजिये अब तो भला।
स्वार्थ का साधन सधाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ४३ ॥
शुद्ध पतितों को कराना, ग्राह्य आत्मा से नहीं।
शास्त्र की आज्ञा भुलाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ४४ ॥
देश बान्धव दीन खोकर, हो रहे वेदीन हा!
पास तक उनके न जाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ४५ ॥
है जिन्हें अनुरक्ति अपने, बान्धवों की शुद्धि से।
जाति से उनको छिकाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ४६ ॥
शुद्धि कैसे हो कहो तज, आय की विधि सौख्यदा।
अन्ध बन सब कुछ लुटाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ४७ ॥
बाल विधवायें न व्याही, जायंगी निर्भीक हो।
रे उन्हें छिप २ रुलाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ४८ ॥
भ्रूण हत्या हो रही है, क्या पता तुमको नहीं।
धर्म ऐसे ही निभाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ४९ ॥
योग्य भाई एक पंक्ती, में न बैठे खा सकें।
छूत का छकड़ा लदाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ५० ॥
मांस खाने और मदिरा, पान करने में भले।
शुद्धता की विधि निभाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ५१ ॥
सत्य व्रत किस भांति पाला, जा सकै कापट्य से।
हास में इस भांति आना, कोई हमसे सीखलो ॥ ५२ ॥
बन्धु पन इस बात में है, दीजिये नीचे गिरा।
भाव अति ऊंचे दुराना, कोई हमसे सीखलो ॥ ५३ ॥
योग्यता कर्पूर सारी, हो चुकी कबकी अरे!
पञ्च लिख पञ्जा पुजाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ५४ ॥

कीजिये साहित्य का भी, सत्कवे ! कर से भला।
श्रेष्ठ कविता कर सिहाना, कोई हमसे सीखलो ॥ ५५ ॥
कर्ण जैसे तुक्कड़ों की, तोड़ तो गर्दन अभी।
न्याय भी तो शायराना, कोई हमसे सीखलो ॥ ५६ ॥
"कर्ण"—

———o———

आत्मावलम्ब ।

(म. बनारसीदास फीरोज़ाबाद लिखित)

उन्नति के अनन्तर अवनति और अवनति के पश्चात् उन्नति हुआ ही करती है इस सार्वलौकिक कथन की सत्यता की पुष्टि के लिये प्रमाण देना अनावश्यक है । इसे तो स्वयं सिद्धि समझना चाहिये इतिहास इस बात की साक्षी दे रहा है । आप किसी सभ्य देश का इतिहास लेलीजिये और ओर से छोर तक पढ़ जाइये आपको एक नहीं कितने ही प्रमाण इस बात के मिल जावेंगे। जो जातियां कभी अवनति के गढ़े में पड़ी हुई थीं आज वेही उन्नति के शिखर पर आरूढ़ हैं । जिनके कि बाप दादे कच्चा मांस खाया करते थे आज संसार की सभ्य जातियों की सूची में सब से पहिले उंगली उन्हीं के नाम पर पड़ती है । जो अज्ञानान्धकारावृत थे आज उन्हीं के पुत्र प्रपौत्रों के मस्तिष्क में ज्ञान का दिया जल रहा है। जिनके कि अग्रज झोंपड़ी तक बनाना नहीं जानते थे वे आज अभ्रंलिह महलों में विलास करते हैं अब चलिये दूसरी ओर का दृश्य देखिये। जो जातियां पूर्ण रूप से जागृत थीं । आज वे चिरनिद्रा में खर्राटे भर रही हैं । जिनके कि पूर्वज कितनीही चित्र बातों के आविष्कारक थे और जिनका कि सिक्का सारे संसार पर जम रहा था आज वही विस्मृत नदी के तल में पड़े हुए हैं। जातियां जो कि अपने उन्नति के जहाजों को भवसागर के जल पर अनुकूल वायु में खेरही थीं आज वेही जहाजों के अज्ञान की चट्टानों से टकराकर चकना चूर जान से नष्ट प्राय होगई हैं । इन सब बातों पर एकाग्र

होकर विचार करने पर भी ऐसा कौन होगा जिसके मन में यह जानने की इच्छा न उत्पन्न हो कि जातीय उन्नति क्या है और जातियों की उन्नति तथा अवनति के क्या २ कारण हैं। यदि हम सूक्ष्म दृष्टि से देखें तो हमें तुरंत ही ज्ञात हो जायगा कि किसी जाति की उन्नति उस जाति के व्यक्तियों की भिन्न २ उन्नतियों का योग है। उन्नत जाति के मनुष्य उद्योगी, धैर्य्यवान और परोपकारी होते हैं और जिस जाति के मनुष्य आलसी धैर्य्य रहित और स्वार्थ परायण हैं उस जाति का अधोपतन अवश्य ही होता है। किसी जाति के व्यक्तियों के दोषों के सोते एकत्रित होकर सामाजिक बुराइयों की नदी बन जाते हैं। यदि हम किसी राष्ट्र के दोषों को जड़ मूल से उखाड़ना चाहें तो सब से पहिले यह आवश्यक होगा कि हम उस जाति के प्रत्येक स्त्री वा पुरुष को उन दोषों से बचाने का प्रयत्न करें। यदि उपरोक्त कथन में कोई त्रुटि नहीं तो यह कहना भी असङ्गत न होगा कि सबसे बड़ी देश भक्ति और देश सेवा इसी में है कि अपने देश के भिन्न२ मनुष्यों को अपने आचरण व विचारों के सुधारने में सहायता व उत्साह दिया जावे। जब प्रत्येक व्यक्ति अपनी २ उन्नति करेगा तो जातीय उन्नति अनायास ही हो जावेगी। अब सोचना चाहिये कि एक व्यक्ति की उन्नति के लिये सब से प्रधान और अत्यावश्यक वस्तु क्या है। इस विषय में एक अंगरेज़ विद्वान की सम्मति प्रगट करना युक्ति सङ्गत प्रतीत होता है उसका वचन है The spirit of self help is the root of all genuine growth in the individual अर्थात् आत्मावलम्ब का सद्भाव ही प्रत्येक व्यक्ति की उन्नति का मूल कारण है। पाठशालाओं में शिक्षा बिना पाये हुए भी मनुष्य आत्मावलम्ब से उन्नति कर सकते हैं। बहुत से मनुष्यों की सम्मति है कि Schools and Colleges में शिक्षा बिना पाये हुए मनुष्य उन्नति नहीं कर सकते परन्तु उसका यह सिद्धान्त भ्रममूलक है पाश्चात्य देशों में ही नहीं वरन् पूर्वीय देशों में भी कितने ही मनुष्य ऐसे हुए हैं और ऐसे अनेक अद्यावधि विद्यमान हैं जो केवल स्वावलम्ब से ही असाधारण उन्नति कर गये हैं इस लिखने से हमारा यह अभिप्राय कदापि नहीं कि विश्वविद्यालय और college अनावश्यक वस्तु हैं ऐसा कहना कृतघ्नता हो क्योंकि ये हमें उन्नति करने में अवश्यही बहुत सहायता देते हैं परन्तु

वह सहायता अनिवार्य्य नहीं है ये हमारे मार्ग के बहुत से विघ्नों को दूर कर देते हैं पर उस मार्ग पर चलना तो काम हमारा ही है और यह बिना स्वावलम्ब के हो नहीं सकता । और भी जो शिक्षा हम Schools and Colleges में पाते हैं उसे प्रारम्भिक शिक्षा कहना अनुचित न होगा । इस शिक्षा का महत्व उस शिक्षा से जो कि, हम आत्मावलम्ब से और उद्योग से प्राप्त करते हैं बहुतही कम है। जो कुछ कि हम आत्मावलम्ब से सीखते हैं हमारा ही है और इस तरह प्राप्त की हुई शिक्षा हम बहुत कम भूलते हैं । वह हमारे मस्तिष्क पर पत्थर पर की लकीर की तरह चिरस्थाई हो जाती है परन्तु दूसरे की दी हुई शिक्षा प्रायः चिरस्थायी नहीं होती । इसके लिये उदाहरण ढूंढ़ने के अर्थ दूर जाने की आवश्यकता नहीं। आप रेखा गणित में ही देख लीजिये जो अभ्यास हम अपने आप हल करते हैं वे समय पर काम भी आते हैं परन्तु जो अभ्यास हम किसी की सहायता से हल करते हैं हम बहुत जल्द भूल जाते हैं। संसार के सारे शिक्षक इस बात में एक मत हैं कि विद्यार्थियों को इस प्रकार से शिक्षा देनी चाहिये कि वे आत्मावलम्ब पर ही निर्भर रहें। हमारी मानसिक,शारीरिक और सामाजिक उन्नति हमारे ही हाथ में हैं । यदि हम सदाचारी बना चाहें तो हमें अपनाही सहारा ढूंढ़ना होगा । राजदण्ड के नियम हमारे आचरण और विचारों के शुद्ध करने में कदापि समर्थ नहीं। ये नियम कितने ही कठिन क्यों न हों परन्तु वह आलसी को परिश्रम मद्यसेवी को ज्ञान और अपव्ययी को धनोपयोग के उचित नियम सिखाने में नितान्त असमर्थ हैं ये सुधार तो केवल आत्मावलम्ब और आत्म निग्रह से ही हो सकते हैं।

राष्ट्रोन्नति में आत्मावलम्ब की प्रधान आवश्यकता—

बहुत से मनुष्य स्वतंत्रता के लिये व्वर्थही चिल्लाया करते हैं परन्तु बिना आत्मावलम्ब के स्वतंत्रता कदापि प्राप्त नहीं हो सकती। हमारा यह अभिप्राय नहीं कि स्वतंत्रता कोई छोटी चीज़ है और इसी कारण उसके लिये चिल्लाना निरर्थक है। ऐसा कहना तो स्वतंत्रता देवी की मानहानि करना होगा । जहां हम स्वतंत्रता को अपने हृदय में सर्व्वोत्तम पद देते हैं वहां हमें आत्मावलम्ब को भी एक अमूल्य और अद्वितीय वस्तु समझना चाहिये । एक विदेशी

परतंत्र देश निवासी सच्चे देश भक्त का कथन है "सैकड़ों बार हमारे देश भाइयों के मुख से निकली हुई स्वतंत्र जाति की ध्वनि हमारे कानों में गुनगुनायमान होकर हमें विचार सागर में निमग्न कर चुकी है और हम जन्म से अद्यपर्य्यन्त यही सुनते रहे हैं कि अब स्वतंत्रा मिलती है परन्तु स्वतंत्रता देवी ने आज तक दर्शन नहीं दिये। हम स्वतंत्रता को ईश्वरदत्त नियामतों में सबसे बड़ा समझते हुए भी यह कहना अनुचित नहीं समझतें कि स्वतंत्रता के लिये चिल्लाना निरर्थक है। हमें अपने व्यापार को अपने हाथ में लाने का प्रयत्न करना चाहिये। हमारा अभीष्ट यही होना चाहिये कि हमारा राष्ट्र आत्मावलम्ब पर ही निर्भर रहे इत्यादि" तात्पर्य्य यह है कि यदि हम परतंत्रता की वैतरणी नदी को पार कर स्वतंत्रता रूप स्वर्ग लाभ किया चाहते हैं तो हमें आत्मावलम्ब रूपी गाय की पूँछ पकड़ना चाहिये। जोराष्ट्र उन्नतिशीलों में शिरोमणि हैं वे केवल अपने निवासी मनुष्यों की कितनीही पीढ़ियों के निरन्तर परिश्रम के फल हैं। किसी राष्ट्र का उद्धार करना कोई सामान्य का मठा नहीं जिसे कि गड़ गड़ गड़ करके पीजावें यह बड़ी ही टेढ़ी खीर है। भावार्थ यह है कि राष्ट्र रूपी छप्पर के उठाने के लिये आवश्यकता है कि सब लोग हाथ लगा कर थोड़ा बहुत साहस दें जिस राष्ट्र को उन्नति करनाहै उसके लिये राजा रंक, बाल वृद्ध, स्त्री पुरुष सब को चाहिये कि तन मन धन से प्रत्येक विभाग में प्रयत्न करें। उस देश के किसान, व्योपारी आविष्कारक, कवि तत्त्ववेत्ता एवं राजनीतिज्ञ आदि सबको इस शुभ कार्य्य में योग देना चाहिये। यह बात प्राचीन और आधुनिक उन्नति शील राजों के इतिहास को देखने से भले प्रकार प्रगट हो जावेगी। परन्तु ध्यान रहे कि बिना आत्मावलम्ब के हाथ पर हाथ धरे बैठे रहने से कुछ नहीं होसकता। जो जातियां अब व्यापार में अग्रसर हैं आत्मावलम्ब को ही उन्नति का सब से बड़ा अस्त्र मानती हैं। जो जातियां अपने ऊपर निर्भर हैं सर्वदा जीवित रहतीं हैं परन्तु जो जातियां दूसरे के भरोसे हैं वे थोड़े ही दिनों में विकराल काल के गाल में चली जाती हैं।

आत्मावलम्ब से एक नीच कुलोत्पन्न मनुष्य भी उन्नति कर सक्ता है—विज्ञान व साहित्य के धीर धुरंधर पंडित किसी एक विशेष समुदाय के नहीं हुए। आत्मावलम्ब में अपरामित

शक्ति है। वह किसी जाति विशेष से परिमित नहीं है। किसी एक जाति ने यह पट्टा नहीं लिखवा लिया कि विद्वान उसी जाति के हों दूसरे के नहीं। अंगरेज़ी के सर्व्वोत्तम कवि शेक्सपियर, जिनकी कि मधुर मोदनी किताब आज तक पाठकों के कमल हृदय को खिलाने में सूर्य्य का काम दे रही है एक जुलाहे के पुत्र थे। पाश्चात्य देश में कितनेही मनुष्य ऐसे विद्यमान हैं जोकि नीच से नीच कुलों में उत्पन्न होकर भी उच्च से उच्च पदों पर विराजमान हैं उदाहरणार्थ अमेरिका की United States के सभापति Andrew Johnson को लेलीजिये आप लड़कपन में दर्जी का काम करते थे इस दुर्लभ पद प्राप्त करने के पश्चात एक वार जब कि वे भरी सभा में व्याख्यान दे रहे थे जन समूह में से "दरजी है दरजी है" ऐसा शब्द हुआ इस ताने को सुन कर आपने चटसे कहा कोई महाशय मेरे पहिले दर्जी का व्यवसाय करने पर कटाक्ष कर रहे हैं मैं इस बात का बिलकुल बुरा नहीं मानता क्योंकि जब मैं दर्जी था मैं अपना काम बहुत अच्छी तरह करता था मैं ग्राहकों को कपड़ा निश्चित समय पर दे दिया करता था और वे मेरे इस सच्चे व्यवहार से सर्वदा सन्तुष्ट रहा करते थे" विशेष उदाहरण देने की कोई आवश्यकता नहीं आपही स्थाली पुलाक न्याय से समझ लें॥

आत्मावलम्बी आविष्कारक— आज तक जितने आविष्कारक हुए हैं सब आत्मावलम्बी हुए हैं। आविष्कारकों ने संसार का जितना उपकार किया है वह अकथनीय है। संसार उनका सर्वदा कृतज्ञ रहेगा। हमारी आवश्यकताओं के पूरा करने में आविष्कारकों ने पूरी २ सहायता दी है। हमारे तार रेल विमान इत्यादि सब आविष्कारकों के वर्षों के परिश्रम के फल हैं। आविष्कारकों को अपने मार्ग में नाना प्रकार के विघ्न झेलने पड़े हैं। उन के सैकड़ों रुपयों की धूर हो गई है आरोग्यता में भी बाधा आ पड़ी है परन्तु इन्होंने आत्मावलम्ब से सब विघ्नों को दूर कर अपने कार्य्य में सफलता प्राप्त करके इस कथन को सार्थक सिद्ध कर दिया है "**विघ्नैः सहस्र गुणितैरपि हन्यमानाः प्रारभ्य चोत्तमजनाः न परित्यजन्ति**"॥ आविष्कारक ही अपने मार्ग की कठिनाइयों को जानते हैं। कई एक आविष्कारक ऐसे हैं जिनके कि सम्बन्ध में मनुष्य बहुधा कहा करते हैं कि ये काकता-

लीय न्याय से हो गये हैं परन्तु यह उनका कहना अधिकांश में ठीक नहीं यदि हम भले प्रकार इस बात का अन्वेषण करें तो हमें ज्ञात हो जावेगा कि इनका बहुत ही थोड़ा भाग काकतालीय न्याय से आविष्कृत हुआ है। ऐसे आविष्कारकों के उदाहरण देने के लिये मनुष्य बहुधा न्यूटन और पेड़ से सेव गिरने की कथा कहा करते हैं उनसे पूँछना चाहिये कि इसमें आकस्मानिक क्या हुआ न्यूटन की कितनी ही वर्षें आकर्षण शक्ति के आविष्कार में खर्च हो चुकी थीं। सेव का पेड़ से नीचे गिरना केवल न्यूटन जैसे तीक्ष्णबुद्धि मनुष्य के लिये कुछ मनन योग्य बात थी। किसान सैकड़ों फलों को वृक्षों से नीचे गिरते देखते हैं पर आकर्षण शक्ति का आविष्कार किसी ने नहीं किया ॥ विशेष न लिख कर यह कह देना काफ़ी होगा कि घुणाक्षर न्याय से कहीं आविष्कार नहीं हुआ करते हैं आविष्कार तो केवल निरन्तर परिश्रम और आत्मावलम्ब से ही होते हैं ॥

Steam Engine की उपयोगिता के विषय में कुछ भी कहना अनावश्यक है इसके आविष्कारकों को जो नई २ कठिनाइयां मार्ग में पड़ी होंगी वेही जानते होंगे ; इस के आविष्कारकों में वाट का नाम सब से मुख्य है। आप बड़े ही उद्योगी मनुष्य थे आपका जीवन चरित हमें स्पष्टतया बतलाता है कि एक साधारण मनुष्य भी आत्मावलम्ब और परिश्रम से क्या २ कर दिखा सक्ता है। वाट के समकालीन बहुत से मनुष्य इतने विज्ञ थे कि वाट उनके सामने कुछ भी नहीं था परन्तु वाट के समान कोई परिश्रमी नहीं था यही कारण है कि वाट अपने कार्य्य में सब से अधिक सफल हुआ। वाट जिस काम को अपने हाथ में लेता था वह अपना ध्यान सब ओर से खींच कर उसी ओर लगाये रहता ॥ बात तो सच यह है कि प्रकृतिदत्त बुद्धि तो लगभग सब में बराबर होती है। परन्तु हम देखते हैं कि बहुत से मनुष्य बड़े विद्वान और बुद्धिमान हो जाते हैं और बहुत से निरे भौंदूही रह जाते हैं इसका क्या कारण है? यदि हम विचार पूर्वक देखें तो हमें ज्ञात हो जावेगा कि यह अन्तर केवल बचपन से एकाग्रचित्त होकर ध्यान लगाने के ऊपर निर्भर है। आकर्षण शक्ति के आविष्कारक न्यूटन के आत्मावलम्बी होने के सम्बन्ध में हम पहिले लिख चुके हैं उसका फिर लिखना पुन-

रोक्त दोष होगा। आपसे जब कोई पूँछता था कि ये आविष्कार आपने किस प्रकार किये आप नम्रतापूर्वक उत्तर में कह देते थे "केवल निरन्तर चिन्तन और आत्मावलम्ब से" एक बार किसी मनुष्य ने उनसे पूँछा "आप अपना काम किस तरह करते हैं?" आपने सविनय निवेदन किया "मैं जिस विषय का अध्ययन करना चाहता हूं उसे हर वक्त अपने सामने रक्खे रहता हूं और उस पर एकाग्रचित्त होकर विचार करता हूं। धीरे २ सब बात समझ में आने लगती है। छिपी हुई बातें खुल जाती हैं और जो बुद्धि एक छोटे से वृत में चक्कर लगाती थी एक विस्तृत मैदान में घूमने लगती है" एक बार न्यूटन के वर्षों के परिश्रम से लिखे हुए कागज़ों को उनके कुत्ते ने लेम्प लुढ़का कर राख में मिला दिया था। न्यूटन ने अपनी सहनशीलता के कारण कुत्ते से कुछ नहीं कहा और फिर बड़े कठिन परिश्रम के अनन्तर उन्हें लिख लिया यह कहना पिष्टपोषण होगा कि आत्मालम्ब से एक साधारण मनुष्य भी सब कुछ कर सक्ता है। न्यूटन जब पाठशाला में पढ़ता था। वह अपनी "कक्षा में सब से फिसड्डी था। एक बार उसके एक सहपाठी ने जो उससे तेज था हँसी उड़ाई यह बात न्यूटन के लग गई और उसने उस दिन से कठिन परिश्रम करने का प्रण कर लिया और थोड़ेही दिनों में अपने को सब से अच्छा करके दिखा दिया नैपोलियन भी लड़कपन में बहुत तेज नहीं था परन्तु बादको आत्मावलम्ब से उसने जो अपने को करादिखाया वह विश्वविदित है नैपोलियन का मत था "दैवं निहत्य कुरु पौरुषमात्मशक्त्या" एक बार किसी ने नैपोलियन से कहा "हुजूर आल्पस का पहाड़ बीच में खड़ा है और मार्ग में बाधा डाल रहा है" नैपोलियन ने कहा "यदि आल्पस बीच में खड़ा है तो खड़ा न रहने पावेगा" निदान उसने किया भी ऐसा ही और उस अगम मार्ग में होकर सड़क निकाली गई। कालिदास पहिले जैसे कुछ थे सबको ज्ञात है परन्तु आज उनकी योग्यता की धवलध्वजा सारे संसार पर फहरा रही है। यहां पर उनके विषय में कुछ कह कर हम उनके यश रूपी सूर्य को दीपक दिखाना नहीं चाहते।

किम्बहुना यदि हम सुखरूपी आकाशमण्डल में विचरण करना चाहते हैं आत्मावलम्ब के विमान पर चढ़ने में विलम्ब क्यों?

हम उन्नति की सीढ़ी पर चढ़ना चाहते हैं तो हमें आत्मावलम्य का रस्सा पकड़ना चाहिये नहीं तो बस धमाधम नीचे गिरपड़ेंगे। यदि हम राष्ट्रीय मन्दिर बनाना चाहते हैं तो हमें आवश्यक हैं कि आत्मावलम्बी राजों को ढूढ़ें! यदि हम स्वतंत्रता देवी के दर्शन करना चाहते हैं तो हमें परावलम्ब का आवरण जो हमारी आंखों पर पड़ा है दूर करके आत्मावलम्ब का चश्मा लगाना पड़ेगा।

यदि हमें और जातियों के साथ उन्नति और अभ्युदय के मार्ग में दौड़ लगाना है तो हमें आत्मावलम्ब के कोतल पर सवार होने में देर न करनी चाहिये।

यदि हमें जीवन संग्राम में युद्ध करने की कुछ इच्छा है तो हम आत्मावलम्ब का जिरहवख़्तर क्यों नहीं पहिनते! यदि हम देश-भक्ति के कण्टकाकीर्ण पथ पर चलना चाहते हैं तो हमें आत्माव-लम्ब के पदत्राण धारण करने होंगे। अन्त में यदि हमें अपनी मातृभाषा को जो कि मनमलीनैं तन छीन है इस अस्वस्थ दशा से स्वस्थ दशा में लाकर पुनर्जीवन दान करना है तो उस आत्मावलम्ब की अमृतबटी पिलादेनी चाहिये।

Self help के आधार पर।

सामाजिक समाचार।

कराल काल ने किसी को न छोड़ा।

गत ४ जून को संध्या समय पंडित भगवानदीनजी क्षय रोग से पीड़ित हो इस असार को छोड़ गये। आप यु. प्रा. की आर्य्य प्रतिनिधि सभा के लगातार कई वर्षों तक मंत्री तथा सभापति के आसन को सुशोभित करते रहे। पंडितजी इस प्रान्त में आत्म समर्पण के एक मात्र आदर्श थे। वे आर्य्य समाज की उन्नति के लिये प्राण प्रण से चेष्टा किया करते थे। आप लखीमपुर में एक छोटी रियासत के मेनेजर थे। जब युक्तप्रान्त के गुरुकुल में मुख्य अधिष्ठाता की बड़ी आवश्यकता पड़ी तब आपने रियासत का काम छोड़ कर मुख्य अधिष्ठाता के पद को सुशोभित किया। आपको गुरुकुल में आकर धन एकत्र करने का भी भार उठाना पड़ा था। आप व्याख्यान दाता बड़े अच्छे थे। आपके सदोपदेश का प्रभाव सर्व-साधारण में बहुत अच्छा पड़ता था। सार्वभौमिक सभा के भी

आप सभापति बन चुके थे। आपका जीवन एक आदर्श जीवन था। धन्य हैं ऐसे पुरुष जो इस संसाररूपी रंग मञ्च पर आकर अपने जीवन से लोगों को शिक्षा दे जावें। आपकी मृत्युसे जो आर्य्य समाज को क्षति पहुंची है न जाने ईश्वर कब पूरा करेगा। परमात्मा उक्त पंडित जी की आत्मा को शान्ति प्रदान करें।

दान वीर मि. तारकनाथ पलित।

पाठकों को यह विदित करते हुये आज कैसा आनन्द होता है कि अब भारत वर्ष के कुछ अच्छे दिन आने लगे हैं कलकत्ते के मि. तारक नाथ पलित बैरिस्टर एट ला ने ७ लाख से ऊपर का दान देकर भारत वर्ष का बड़ा उपकार किया है। आपने यह दान कलकत्ता विश्वविद्यालय में एक लैबोरेटरी बनवाने और दो अध्यापकों के नियत करने को दिया है जिसमें एक अध्यापक तो केमिस्ट्री और दूसरा फिज़िक्स का होगा। लक्ष्मी की शोभा दान है और दान भी विद्या के लिये तो सर्वोत्तम है जैसा कहा है "सर्वेषामेव दानानां ब्रह्म दानं विशिष्यते" मि. तारक नाथ जैसे सपूतों से ही तो भारत जननी का अंक शोभायमान होगा। परमेश्वर हमारे यहां के धनी लोगों को ऐसी बुद्धि दे जिससे वे महाशय पालित जी जैसे दान का अनुकरण करें।

——:0:——

दयानन्द हाई स्कूल काशी।

दयानन्द हाई स्कूल जुलाई के प्रथम सप्ताह में खुलेगा और उसी के साथ वैदिक आश्रम भी खुल जायगा। जो महाशय अपने लड़कों को भेजना चाहें वे दयानन्द हाई स्कूल के मेनेजर से पत्र व्यवहार करें। स्कूल इस वर्ष आठवीं श्रेणी अर्थात् मिडिल तक खुलेगा पारसाल मेट्रीक्यूलेशन भी खुल जायगा। वैदिक विद्यालय भी जल्द खुलेगा परन्तु स्कूल की अपेक्षा इसमें धन की बड़ी आवश्यकता है अतः जिन लोगों ने धन देने का वादा किया है जहां तक हो सकें शीघ्र मेनेजर वेद विद्यालय व दयानन्द हाई स्कूल काशी के पास भेज देवें।

घोर अत्याचार ।

श्री स्वामी नित्यानन्द जी सरस्वती की सम्पति पर अनुचित आक्रमण ।

अभ्युदयादि समाचार पत्रों में शीतलाघाट के कुल मकानों पर सनातन धर्मियों के आक्रमण का वृतान्त छपा है । हम ने अब तक उचित नहीं समझा था कि स्वार्थियों के पाखण्ड का खण्डन किया जावे। परन्तु अब जब कि सारे झगड़े का भार आर्य्यसमाज काशी पर आ पड़ा है हम सहर्ष और सविस्तार इस मुआमले को पब्लिक के सामने रखना चाहते हैं, परन्तु ऐसा करने से पूर्व हम बतलादें कि इस में **आर्य्यसमाज और सनातन धर्म** का कोई विवाद नहीं, हां, कुछ व्यक्तियों के अत्याचार का यह परिणाम है कि इस सम्पति पर आक्रमण किया गया ।

कुछ वर्ष व्यतीत हुए कि श्रीयुत स्वामी नित्यानन्द तथा स्वामी विशेश्वरानन्द जी ने काशी में एक वैदिक पाठशाला खोलने का विचार उपस्थित किया था । आपने तदनुसार शीतलाघाट पर श्रीयुत स्वामी अयोध्यानाथ पुरी से एक मकान का हिब्बा नामा करालियां, परन्तु यह मकान छोटा था इस मकान के समीप पकौड़ी [illegible]ड़ा का एक मकान था उस का भी हिब्बानामा करवाया गया । [illegible] दोनों मकानों के पास महाराज बून्दी की कुछ ज़मीन पड़ी थी [illegible]कि स्वामी जी ने उस ज़मीन को ॥) माहवार पर प्रजावट में ले लिया और बम्बई के मरहूम महाशय ज्येष्ठालाल जी से अनुमान [illegible]) रुपये दान लेकर इसी ज़मीन पर एक मकान बनवाया । यह मकान काशी के सुप्रसिद्ध रईस राजा मुन्शी माधोलाल के कारिन्दों [illegible]रा बना है और उसकी इमारत का हिसाब अब तक उनके वही [illegible]तों में मौजूद है । इन तीनों मकानों के तय्यार होजाने पर पाठशाला खोली गई परन्तु थोड़े ही दिन चलकर टूट गई, तदनन्तर मुन्शी [illegible]करण जी के दान से इन्हीं मकानों में पाठशाला खुली परन्तु [illegible] भी न रही और फ़ैज़ाबाद आर्य्यसमाज में तब्दील कर दी गई। [illegible] काल से इन मकानों में कुछ विद्यार्थी महाशय विवेकानन्दजी

के आधीन रहते थे, उक्त स्वामीजी की ओर से महाशय विवेकानन्दजी ही नियुक्त थे और वही हौस टेक्स इत्यादि दिया करते थे। गत शशमाही में बून्दी राज्य के कारिन्दा महाशय हनुमान प्रसाद ने कमेटी में यह लिखवादिया कि स्वामी नित्यानन्द मर गया है। और मकान मेरे कब्ज़े में है और टेक्स देकर अपना नाम कागज़ों पर चढ़वादिया। गत वर्ष से पूर्व कागजों में स्वामी नित्यानन्द जी का नाम चढ़ा आता था। काशी में प्रायः ऐसे काम होते रहते हैं लोग कुछ गुण्डों को लेकर दूसरे मकान पर बलात् कबज़ा करलेते हैं और फिर मुकदमा करने और लड़ने पर तय्यार हो जाते हैं। काशी की इसी निन्दनीय मर्यादानुसार गत २६ एप्रिल को कुछ लोगों ने उक्त स्वामी जी के मकानों पर आक्रमण किया और बून्दी के कारिन्दा ने अपना कब्ज़ा करलिया। विद्यार्थी निकाल दिये गये, असबाब फेंक दिया गया और लूट लिया गया। साथ ही विवेकानन्दजी से बलात्कार कोई पत्र लिखवा लिया गया कि हम बूंदी की तरफ से इन मकानों में रहते हैं। इस समाचार को तार द्वारा स्वामी नित्यानन्द जी के पास भेजा गया। ३० एप्रिल को स्वामी विशेश्वरानन्द जी काशी पहुंचे। फौजदारी करने के लिये उन्हें उचित सामग्री की प्राप्ति नहीं हुई इस लिये वह यहां वकीलों से विचार करते रहे। इधर आर्य्यसमाज काशी की ओर से उन्हें गत कई सप्ताहों से प्रार्थना पत्र भेजे गये थे कि वेद विद्यालय काशी के लिये वह इस सम्पत्ति को दान दे दें और कमेटी के नाम रजिस्टरी करादें। वेद विद्यालय के नियम उद्देश्यादि लिखे और निश्चित किये जा चुके हैं परन्तु अब तक उन की नियमित रजिस्टरी नहीं हुई इसी सम्बन्ध में गत ३ जून १९१२ को स्वामी नित्यानन्द जी काशी पधारे और उन्हों ने यह तीनों मकान वेद विद्यालय और दयानन्द हाई स्कूल कमेटी के नाम रजिस्टरी करवा दिये।

वेद विद्यालय और दयानन्द हाई स्कूल काशी आर्य्यसमाज की संस्थाएं हैं अत एव यह सम्पति आर्य्यसमाज काशी की समझनी चाहिये। हमें विश्वास है कि बून्दी नरेश अपने कारिन्दे के इस अत्याचार पर शीघ्र ध्यान देंगे। कारिन्दे ने २६ एप्रिल को उस स्थान पर कब्ज़ा किया और जो मकान अभी मुकम्मल भी नहीं हुआ था जहां मरहूम ज्येष्ठालाल जी की इच्छानुसार उनके नाम के साथ

पर साइन बोर्ड भी नहीं लगा था उसी मकान में कहा जाता है कि बून्दी के कारिन्दों ने महादेव की मूर्त्ति रख दी है और मकान को मन्दिर के रूप में परिवर्तित किया चाहते हैं। अब जब कि यह सम्पति आर्य्य समाज काशी की है और उस में बलात्कार से मूर्त्ति की पूजा करना प्रसिद्ध किया जा रहा है तो इसमें सर्वसाधारण समझ सक्ते हैं कि इस का कितना दुष्परिणाम होगा। काशी आर्यसमाज की ओर से अभियोग चलाने का प्रबन्ध होरहा है। हम नहीं चाहते कि इसको आर्य्यसमाज और सनातन धर्म का झगड़ा बनाया जावे किन्तु जिन्हों ने इस अत्याचार का साहस किया है या जिस व्यक्ति ने इस अत्याचार को फैलाया है उन्हें शीघ्र ही अपने किये पर पश्चाताप करना पड़ेगा। हमें पूर्ण विश्वास है कि समस्त भारतवर्ष के आर्य पुरुष इस अत्याचार को निर्मूल करने में सचेष्ट होंगे।

नित्य कर्म।

(विद्यालंकार पं० उदितमिश्र लिखित)

यह तो निश्चय है कि जितने लोग सृष्टि में वर्तमान हैं सब लोगों का समय काम में लगता है। बिना काम के वे एक मिनट भी नहीं रह सकते। रहा यह कि कैसे काम में लगे रहते हैं इस प्रश्न का उत्तर उन कामों के परिणामों से स्पष्ट हो जाता है। चोर भी काम करता है, पंडित भी काम करता है। चोर दंड पाता है, पंडित [illegible] पाता है, इसी से बुरे काम का बुरा नतीजा, भलाई का बदले भलाई इत्यादि.........महावरे पढ़े या अनपढ़े सर्व साधारण के मुख से सुनाई देते हैं, परन्तु इसका कारण जानना चाहिये कि ऐसा क्यों होता है जब कि "मानुस तन अति ज्ञान प्रवीना" मनुष्य सर्व उत्तम शक्तियों का भंडार है॥ ऐसी २ प्रतिभाशाली बातें मनुष्य के विषय में कही गई हों। विचार करने से विदित होता है कि जो लक्ष्य कुकर्मियों का है वही सुकर्मियों का अर्थात् सुख के लिये दोनों काम करते हैं। सुख किसको मिलता है यह स्पष्ट है एक को सुख मिलता है एक को नहीं मिलता। इसका कारण यह है पापाचारी, हिंसक, असत्यवक्ता, परस्त्री गमन करने वाले, दुरा

चारी पुरुषों के सुख की प्राप्ति के लिये जो साधन हैं वे सुख की प्राप्ति नहीं करा सकते वरन् विपरीत फल देते हैं। यथा व्यभिचारी आदमी अतर फुलेल से मुख को चिकना रखना चाहता है परन्तु क्या यह मुमकिन है कि उसके मुँह का कालापन बढ़ने के सिवाय घट सकता है ?

कदापि ऐसा नहीं हो सकता बल्कि उसके दुख का पारावार नहीं रहता और वह बुरे कर्मों पर अहर्निश पश्चाताप करता है। ब्रह्मचारी को फुलेल और पान से द्वेष रहता है वह व्यभिचार से बचने के लिये प्रति क्षण ईश्वर से प्रार्थना करता है और कहता है कि " वरं कलेवं पुंसां न च कलत्राभिगमनं " वह शारीरिक शोभा पाओडर और मुरली मनोहर से नहीं समझता, उसका सिद्धान्त रहता है कि " शुक्रंतस्मात् विशेषेण शरीरमारोग्यमिच्छति "

यही कारण है कि ब्रह्मचारी यश, लाभ, मान अर्थात धर्म, अर्थ काम और मोक्ष को भी पा जाता है । जितने दिन संसार में रहता है देश की कुरीतियों के मर्दन करने में जय को प्राप्त करता है। इस से विदित हो गया होगा कि संसार में दो प्रकार के लोग हैं एक पापात्मा और दूसरे धर्मात्मा । पापात्मा सुख चाहता है परन्तु दुख पाता है, धर्मातमा सुख चाहता है सुख ही पाता है क्योंकि धर्म रूपी वृक्ष में ही सुख रूपी फल लगता है अन्यथा नहीं। मनुस्मृति में कहा है।

धर्मस्य फलं चेच्छन्ति धर्मं नेच्छन्ति मानवाः।
पापस्य फलं नेच्छन्ति तस्य कुर्वन्ति यत्नतः॥

इस समय हम लोगों का यही हाल है। जानते हुये भी कि कोई बुराई सुख चहै कैसे पावै कोय-बुराई ही किया करते हैं। किसी को अच्छे काम की ओर ध्यान आकर्षित किया झट उसे आर्य समाजी कह कर दुदकार देते हैं और ' इस जन्म में मजा करो उस जन्म में देखा जायगा ' विद्वान होने पर भी ऐसा कहा करते हैं और उसी के अनुसार चलते हैं। सच पूछो तो इस मनुष्य जन्म को वृथा के वक्त वादों, स्वार्थ के झंझटों और मन के वेगों में पड़ कर खो देते हैं। बुद्धि से कुछ भी काम नहीं लेते। बुद्धि से जिन लोगों ने पूर्ण रूप से काम लिया है उनको धर्म सम्बन्धी कामों में ही सुख था। धर्म सम्बन्धी कर्त्तव्य को नित्य कर्म कहते हैं। बालक, मूर्ख और बोदा

होने के कारण माता पिता के आधीन रहता है। आठ वर्ष की अवस्था तक उस में धर्म सम्बन्धी काम करने की योग्यता नहीं होती-इसी कारण हमारे धर्मशास्त्रों में यज्ञोपवीत होने के पहिले बालकों के लिए नित्य कर्म का विधान नहीं किया है। धर्मानुष्ठान के सम्बन्ध में नित्य कर्म ब्रह्मयज्ञ-देवयज्ञ-पितृयज्ञ-भूतयज्ञ (बलि वैश्यदेव) और अतिथियज्ञ (नृयज्ञ) हैं।

(१) ब्रह्मयज्ञ-" ब्रह्म शब्द के अर्थ विद्या, वेद और परमात्मा के हैं। यज्ञ का अर्थ विचार है-अतएव " ब्रह्मयज्ञ " का अर्थ वेदों का प्रचार अथवा परमात्मा का विचार हुआ और वेदों के पठन पाठन द्वारा यह यज्ञ किया जाता है। मुख्य अंग इस यज्ञ का गायत्री (संध्या) है। संध्या के लाभ प्रगट हैं। कहने की आवश्यकता नहीं है।

(२) देवयज्ञ-जो अग्नि में होम किया जाता है वह देवयज्ञ है "यदग्नौ हूयते स देव यज्ञः॥ बहुत से लोग देवयज्ञ का अर्थ देवतों की पूजा समझते हैं, यदि सज्जन और आप्त पुरुषों तथा दिव्य गुण युक्त जन को देवता कह सकते हैं तो उनका कहना बहुत ठीक है। परमात्मा सदाचारी और पुण्यात्मा जनों से सदा प्रसन्न रहता है। होम का तात्पर्य नीचे के मंत्रों से प्रकट है।

अग्निर्ज्योतिः ज्योतिरग्निः स्वाहा ॥

अर्थात्-अग्नि जो परमेश्वर ज्योतिः स्वरूप है उसकी आज्ञा से हम परोपकार के लिए होम करते हैं-और उसका रचा हुआ जो यह भौतिकाग्नि है, जिसमें द्रव्य डालते हैं-वह इस लिये है कि उन द्रव्यों को परमाणु कर के जल और वायु, वृष्टि के साथ मिला के उनको शुद्ध कर दे जिससे सारा संसार सुखी होकर पुरुषार्थी हो। इसी प्रकार होम के प्रत्येक मंत्र में ईश्वर प्रार्थना और होम के लाभ भरे हुए हैं।

(३) पितृयज्ञ-पितृभ्यो ददाति स पितृयज्ञः। जिसमें पितरों को दिया जावे अर्थात उनकी सेवा की जावे उसे पितृयज्ञ कहते हैं-पितर किसको कहना चाहिए? नीचे के श्लोक से प्रकट है।

न तेन वृद्धो भवति येनास्य पलितं शिरः।
अज्ञो भवति वै बालः पिता भवति मन्त्रदः॥

न हायनैर्न पलितैर्न वित्तैर्न च बन्धुभिः।
ऋषयश्चक्रिरेधर्मं योऽनूचानः स नो महान्॥

सूनीति, धर्म, सच्चाई और सच्चरित्रता आदि गुणों से युक्त अत्यन्त सहिष्णु महात्मा जो प्राचीन ऋषि हुये हैं उन्हीं को अपने तपोबल के प्रभाव से वसु, रुद्र और आदित्य आदि की पदवियां मिला करती थीं। ऐसे ऋषि सच्चे पितर होते थे और उन्हीं का आदर सत्कार करना पितृ यज्ञ कहलाता था। २४ वर्ष तक ब्रह्मचर्य्य धारण करनेवाला वसु, ३६ वर्ष तक रुद्र और ४८ वर्ष तक ब्रह्मचारी रहनेवाला आदित्य कहलाता था। प्रातः और सायंकाल के लिए दो हवन बतलाए गये हैं। जो सब प्रकार के ब्रह्मचारियों से सम्बन्ध रखते हैं। इस से विदित होता है कि विद्या के द्वारा आत्मिक जन्म देने वाला ही पिता कहलाता है और ऋषि मन्त्र देने वाले को कहते हैं॥ पितृयज्ञ के दो भेद हैं एक तर्पण दूसरे श्राद्ध। तर्पण उसे कहते हैं जिस कर्म से विद्वान देव, ऋषि और पितरों को सुख युक्त करते हैं। इसी प्रकार जो उन लोगों का श्रद्धा से सेवन करना है सो श्राद्ध है।

यह तर्पण आदि कर्म जो प्रत्यक्ष अर्थात विद्यमान हैं उन्हीं में घटता है। मृतकों में नहीं क्योंकि उनकी प्राप्ति और उनका प्रत्यक्ष होना दुर्लभ है। इसी से उनकी सेवा भी किसी प्रकार से नहीं हो सकती। वेद विहित पितरों की सेवा शुश्रूषा छोड़ कर समुद्र, पहाड़, नदी और वृक्षों का तर्पण करना मृतक श्राद्ध मानना यह शास्त्र और बुद्धि के प्रतिकूल है।

(४) भूतयज्ञ (बलि वैश्यदेव) जो प्राणियों को भाग दिया जाता है, उसे भूतयज्ञ कहते हैं "यो भूतेभ्यः क्रियते स भूतयज्ञः। भोजन समय प्रतिदिन इस यज्ञ को करना चाहिये, तथा भोजन में से कुत्तों, कङ्गालों, कुष्ठी आदि रोगियों-काक आदि पक्षियों और च्यौंटी आदि कृमियों के लिए छः भाग अलग २ बांट कर दे देना चाहिए और उनकी प्रसन्नता सदा करना चाहिये जैसा कि मनु महाराज ने कहा है।

शुनां च पतितानां च श्वपचां पापरोगिणाम्।
वायसानां च कृमिणांच शनकै र्निर्वपेद्भुवि॥

५ अतिथि यज्ञ जिसमें अतिथियों की यथावत सेवा करनी होती है-उसको अतिथि यज्ञ कहते हैं। जो पूर्ण विद्वान, परोपकारी, जितेन्द्रिय, धार्मिक, सत्यवादी, छल कपट रहित, नित्यभ्रमण करनेवाले मनुष्य होते हैं उनको अतिथि कहते हैं। परस्पर ऐसी सेवा और सत्संग करने कराने से विद्या वृद्धि करके सब लोग सदा आनन्द में रहते हैं।

नित्य कर्मों के करने से मनुष्य पूर्ण धार्मिक बन सकता है। वेद पाठ, नित्य कर्म और होम मन्त्रों में अनध्याय नहीं होता।

कहा है

वेदोप करणे चैव स्वाध्याये चैव नैत्यके।
न विरोधोऽस्त्यनध्याये होमं मन्त्रेषु चैव हि ॥

नित्य कर्म का अभिप्राय यह है कि अपने मन का लक्ष्य परमेश्वर को बनाया जावे इसीलिये प्रत्येक कर्म की समाप्ति पर यह कहा जाता है कि मैं इस कर्म को या इस के फल को परमेश्वर के अर्पण करता हूं।

समाजिक समाचार।

गुरुकुल में शुल्क

गत वर्ष शुल्क मोचन होने से गुरुकुल काङ्गड़ी अपने आदर्श की ओर जा रहा था, किन्तु आज कल पत्रों के पढ़ने से ज्ञात होता है कि गुरुकुल में शुल्क मोचन न करने का विचार उपस्थित हुआ है क्योंकि यदि ऐसा न किया जाय तो गुरुकुल के कार्यक्रम में विघ्न पड़ने की सम्भावना हो सकती है। सम्प्रति जिस मुफ्त तालीम के पक्ष में बड़ा आन्दोलन हो रहा है और कौंसिल में भी मि० गोखले महोदय ने जिसके वास्ते एक बिल उपस्थित किया था उसी मुफ्त तालीम को गुरुकुल के सञ्चालकों ने गुरुकुल के छोटे दायरे में प्रचार करने का यत्न किया था, यह अत्यन्त प्रशंसनीय कार्य था। किन्तु यदि पुनः गुरुकुल में फीस ली जाय तो इसमें सञ्चालकों का दोष न होगा। इसके मुख्य कारण पब्लिक और सामाजिक पुरुषों की उदासीनता और उत्साह की अभाव होंगे।

जिन्होंने गुरुकुल को तन मन धन से सहायता करना अभीष्ट नहीं समझा।

भारत वर्ष के ६ महा पुरुष।

भारत वर्ष के ६ महा पुरुषों के जानने के अभिप्राय से जो ५०) रु० का इनाम देने की नोटिस "प्रकाश" के सम्पादक ने दे रक्खा था उसका परिणाम अब निकाला गया है। उनके नाम यह हैं। मि० गोखले, महात्मा मुन्शीराम, लाला लाजपति राय, प० मदन मोहन मालवीय, श्रीमान् बाल गंगाधर तिलक और दादा भाई नौरोजी। इस आन्दोलन में जो पुरुष सम्मिलित हुये हैं उनकी संख्या केवल एक हज़ार से कुछ ऊपर थी। अतः मालूम हो सकता है कि इस व्यवस्था का परिणाम कहां तक प्रामाणिक हो सकता है, किन्तु उक्त पत्र के सम्पादक को कई मनुष्यों के पक्ष में सम्मतियों की कम संख्या और एवं उनकी योग्यता के ऊपर अपनी सम्मति प्रकट करने का अच्छा अवसर प्राप्त हुआ है। जिन मनुष्यों को उपरोक्त ६ महापुरुषों के ऊपर सम्मतियों की संख्या और योग्यता की श्रेणी मालूम करना हो, उनको उचित है कि "प्रकाश" के उस अङ्क को पढ़ें जिसमें रोचक शब्दों में इस का परिणाम वर्णन किया गया है। ५०) रु०का पारितोषिक लुध्याना के पुरुषार्थी महाशय लभ्युराम जी को मिला है

पारितोषिक।

हमें पाठकों को यह सुनाने में बड़ा हर्ष होता है कि पंजाब यूनिवर्सिटी ने प्रोफेसर दीवानचन्दजी को "पश्चिमी तर्क" के लिखने के लिये डेढ़ हजार रूपया इनाम दिया है। साथ ही यह भी समाचार मिला है कि पांच सौ रूपया दयानन्द एङ्गलो वैदिक कालेज के अध्यापक पं० राजारामजी शास्त्री को वाल्मीकीय रामायण का भाषानुवाद करने के लिये मिला है।

दान।

गुजरात के अकाल पीड़ितों की सहायतार्थ वृन्दावन गुरुकुल के ब्रह्मचारियों ने अपने सात दिन के दूध और घी के दाममें से २१ और कर्मचारियों ने ४३।≈) दिये। ये रूपये गुजरात अनाथालय के मन्त्री के नाम भेज दिये गये हैं।

नोट:-मई मास के नवजीवन में देर हो गई थी, इस लिये मई और जून के दोनों अङ्क इकट्ठे निकाल दिये। प्रेस की प्रतिज्ञा थी कि २० जून तक यह पत्र निकल जायगा, परन्तु उसमें भी विलम्ब हो गया। ग्राहक महोदय क्षमा करें। जुलाई का अङ्क छप रहा है।

प्रबन्धकर्ता, 'नवजीवन'

लक्ष्मी

यह कन्याओं के लिये एक बड़ी लाभदायक पुस्तक है इसमें एक आदर्श रमणी का चरित्र दिखाया गया है कि किस प्रकार माता पिता, सास ससुर आदि की सेवा करती हुई कन्या तथा नववधू अपने पति की आज्ञानुवर्तिनी बनकर गृहस्थ जीवन को सफल कर सकती है। धन्य वे भारत ललनायें हैं जो इस प्रकार अपने पवित्र चरित्र की विमल कीर्ति से भारत का मुख उज्वल करती हैं। यह ... पृष्ठ की पुस्तक है और मूल्य केवल ।) है परन्तु जो लोग भारत वीर और विदुषी स्त्रियां और लक्ष्मी एक संग मंगायेंगे उनको ... डाक महसूल केवल १) एकही रुपया देना होगा।

कन्याओं को इनाम देने के लिये ये पुस्तकें बड़ी ही उत्तम हैं, ... बार मंगा कर देखिये।

प्रबन्धकर्ता नवजीवन

एक बार अवश्य पढ़िये।

बनारस का बना हुआ हर किस्म का माल जैसे रेशमी साड़ी ... की व सादी, पीताम्बर, चद्दर जनाना व मरदाना, डुपट्टा (...) साफा सादे व जरी के काम के।

... सिल्क के थान, मेरठ की व बनारसी पक्के काम की ..., जरमन सिलवर, पीतल, एल्मोनियम के बरतन नक्की व ... व जर्मन सिलवर, पीतल के हर किस्म के जेवरात सुनहरे ...ले, सुरती की गोलियां, सूंघने व पीने का तम्बाखू, हर ... के लकड़ी व हाथी-दांत के खिलौने, टिकुली, बिन्दी, ईंगुर, ... वगैरह हमारे यहां से किफायत भाव से भेजे जाते हैं। ... चीज का भाव जानने के लिये)॥ का टिकट भेजकर ... बड़ा सूचीपत्र मंगाकर देखो।

पता:-महादेवप्रसाद एण्ड एम० पी० आर्य्य
जनरल मरचन्ट एण्ड सप्लायर,
सराय हड़हा, बनारस सिटी।

नवजीवन
Nawajiwan

सम्पादक—केशवदेवशास्त्री

विषय सूची ।

भाग ४ (जुलाई १९१२) अङ्क ४.

चित्र-प्रो राममूर्त्ति का चित्र व चरित्र

वार्षिक मूल्य ... ... ३) रु०

एक प्रति का मूल्य ... ... ।-)

नवजीवन के नियम

(१) नवजीवन का वार्षिक मूल्य ३) रुपये मात्र है।

(२) प्रतिमास की २० तारीख़ को काशी से निकला करेगा

(३) नवजीवन में कोई अश्लील विज्ञापन न छपने पावेगा।

(४) विद्यार्थियों, छात्राओं, कन्या पाठशालाओं की अध्यापिकाओं और पुस्तकालयों से केवल २) रुपये वार्षिक मूल्य लिया जावेगा।

(५) प्रतिमास प्रकाश होने की तिथि के १० दिन के अन्दर अन्... नवजीवन के न पहुंचने पर दूसरी कापी भेजी जावेगी, अन्... मूल्य देना पड़ेगा.

—:o:—

नवजीवन का उद्देश्य।

(१) वैदिक धर्म्म के प्रचारार्थ

(क) आर्य्य कुमारों तथा कुमारियों में नवीन जीवन का संचार क...

(ख) सामाजिक उन्नति के उपायों पर विचार करना।

(ग) आर्य्य जीवन की मर्यादा को स्थापित करने की चेष्टा करना।

(घ) महानुभावों के सच्चरितों पर विचार करना और

(ङ) उपयोगी संस्थाओं के वृतान्तों को सर्वसाधारण तक पहुंचाना

ओ३म्

उदयति यदि भानुः पश्चिमे दिग्विभागे
प्रचलति यदि मेरुः शीततां याति वन्हिः।
विकसति यदि पद्मं पर्वताग्रे शिलायां
न भवति पुनरुक्तं भाषितं सज्जनानाम्॥

भाग ४. } जूलाई १९१२ { अङ्क ४

प्रार्थना।

यत्र ब्रह्म च क्षत्रं च सम्यञ्चौ चरतः सह।
तं लोकं पुण्यं जिज्ञेयं यत्र देवाः सहाग्निना॥

हे भगवन्! संसार को हम सुखमय तथा उन्नत देखना चाहते हैं। उन्नति के लिये आप के सदुपदेश वेदद्वारा हमें ज्ञात होता है जहां सौम्यगुणयुक्त ब्राह्मण और वीरता युक्त क्षत्रिय यह दोनों ल कर संसार रूपी यज्ञ का अविरोधी बनकर सम्पादन नहीं करते वहां पुण्य कहां? जहां विद्वान् शारीरिक और आत्मिक बल र परमात्मा की आज्ञाओं का पालन करने में सचेष्ट होते हैं, जहां मिलकर अपनी २ शक्तियों को देश के कल्याणार्थ समर्पण करते हैं वहां की प्रजा ही सुखी होती है। वहां ही शान्ति और न्ति द्वारा कला कौशल की उन्नति होती है। परमात्मन्! मनुष्यों को सद्ज्ञान और उत्तम मेधा प्रदान करें ताकि हम सभी मनुष्य स पृथिवी को पुण्यलोक और स्वर्गधाम बनाने की चेष्टा करें। वन्! बल प्रदान करें कि सभी आर्य्य अपनी शक्तियों को इसी र लगाने में उद्यत हों।

उपदेश ।

उत्साह सम्पन्नमदीर्घसूत्रं क्रियाविधिज्ञं व्यसनेष्वसक्तम्।
शूरं कृतज्ञं दृढसौहृदञ्चलक्ष्मीः स्वयम् याति निवासहेतोः॥

इस देश में से लक्ष्मी का निवास उठ गया । धनाढ्यों को छोड़ कर शेष देशवासी लक्ष्मी के लिये तरसते रहते हैं । सौभाग्य के लिये तो लक्ष्मी और सरस्वती दोनों का मेल चाहिये, परन्तु लक्ष्मी अकेली भी निवासार्थ उसी स्थान पर जाती है जहां कुछ गुण सम्पन्न पुरुषों का निवास हो । सब से बड़ी ज़रूरी बात तो यह है कि लक्ष्मी साहसी अथवा उत्साह सम्पन्न पुरुषों की कामना करती है इसी लिये कहा है "साहसे वसति लक्ष्मीः"। दूसरे लक्ष्मी दीर्घसूत्री और आलसी पुरुषों का सर्वदा तिरस्कार करती है। जो पुरुष समय का मूल्य नहीं जानता, जो क्रिया कुशल नहीं अर्थात् जिसने काम करने में अभ्यास नहीं किया, जो हाथ हिलाने और मेहनत मज़दूरी को नीच काम समझता है वह कदापि क्रिया कुशल नहीं हो सकता । जिस पुरुष में व्यसन हैं, जो शराबी है अथवा अन्य किसी व्यसन में ग्रसित है उसे दूर से लक्ष्मी धिक्कार देती है । जो शूर पुरुष है जो कृतज्ञ है अर्थात् दूसरे के उपकार को मानता है, जो दृढ मैत्री रखता और बलवान दिल को धारण किये हुए है ऐसे साहसी, उद्योगी और परिश्रमी महात्मा के सामने नम्रता पूर्वक लक्ष्मी आती, मस्तक झुकाती और उसीके हां निवास करती है । जो पुरुष चाहते हैं कि संसार के वैभव उन्हें प्राप्त हों, जो सज्जन यह कामना करते हैं कि व्यक्तियां और उनके द्वारा देश भर के अन्दर व्यापार वृद्धि और लक्ष्मी का आगमन हो उन्हें उचित है कि देशवासियों में इन सद्गुणों का संचार करें। लोग (१) उत्साही (२) समय के पाबंद (३) क्रिया कुशल, (४) अव्यसनी (५) शूर (६) कृतज्ञ और (७) दृढात्मा तथा सुज्जनता युक्त हों । इन और ऐसे सद्गुणों के संचार से देश उन्नत हो सक्ता है। जहां जहां उन्नति है वहां वहां न्यूनाधिक लोगों में ऐसे गुण मिलते हैं और जिस अंश तक यह गुण हमारे अन्दर विद्यमान हैं उसी अंश तक हम भी लक्ष्मवान हैं ।

सम्पादकीय वक्तव्य।

अपना सुधार आप करो।

जो मनुष्य सच्चे हृदय से अपना सुधार चाहते हैं उन्हें उचित है कि उत्तमोतम पुस्तकें पढें। स्वाध्याय मनुष्य के अन्तरगत भावों को उच्च बनाता है, उत्तम संस्कार उत्पन्न होते हैं और बुरे संस्कार छिन्न भिन्न होने लगते हैं। जिज्ञासु का कर्तव्य है कि अपने से अधिक विद्वान, अधिक अनुभवी और महापुरुषों का सत्संग करे। परन्तु हर समय नहीं, ऐसा न हो कि वह उन पर बोझ बन जावे। हां, सप्ताह में एक बार अवश्य किसी महापुरुष का सत्सङ्ग करे और उस से कुछ शिक्षा उपलब्ध करे। जब एकान्त का सेवन करे तो जो कुछ सुना है उस का मनन करे। इस प्रकार पुन २ विचार करने से श्रेष्ठ संस्कार उत्पन्न हो जावेंगे और मनुष्य जीवन का प्रवाह सन्मार्ग की ओर चल पडेगा॥

जीवन की ऊर्द्धगति।

हमारा विश्वास है कि आत्मिकोन्नति के लिये तप और कष्टों का सहन करना वैसेही आवश्यक है जैसे कि पौदे की उन्नति के लिये शीत और रात्रि का होना ज़रूरी है। पौदे के लिये आनन्द का समय प्रातःकाल का समय है। मनुष्य के लिये आनन्द का समय दुःखों के अनन्तर सुख मिलने का समय है। हमारा विकास दूसरों के उपकार द्वारा होता है। हम दूसरों की सहायता करने में स्वयम् वृद्धि को प्राप्त करते हैं। सृष्टि में यह नियम है कि कहीं खला (vacuum) नहीं रहता। वायु अग्नि से परितप्त होकर ज्योंही अपना स्थान छोड़ता है दूसरा वायु उसके स्थान पर आ पहुंचता है। इसी प्रकार नेकी करो, अधिक सद्भाव हृदय में प्रविष्ट होंगे। यदि तुम्हें कोई आघात पहुंचावे तो उसे विस्मरण कर जाओ। क्षमा कर देने में मनुष्य का आत्मा सन्तुष्ट रहता है। समग्र संसार आप के सम्मुख उपस्थित है। जितना भला करोगे, जितना परोपकार में लगोगे, जितना अपने हां से दान दोगे उतना ही विकास सिद्धान्तानुसार वह आप के हृदय मन्दिर में प्रविष्ट होता जायगा। आप अपनी शारीरिक और मानसिक शक्तियों को ऊर्द्ध गति की ओर ले जा

सकेंगे और आप का जीवन नित्यप्रति ऊर्द्ध गति की ओर जाता हुआ एक उच्च आदर्श को अनुभव कर सकेगा।

परस्पर के विश्वास में ही जीवन है।

संसार के लोग मानते हैं कि स्त्रियां पुरुषों की सेवा के लिये निर्माण की गई हैं और यही कारण है कि उन्हें पुरुषों से कमतर समझा जाता है, परन्तु वैज्ञानिकों का विश्वास है कि सृष्टि की पराकाष्ठा स्त्रियों की शारीरिक तथा मानासिक सृष्टि में ज्ञात होती है। वस्तुतः स्त्रियां पुरुषों के हृदया को कोमल बनाने, उन के दिमागों को फुरतीला करने और पृथिवी पर सृष्टि के बढाने और सौन्दर्य्य प्रदान करने के निमित्त पुरुषों की सहायक हैं। स्त्रियां उन्नत अवस्था में पुरुषों को वीरत्व के कार्य्यों के लिये उत्साहित करती हैं। पुरुष अपनी अर्द्धाङ्गिनी की प्रसन्नता के लिये अपने दिल व दिमाग को काम में लाता और हर प्रकार के साहस के लिये उद्यत हो जाता है। स्त्री निस्सन्देह ऐसे वीर और धार्मिक पुरुषों की आज्ञा कारिणी बन जाती है परन्तु जहां पुरुष ने विश्वास घात किया, प्रेम काफूर हो जाता है और मिले हुऐ दिल अविश्वास के ताप से चटक जाते और टूटने लगते हैं। दम्पति का स्नेह तभी बढता है जब प्रत्येक अपने आप को वश में रख कर एक दूसरे की सेवा के लिये हर क्षण उद्यत रहे। इसी में सच्चा जीवन है। इसी से जगत उत्तम, सुन्दर और सुखमय बनता है॥

मन जीते जग जीत

एक बार एक राजकुमार शिक्षा प्राप्त कर अपने पिता के राज्य में वापिस आया। नगर के लोग राजकुमार का स्वागत करने वाले थे। राज्य की ओर से भी धूम धाम से राजपुत्र को भवन में लाने की तय्यारियां हुईं, परन्तु जब समय निकट आगया तो पिता ने अपने पुत्र के पास सन्देसा भेजा कि नगरी में प्रविष्ट करने से पूर्व तुम्हारा मुकाबला एक सिंह से होगा। यदि तुम ने सिंह को परास्त कर लिया तो तुम्हें बडे समाराह के साथ नगरी में लावेंगे, अन्यथा तुम्हें अन्दर आने की आज्ञा नहीं मिलेगी। राजकुमार भीरु था, शेर का नाम सुनते ही कांप उठा और लडने से इनकार कर दिया। जब राजा की आज्ञा न मिली तो बन की राह ली। अनेक स्थलों में घूमा। जहां गया वहां ही कठिनाई और क्लेशों का सामना करना पडा।

उसे विश्वास हो गया कि यह जगत भीरु पुरुषों के लिये नहीं है। यहां तो शूर पुरुष ही जी सक्ता है। भीरु पुरुष उन का आहार बनते और पादाक्रान्त होते रहते हैं। जब क्लश सर्वत्र हैं, जब सब स्थलों में सिंहों का मुकाबला करना पडता है तो अपने सिंह का मुकाबला क्यों न किया जावे। यह विचार कर उसने अपना मन दृढ किया और घर की ओर प्रस्थान किया। जब वह वीर गृह के समीप पहुंचा। उसने राजा को कहला भेजा कि मैं सिंह का मुकाबला करूंगा। सिंह लाया गया। जब उसने सिंह को आह्वान किया तो शेर ने आक्रमण करने के स्थान में उसे चाटना शुरू कर दिया और उस के सामने आकर खडा हो गया। प्रत्येक मनुष्य की यही अवस्था है। जब तक वह भीरु बने रहते हैं उन्हें पग पग पर डर लगता है और ज्योंही वह अपने मन को बलवान, दृढ और पराक्रमी बना लेते हैं वह जो चाहें जगत में कर लेते हैं। इसी लिये कहा है कि मन जीते जग जीत ॥

धर्मात्मा पुरुषों द्वारा ही संसार सुखमय है।

अमेरिका के जगद्विख्यात विद्वान् अमर्सन ऋषि ने कहा है कि "प्रत्येक मनुष्य यह तो विचार करता है कि मेरा पड़ोसी मुझे ठग न ले परन्तु एक दिन ऐसा भी आता है जब उसे विचार उत्पन्न होता है कि मैं अपने पड़ोसी को न ठगूं। तभी संसार में सुख फैलता है"। प्रथम अवस्था प्रायः सभी मनुष्यों में मिलती है। प्रत्येक मनुष्य अपने आराम और सुख को देखता है और इसी लिये चाहता है कि उसकी वस्तु को कोई दूसरा मनुष्य उठा न ले जावे। जहां तक सम्भव होता है वह अपना भला चाहता है परन्तु धार्मिक पुरुष दूसरों का भला चाहते हैं। वह अपना जीवन परोपकार में लगा देते हैं। उन्हें दिन रात यह विचार रहता है कि कहीं उन से पाप तो नहीं हो रहा है। कहीं वह दूसरों को हानि पहुंचा कर अपने आत्मा का हनन तो नहीं करते। यह उच्च भाव उन्हें कर्तव्य परायण बनने के लिये बाध्य करते हैं। कर्तव्य परायण मनुष्य जहां स्वयम पाप नहीं करता, वहां उस पर अत्याचार करने का साहस भी कम ही मनुष्य करते हैं। इस प्रकार संसार में सुख अधिक मिलने लगता है।

विद्याभूषण

कविराज जोगेन्द्रनाथ सेन एम. ए. महोदय

को नवीन उपाधी।

वर्त्तमान समय में यदि किसी प्रान्त में आयुर्वेद शास्त्र का यथोचित प्रचार है तो वह बङ्गाल है। यदि किसी एक नगरी में लब्ध-प्रतिष्ठा और क्रियाकुशल वैद्य मिलते हैं तो वह कालिकत्ता नगरी है। भारतवर्ष के आधुनिक वैद्यों को यदि हम दो विभागों में बांट दें तो अनुचित न होगा। एक तो पुरातन श्रेणी के वैद्य हैं जो रसादि का प्रयोग करते हैं और दूसरे कविराज हैं जो रस और काष्ठ औषधियों को यथावत व्यवहार में लाते हैं। प्रायः भारतवर्ष के सभी कविराज कलकत्ता या बङ्गाल के कविराजों के अनुयायी हैं। बङ्गाल में निस्सन्देह कविराज डाक्टरों का मुकाबला करते हैं। उनके पास अनेक हतोत्साह रोगी आते और चिकित्सा से लाभ उठाते हैं। वहां के प्रतिष्ठित कविराजों को फीस भी डाक्टरों के समान १६) और ३२) रुपये है। जिन दिनों हमें कलकत्ता जाने का सौभाग्य मिला था उन दिनों कविराजों के शिरोमणि महामहोपाध्याय श्री द्वारकानाथ जी सेन कविरत्न कलकत्ता में सुविख्यात हो रहे थे। उनकी मासिक आय भी ६ और ८ हज़ार के दरम्यान थी। हम ने इन्हीं महानुभाव के चरणों में बैठ कर आयुर्वेद शास्त्र को अध्ययन किया था। आप की कीर्ति भारतवर्ष में फैल चुकी थी। जब गवर्नमेन्ट ने आप की विद्वता, आप के पाण्डित्य और आप की ख्याति पर ध्यान देकर इन्हें महामहोपाध्याय की उपाधी प्रदान की तो नदिया और कलकत्ता के पण्डितों ने बड़ा कोलाहल मचाया और प्रोटस्ट किया था कि महामहोपाध्याय की उपाधी केवल जन्म के ब्राह्मणों को मिलनी चाहिये। उसके अनन्तर ही गवर्नमेन्ट ने दूसरी उपाधी कविराज विजय रत्न सेन महोदय को प्रदान की। तब भी पण्डित मण्डली असन्तुष्ट थी। यह दोनों महामहोपाध्याय महोदय दो वर्ष के भीतर ही शरीर छोड़ गये। इस वर्ष गवर्नमेन्ट ने कविराज जोगेन्द्रनाथ सेन महोदय पर कृपा दृष्टि की है। आप महामहोपाध्याय श्री द्वारकानाथ सेन के ज्येष्ठ पुत्र हैं। इस समय के तीन बड़े कविराजों में आप का पदार्पण हो चुका है। आप एक

योग्य पण्डित और अनुभवी हैं। हमारा भ्रातृस्नेह हमें बाध्य करता है कि हम आप को इस सम्मान के लिये जो गवर्नमेन्ट ने वैद्यरत्न की उपाधी देकर किया है आप को बधाई दें परन्तु हम इसे अपमान समझते हैं कि राज्य की इस उपाधी को कविराज महोदय स्वीकार कर लें। श्री जोगेन्द्रनाथ सेन कलकत्ता यूनीवर्सिटी के एम ए हैं। संस्कृत में (Honors Course) लेकर आप ने अपने पाण्डित्य का परिचय दिया था। प्लेग के दिनों में असाधारण आत्मिक बल का परिचय दे आप ने समाज की सेवा की थी। आयुर्वेद के आप पण्डित और एक योग्य ग्रन्थकार तथा लेखक हैं। हम नहीं समझते कि गवर्नमेन्ट ने किन कारणों से इन्हें महामहोपाध्याय नहीं बनाया सिवाय इसके कि पण्डित मण्डली का विरोध हो। यदि हमारी यह कल्पना सत्य हो तो यह कविराजों का असह्य निरादर है कि जन्म के भेद पर कविराजों को महामहोपाध्याय बनने के योग्य न समझा जावे। हम कविराज महोदय का सचित्र जविन तो फिर नवजीवन के पाठकों के सम्मुख उपस्थित करेंगे परन्तु इस समय हम अपने आपको इस अवस्था में नहीं पाते कि हम अपने गुरुपुत्र को उनके इस सम्मान पर मुबारक दें जब कि हम दुख से देख रहे हैं कि इस नवीन उपाधी से कविराज मण्डली का अपमान हुआ है।

केशवदेवशास्त्री

समालोचना।

नीति कथा:-श्रीमान् श्रद्धेय प्रकाशदेव जी प्रचारक ब्राह्मधर्म्म ने श्रीमती लावण्य प्रभा वसु प्रणीत बङ्गला के ग्रन्थ का अनुवाद किया है। इसमें सात पाठ हैं। सत्यपरायणता, न्यायपरायणता, कर्त्तव्य पालन, क्षमा व सहन शीलता, मित्रता और प्रेम, मत्स्य कन्या की कहानी, अनुताप और आत्म उत्सर्ग। यह सारे विषय कथाओं द्वारा स्पष्ट और शिक्षाप्रद बनाये गये हैं। इस ग्रन्थ के अनुवाद करने से श्रद्धेय प्रकाशदेव ने पंजाबियों पर विशेषतया और भारतवर्ष के हिन्दी भाषा भाषियों पर साधारणतया बड़ा उपकार किया है। लिखाई छपाई उत्तम है। मूल्य।-)। ग्रन्थकर्ता से लाहौर में मिल सक्ती है।

गृह कथाः--श्रीमान् श्रद्धेय प्रकाशदेव जी ने श्रीमती लावण्य प्रभा की गृह कथा का हिन्दी भाषा में अनुवाद किया है। ग्रन्थकर्त्री ने दृष्टान्तों द्वारा गृह को स्वर्गधाम बनाने के लिये सुन्दर २ उपदेश दिये हैं। माता, पिता, सन्तान के कर्तव्यों को भली भान्ति बतलाया है। मूल्य ≡) मात्र। लाहौर ब्राह्म समाज से मिल सक्ती है।

कर्तव्य शिक्षा:—यह एक २७० पृष्ट की सुन्दर पुस्तक है। इस ग्रन्थ के लेखक श्रीमान् ऋषीश्वरनाथ भट्ट हैं। आप ने लार्ड चेस्टरफील्ड के उन उपदेशों को जो उन्होंने शिक्षा के विचार से पत्रों द्वारा अपने पुत्र को दिये थे आर्य्य भाषा में अनुवाद कर दिया है। लेखक का परिश्रम प्रंशसनीय है। इण्डियन प्रेस ने ऐसे उपदेशप्रद ग्रन्थ को निकालने में साहित्य भण्डार के भरने में हाथ बटाया है। मूल्य १] रुपये मात्रा। मिलने का पता--इण्डियन प्रेस, प्रयाग।

---o---

भारतवर्षीय आर्य्यकुमार सभाओं का तृतीय सम्मेलन

इस वर्ष आगामी अक्तूबर में भारतवर्षीय आर्य्य-कुमार सम्मेलन सहारनपुर में होगा। सहारनपुर के पुरुषार्थी और उद्योगी कुमारों ने इस सम्मेलन को कामयाब बनाने के लिये स्वागतकारिणी सभा बना ली है जिसके अधिकारी निम्न लिखित हैं। महाशय देवीचन्द जी रईस प्रधान, महाशय महादेवप्रसाद पं० सगुनचन्द जी रईस तथा ला० शिवप्रसाद जी मन्त्री नियुक्त हुए हैं। कुमार सभाओं के मन्त्री महाशय श्रीयुत महादेवप्रसाद जी महा मन्त्री आर्य्यकुमार सम्मेलन सहारनपुर से शीघ्र पत्र व्यवहार करें। इसके अतिरिक्त सम्मेलन की सफलता के लिये अत्यावश्यक है कि आर्य्यसमाज के समाचारपत्र अपने २ पत्रों में सम्मेलन के समाचारों को छाप कर कुमारों को उत्साहित करें।

कालेज होस्टल

और विद्यार्थी जीवन की लीला

जून का महीना है। ग्रीष्म ऋतु का प्रकोप अधिक है। मैं मार्च में मैट्रिक्यूलेशन का इमतिहान दे चुका था, इसलिये गर्मी की छुट्टियां खूब आनन्दस कट रहीथीं। केवल फिक्र इमतिहान के नतीजे कीथी। नतीजा १५ जून को आने वाला था इसीलिये रात को कभी २ नींद भी नहीं आती थी। आखिर सोमवार आया और मैं दौड़ा २ डाकखाने गजट देखने के लिये प्रातःकाल ही गया परन्तु निराश होकर लौटना पडा, क्योंकि नतीजा उस दिन के गजट में छपा ही नहीं था।मैं इलाहाबाद युनिवर्सिटी की सुस्ती पर नाना प्रकार की समालोचना करने लगा। खैर! जैसे तैसे वह हफ्ता कटा और दूसरे सोमवार को मैं डाकखाने भी नहीं गया उस दिन गजट आगया था। एक लडका दौड़ा २ मेरे मकान पर आया और मुझे पुकारने लगा। मेरे आतेही कहने लगा कि मिठाई खिलावो तुम सेकिन्ड डिवियन में पास हो गये हो। मैं भी प्रसन्नता से पूरित होगया। विलायत में इमतिहानों की और डिगरियों की कोई परवाह नहीं की जाती क्योंकि वहां पर विद्यार्थियों का नौकरी करने का मुख्य उद्देश्य नहीं। वहां पर तो उद्देश्य केवल देशहितैषी, देशभक्त मनुष्य बनाना है परन्तु भारतवर्ष में हालत विचित्र है। यहां इमतिहान में पास न होना या होना मौत ज़िन्दगी का सवाल है, किन्हीं की भावी आशायें केवल इमतिहान के पास करने पर मुनहस्सर होती हैं। केवल पास करने पर किन्हीं के वजीफे वर्दी इत्यादि होते हैं। पेट का सवाल भी इस दरिद्रदेश में प्रत्येक विद्यार्थी के सम्मुख रहता है और वह फेल होने से मत्यु से भी अधिक डरता है इस लिये आप ही समझ सक्ते हैं कि मुझ को और मेरे माता पिता को प्रसन्नता कितनी हुई होगी। परन्तु दो ४ दिन पश्चात ही मुझे फिक्र पडा कि अब क्या करना चाहिये। मेरे पिताजी ने सम्मति दी कि कालेज में भरती होऊं। बस,मैंने कोट पेन्ट सिलवाये और १४ जूलाइ को मैं कालेज में भरती होने के लिये चला। स्टेशन पर मुझे सब मेरे मातापिता मित्र इत्यादि पहुंचाने आये और मैं रेल में आराम से बैठ गया।रात का वक्त था और गाडी खाली थी इसलिये मैं तो मजे में सो गया। बस, यही फिक्र थी कि कालेजों में अंग्रेज़

अध्यापक कैसे पढाते होंगे। खाने पीने का कैसा बन्दोबस्त होगा इत्यादि। मेरे एक मित्र बी० ए० क्लास के विद्यार्थी कालेज में पढते थे मैंने उनको अपने आगमन की सूचना देदी थी वह कालेज होस्टल के २० नम्बर के कमरे में रहते थे। मैं स्टेशन पर उतरा। कुली से ट्रंक और बिस्तर उठवा कर और एक इक्के पर रखवा सवार होगया। मैंने कुली को २ पैसे अदद के हिसाब से ४ पैसे दिये और इक्के वाले को होस्टल ले चलने को कहा। कई शहर की घूमती हुई गन्दी गलियों से इक्का खड़२ करता हुआ एक उत्तम और साफ सड़क पर आया। सड़क के दोनों तरफ बड़े २ पेड़ लगे हुये थे और विद्यार्थियों के खेलने के लिये हाकी फील्ड, फुटबालफील्ड और टेनिसकोर्ट बने हुये थे। सामने ही लाल पत्थर की बनी हुइ एक आलीशान इमारत दीखती थी। इक्के वाले ने कहा "बाबूजी यही होस्टल है" मैं भी रास्ते भर प्रत्येक वस्तु को एक अजनबी की दृष्टि से देखता आरहा था। खरड़२ इक्का अन्दर पहुंचा। मेरे मित्र सज्जनसिंह बरामदे में घूम रहे थे। मुझे देखते ही आनंद से हंसते २ दौड़े और मैं भी एक दम इक्के से कूद पड़ा और नमस्ते कर हम दोनों बगलगीर होकर मिले। मुझे चट से अपने कमरे में लेगये और मुझे वे कुर्सी पर बिठाकर आप बाहिर गये और आवाज दी, 'फराश, सामान उठाकर हमारे कमरे में रखो, इक्के वाले को उसकी रेट के माफिक दाम देकर विदा करो'। मैंने इतनी देर में सारा कमरा देख लिया। कमरा चौंखूटा साफ सुथरा सफेदी किया हुआ था। एक दीवार के पास खाट पड़ी हुई थी और उस पर एक सफेद चादर बिछी हुई थी। एक तरफ एक मेज पड़ी थी मेज के सामने ही एक अलमारी थी जिसमें उनकी किताबें रखी हुई थीं। खाट के नीचे एक ट्रंक रखा हुआ था और एक कोने में हवन कुंड और कुछ समिधा रखी थी और ऊपर के एक ताक में उनकी सुराही दुसरे कोने में एक छाता और बेग रखा था और खूटी पर एक कोट और पजामा लटक रहा था। इतने में सज्जनसिंह आगये, कुशल मंगल के पश्चात् वार्तालाप करने लगे और कहने लगे इस होस्टल में अस्सी कमरे हैं। प्रत्येक में एक २ विद्यार्थी रहता है। इसकी १२ रसोइयें वह देखो सामने बनी हुइ हैं। हम ६ या ७ लड़के मिल कर एक मेस खोल लेते हैं और हमको हमारे रसोइ खर्च में घी समेत १३ तथा १४)रू मासिक खर्च होजाते हैं। यहां के एक कमरे का किराया हमको ॥) महीना देना पड़ता है और कालेजकी फीस भी ७) तथा

८)रु० महीना देनी पड़ती है। बस,यहां हमारा गुजर ३५)रु० माहवार बिना नहीं हो सक्ता है। मैं कालेज के इस अधिक खर्च पर और अंग्रेज़ी शिक्षा प्राप्त करने की दिन २ कठिनता पर विचार करने लगा। इतने में सज्जनसिंह बोले, अजी ! लो यहां के खर्च की कुछ मत पूछो जिसको यह खोमचेवालों की चाट लगजाती है, बस उसके ४०) रु० माहवार बिना काम ही नहीं चलता और इस पर तुर्रा यह है कि चन्दे तथा दान की एक न एक फेरिस्त प्रत्येक महीने घूमा ही करती है।सज्जनसिंह बोले,और वार्तालाप फिर करेंगे अभी तो दिशाजंगल से निवृत्त होजायें, बस, हम दोनों लोटे हाथ में लेकर दिशा जंगल को चले। नल से पानी भर कर पाखाने गये और वापिस आकर हाथ धोकर सुन्दर साफ बने हुए "स्नानागार" में प्रवेश किया। वहां कहार हमारी धोती, साबून तथा तैल ले आया था, सो हमने खूब मल कर अच्छी तरह से नल के नीचे बैठ कर स्नान किया। प्रत्येक स्नान करने के कमरे में "शावर बाथ" फंवारा था, सो मुझे स्नान में बड़ा आनन्द प्राप्त हुआ। दोनों स्नान कर कमरे में गये, और संध्या हवन इत्यादि से निवृत्त हुये। सज्जनसिंह कहने लगे 'हमारे एक अंग्रेज़ वार्डिन हैं। उनको आप होस्टल में भरती होने की अर्ज़ी लिखिये और मैं आपको उनके पास ले चलूंगा, आशा करता हूं, आपको वह भरती कर लेवेंगे। फिर एक कालेज का एडमिशन फार्म भी ले आये और मैंने उसको भर दिया और कहा आज तो आदित्यवार है, कल आपको कालेज में भरती करा दूंगा। यहां कालेज में भरती होने के लिये लड़के तो अधिक आते हैं और जगह है नहीं सो कई लड़कों को भरती करने से इनकार कर देते हैं परन्तु आफत है सिर्फ बे वसीले और थर्ड डिवियन वाले की। आप तो सेकिंड डिवियन में पास हुये हैं। आपको तो अवश्य भरती कर लेंगे। इतने में ६॥ बज गये, आज आदित्यवार था सो कालेज के प्रिन्सपल साहब होस्टल का निरीक्षण करने के लिये आये। प्रिन्सपल साहब पक्के एङ्गलो इंडियन थे। मिज़ाज और मान के मारे कभी विद्यार्थियों से हिल मिल कर नहीं रहते थे। सारे लड़कों ने अपने २ कमरों को साफ करवा लिया था और कुछ शौकीन लड़कों ने अपने कमरों में दरियां गलीचे बिछा रखे थे, और दीवारों पर तसवीरें लटका रखी थीं। सारे लड़के साफ २ कपड़े पहिन कर और अपने कालेज के रंग के आसमानी साफे बांधकर अपने २ कमरों के सामने खड़े हो गये,

साहब बहादुर उनके पीछे २ हमारा सुपरिन्टेन्डन्ट दर्वी चिल्ली के समान कागज पेंसिल हाथ में लिये आ रहा था और उनके साथ २ हमारा खुशामदी मानिटर 'हां हजूर' करता २ मानों उसे आज ही डिप्टी (साहब से) कलक्टरी मिल जायगी, आ रहा था। साहब बहादुर को हर एक गुडमार्निग करने लगा और वह प्रत्येक कमरे में घुस २ कमरे की किताबों तक की भी देखते थे। वह प्रत्येक हिन्दी की पुस्तक जो यदि किसी की अलमारी में मिल जाती बड़े गौर से और मूंह बना कर देखते थे मानों हिन्दी की किताब राजद्रोह से भरी है। खैर साहब का निरीक्षण खतम हुआ। तत्पश्चात सज्जनसिंह के कमरे में आकर कहार सुराही भर गया और मर्तबान में से घी निकालकर ले गया और कह गया "बाबू साहब ! भोजन तैयार है" बस, हम दोनों रसोई में पहुंचे, एक एक के लिये अलग २ चौका बना हुआ था। हम एक २ चौके में बैठ गये। ब्राह्मण रसोइये ने हम को थाली ऊपर से फेंकी और दाल इस तरह से चौके में ही सुकड़ कर परोसी मानों हमारी थाली में कोई बिच्छू और सांप है जो उसे काट खायगा। मुझे ब्राह्मण के ऊंचे २ से फुलके पुरसना इत्यादि देख जोर से हंसी आगई, इस पर सज्जनसिंह भी हंस पड़े और कहने लगे। भाई, अभी तक इन प्रान्तों में चौके का भूत सवार है और यदि यह कच्चा, पक्का, सखरी निखरी इत्यादि का ध्यान न रक्खें तो हमारे चौके के कई काशीदास बुद्धूमल जैसे पोप विद्यार्थी भोजन तक न करें। हम लोगों ने भोजन बाद बाहिर खड़े कहार से हाथ धुलाये और फिर हम वहां से होस्टल के कामन रुम मे गये। वहां मैंने देखा कि बहुत से लड़के नंगे सिर पैरों में काले स्लीपर कमीज़ और सुफेद बंगालियों की तरह धोतियें पहिने बैठे हुए थे और बहुत से लड़के मूछों पर ताव लगाते हुए पेट पर हाथ फेरते हुए भोजन के पश्चात आ आकर बैठते जाते थे। उन में से बहुत से अंग्रेज़ी बाल रखे हुए थे और सुगन्धित केश रंजन तैल उनके सिर पर लगा हुआ था। उन की बालों की मांग कढी हुई भली मालूम होती थी। मैंने भी मेज पर के अखबार देखने शुरू किये परन्तु जब मैंने अपनी मातृ भाषा हिन्दी का एक भी अखबार वहां पर न देखा तब मेरे आश्चर्य की सीमा न रही और सज्जनसिंह से पूछने पर पता लगा कि विद्यार्थियों के बहुत कुछ कहने सुनने पर भी सरस्वती जैसी पत्रिका तक नहीं आती। आर्यसामाजिक पत्र तो दूर रहे साहब बहादुर की

प्रत्येक हिन्दी पत्र में राजद्रोह की गन्ध आती है । हिन्दी में ही नहीं परन्तु हिन्दुस्तानीमात्र से डर लगता है, इसीलिये यहां पर न तो हिन्दुस्थान रिव्यु, न माडर्न रिव्यु, न बंगाली, न अमृत बाजार पत्रिका ली जाती है। जब विद्यार्थियों ने बहुत कुछ प्रार्थना की और यह कहा कि अखबारों के लिये हम ही रुपैया देते हैं तो भी हमारी राय का अखबार क्यों नहीं आता है तब बहुत कठिनता से "लीडर" मंगाने का हुक्म हुआ है। मुझे विद्यार्थियों की गुलामी और पराधीनता पर बहुत शोक हुआ। जब मेरी नजर अखबार पढ़ने की मेज से दूसरी तरफ गई तो मैंने देखा कुछ लड़के शतरंज खेल रहे हैं, कुछ क्रोकोनल, कुछ पिंगयांग, और कुछ बिजीक और तरह २ के खेल खेल रहे हैं, खूब ज़ोर से हंसी मज़ाक हो रहा है और कुछ दुष्ट विद्यार्थी सज्जनसिंह को मेरे साथ देखकर उन पर आवाज़ें कसने लगे "देखो सज्जन! अब तो तुम्हारे गहरे हैं, भाइ हमारा भी हिस्सा है" सज्जनसिंह समय के बड़े पाबन्द थे। उन्हों ने अपनी जाकट से घड़ी निकाल कर देखा और कहा ग्यारह बज गये, अब कमरे में चलना चाहिये। बस, हम दोनों कमरे में पहुंचे। मैंने सज्जनसिंह से पूछा कि उन विद्यार्थियों का इन आवाज़ों से क्या मतलब था। सज्जनसिंह बहुत गम्भीर भाव से कहने लगे "भाई! यह गुरुकुल तो है ही नहीं जहां प्रत्येक लड़का ब्रह्मचारी हो। यहां पर सब १७ से लेकर २२ वर्ष तक के विद्यार्थी रहते हैं और हमारे देश की कुप्रथा के अनुसार करीबन सब के सब विवाहित होते हैं और वे फर्स्ट इयर में आये हुए नये खूबसूरत विद्यार्थियों को दिक करने में प्रसन्न होते हैं। जो बेचारा नया विद्यार्थी इन दुष्टों के चंगुल में फंस जाता है उसकी आयु यह खराब कर देते हैं। इन लोगों में से कुछ मांस मदिरा तक का सेवन करते हैं और शाम को तेलवेल लगाकर कंगी चोटी कर अच्छा सूट डांटकर चौक में जाते हैं और झरोखों की तरफ नज़र दौड़ाते हैं और यदि किसी अप्सरा ने मुसकरा कर इनकी नजर से नजर मिलाई तो अपने को धन्य समझते हैं। यहां पर धार्मिक तथा सामाजिक चर्चा करना तो मना ही है फिर भला लड़के क्यों न खराब होंगे। यहां पर विद्यार्थियों में धार्मिक जीवन लाने के लिये आर्य कुमार सभा है और थोड़े बहुत विद्यार्थी डरते २ उसमें जाते हैं इसी कारण से थोड़े से विद्यार्थी कुकर्मों से बचे हुए हैं। इस प्रकार बातें करते हुए सफर की थकावट

के कारण मुझे तो नींद आगई और सज्जनसिंह कुछ पढ़ने लगे। करीब दो बजे होंगे कि मेरी आंख खुली और मेरे कानों में बरामदों में घूमते हुएं खोमचेवालों की आवाज़ें पड़ने लगीं। कोई खोमचा वाला कमरे के सामने खड़ा होकर कहता था। "कुछ खाओगे, बाबू साहब", कोई आवाज़ देता था "रबड़ी मलाई की बरफ" कोई कहता था "खटाई की चाट" "मिठाई" "केला सेब नास्पाती" मैंने बाहिर बरामदे में आकर मुंह धोया। सज्जनसिंह ने कहा कि कुछ दोपहरी कर लो मैंने देखा कि सब लड़के बरामदों में निकल आये हैं और चीलों की तरह खोमचेवालों पर टूट पड़े हैं "मिठाई" और 'आचार' के खोमचा वालों के पास भीड़ अधिक थी। सज्जनसिंह ने फलवाले को बुलाया और उस से कुछ फल लिये। हम दोनों कुर्सी पर बैठकर फल खाने लगे और वार्त्तालाप करने लगे कि यहां पर खोमचेवाले चीज़ें मंहगी बहुत देते हैं। बाज़ार से ड्यांढे दुगने दाम लेते हैं, तिस पर तुर्रा यह है कि चीज़ें रद्दी बेचते हैं! सज्जनसिंह ने कहा यह लाइसेन्स्ड होने पर भी ऐसा करते हैं दाल में जरुर काला है। यहां पर विद्यार्थी इन खोमचे वालों से उधार खा जाते हैं और फिर फिजूल खर्ची की वजह से महीने के अन्त के पहिले ही दिवालिये हो जाते हैं। अड़ोस पड़ोस के कमरा वालों से उधार मांगा करते हैं या अपने पिता से झूटे बहाने बनाकर रुपय बन्धे हुये खर्च से अधिक मंगाते हैं। हम लोग यह वार्तालाप कर ही रहे थे कि जोर की आंधी आई। वर्षा ऋतु तो थी ही जूलाई का महीना था सो बात की बात में ही आकाश काले काले बादलों से आच्छादित होगया और मूसलाधार पानी बरसने लगा। कुछ खुले दिल वाले नवयुवक जल्दी से कपड़े खोल कर होस्टल के लान पर आ डटे और लगे नहाने, और ज़ोर से चिल्लाने। हमारे होस्टल की हरी२ दूब में नीची जमीन पर होने के कारण खूब पानी भर गया फिर तो भाई खूब मज़ाक रहा। बेचारे लड़कों को जो कि वर्षा में नहाने में उनके साथी नहीं हुए थे वे लोग कपड़े समेत कमरों में से पकड़े २ कर लाने लगे और उस भरे हुए पानी में गिराने लगे। जो कोई कपड़ा पहने जाता था बिचारा गीले कपड़े हुए कीचड़ में लथ फथ हो जाता था। यह मजाक ४ बजे तक होता रहा। इतनी देर में वर्षा भी बन्द हुई और फिर धूप पड़ने लगी। हमारे हाकी और फुटबाल फील्ड की जमीन सब पानी को शोष गई

और चूने के बने हुए टेनिसकोर्ट तुरन्त सूख गये। कुछ लड़के नहा धो कर घुटने तक का हाफ पेन्ट सफेद कमीज और फुटबाल बूट पहिन कर फुटबाल तथा हाकी खेलने लगे। कुछ शौकीन लड़के सूट डांटकर और एक सुन्दर टेनिस रेकट हाथ में लेकर टेनिस कोर्ट में जा पहुंचे। मैंने स्कूल में कभी टेनिस नहीं खेला था सो मुझे भी टेनिस खेलने का शौक उत्पन्न हुआ, और मैं भी सज्जन-सिंह का रेकट लेकर टेनिस कोर्ट पर जा पहुंचा। सज्जनसिंह भी मेरे साथ हो लिये थे। मैं खेलना नहीं जानता था, मुझे किसी ने भी नहीं सिखाया क्योंकि नये लड़के के साथ खेलने से खि-लाड़ियों का खेल बिगड़ता है। सज्जनसिंह ने कहा, भाई! तुम्हारा साथी तुम्हारा ही जैसा होना चाहिये इतने में ही हमारे जैसे नये शौकीन एक फर्स्ट इयर के विद्यार्थी आये। सज्जनसिंह ने चट उनसे मुझे introduce किया और उनको और मुझ को एक एक कोर्ट में सामने सामने खड़ा कर दिया और आप खड़े हुए देखने लगे। बीच २ में खेलना बता भी देते थे। वह हमारे एम्पायर भी थे। हमें सरविस करना तो आता ही नहीं था गेंद को बले से मारतें यदि इस कोर्ट में फेंकना चाहते तो दूसरे में गिरजाता। यदि सरविस सही भी पड़ता तो रिटर्न नहीं होता था। गेंद को धीरे से मारने की बजाय ज़ोर से मार देते। बस, फिर क्या था मानों क्रिकेट की बाऔ-न्डरी होजाती और सब दर्शक विद्यार्थी हंसते। शाम हुई और हमने खेल खतम किया। सज्जनसिंह मुझ से कहने लगे, तुम्हें कुछ दिन में अच्छा खेलना आ जायगा। तुम मायूस मत होवो। हम दूब पर बैठ कर पसीना सुखाने लगे। इतने में ही सात बजे और सज्जनसिंह ने कहा, अब भोजन करना चाहिये। शाम को पूड़ियां बनती हैं सो भोजन यहीं दूब पर मंगाकर खायेंगे। थम्मन कहार को दो थालियां परोस कर जल्दी लाने को कहा और वह कहार थालियों में गर्मागर्म पूड़िया आलू का शाक और दही का रायता रख कर दौड़कर लेआया। खूब आनन्द हंसी मज़ाक करते हुए हमने भोजन किया। भोजन कर चुके थे कि घण्टा बजा। मैंने सज्जनसिंह से पूछा यह किस बात का घण्टा है। उन्हों ने उत्तर दिया आज literary society की सभा है। यह होस्टल के कामन रुम मे होती है। आज के विवाद का विषय गोखले का प्रारम्भिक शिक्षा बिल है आज हमारे बार्डन साहब सभापति के आसन को ग्रहण करेंगे (इनको विद्यार्थी

इस नाम से ही पुकारते थे, यह Ireland निवासी होनेके कारण अंग्रेज़ी शब्दों का शुद्ध उच्चारण नहीं कर सक्ते थे और लड़कों को इनकी बात समझ में नहीं आती थी इसी लिये इनका नाम "शूशू" कर दिया था। "शूशू साहिब हमारे बोर्डिंग के अधिष्ठाता हैं। आज का विषय दिलचस्प है इसलिये विद्यार्थी अधिक आवेंगे नहीं तो विद्यार्थी सभा में कम आते हैं क्योंकि साहित्य सम्बन्धी विषयों को छोड़कर दूसरे विषय कभी रखने का हुक्म ही नहीं और केवल साहित्य विषय रुचिकर नहीं होते। खैर, यह सुनकर मैं कमरे में दौड़ा और जल्दी से गोखले की स्पीच के तीन अच्छे जुमले रट लिये। इतने में ही सज्जनसिंह कोट पहिन कर तैयार हो गया। दूसरा घण्टा बजा और सब लड़के कमरों से निकल२ कर कामनरूम में बेत की कुर्सियों पर बैठने लगे। इतने में ही शूशू साहब आ गये। लड़कों ने उठकर ताज़ीम दी और सभा के मन्त्री ने गत सप्ताह की कार्यवाही पढ़नी शुरु की। तत्पश्चात वाद आरंभकर्ता ने वाद आरंभ किया और विपक्षी ने खण्डन किया। दोनों उपरोक्त महाशयों ने किसी अंग्रेजी अखबार में से चुराकर ज्यों का त्यों कागज पर लिखा था। वहां फराटे बन्ध उसको पढ़ दिया और ताड़ियां खूब पिटीं। फिर इसके बाद दोनों पक्षों के विद्यार्थी एक एक के पश्चात अपने रटे हुए कुछ अंग्रेज़ी के टुटे फूटे जुमले आ आकर बोलने लगे और मैं भी अपने तीन रटे हुए जुमले बोल गया। प्रत्येक वक्ता के खड़े होते और खतम करते वक्त खूब जोर से तालियां पीटी जाती थीं और जब कोई देश भक्ति का कोई वाक्य कह देता था तो (hear hear) सुनो, सुनो की आवाज़ें होती थीं। जो विद्यार्थी बिना याद किये वैसे ही बोलने खड़ा हो जाता तो बड़ा हास्यपात्र होता था क्योंकि वह अंग्रेजी बोलने में अधिक गलतियां करता और एक आध वाक्य बोलते ही (nervous) नरवस हो जाता था। ९ बजे और सभापति ने अपनी वक्तृता थोड़े से शब्दों में समाप्त की! मेरे तो साहब बहादुर का एक लवज़ भी समझ में न आया परन्तु आखरी वाक्य का यह अर्थ था कि तुमको (vote) वोट से यह मामला तय करना चाहिये। पहिले उन विद्यार्थियों को हाथ उठाने के लिये कहा गया जो कि गोखले के पक्ष में थे। सारे के सारे विद्यार्थियों ने हाथ ऊंचा कर दिया। यहां तक कि उन्होंने भी हाथ उठादिया जिन्होंने कि विपक्ष में कहा था

फिर प्रारम्भिक शिक्षा के विरुद्ध वालों से वोट देने को कहा गया परन्तु एक ने भी वोट नहीं दिया। यह देखकर सभापति ने गोखले के बिल के पक्षवालों की जय उच्चारण की और करतलध्वनियों से सारा हाल गूंज उठा। सभापति अपने घर गये और विद्यार्थी कोलाहल करते हुए बाहिर निकले। इतने में ही ९॥ बजेकी घण्टी बजी। विद्यार्थी अपने २ मानिटरों के कमरेमें जाकर अपने दस्तखत हाजरी के कागज पर करने लगे। गर्मी अधिक थी इस लिये सबों ने अपनी खाटें हरी २ घास पर मैदान में बिछवाई थीं। कुछ दिल चले लड़के एक हारमोनियम ले आये और गाने लगे। कोई विद्यार्थी बासुरी अच्छी बजाता था। हम अपनी२खाटों पर पडे हुए सुनते रहे। कुछ लड़के सोगये थे और कुछ लड़के उनकी खाटों के नीचे घुसकर एक ज़ोर का (push) पुश ऊपर मारते और विचारा सोता हुआ लड़का धड़ाम से भुमि पर गिर पड़ता और उस पर उसके बिस्तर और खाट गिरजाती। सारे लडके खूब ज़ोर से हंसते और वह लड़का बड़ा शरमिन्दा होजता और उसकी नीन्द वीन्द सब उड़ जाती। बस, इस तरह की धूम १२ वजे तक आपस में होती रही। इतने में कुछ विद्यार्थियों को टेढि सूझी। एक धोकलसिंह बेचारा सेकिन्ड इयर का विद्यार्थी कुछ थके होने के कारण गहरी नींद में खुराटे भर रहा था। उन्हों ने बड़ी सावधानी से उसकी खाट उठाइ और सामने के एक बंगले के कम्पौण्ड जिसमें कि एक अंग्रेज़ डाक्टर रहता था अन्दर जा उसकी खाट रख आये। बंगले के कुत्तों ने यह देख कर ज़ोर से भौंकना शुरू किया और उसकी खाट के चारों तरफ भूं भूं करने लगे। बेचारा धोकलसिंह एकाएक चौंक कर उठा और अपने को अजनबी जगह में पाकर अचम्भित हुआ। उसके उठने पर कुत्ते अधिक भौंकने लगे। इतने में डाक्टर साहब भी उठ खडे हुए और एक खाट पर आदमी को वैठा देख कर बड़े चकराये और धोकलसिंह को क्रुद्ध होकर डाटने लगे और कहने लगे 'तुम हमारे बिना इजाजत आगया है, तुम को पुलिस के हवाले किया जायगा,' धोकलसिंह ने वडी नम्रता से साहब को समझाया कि वह होस्टल का विद्यार्थी है परन्तु अपने आने का कारण धोकल होने के कारण बता न सका। खैर, डाक्टर साहब ने सब सामान उठाकर जल्द निकल जाने को कहा। वह बेचारा खाट हाथ में लिये और बिस्तर सिरपर लादे हुए बंगले से निकला। एक तो पंखा और दूसरे खाट और बिस्तर से लदे

हुए धोकलसिंह होस्टल के फाटक से टकराकर धडम से गिरपड़े। असली शरारती लडके तो चादरें ओढ २ कर सोगये। वह मानों कुछ जानते ही नहीं। कोई२के हंसी के मारे पेट में बल पड रहे थे। धोकलसिंह की दशा विचित्र थी। सो वह मनमें जानता होगा। मैंने जैसे तैसे हंसी रोक कर उनको उठाया और खाट उठाने में मदद दी। खैर दूध में गिरने के कारण चोट और तो लगी नहीं थी परन्तु बेचारे बड़े लज्जित थे। कुछ मक्कार लड़के मज़ाक करने के लिये आ आ कर पूछने लगे, कहो धोकल! क्या हुआ? रात का १ बज चुका था। मेरी आंखें नींद से भारी होरही थीं। मैं होस्टल के केवल एक दिन आदित्य वार के जीवन पर तरह२ के विचार करने लगा। जब मैं इन विद्यार्थियों का जीवन गुरूकुल के बिद्यार्थियों से मीलान करता तो अतीव अन्तर प्रतीत होता। यह विचार करने लगा कि भारतवर्ष में कब वह पवित्र घड़ी आवेगी जब प्रत्येक कालेज के विद्यार्थी गुरुकुल के ब्रह्मचारियों के समान पवित्र देवमूर्तियां होंगी। विद्यार्थी सुधार की तरह २ की बातें सोचते २ मुझे नींद आगई और फिर दीन दुनिया की सुध न रही। "एक विद्यार्थी"

———000———

लराडन की सुविख्यात नगरी।

भारतवर्ष की अधिकांश नारियां यह भी नहीं जानतीं कि वह किस देश अथवा किस प्रान्त में रहती हैं। उनके जिले का क्या नाम है और जिन अङ्ग्रेज़ों का यह राज्य है वह कहां के निवासी हैं। भूगोल सम्बन्धी इतना अज्ञान एक भयप्रद विषय है। प्रत्येक नर नारी को थोड़ा बहुत भूगोल का परिज्ञान होना चाहिये। ऐसे ऐसे अनेक नगर इस भूमराडल में हैं जिन को यदि एक स्वतन्त्र देश या राज्य कहें तो अनुचित न होगा। अपने पाठकों के विनोदार्थ आज हम उन्हें संसार की सब से बड़ी नगरी लराडन का वृत्तान्त सुनाते हैं। यह नगरी इंगलिस्तान देश की राजधानी है। सबसे विशाल, सब से समृद्धिशालिनी और जन संख्या में सब से अधिक आबाद यहीं नगरी है। यह नगरी ६८६ मुरब्बा मील जगह को घेरे हुए हैं। इस नगरी में ६६८००० घर हैं जिन में ६०००००० और ७०००००० के दरम्यान मनुष्य बसते हैं। लराडन की प्रसिद्ध २ सड़कों की लम्बाई

२७१८ मील है । लण्डन के लोग एक दिन भर में २००,०००,००० गेलन जल खर्च करते हैं । इस नगरी में एक दिन में २० लाख चिठ्ठियां और १० लाख तारें आती हैं । एक दिन में १५१३,५२३,८१० रुपये का माल आता और १४०४,१७०,८६५ रुपये का माल बाहिर जाता है । लण्डन में बागों और मैदानों का रकबा ८ मुरबा मील है। एक हज़ार बीघा के करीब की ज़मीन शमशानों ने घेर रखी है । नगरी की रक्षा करने के लिये १६००० पुलीस के आदमी नियुक्त हैं। लण्डन का प्रबन्ध कारपोरेशन [कमेटी] और लार्ड मेयर के द्वारा होता है। लण्डन में एक लण्डन कौन्टी कौंसल है और भिन्न२ भागों के लिये २८ बारो कौंसल बनी हैं । केवल एक लण्डन नगरी से ५५ प्रतिनिधि पारलेमन्ट में भेजे जाते हैं। १२५००० मनुष्य नित्य लण्डन में प्रविष्ट होते हैं । लण्डन में नित्य ३६१ मनुष्य उत्पन्न होते और ६६ नित्य मरते हैं । अनुमान २ लाख विदेशी यहां रहते हैं। प्रतिवर्ष लण्डन के हस्पतालों में २,२९६,५७८ मनुष्यों का इलाज होता है । एक लण्डन नगरी में प्रारम्भिक शिक्षा के लिये ६७५ स्कूल हैं जिन में ८१७,३८० विद्यार्थी पढ़ते हैं। लण्डन में रेल द्वारा आने जाने वाले मनुष्यों की संख्या प्रतिदिन ३६०,००० होती है और अनुमान ५००००० मनुष्य ट्रामवे द्वारा आते जाते हैं । लण्डन में मोटर और अन्य प्रकारकी गाड़ियां ११००० हैं । १७४९५८ कुली रोज़ लण्डन में बाहिर के ग्रामों से काम करने के लिये आते हैं । अनुमान २ लाख स्त्रियां कारखानों में काम करती हैं । लण्डन में १ लाख ऐसे मनुष्य बसते हैं जो एक एक कमरे में रहते हैं । केवल लण्डन के मजदूरों की वार्षिक आय २,५६८,३६५,००० रुपये होती हैं। लण्डन को ऐसा सौभाग्य व्यापार वृद्धि के कारण से प्राप्त हुआ है ॥

———ooo———

समय की अमूल्यता ।

(विद्यालङ्कार उदित मिश्र लिखित)

समय एक अमूल्य पदार्थ है । जिस समय जो मनुष्य जैसा काम करता है उसको वैसा ही फल मिलता है क्योंकि प्रत्येक अच्छे और बुरे काम का फलदाता सर्वव्यापक परमात्मा है । यह जानते हुये भी कि परीत्यभूतानि परीत्यलोकान् परीत्य

सर्वाः प्रदिशोदिशश्च अर्थात् सब वस्तु में परमात्मा रमा हुआ है, बहुत से लोग भद्रा, छींक, आंख फरकना, लोमड़ी का रास्ता काट देना और छिपकिली का गिर जाना इत्यादि इत्यादि कामों को अशुभ ही नहीं वरन् सनातन धर्म से दुखकारक समझते हैं और कभी २ बुरा फल भी पा जाते हैं क्योंकि काम करना छोड़ कर समय को व्यर्थ बिताने लगते हैं । उत्तम काम करने वालों के लिये अशुभ और कराटक का स्मरण तक न होना चाहिये । जिसको आज हम चोर कहते हैं क्या वह पण्डित न हो सकता यदि समय को अच्छे काम में लगाता । अवश्य प्रारम्भ से समय का उचित प्रयोग करने से प्रत्येक व्यक्ति एक रत्न हो सकता है । शूद्र से शूद्र के लड़के का समय पढ़ाने लिखाने में बिताया जाय तो निस्सन्देह पंडितवर हो सकता है और ब्राह्मणों को शिक्षा दे सकता है। कहा है-

समय तुल्य नहिं हित कोऊ अहितहु तासु समान।
यथा करत कारज मनुज तथा लहत फलमान॥

बहुत से लोगों को रुपये का गुण उस समय ज्ञात होता है जब उनका धन बुरे कामों के करने के लिए पास से निकल जाता है । इसी प्रकार बहुधा समय को तुच्छ समझ कर वहुत से लोग उसकी प्रतिष्ठा नहीं करते और मनमाना व्यर्थ कामों में समय को विताते हैं । जब जीवन का समय शीघ्र समाप्त होनेवाला होता है तब चित्त में विचारते हैं कि अब समय अच्छे कामों में विताना चाहिये परन्तु उस समय आलस्य और शिथिलता का स्वभाव पड़जाता है जिसका परित्याग करना कठिन है । अच्छे विचार और अच्छे काम इन्द्रियनिग्रह आदि मनुष्य उसी समय कर सकता है जब आरोग्य रहता है ॥ कहा है—

यावत्स्वस्थमिदं शरीरमरुजं यावज्जरा दूरतो ।
यावच्चेन्द्रियशक्तिप्रतिहता यावत्क्षयो नायुषः ॥
आत्मश्रेयेति तावदेव विदुषा कार्यं प्रयत्नो महान् ।
सन्दीप्ते भवनेतु कूपखननं प्रत्युद्यमः कीदृशः ॥

मनुष्य जब तक इस शरीर से आरोग्य, शक्तिशाली रहे कार्य को बुद्धिमानी से करे क्योंकिबुढ़ापा आने पर कुछ नहीं होता। जैसे घर में आग लगने पर कुआं खोदना निष्फल होता है और मकान जलने से

नहीं बच सकता धन परिश्रम करने से, भूली हुई विद्या पढ़ने से, आरोग्य संयम और चिकित्सा से, फिर प्राप्त हो सक्ते हैं परन्तु बीता समय फिर हाथ नहीं आ सक्ता।

दुनियां में एक मूर्ख दूसरा पंडित, एक बलवान दूसरा दुर्बल, एक गम्भीर दूसरा बकवादी, तात्पर्य यह एक सज्जन और दूसरा दुर्जन यह क्यों होते हैं। इसका मुख्य कारण प्रत्येक समय विभाग ही का प्रतिफल है। दो नीरोग्य आदमी ग्रीष्मऋतु में शीतोत्पादक पर्वत पर जांय, एक बली और दूसरा दुर्बल होकर घर आवे तो सोचना चाहिये कि मुख्य कारण क्या है जो दोनों की शारीरिक अवस्था में अन्तर पड़ा। सुनिये, एक ने ३½ बजे रात उठ कर ६½ बजे तक नित्य कर्मसे छुट्टी पाकर व्यायाम भी कर लिया दूसरा ६½ तक निद्रा देवी के पंजे में अपने को फंसाये हुय करवट लेता रहा। दोनों के भोजन वस्त्र इत्यादि कार्य क्रम में अन्तर न आकर केवल समय विभाग और प्रयोग ही में अन्तर हुआ जिससे शारीरिक अवस्था में परिवर्तन होगया। जब शरीर खिन्न हुआ तो आत्मिक और सामाजिक उन्नति होनी असम्भव है, अतएव समय को अच्छे कामों में न लगाने से किसी प्रकार का सुख नहीं मिलता। बहुत से लोग यही सोचते सोचते कि काम कल करलेंगे आज ज़रा आराम करलें अपनी अमूल्य जीवनयात्रा को समाप्त कर देते हैं। कोई कोई बुढ़ापा में सोचते भी हैं तो उस से क्या होता है। पंचक्रोशी तो है नहीं कि महान से महान पाप भी पांच स्थान पर घूम आने से छूट जायगा। यहां तो परमात्मा की आज्ञा है कि प्रारम्भ से लेकर अन्त तक उत्तम कार्यों में ही समय को बिता कर मनुष्य को मरना चाहिये। सोचने की बात है कि हम यह जानते हुए कि "बड़े भाग्य ते नरतन पायो" समय को व्यर्थ के झंझटों, मान अपमान और खुशामद इत्यादि व्यर्थ के वितंडों में बिता रहे हैं। कोई अच्छी बात ज्ञात होती है वह थोड़ी समय तक रहती है। कल बिलकुल ला पता हो जाती है। आज संध्या अग्निहोत्र करते हैं कल समय नहीं मिला। शतरंज खेलने लगे या मित्र मण्डली के साथ गप हांकने लगे, इन्हीं निरर्थक कामों में अमूल्य समय को बिता देते हैं। किसी विद्वान् ने कहा है कि जो लोग यह कहा करते हैं कि हमारे पास समय नहीं उनके पास बहुत समय रहता है परन्तु काम से वे द्वेष रखते

हैं। उसके विरुद्ध जो लोग काम करने वाले होते हैं उनका समय अच्छे प्रकार के कार्य सम्पादन करने पर भी बच जाता है।

एक ही समय में विलायत के विद्यार्थी अपनी मातृभाषा के अतिरिक्त लेटिन, ग्रीक, फ्रेंच और जरमन इत्यादि विदेशी भाषाएं भी सीखते हैं। भूगोल, इतिहास व हिसाब के साथ साथ वे विज्ञान भी सीखते हैं। पाठशालाओं में विद्यार्थी गाना, बजाना, और चित्र खींचना तक सीखते हैं। इतना करके घंटे दो घंटे शारीरिक श्रम भी वे करते हैं इसी लिये वे इस देश के छात्रों की अपेक्षा अधिक हृष्ट पुष्ट और नीरोग्य रहते हैं। समय को व्यर्थ कामों में न खोकर उसे अच्छे तरह काम में लाने का यही फल है। जिस प्रकार इस देश के विद्यार्थी प्रायः समय को व्यर्थ खोया करते हैं यदि वे भी खोते तो कभी इन बातों को न सीख सकते। हम लोग तो रात दिन चारपाई पर पड़े रहने और व्यर्थ के तर्कना को हल करने में ही आराम समझते हैं, परन्तु शक्तियों को सदैव उत्तम कामों में लगाने से ही आराम मिलता है अन्यथा कदापि नहीं मिल सकता।

एक मनुष्य जिसका नाम बेंजामिन फ्रेंकलिन था, ७० वर्ष की अवस्था में अमेरिका के फिलेडेलफिया नगर में विदेशी की भांति आकर ठहरा। उस समय उसके पास केवल एक डालर (अमेरिका का एक सिक्का) था। पीछे से वह अपने निज परिश्रम और बुद्धिमानी से अपने समय में प्रथम श्रेणी का समाचार पत्र सम्पादक, नीतिज्ञ, प्रबन्धकर्त्ता और वैज्ञानिक होगया। सन् १७९० ई० में चौरासी वर्ष की अवस्था में उसकी मृत्यु हुई। वह अमेरिका के प्रसिद्ध मनुष्यों में गिना जाता है। उस को १००वर्ष से अधिक हुए परन्तु उसकी कीर्ति दिन २ फैलती जाती है। अमेरिका में कोई ऐसा मनुष्य नहीं हुआ कि जिसने उस से अधिक प्रतिष्ठा प्राप्त की हो।

यूनाइटेड स्टेटस में ऐसा देश और गांव कम मिलेगा जहां फ्रेंकलिन नाम का नगर और गांव न हो। कोई गांव नहीं है जहां उस के नाम का चौक, गली, धर्मशाला, बैंक इत्यादि न हों। सारी विद्वता रहते हुए भी वह नीरोग्य और बलिष्ट था। उस में सब से विशेष गुण यह था कि वह अपने समय को बड़ी सावधानी से व्यतीत करता था। उस ने कहा है कि सिवाय पढ़ने लिखने के खेल कुतूहलों और व्यर्थ के वितंडों में मेरा समय कभी नहीं गया है।

उस ने एक सूची बनाई थी जिस में नियमबद्ध काम करने की प्रतिष्ठा उन्हों ने भलो भांति दिखलायी थी।

हम लोग तो अच्छा कार्य अवश्य प्रारम्भ करते हैं परन्तु वह काम जलफेनवत् शीघ्रही विनष्ट हो जाता है। हमारे सामने ही जो लोग नियम से लगातार काम करते हैं वे दौड़ में कछुए की तरह खरहा से भी बढ़ जाते हैं। यह स्पष्ट है कि जिस कार्य के लिए समय नियत कर दिया जाता है वह बहुत शीघ्र समाप्त होता है। इस प्रकार सुगमता से समय बिताने और आलस्य शिथिलता से जीवन व्यतीत करने में कितना बडा अन्तर है। नियमानुसार काम करने से कार्य में सफलता ही नहीं वरन शरीर तथा मन में ऐसी फुर्ती और बल आता है जो और किसी प्रकार प्राप्त नहीं होसकता। साथ ही साथ आचरण सुधार पूर्ण रीति से हो जाता है। अब प्रश्न यह है कि क्यों हम अच्छे कार्यों से अपने स्वभाव के सुधार और धर्म सम्बन्धी कर्त्तव्यों के पूरा करने का यत्न करते हैं? क्या हम इस बात का ध्यान रखते हैं कि प्रति दिन के कामों में हमारे चित्त प्रसन्न रहे? अच्छी पुस्तक पढ़ें, अच्छी संगति करें, बुरी बातों से बचें और अच्छे काम करने का स्वभाव डालें। ऐसा स्वभाव सब से अच्छा है और इसका अभ्यास करना बहुत आवश्यक है, इसका सम्बन्ध जीवन से है जिससे स्वर्ग सुख हो सकता है। क्या कारण है कि बहुत से लोग अप्रसन्न होते ही नहीं सदा वह मन मान रहते हैं। वे अपने चरित्र पर दृष्टि रखते हुए समय को व्यर्थ नहीं खोते। कुछ न कुछ उत्तम कार्य अपने हाथ में ले ही लेते हैं और बिना उसको पूरा किये नहीं छोड़ते। एक श्रेणी के मनुष्य हम लोग हैं कि अच्छे काम को करते रहते हैं पीछे में किसी ने प्रतिष्ठा की तब तो भले ही सम्पादन करेंगे। दैव योग से यदि कहीं निन्दा की बौछार आने लगी तो फिर क्या, छोड़ छाड़ कर, शीघ्र ही पुरानी चाल के सेवक बन जाते हैं। जिसमें कहने करने की योग्यता है वही बड़ा समर्थवान है। कोई कार्य हो, चाहे तन से करे अथवा मन से, जब तक चित्त से विचार युक्त होकर न करेंगे उस का उत्तमता से पूरा होना असम्भव है। हम को सदैव यह ध्यान में रखना चाहिये कि हम परमेश्वर के दास हैं और उस की आज्ञा पालन करना हमारा कर्त्तव्य है। उसकी आज्ञा यह है कि

जो कार्य हम करें उसे शुद्ध चित्त होकर तन, मन से करें और उस का फल परमेश्वर के भरोसे पर छोड़ दें। गीता में कहा है कि वही पंडित है जो निष्काम कार्य्य करता है। काम संकल्प से वर्जित रहने वाले मनुष्य के ज्ञान की निर्मलता और वृद्धि होती है।

यस्य सर्वे समारम्भं काम संकल्प वर्जिता।
ज्ञानाग्नि दग्ध कर्माणं तमाहुः पंडितं बुधाः॥

समय को भली भांति धर्म कार्यों में व्यय करने से पुनर्जन्म में भी सुख मिलता है क्योंकि मनुष्य निज कर्मानुसार सृष्टि के मध्य में लीन रहता है। कहा है।

तनुमधे ईश निदेव तें, राजत जीव प्रवीन।
निज कर्मन अनुसार वह, रहत सृष्टि मधिलीन॥

यह विचार कर प्रत्येक अवस्था में नियमानुसार समय को बुद्धिमानी से बिताना चाहिये। ऐसा करने से प्रति दिन नई २ उन्नति होती रहती है। कहा है।

करिवो काज सनेम अस, हमको उचित सचेत।
जासों उन्नति नित नई, होति रहे सुख केत॥

बीते हुये समय की चिन्ता छोड़ कर उपस्थित और आने वाले समय में उत्तम कार्य करने का दृढ़ विचार लर लेना चाहिये।

ताकी चिन्ता ना करिये, समय गयो जो वीत।
तापर डारिये धूरि बहु, मृतक वस्तु की रीत॥

जिस प्रकार उम्र की वृद्धि होती जाय उसी प्रकार उत्तम गुणों और कार्यों की वृद्धि करनी चाहिये। प्रत्येक समय यह ध्यान रखना चाहिये कि जो काम मैं कर रहा हूं क्या इससे भी अच्छा कोई काम है? यदि प्रतीत हो जाय कि है तो अच्छे ही काम में अहर्निश तन, मन और धन से निमग्न रहना चाहिये। यह हमारा भ्रम है कि उम्र की वृद्धि होती है। वह तो प्रति दिन घटती ही रहती है।

सुबह होती है शाम होती है।
उम्र यों ही तमाम होती है॥

पाठकों से अंतिम निवेदन है। कि

बहुत गई थोड़ी रही नारायण अब अचेत।
काल चिरैया चुग रही निश दिन आयू खेत॥

वैज्ञानिक चुटकले ।

(पण्डित चन्द्रशेखर वाजपेयी लिखित)

"आवो जी घर चलें" इस प्रकार से एक ओर दो बालकों में बात चीत हो रही है। दूसरी ओर स्कूल की घंटी बज रही है। कुछ बालक तो पहले ही से अपनी २ पुस्तकें बांध कर तैयार होगये थे, उनके मुखों पर प्रसन्नता के चिन्ह दिखलाई पड़ते थे और ज्यों ही घण्टी बजी त्यों ही वे बालक अपनी २ पुस्तकें लेकर उछलते कूदते हुए स्कूल के बाहर की ओर भागने लगे, मानों किसी पर्वत की गुफा के अन्दर से टिड्डियों के दल के दल निकल पडे हैं। अभी लगभग दो मास की छुट्टी के पश्चात् स्कूल खुले हैं और स्कूलों में पठन पाठन आरम्भ हो गया है परन्तु स्कूल में लगातार ६ घंटे बैठना छोटे बालकों के लिये दुस्तर प्रतीत होता था क्योंकि इस कठिन कार्य का अभ्यास छूट गया था। अतः यह बालक घण्टी बजने के पूर्व ही से छुट्टी पाने की प्रतीक्षा कर रहे थे। यह बरेली की विशाल नगरी है। यहां पर बहुत से स्कूल हैं। उन्हीं में से सरकारी स्कूल के यह दोनों उपरोक्त बालक छात्र हैं। अभी यह दोनों एक ही साथ किसी नीचे की कक्षा में पढ़ते हैं परन्तु इनकी अवस्था को देख कर इनके अन्दर निरीक्षण करने की तीव्र शक्ति दिखलाई पडती थी। जहां कहीं और जब वह कोई नई बात देखते वे उस को अपनी डायरी (रोज़ नामचा) में नोट कर लेते थे और अपने रक्षक से उस घटना का कारण और रहस्य अवश्य पूछते थे। यह दोनों बालक बात चीत करते हुए अपनी कक्षा के बाहर निकले। वे मन्द गति से अपने गृह की ओर चले इसका कारण यह नहीं था कि वे अन्य बालकों की अपेक्षा सुस्त हैं अथवा उनके अन्दर उत्साह नहीं है किन्तु वे नगर के विशाल गृहों को देखते और नाना प्रकार के दृश्यों का अवलोकन करते हुए और उस पर अपनी २ अनुमति प्रकाशित करते हुए अपने गृह की ओर जा रहे थे। उनको रास्ते में अनेक ऐसी वस्तुयें मिलीं जिनको देखकर उनका चित्त अत्यन्त प्रफुल्लित हुआ। इन दोनों बालकों में अम्बादत्त, गोविन्द की अपेक्षा अधिक चतुर और गम्भीर स्वभाव का था। गोविन्द की दृष्टि में जो वस्तु नवीन और अद्भुत प्रतीत होती थी वह अपने मित्र

४

से उसको कह दिया करता था। वह उसको अपने मन में न रख सकता था।

गोविन्द ने आश्चर्य में आकर कहा—"हे मित्रवर! इस ओर देखना तो यह कौन सी वस्तु सड़क पर बड़ी तेजी से आ रही है। मालूम पडता है लोग इसी को हवा गाडी के नाम से पुकारते हैं। सच्ची बात तो यह है कि यह बड़ी कुशलता और चातुर्य से बनाई गई होगी।

अम्बादत्त—हां। मित्रवर! इसी को हवागाड़ी कहते हैं।

गोविन्द—आश्चर्य तो मुझको यह है कि यह बिना अश्व और बैलों की सहायता से चली जा रही है।

अम्बादत्त—गोविन्द! इसमें सन्देह नहीं है कि हवागाड़ी को चलाने की विधि आश्चर्य जनक है। पाश्चात्य विज्ञान विशारदों ने प्रकृति (nature) को अपने वश में कर लिया है. उन्हों ने पञ्च तत्त्वों की सहायता से अनेक अद्भुत यन्त्रों की रचना की है। यह हवागाड़ी भी [motar car] उनकी वैज्ञानिक उन्नति का एकमात्र उदाहरण है।

यों ही बातें हो रही थीं कि गोविन्द ने सडक से कुछ दूर हट कर जहां खाली जगह पडी हुई थी उस पर भीड देखकर अपने मित्र से कहा "क्यों जी! वहां पर मनुष्यों की भीड़ क्यों लगी हुई है। मैं अनुमान करता हूं कि वहां पर अवश्य कुछ कौतूहल और दृश्य वस्तु की प्रदर्शनी हो रही है। आईये! देखें तो सही क्या होता है।" अम्बादत्त ने उसको ऐसा करने से रोका भी, परन्तु उसने एक भी न मानी। वह उसी स्थान पर पहुंचे और देखा कि एक वृद्ध पहाड़ी जादूगर तमाशा दिखला रहा है, नहीं, नहीं वह स्वयम् ही तमाशा बन रहा था। उसका स्वरुप और डील डौल बडी विचित्र बनी हुई थी जिसको देख कर दुखी और आपत्ति से पीडित मनुष्य का हृदय भी आह्लादित हो जाता था। वह बीच २ में छोटी मोटी वक्तृता भी दे दिया करता था जिस से मनुष्य और भी प्रसन्न हो जाते थे। ताश के बहुत से खेल दिखलाये। बहुत रुपये बना दिये। एक बालक को भूत या प्रेत दिखलाया जिस से वह भयभीत हो गया। बीज से पौधा उत्पन्न किया और फल मनुष्यों को दिखलाये। इन खेलों को हमारे दोनों बालकों ने नहीं देखा था। जब यह दोनों बालक पहुंचे तब

वह बोल रहा था। उसने कहा। " प्यारे भाइयो ! मैंने यह खेल बड़ी मेहनत और परिश्रम से सीखा है। मैं देश देशान्तरों का पर्यटन करता हुआ और बङ्गाल दक्खिन, कारु कमच्छा और अन्य २ स्थान से घूमता हुआ यहां पर आप लोगों के सम्मुख उपस्थित हुआ हूं। मैंने जो खेल और तमाशे दिखलायें हैं वह और कोई नहीं कर सकतां। मेरा अन्तिम खेल जो बाकी रह गया है यह आप लोगों को दिखलाता हूं। देखो ! यहां पर पानी से भरा हुआ एक कटोरा रक्खा हुआ है और यह एक काठ की बनी हुई चिडिया है जिसको मैं पानी के ऊपर रखता हूं। यह तो आप को मालूम ही है कि यह नितान्त निर्जीव है किन्तु मेरे आदेश करने पर यह चलने फिरने लगती है। जब मैं इस को रोटी का टुकडा दिखाऊंगा तब यह कटोरे के एक किनारे से दूसरे किनारे तक चली आयगी। " उस ने रोटी का टुकडा हाथ में लेकर सीटी बजायी और उसके कथनानुसार वह निर्जीव चिडिया उछलने कूदने लगी। सब मनुष्य और विशेष करके अम्बादत्त और गोविन्द अत्यन्त विस्मित हो गये। उन्हों ने यह दृढ़ निश्चय किया कि घर पहुंचते ही हम इस निर्जीव काठ की चिडिया के चलाने के कारण अपने पंडित जी से पूछेंगे। यह पंडित जी उनके संरक्षक थे और उनके पठन पाठन के ऊपर विशेष ध्यान दिया करते थे। पंडित जी ने वैज्ञानिक विद्याओं का अध्ययन किया था जिसमें वे अति कुशल थे। वे प्राकृतिक घटनाओं और दृश्यों के कारणों के अन्वेषण करने में अत्यन्त निपुण थे। गोविन्द बडा हैरान था कि वास्तव में वह जादूगर जादूगर ही हैं। वह इन्द्र जालिक विद्याओं से परिचित है। वह उस मनुष्य को हज़ारों रुपये देने के लिये तय्यार था जो उनको वह खेल करने की तरकीब बतलादे। अम्बादत्त और गोविन्द अपने गृह पहुंचे और अपनी पुस्तकों को टेबिल पर रक्ख कर अपने संरक्षक के कमरे में गये। भाग्यवश पंडित जी किसी पुस्तक का अवलोकन कर रहे थे। इन दोनों ने जाते ही उनको प्रणाम किया और उनके समीप बैठ गये। गोविन्द ने कहा—पंडित जी ! हम लोग आप के समीप कुछ बात
पूछने के लिये आये है। यदि आप आज्ञा करें तो हम आप से प्रार्थना करें।

पण्डित:—कहिये। वह कौन सी बात है जिसके जानने के लिये

तुम इतने उत्सुक हो।

गोविन्द—मैं जानता हूं कि आप को कष्ट तो अवश्य होगा किन्तु यदि मेरा मनोरथ सफल हो जायगा तो मुझ को अकथनीय सन्तोष प्राप्त होगा। आज हम लोगों ने एक जादूगर का एक तमाशा देखा है जिसने प्राकृतिक और सृष्टि के नियमों का उल्लंघन कर डाला है। उसने बहुत से मनुष्यों के सम्मुख एक काठ की चिड़िया को जीवित कर दिया और वह उछलने कूदने लगी। इस घटना का रहस्य जानने के लिये मैं बड़ा उत्सुक हूं।

अम्बादत्त का स्वभाव था कि वह मन में कुछ न कुछ मनन किया ही करता था। उसने इसका कारण कुछ ताड लिया और कहा-पण्डित जी! मैंने सुना है कि एक प्रकार का लोहा या पाषाण होता है जिसमें आकर्षण करने की शक्ति होती है। कदाचित,जादूगर ने अपने खेल को इसी की सहायता से सिद्ध न किया हो।

पण्डितः—हां। अम्बादत्त! तुमने कुछ २ ठीक कहा है। सच तो यह है कि जो विज्ञान से अनभिज्ञ हैं उनको ऐसी बातों को देख कर बहुत आश्चर्य करना पड़ता है। आओ। मैं तुम-लोगों को यही खेल दिखलाता हूं। तुम इसमें और उसमें कुछ भेद नहीं पाओगे।

इतना कह कर पण्डितजी ने अल्मारी से एक लोहे का छोटा सा छड़ निकाला और एक लोहे की सुई भी। लकड़ी के एक छोटे टुकड़े में उस सुई को किसी प्रकार से अन्दर रखदिया। पानी से भरा हुआ एक कटोरा मंगवाया और उस लकड़ी को पानी के ऊपर रख दिया। ऊपर से उस लोहे के टुकड़े को लकड़ी के समीप पण्डित जी लाये। लानेकी देरी न थी कि लकड़ी का टुकड़ा उछलने कूदने लगा। इसको देख कर दोनों कुमारों के चित्त प्रसन्न होगये। उन्हों ने पण्डितजी से पुनः निवेदन किया कि कृपा कर के इस लोहे के छड़ के गुणों को बतलाइये।

पण्डितः-घबराओ नहीं। देखो! मैं तुम को इसके विषय में सब कुछ हाल बतलाता हूं। अब तुम ध्यान पूर्वक देखो कि यह सूइयां सामने रखी हुई हैं। मैं धीरे २ इस चुम्बक पाषाण को उनके समीप ले आऊंगा। किस प्रकारसे और कैसी

शीघ्रता से यह सूइयां चुम्बक पाषाण के ऊपर लिपट गई हैं। यही चुम्बक पाषाण है जिस में लोहे, निकल और ताम्बा धातुओं को आकर्षण करने की शक्ति होती है। जिस लोहे के समीप यह चुम्बक पाषाण रखा जाता है उस में भी आकर्षण शक्ति उत्पन्न होजाती है। एक प्रकार का पाषाण जिसको 'लोडस्टोन' (loadstone) कहते है पहिले पहिल 'एशियामाईनर' के एक प्रान्त में निकाला गया था। इसी के द्वारा लोहे के छड़ में आकर्षण शक्ति उत्पन्न की जाती है। आज कल विद्युत के द्वारा भी चुम्बक लोहा बनाया जाता है। चुम्बक लोहे में एक और विलक्षण गुण है। वह यह है कि यदि चुम्बक लोहे को बीचसे बांध कर लटकादें और वह घूमने में स्वतंत्र रहे तो वह घूम कर सदा एक स्थिति में स्थिर हो जाता है। उसका एक सिरा ध्रुव नक्षत्र अर्थात् उत्तर की ओर रहता है और द्वितीय सिरा दक्षिण की तरफ रहता है। इस चुम्बक पाषाण से मनुष्यों को बड़ा लाभ पहुंचा है। इसी के द्वारा समुद्र पर चलने वाले जहाज़ों के मल्लाहों को दिशा ज्ञात होती हैं। जब तक चुम्बक पाषाण में आकर्षण शक्ति की विद्यमानता योरुप के मनुष्यों को नहीं विदित थी तब तक मल्लाह लोग स्थल के किनारे किनारे अपनी नौकाओं को चलाते थे। इस कारण से व्यापार और वाणिज्य के व्यवसाय वैसे नहीं प्रचलित हो सके जैसे आज कल प्रचलित हैं। यदि वह समुद्र के ऊपर बहुत दूर तक अपने जहाज लेजाने का साहस करते तो उनको देश लौटने में अनेक कष्ट सहन करने पड़ते थे। परन्तु सम्प्रति चाहे पृथिवी के किसी देश और समुद्र में जायें वे इसी चुम्बक पाषाण की सहायता से अपने देश के लौटने में समर्थ होते हैं। वे अपना मार्ग नहीं भूल सकते हैं। कोलम्बस ने इसी की सहायता से अमेरिका ढूंढ निकला था। मैं इस चम्बुक पाषाण को वैज्ञानिक उन्नति का दूत निश्चयात्मिक कह सकता हूं। आज इस ने अपने गुणों से मनुष्य का बड़ा लाभ किया है।

कहा जाता है कि कहीं किसी मन्दिर के पुजारी को चुम्बक लोहे के गुण मालूम होगये, फिर क्या था, भारतवर्ष अविद्या का आखेट तो होही रहा था उसने अपना इन्द्र जाल रचा। एक मन्दिर चुम्बक लोहे का बनवाया और मूर्त्ति भी लोहे की बनवाई। उसको मन्दिर में स्थापित कर दिया। मूर्ति मन्दिर के अन्दर बीचोंबीच खड़ी होगई। न इस ओर जासके न उस ओर। उसने चारों ओर ढिंढोरा पिटवा दिया कि मुझ से अमुक देवता प्रसन्न हैं और वह अपनी अपूर्व शक्ति से बिना किसी आधार के बीचों बीच मन्दिर में खड़ा है जो कोई मुझको इतने रुपये दान देगा उसको मैं इस देवता का दर्शन कराऊंगा इत्यादि। इसी भांति उसने मनुष्यों को खूब ठगा और कोई उसका रहस्य न जान सका। एक समय की बात है कि उसी देवता के दर्शन के लिये एक बज़ाज़ अपने लोहे के गज के सहित मन्दिर में आया। उसने ज्यों ही अपना लोहे का गज रखना चाहा त्यों ही वह जाकर मन्दिर के मध्य भाग में खड़ा हो गया। मनुष्यों को इस घटना से उस पुजारी और देवता की सब कलई खुल गई। अतः चुम्बक पाषाण से मनुष्यों को लाभ भी अगणित पहुंचे हैं और दुष्टों ने स्वार्थ वश होकर उनको ठगा भी है।

इतना सुन कर अम्बादत्त और गोविन्द बहुत प्रसन्न हुये और पण्डितजी को धन्यवाद देकर सानन्द अपने २ स्थान पर चले गये।

पोप और उसके अधिकार।

इटली की राजधानी रोम में रोमन केथोलिक ईसाइयों का गुरु द्वारा है। इन के गुरु को पोप कहते हैं। इस धर्म के अनुयायी मानते हैं कि पोप कभी भूल कर ही नहीं सकता। उसका वाक्य ब्रह्मवाक्य समझा जाता है। २६ करोड़ रोमन केथोलिक उस की आज्ञानुकूल चलते हैं। कारडीनल [पादरियों] द्वारा पोप का निर्वाचन होता है और निर्वाचन तिथि से मृत्यु पर्य्यन्त वह वैटीकन [गुरुद्वारा] को छोड़ नहीं सकता। वर्त्तमान पोप ने एक बार अपने पादरियों को एक विज्ञापन द्वारा सूचित किया था कि वह समाचार पत्रों को न पढ़ा करें क्योंकि उन के पढ़ने से वह धर्म के पथ से च्युत होसकते हैं। विद्या और विज्ञान की वृद्धि पर भी इतना अन्धकार और गुरुडम का २०वीं शताब्दी में भी इतना प्रचार है कि विज्ञान रूपी प्रकाश को रोकने का आज भी प्रयत्न किया जा रहा है। पोप तो जो कुछ चाहें कर सकते हैं क्योंकि उनके अनुयायी उसे निर्भ्रान्त मानते हैं।

मेवाड का उद्धारकर्त्ता ।

[श्रीयुत हरिदास माणिक लिखित]

भारतवर्ष की इस पुण्य भूमि में कई एक ऐसे महान पुरुष हो गये हैं, जिनके चरित्र मात्र से उसके कुटुम्ब ही नहीं वरन समस्त जन समूह लाभ उठाते हैं। संसार में आकर सब को एक न एक दिन अवश्य ही मरना है पर मरना उसी का सार्थक होता है जिसने अपना अमूल्य जीवन परोपकार में लगाया हो। आहा! धन्य है वह पुरुष जो अपना कर्त्तव्य पालन करते२इस असार संसार को त्यागता है। कर्तव्य पालन करना तो प्रत्येक व्यक्ति का धर्मही है पर कितने सज्जनों ने तो अपने कर्त्तव्य के अतिरिक्त अपना शरीर तक अर्पण कर डाला है। सच है संसार में वही मनुष्य हैं, जो पर पीडा से सहानुभूति प्रकट कर स्वयं उसके निवारण का उपाय सोचें। उपाय ही नहीं वरन उसके लिये तन मन धन सभी अर्पण करदें। हमारी भारत भूमि भी ऐसे अमूल्य रत्नों से खाली नहीं है। मेवाड भूमि में ऐसे २ वीर हो गये हैं जिनके कार्य अति प्रशंसनीय हैं। एक समय सम्राट अकबर ने कुपित होकर राना प्रतापसिंह पर बड़े समारोह के साथ चढ़ाई करने की आज्ञा देदी। सलीम और सेनापति मानसिंह के आधिपत्य में मुगली सेना प्रतापसिंह पर टिड्डी दल की न्याँई टूट पड़ी। बिचारे प्रतापसिंह ने कुछ बची खुची सेना ले कर अकबर का समाना किया। अल्पकाल तक बड़ी गहिरी लड़ाई हुई जिसमें राजपूतों की बाईस हजार सेना में से चौदह हजार सेना तो खेत में रही और केवल आठ हजार बाकी बची। यह भयंकर लड़ाई हल्दीघाटी नामी स्थान में हुई थी। इस लड़ाई में प्रतापसिंह मारेही जा चुके थे कि ग्वालियर के मन्नाझाला ने[५००] पांच सौ वीरों के साथ रणस्थल में प्रवेश किया और राना की पगडी छीन कर स्वयं उनकी जगह लड़ने लगा और अन्त में बड़ी वीरता पूर्वक लड़ते २ मारा गया। राना प्रतापसिंह गोघूंदे गांव की ओर भागे पर मार्ग में दो मुगलों ने मारने के लिये पीछा किया। वे पकड़ा ही लेते कि सहसा राना प्रतापसिंह के छोटे भाई शक्तसिंह ने उन दोनों को मार गिराया और अपने प्रिय भ्राता को बचाया। दोनों भाई परस्पर बड़े प्रेम से मिले। जाते समय प्रताप का घोड़ा

चेटक गिर पडा और छटपटाने लगा। शक्तसिंह ने पास वाली नदी से जल लाकर उसके नाकों में दिया पर विचारा चेटक इतना घायल था कि उसका बचना असम्भव था। थोड़ी देर में विचारा चेटक मर गया। शक्तसिंह ने अपना घोडा तो प्रताप को देदिया और आप स्वयं उन दो मरे हुए मुगलों के घोड़ों को लेकर शिवर में चले गये थके मांदे प्रतापसिंह तो गोघून्दे पहुंचे और इधर शक्तसिंह पर दूसरी ही विपद पड़ी। लौटने पर सलीम ने शक्तसिंह से पूछा तुम्हारे दो साथी खुरासानी और मुलतानी कहां हैं? उत्तर में शक्तसिंह ने कहा कि मैंने उनको मार डाला क्योंकि वे मेरे भाई को कि जिनके ऊपर आर्य धर्म का सब बोझ था-मारने वाले थे। इस पर सलीम ने क्रोधित हो शक्तसिंह को निकाल दिया। अन्त में शक्तसिंह अपने भाई से जा मिले।

गोघून्दे के गांव में पहुंचने के बाद प्रताप ने फिर अपने सैनिकों को जुटाया पर वे अकबर की विशाल सेना के आगे मानों समुद्र में नौका के सदृश प्रतीत होते थे। अकबर ने जहां तहां शिक्षित और निपुण सैन्य दल छोड रक्खा था। शहबाज़ खां के आधीन में इस समय कई लाख सेना मेवाड के चारों ओर तबाही कर रही थी। राना प्रताप सिंह ने भी क्षत्रानी का दूध पिया था। वे भी कभी अवसर पाकर मुसलमानी सेना पर टूट पडते थे और फिर पहाड़ों की अगम्य खोह कन्दरावों में जा छिपते थे। इसी प्रकार प्रतापसिंह को लडते २ बीस पचीस वर्ष बीत गये पर जननी जन्म भूमि के उद्धार का कोई उपाय दृष्टिगोचर नहीं हुआ। एक दिन तन छीन मन मलीन होकर मन ही मन में कहने लगे। "पिता ने तो केवल उदयपुर ही दे डाला था पर मैं ऐसा अभागा और कुलकलंकी निकला कि समस्त मेवाड ही मुसलमानों को दे डाला। हाय! मेरे वंशज मुझे क्या कहेंगे। ओफ! क्या भविष्यत में मेवाड के वीर राजपूत यवनों की दासता स्वीकार कर उनके हां में हां मिलाने में अपना गौरव समझेंगे। हा! प्रताप सिंह यह कथन क्या तेरे ही हिस्से पडेगा कि प्रताप सिंह ने रघुकुल की स्वतन्त्रता यवनों के हाथ वेच डाली। अहा! जब हमारी मेवाडी प्रजा एक मुट्ठी दाने के लिये यवनों के आगे हाथ पसारेगी तो उसे हमारे ही वंशधर क्या अपनी आंखों से देख सकेंगे।" इतना कहकर प्रतापसिंह फिर मौन व्रत

धारण कर कुछ सोचने लगे। फिर पागलों की न्याईं म्यान से तलवार खींचकर कहने लगे, "नहीं नहीं, बाप्पारावल के वंशधर प्रताप के राजत्व काल में कभी भी यवनों की दासता स्वीकार नहीं करेंगे। वे अपने बच्चों को कट जाने देंगे पर देश के लिये "मत मरो" ऐसा हीन शब्द कभी भी उच्चारण नहीं करेंगे। वे भूखों मर जायेंगे पर यवनों से रोटी कभी भी नहीं मांगेंगे। इसी प्रकार की बात सोचते २ प्रतापसिंह को पूरे पच्चीस वर्ष जंगलों ही में टकराते बीत गये पर वे मेवाड़ का उद्धार नँ कर सके। आज यहां खाया तो कल चार कोस दूर जाकर चट्टानों पर बैठकर रोटी बनाई। रोटी कैसी कभी २ रोटी बनाते ही बनाते यवन "अल्ली अली" कह कर आक्रमण करते थे। विचारे प्रतापसिंह अपने निस्सहाय बालकों को कन्द्रावों में छिपा वा स्वामी भक्त भीलों के हस्तागत कर आप स्वयं दो चार बचे सरदारों को लेकर यवनों का सामना करते थे। कभी तो सैकड़ों को मार गिराते थे और कभी आप भी स्वयं घायल होकर खोह या कन्द्रावों में छिप अपना प्राण बचाते थे। यवनों के चले जाने के उपरान्त वे विश्वासी भीलों को बुलाकर बन से जड़ी बूटी मंगा कर अपने घावों की दवा करते। काम आये सरदारों की दाह क्रिया भीलों ही द्वारा करवा देते पर आप स्वयं परिवार सहित कन्द्रावों में छिपे रह कर प्राण रक्षा करते थे।

एक समय का वर्णन है कि—"सन्ध्या समय जब सूर्य भगवान पश्चिम दिशा में रक्त वर्ण धारण कर डूब रहे थे कि सहसा प्रतापसिंह की दृष्टि उस पर जापड़ी। उन्हों ने रोकर कहा-"हे सूर्य्य देव! आज तुम भी इस अभागे पर रक्त वर्ण होकर क्यों क्रोधित हो रहे हो, अरे। राज छूटा, धन छूटा, प्रजा छूटी, अभागा परिवार और सब सरदार गण भी छूट गये, पर अब भी हम देखते हैं कि तुम्हारा क्रोध नहीं छूटा। अरे! भला अब भी तो इस निर्धन और भिखमंगे प्रताप पर दया करो। प्रभो! अब बहुत हुई, अब नहीं सहा जाता। प्रातःकाल देखते थे कि तुम मेरे पर प्रसन्न रहे पर अब इस समय आप का विकट रूप देखकर मुझे भय मालूम पड़ता है, प्रभो! मैंने कौन से ऐसे पाप किंये हैं जो आप भी क्रोधित मालूम पड़ते हैं। जाना जाता है अपने कुल को कलंकित होते देख कर ही तुम हमारे ऊपर क्रोधित हो रहे हो। पर यह प्रताप क्या

५

करे, अरे ! इसके पास न धन है, न धाम है, न पास में कुछ सेना ही है। सच्चे सरदारों ने भी मेरा साथ छोड़ दिया, फिर प्रभो ! मैं अकेले क्या करूं। देव ! मेरी तो यह प्रतिज्ञा है कि "जब लौं नहिं गढ़ ढाहि करि, दासिन कौड़ी बेच ॥ तब लौं नाहिं सिर पर धरौं, सेज न पगिया पेच।" इस प्रतिज्ञा का पालन मैं अपने जीवन पर्यन्त करूंगा पर मैं अपने वंशधरों को नहीं जानता।" इतना कहते २ प्रतापसिंह रोने लगे। उन्होंने कहा-"तो क्या यह देश यवनों ही के हाथ में रहेगा ? क्या हमारी मातृभूमि हमारे हाथ न आवेगी ? अरे ! प्रताप तुझे तेरी जननी के दूध की सौगंध है जो कभी भी इन म्लेच्छों के हाथ में अपनी भूमि रहने दी। यदि तूने अपनी भूमि इनके हाथ से न लौटाली तो जान रखना कि तेरी कलंक कालिमा कभी भी भारत के इतिहास से न मिटेगी।" यह कह कर प्रतापसिंह छल छल आंखों से अश्रुधारा प्रवाहित करने लगे। पास ही पेड़ की ओट से राना का कुटुम्ब और सरदार सब ही इस दृश्य को देख रहे थे। एक सरदार ने कहा, दीनानाथ! भला यह सब दुःख आप क्यों उठा रहे हैं। अरे ! जब आपके देश भाइयों ही को अपने देश की चिन्ता नहीं है तब भला आप क्यों प्राण दिये देते हैं।" इस पर प्रताप ने कहा "बीर सरदार ! तुम्हारा कहना ठीक है पर वीर क्षत्रिय माता के ऋण से उऋण होने ही में अपना गौरव समझते हैं। अरे ! जिस भूमि में पला, जिसके अन्न दूध से यह भीमकाय शरीर हुआ यदि उसी के लिये हम कुछ न करें तो धिक्कार है मेरे जीवन को जो मैं अपनी आंखों से चित्तौड़ पर विदेशियों की ध्वजा फहराती हुई देखता हूं। अहा ! जब मैं अपने पूर्व पुरुषों के अतुल पराक्रम पर ध्यान देता हूं तो मेरा कलेजा टुकड़े २ हो जाता है। एक समय था जब अर्जुन ने उत्तर दिशा और भीम ने पूर्व दिशा तथा नकुल और सहदेव ने दक्षिण और पश्चिम को विजय कर अपने बड़े भाई युधिष्ठिर को सम्राट बनाया था। वह समय हम लोगों का कहां गया।" इतना कह कर प्रतापसिंह रुदन करने लगे।

सब सरदार गण चुपचाप प्रतापसिंह के इस विलाप को देख रहे थे। रानी ने रोकर कहा "प्राणनाथ ! अब इस भारतवर्ष की मोह माया छोड़िये, मेरी यह राय है कि सिन्ध वा अफगानिस्तान

की ओर चल कर एक दूसरा राज्य स्थापित किया जाय, वहीं पर यदि अपना गौरव बच सके तो अच्छी बात है नहीं तो मेवाड़ ही के उद्धार में प्राण विसर्जन करिये जिससे मैं भी लड़ते २ मारी जाऊं वा आप के साथ सती होऊं। " इस पर सरदारों ने कहा- "माई जी! जब तक हम लोग हैं तब तक आपका बाल भी बेंका नहीं हो सकता आगे दैव जाने।" प्रतापसिंह ने कहा, "दैव के भरोसे तो सारा संसार है पर दैव के भरोसे रह कर हमने कार्य करना नहीं सीखा है। राज महिषी ने अच्छा उपाय सूझाया है कि एक दूसरा राज्य स्थापित किया जाय। सरदारो! इसमें आपकी क्या राय है।" सरदारों ने कहा " धर्मावतार! हम लोगों की भी यही इच्छा है, क्योंकि अब मेवाड़ उद्धार का उपाय दृष्टिगोचर नहीं पड़ता। प्रताप ने कहा-" यह ठीक है पर वीरवरो! यह भूमि भी तो छोड़ी नहीं जाती। अहा! जिस मातृभूमि ने मुझे इतना बड़ा किया, अनेक प्रकार के सुख दिये पर हाय! मैं ने इसके लिये कुछ न किया। संसार तो स्वार्थी है पर यह तो ऐसी शुभ चिन्तक है कि मरने के बाद भी वह मोह माया में पड़ कर हमारे शरीर को धूली की अवस्था में भी चूमती और अपनी गोद में रखती है। सरदारों ने कहा दीनानाथ! अब सब मोह ममता को छोड़िये! यदि समय फिर फिरा तो पुनः आक्रमण कर अपनी जननी जन्मभूमि ले लेंगे" इतना वार्तालाप करते २ सन्ध्या हो गई। धीरे२ निशा का पूरा अधिकार छा गया। वन में चारों ओर बनचर शोर मचाने लगे, पर प्रतापसिंह निमग्न हो किसी गूढ़ विषय पर विचार कर रहे हैं। अमरसिंह ने कहा "माता जी! आज आखिरी दिवस है इस कारण आज तो लिट्टी बनालो। रानी ने उत्तर दिया-"पुत्र! सब सरदार मिला पचीस तीस जन हैं और तीन चार सेर मीना घास का आटा है फिर कैसे पूरा पड़ैगा। प्रताप ने चिल्ला कर कहा-"राज महिषी धूल मिला कर आज काम चलाओ कल फिर देखा जायगा। रानी ने ईंधन जुटा कर आग जलाई और थोड़ा धूल मिला कर रोटी तैय्यार की। थोड़ी देर में रोटी तैय्यार हुई। सब सरदार आप खाने बैठे। प्रताप भी हाथ मुंह धोकर बुलाये गये। सरदारों ने कहा-' अन्न दाता! आज आखिरी दूना (प्रसाद) हम लोगों को मिले कल का दैव है। इस पर प्रताप ने पहिले रोटी खाई फिर सरदार गण भी

खाने लगे। प्रताप ने कहा–"सरदारो ! आज की रोटी मुझे अति प्रिय मालूम पड़ती है क्योंकि आज आखिरी भोजन अपनी ही जननी जन्म भूमि के ऊपर है। कल का ठीक नहीं कि कहां चलकर भोजन करेंगे। प्यारे सरदारो, मेवाड़ में हमारी यह आखीरी रात है कल प्रातः काल होते ही अपनी प्यारी जन्म भूमि से विदाई लेनी पड़ेगी। अहा ! इस अभागे प्रताप ही के भाग में लिखा था कि प्रताप सिंह वाप्पारावल की ध्वजा जो पहिले मेवाड में फहराती थी गिराकर विदेश को चला गया।

सरदारों नें कहा धर्मावतार ! कोई यह तो नहीं कहेगा कि प्राण दण्ड के भय से मुसलमानों को अपनी बेटी दी। मान सहित हम दूसरे देश को चले जाते हैं कल अवसर पाकर फिर लौट आयेंगे इसी प्रकार वार्तालाप करते २ खा पी चुकने के उपरान्त रात्रि व्यतीत हुई। दूसरे दिन प्रातः काल होते ही प्रतापसिंह अपने परिवार तथा अपने सेवकों सहित अरावली पर्वत पर चढ गये और रोकर कहा–" हे मेवाड ! तुम्हें मेरा अन्तिम नमस्कार है। अहा ! जिस भूमि में हमारे पूर्वजों ने रक्त बहा कर इसकी प्रतिष्ठा रक्खी थी, उसके लिये अधम प्रताप ने कुछ भी न किया। हे मेवाड़ के पशु पक्षियो और नदी नालो ! आज तुम भी मेरी इस दशा पर मानों घृणा कर रहे हो कि मैंने तुम्हारे लिये कुछ न किया। हा रे चित्तौड़! मेरे बाद तेरी क्या दशा होगी। चलो मेरे प्यारे सरदारो, चलो, अब इस देश की मोह माया छोड़ो।" यह कह कर प्रतापसिंह तथा उनके साथी गण छल छल करके अश्रुधारा प्रवाहित करने लगे। "जननी जन्म भूमि से महाराणा प्रतापसिंह की बिदाई नामी कविता में यह दृश्य बड़ा ही विचित्र दिया है जो इस प्रकार है। प्रतापसिंह ने रुदन कर कहा :

इक्ष्वाकु सौं आजु लौं, रह्यो तरनि-कुल मान।
परवाहू अब चलि बस्यो, रहते पामर प्रान॥
राज गयो अरु धन गयो, गयो सबै विनसाय।
हाय मानहू चलि बस्यो, नीच प्रताप विहाय।
जन्म भूमी मेवाड़ मम, करौ क्षमा सब चूक॥
छाड़त तोको होत है, हृदय हजारो टूक।

ऋण चुकाय नहिं जात यह, हाय ! अधम परताप ॥
पै माता तव कारने, लह्यो अधिक सन्ताप ।
मान हीन जीवन वृथा, अस मन माहिं विचार ।
तोहि तजत हे मातु वर, संकट समय मंझार ॥
जो हठ रक्खे धर्म कर, तेहिं रक्खै करतार ।
मातु शक्ति भर राखि लियो, आपुन वीर विचार ॥
वीर प्रसविनी भूमी मैं, अन्तिम करत प्रनाम ।
हा न कियो परताप यह काम कछुक अभिराम ॥
भारी स्वर्गहु से रही जन्म भूमि मेवार
हाय ताहि परताप यह, तजत लजत सत वार ॥
हे वन के सब वृच्छ गन, छमियो चूक हमार ।
यदि काटे परताप हौं, लेकर तेज कुठार ॥
निसि वासर काटत रह्यो, परम मित्र पहिचान ।
याते मांगत हौं छमा, करि करि मन महँ ध्यान ।
हल्दी घाटी मित्र वर, कियो अनर्थ महान ।
शोणित-नद उपजाय करि, हाय कियो अपमान ॥
यदि पामर परताप पर, होवे क्रोध विशेष ।
हाय मित्र नहीं राखियो, अपराधहु कर लेस ॥
हे भारत हौं जात हौं, तोसों नाता तोड़ ।
मम समान नहि तोर सुत, गयो न अस मुख मोड़ ।
विधिनां को कछु नहिं रुच्यो रह्यो न दुःख अपार ॥
हाय ! महा दुख होत अब, तजत भूमि मेवार ।
हे मेवार चिरकाल हित, तजत प्रताप गंवार ॥
विनती केवल है यही, छमियो चूक हमार ॥
जन्म भूमि भारत सरिस, रह्यो न मेरो कोय ।
ताहि तजत परताप अब, हा निर्मोही होय ॥

यदि भारत तव गोद में, तजत्यों अधम शरीर।
खेत-खाद-अरु धूलि मह, होत प्रताप अधीर॥
एहि असार संसार में, याते नहिं लघु काज।
ताहि अधम परताप यह, कियो न खोकर राज॥
सूर्य देव परताप कर, रहना साखी सांच।
क्योंकि कथन प्राचीन यह, सांचहि लगै न आंच।
हे भारत तेरे लिये, सहिहौं दुख अनेक॥
कबहूं शत्रुन नासिकै, पूरिहौं आपन टेक।

इसी प्रकार प्रतापसिंह ने चाण एक रुदन किया फिर अपने परिवार और सरदारों के साथ २ पहाड़ पर से उतरे। चलते २ वे चितौड और पर्वतमालाओं की ओर देखते जाते थे। उनकी आंखों से निरन्तर अश्रुधारा प्रवाहित हो रही थी। प्रताप ने फिर चिल्लाकर कहा—"मेवाड भूमि! मेरा अन्तिम प्रणाम स्वीकार करना! हाय! इस अधम परताप ने तेरे लिये क्या किया। तुझे तो गंवाही दिया पर साथ ही उसने वाप्पारावल का यश भी धूलि में मिला दिया। हा! वह विजय पताका जो एक दिन नील नभ में फहरा रही थी आज से चिरकाल के लिये उतर गई।" सरदारों ने कहा- "अन्नदाता जी! अब इस रोना रोने से क्या लाभ है, चलिये अब अपने मातृभूमि की मोह माया छोड़िये।" प्रताप ने उत्तर दिया "अरे अब क्या मोह माया बाकी रही। मोह माया तो उसी दिन चली गई जिस दिन दिल्लीश्वर की पताका चित्तौर पर गड़ी थी।" इसी प्रकार प्रताप और उनके सरदारों ने बहुत विलाप किया। इसका दृश्य स्वर्गवासी राधा कृष्णदास ने अपने प्रताप नाटक में इस प्रकार दिया है।

[स्थान—मेवाड़ का सीमा प्रान्त]

(आगे २ घोड़े पर सवार राणा प्रताप सिंह, पीछे २ घोड़े पर कुछ सरदार लोग)

राणा—मेरे विपत्ति के सहायक भाइयो, मेरे साथ तुम लोगों ने बड़े दुख उठाये और अन्त में अब यह दिन आया कि

मुझ भाग्यहीन के साथ तुम्हें भी अपनी प्यारी जन्मभूमि को छोड़ना पड़ा। अहा ! सच है।

"जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी"

एक सर्दार—अन्नदाता ! यह आप के कहने की बात है ! क्या आप अपने लिये यह कष्ट उठा रहे हैं ? जिस जन्म भूमि की रक्षा में आप इतने दुख सह रहे ह वह क्या हमारा कर्त्तव्य नहीं है।

राणा—पर भाई इस अधम प्रताप के किए जन्मभूमि की रक्षा भी तो नहीं हुई, अब तो जन्म भूमि को भी शत्रुओं के हाथ में छोड़ कर अज्ञात वास करने चले हैं।

सर्दार—क्या हुआ पृथ्वी नाथ ! कोई यह तो नहीं कहेगा कि राणा प्रताप सिंह ने सुख की चाह में अपनी जननी जन्मभूमि को यवनों के हाथ बेचा परमेश्वर की लीला कौन जानता है. क्या आश्चर्य है कि फिर ऐसा समय आवे जब श्रीमान अपने देश को शत्रुओं से लौटा सकें, धर्मावतार ! इस समय कलंकित पैर से तो इस राज सिंहासन पर न चढ़ेंगे।

राणा—इसमें तो संदेह नहीं, और फिर अपनी आंखों से अपने देश की यह दुर्दशा देखते हुए जीते रहने से तो अनजाने विदेश में मरना ही अच्छा है। क्योंकि

मरना भलो विदेश में, जहां न अपुनो कोय।
माटी खांय जनावरां, महा महोच्छव होय।

एक सर्दार-ठीक है–

दुर दिन पड़े रहीम कहि दुर थल जैये भाग।
जैसे जैयत घूर पर, जब घर लगत आग।

राणा—सच है अच्छा चलो ! भाइयो चलो। अब इस स्थान की मोह माया छोड़ो (आंखों में आंसू भर कर)

जेहि रक्ष्यो इक्ष्वकु सौं, अबलौं रविकुल राज।
हाय अधम परताप तू तजत ताहि है आज।
तजत ताहि है आज प्राण सम प्यारी जोही॥
हे मेवार सुख सार कृपा करि छमियो मोही।

रह्यो सदा करि भार काज आयो तुम्हरे केहि॥
विदा दीजिये हमैं भार हालकाय आजु जेहि।

(सब लोग सजल नैन वेर वेर पीछे की ओर देखते २ घोड़ा बढ़ाते हैं और दूर से घोड़ा दौड़ाते हाथ उठाकर इन लोगों को रोकते हुए भामा शाह दिखाई पड़ते हैं)

भामाशा—श्री मिवार के मुकुट! श्री हिन्दू नाम के आश्रय दाता! तनिक ठहरो, इस दास की एक विनती सुनते जावो। भामाशा को अकेल छोड़ कर मत जावो।

राणा—(घोडा रोक कर) भामाशा ऐसे घबराये हुए क्यों आ रह हैं ?

(भामाशा पास आ जाते हैं और घोड़े से कूद कर राणा के पैरों पर रोते हुए गिरते हैं, राणा घोड़े से उतर कर भामाशा को छाती से लगाते हैं. दोनों खूब रोते हैं)

राणा—मंत्रिवर ! तुम ऐसे धीर वीर होकर अधीर हो रहे हो?

भामाशा—प्रभो, मेरे अधैर्य का कारण पूछते हो ?

धिक सेवक जो स्वामी काज तजि जीवन धारै।
धिक जीवन जो जीवन हित जिय नाहिं विचारै।
धिक शरीर जो निज कर्त्तव्य विमुख है वंचै।
धिक धन जो तजि स्वामि काज स्वारथ हित संचै।
धिक देश शत्रु किरतघ्न यह भामा जीवत नहिं लजत
जेहि अछत वीर परताप वर असहायक देसहिं तजत

राणा—परन्तु इसमें तुम्हारा क्या दोष है ? तुमने तो अपने भरसक कोई बात उठा नहीं रक्खी।

भामाशा—अन्नदाता ! यह आप क्या कहते हैं ? परम स्वार्थी भामाशा ने आप के लिये क्या किया ? अरे, आपके अन्न से पला हुआ यह शरीर सुख से कालक्षेप करे और आप बन बन की लकड़ी चुनैं, और पहाड़ पहाड़ टकराँय। प्रतापसिंह स्वाधीनता रक्षार्थ, आर्य भूमि अकलंकित करणार्थ देशत्यागी हो, भामाशा अपनी जन्म भूमि के निवास का स्वर्गोपम सुख भोगे जिस राणा के जूतियों के कारण भामाशा भामाशा बना

है, वही राणा पैसे २ को मुहताज हो, सहायता हीन होने के कारण निज देशोद्धार में असमर्थ हो, प्राणोपम जन्मभूमि को छोड़ मरुभूमि की शरण ले और भामाशा धनी मानी बन कर ऐसे उपकारी स्वामी की सेवा छोड़ कर विदेशीय, विजातीय, आर्य धर्म को कलंकित करने वाले राजा की प्रजा बन कर सुख पूर्वक कालयापन करै । धिक्कार है ऐसे धन पर धिक्कार है ऐसे सुख पर, धिक्कार है ऐसे जीवन पर।

राणा—पर भामाशा ! इसको तुम क्या करोगे। जो भाग्य में होता है वही होता है । अब तुम क्या चाहते हो ?

भामाशा—धर्मावतार ! आज मेरी एक विन्ती स्वीकार हो । यही मेरी अन्तिम विन्ती है ।

राणा—क्या प्रतापसिंह ने कभी तुम्हारी बात टाली है ?

भामाशा—तो अन्न दाता ! एक बेर फिर मेवार की ओर घोड़ों की बाग डोर मोड़ी जाय इस दास के पास जो पच्चीसों लाख रुपये की सम्पति दर्बार की दी हुई है उसीं से फिर एक बेर सेना एकत्रित की जाय । जो इसमें कृतकार्य हुए तौ तो ठीक ही है और नहीं तो फिर जहां स्वामी वहीं सेवक, जहां राजा वहीं प्रजा । (राणा सरदारों की ओर देखते हैं)

भामाशा-आप इधर उधर क्या देखते हैं, अरे! यह धन क्या मेरा या मेरे बाप का है, यह भी इन्हीं के चरणों के प्रताप से है। मैं तो अगोरदार था अब तक अगोर दिया, अब धनी जाने और उसका धन जाने ।

कविराजा-धन्य ! मंत्रिवर धन्य ! यह तुम्हारा ही काम था ।

जेहि धनहित संसार बन्यो बौरो सो डोलै ।
जेहि हित बेचत लोग धर्म अपुनों अनमोलै ॥
जो अनर्थ को मूल सूल हिय में उपजावै ।
पिता पुत्र, पति पत्नि, अनुज सौ अनुज छोड़ावै॥
सो सात पुरुष संचित धनहिं तृणसमान तुम तजत हो।
धन स्वामि भक्त मंत्री प्रवर ताहू पै तुम तजत हो॥

[बहुत से राजपूतों और भीलों का कोलाहल करते हुए प्रवेश]

सब—महाराज ! हम लोगों को छोड़ कर आप कहां जा रहे हैं,

चलिये ! एक बेर और लौट चलिये, जब हम सब कट मरें तब आपका जिधर जी चाहे पधारें।

राणा—जो आप लोगों की यही इच्छा है तो और चाहिये क्या!

चलो चलो, सब वीर आजु मेवार उबारैं।
अहो आजु या पुण्य भूमि ते शत्रु निकारैं॥
चिर स्वतंत्र यह भूमि यवन कर सों उद्धारैं।
रविकुल नामहिं थापि धर्म अरिगनहिं पछारैं॥
नभ भेदि आजु मेवार पै उड़ै सिसोदिया कुलध्वजा
जा सितल छाया के तरे रहै सदा सुख सों प्रजा॥

[चारों ओर से " महाराणा की जय " का शब्द होता है और सब एक ओर जाते हैं]।

इस प्रकार भामाशा से सहायता पाकर राना ने भाग्यवश पुनः अपनी जननी जन्मभूमि को पाया। प्रतापसिंह ने राजपूत और भीलों को जुटा कर यवनों पर आक्रमण किया। इस बार प्रताप जहां जाते वहीं विजयी होते थे। इस विषय में-आगे चल कर प्रताप ने क्या किया और किस प्रकार विजयी हुए—चारण रामनाथ रत्नू के राजस्थान नामी इतिहास का विवरण देता हूं। "अन्त में जब समस्त मेवाड़ बादशाही सेना के हस्तगत हो गई और प्रतापसिंह को पहाड़ियों में रहना भी कठिन होगया, तब भी उन्हों ने और राजाओं की नाईं बादशाही आधीनी स्वीकार न की। परन्तु अपने भाई, बेटों को साथ लेकर राजस्थान को छोड़ सिन्ध अथवा बिलोचिस्तान में राज्य पाने के विचार से पश्चिम को प्रस्थान किया। इस बिचार से कि ऐसा करने से मेरे और दिल्ली के राज्य के बीच में सिन्ध की उजाड़ें रह जायेगी, जिनमें होकर दिल्ली की सेना को पहुंचना कठिन होगा प्रातापसिंह के इस विचार को जान कर लोगों को उनके साहस का अनुमान हो जायगा और उनकी बीरता का इस घात से कि उनके जाने के समय बादशाही सेना ने पकड़ने वा रोकने आदि का कोई उद्योग न किया। उनके चले जानें पर सुख पूर्वक मेवाड़ का राज्य करने के बिचार से सब सेनापति निश्चिन्त हो बैठा। परन्तु परमेश्वर को यह बात स्वकार न थी कि मेवाड़ में से सिसोदियों का राज्य नष्ट

होजाय। जब प्रतापसिंह सिन्ध की उजाड़ों की सीमा पर पहुंचे तो वहां एक गांव में रहने वाला भामाशाह नामी महाजन ने जिसके पुरुषा पाहिले किसी समय में चित्तौड़ के प्रधान मंत्री रह चुके थे प्रतापसिंह को गोठ देकर अपने पुरुषावों का उपार्जित समस्त द्रव्य जो भूमि में गड़ा था यों कह के भेंट कर दिया कि यह द्रव्य महाराज का ही है और महाराज के काम में ही लगे तो उचित है मुझको इतने द्रव्य की कोई अवश्यकता नहीं। कर्नेल टाड साहेब लिखते हैं—वह द्रव्य इतना था कि कुछ और मिलने से प्रतापसिंह उसके द्वारा पचीस सहस्र मनुष्यों को बारह वर्ष तक रख सकते थे। धन्य है उस महाजन को, उसका नाम सदा के लिये राजस्थान में बना रहेगा। इस द्रव्य के मिलते ही प्रतापसिंह ने झटपट बहुत सी सेना भरती करके बादशाही सेनापति शहबाज़ खां को—जो असावधानी के साथ सुख भर नींद लेता था आ दबाया और समस्त सेना को मार काट कर आमेट ले लिया और मुसलमानों के चेतने से पहले २ कुम्भलमेर के गढ़ को जा दबाया जहां अब्दुल्लह दुर्गाध्यक्ष अपनी समस्त सेना सहित बड़ी वीरता से लड कर काम आया। इसके पीछे थोड़ेही दिनों में प्रतापसिंहजी ने बत्तीस गढ़ मुसलमानों से और खाली कराये। गढ़ की समस्त सेना मारी गई। यद्यपि मुसलमानों ने बड़ी वीरता के साथ प्रतापसिंह जी का सामना किया तथापि चित्तौड़ और मांडल गढ़ को छोड कर सम्बत १६४३ में ज्यों का त्यों होगया। बादशाह अकबर को इस समाचार के सुनने से बहुत ही क्लेश हुआ। इस से मेवाड़ के जीतने की आशा छोड़ दी। कई लोग ऐसा भी कहते हैं कि उन दिनों में अकबर को दक्षिण की लडाइयों का विशेष ध्यान था और कई कहते हैं कि उसको प्रतापसिंह पर दया आगई, परन्तु हम यहां पर इतनाही कहेंगे कि यदि दयाही आगई थी तब तो चित्तौड़ भी लौटा देना चाहिये था। रही दक्षिण की लडाइयों का ध्यान सो ठीकही है, परन्तु अकबर जैसे प्रबल और दूरदर्शी बादशाह प्रतापसिंह जी के हाथ अपने मुख्य २ सेनापति और सहस्रों मनुष्यों के मारे जाने का समाचार सुन कर कैसे चुप रह सकता था। परन्तु यह वही बात है कि—

" रहै प्रजा धन यत्न सों, जहँ बाँकी तरवार।

सो फल कोऊ नले सकै, जहां कटीलीडार ॥"

फिर से मेवाड़ हाथ लगने पर प्रतापसिंह ने अपने सब सरदार और भाई बेटों को नई २ जागीरें और जीविकायें दीं। भामाशाह को सब से ऊंची पदवी मिली और उनके वंशधर चिरकाल के लिये मंत्रित्व पद पर नियुक्त किये गये।

भामाशाह के सराहनीय कार्य पर प्रतापसिंह ने स्वयं भरी सभा में मुक्तकण्ठ से कहा था कि भामाशाह यदि सहायता न करते तो यह प्रताप, सिन्ध के मरु देश में मिट गया होता। इस कारण मेरे प्यारे सरदारों आज से भामाशाह के वंशज "मेवार के उद्धार कर्ता" कहावेंगे। राना प्रताप ने भामासाह की बड़ी प्रशंसा की थी। केवल भामाशाह की ही नहीं वरन उन लोगों की भी प्रशंसा की जिन्होंने तृणवत् अपना शरीर जननी जन्मभूमि के लिये विसर्जन किया। "प्रताप नाटक" में प्रतापसिंह ने जिस समय विजय कर दरबार किया है उसमें गत वीरों का विवरण इस प्रकार है। मेरे भाइयो ! आज जगदीश्वर की कृपा से, और तुम लोगों के उद्योग से यह दिन देखने में आया कि इस पवित्र स्थान से आर्य-शत्रुओं का पौरा गया और फिर आज हम लोगों ने अपनी प्यारी जननी जन्म भूमि का दर्शन पाया। जिस स्वाधीनता रक्षार्थ हम लोगों के अगणित पूर्व पुरुषों ने अंकुठित हो संग्राम स्थल में परम प्रिय जीवन विसर्जन किया था, आज जगदीश्वर की कृपा से वह हमें प्राप्त हुई, भला इससे बढ़ कर भी कोई आनन्द की बात हो सकती है। प्यारे भाइयो बस हमारा यही उपदेश है कि संसार में जीना तो अपने गौरव सहित जीना, मरना तो है ही है। आहा ! महा बाहुअर्जुन का कैसा आदरणीय और अनुकरणीय सिद्धान्त था।

आयु रक्षति मर्माणि आयुरन्नं प्रयच्छति।
अर्जुनस्य प्रतिज्ञे द्वे न दैन्यं न पलायनम् ॥

इस पर कविराजा ने कुछ प्रशंसा की जिस पर प्रताप ने उत्तर दिया-" कविराजाजी आप मुझे व्यर्थ की बड़ाई देतें हैं, मैं तो निमित्त मात्र था। जो ये सब राजपूत और भील सरदारगण सहायता न करते तो मैं अकेला क्या कर सकता था। अहा और मुझे झाला मानसिंह ने तृणवत् अपना शरीर दे दिया और

बचाया। महाराज खांडेराव राजा राजसिंह ऐसे वीर पुरुषों ने मेरे लिये क्या क्या न किया। हाय! मैं अब इनके लिये क्या कर सकता हूं। बड़े कविराजाजी ने अपने देश की जैसी सेवा की और जिस भांति प्राण दिया सो कौन नहीं जानता। जब तक पृथ्वी रहेगी इन लोगों का यश स्वर्णाक्षरों में मेवार के इतिहास में अंकित रहेगा। प्यारे चेतक ने पशु होकर मेरा जैसा उपकार किया, उस से मैं कभी उऋण नहीं हो सकता। मंत्रिवर! जहां चेतक का शरीर गिरा है एक उत्तम समाधी बनवाई जाय और प्रतिवर्ष उसके सम्मानार्थ वहां मेला लगा करें। मैं स्वयं वहां चला करुंगा। (कविराजा)जी आप एक परवाना लिखिये कि जब तक मेरे और भामाशाह के वंश में कोई रहे, मंत्री का पद उसी को दिया जाय। मैं इन्हें प्रथम श्रेणी के सरदारों मे स्थान देकर झाटक की ताजीम, पैर में सोने का लंगर, पाग पर मांझा आदि यावत प्रतिष्ठा देता हूं जो इनकी सेवा के आगे सर्वथा तुच्छ है। तदुपरान्त प्रताप ने अमरसिंह से कहा देखो कुंवरजी! अपने धर्म और देश रक्षार्थ जो जो कष्ट सहे हैं तुमने अपनी आंखों देखा है। देखो! ऐसा न हो कि तुम हमारे पीछे विलास प्रियता में पड़ अपने पिता का नाम डुबावो, प्रताप की कीर्ति पर धब्बा लगावो और मरने पर मेरी आत्मा को सतावो। मेरे इन वाक्यों को सदा स्मरण रखना–

जब लौं जग में मान, तबहिं लौं प्रान धारिये।
जबलौं तनमें प्रान न तब लौं धर्म छोड़िये॥
जब लौं राखे धर्म तबहिं लौं कीरति पावै।
जब लौं कीरति लहैं जन्म स्वारथ कहलावै॥
हे वत्स सदा निज वंश की मरजादा निरवाहियो।
या तुच्छ जगत सुख कारनें, जनिकुल नाम हँसाइयो

इस पर कुमार अमर ने सिर झुकाकर मानों पिता के उपदेश को ग्रहण किया। फिर प्रताप ने कहा-सरदारों! मेरा यही उपदेश है कि "जब लौं तन में प्रान, मान जान जनि दीजिहै।" सरदारों ने मस्तक नवा कर उत्तर दिया अन्नदाताजी! ऐसा ही होगा-"साथ ही भाट ने अवसर पाकर कहा–

यह दिन सब दिन अचल रहै।
सदा मिवार स्वतंत्र विराजै निज गौरवहिं गहै।
घर घर प्रेम एकता राजै कलह कलेस बहै।
बल पौरुष उत्साह सुदृढ़ता आरज वंश चहै॥
वीर प्रसविनी वीर भूमि यह, वीरहिं प्रसव करैं।
इनके वीर क्रोध में परि अरि कायर क्रूर जरैं॥
राजा निज मरजाद न टारै, प्रजा न भक्ति तजै।
परम पवित्र सुखद यह शासन सब दिन यहां सजै।
जबलौं अचल सुमेरु विराजत, जबलौं सिंधुगंभीर।
तबलौं है प्रताप तुव कीरति गावैं सब जग वीर॥

सब सरदारों ने चिल्लाकर कहा—"कविराजा जी आपके मुंह फुल चुये। "मेंवार की जय" मेवार की शोभा प्रतापसिंह की जय।" इसी प्रकार आमोद प्रमोद से सब सरदारों ने प्रताप को बधाई दी। प्रताप ने कहा-"सरदारों! हमारी जय तो कर चुके पर मेरी इच्छा है कि तुम सब लोग एक स्वर से मेवार के उद्धारकर्ता भामाशाह की जय कहो।" सरदारों ने तुरंतही आज्ञा का पालन किया और सब सरदारों ने एक स्वर से प्रसन्न होकर कहा "मेवार के उद्धारकर्त्ता भामाशाह की जय" इस शब्द ने दरबार को गूंजा दिया और क्रमशः वह शब्द द्वार द्वारा बाहर होकर समस्त नलि नभ में वायु द्वारा दिगदिगान्त व्याप्त होगया। धन्य हैं ऐसे पुरुष जो इस संसार में आकर ऐसे उपकार कर जाते हैं। यद्यपि भाभाशाह का शरीर यहां नहीं है पर इतने दिनों के बाद भी भारत के नील नभ में उसकी कीर्ति फैल रही है। मानों वायु हम लोगों के कानों में यही कह रही है कि "भामाशाह की जय" कहो और "मेवार के उद्धार कर्त्ता की जय" कहो।

---o---

समृद्धिशालिनी देवियां॥

अमेरिका देश में व्यापार वृद्धि के कारण दिनों दिन धन की वृद्धि हो रही है। एक ही देश में जहां ५००० अधिक करोड़पति

पुरुष मिलते हैं, वहां ऐसी देवियों का भी अभाव नहीं जिनके हाथ में करोड़ों रुपयों की सम्पत्ति है । अभी गत मास में नियूपार्क की अदालत ने जिस अरवकल को १०, ५००, ००० रुपये की सम्पति दिलाई है । श्रीमती हरीमन के पास अनुमान ४५०, ००० ००० रुपये जमा है । श्रीमती रसल सेज को उसको पति की मृत्यु पर २४०, ०००, ००० रुपये मिले थे । श्रीमती ग्रीन की सम्पति १००,०००,००० रुपये की है । इस प्रकार केवल इन चार स्त्रियों के पास १०९५,०००,००० रुपये की जायदाद है । प्रायः यह चारों देवियां सादा जीवन व्यतीत करती हैं । अपने पूर्व के मित्रों से प्रेम पूर्वक मिलती हैं और अपनी आय का विशेष भाग धार्मिक कार्य्यों में दान देती हैं । भारतवर्ष की नारियों के पास यद्यपि इतना धन नहीं तथापि जो कुछ भी उनके पास है यदि उसे भी वह अपनी पाश्चात्य बहिनों के सदृश भले कामों में लगावें और देश, काल व पात्र को देख कर धन प्रदान करें तो हमारे देश का बड़ा कल्याण हो ॥

इतिहासग्रन्थमाला ।

नवजीवन बुकडिपो की ओर से प्रबन्ध किया गया है कि सर्वसाधारण के परिज्ञान के लिये भिन्न २ देशोंके इतिहास को प्रकाशित किया जावे । इन में अमेरिका, इंग्लेण्ड, फ्रांस, जर्मनी, स्विटजरलेण्ड, इटली, जापान, चीन, अरबादि सभी प्रसिद्ध २ देशों को लिया जावगा और प्रत्येक में उस देश के राज्य की व्यवस्था, लोगों के रहन सहन का वर्णन और उनकी धार्मिक दशा का वृत्तान्त होगा । प्रत्येक ग्रन्थ २०×३० साइज के १६ पेजी फार्म पर छपेगा और ... पृष्ठ में समाप्त हो जायगा । इस इतिहास ग्रन्थमाला के सम्पादक श्रीयुत पण्डित रामप्रसाद जी त्रिपाठी बी. ए. नियुक्त हुए हैं । प्रति ग्रन्थ –) मात्र मूल्य में बिकेगा । जो सज्जन किसी देश विशेष पर ऐसा ग्रन्थ लिखना चाहें, उन्हें उनके परिश्रम के लिये कुछ सहायता भी दी जायगी । पत्र व्यवहार प्रबन्ध कर्ता नवजीवन से करें—

गेहों के लिये चिकित्सालय ।

केनेडा के राज्य की ओर से वहां एक ऐसा चिकित्सालय खोला गया है जहां रुग्न गेहों [अन्न] की चिकित्सा की जाती है। गेहों के अनाज को भी रोग लगता है और उन में से एक प्रधान रोग यह है जिसे अङ्ग्रेजी परिभाषा में smart स्मार्ट कहते हैं। यह एक प्रकार का कीट होता है जो छिलके को बिगाड कर काला कर देता है और गेहों का मूल्य घटा देता है। जब दाने काटे जाते हैं तो उन में कुछ मट्टी सी जमी रहती है। राज्य की ओर से वहां प्रवन्ध किया गया है कि एक निरीक्षक समीपस्थ खेतों में जाता और अन्न की जांच करता है। जहां का अनाज उसे बीमार ज्ञात होता है उसे वह चिकित्सालय में भेज देता है। जब अनाज हस्पताल पहुंचता है तो उसे भाप के यन्त्रों द्वारा उतारा और तोला जाता है। तब साफ करनेवाली कला द्वारा उस अन्न को धोया जाता है। तब अन्न को धोते, मैल उतारते और सुखाते हैं। इस प्रकार से शुद्ध होकर वह अनाज मालिक के हवाले करदिया जाता है। इस देश में अनाज की तो कौन कहे लाखों ग्रामों में मनुष्यों की भी चिकित्सा नहीं होती और वह बिला मृत्यु के मर जाते हैं। कोई समय था कि भारतवर्ष के लोगों ने पशुओं और कीट पतङ्ग तक की चिकित्सा करने के लिये चिकित्सालय खोले हुए थे, परन्तु वर्त्तमान विज्ञान अन्न तथा बनस्पति की रक्षा के उपायों को भी सिखलाता और मनुष्य को दिनोंदिन उत्तम से उत्तम सामग्री को उपलब्ध करने की शिक्षा देता है। अज्ञानवश इस देश के किसान इन उपायों से लाभ उठाना तो दूर इन विषयों के मर्मो तक को नहीं समझ सके।

स्त्री शिक्षा सम्बन्धी पुस्तकें।

इस समय नवजीवन बुक डिपो में बहुत सी ऐसी पुस्तकें संग्रहीत की गई हैं जो स्त्रियों के लिये उपयोगी और कन्या पाठशालाओं में कन्याओं के इनाम में देने योग्य हैं। उनमें से निम्न लिखित ग्रन्थ

(१) सीताचरित्र-५ भाग मूल्य १॥=)
(२) नारायणी शिक्षा मूल्य १।) (३) स्त्री सुबोधिनी मूल्य १
(४) नारी धर्म विचार दोनों भाग मूल्य १॥) (५) महिला मण्डल दोनों भाग मूल्य ॥।) (६) गर्भ रक्षा विधान मूल्य
(७) बनिता विनोद मूल्य १) (८) भारत की वीर तथा विदुषी स्त्रियां दोनों भाग ॥=)॥ (९) सच्ची देवियां।=) (१०) सती चरित्र दोनों भाग मूल्य २) रुपया बहुत प्रसिद्ध हैं। पांच रुपया से अधिक मूल्य के ग्रन्थ लेने वालों को कमीशन भी मिलेगा।

प्रवन्धकर्त्ता—नवजीवन॥

[गताङ्क से आगे]

जगत के मनुष्यमात्र से स्नेह ।

देश भक्तों की कभी मृत्यु नहीं होती। वह कीर्ति रूपी आकाश पर तारों के समान चमकते हैं। युद्ध में चाहे उनका रक्तपात हो, चाहे उनके कोमल शरीर गिद्धों के काम आवें, चाहे उनके प्रताप-शाली शिरों को नगर के द्वारों पर लटका दिया जावे, परन्तु उनकी जीवन कीर्ति देश देशान्तरों में घूमती है। चाहे वर्षों या शताब्दियों का समय व्यतीत हो जावे, परन्तु उनके जीवन्त उदाहरण उनके आदर्शों को सर्वसाधारण के सम्मुख उपस्थित करते हैं और उन्हें उन कठिन बन्धनों से मुक्त करा देते हैं जिनमें कि वह पीडित हो रहे हैं। परन्तु इस उच्चैस्तर मैत्री के भाव से बढ़कर भी एक उच्चैस्तम अवस्था है जिस में मनुष्य संसारमात्र के कष्टों के निवारण करने में संलग्न होता है। वह अपने उत्तम विचारों के बीजों को बिखेरता है और वह उत्तम भूमि को पाकर उगते, फूलते और फलते हैं। जिस प्रकार वसन्त ऋतु के प्रादुर्भाव से पर्वत के शिखर और कन्द्राएं तथा समतल भूमि में बहार उपजती है, चारों ओर से फूल खिलते, फल लगते और सुहावनी वृक्षमाला मनुष्यों के हृदय को आनन्दित कर देती है इसी प्रकार से मनुष्य मात्र से प्रेम करने वाला मनुष्य बहार वसन्त ऋतु के समान अपने मनोहर भावों की वर्षा करता और समग्र जगत को प्रसन्नता तथा सुख प्रदान करता है। आर्य्यों की आश्रम व्यवस्था के अनुसार संन्यासी पक्षपात को त्याग कर संसार भर से प्रेम कर सकता है। उसके लिये तो आदर्श यही है—

परोपकाराय फलन्ति वृक्षाः परोपकाराय वहन्ति नद्यः
परोपकाराय दुहन्ति गावः परोपकारार्थमिदं शरीरम् ।

अर्थात् कि वृक्ष फलते हैं तो परोपकारार्थ, नदियां बहती हैं तो परोपकार के निमित्त, गायें दूध देती हैं तो परोपकारार्थ, हमारा शरीर भी परोपकार के लिये ही बना है। जिसके सामने ऐसा उच्च आदर्श हो वह प्रत्येक मनुष्य से प्रेम करेगा, सब को मैत्री की दृष्टि से देखेगा और प्रत्येक मनुष्य को सहायता देना अपना कर्तव्य समझेगा। वैदिक धर्म हमें केवल इतनी ही शिक्षा नहीं देता परन्तु

मित्रस्य चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षामहे ।

सिखलाता है कि मनुष्य ही नहीं, प्राणी मात्र को भी मित्र

की दृष्टि से देखें। यही कारण है कि आर्ष ग्रन्थों में अहिंसा धर्म पर इतना बल दिया गया है। भगवान् मनु ने आठ प्रकार के कसाई बतलाए हैं। हिंसा केवल वध करने में ही नहीं होती किन्तु दिल दूखाने में भी हिंसा के भाव पाये जाते हैं। संसार में उन सज्जनों की कीर्ति देश देशान्तरों में फैलती है जो कर्तव्य को लक्ष्य में रख कर अपने पराये का कुछ भी विचार नहीं करते। उनके सामने

> अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्।
> उदार चरितानां तु वसुधैव कुटम्बकम्॥

तो भाव उत्पन्न ही नहीं होते कि यह हमारा है और यह पराया है। उदार मनुष्य तो संसार मात्र को अपना कुटम्ब समझते हैं। जिसने जगत को अपना परिवार समझ लिया वह तो प्रत्येक प्राणी से मैत्री करेगा। प्रेम के दीपक दिखलाने वाली मिस फ्लारन्स नाईट इंगेल ने इसी भाव को लक्ष्य में रख कर अनन्य प्रेम की मिसाल कायम की थी। संसार मात्र के दुखों को कम करने की कामना करना उनसे मैत्री करना है। ऐसा ही जीवन हमारी निहित शक्तियों को उज्जागृत करता, ऐसा ही आर्य्य जीवन हमें कर्तव्य परायण बना देता है। यदि सुखी मनुष्य ही जगत में मिलते तब तो केवल स्नेह, मैत्री और प्रेम के भाव ही काफी होते किन्तु दुखी भी तो विद्यमान हैं। दुखियों से प्रेम करना उन पर करुणा करना है। इसी लिये सदाचार निर्माण का दूसरा उपाय करुणा करना है।

करुणा

सदाचार निर्माण का दूसरा साधन।

शीत ऋतु के दिनों में आओ पाठक! एक दरिद्र परिवार के घर की अवस्था पर दृष्टि डालें। वर्षा के कारण जाड़ा बढ़ रहा है। कमरे एक कोठड़ी में कुछ बालक और पुरुष स्त्रियां एकत्रित हैं। कमरा इतना छोटा, तङ्ग और बन्द है कि वहां एक क्षण के लिये ठहरना भी दुस्तर है। इसमें एक ही खिड़की है जिसके द्वारा वायु बाहिर और भीतर आ जा सक्ती है। इसी कमरे के अन्धेरे कोने में एक टूटी सी खटिया धरी है जिस पर बिछौना तक नहीं। इसी खटिया पर नवजात बालक की माता अपने प्राणों का परित्याग कर रही है। समीप ही आग के पास नवजात बालक को गोद में लेकर उसका पिता अग्नि ताप रहा है। चूलहा में आग भी नहीं रही

सात बालकों में से छोटे पांच रोटी के लिये वावेला मचा रहे हैं। इनके शरीरों पर वस्त्र तक नहीं। आधे नङ्गे फटे पुराने कपड़ों से शरीर को ढांप कर एक फटे लिहाफ में सुकड रहे हैं। एक तीन वर्ष का सुन्दर बालक अपनी मृत माता के पास खड़ा होकर कह रहा है 'मां, 'मुझे ले लो, मुझे ले लो,' उसकी बहिन ने बच्चे को प्रेम से कहा,' मां सोती है ! जाओ, पिता के पास जाकर बच्चे के साथ खेलो, पिता ने उसे भी उठा लिया और उसका दुख जो अब तक पुरुषत्व के कारण दृढ़ता के बन्धनों से रुक रहा था, उमडा और आंखों के द्वारा वेग से अश्रुधारा के रुप में बहने लगा। दूसरे बच्चे भी भूख के मारे रोने लगे-" मत रोवो "। बड़ा लड़का कह कर बच्चों को समझाने लगा, वह देखो, बहिन रोटी ला रही है। तुम सब बांट कर खाना, अभी मां उठेगी और तुम्हें खाना खिलावेगी"॥! इस प्रकार से दुखित और पीडित परिवारों को देख कर वज्रादपि कठोर हृदय भी द्रवीभूत हो जाता है। मनुष्य दीन दुखियों के क्लेशों को दूर करने के लिये उद्यत होता है। संसार भर में मैत्री करने वाला कोई भी आर्य्य पुरुष ऐसे दुखियों के कष्ट को सहन नहीं कर सका। ईर्षा और मत्सरता के भाव सदा अपने से अच्छे ऐश्वर्य्यशाली मनुष्यों को देखने से उत्पन्न होते हैं। परन्तु अपने से दुर्बल और दुखित पुरुषों को देख कर सन्तोष के सद्भाव उठते हैं। भले जीवन वाले पुरुष सदाचारी होते हैं। सदाचारी समाज में प्रेम के अङ्कुरों को बोता है और उसके बीजों को अपने सम्बन्ध में आने वाले पुरुषों के हृदय में वपन किया जाता है। इसी प्रकार से पवित्र जीवन से मनुष्यों को आशा बनी रहती है कि पृथिवी पर दयालु और धर्मात्मा पुरुष हमारे संकटों को काट देंगे। इसी आशा का प्रभाव उस प्रकाश को कहलाता है जिसके द्वारा सुगन्धि, तेज और उष्णता फैलती है। दुखित मनुष्य पीडित अवस्था में ऐसे ज्योति के केन्द्रों पर विचार करता है! यह विचार उसे उस परदे के समान ढारस देते हैं जो ग्रीष्म ऋतु में प्रचण्ड प्रकाश को रोकता और शीत ऋतु में वायु के प्रकोप को हटाता है। मनुष्य प्रेम के जीवन द्वारा मित्रों को पाकर रोगशय्या पर पड़े २ अपना आधा रोग कटा हुआ समझता है। इसी में विचारों की मृदुता है। इसी में शुभ संकल्पों

की वासना है। इसी में मैत्री की उष्णता है। इसी में हमदर्दी का भेद है। ऐसे ही संकट में सहायता देना सच्चा और शुद्ध प्रेम है। संसार के इतिहासों पर दृष्टि डालो, जब २ महानुभावों ने सदाचार निर्माण की ओर ध्यान दिया, उन्होंने मनुष्यों के क्लेशों को घटाने की चेष्टा की। जो मनुष्य दूसरों की सेवा में अपने स्वार्थ को खोना नहीं सीखा वह जीवन के महत्व को प्राप्त नहीं कर सका। दूसरों के उपकार में मनुष्य की उत्तमोत्तम शक्तियां जागृत होती हैं। हमारी अवस्था न्यूनाधिक उन पर्वतों के समान है जिन्हें हम समतल भूमि से खड़े होकर देखते हैं। जितना हम ऊपर शिखरों पर चढते हैं उतने ही एक से एक बड़े शिखर वाले पर्वत देखने में आते हैं। पर्वत पर खड़ा मनुष्य नीचे की समतल भूमि और वादियों को दया की दृष्टि से देखता है। मैदान पर रहने वाले पर्वतों के सुखों से वंचित रहते हैं। ठीक ऐसे ही सुखी और दुखी मनुष्यों की अवस्था है। दुखी पुरुष अपने से ऊंचे सुखी पुरुषों को देखते हैं और उनकी करुणा दृष्टि में ही अपने दुखों का छुटकारा ढुंढते हैं। सुखी मनुष्यों को इनसे प्रेम करना उचित है। इन पर करुणा दृष्टि को पात करना ही धर्म है। जो मनुष्य संसार से प्रेम करना चाहता है उसे चाहिये कि अपने से सब से पीछे प्रेम करे। अपने इर्द गिर्द देखो! कितने दुखी हमारी सहायता के अधिकारी हैं। जो मनुष्य जीवनयात्रा में नीचे की कान्टों वाली सड़क पर चल रहे हैं थोड़े से प्रेम से, थोड़े सी सहायता से और ज़रा से सद्व्यवहार से हम उनकी तलख़ ज़िन्दगी को उत्तम बना सक्ते हैं और उन्हें क्लेशों के भार को उठाने में सहायता दे सक्ते हैं। अनेक मनुष्य पाप के जीवन और निराशा के असह्य बोझ के नीचे दब रहे हैं, हमारे हाथ लगादेने और उन्हें सदाचार का पथ दिखला देने से वह उस आदर्श पर पहुंच सक्ते हैं जहां चढकर वह अपने को अमृत पुत्र और अपने अमूल्य मनुष्यदेह को अमृतधाम समझने और मानने लगेंगे। सच्चा सुख उन्हीं को प्राप्त होता है जो दूसरों के लिये कष्ट उठाते हैं। ऐसे ही मनुष्यों के लिये पूर्ण शान्ति का राज्य सुरक्षित रहता है। क्या यह कुछ कम पारितोषिक है कि मनुष्य अपने जीवन में उन्नति करता हुआ दूसरों के दुखों को कम करने से सुख और शान्ति की उपलब्ध करे परन्तु

जगत के इतिहास द्वारा तो हमें यही शिक्षा मिलती है कि जब हम दूसरों के दुःखों को घटाते हैं तो हमारे दुःख भी घट जाते हैं। जो सेवा करता है वह स्वयम् भी सेवा का पात्र बन जाता है। पन्द्रहवीं शताब्दि में तुर्कों और वीनस के निवासियों में बडा द्वेष रहता था। वह प्रायः एक दूसरे के जहाज़ों को पकड लेते और उन के यात्रियों को अपना गुलाम बनाकर बेच दिया करते थे। एक बार एक तुर्कों का जहाज़ पकडा गया। यात्री कैद करालिये गये और उन्हें एक एक करके बेच दिया गया। उन में से एक गुलाम का नाम "हमीत" था। जिस व्यक्ति ने उसे खरीदा था वह एक धनाढ्य के मकान के सामने रहता था। उस धनिक का इकलौता पुत्र था। जब २ वह बालक सामने से गुज़रता हमीत उसे प्रणाम किया करता था। बालक इस गुलाम के गुणों को देख कर बडा प्रसन्न होता और दिन में कई बार उस के पास जाकर बैठा करता था। वह घर से कई चीज़ें लाकर उसे देता और उस के दुःख को कम करने की चेष्टा किया करता था, परन्तु हमीत अपने दुखों, जन्मभूमि और सम्बन्धियों को याद करके ज़ोर २ रोया करता था। एक दिन वह बालक इस दृश्य को देख कर बडा दुखी हुआ और अपने पिता से जाकर कहा कि उस गुलाम की सहायता करो। पिता को भी बालक से अनन्य प्रेम था, इस लिये उसने "हमीत" से मिलना निश्चित किया। दूसरे दिन वह बालक अपने पिता को सङ्ग लेकर हमीत के पास पहुंचा। धनिक हमीत के मुख और व्यवहार को देख कर बडा प्रसन्न हुआ और कहने लगा, 'हमीत ! तुम छूट कर क्या करोगे'? हमीत ने उत्तर दिया, यदि मैं स्वतन्त्र हो जाऊं तो मैं हर प्रकार के कष्ट को सहने के लिये उद्यत हो जाऊंगा। कष्टों की तो बात ही क्या है जब कि मैं यहां तीन वर्ष से दुखी पडा हूं और मैं सब से प्यारी और उत्तम वस्तु "स्वतन्त्रता" से वंचित हूं। उस धनिक ने रुपया अदा करके हमीत को मुक्त करवादिया और कुछ मार्ग व्यय के लिये अशर्फियां देकर उसे जहाज़ पर बिठलाकर रवाना करादिया। अनुमान ६ मास व्यतीत हुए थे कि इस धनिक के घर में अचानक आग लग गई। यह प्रातःकाल का समय था। घर के सभी आदमी घोर निद्रा में सोरहे थे। आग धकते २ इतनी बढ़ी कि सारा मकान जलने लगा। नौकर-चाकर सभी घबरा

कर उठे। धनिक को पकड कर नीचे लाने ही पाये थे कि सीढियां जल कर टूट गईं और भयानक शब्दों में जलती हुई अग्नि में जा गरीं। यदि धनिक अपने आप को धन्य मान रहा था कि उसकी जान बच गई तो ज्यों ही उसे ज्ञात हुआ कि उसका लडका ऊपर के कमरा में सोता था और वह नीचे नहीं उतरा त्यों ही उसके मन पर दुख और अशान्ति का पहाड टूट पडा। इस धनिक ने (जिसका नाम फ्रानसिसको था और जो विख्यात करोडपति था) उस साहसी पुरुष को जो जलती हुई अग्नि में से उस के पुत्र को निकाल लावे आधी सम्पत्ति देने की प्रतिज्ञा की। पारितोषिक महान था। अनेक लोलुपों को साहस उत्पन्न हुआ। दो चार चढे भी परन्तु प्रचण्डाग्नि में जाने का साहस न कर सके। आग हर दरवाज़े और खिडकी में से निकल रही थी। मकान गिर गिर कर खण्डर बन रहा था और वह भयभीत बालक ऊपर की खिडकी से हाथ बाहिर निकालकर सहायता के लिये आवाज़ दे रहा था। सभी नीचे खडे हुए जानते थे कि बालक मृत्यु के भयानक चङ्गुल में है। पिता इस असह्य अवस्था को न देख सका और मूर्छित होकर गिर पडा। ऐसी अवस्था में जब कि स्त्रियों और नौकरों ने चिल्लाना आरम्भ कर दिया था एक मनुष्य भीड को चीरता हुआ आगे बढा। वह एक लम्बी सीढी पर बडी फुरती से चढ गया मानों वह बचाने या मरने पर कटिबद्ध है और एक क्षण भर में गुम होगया। उस स्थान से एक धुआं निकला और अग्नि की लपटें बाहिर आने लगी। लोगों ने समझा कि वह जल गया। इतने में देखते क्या हैं कि वह बालक को गोद में लिये हुए बिला किसी भारी चोट के उतरा चला आता है। आकाश करतल ध्वनि से गूंज उठा। साधु रे, साधु के उत्साहप्रद शब्द सुनाइ देने लगे। माता और पिता के सुख की कौन कहे सर्वसाधारण भी खुशी से फूले न समाते थे। पिता ने अपने पुत्र को प्रेम से आलिङ्गन किया। इस प्रसन्नता की घड़ी के दूसरे ही क्षण में पिता की दृष्टि उस जीवन के रक्षक की ओर गई जो दरिद्रियों की से वस्त्र पहिने हुए था और जिसका चिहरा धुआं और अग्नि को लपटों से इतना काला हो रहा था कि उसे पहिचानना भी दुस्तर था। फ्रानसिसको ने उसे आदर पूर्वक सम्बोधन किया और एक मुहरों की थैली देकर कहा, 'इतना तो

आप अभी लीजिये और कल में शेष प्रतिज्ञा का पालन यथेष्ट रूपेण करूंगा।' उस व्यक्ति ने नम्रता से कहा, नहीं श्रेष्ठिन्! "मैं अपने रक्त को नहीं बेचता" धन्य हो प्रभो! यह कह कर धनिक ने कहा, मैं इस आवाज़ को पहिचानता हूं आपका नाम............ इतना कहने ही पाया था कि बालक अपने रक्षक की गोद में लिपट गया और कहने लगा, हां, मेरा प्यारा "हमीत" आ गया'। यह हमीत ही था और उन्हीं वस्त्रों को पहिने था जो छः महीने व्यतीत हुए धनिक ने दिए थे। धनिक ने तत्काल एक मित्र के स्थान पर उसे पहुंचा दिया और अपना प्रबन्ध करने में लग गया। जब अवकाश मिला तो उसने हमीत से फिर कैदी बनने और देश से लौट कर आने के सम्बन्ध में पूछा। हमीत ने कहा "जब मैं जहाज़ पर गया ता ज्ञात हुआ कि मेरा पिता भी वहां कैद है। मैं पिता को ही याद कर २ के रोया करता था। जब मुझे ज्ञात हुआ कि मेरा पिता कैदी है तो मैं उस धनिक के पास पहुंचा जिसने मेरे पिता को खरीदा था। मैंने उसे समझाया कि मैं नौजवान हूं और काम कर सक्ता हूं। मेरा पिता दुर्बल और बूढा है। आप इन्हें मुक्त कर दें और मुझे कैद कर लें। साथ ही मैं ने वह अशरफियां भी दे दीं जो आप ने मुझे दी थीं। अन्ततः मेरे बार बार समझाने पर धनिक ने मेरे पिता को मुक्त कर दिया और मैंने पिता को अपनी टिकट देकर जहाज़ पर चढा घर भेज दिया और स्वयम उसके स्थान पर फिर गुलाम बन कर यहीं रहने लगा। मैं इस कैद के लिये परमात्मा को धन्यवाद देता हूं कि उसने मुझे आपकी सेवा करने का अवसर प्रदान किया और मैंने अपने आप को आप की कृपा का पात्र सिद्ध कर दिया। साथ ही मैं ने अपने मित्र उस बालक के प्राण बचाये जिसे मैं अपने प्राणों से हज़ारों गुणा अधिक प्यारा समझता हूं।" इस पर धनिक ने हमीत को फिर मुक्त करवा दिया और अपने घर में लाया। जब उसे आधी सम्पति दी गई और कहा गया कि आप यहां 'वीनस' में ही निवास कीजिये तो उसने इनकार कर दिया और कहा कि जो कुछ मैं ने किया है अपनी शुक्रगुज़ारी और मित्रता के ऋण को पूर्ण किया है। डाक्टर डुवाईट ने ऐसा ही एक और उदाहरण दिया है। जब अमेरिका में एलबनी

का प्रान्त आबाद किया जा रहा था, उन दिनों एक शिकारी रेड इण्डियन लिचफील्ड में आया और रात्रि के विश्राम के लिये आश्रम के अध्यक्ष से स्थान मांगा । शीत और वर्फ के कारण वह कष्ट में था । शिकार की थकावट ने उसे चूर कर दिया था तिस पर कई दिनों से उसे कुछ भी खाने को नहीं मिला था। आश्रम के अध्यक्ष ने उसे अनादर पूर्वक सराय से निकाल दिया । मीलों तक विश्राम के लिये और कहीं भी स्थान न था । वह बेचारा गोराङ्ग न था इस लिये उसे अन्यतर कहीं भी विश्राम का स्थान पाने की आशा न थी । उसका मुखकमल निराशा से सूख गया। वह ठण्डे सांस लेने लगा और दया का प्रार्थी हुआ। इस करुणा-स्पद दृश्य को देखकर एक सज्जन के हृदय में दया उत्पन्न हुई। उसने अपनी जेब से रुपया निकालकर आश्रमाध्यक्ष से खाना मूल लिया और उस पथिक को प्रेम पूर्वक खिला दिया। जब वह खाना खा चुका तो उसने दाता का अनुग्रह प्रकट किया और कहा 'किसी दिन अवश्य मैं इस ऋण को उतारूंगा।' इतना कह कर वह वहांसे चल दिया। कुछ वर्ष अनन्तर शत्रुओं के एक फिरके ने उसी गोराङ्ग व्यक्ति को कैद करलिया और कनेडा की ओर ले गये। दैवयोग से उन्होंने उसके प्राणान्त नहीं किये । हां, उसे दास बनाकर अपने पास रखलिया। एक दिन एक रेड इण्डियन उधर से गुज़रा, उस ने उसे पहिचान लिया और एक बन्दूक उस के हाथ में देदी और संकेत से कहा कि मेरे पीछे २ चले आओ । उस इण्डियन ने उसे कुछ नहीं बतलाया और दिनों दिन पर्वतों, कन्द्राओं और घने वनों में से लेकर यात्रा करता रहा, सुतराम, एक दिन वह एक पर्वत से उतरे और समतल भूमि पर आये । यहां खेती के मैदान हरे भरे लहरा रहे थे। उस इण्डियन ने गोराङ्ग से पूछा कि क्या आप इस स्थान को पहिचानते हैं ? उसने उत्तर दिया, हां, यह लिचफील्ड है । अभी चकित गोराङ्ग आश्चर्य में ही था कि वह कहने लगा 'यह लिचफील्ड है और मैं वही व्यक्ति हूं जिसे यहां आपने रात्रि को खाना खिलाया था और अब जब कि मैं ने अपनी रोटी के बदले आप को मुक्त करा दिया है, मेरी प्रार्थना है कि अब आप सानन्द अपने घर को चले जावें।" इतना कह कर उसने वन की राह ली।

(शेष फिर)

विमान में उड़नेवाला पहिला भारतवासी ।

पश्चिमी देशों के वर्त्तमान कार्यों में से उड़ने की कला भी एक है। वैज्ञानिक संसार की सम्मिलित शक्तियां इस कला के बढ़ाने के लिये लग रही है । कुछ काल के पश्चात् आदमी आकाश की भी छान बीन वैसे ही करने लग जायेंगे, जैसे इस समय सुगमतापूर्वक समुद्र की करते हैं। थोड़े समय में ये हमारे पुराण और शास्त्रों में उल्लेखित "विमानों" के समान ही हो जावेंगे, और चटक मटक से आकाश में चलेंगे। पाठक स्वयं विचार कर सक्ते हैं कि बहुत से लोग एक मनुष्य यात्रा के लिये ऐसा परिश्रम कर रहे हैं, जिससे उकाब से मल्लयुद्ध करना पड़े जो आकाश में चारों ओर जहाज़ से जाता है.

वास्तव में मैसूर राज्य के असिस्टेन्ट इंजीनियर, मि० एस० वी० सेठी वी० ए०, ए० एम० आई० ई० ई० को एक हवाई जहाज़ को उड़ते देखकर अत्यन्त हर्ष होता है, जिसकी रचना उन्होंने अपने प्रधान मि० ए० वी० रो के साथ की थी, और जिसको तैयार उन्होंने स्वयं किया है। मेशीन अच्छी थी और आस्ट्रेलिया के प्रसिद्ध उड़नेवाले मि. जे. डागन को पसन्द आई। उन्होंने उस मेशीन के उड़ाने पर मिस्टर सेठी की प्रशंसा करते हुए फौरन खरीद लिया. यह एक भारतवर्षीय के लिये अत्यन्त गौरव की बात है कि इसने एक हवाई जहाज़ बनाया है। नीचे लिखे विवरण से पाठक हवाई जहाज़ की लम्बाई और चौड़ाई जान सकेंगे. उसका मेहराव २३ फीट है, रस्सी ४ फीट ६ इंच है, उसका कोण चार डिग्री है, उसका ठीक वज़न ८०० पौंड मांझी अथवा यात्री के है। इंजिन का [illegible] ८ हैन्डरवेट है। इसकी चाल एक घंटे में ४५-५० मील है. वर्तमान समय में मिस्टर सेठी एक नये ढंग का आकाश विमान बना रहे हैं.

मिस्टर सेठी पहले भारतवर्षीय उड़नेवाले हैं। वास्तव में देखा जाय तो पूर्व के थोड़े उड़नेवालों में से एक आप हैं। आप रुड़की के इंजिनियरिंग कालेज में पढते थे और सम्मान पूर्वक परीक्षा में उत्तीर्ण हुए थे। फिर मैसूर राज्य में चले गये और असिस्टेंट इंजीनियर हुए। उड़ने की स्वभावतः ही इच्छा रखने के कारण इंगलैंड गये और वहां पर विशेष अनुराग से उड़ना सीखने लगे। [illegible] परिश्रम और अनवरत अभ्यास के कारण उड़ने की कला

के लिये उन्होंने अपने को ठीक कर लिया है। जब उन से पूछा गया कि भविष्य में क्या करने का विचार है ? तो उन्होंने उत्तर दिया कि मैं भविष्य में उड़नेवाला होऊंगा।

मैं अपने देश वासियों में इस विद्या का प्रचार करूंगा, जिनके पूर्वज इस विद्या को जानते और काम में लाते थे। वह वीर, साहसी और प्रतिभाशाली युवक हैं। आशा होती है कि अगर धन का प्रबन्ध हो तो सब प्रकार के विमानों के बनाने में सफल होंगे। वे उड़ने की विद्या के अत्यन्त इच्छुक और उत्सुक हैं और सब ही उड़ने वालों के समान वे इसी व्यवसाय की प्रतिज्ञा करते हैं। उनका चरित्र निष्कलङ्क है।

क्या अच्छा हो कि भारतवासी नवयुवक विलायत में बैरिस्टरी आदि परीक्षाओं के लिये ही न जाकर मिस्टर सेठी की भांति ऐसे ऐसे विज्ञान और कलाओं के सीखने के लिये जाया करें। इस देश का भविष्य नवयुवकों पर ही निर्भर है। यदि वे वकालत वगैरह न सीख कर उपयोगी कलाओं के सीखने की चेष्टा करें तो इस देश का विशेष उपकार कर सकते हैं और संसार की अन्यान्य विद्याओं को भी सहायता दे सकते हैं। कानून का मैदान सिर्फ एक जुआ है और कुछ नहीं है। सो ऐसी कलाओं के सीखने से हम संसार की अन्यान्य विद्याओं में भी सहायता दे सकेंगे।

(मॉडर्न रिव्यु के आधार पर)

——*——

प्रोफेसर राममूर्ति

(जथाजी प्रताप के लेख के आधार पर)

इस संसार में आदमी जो कुछ चाहे कर सकता है केवल पुरुषार्थ और मेहनत की ज़रूरत है। बहुत से उदाहरण ऐसे उपस्थित हैं कि मामूली आदमी इन्हीं के द्वारा आज महान् पुरुष कहलाते हैं। ऐसे बहुत कम पुरुष होंगें जिन्हों ने प्रोफेसर राममूर्ति का नाम न सुना होगा। आप ने शारीरिक उन्नति में वह नाम पैदा किया है कि आज घरर रुस्तुमे हिन्द, इंडियन सेन्डो, इंडियन हरक्यूलस, भारतीय भीम के नाम से पुकारे जारहे हैं। अपनी छाती पर हाथी का सावर करालेना, १२ घोड़ों के मोटर को पीछे से खींच लेना, छाती
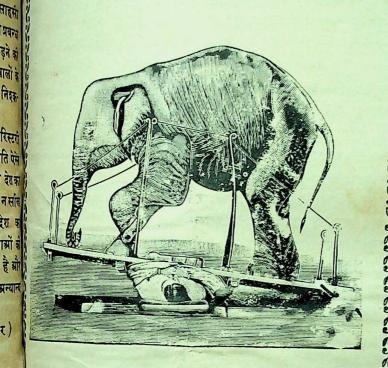
जगद्विख्यात प्रोफेसर राममूर्त्ति
हाथी के बोझ को छाती
पर उठा रहे हैं।

पर ५०) मन के पत्थर का कुटवाना वगैरा २ ऐसे कर्तब हैं जो इन्सा-न को हैरत में डालने वाले हैं। जो कुछ प्रशंसा आज हमारे भारतीय भीम प्राप्त कर रहे हैं वह अकथनीय है। सैंकड़ों राजों महाराजों ने आप का स्वागत किया। आज आप के पास ११० से अधिक मेडिल हैं.

प्रोफेसर राममूर्त्ति जी का जन्म सन् १८८३ ई० में विराघटन नगर में हुआ था। यह नगर मद्रास में है और विक्रम नगर के निकटस्थ है। आप की माता का देहान्त बहुत ही थोड़ी अवस्था में हो गया। उस समय आप के पिता राय बहादुर के. नारायण स्वामी नाइडू पुलिस इन्सपेक्टर थे, उन्होंदे आप को विक्रम नगर के महा-राजा कालिज में बाल्यावस्था में ही भरती करा दिया और राम-मूर्ति भी वहां १८९५ इ० तक अध्ययन करते रहे; परन्तु कुछ उन्नति नहीं की। इनको शुरू से ही कसरत का बहुत शोक था। बालकपन में यह रोगी रहते थे और इसी दर्मियान में दमा का रोग हो गया; परन्तु सिगार पीने से जाता रहा। सन् १८९६ ई० में विक्रम नगर में एक प्रान्तिकस्कूल स्थापित हुआ और आप उसमें अवैतनिक व्यायाम शिक्षक (Honorary instructor for physical culture) के पदपर नियुक्त हो गये, इसके अनन्तर मदरास के शरीरोन्नति सुधार स्कूल में भरती हो गये और वहां एक साल पढ़कर परीक्षा पास की और फिर उसी प्रांतिक स्कूल में अपने पूर्व पद पर काम करने लगे। उनकी कसरत का ढंग यह था कि सुबह ४ बजे उठकर १२ मील बराबर दौड़ते थे और फिर नौ बजे तक कुश्ती लड़ते थे; परन्तु लोग उस से सन्तुष्ट न थे। वे कहा करते थे कि बिना काम के बैल की तरह डांमा डोल फिरा करता है अपने कुटुम्ब का नाम बिगाड़ेगा। एक दफा वहां के सिटी मजिस्ट्रेट ने भी इनको आगाह किया कि कोई कार्य्य अपने हाथ में लेलो, इस तरह मारे २ फिरना ठीक नहीं, इसका फल यह हुआ कि उनको टूटा राजा की सर्कस कम्पनी में नौकरी करनी पड़ी। मालिक कम्पनी ने इनकी लियाकत देखकर फौरन इनको मैनेजर बना दिया, लोग इनके कर्तब से बहुत खुश हुऐ और सन १९०३ व १९०४ में इनको लोगों ने कई पदक प्रदान किये। इसी दरमियान में वह कम्पनी टूट गई मगर राममूर्ति ने हिम्मत न हारी। इधर उधर लोगों के

कहने से कर्तब दिखलाने लगे और सन् १९०५ ई० में इनको दो पदक और प्राप्त हुए.

२७ मई सन् १९०५ ई० इनके जीवन के इतिहास में एक शुभ दिन है, इसी दिन ने उनके जीवन में बड़ा परिवर्तन कर दिया। यह वह दिन था जब इन्हों ने इयूगन सैन्डो (Engen sandow) को चैलेंज दिया था। इन दिनों में सैन्डो मदरास में अपने कर्तब दिखा दिखा कर प्रशंसा प्राप्त कर रहा था ; परन्तु सैन्डो ने चैलेंज लेना स्वीकार न किया इससे राममूर्ति की हिम्मत कम न हुई बल्कि और बढ़ गई । मदरास के गवर्नर की उपस्थिति में इन्हें अपने कर्तब दिखलाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। यह खेल इतने उमदा थे कि इससे पेश्तर कभी कहीं भी तमाम दुनियां में किसी ने नहीं दिखलाये थे। इनके अनन्तर इन्हीं खेलों के दिखलाने का हमारे सम्राट और सम्राज्ञी को जो उस समय हिन्दुस्तान की सैर को आये थे, फिर राममूर्ति जी को अवकाश हुआ। इन तमाशों से शहज़ादे साहब बहुत खुश हुए और एक सुनहरी मेडिल राममूर्ति जी को प्रदान किया.

अब क्या था, भारतीय भीम की प्रशंसा और कीर्ति का सुगंधित समाचार पत्रों रूपी वायु द्वारा चतुर्दिक फैल कर इसी देश तक ही परिमित नहीं रहा किन्तु वह समस्त जगत में फैल गया,। लोग चातक की भांति इनके खेल देखने की लालसा करने लगे। सन् १९०९ ई० के आरम्भ में ही पूर्वीय देशों को रवाना हुए और वहां जो सफलता इनको प्राप्त हुई वह आज तक किसी को भो नसीब न हुई ; परन्तु द्वेष और डाह की अग्नि बुरी होती है, मलाया में एक पहलवान ने इनको विष दे दिया ; किन्तु उसका अधिक असर न होकर इतना ही रह गया कि कुछ काल तक कार्य न कर सके। हां, उस दुष्ट को कुछ भी सफलता न हुई, ठीक है " दुष्टोजन किन्नकरोति पापम् " इसी वर्ष लार्ड मिन्टो महोदय ने एक मेडिल और प्रशंसापत्र प्रदान किया। यही नहीं किन्तु कई महाराजाओं ने बड़ी २ भेंटें दीं, जिनमें से एक ८,०००) रुपये की हीरा जटित मुद्रिका थी और दूसरी भेंट में ५,००० रुपये नक्द थे, क्यों न हो।

गत वर्ष के मई मास में आप इङ्गलेंड गये और वहां सम्राट तिलकोत्सव पर भिन्न २ देशों से आये हुऐ सज्जनों को अपने खेलों द्वारा आल्हादित किया,

भोजन दिनचर्या—आपका भोजन भी बहुत सादा है, जैसा साधारण कोटि के मनुष्य खाते हैं, अधिकतर पौष्टिक पदार्थों का प्रयोग करते हैं। बलकारी होने की दृष्टि से उन्होंने कुछ समय तक मांस का भी प्रयोग किया परन्तु उससे लाभ प्रतीत होता न देख कर शीघ्र ही उसको त्याग दिया। आप का कथन है कि मांस से बल नहीं आसकता, आप निरामिष भोजी हैं और सब को यही सम्मति देते जाते हैं। खेल दिखलाने के अनन्तर आप चावल, दाल, शाक का भोजन करते हैं, किसी समय जल और कभी सोडा पीते हैं, चाय कहवा, नारियल, कोई नशीली चीज़ अथवा मद्य का कभी प्रयोग नहीं करते। खेल खतम होते ही आप सोते नहीं, हमेशा २ बजे रात को सोते हैं और ठीक ६ बजे उठते हैं। उठते ही शौच इत्यादि से निवृत होकर दो घन्टे फिर सोते हैं और ८ बजे उठ कर आप बादाम, मग्जियात, काली मिर्च-मीठा की बनी हुई एक सेर के लगभग ठंडाई पीते हैं इस के एक घंटे बाद एक पाव मक्खन खाते हैं, इसके अनन्तर आप

"प्राणायाम" का अभ्यास करते हैं और दो तीन घन्टों तक तमाम चित्त वृत्तियों को एक जगह रोक देते हैं। ऐसा करते २ अब इनकी मानसिक शक्ति इतनी प्रबल है कि जो चाहें वह करसकते हैं। योग में बड़ा बल है। **आपका कथन है कि मानसिक शक्ति का बढाना ही एक साधन है, जिस से मनुष्य सब कुछ कर सकता है।** आप दिनका भोजन १ बजे करते हैं और फिर ४ बजे ठंडाई पीते हैं और कुछ शीरीनी भी खाते हैं.

आपके सद्विचार—भारतीय भीम प्राचीन बातों को मानते हैं। आप ब्रह्मचर्य को सब से श्रेष्ठ बतलाते हैं। आपका कथन है कि [ब्रह्म]चर्य से पूर्व विवाह कभी न करना चाहिये। आप अबतक ब्रह्म-[चा]री हैं और तबतक ब्रह्मचारी रहना चाहते हैं जब तक खेल [दिख]लावेंगे। आपका निज विचार है कि मान्सिक वृत्तियों के रोकने [औ]र ब्रह्मचर्य के बिना कभी भी बल नहीं आसकता। जिस समय [कस]रत की जावे उसीका ध्यान रखना चाहिये, इसके बिना आरो-[ग्य]ता और बल प्राप्ति का साधन अन्य कोई नहीं.

देशभक्ति—आप बड़े देशभक्त हैं। जहां२आप ने खेल दिखाये

हमेशा देशोन्नति करने वाली संस्थाओं को बड़े २ दान दिये हैं। आप को बड़ा खेद होता है जब आप देखते हैं कि हम लोगों की शारीरिक अवस्था हीन दशा में है। आप बाल विवाह के बड़े विरुद्ध हैं। आपका विचार है कि इस देश में किसी स्थान पर शारीरिकोन्नति के साधन सिखाने के लिये एक कालिज खोला जावे और इसके लिये आप अपनी आय में से कुछ धन एकत्रित करते जा रहे हैं।

—o—

दयानन्द हाई स्कूल खुल गया।

काशी में जिस स्कूल के खोलने का विचार होरहा था वह गत ९ जूलाई से नियमित खोल दिया गया। स्थान के न मिलने का जो कष्ट था वह भी दूर होगया। इस समय स्कूल एक विशाल भवन में खुला है। सामान भी काफी बनकर आगया है। दस अध्यापक इस समय स्टाफ पर काम कर रहे हैं। श्रीयुत विष्णु भास्कर केलकर बी. ए. हेडमास्टर का काम कर रहे हैं। श्रीयुत पण्डित रामप्रसाद त्रिपाठी बी. ए. श्रीयुत विजय कुमार बोस बी. ए. प्रभृति सज्जन अंगरेज़ी विभाग में और श्रीयुत पण्डित महावीर प्रसाद मिश्र साहित्योपाध्याय हेड संस्कृत पण्डित का काम कर रहे हैं। इनके अतिरिक्त शेष अध्यापक भी सुविज्ञ और पूराने अनुभवी पुरुष हैं। लड़कों की संख्या दिनों दिन बढ़ती जाती है। बाहर के विद्यार्थियों के सुविधा के लिये

वैदिक आश्रम

भी खोला गया है, जिसमें दाखिला की फीस आठ रुपये और १२ रु. मासिक फीस निश्चित की गई है। बाहर के विद्यार्थियों के लिये और विशेष कर आर्य्य विद्यार्थियों केलिये समुचित प्रबन्ध है। नियमित प्रातः और सायंकाल दोनों समय संध्या और हवन का प्रबन्ध है। आशा है कि समीप के आर्य्य पुरुष अपने बच्चों को भेज कर लाभ उठावेंगे।

संस्कृत पाठशाला विभाग।

उन विद्यार्थियों के लिये जो काशी में व्याकरण, दर्शन, काव्य ग्रन्थादि पढ़ने के लिये आते हैं इसी दयानन्द हाई स्कूल के साथ साथ संस्कृत विभाग भी खोल दिया गया है। जहां विद्यार्थी नियमित

संस्कृत पढ़ेंगे और उनके लिये नित्य एक घण्टा अंगरेजी पढ़ाने के लिये भी रखा गया है।

सामाजिक समाचार।

काशी ज़िला वेद प्रचार। आर्य्य समाज काशी ने बनारस ज़िला में वेद प्रचारार्थ एक भजन मण्डली रख ली है। महाराय कुवेर सिंह और महाशय दामोदर सिंह जो कुछ काल से जौनपूर भजन मण्डली में काम करते थे अब वह बनारस आर्य्य समाज की भजन मण्डली में सम्मिलित हो गये हैं। इस भजन मण्डली का मुख्य कार्य्य काशी ज़िला में घूम घूम कर वेद प्रचार करना होगा। समय समय पर काशी आर्य्य समाज के सदस्य तथा वह विद्यार्थी जो उपदेशक बनने के लिये यहां तय्यार हो रहे हैं इस भजन मण्डली के साथ ग्राम ग्राम में जाकर वेद प्रचार किया करेंगे। बनारस ज़िला के उन सज्जनों को जिन्हें अपने ग्रामों और कसबों में प्रचार कराना अभीष्ट हो उचित है कि वह मन्त्री आर्य्य समाज काशी से पत्र व्यवहार करें ताकि प्रोग्राम में उनके नाम लिख लिये जावें और उन्हें सूचना दी जावे कि कब तक उनके यहां प्रचार का प्रबन्ध हो सकेगा।

वाहिरामजी मालाबारी एक सुप्रसिद्ध सज्जन थे। आप कई वर्षों से बम्बई की सामाजिक दशा को सुधारने में अग्रसर थे। आप सुधारकों के शिरोमणि थे। गुप्त दान देने और चुपके चुपके दुखियों के दुख को मिटाने में आप विख्यात थे। आप ने सेवा सदन बम्बई को स्थापित किया। अभी इन का देहान्त शिमला में हुआ है। शव के साथ श्रीमान छोटे लाट अपने सदस्यों को लिये हुए श्मशान तक गये थे। शव पर चढाने के लिये श्रीमान् वायसराय महोदय ने भी पुष्प माला भेजी थी।

हिन्दु विश्व विद्यालय का कार्य्य फिर उत्साह पूर्वक हो रहा है। महाराज काशमीर ने ३½ लाख, ग्वालियार और इन्दौर ने पांच पांच लाख दान देकर अनन्य उत्साह दिखलाया है। राय बरेली तथा लखनऊ आदि स्थानों में भी सफलता हुई हैं। आशा है कि शीघ्र चन्दों का धन एक करोड तक पहुंच जायेगा। यदि नकद देने में भी महोदय अग्रसर हों तो कार्य्य में शीघ्रता हो।

नैनी ताल आर्य्य समाज ने अन्य कई आर्य्य समाजों के समान पीली भीत के अत्यचार के सम्बन्ध में एक मीटिङ्ग करके प्रस्ताव पास किया और उसे संयुक्त प्रान्त के लाट महोदय की सेवा में भेज दिया है। यदि अल्लाहाबाद और नैना ताल के आर्य्य पुरुष गवर्नमेन्ट के कर्मचारियों तक अपनी आवाज को पहुंचा सकें तो न्याय की इच्छा करने वाले आर्य्य पुरुषों को बडी सुविधा हो। हाईकोर्ट ने तो कलकटर महोदय के हुक्म को नाजायज करार दे दिया है अब देखें, गवर्नमेन्ट क्या निश्चय करती है।

बदायूं के गुरुकुल के सम्बन्ध में हमारे पास खराब समाचार आरहे हैं। यदि वहां के संचालक इस संस्था को सुविधा से नहीं चला सकें तो उन्हें उचित है कि पाठशाला रुप में करके किसी बड़ी संस्था के साथ उस का सम्बन्ध जोड दें।

श्रायुत पण्डित गणपति जी शर्म्मा की असामयिक मृत्यु पर प्रायः सभी समाजों ने शोक के प्रस्ताव पास किये हैं। पण्डित जी एक योग्य संस्कृतज्ञ थे। आपने आर्य्य समाजों में अपने उत्तम गुणों के कारण बडी प्रतिष्ठा प्राप्त की थी। आप का इस अल्पायु में वियोग हृदय विदारक घटना है। आर्य्य समाज के सेवकों को आत्मोन्नति उन्नति करते हुए शारीरिकोन्नति का भी यथेष्ट ध्यान रखना चाहिये।

बनारस में कलकत्ता का दृश्य

काशी एक पुरातन नगरी है। दो हज़ार वर्ष बीते जो भारतवर्ष की सभ्यता उस समय थी वही दृश्य आज काशी में मिलता है। नवीन सभ्यता का प्रवेश यहां शनैः शनैः होता है। गत एप्रेल मास में अन्नपूर्णा फारमेसी के अध्यक्ष मिस्टर हलडर ने एक वृहत औषधि भण्डार बनवाने के लिये उद्योग किया है और उसकी नीव डाक्टर कर्नल क्राफर्ड सिविल सर्जन से डलवाई है। आशा है कि अन्य व्यवसाय वाले भी हल्दर महोदय का अनुकरण करेंगे उन की ब्रांच डिस्पेन्सरी और बडा कार्य्यालय दोनों कामयाबी से चल रहे हैं।

वर की ज़रूरत।

एक जैसवाल—कलवार कुलोत्पन्ना विवाह योग्य कुमारी के लिये जो अपर प्राईमरी तक शिक्षा पाचुकी है और गृह कार्य्य को भली भान्ति जानती है एक योग्य वर की ज़रूरत है वर कलवारों की किसी जात का हो। पत्र व्यवहार महाशय बैद्यनाथजी गुप्त मन्त्री आर्य्य समाज मिरज़ापुर से करें।

Printed by Pt. Baijnath Jijja, Manager at the Tara Printing Works

नवजीवन

—:o:—

गत वर्ष के नवजीवन की सजिल्द किताब तय्यार हो गई है। अनुमान ७५० पृष्ठ की पुस्तक भिन्न २ विषयों से अलङ्कृत है। मूल्य नवीन ग्राहकों के लिये केवल २) रु० मात्र। शीघ्र मंगवावें, क्योंकि थोड़ी सी कापियां तय्यार हुई है।

भारत की वीर माताएं

पं. ललिता प्रसाद जी द्वारा संगृहीत। २७० पृष्ठ की पुस्तक। भिन्न भिन्न स्थान की वीर माताओं के वृतान्त। मूल्य केवल ॥≡) मात्र।

मिलने का पताः—प्रबन्धकर्त्ता नवजीवन।

एक बार अवश्य पढ़िये।

बनारस का बना हुआ हर क़िस्म का माल जैसे रेशमी साड़ी जरी की व सादी, पीताम्बर, चद्दर जनाना व मरदाना, डुपट्टा (सेल्हा) साफा सादे व जरी के काम के।

काशीसिल्क के थान, मेरठ की व बनारसी पक्के काम की टोपियां, जरमन सिलवर, पीतल, एल्मोनियम के बरतन नक्शी व सादे व जर्मन सिलवर, पीतल के हर किस्म के जेवरात सुनहरे व रुपहले, सुरती की गोलियां, सूंघने व पीने का तम्बाखू, हर तरह के लकड़ी व हाथी दांत के खिलौने, टिकुली, बिन्दी, ईंगुर, सेंदुर वगैरह हमारे यहां से किफायत भाव से भेजे जाते हैं।

हर चीज का भाव जानने के लिये)॥ का टिकट भेजकर हमारा बड़ा सूचीपत्र मंगाकर देखो।

पताः—महादेवप्रसाद एण्ड एम० पी० आर्य्य

जनरल मर्चेन्ट एण्ड सप्लायर,

सराय हड़हा. बनारस सिटी।

नवजीवन बुक डिपो काशी।

हमारे नवजीवन बुक डिपो में स्त्री शिक्षा की तथा अन्य उत्तम २ पुस्तकें विक्रयार्थ मंगाई गई हैं। अब ऐसा सुप्रबन्ध हो गया है कि मांग के साथ ही पुस्तकें तुरंत भेज दी जाती हैं। पाठक यह विचार रक्खें नवजीवन का जैसा धार्म्मिक तथा सामाजिक उद्देश्य है वैसी ही उत्तम २ पुस्तकें यहां से मिलती हैं। कुछ पुस्तकों का सूचीपत्र यहां दिया जाता है। ५) रुपये से अधिकके खरीदने वालों को उचित कमीशन भी दिया जाता है। जो लोग पुस्तकें मंगाना चाहते हैं वे निम्न लिखित पते से मंगावें:—

मैनेजर नवजीवन बुकडिपो काशी।

—: पुस्तकों का सूचीपत्र ०—

१ सीता चरित्र ५ भाग पृष्ट ७०० के लगभग—— १।।।=)
२ नारायणी शिक्षा— १।)
३ स्त्री सुबोधिनी १।)
४ नारी धर्म विचार १ भाग ।।)
... ... २ भाग १)
५ महिला मंडल २ भाग ।।।)
६ रमणी पंचरत्न ।)
७ गर्भ रक्षा विधान ।।)
८ गर्भ रक्षा =)
९ वनिता विनोद १)
१० भारत की वीर तथा विदुषी स्त्रियां २ भाग ।।=)।।
११ सच्ची देवियां ।=)
१२ चन्द्रकला सच्चा उपन्यास।)
१३ लक्ष्मी एक रोचक और शिक्षा प्रद उपन्यास ।)
१५ रमणी रत्नमाला ।=)
सत्यार्थ प्रकाश १)

ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका
संस्कार विधि
महाबीर जी का जीवनचरित्र
महात्मा बुद्ध का जीवनचरित्र
भीष्म का जीवनचरित्र
वीर्य्य रक्षा
उपदेश मंजरी
स्वामीजी का जीवन
श्री रामविलास शारदाकृत
धर्म शिक्षा १ भाग
वीरबालक अभिमन्यु
हलदी घाटी की लड़ाई
राणा प्रतापसिंह की वीरता
एकान्त वासी योगी
भारत की वीर मातायें मूल्य
आर्य्यों का आत्मिक उत्सर्ग
प्रोफेसर राममूर्ति की कसरतें
और अन्य २ पुस्तकें मंगाने का
मैनेजर नवजीवन बुकडिपो

Printed by Pdt. Baij Nath Jijja, Manager, T. P. Works, Benares

[ओ३म्] रजिस्टर्ड नं० ए. ४७४

...नि यदि भानुः पश्चिमे दिग्विभागे
... यदि मेरुः शीततां याति वन्हिः ।

Nawajiwan

सम्पादक—केशवदेवशास्त्री

विषय सूची ।

भाग ४ (अगस्त १९१२) अङ्क, ५

वार्षिक मूल्य ... ... ३) रु०
एक प्रति का मूल्य ... ... ।-)

नवजीवन

—:o:—

गत वर्ष के नवजीवन की सजिल्द किताब तय्यार हो गई है । अनुमान ७५ [illegible] पुस्तक भिन्न २

रक्खें नवजीवन का जैसा धार्मिक तथा सामाजि[illegible] ग्राहकों के हां उत्तम २ पुस्तकें यहां से मिलती हैं । कुछ पु[illegible] मंगवावें, क्योंकि यहां दिया जाता है । ५) रुपये से अधिकके खर्[illegible]

भारत की वीर माताएं

पं. ललिता प्रसाद जी द्वारा संगृहीत । २७० पृष्ठ की पुस्तक । भिन्न भिन्न स्थान की वीर माताओं के वृतान्त । मूल्य केवल ॥≡) मात्र ।

मिलने का पताः—प्रबन्धकर्त्ता नवजीवन ।

एक बार अवश्य पढ़िये ।

बनारस का बना हुआ हर किस्म का माल जैसे रेशमी सा[illegible] जरी की व सादी, पीताम्बर, चद्दर जनाना व मरदाना, दु[illegible] (सेल्हा) साफा सादे व जरी के काम के ।

काशीसिल्क के थान, मेरठ की व बनारसी पक्के काम[illegible] टोपियां, जरमन सिलवर, पीतल, एल्मोनियम के बरतन न[illegible] सादे व जर्मन सिलवर, पीतल के हर किस्म के जेवरात सु[illegible] व रुपहले, सुरती की गोलियां, सूंघने व पीने का तम्बाकू[illegible] तरह के लकड़ी व हाथी दांत के खिलौने, टिकुली, बिन्दी, [illegible] सेंदुर वगैरह हमारे यहां से किफायत भाव से भेजे जाते हैं ।

हर चीज का भाव जानने के लिये)॥ का टिकट भेज[illegible] हमारा बड़ा सूचीपत्र मंगाकर देखो ।

पताः—महादेवप्रसाद एण्ड एम० पी० [illegible]

जनरल मर्चेन्ट एण्ड सप्लायर्[illegible]

सराय हड़हा, बनारस सि[illegible]

ओ३म्

उदयति यदि भानुः पश्चिमे दिग्विभागे
प्रचलति यदि मेरुः शीततां याति वन्हिः।
विकसति यदि पद्मं पर्वताग्रे शिलायां
न भवति पुनरुक्तं भाषितं सज्जनानाम् ॥

भाग ४. | अगस्त, १९१२ | अङ्क ५

प्रार्थना।

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ॥

परमात्मन्! मनुष्य देह में आप ने अनन्त शक्तियों का संचार किया है। ब्रह्माण्ड में कौन सा ऐसा नियम कौन सी ऐसी अद्भुत रचना, कौन सी शक्ति और कौन सी विचित्र कार्य है जिस का आवेश इस मनुष्य देह में नहीं पाया जाता। इस शरीर की कला कौशल को देख कर बड़े से बड़े वैज्ञानिक भी चकित हो जाते हैं परन्तु हम ऐसे हैं जो मनुष्य मनुष्य के अन्दर अन्तरों को बढ़ाते जाते हैं और मिलकर आप की आज्ञाओं का पालन करने में तत्पर नहीं होते। मनुष्यों में परस्पर प्रेम का एक मात्र कारण यह होता है कि उन में विचारों, उद्देश्यों और अभीष्ट वस्तुओं में समानता होती है। कृपया हमें बल प्रदान कीजिये कि हम भी नित्यप्रति यही विचार रखें कि सब मनुष्य सदाचारी हों सब के आचरण, उनके मन, उनके हृदय समान हों और सब एक मार्ग पर चलते हुए आप के यश का गायन करें—

ओं शम्।

उपदेश ।

समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं
मनः सह चित्तमेषाम् ।
समानं मन्त्रमभि मन्त्रये वः समानेन
वो हविषा जुहोमि ॥

ऋग्वेद के दश मण्डल हैं । दशवें मण्डल की समाप्ति पर चार ऐसे मन्त्र मिलते हैं जो मनुष्य जीवन को उन्नत करने की कुंजी है उन में से एक मन्त्र ऊपर दिया गया है । विचार करने से ज्ञात होगा कि व्यक्तियों और जातियों की उन्नति का एक मात्र कारण परस्पर की समानता है । जिस देश में एक भाषा नहीं जहां के लोगों के आचार व्यवहार समान नहीं और जहां के मनुष्यों ने एक प्रकार के उद्देश्य सम्मुख नहीं रखें उन पुरुषों या जातियों के साधन कदापि समान नहीं हो सक्ते । भारत वर्ष की आपत्ति पर विचार करो ज्ञात होगा कि अंग्रेजों के आने से पहिले पञ्जाबियों, मरहटों और बंङ्गालियों में कितना अन्तर था । आज भी जहां एक प्रकार की शिक्षा नहीं वहां हिन्दू और मुसलमानों में कितना अन्तर विदित होता है । शास्त्र निस्सन्देह सत्य का ज्ञान देते हैं परन्तु उन शास्त्रों से लाभ ही क्या जो मनुष्यों के हृदयों को एक लड़ी में परोदेने का कार्य्य नहीं करते । परमात्मा की आज्ञा यही है और इस आज्ञा को भगवान ने ऋग्वेद के सम्पूर्ण ज्ञान प्रदान कर चुकने के अनन्तर प्रगट किया है कि मनुष्य, मनुष्य में, परिवारों में और जातियों में परस्पर मेल तथा उन्नति करने का एक मात्र साधन यही है कि लोगों को एक सी शिक्षा प्रदान की जावे, उन के मिलने जुलने और विचार करने की रीति एक प्रकार की हो, जिस प्रकार परमात्मा ने सब के कल्याण के लिये एक ही सदुपदेश दिया है इसी प्रकार हम भी सत्य के प्रचार पर तत्पर हों ताकि अन्य पुरुष भी सत्यगामी, सत्यवादी और सत्यकारी बन कर हमारे सदृश ही सोचें । हमारे समान ही उनके आचार व्यवहार हों और हमारे तुल्य उनका जीवन बने । यदि संसार मात्र में एक ही प्रकार की शिक्षा हो तो वैर भाव और मत भेद बहुत कुछ घट जावें । वैदिक धर्म आबाल वृद्ध सब को एक प्रकार की शिक्षा

और धर्म का आदेश देता है । इसी धर्म के प्रचार से जगत में शान्ति फैल सकी है तब क्यों न हम लोग जो वैदिक धर्म को धारण किये हैं अपने आचरणों और कथन से वैदिक धर्म के प्रचार में अग्रसर हों ! आओ ! आर्य्य पुरुषो ! यथा सम्भव मनुष्यों को समानता जीवन सिखलाने की चेष्टा करें ।

——o——

समालोचना ।

भारत की प्राचीन झलक:—प्रथम भाग, श्रीयुत महाशय हरि दास जी माणिक प्रणीत । ग्रन्थ में पांच विषय दिये गये हैं । अर्थात् शरणागत के लिये युद्ध, रानी कलावती, राणा चण्ड की वीरता, वीर क्षत्रानी जौहर बाई और परोपकारी पुरोहित इन विषयों के पढ़ने से ही ज्ञात होसकता है कि ग्रन्थ प्रणेता ने अपने भावों को किस ओजस्विनी भाषा द्वारा वर्णन किया होगा । पुस्तक प्रणेता ने ग्रन्थ के द्वितीय नामकरण करने में ग्रन्थ के उद्देश्य को भली भांति स्पष्ट कर दिया है, इसका दूसरा नाम आर्य्यों का आत्मोत्सर्ग है । ग्रन्थ की छपाई लिखाई उत्तम है । मूल्य ।।) मात्र

मिलने का पता—ग्रन्थकर्ता या नवजीवन बुकडिपो-काशी ।

रामाभिषेक नाटक—प्रणेता और प्रकाशक श्रीयुत महाशय गंगा प्रसाद गुप्त सम्पादक हिन्दी साहित्य—बनारस सिटी । हिन्दी साहित्य के पाठकों ने क्रमशः इस नाटक को हिन्दी साहित्य में पढ़ लिया होगा । उन्हीं लेखों का संग्रह कर गुप्त महोदय ने इस नाटक को पुस्तकाकार छापा है मूल्य ।।) मात्र मिलने का पता—'प्रकाशक काशी'।

सार्वधर्म तथा सृष्टि कर्तृत्व मीमांसा—कुछ काल से स्यावाद वारिधि पं० गोपालदास जी वरैया भिन्न २ नगरों में जाकर इन विषयों पर व्याख्यान दे रहे हैं। अभी पिछले दिनों में आपने स्वामी दर्शनानन्दजी के साथ अजमेर में शास्त्रार्थ किया । इन ट्रैक्टों में सिद्ध करने की चेष्टा की गई है कि सृष्टिकर्ता कोई नहीं और न यह सृष्टि कभी बनी है बिज्ञान और फिलासफी का नाम लेकर वरैया महोदय ने अपने परिमित ज्ञान का परिचय दिया है । दूसरे ट्रैक्ट में यह बतलाने की चेष्टा की है कि स्यादवाद जैन धर्म्म ही

ऐसा धर्म है जो सारे संसार के लिये ग्राह्य हो सकता है। हमारे पण्डित जी के विचारों से बहुत मतभेद है परन्तु कलकत्ता में जैसे आपने महर्षि दयानन्द सरस्वती के उपकारों को माना था यदि वैसे ही आप सत्यवक्ता हैं तो यह अन्तर चिरस्थायी सिद्ध न होगा।

हिन्दी वर्णमाला—श्रीयुत महाशय अयोध्याप्रसाद जी कलकत्ता निवासी ने एक प्रगाढ़ और अत्यावश्यक विषय पर अपने विचारों को प्रगट किया है। आपका ख्याल यह है कि वर्तमान हिन्दी वर्ण परिचय में कुछ ऐसी त्रुटियां हैं जिनके कारण विदेशीय भाषा के सम्पूर्ण शब्द भली भान्ति उच्चारण नहीं होसक्ते। उन्हों ने कुछ साधन भी बतलाये हैं। हमारा विचार है कि ऐसे गूढ़ विषय पर सचित्र लेख निकलना चाहिये। जिससे सर्व साधारण को सोचने का अवसर मिले आशा है कि महाशय अयोध्याप्रसाद जी शीघ्र ही नवजीवन के लिये एक लेख लिखेंगे।

किन्डर गार्टन बुक—पण्डित देवीदत्त कन्याल, टीचर मौजा महरागांव—डाकखाना भुवाली जिला नैनीताल ने बच्चों की सुविधा के लिये अक्षर बनाने के नवीन साधन उपस्थित किये हैं। कुल मिलाकर २४ टुकड़े हैं। इनके जोड़ने से नागरी, उर्दू, अंगरेजी, गुजराती व सराफी के अक्षर और १० तक के अङ्क तय्यार हो जाते हैं। बच्चों का खेल और अक्षरों का परिचय शीघ्रता पूर्वक होजाता है। मूल्य वक्स का १) मात्र है। उक्त पण्डित जी का पुरुषार्थ प्रशंसनीय है।

शान्ता—लेखक ओंकारनाथ वाजपेयी, मिलने का पता ओंकार प्रेस अल्लाहाबाद और नवजीवन बुकडिपो काशी। इस ग्रन्थ में स्त्रियों के लिये अनेक उपयोगी शिक्षाओं को सरल हिन्दी भाषा द्वारा उपस्थित किया गया है। ग्रन्थ में स्थान स्थान पर भिन्न भिन्न व्यक्तियों के बीच बात चीत का क्रम मिलता हैं जिससे और भी समझने में सुगमता होगई है। छपाई और कागज़ सुन्दर है। मूल्य केवल आठआना मात्र।

दो कन्याओं की बात चीत—इस लघुट्रेक्ट में लेखक महोदय

ने कन्याओं के विद्या प्राप्त के लाभ बतला कर प्रेरणा की है कि वह दत्त चित होकर अमूल्य समय को विद्यारूपी धन के उपलब्ध करने में लगावें। पुस्तक पण्डित ओंकारनाथ वाजपेयी जी लेखक से ओंकार प्रेस अल्लाहाबाद के पते मिल सकती है।

सम्पादकीय वक्तव्य।

कामयाबी का भेद।

मनुष्य के उद्देश्य उसकी अपनी राय का प्रतिबिम्ब होता है। जो मनुष्य अपने आप को तुच्छ समझता है उसका जीवन में कोई उद्देश्य होता ही नहीं। उसकी दशा उस गिरे हुए तिनके के समान होती है जो विवश होकर जीवनरूपी नदी में बहता चला जाता है। परन्तु जो मनुष्य अपने आप को तथा अपने कार्य्य के मूल्य को समझता है वह तेज़ से तेज़ लहर का मुकाबला करता और विरोध करता हुआ अपना मार्ग निकाल ही लेता है। विचारो तो सही, बलवान और दुर्बल में अन्तर किस बात का है। बलवान में केवल इच्छा शक्ति प्रबल होती है। जब उसने दृढ़ संकल्प कर लिया और अपना उद्देश्य बना लिया तो या तो सफलता होगी या मृत्यु ही उसे अपने उद्देश्य से हटावेगी। इसी शक्ति द्वारा संसार में दुस्तर, प्राप्य और दुःसाध्य सब क्रियाएं निष्पादन हो जाती हैं और यदि यह शक्ति विद्यमान नहीं है तो चाहे कितना धन, कितनी योग्यता और कितने ही साधन उपस्थित क्यों न हों मनुष्य मनुष्य कदापि नहीं कहला सक्ता।

———:o:———

स्वयम पात्र बन कर दिखलाओ।

यदि आप उस कार्य्य का निष्पादन नहीं कर सक्ते जिसे आप करना चाहते हैं तो निश्चय जानिये आप उस काम के अभी योग्य नहीं हैं। अपने कर्तव्य को प्रेम से पालन करो, पूर्णतया उसे स्वयम सम्पादन करो, उसे ऐसा सुन्दर बनाओ कि जो आजतक किसी ने न किया हो। उस काम में उन गुणों का संचार करो जिन्हें आप अपनी कल्पना शक्ति द्वारा सोच सक्ते हैं। उस कार्य्य में ऐसी लगन से लग जाओ कि जब तक सफलता न हो, उसे मत छोड़ो। इस प्रकार हम में से प्रत्येक मनुष्य स्वास्थ्य, सुख और धन को प्राप्त करसक्ता है। जब तक आप अपने पहिले काम को उत्त-

मता पूर्वक नहीं निभाते, आपको उससे अच्छा काम नहीं मिलेगा। संसार का कोई व्यवसाय हो जहां भी काम करो उसे उत्तमता से करो ताकि उस से उन्नति करने के लिये गुणग्राही लोग आपका सम्मान करें। अपने कामको सब से सुन्दर बनाने के लिये साधनों को सीखो और उन्हें प्रयोग में लाने की चेष्टा करो। समय आयगा जब कि आप को विदित होगा कि इस प्रकार लगाया हुआ धन और शक्ति निष्फल नहीं गया और यह कि आप इसी प्रकार अपनी उन्नति का मार्ग पा सके हैं।

शक्ति की रक्षा करना सीखो।

भारतवर्ष में सहस्रों शताब्दियों से स्त्री का शक्ति के नाम से सम्बोधन किया जाता है। इसी लिये देवियों को भी प्रायः शक्ति और उनके उपासकों को शक्ति के उपासक माना जाता है। प्रत्येक प्राणी शक्ति से सुसंपन्न हैं। उसका जीवन शक्तिमय है इस शक्ति को हम अनेक प्रकार से खर्चते हैं। बुरे अथवा भले कार्य्य शक्ति द्वारा ही निष्पादन होते हैं। हम अपनी शक्ति को एकत्रित कर के बढ़ा भी सकते हैं। लोग निन्दा, स्तुति, लड़ाई, झगड़े में अपनी शक्ति को नाश करते हैं। अधीर बन कर, क्रोध से परितप्त होकर अथवा शोकातुर बन कर हम अपनी शक्ति का विनाश करते हैं। मनुष्य के लिये मानसिक तथा शारीरिक शक्ति ही परम धन है। इसी की विद्य मानता पर जीवन का कार्य्य और कृतकृत्यता का आधार है। हम लोग जैसे अपने जीवनके लिये नियम बनाते हैं वैसे ही यह शक्ति न्यूनाधिक खर्च होती है। आप स्वयम अपने व्यवहार रूपी घड़े में कहीं कहीं छिद्र बना रखते हैं जिसके द्वारा आप का तेज विनिस्तृत होता जाता है। यह सम्भव है कि आप स्वयम अपने छिद्रों को न जानते हों कहीं कहीं तो इतने बड़े सुराख हैं कि आप का तेज नष्ट होता जाता है। अपने इर्द गिर्द दृष्टि डालो, उन स्थानों को ध्यान पूर्वक देखो जहां आप की द्विगुणी शक्ति लग रही है। द्वेष, क्रोध, बदला लेना आदि निन्दित भावों द्वारा आप अपने सारे तेज को अस्त व्यस्त कर रहे हैं। अपने जीवन के उद्देश्य को स्पष्ट बना कर अपने मन के सामने रखो उसी के निष्पादन में अपनी शक्तियों को लगा दो। जो मनुष्य बिना किसी नियत और निश्चित आदर्श के काम करता है वह बुरी तरह अपनी सारी शक्ति का नाश कर रहा है।

हमारे जीवन का मूल्य क्या ।

जीवन किस लिये है जीवन है कर्तव्य पालन के लिये, न कि मोह करने और धन संग्रह करने के लिये। जीवन को आप प्रकाश समझिये। प्रकाश को अपने लिये रख छोड़ने और दूसरे को उससे लाभ न उठाने देना कितनी मूर्खता है। मनुष्य अहंकार वश चाहता है कि प्रकाश मेरे ही वश में रहे और मैं ही इससे लाभ उठाऊं, परन्तु प्रकाश का तो स्वभाव ही फैलने का है। हम चाहते हैं कि हमारी समग्र शक्तियां स्वार्थ सिद्धि में लगें। हम अपना दायरा बना लेते हैं और उसी दायरे के अन्दर रह कर सुख दुख ढूंढते हैं परन्तु सृष्टि नियम हमें वहां से हटाते हैं और इसी कारण हम शोक सागर में डूब जाते हैं। जीवनरूपी लहिर को तो राग की तरङ्गों के समान वहना चाहिये, अस्तु, शान्ति और स्वतन्त्रता पूर्वक बहने से सुरीला स्वर निकलता है। संसार में शारीरिक और मानसिक शक्तियां काम कर रही हैं। प्राकृतिक सुख बिला प्रकृति के मिल [illegible] सक्ते। मानसिक सुखों के लिये आत्मिकोन्नति अनिवार्य्य है। यदि प्रकृति के उपभोग तथा मानसिक उन्नति द्वारा हम संसार में सुख नहीं पा सक्ते तो मनुष्य जीवन का फल क्या और उसका मूल्य भी क्या है ?

अपने मन को पवित्र बनाओ ।

यदि आप को ज्ञात होजावे कि आप के भले या बुरे विचारों को आपके मित्र वस्तुतः जानते हैं तो आप कभी भी किसी बुरे विचार का चिन्तन न करें। परन्तु आपका विश्वास है कि आपके मन की दशा दूसरों को ज्ञात नहीं हो सक्ती इसी लिये आप सज्जनों का सत्सङ्ग करते हुए भी मन में दुर्वासनाओं को स्थान दे रहे हैं। आपके मित्र आपकी चेष्टाओं और चिन्ताओं से कुछ जान जाते हैं और वह भी आप के बुरे भावों का एक भाग ले जाते हैं। क्या ही अच्छा हो यदि आप शुभ सङ्कल्पों को धारण करें और सोते, जागते, उठते, बैठते "तन्मे मनः शुभसंकल्पमस्तु" कहें। शुभ संकल्पों का उत्तम प्रभाव आपके तथा दूसरों के जीवन पर पड़ेगा। क्रमशः आपके सद्विचार दिनों दिन उत्तम, प्रबल और दृढ होते जावेंगे। यदि दृढता पूर्वक आप उन संस्कारों को अपने जीवन में परिणत कर सकेंगे तो आपका आत्मा दिव्य प्रकाश से प्रकाशित हो

जायगा और यह प्रकाश न केवल आप की आत्मा और शरीर को तेजस्वी बना देगा वरन इस तेज द्वारा सहस्रों प्राणियों को भी उपकार होगा।

सुमाटरा में पहिला ईसाई प्रचारक।

भारतवर्ष के दक्षिण पूर्व में जो द्वीपों का समूह है, उन में सुमाटरा और बड़े २ द्वीप हैं। सातवीं शताब्दी में इन द्वीपों में आर्य्यों का राज्य था। यहां से १४ वें शताब्दी पर्यन्त बराबर भारतवासियों से सम्बन्ध रहा। चौदहवीं शताब्दी में मुसलमानों ने बलात्कार लोगों को मुसलमान बनाया। तब से यहां के निवासी प्रायः मुसलमान हैं। इस द्वीप में सब से पहिले नाविनसन नामी पादरी अपनी धर्म पुस्तक के इंजील को ले गये थे। कहते हैं कि बाल्यावस्था में नाविनसन महोदय जब रुग्ण थे इन्होंने प्रतिज्ञा की थी कि यदि मैं बच निकला तो धर्म के प्रचार के लिये अपना जीवन प्रदान कर दूंगा। दैवयोग से यह स्वास्थ्य चित हो गये और १८६४ में सुमाटरा गये। सुमाटरा निवासियों ने इन्हें बड़े आश्चर्य के साथ देखा और पूछा कि तुम यहां क्यों और किस लिये आये हो उसने उत्तर दिया 'मैं यहां बसने और लोगों का ज्ञान तथा जीवन प्रदान करने के लिये आया हूं लोगों ने उसे समझाया कि तुम्हारा उपदेश निरर्थक जायगा, हम नहीं सुनेंगे, तुम क्यों अपना समय नष्ट करते हो, हां यह बतलाओ कि तुम यहां से कब जाओगे शीघ्र चले जाओ, अन्यथा हम तुम्हारा घर जला देंगे। पादरी बोला, यदि तुम घर जला दोगे तो मैं फिर बना लूंगा परन्तु रहूंगा यहां ही और आप लोगों की सेवा किया करूंगा। जब लोग उसे डराते, धमकाते और मार डालने की चेष्टा करते थे तो वहां गाकर और बाजा बजाकर लोगों को प्रसन्न कर लिया करता था। क्रमशः उसके धर्म भाव और विशेष कर सहनशीलता को देखकर बड़ों के कठोर दिल भी मोम के समान पिघलने लगे। वह पादरी के उपदेश को प्रेम से सुनने लगे। आज अनुमान ४० वर्ष के पश्चात सुमाटरा द्वीप में अनुमान १० लाख स्त्री पुरुष ईसाई धर्म के अनुयायी हैं। वैदिक धर्म्म के पथ पर चलने वाले इस नाविनसन महोदय के जीवन से शिक्षा उपलब्ध करें। अन्य सृष्टि नियमों के सदृश मनुष्यों के हृदयों को वशीभूत करने के भी नियम हैं।

महाराणी पद्मावती (पद्मिनी)

धन धन भारत की छत्रानी ।
वीर कन्यका वीर प्रसविनी वीर वधू जगजानी ।
सती शिरोमणि धर्म धुरधंर बुध बल धीरजखानी ।
इनके यश की तिहूं लोक में अमल ध्वजा फहिरानी ॥
धन धन भारत की छत्रानी—

(१)

आज बड़ा कोलाहल मच रहा है । अस्त्र शस्त्र से सुशोभित सहस्रों राजपूत लाल नेत्र किये मूछों पर ताव दे रहे हैं । भीड़ बढ़ती जाती है । किसी २ के मुख से क्रोध में कभी २ कुछ निकल जाती है कभी किसी का हाथ तलवार की मुठ पर जा पड़ता है । दूसरा आनंद में मग्न हो मूछों पर हाथ फेरता हुआ सर हिलाता है । तीसरा मुस्कुरा कर अपनी पगड़ी सम्भालता है । इसी प्रकार सब राजपूत मानों प्रलय करने को उत्सुक हो रहे हैं, परन्तु महाराणा भीमसिंह किसी गूढ़ विचार में सिंहासन पर विराजमान हैं । किसी की बात पर कुछ ध्यान नहीं दे रहे हैं । एक सैनिक पसीने से डुबा हुआ रक्त से भीगा हुआ बड़ी सावधानी से आया, महाराणा को प्रणाम किया, सर उठते ही उसने कहा "अन्नदाता जी ! आज के युद्ध में भी हमारी जय रही, यवन सेना परास्त हो कर रणक्षेत्र छोड़ कर भागी । हुजूर ! यदि शत्रु पीठ न दिखाते तो आज एक को भी हम लोग जीता न छोड़ते ।

"बस निकल गई सारी बीरता, कायर आलाउद्दीन छिः"

"दुष्टों को शरम तो है ही नहीं"

"प्रति दिन दुष्ट हारते हैं, परन्तु नीचता नहीं छोडते"

"महाराज ! अब तो मुसलमानों का साहस चित्तौर की ओर ... करने का न पडेगा । शत्रुओं का सारा सामान हमारे हाथ लग गया है',

दूत के इस वाक्य को सुन कर महाराज के मुख पर कुछ प्रसन्नता झलक दिखाई दी और सैनिकों की बात पर उन्होंने कुछ ध्यान न दिया था, परन्तु अब कुछ सोच कर बोले " फिर भी मुसल-

२

मानों का विश्वास नहीं. कपट तो उनकी धर्म शिक्षा है, छल अवश्य करेंगे "—

एक राजपूत तलवार म्यान से खींच कर आगे को बढ़ा " छल छल क्या राजपूतों को छल से जीतना भी दाल भात का गुल्ला है, जब तक एक २ राजपूत बच्चा भी जीता रहेगा दुष्टों को लोहे के चने चबा देगा "

" ठीक है ! कृष्णसिंह बहुत ठीक, चित्तौर को स्पर्श करना हूँ हूं- हूं अलाउद्दीन को छठी का दूध याद आ जावेगा "

" और क्या, और क्या. संसार में ऐसा कौन है जो हमको युद्ध में जीत सके। सम्मुख युद्ध में तो२० आलाउद्दीन हमारा सामना क्या करेंगे और फिर कपटाचरण से भी हमारे हाथ में तलवार रहते कोई हमारा क्या कर सकता है ? "

योहीं बात होही रही थी कि एक दूत ने समाचार दिया।

" महाराज आलाउद्दीन का पत्र आया है "

पत्र पढ़तेही महाराणा भीमसिंह आवेश से खड़े होगये। क्रोध में उनके मुख से वचन न निकलता था। पत्र को उन्हों ने फेंक दिया एक सैनिक ने उठा कर उस पत्र को पढ़ा और सब नंगी तलवारें लिये उसके मुख की ओर देख रहे थे।

" ओफ ! दुष्ट का इतनी साहस ! क्या अभी इसके सर से गरमी नहीं निकली— "

चारों ओर से " क्या है क्या है " की आवाज़ आने लगी। वह सैनिक बोला " पापी नीच लिखता है कि यदि श्री महाराणी जी का दर्शन-शीशों द्वारा भी उसे दे दिया जावे तो वह तुरन्त दिल्ली को लौट— "

अब क्या था, समस्त सभा सिंह नाद से गूँज उठी। सबके सब आवेश में आकर गूंजने लगे। महाराणी पद्मावती को यह समाचार पहुंचाया गया। उन्हों ने ध्यान पूर्वक उसे सुना और बहुत कुछ सोच विचार कर कहला भेजा " अल्लाउद्दीन की प्रार्थना स्वीकार की जाय। श्री महाराज ! मेरी बिनती पर ध्यान दिजिये, मैं नहीं चाहती कि मेरे कारण वीर राजपूतों का रक्त बहाया जावे " महाराणी की आज्ञा सुनकर सारी सभा ने अपना मस्तक झुका लिया। महाराणा जी ने सब के मुख की ओर देखा। फिर सिंहासन पर बै

कर कुछ विचार किया, कुछ समय पीछे मस्तक उठाया और बोले "अच्छा, खैर"

(२)

महाराणी पद्मावती सिंहल द्वीप के राजा हमीरशङ्क की कन्या थी। इनके सौन्दर्य्य और गुण की प्रशंसा चारों ओर फैल रही थी यहां तक कि पद्मिनी के मान ही सर्वाङ्ग सुन्दरी के आजकल हो रहे हैं। उस से बढ़कर रूप कोई ध्यान में भी नहीं लासक्ता। इन्हीं के कारण तमाम सिंहलद्वीप की स्त्रियां भारतवर्ष में विख्यात हो रही हैं। यदि किसी की बहुत प्रशंसा की जाती है और थोड़े में सब कुछ कहना होता है तो लोग कह देते हैं "वह तो सिंहल द्वीप की रानी है" यदि और भी अधिक प्रशंसा की गई तो उसकी उपमा महाराणी पद्मावती से दी जाती है। बस, यही सौन्दर्य का अन्त है। इस से अधिक रुप की प्रशंसा नहीं हो सक्ती। महाराणी पद्मावती का विवाह महाराणा भीमसिंह के साथ हुआ था। यह चितौर नरेश महाराणा लक्ष्मणसिंह के चचा थे और उनकी बाल्यावस्था में राजपाट का काम यही चलाते थे। उस समय अलाउद्दीन अपने चचा गयासुद्दीन को जिन्हों ने उसे पाला पोसा था छल से मार दिल्ली का राज करता था। पद्मावती के रूप रङ्ग की प्रशंसा सुन उन्मत हो एक विशाल सेना लेकर वह चित्तौर पर आ टूटा परन्तु हार पर हार खाता रहा। चित्तौर के बहादुर राजपूतों से आगे कुछ न चली। अन्त में उसे यही प्रार्थना करते बन पड़ा कि महाराणीजी का दर्शन शीशों द्वारा उसे दे दिया जावे। सारा बखेड़ा दूर करने को पद्मावती की आज्ञानुसार यह प्रार्थना स्वीकार की गई और अल्लाउद्दीन को निश्चय व अकेले चित्तौर में आने की आज्ञा मिल गई।

उस के एक खास मुसाहिब ने कहा "जहांपनाह! मेरी दानिस्त में गनीम के किले में हजूर का तनहा जाना मसलहत नहीं है" दूसरा बोला "गरीबपरवर! अगर खुदा न खास्ता शाह आलम के दुश्मनों को कुछ रंज पहुंचा तो हम लोग क्या करेंगे।" तीसरा बोला "बजा है बन्द: निवाज़ मेरी दानिस्त में भी—" अल्लाउद्दीन उपहास करके बोल उठा "तुम सब के सब बेवकूफ हो क्या तुम मुझ से भी ज्याद: अक्ल होगई। मैं राजपूतों को खूब जानता

हूं, वह लोग कभी दगा नहीं कर सक्ते । तुम नालायक मेरी बात मे दस्तअन्दाज़ी करते हो । क्या शामत ने घेरा है " बादशाह आंखें निकाल २ देखने लगा । सन्नाटा छा गया । जो लोग इधर उधर थे वह तो चुपके से खिसक गये बाकियों की जान के लाले पड़ गये कि किसी के सर उतारे जाने का तो हुक्म नहीं होता है ।

अल्लाउद्दीन चित्तौर में घुसा ! जो शत्रु कि वीर राजपूतों के भी मुख में कलङ्क कालिमा पोतने का यत्न कर रहा था आज उनका अतिथि था । चित्तौर नगरी सजाई गई । वीर राजपूतों ने भी अस्त्र शस्त्र उतार दिये, यवन सम्राट का बड़ा सत्कार किया गया । उसने राजपूतों का इतना विश्वास किया है । कहीं उसके मन में कुछ शङ्का न उत्पन्न हो । आइनों द्वारा महाराणी को उसने देखा " वाह २ " की झडी बांध दी । जितनी प्रशंसा सुनी थी उससे कहीं बढ़ चढ़ के उन्हें देख जी में ठान ली । कुछ हो पद्मावती को बेगम बनाऊंगा जी खोल महाराणी के सौन्दर्य की प्रशंसा करताहुआ अल्ला-उद्दीन अपने शिवर को लौटा । महाराणा भीम उसके साथ २ बहुत दूर तक चले गया । सहसा यवन सेना ने एक गुप्त स्थान से आ-क्रमण किया और महाराणा को बन्दी कर लिया । ओ पामर! अल्ला-उद्दीन ! क्या राजपूतों के पवित्र प्रगाढ विश्वास का यह बदला दिया। उसने कहला भेजा " जब तक पद्मावती मेरे पास नहीं चली आवेगी भीमसेन न छोड़े जावेंगे " ।

(३)

चित्तौर भर में मुसलमानों के कपटाचरण का समाचार फैल गया । उसके साथ ही साथ अल्लाउद्दीन के दुष्टता भरे वाक्य भी फैल गये । सब राजपूत हथियार ले अपने २ घरों से निकल आये । क्या उनके जीते जी मेवाड़ की लक्ष्मी का उपभोग मुसलमान अल्लाउद्दीन करेगा ? क्या वीर राजपूतों की नसों में पवित्र आर्य रक्त नहीं बहिता ? क्या अपने तलवार के प्रभाव से यवन सैन्य विध्वंस कर वे महाराणा जी को नहीं छुड़ा सक्ते ? सब के सब क्रोध से लाल हो रहे थे । यवन सेना लाखों है पर क्या कुछ सहस्र राजपूतों के तेज से वह भस्म न हो जावेगी ? फिर भी बिना सरदार की फौज है । कुछ करते धरते न बनता था । धीरे २ यह समाचार पद्मावती को मिला । उनकेचचा गोरा और भाई बादल चित्तौर ही में रहिते

थे। वे जैसे बहादुर थे वैसे ही समझदार भी थे। पद्मावती ने अकेले में उनसे परामर्श किया और अलाउद्दीन को लिख भेजा " मैं आपकी ही हूं, मुझे शोक है कि मेरे कारण आपको इतना कष्ट सहिना पड़ा अब मैं आपकी सेवा में आती हूं, परन्तु आप सम्राट हैं और मैं भी एक माननीय कुल की राज कन्या हूं इससे मुझे आपके शिवर तक पहुं-चाने को मेरी ७०० सहेलियां डोलियों में मेरे साथ आवेंगी। उनका उचित सत्कार किया जावे। कोई मुसलमान डोलियों के निकट न आने पावे। नहीं तो अन्तः पुर का नियम भंग होगा। अब चित्तौर का घेरा उठा दिया जावे। मैं तो स्वयम् आप से मिलने को व्याकुल हो रही हूं "।

पत्र पाते ही अल्लाउद्दीन नाचने लगा उसके कितने दिनों की आशा आज पूरी होगी, बिहिश्त की हुरसे अधिक रूपवती रमणी जिसके लिये उस ने इतना कष्ट सहा था और अंतमें निराश होगया था स्वयम उसके पास चली आती है और उससे वढकर यह कि उसके प्रेम में व्याकुल होरही है। नाच रंगका हुक्म होगया। डेरे सजाये गये। अगवानी को लोग भेजे गये। अल्लाउद्दीन बहुत वन ठन के बैठा। दुष्ट कपटाचारी के मन में यह विचार न आया कि हिन्दू रमणियां छाती में छुरी भोंकलेंगी, अग्नि में स्वाहा होजावेंगी, विश का प्याला चढ़ा जावेंगी परन्तु पर पुरुष का अंग स्पर्श न करेंगी। वह समझता था कि अपने यहां की स्त्रियों की भाँति राजपूत रमणियां भी दुराचारिणी होती होंगी। थोड़ेसे रुपये के लोभ से वशमें आजावेंगी। क्या पद्मावती बादशाह बेगम बनने की इच्छा नरखती रही होगी। क्यों नहीं, पर भीमसेन के भय से कुछ कह न सकी होगी, अब स्वतंत्र हूं तो अपना प्रेम प्रकट किये बिना न रह सकी। ओ दुरात्मन् अला उद्दीन! देख, संसार इस घटना से शिक्षाले, हिन्दू द्वेषी लोग सावधान होजावें। महाराणी पद्मावती क्षत्रिया है। उसने म्लेच्छ जात में जन्म नहीं लिया। कायर अलाउद्दीन के सारे मंसूबे रखे रहगये। महाराणी के साथ के ७०० डौला में और प्रत्येक डौलके छः२ कहारों के भेश में मेवाड का एक २ वीर शिरोमणि रत्न है, जो अपने प्राण विसर्जन करके अपनी जगत विख्यात परम सुन्दरी तथा वीर महाराणी के लिये यवन सैन्य के बीच में से अपने प्राण समान महाराणा को निकाल लाने को गया है। कपटी कपटता से ही ठीक रहिता है। अला

उद्दीन महाराणा भीमसेन को धोका देकर फूल रहा था। यह न जानता था कि एक राजपूत बाला भी अगर चाहेगी तो उसे वह खेल खिलायेगी जो उसे सदा याद रहेंगे और जो संसार के इतिहास में एक विचित्र शोभा देखावेंगे।

महाराणी की प्रार्थनानुसार उनको आध घंटे का समय मिला कि वे अपने पहिले पति से मिल आवें। महाराणा भीम सेन से सदा के लिये विदा हो आवें, धीरे २ एक बडी कनात के घेरे में डोलियां उतरने लगीं।

(४)

एक कारागार में बेडियों से जकड़े लोहेसे लदे, मुंह फेरे, एक भुजा से अपनी आंखों को ढांपे और दूसरीसे पदमावती को आगे बढने से रोकने को इशारा करते हुये महाराणा भीमसेन अपने क्रोध और व्याकुलता को बलपूर्वक रोके हुये खड़े हैं। पदमावती हाथ जोड़े मस्तक झुकाये आगे को बढ़ती ही चली आती है। जब बहुत निकट आगई तो महाराणा जी ने वेग से डाटकर कहा "कुलाङ्गारि नि! दूर रहो! क्या मेरे मरते हुये शरीर पर विश डालने आई है? ओफ! पदमावती ने झटसे छिपी हुई कटार निकाली "प्राणनाथ! विलम्बका समय नहीं है। सब पीछे विदित होजावेगा" कहके बेड़ियां काटने लगी। महाराणा जी की आंखें खुलीं। पदमावती सिसादीया कुल कलंकित करने नहीं आई है। बस. उसकी शोभा बढ़ाने आई है। अधिक बिलम्ब होने से अल्लाउद्दीन व्याकुल हो उठा। शंका उत्पन्न हुई। शंका होते ही क्रोध आया। न रहा गया। कारागार की ओर चल पड़ा। कारागार के निकट आना था कि वीर राजपूतों ने आक्रमण कर दिया। उसके साथ भी कुछ सेना थी, फिरभी यदि प्राण लेकर न भागा होता तो वहीं यमपुरी को सिधारा होता और देव भूमि भारतवर्ष को वरन समस्त संसार को अपने पाप से मुक्त कर गया होता, पर आर्य्य भूमि को और भी बुरे दिन देखना बदे थे। ऋषी सन्तान की और भी दुर्दशा परमेश्वर को करानी थी जिससे नर पिशाच यवन के प्राण बच गये।

शिवर के बाहर वहां एक घोड़ा बडी तेजी से निकला है। इस पर दो सवार हैं। वह विजली के समान उस पार होगया। आलाउद्दीन के प्राण सूख गये। हाय! उसकी सारी आशा मिट्टी में मिल गई। उसका काल स्वरूप महाराणा भी उसके हाथ से निकल गया, तुरन्त सेना

पीछे दौड़ाई गई, परन्तु वीर राजपूतों ने प्राण पर खेल कर उसके वेग को रोका, घोड़ा चित्तौर के भीतर पहुंचा। बड़ा भारी हर्षनाद हुआ। बाहर वाले राजपूतों ने जान लिया उनका कार्य सिद्ध होगया "हिन्दूपति की जय! आर्य्य वंशी की जय! क्षत्रिय कुल की जय" का कोलाहल करने लगे. "हर हर महादेव! महाराणा भीमसेन की महाराणी पद्मावती की जय" के नाद से पृथ्वी और शत्रुओं के हृदय को कंपायमान करता था। भीतर से उनकी सहयता को सेना पहुंची पर हा मुठी भर राजपूत कब तक लड़ते। जब उन्होंने जान लिया कि महाराणा और महाराणी दुर्ग में पहुंच गये तो हंसते २ अपने वंश का नाम और मान बढ़ाते हिन्दू कुल की रक्षा करते एकर कर के रणभुमि में गिरने लगे। बहुत ही थोड़े जीवित लौटकर आये बादल रक्त से नहाया हुआ था। घाओं से देह छिदी पड़ी थी। वह अपनी चची के पास आकर चुपचाप खड़ा होगया। गोरा की स्त्री बोली "बेटा! तुमको कुछ कहना न पड़ेगा, मैं सब समझ गई, हां बताओ! मेरे स्वामी ने रणक्षेत्र में कैसे प्राण त्याग किये" बारहलाल का लड़का बादल बोला "माता! हमारे चचा ने, बड़ी वीरता से शत्रुओं को नाश किया। सैकड़ों को यमलोक भेजा। उनकी कीर्ति देख सब चकित थे। मूली की भांति यवन सेना को उन्हों ने काट डाला। सिंह की न्याईं गरज २ शत्रुओं के प्राण लिये। सहस्रों मुसल्मान देह चक्र के भांति उनके चारो ओर पड़े हैं। कोई ताकिये के न्याईं उनके सर के नीचे हैं कोई बगल में कोई जंघा के नीचे मानों रणभूमि में विश्राम कर रहे हैं। मैं तो नाम मात्र था जो शत्रु उनसे बचते थे केवल उन्हीं का संहार करता था" गोरा की स्त्री ने फिर कहा "बेटा! एक बेर फिर कहो, हमारे स्वामी ने क्या २ कौतुक दिखाया" "माता! उन्होंने अपनी कीर्ति से शत्रु हृदय कंपा दिये। क्षत्रिय कुल का नाम रख लिया, मातृभूमि का उद्धार करलिया और देवता के समान अपनी कार्य्यसिद्धि करके स्वर्ग को चले गये"

"मेरे स्वामी देर होने से अकुलाते होंगे, नाथ! मैं आई।" चिता पर गोरा की स्त्री ने बालक बादल को गोद में उठाया। मस्तक का चुम्बन किया, प्यार करके फिर उतार दिया। कुछ मुस्कराई और बादल को देख हाथ जोड़ चिता में कूद पड़ी। बादल मस्तक झुकाये खड़ा रहा।

"मेरी सारी अक्ल पर धूल डाल गई। सारे आलम में मुझको पशेमां कर गई। खैर ! देख लूंगा, कब तक यों बचती रहेगी, जब तक चित्तौर को तहोबाला न करदूंगा। इस दुश्मने जानी भीम को बेइज्जत न कर डालूंगा उस हूर माहेलका को अपने महिलों में न ले लूंगा मुझको खाना पीना हराम है। कसम है कलामेशरीफ की, जो बिला अपने मंसूबे पूरे किये आराम से सोऊं। पद्मावती! तेरी शान के खिलाफ मैं कोई लफ्ज़ नहीं कहसक्ता मगर देखना! किस तरह तेरे मुल्क और खाविन्द को नेस्तानाबूद करके तुझे अपनी बेगम बनाऊंगा" योंही बैठा २ अल्लाउद्दीन सोचा करता था। बहुत जल्दी दूसरी विशाल सेना एकत्रित कर उसने चित्तौर फिर जा घेरा। हा! अब कौन चित्तौर की रक्षा करे! उस परम पवित्र स्थान को म्लेच्छों से कौन बचावे। स्वदेश प्रेम के मंत्र से उत्साहित हो कौन मुसलमानों को विध्वंस करे! सदा का स्वाधीन चित्तौर क्या अब अनाथ है? नहीं नहीं, यद्यपि मेवाड़ के वीर शिरोमणि पहिले युद्ध में मारे जा चुके थे फिर भी जब तक एक भी बच्चा चित्तौर में शस्त्र धारण करसकेगा क्या अपने देश में यवनों की विजय पताका फहराती देख सकेगा? नहीं नहीं, कदापि नहीं। जब तक चित्तौर में एक रमणी भी जीवित रहेगी, यवनों के रुधिर से खप्पड़भर कर देश, धर्म तथा जाति के वैरियों के छिन्न भिन्न मस्तकों पर ताली बजाएगी। वीर राजपूतों की भस्म से वीर बालक उत्पन्न हुये। माताओं ने उनके मस्तक पर रण तिलक लगाया। वीर पतियों ने कमर में कटार लटकाई। वृद्ध स्त्रियों ने आशीर्वाद दिया। 'वत्स जोआ, अपने देश पर प्राण न्योछावर करो, या म्लेच्छों को निर्मूल कर यवनों के हृदय पर आर्य्य गौरव के छाप लगाओ–' आशा के हृदय से वीर माताओं ने अपने पुत्रों को विदा किया, वीर पत्नियों ने उनसे आकर ... मधुर मुस्कराहट से उनका मन प्रफुल्लित की। कोमल कन्याओं ने मधुर मुस्कराहट से उनका मन प्रफुल्लित किया। सब की आखों में आनन्द के आँसू भरे हैं। आहा! कि भाग्यवती की कोख में वह बालक हुआ है जो आज रण गंगा स्नान कर अपनी माता के गौरव को बढ़ावेगा। कोई सुन्दरी विचार में मग्न है कि वीर वधू के नाम स पूजी जावेगी, कि कन्या का मन हर्ष से परिपूर्ण है कि वह वीर की पुत्री वा भगिनी

कहलावेगी । जोश में भरे वीर बालक हंसते २ बाहर आये । भीष्म युद्ध आरम्भ हो गया। अल्लाउद्दीन ने चारों ओर खाई खुदवा डाली और बड़ी सावधानी से चित्तौर को घेर लिया। बहुत दिनों तक युद्ध हुआ किया । सहस्रों राजपूत रोज अपनी बली देते थे, पर मुसलमानी सेना डेरा डाले पड़ी ही रही। राजपूतों से कहीं अधिक यवनों का सिंहार हुआ परन्तु अल्लाउद्दीन डटा ही रहा और नई २ सेना बुला अपनी फौज की संख्या पूरी करता रहा.

एक दिन महाराणा भीमसेन रात के बारह बजे अपने भवन में अकेले बैठे कुछ सोच रहे थे कि उनको दीवार पर चित्तौर की देवी की मूर्ती की परछाई दिखाई दी—"मैं भूकी हूं" की आवाज ने उनका ध्यान तोड़ दीवार की ओर देखकर वे गरज कर बोले "क्यों तुम अभी भूकी हो! हमारे सात सहस्र भाई बन्धु तुम्हारा खप्पड़ भरने को अपना रुधिर बहा चुके और तुम अभी तक वैसे ही भूकी हो," परछाई ने झुंझला कर उत्तर दिया. हां, इससे क्या सहस्रों मुसलमान भी रोज मारे जाते हैं, पर मुझे इस से क्या, जब तक राज बलि मुझे न मिलेगी, मैं चित्तौर में न रहूंगी।" राणा जी उधर ही को घूर रहे थे कि फिर आवाज़ हुई "अपने बारहों पुत्रों को एक २ करके तीन २ दिन के लिये राजगद्दी पर बिठाओं, छत्र चंवर से सुशोभित कर उनकी राजाज्ञा पालन करो और तीसरे दिन रण क्षेत्र में प्राण देने को भेजो जब तक बारह राणाओं की अहूति न ले लूंगी मैं चित्तौर में कदापि न रहूंगा" देवी जी अन्तरध्यान हो गई। महाराणा जी ने सवेरा होते ही अपने वीर सांवतों से सारी कथा कह सुनाई। सब ने कहा महाराज! यह केवल आपका ख़ियाल है, आपका ध्यान सदा इसी ओर लगा रहता है युद्ध की बातें सोचते रहिते हैं। कभी २ चित्त ठिकाने नहीं रहता। यह केवल आपके अधिक सोचने और चित्त की व्यग्रता का फल है" महाराणा जी ने उत्तर दिया "अच्छा! आज फिर देख लिया जावे। आप सब लोग भी वहां उस समय उपस्थित रहें। ऐसा कुछ असम्भव थोड़ेही है कदाचित्त देवीजी आज भी दर्शन दें तो आप सब का भ्रम दूर हो जावेगा"।

* राजनीतिज्ञ योधा प्रायः ऐसी कल्पनाओं द्वारा ही अपने वीरों को प्रोत्साहित करते हैं। सम्पादक

रात हुई, राजभवन में सभा लगी, बारह बजे, फिर वहा कल्पना उत्पन्न हुई और पिछली रात की बातें फिर दुहराई गईं. अब आपको दृढ़ विश्वास होगया और राणाजी का आज्ञा पालन करने को तत्पर होगये। हमको इससे कुछ प्रयोजन नहीं कि देवी जी ने राजपूत बीरों का यथार्थ में दर्शन दिया था वा यह राणा जी का कौतुक था जिसमें उनके सावंतों का उत्साह और भी बढ़ा। जो हो, पर ऐसा हुआ और अपने पवित्र आचरण और शुद्ध चित्त के प्रभाव से राजपूत लोग आप्त पुरुषों से भेंट करने में सदा अपने को अधिकारी समझते हैं वा यूं कहिये कि भारतवर्ष के इस दीन अवस्था को प्राप्त होने से पहिले समझते थे।

[६]

" नहीं २ हमारे जीवित रहते हमार बड़े भाई कदापि रणभूमि में अपने प्राण नहीं दे सक्ते " ग्यारह कंठों के यह वाक्य उच्चारण करने से सभा गूंज उठी। आज सब कुमारों मे यह झगड़ा उठा है कि चित्तौर रक्षार्थ पहिले कौन अपने प्राण दे। सबसे बड़े व राज का उत्तराधिकारी औरसिंह ने कहा " ज्यैष्ठ भ्राता होने के कारण यह मेराही हक है। मैं प्रथम गद्दी पर बैठूंगा पहिले प्राण देने का अधिकार ईश्वर ने मुझी को दिया है। मैं अपने स्वत्व को कभी न जाने दूंगा " " नहीं, भला कहीं ऐसा हो सकता है जब आप से छोटे मरजावें तब आपकी जैसा जी चाहे कीजिये। हमारे जीवित रहते हम यह नहीं देख सक्ते " उन्हीं ग्यारहों आवाज़ों ने फिर सभा को गूंजा दिया-इतने में सब से छोटा बोल उठा " और क्या सब में छोटे से बलि आरम्भ होनी चाहिये। पहिले मैं अपनी आहुति दूंगा " दस राजकुमार बोले " नहीं ऐसा भी कहीं तुम अभी बालक हो, पहिले—" इसी प्रकार झगड़ा पड़ा था कौन पहिले प्राण दे अन्त में यह निश्चय हुआ कि औरसिंह को यह गौरव प्राप्त हो सक्ता है राजमुकट से वे सुशोभित किये गये और तीसरे दिन रणभूमि में संसार से सदा के लिये विदा होन को प्रस्थान किया। चलते समय राणा जी ने उनसे कहा बाद को उन्हीं का पुत्र राज्य करेगा परन्तु विशेषता यह थी इनके कोई पुत्र ही न था।

अब दूसरे कुमार अजयसिंह की पारी आई, परन्तु राणा जी

उनसे अधिक स्नेह था। इस से उनको छोड़ दूसरे को गद्दी पर बिठ-लाया। अजय सिंहने बहुतेरे हाथ पैर पीटे परन्तु सब निष्फल हुआ। इसी प्रकार जब सब राजमुकट सुशोभित राजकुमार अपना जीवन दान देचुके तब देवी जी के खप्पड़ की शेष भाग पूरा करने को राणा जी स्वयम तय्यार हुये। एक बेर फिर झगड़ा चला। अजय सिंह आप कूद पड़ते थे। किसी भाँति न मानते थे पर अन्त में जीत राणा ही की रही। कुछ राजपूतों सहित राणा जी ने अजय सिंह को चित्तौर के बाहर जंगलों में भीलों के साथ रहने को भेज दिया जिस से बापा रावल का नाम चले श्री भगवान रामचन्द्र जी का वंश निर्मुल न हो जावे! हिन्दू पति की पदवी लोप न होजाय। चित्तौर सदा के लिये यवनों के हाथ में न चला जाय। आर्य्य कुल का गौरव बिलकुल लोप न होजावे। पिता पुत्र दोनों गले मिले। सब राजपूतों ने अन्तिम भेंट की। आहा! एक के ऊपर भार है कि स्वदेश रक्षा में अपने प्राण विसर्जन करे और दूसरे पर उस से भी कठोर भार यह कि जीवित रहकर फिर दुष्ट यवनों से अपने प्यारे देश का उद्धार करे! कुमार विदा हुये। सब भाई बन्धु मरने को जारहे हैं परन्तु संसार में धर्म्म ही मुख्य है। कुमार को अकेले जंगलों में रहकर सब सुख को तिलां-जलि दे अपना कर्तव्य पालन करना था। सब को प्रणाम कर पिता माता के चरण छूए, भीलों के संग रहने को निकल गये। धन्य! धन्य! वे भील जिनकी ऐसे पुरुष रत्न शरण लेते थे। धन्य वे लोग जिन को ऐसे वीरों की सेवा का अवसर प्राप्त था। अब भी उदयपूर में भीलों का इतना मान है कि एक भील सरदार ही अपने अंगूठे के खून से नये राणा को राज तिलक करता है और बांह पकड़ गद्दी पर बिठाता है जब तक वह यह न करे कोई कुमार राज भार सहिने योग्य नहीं समझा जाता और गद्दी नहीं पासक्ता। दूसरा भील सरदार ही इस अवसर पर थाल में तिलक की सामग्री आदि लिये रहता है। दूसरा कोई उसको नहीं छूसक्ता। श्रीमहाराणा जी पर चौर झलने का अधि-कार भी केवल भील सरदार ही को है। धन्य कृतज्ञता! जब राज-स्थान केसरी वीर शिरोमणि स्वदेश प्रेमी श्री १०८ श्रीमान महाराणा प्रताप सिंह ने अपने सावन्तों के मन की थाह लेने के लिये उनसे कहा था कि वे अकब्बर से सन्धि करलें, अपने दिन दुखमें न काटें और स्वयम अपने लिये कहा था कि मैं युं ही बन २ घूम कर अपने प्राण

देदूंगा, तब एक भील सरदार ने भी बिगड़ कर उत्तर दिया था "सुणो राणा जी —...हमारे जीते जी ऐसा कदापि नहीं होसक्ता। यदि आपका जी चाहे तो आप बादशाह से सुलह करलें परन्तु हम भील जात तो प्राण रहते सिवाय हिन्दूपति दूसरे की सेवकाई नहीं करने के" ! आहा ! उन्हीं भीलों को आज हम जंगली कहते भी नहीं लज्जाते।

सब ने केसरिया बाना पहिना। बीड़ा चबाया। गले मिले। उधर राजभवन की गुफा में विशाल पेड़ काट २ कर एक महा भयङ्कर चिता बनाई गई। पति पत्नी, पिता पुत्री, भाई, बहिन, सबने अन्तिम भेंट की। परन्तु किसी का मुख मलीन नहीं है। सबके सब लाल हो रहे हैं क्या स्त्री और क्या पुरुष सब के मुख से तेज टपकता है आज सबके सब एक संग ही संसार से विदा होजाते हैं। वीर बालाएं शृंगार किये अच्छे २ वस्त्र आभूषण से सुशोभित अपसराओं की मण्डली के समान वीर राजपूतों को प्रेम भरी चितवनों से बार २ निहारतीं गुफा की ओर चली जारही हैं सबसे आगे जगत प्रसिद्ध परम सुन्दरी सती साध्वी महाराणी पद्मावती हैं। राजपूत मस्तक नीचा किये खड़े हैं। पर सब के नेत्रों से चिनगारियां निकल रही हैं। आज न जाने क्या होने वाला है। अहा! वही चित्तौर जहां धर्म्म और आनन्द का राज्य था आज कैसा भयानक दृश्य दिखाता है। चित्तौर में प्रलय का ढंग है। सब क्षत्राणी एक २ कर के गुफा में घुस गईं। धड़ाके के साथ लोहे का विशाल फाटक बन्द कर दिया गया। हाय! सौन्दर्य्य,रूप लावण्य, प्रेम. आनन्द सबका नाश होगया। कायर आल्लाउद्दीन. आल्लाउद्दीन ! आर्य्य सन्तान अब भी इन सती साध्वी वीर बालाओं का शुद्ध हृदय से सम्मान करती है। तेरे दुष्ट आत्मा को सौ २ बार धिक्कारती है. तेरे सहायकों का मुंह काला करके संसार में दिखाती है। नराधम। क्या तू समझता है कि मर कर तू छुट्टी पागया। नहीं नहीं, जब तक तेरा एक२ हिमायती रौरव नरक का गमन न करेगा हमारे दुखी मन को शान्ति न होगी, न होगी, कदापि न होगी।

हां, नरपिशाच आल्लाउद्दीन ने भी इतना अवश्य किया था कि सब राजपूतों के कट मरने पर आशा की लहरों ने जब उसे चित्तौर में फेंका और वह पागल की भांत पद्मावती की खोज में इधर उधर

दौड़ने लगा तब उनमें सब राजपूत बालाओं के साथ यों सती हो जाने का समाचार सुना। क्रोध और दुख से व्याकुल हो तब उसने समस्त चित्तौर को नष्ट भ्रष्ट कर डालने का हुक्म देदिया था उस समय महाराणी पद्मावती के खास राजभवन को तोड़ने की मनादी करदी थी। उस भवन और अल्लाउद्दीन की खोदवाई हुई खाइयों को देख अब भी चित्तौर निवासी आंखों में आंसू भर कर लम्बी सांसे लेते हैं।

चत्राणियों के सती हो जाने पर वीर राजपूतों को अब काहे की चिन्ता थी। संसार मानों उनके काटे खाता था। चित्तौर भयानक जान पड़ता था। एक २ पल बज्र गिरता था। नगर के द्वार खोल दिये गये। भुखे शेर की तरह राजपूत यवनों पर टूट पड़े। महा भयङ्कर युद्ध आरम्भ हुआ। कई लाखों मुसलमान सेना में कुछ सहस्रों राजपूत वीर पहुंच गये हैं। आहा! उनका तेज ही यवनों को नाश किये देता है। किसी का सर कटा धड़ही धड़ रहा है। कोई यवन के पेट में तलवार भोंके स्वयम मरा पड़ा है। मानों अब भी वैर चुकाने को तय्यार है। अन्त काम सिद्ध कर सब ने परलोक को प्रस्थान किया। मधुर २ गाने की तान उनके कानों में आती हैं। क्या अपसराएं राजपूतों का स्वागत करने को गान कर रही हैं नहीं २ पद्मावती अपनी सखियों सहित चित्तौर के वीरों की स्वर्ग में बाट जोह रही है। उनके स्वागत करने को आरती लिये खड़ी है। सखियां प्यारे प्यारे फूलों की माला लिये उनको पेहनाने को व्याकुल हैं। सबकी सब आनन्द में भरी मंगल गान गारही हः—

धन धन धन धन ऐसे बीर।
जे निज देश धर्म के कारण गिनत न अपनी पीर॥
विपतकाल निश्चल चित रहकर मनमा धारनधीर।
धन धन ते रमनी जो पति सो पियत मनों पयनीर॥
धन धन० [रामगोपाल मिश्र—बलरामपूर.]

ध्यान पूर्वक देखिये।

सितम्बर का नवजीवन तैय्यार हो रहा है। जिन अनुग्राहक ग्राहकों ने अब तक चन्दा नहीं भेजा, शीघ्र भेज दें। अपना२ ग्राहक नम्बर कृपया अवश्य लिखें- प्रबन्धकर्ता॥

सङ्घमित्रा का बलिदान

(१)

बौध धर्म के प्रचार एवं अज्ञानग्रस्त नरनारीवृन्द के कल्याण के लिये इस पुण्यभूमि में अनेक आत्माओं ने अमूल्य जीवनों का बलिदान किया है। उन्होंने पार्थिव विलास तथा सांसारिक ऐश्वर्य्य को जलाञ्जली दी और केवलमात्र धर्मोन्नति तथा परहितार्थ अपने जीवन का उत्सर्ग किया। धर्म्म के उच्च और पवित्र भाव ही मनुष्य को परोपकार के पथ पर चलाने और स्वार्थ की आहूति से धार्मिकाग्नि को देदीप्यमान करने का अवसर प्रदान करते हैं। एक जीवित प्राणी की आहूति अनेक आत्माओं को धर्म के रस को आस्वादन करने के निमित्त प्रेरित करती है। जिस संस्था के संचालकों के जीवन में आत्मोत्सर्ग, स्वार्थपरित्याग और परोपकार के निमित्त जीवन को बलिदान करने का साहस नहीं वह संस्था एकमात्र शुष्क और नीरस है। उसके फलों और फूलों में मनुष्यों को आकर्षण करने की शक्ति नहीं। प्रत्येक धार्मिक संस्था के इतिहास में आत्म समर्पण के उदाहरण मिलते हैं और किसी संस्था की उन्नति और उपयोगता का मूल्य भी उन्हीं आत्माओं के चरित्रों द्वारा देखा जाता है जिन्हों ने उस संस्था को उपयोगी समझ कर स्वीकार किया है। बौध धर्म का इतिहास ऐसे निष्प्रीह नर नारियों के जीवनों से परिपूरित है।

(२)

उन महात्माओं में मगधराज महाराज की कन्या सङ्घमित्रा का प्रातःस्मरणीय जीवन प्रातःकाल के उज्ज्वल तारे के समान इतिहास के पृष्ठों पर चमक रहा है। इस धर्मपरायणा, कोमलहृदया, परदुखकातरा, मधुरभाषिणी भिक्षुणी ने अनेक वज्रादपि कठोर आत्माओं को धर्म पथ पर आरूढ़ करदिया। मगधाधिपति महामना अशोक अपने पिता बिन्दसार के समय में अवन्ति प्रदेश में शासन करता था। उज्जयिनी नगरी की 'देवी' नाम्नी परम रूपवती राजकुमारी से अशोक ने विवाह किया। इनके हां राजकुमार महिन्द (महेन्द्र) और राजकुमारी 'सङ्घमित्रा' इन दो बालकों ने जन्म धारण किया। इस समय महाराज अशोक स्वयम् दीक्षा ले चुके थे। उनके जीवन में क्रमशः बुद्धधर्म की शिक्षा अपना स्थान कर चुकी थी। सोते,

उठते, बैठते, जागते उन्हें बौध धर्म के प्रचार की लग्न थी। उन्हों ने क्रमश: मांस भक्षण का परित्याग करदिया था। परित्याग ही नहीं वरन् प्रजा में भी इस निन्दनीय प्रणाली के बन्द करने के अनेक उपाय सोचे थे। उन्हें धर्म में इतनी अगाध श्रद्धा होगई थी कि उन्हों ने राजकुमारी का नाम भी सङ्घमित्रा ही रखना पसन्द किया।

(३)

सिंघलेश्वर (लंकापति) पाण्डूकबाहू का पौत्र 'तिस्स' इन दिनों लंका में राज्य करता था। जब महाराज अशोक ने मगधदेश पर अपना शासन प्रारम्भ किया, तब सिंघलेश महाराज तिस्स ने बहुमूल्यवान तथा उत्कृष्ट मोती, और अनेक अन्य पदार्थ मगधाधिपति की सेवा में समर्पण किये थे। जो चार दूत इन भेंट के पदार्थों को लाये थे, मगध में उनका बड़ा सत्कार किया गया और बड़े आदर तथा सम्मान से उन्हें विदा किया गया था। इधर महाराज अशोक ने अपने राजकर्मचारियों द्वारा महानुभाव तिस्स की प्रसन्नता के लिये उपहार के स्वरुप में बहुमूल्य कुछ सामग्री भेजी। उनमें एक अति सुन्दर मणिमय किरीट और मणिमुक्ता विमण्डित तलवारादि वस्तुऐं थीं। इन वस्तुऐं के साथ एक प्रेमपत्र भी भेजा जिसमें उपदेश था कि "बुद्धदेव और उनके कथित धर्म को ग्रहण करने से अवश्यमेव आपका और आपकी प्रजा का कल्याण होगा"। दूतों के प्रस्थान करने पर महाराज अशोक ने सिंघलदेश में धर्म के प्रचार करने के उपायों पर विचार किया। उन्हीं दिनों मगधाधिपति के भ्राता राजकुमार ने भिक्षुरुप से बौधधर्म में दीक्षा ली। चचा की धर्म में श्रद्धा और रुचि को देखकर राजकुमार महिन्द तथा राजकुमारी सिङ्घमित्रा ने भी दीक्षा ले ली। यह महाराज के शासन का सोलहवां वर्ष था। बड़े समारोह से धर्मोत्सव सुसंपन्न हुआ।

(४)

अशोकनन्दन महिन्द की आयु इस समय २० वर्ष और राजकुमारी संघमित्रा की आयु १८ वर्ष की थी। दोनों अविवाहित थे। राजकुमार महिन्द को आज्ञा मिली कि वह सिंघलेश्वर के यहां जाकर धर्म का प्रचार करे। कुमार महिन्द निज दल बल के साथ वहां पहुंचा। देवानाम् प्रिय महाराज 'तिस्स' ने परमादर के साथ

राजकुमार का स्वागत किया । महिन्द राज्य की सहायता से सारे द्वीप में भ्रमण करने लगा । उसके मुख कमल से विनिसृत मधुरातिमधुर धर्म्म कथा को सुन कर आबालवृद्ध मुग्ध होने लगे । महाराज तिस्स अपने ४० हज़ार साथियों सहित दीक्षित हो गया। राजा के अनुकरण से हज़ारों लोग दीक्षित होने लगे । अनेक देवियों ने महिन्द के अमृतमय उपदेशों को श्रवन किया । देवानाम प्रिय महाराज तिस्स की राजमहिषी अनूला अपनी सखियों के साथ एक दिन महिन्द के समीप समुपस्थित हुई और भिक्षुणी (संन्यासिनी) बनने के लिये प्रार्थना की । परमधार्मिक महामना महिन्द ने विनीतभावेन उत्तर दिया कि हे आर्या ! यह कार्य्य मुझ से निष्पादन न होगा । मेरी धार्मिका भगिनी भिक्षुणी संघमित्रा ने संन्यास ग्रहण कर लिया है । आप कृपा कर उसे यहां मंगवालें वह यहां उपस्थित होकर आप देवियों की मनोवाञ्छा को अवश्यमेव पूर्ण करेगी ।

(५)

राज्ञी अनूला ने तत्काल एक राजदूत संघमित्रा को सिंहलद्वीप में लाने के निमित्त देवानाम् प्रिय महाराज अशोक के पास भेज दिया । संन्यासिनी राजदुलारी संघमित्रा सिंघलवासिनी रमणियों की प्रार्थना को जानकर अत्यन्त आनन्दित हुई । महाराज अशोक इस विचित्र प्रार्थना को जानकर अत्यन्त विस्मित तथा चकित हुए। एक दिन राजदुलारी अपने पूज्य पितृदेव महाराज धर्माशोक के सम्मुख जाकर उपस्थित हुई और सिंघलद्वीप में जाने की इच्छा प्रकट की, किन्तु महाराज अशोक सम्मत न हुए। उन्हों ने कातरकण्ठ से समझाया कि महिन्द पहिले चला गया है, अब तुम भी जाना चाहती हो । पुत्र तथा कन्या दोनों से विच्छेद होने पर माता पिता को कितना असह्य तथा अकथनीय क्लेश होगा । इस प्रकार महाराज अशोक ने बहुत प्रकार से रोकने की चेष्टा की परन्तु धर्मगत प्राणा संघमित्रा का धर्म में अनुराग अतिशय प्रबल हो चुका था उसके चित का वेग अदम्य था । संघमित्रा ने विनय तथा नम्रतापूर्वक माता पिता से निवेदन किया कि ' मेरे जाने से धर्मप्रचार में अनेक सुविधा और नारियों का उपकार होगा । न जाने से धर्म में हानि होगी और आपके जीवन का उद्देश्य विफल हो जायगा" ।

अनेक प्रकार के वादानुवाद अनन्तर महाराज और महारानी दोनों सम्मत हुए।

(६)

संघमित्रा ११ भिक्षुणियों को अपने सङ्ग में लेकर मगधदेश से रवाना हुई। सिंघलद्वीप की यात्रा से पहिले गया धाम में गई और बौधिवृक्ष (पीपल) के दक्षिण की एक शाखा लेकर लङ्का की ओर प्रस्थान किया। यह महाराज अशोक के राज काल का १८वां वर्ष था और संघमित्रा की आयु केवल २० वर्ष की थी। लङ्का पहुंचने पर वहां की स्त्रियों ने निरतिशय आनन्द और अनन्य उत्साहपूर्वक राजकुमारी का स्वागत किया। संघमित्रा ने जाते ही बौध धर्म की शिक्षा का प्रचार करना आरम्भ कर दिया। धर्म बल में बलशालिनी भिक्षुणी संघमित्रा के उपदेश को सुनकर अनेक रमणियों ने बौध धर्म को ग्रहण कर लिया। रानी अनूला अनेक महिलाओं के सङ्ग संन्यासिनी बन गई। इस समय से सिंघलद्वीप के नाना स्थान में अनेक विहार और उत्तमोत्तम मन्दिर निर्मित होने लगे। पर्वतों को काट कर, बनों को जला कर और समतल भूमि के सुरम्य स्थलों में भिक्षुओं तथा भिक्षुणियों के निवासार्थ विहार बनने आरम्भ हो गये।

महाबौधिवृक्ष की शाखा को एक विशाल और सुरम्य उद्यान में रोपन किया गया और उस प्रमोद उद्यान का नाम महामेघ बन रखा गया। इसी महामेघ बन में महास्थिवर महिन्द, भिक्षु तिस्स प्रभृति भिक्षु संघ रहता था। इन्हीं दिनों महाराज अशोक के पास से महात्मा बुद्धदेव की " अस्थि " सिंघलेश्वर ने मंगवाई थी।

(७)

इस प्रकार राजकुमार महिन्द और राजदुलारी संघमित्रा के उद्योग से सिंघलद्वीप में बौध धर्म का अतिशय प्रचार होगया। राजसन्तान होने पर भी इन दोनों ने राज्य, राजभोग, स्वदेश, सम्बन्धी, माता पिता, मित्र, धन, मान, सद्भ्रम आदि समस्त सुखों को जलाञ्जलि दी और बौध धर्म के प्रचारार्थ अपना समग्र जीवन सिंघल द्वीप में ही व्यतीत करदिया। इन दोनों के आदेशानुसार सिंघलेश्वर ने ४० वर्ष पर्य्यन्त परम सुख से राज्यशासन, प्रजापा-

लन और बौध धर्म की परम उन्नति के साधनों को निष्पादन किया और ख़ीष्ट सन से २६६ वर्ष पूर्व अपने नश्वर कलेवर का परित्याग किया। इस घटना के चार वर्ष पश्चात् अर्थात् सन् ईस्वी से २६२ वर्ष पूर्व महास्थिवर महिन्द ने देह त्याग किया और एक वर्ष के पश्चात् परम भिक्षुणी संघमित्रा ने इस पंचभौतिक शरीर का परित्याग किया। महिन्द तथा संघमित्रा दोनों ने " महिन्तल पर्वत " में प्राण दिये थे। इसी स्थान पर आज भी अनुराधपुरा के दिव्य मन्दिर और विहार दृष्टि गोचर होते हैं।

(८)

बौधश्रमण महिन्द का स्वार्थ परित्याग अतीव प्रशंसनीय है। उसकी भगिनी राजकुमारी संघमित्रा ने स्त्री होकर जिस प्रकार से अपने स्वार्थ को भस्मसात करके परहित में जीवन को दान कर दिया वह एक अतुलनीय उदाहरण है। जब तक जगत में सत्य का मान होता रहेगा, जब तक बौध धर्म का इतिहास उपस्थित रहेगा, जब तक पुण्य, निस्स्वार्थ और परोपकार की महिमा को मनुष्य गाया करेंगे एवं जब तक जगत में पवित्र जविन का आदर रहेगा, तब तक धर्मपरायणा, त्यागशीला, अनन्तगुण सम्पन्ना, मधुरभाषिणी, दया की मूर्त्ति संघमित्रा का सुनाम देदीप्यमान रहेगा, तब तक संघमित्रा का जीवन अनेक नरनारियों के देहों में धर्म पर बलिदान होने के निमित्त शुद्ध रक्त का संचार करता रहेगा सबके नाम को नाश करदेनेवाला काल भी इस पवित्र देवी की अचल कीर्ति को मिटाने में कभी भी समर्थ न होगा। माता भारत भुमि ! क्या तुम अब संघमित्रा के सदृश कोई गरीयसी पुत्री और प्रसव न करोगी ?

जगज्ज्योति॥

आर्य्यवर्त में वर्णव्यवस्था और उनमें वर्णसङ्करों की मिलावट।

वर्तमान समय में भारतवर्ष ही ऐसा क्षेत्र है जहां मनुष्य मनुष्य से जन्म के भेद पर विरोध करते हैं। सम्पति और एश्वर्य

दूसरे शब्दों में अर्थ शास्त्रानुसार श्रेणियों (Class) में अन्तर तो सब देशों में पाया जाता है परन्तु इस देश में ज़ात पात (Caste) भी सङ्ग २ चलती है अर्थात् यहां क्लास और कास्ट दोनों ही मिलते हैं। किसी समय में कार्य्य विभाग के नियमों पर यहां वर्णव्यवस्था थी और उसी को भगवान कृष्ण ने " चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्म स्वभावशः" कहा है। परन्तु जब इस देश में गुण, कर्म और स्वभाव के स्थान में जन्म को प्रधानता मिलने लगी तब से लोगों ने ऊंच व नीच का भेद नियत कर लिया। ऊंचों ने नीचों को पादाक्रान्त करना आरम्भ किया। आज सहस्रों नहीं नहीं लाखों वर्ष के इकट्ठे हुए २ हठ का फल या परिणाम यह है कि हम सहर्ष अपने अङ्गों और अवयवों को काट काट कर फेंकते चले जाते हैं। यह विचार इस पराकाष्ठा तक पहुंचे हैं कि भिन्न २ जातियों या देशवासियों में गुण कर्म और स्वभावानुसार विवाह करना जघन्य कर्म माना जाता है कारण यह कि भारतवर्ष के कुछ मनुष्यों को छोड़ कर शेष लोगों की तो कोई वर्ण व्यवस्था है ही नहीं और इसी लिये गुण, कर्म, और स्वभाव के नैसर्गिक नियमों को छोडकर हम उन्हें वर्णसङ्कर कह देते हैं। वर्णसङ्कर का शब्द बिगड़ते २ इतना बुरा होगया है कि आज वर्णसङ्कर कहना मानों गाली देना है, परन्तु इतिहास को पढ़ने से ज्ञात होता है कि प्रायः सभी वर्त्तमान जातों में मिलावट पाई जाती है और रक्त की यह मिलावट प्रशंसनीय है क्योंकि भिन्न भिन्न रक्त के मिलने से कुल की उत्तमता और वृद्धि होती है। सायन्स आफ यूजेनिक्स (Science of Eugenics) इस विषय पर बहुत कुछ प्रकाश डाल रही है और यदि प्राचीन वैदिक शिक्षा का आश्रय लिया जावे तो विवाह दूर देशों में करना ही प्रशस्त बतलाया गया है। मुनिवर यास्काचार्य्य ने "दुहिता दुरहिता दूरेहिता दोग्धेर्वेति ऐसा कह कर इस भाव की पुष्टि की है।

आज हम इतिहास द्वारा बताना चाहते हैं कि इस देश के लोगों में कैसे भिन्न २ जातियों के लोगों से सम्बन्ध हुए और कैसे यहीं के ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य वर्णसङ्कर हैं और यह कि वर्णसङ्कर होना कोई निन्दित कर्म नहीं॥ यदि हिन्दुओं की दृष्टि से देखें और मान भी लें कि हिन्दुओं को छोड़ कर शेष सब लोग

वर्णसङ्कर ही हैं तो हिन्दुओं की उत्पत्ति कैसे हुई । इस प्रश्न का उत्तर यह दिया जाता है कि ब्राह्मण सब से श्रेष्ठ हैं इसलिये कि वह परमात्मा के मुख से उत्पन्न हुए हैं । फिर दूसरे दर्जे पर क्षत्रिय हैं जो उसके बाहू से उत्पन्न हुए हैं । तीसरे दर्जे पर वैश्य हैं जो ऊरु से पैदा हुए । सब से छोटे दर्जे पर शूद्र हैं जो पाओं से उत्पन्न हुए। इस में सबसे प्राचीन प्रमाण ऋग्वेद के दशवें मण्डल का है जो बतलाता है ।

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रोऽजायत ॥

इसके अनन्तर मनुस्मृति के ५ वें अध्याय का ३१ वां श्लोक उपस्थित किया जाता है ।

लोकानां तु विवृद्ध्यर्थं मुखबाहूरुपादतः ।
ब्राह्मणं क्षत्रियं वैश्यं शूद्रं च निरवर्तयत् ॥

संसार की वृद्धि के लिये ही उस परमात्मा ने ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों को मुख, बाहु, ऊरु और पाओं से उत्पन्न किया। आर्य्य समाज की व्याख्या को छोड़ कर हम विचारना चाहते हैं कि प्रायः सारे ही भारतवर्ष में यही विश्वास फैला हुआ है और इसी विश्वास की रेतली नीव पर खड़े होकर वर्ण अभिमानी अपने आप को उच्चैस्तम और उच्चैस्तर मान रहे हैं परन्तु जहां उत्तरीय भारतवर्ष में यह चारों वर्ण विद्यमान हैं ऐसा माना जाता है वहां दक्षिण में केवल दो वर्णों की उपस्थिति को माना जाता है अर्थात् ब्राह्मण और शूद्र ही वहां बतलाये जाते हैं। न्यूनाधिक यही अवस्था बङ्गाल की थी और जब उन्हें चार वर्णों को दो ही में घटा देने का विचार उत्पन्न हुआ तो कायस्थों को भी शूद्र कहने लगे। अब तक भी बङ्गाल के कायस्थों को यज्ञोपवीत नहीं मिलता । वहां यह किम्वदन्ती मिलती है कि क्षत्रिय और वैश्य यह दोनों वर्ण चिरकाल से लुप्त हो गये हैं। शूद्रकमलाकर में मिलता है ।

ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्रा वर्णास्त्रयो द्विजाः।
युगे युगे स्थिताः सर्वे कलावाद्यन्तयोः स्थितिः ॥

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र यह चारों वर्ण हैं । प्रथम

तीनों को द्विज कहते हैं। यह सब वर्ण प्रत्येक युग में मिलते हैं किन्तु कलियुग में तो प्रथम और चतुर्थ अर्थात् ब्राह्मण और शूद्र ही मिलते हैं। इसी विचारानुसार भागवत् के १० वें स्कन्ध में वर्णित है।

महापद्मपति कश्चिन्नन्दः क्षत्रविनाशकृत्।
ततो नृपा भविष्यन्ति शूद्रप्रायस्त्वधार्मिकाः॥
स एकच्छत्रां पृथिवीमनुल्लंघित शासनः।
शासिष्यति महापद्मो द्वितीय इव भार्गवः॥

महापद्मपति कोई नन्द राजा सब क्षत्रियों का नाश करेगा तब राजे शूद्र और पापी या अधार्मिक होंगे। वही महापद्म द्वितीय चक्रवर्ती भार्गव के सदृश समग्र पृथिवी पर अपना शासन करेगा॥ इन श्लोकों से स्पष्ट ज्ञात होता है कि भागवत के रचयिता महोदय राजा नन्द के पीछे हुए हैं और यतः उन दिनों बौधों का राज्य था इस लिये उन्हें अधार्मिक और शूद्र कहा। हां, ऐसे छल से श्लोक रचना की जिससे लोग उसे भविष्य वाणी समझें। अस्तु, यह विचार आज से केवल २२०० वर्ष पूर्व ही उत्पन्न हुआ। परन्तु भागवत के बनाने वाला क्या जानता था कि इस लेख के सैकंड़ों वर्ष पश्चात आबू पर्वत पर अग्नि कुण्ड की स्थापना होगी और फिर क्षत्रिय वंश का प्रादुर्भाव होगा। निस्संन्देह उस समय के क्षत्रिय बौध धर्मावलम्बी थे और वैदिकधर्मानुयायियों ने क्षत्रियों की उत्पत्ति द्वारा सिद्ध कर दिया कि वह जन्म से क्षत्रिय नहीं होते थे। अस्तु, जो भी हो, दो वर्ण मानों अथवा चार वर्ण मानो, मनुजी के समय में तो अनुलोम और प्रतिलोम विवाहों से कई अन्य वर्ण या ज़ातें भी बन चुकी थीं जिनका उल्लेख मनुस्मृति में पाया जाता है॥ जब ऊंचे वर्णों के पुरुष का नीचे के वर्णों की स्त्री के साथ विवाह होता था तो इसे अनुलोम और जब उसके प्रतिकूल विवाह होता तो उसे प्रतिलोम विवाह कहा जाता था। यद्यपि इस देश में किसी समय ऐसे विवाहों की प्रथा प्रचलित थी परन्तु इनकी सन्तानों को सर्वदा छोटी ज़ातों में गिना जाता था। इस लिये दावे से कहा जाता है कि हिन्दुओं की ऊंची ज़ातों में शुद्धि मिलती है और उन में वर्णसङ्कर नहीं पाये जाते। हां,

छोटी ज़ातों में ज़रूर खून की मिलावट या वर्णसङ्करता पाई जाती है। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य सृष्टि की आदि से शुद्ध ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य ही बने चले आये हैं। साथ ही हमारे हिन्दू भाइयों का कथन है कि हिन्दू वही है जिस ने हिन्दू मां बाप के यहां जन्म लिया है, धर्म के बदलने से कोई भी हिन्दू नहीं कहला सक्ता। इस बात को सिद्ध करने के लिये कि ब्राह्मणों, क्षत्रियों और वैश्यों के खून में बराबर मिलावट होती रही है हमें इतिहास की पर्य्यालोचना करनी चाहिये। महाभारत के अनुशासन-पर्व में लिखा है कि—

ततो ब्राह्मणतां जातो विश्वामित्रो महातपाः।
क्षत्रियः सोप्यथ तथा ब्रह्मवंशस्य कारकः॥

तब महातपस्वी विश्वामित्र ब्राह्मण बना, यद्यपि वह क्षत्रिय था, उसने ब्राह्मण वंश की बुनियाद डाली। वर्त्तमान ब्राह्मणों में से कौशिक गोत्र वाले अपने आपको विश्वामित्र की सन्तति बतलाते हैं। इन ब्राह्मणों को कोई नीच ब्राह्मण या वर्णसङ्कर ब्राह्मण नहीं बतलाता। अजामीढ क्षत्रिय राजा था, विष्णुपुराण बतलाता है कि उसी के कुल में कण्व उत्पन्न हुआ और कण्व के गोत्र को आज काणवायन और उस गोत्र के ब्राह्मणों को काणवायन ब्राह्मण कहते हैं। यहां तक तो यह प्रमाण मिलते हैं कि ब्राह्मणों के वंश को चलाने वाले क्षत्रिय भी थे और यह कि ब्राह्मण और क्षत्रिय का खून मिलता जुलता रहा है। वैश्यों के सम्बन्ध में भी हरिवंश में लिखा है।

नाभागरिष्ठपुत्रौ द्वौ वैश्यौ ब्राह्मणतां गतौ॥

नाभागरिष्ठ वैश्य सेठ थे उनके दो पुत्र थे और वह दोनों गुण कर्म और स्वभाव से ब्राह्मण बन गये और उनके वंश ब्राह्मण कहलाने लगे। न केवल क्षत्रियों और वैश्यों के चलाये हुए कुल ब्राह्मण कुल बन गये परन्तु नीच कुल में जन्म लेने वालों ने जो कुल चलाये उन के गोत्र आज बडे पवित्र गोत्र माने जाते हैं। कौन नहीं जानता कि वसिष्ठ गोत्र के ब्राह्मण आज श्रेष्ठ माने जाते हैं परन्तु महाभारत बतलाता है कि—

गणिका गर्भसंभूतो वसिष्ठश्च महामुनिः।

तपसा ब्राह्मणो जातः संस्कारस्तत्र कारणम् ॥

महामुनि वसिष्ठ एक गणिका (रण्डी) का पुत्र था। तप के प्रभाव से ब्राह्मण बन गया। संस्कार ही मनुष्य को ऊंचा नीचा बनाते हैं। इसी प्रकार महाभारत के रचयिता ने व्यास और पराशर के सम्बन्ध में कहा है—

जातो व्यासस्तु कैवर्त्याः श्वपाक्यास्तु पराशरः।
बहवो अन्येऽपि विप्रत्वं प्राप्ताः ये पूर्वमद्विजाः ॥

व्यास कैवर्त अर्थात् माहीगीर के हां, और पराशर चण्डाल स्त्री के गर्भ से उत्पन्न हुआ और भी बहुत से लोग जो जन्म से द्विज न थे ब्राह्मण बन गये ॥

उपरोक्त प्रमाणों से स्पष्ट है कि अनेक शूद्र भी ब्राह्मण बने। क्षत्रिय ब्राह्मण बने, वैश्य ब्राह्मण बने और शूद्र ब्राह्मण बने। इन शूद्रों से उत्पन्न हुए २ केवल ब्राह्मण ही नहीं बने किन्तु उन्होंने ब्राह्मण गोत्रों की नीव भी डाली और वह वर्त्तमान ब्राह्मणों के गोत्र प्रवर्त्तक भी थे, अत एव यह कथन केवल साहस मात्र ही है कि ब्राह्मण आदि सृष्टि से ब्राह्मण ही चले आते हैं या यह कि द्विजों के वंशों में खून की मिलावट नहीं हुई ॥

वर्णसङ्करों की पवित्रता।

मिलावट का पाया जाना तो निर्विवाद सिद्ध है। हां, ऐसी जाति को उच्च बनाने की चेष्टा भी स्मृति ग्रन्थों में पाई जाती है। वैसे तो यह भाव मनुस्मृति में भी मिलता है कि सातवीं कुल में जाकर छोटी ज़ात में पैदा हुआ बालक भी ऊंची कुल को प्राप्त हो सक्ता है। याज्ञवल्क्य स्मृति में लिखा है—

जात्युत्कर्षो युगे ज्ञेयः पञ्चमे सप्तमेऽपि वा।
व्यत्यये कर्मणां साम्यं पूर्ववच्चाधरोत्तरम् ॥

पहिली पङ्क्ति का भाव यह है कि कलियुग में पांचवीं अथवा सातवीं औलाद तक ज़ात ऊंची हो जाती है। इसी पर मिताक्षरा कर्ता विज्ञानेश्वर भट्ट ने व्याख्या की है।

व्यवस्था च ब्राह्मणेन शूद्रायामुत्पादिता निषादी सा

ब्राह्मणेनोढा दुहितरं काचिज्जनयति । सापि ब्राह्मणेनोढा अन्यामित्यनेन प्रकारेण षष्ठी सप्तमं ब्राह्मणं जनयति । ”

अर्थात् । यदि ब्राह्मण किसी शूद्रा से संसर्ग करे तो उन से उत्पन्न हुई कन्या का नाम निशादी होगा । वह निषादी ब्राह्मण से संसर्ग करे तो जो उसकी कन्या हो, वह भी किसी ब्राह्मण से संसर्ग करे इस प्रकार की छठी कन्या किसी ब्राह्मण से पुत्र उत्पन्न करेगी तो वह ब्राह्मण कहलायगा । विज्ञानेश्वरभट्ट ने सारी गणित विद्या इसी में लगा डाली । तब यदि कुछ ब्राह्मण शूद्रों से उत्पन्न हुए हों और उनकी ६ नसलें गुज़र चुकी हों तो विज्ञानेश्वर भट्ट की व्यवस्थानुसार उन्हें तो शुद्ध ब्राह्मण कहलाने का लाइसेन्स मिल गया । या आज अगर ब्राह्मण वर्णसंकर उत्पन्न होजावें तो छः नसलों के बाद वह भी शुद्ध गिने जावेंगे ॥ अस्तु, स्मृतियों के समय में तो यह प्रथा प्रचलित थी और यदि उस समय के ब्राह्मण आज तक विद्यमान हैं तो उनके पूर्वजों में अवश्यमेव शूद्रों के रक्त का मीलान हुआ होगा । स्मृतियों को छोड़ कर अब हम बौद्ध धर्म्म के इतिहास पर ध्यान देते हैं ।

महाराज अशोक की शिलाएं ।

महाराज अशोक की १३ वीं शिला में लिखा है ।

“ एसे च मुखमुते विजये देवानां पियस यो धर्मविजयो सोच पुन लधो देवानं प्रियस इह च सर्वेसु च अतेंसु आ छसुपि यो जनसतेसु यत्र अन्तियोको नाम योनराजा परं च तेन अन्तियोकेन चतुरो राजानो तुरमाये नाम अंतिकिनि नाम मक नाम अलिक सुन्दरो नाम ॥

इस शिला में उन पांच यूनान के सम्राटों के नाम हैं जिन्होंने भारतवर्ष पर आक्रमण किये और जिनके साथी क्रमशः इस देश में बस गये ।

अंतियोक Antiyoka (Antiochos) तुरमाये “ Turama[illegible]

(Ptolemy) मक (Maka) अंतिकिनि (Antigonos) and अलिकसुन्दर (Alexander) इनमें से कई बौध हो गये और किसी २ ने हिन्दु धर्म्म को भी ग्रहण कर लिया। ग्वालियार के बेसनगर में आज से २२०० वर्ष पहिले का जो शिलापत्र मिला है उस में लिखा है कि महाराज भागभद्र के दरबार में हेलोदोरा नामी एक यवन दूत या यूनानी एलची रहता था उसने भगवान वासुदेव के लिये गरुड ध्वजा बनवाई थी। दूसरे शब्दों में वह हिन्दू धर्मानुयायी बना था। शाक परिवार के एक गवर्नर का नाम ऊषचदत्त! और वृषभदत्त मिलता है जब कि उसके पिता का नाम दिनिका और माता का नाम नाहपान था। माता और पिता दोनों के नाम यूनानी हैं परन्तु वृषभदत्त निस्सन्देह हिन्दू नाम था। वह काठियावाड़ में रहता था। सम्भव है कि उसने हिन्दू धर्म्म को ग्रहण कर लिया हो। उसके गुणों का वर्णन करते समय बतलाया है कि

"अनुवर्ष ब्राह्मणशतसहस्री भोजयायिता"

जो प्रतिवर्ष एक लाख ब्राह्मणों को भोजन खिलाया करता था"। मालवा की राजधानी उज्जयिनी पर जो यूनानी शासक नियुक्त था उसका नाम चष्टन था परन्तु उसके पुत्र पौत्र सभी हिन्दू थे उनके नाम जयदमन, रुद्रदमन आदि रखे गये थे और इस कुल के शासकों ने अनुमान सात सौ वर्ष पर्य्यन्त राज्य किया। इस कुल के एक राजा ने पटहवन कुल के सुप्रसिद्ध राजा वसिष्ठपुत्र श्री सतकरणी के यहां विवाह किया था। इसी प्रकार शाकद्वीप से आये हुए लोग ब्राह्मण बन कर शाकाद्वीपी ब्राह्मण कहलाने लगे। जोधपुर राज्य में सेवक और भोजक दो प्रकार के ब्राह्मण मिलते हैं। यह शाकाद्वीपी ब्राह्मण कहलाते और अपने घरों में सूर्य्य की मूर्तियां को [illegible] हैं। छठी शताब्दि में गुर्जर, हून, मैत्रिक आदि अनेक जातियों ने भारतवर्ष पर आक्रमण किया था। हून सम्राटों में से [illegible]मान और मिहिरकुल दो के नाम शिलाओं पर मिलते हैं। मिहिरकुल या मिहिरकुल, "सूर्य्य का गुलाब" फारसी शब्द का अपभ्रंश है। इस सम्राट ने हिन्दू धर्म्म को स्वीकार किया था [illegible]के सिक्के पर "नन्दी" शिव का वाहन और "जयेतु वृषः" [illegible]खा मिलता है। ११ वें शताब्दि में हून कुल के राजों को क्षत्रिय [illegible] लिया गया था और चेदी के राजा यश करण ने हूनवंश की

राजकुमारी अहल्लादेवी से विवाह किया था । इसी प्रकार छटी शताब्दि में गुजर या गुर्जर यहां आये। बम्बई में गुजरात और पंजाब में गुजरानवाला इसी जाति के नाम से बसे हैं। पंजाब में तो गुजर जमीन्दार ही रहे परन्तु जोधपुर के इलाके में आकर वह क्षत्रिय बन गये। क्षत्रिय भी कैसे ३६ प्रसिद्ध कुलों में से एक कुल उन की भी बन गई। सातवीं शताब्दि में जब चीन से यूआन चुआङ्ग आया तो गुजरों की राजधानी जसवन्तपुरा के भिम्मल में थी और उस समय गुजर क्षत्रिय कहलाने लगे थे । खानदेश के गुजर ब्राह्मण कहलाने लगे। रत्नागिरी के ब्राह्मण इन्हीं गुजरों की सन्तान हैं । ११९१ के एक दानपत्र में कुनकन के एक ब्राह्मण गोविन्द गुर्जर ने अपना सारा वृत्तान्त दिया है। इस प्रकार विदेशी गुजरों का क्षत्रियों और ब्राह्मणों में समावेश हो गया । इनके राजों के नाम भी वत्सराज, नागभट् और रामभद्र आदि हुए हैं । कविवर राजशेखर ने अपने नाटक में गुजरों के दो महाराजों अर्थात महेन्द्रपाल और महिपाल को रघुकुलतिलक, रघुग्रामणी आदि शब्दों से सम्बोधन किया है। वह अपने को लक्ष्मण की सन्तति बतलाते हैं क्योंकि लक्ष्मण ने मेघनाद से युद्ध करते समय (प्रतिहरण विधेय) कर्म किया था। इसी से वह भी गुजर प्रतिहार कहलाने लगे । इसी प्रकार सिन्ड जाति का वृत्तान्त मिलता है । बीजापुर के प्रान्त में भरनमटी में एक शिला मिली है जिस में वर्णन है कि एक सिण्ड राजकुमार था वह नागवंश में उत्पन्न हुआ था। उसके सिर पर नाग ध्वजा लहराती थी और उसे भोगवतीपुर परमेश्वर की उपाधि मिली हुई थी। भोगवती पाताल देश के नागराजों की राजधानी थी । कुमार ने पाताल देश से पृथिवी को देखने की उत्कण्ठा प्रकट की । वह अहीछेत्र में आकर ठहरा । यहां उसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ और वह भारतवर्ष के नाग राजों का पूर्वज कहलाया । डाक्टर भाण्डारकर ने यह लोट राजपूतों को अनेक प्रमाणों द्वारा सिद्ध किया है कि वह पहिले नागर ब्राह्मण थे । राजपूताना में आकर शुद्ध राजपूत कहलाने लगे। कदम्ब गोत्र के चलाने वाले का नाम मयूरशर्मन् था शर्मन् के आते ही उसके ब्राह्मणत्व का परिचय मिलता है परन्तु उसके पुत्र का नाम कङ्गवर्मन था जिससे प्रतीत होता है कि उसने किसी क्षत्रिया से विवाह किया और एक क्षत्रिय कुल का संचालन

बन गया। वायुपुराण तथा विष्णुपुराण में पौरवकुल को ब्रह्मक्षत्रिय कुल कहा गया है।

"ब्राह्मणः ब्राह्मणस्य क्षत्रस्य क्षत्रियस्य च योनिः कारणं पूर्वं यथोत्कृत्वात्"।

पूरु से ब्राह्मण और क्षत्रिय दोनों कुलें उत्पन्न हुईं। पुरु के पूर्वज ययाती और शर्मिष्ठा दोनों : क्षत्रिय थे। वायुपुराण में लिखा है कि

"गर्गाच्छिनिस्ततो गार्ग्याः शैन्याः क्षत्रोपेता द्विजातयो बुभूवुः" "अजामीढात्कण्वः कण्वान्मेधातिथिर्यतः काण्वायनो द्विजाः मुद्गलाच्च क्षत्रोपतो द्विजातयो बुभूवुः।

इन उदाहरणों में क्षत्रोपेतो द्विजातयो बभूवुः की व्याख्या इस प्रकार की गई है कि क्षत्रिया इव केनचित्कारणेन ब्राह्मणाश्च बभूवुः। थे तो यह सभी क्षत्रिय परन्तु किन्हीं कारणों से ब्राह्मण बन गये।

इसी प्रकार हरिवंश में लिखा है!

जयद्रथस्तु राजेन्द्र यशोदेव्यां व्यजायत।
ब्रह्मक्षत्रोतरः सत्यां विजयोनाम विश्रुतः॥

इसी प्रकार विष्णु पुराण बतलाता है कि—

ब्रह्मक्षत्रान्तरालसंभूत्यां पत्न्यां
विजयं नाम पुत्रमजीजनत्॥

इसी प्रकार अनेक राजे ब्रह्मक्षत्रिय कहलाये। इन प्रमाणों की उपस्थिति तथा इन ज़ातों की विद्यमानता में कौन इनकार कर सक्ता है कि भारतवर्ष की वर्तमान ज़ातों की रगों में शुद्ध रक्त का संचार हो रहा है? महात्मा बुद्ध के समय से बराबर विदेशियों का देश में आगमन होता रहा और हज़ारों नहीं लाखों विदेशी इस देश में निवास करने लगे। निवास ही नहीं किया किन्तु ब्राह्मणों क्षत्रियों तथा वैश्यों में लीन होकर शुद्ध ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य

कहलाने लगे। वर्त्तमान ज़ात पात की उत्पत्ति द्वारा ज्ञात होता है कि किस प्रकार से भिन्न २ ज़ातें चलीं और उनके संचालक कौन थे। सत्य तो यह है कि न तो प्राचीन काल में वर्ण भिन्न भिन्न थे किन्तु उनका परस्पर खान पान और विवाहादि का व्यवहार था और न मध्यकालीन द्विज लोग अपने वर्णों को दृढ़ता पूर्वक स्थिर करसके। आजकल की वर्ण व्यवस्था नितान्त भ्रममूलक है और वर्णसङ्कर शब्द को बिगाड़ने में यही हठधर्म्मी कारण हुई है। आर्य्य लोग सर्वदा से गुण कर्म और स्वभाव को मानते आये हैं। इसी कारण उनके व्यवहार में जीवनशक्ति (vitality) उपस्थित थी और यह उसी शक्ति का फल हुआ कि अनेक विदेशी, ईरानी, अफगानी, तुर्क और पाताल देश तक के लोग आये और वह हमारे अन्दर आकर समा गये। हमने इस लेख को डाक्टर भण्डारकर के नोटों के आधार पर लिखा है। हमारा ख्याल है कि इस विषय पर अभी बहुत कुछ और प्रकाश डालने की आवश्यक्ता है।

—०—

चूल्हे में धर्म और उसका आर्य समाज पर प्रभाव।

"शूद्र के हाथ की बनाई (रसोई) खावें, क्योंकि ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य वर्णस्थ स्त्री पुरुष विद्या पढ़ाने, राज्य पालने और पशु पालन, खेती और व्यापार के काम में तय्यार रहें.........
........,,......जो आर्य्यों में शुद्ध रीति से बनावे तो बराबर सब आर्य्यों के साथ का खाने में कुछ भी हानि नहीं, क्योंकि जो ब्राह्मणादि वर्णस्थ स्त्री पुरुष रसोई बनाने चौका देने बर्तन भांडे मांजने आदि बखेड़े में पड़े रहें तो विद्यादि शुभ गुणों की वृद्धि कभी नहीं हो सके" (महर्षि दयानन्द सरस्वती)

"जाति अनेकन करी नीच अरु ऊंच बनायो।
खान पान सम्बन्ध सबन सों बरजि छुड़ायो॥
कूपरस सोल्हा धूत रचि भोजन प्रीति छुड़ाय।
किए तीन तेरह सबै चौका चौक लगायो"॥

[भारतेन्दु बा० हरिश्चन्द्र]

स्वामी विवेकानन्द जी ने कहा है कि

"Give up all those old discussions, old fights about things which are meaningless, which are non-sensical in their very nature. Think of the past 600 or 700 years of degradation, when grown up men by hundreds have been discussing for years whether we should drink a glass of water with the right hand or the left, whether the hand should be washed three times or four times, whether five times we should gargle or six times. What can you expect from men who pass their lives in discussing such momentous questions as these; and writing most learned Philosophies on these questions. There is a danger of our religion getting into the kitchen. We are neither Vedantists most of us now, nor Pauranics nor Tantrics. We are just "Don't touchist's, our religions is kitchen. Our God is the cooking pot and our religion is "Don't touch me, I am holy" If this goes on for another century every one of us will be in the lunatic asylum. It is a sure sign of softening of the brain when the mind can not grasp higher problems of life; all originality is lost the mind has lost all its strength, its activity and its power of thought and it tries to go round and round the smallest curve it can find".—Swami Vivekananda.

"नवजीवन" के पाठकों ने गत आषाढ़ मास की संख्या में लेख "चूल्हे में धर्म" पढ़ा होगा। मैंने उस लेख में निवेदन किया कि हिन्दुओं का धर्म चूल्हा चौका है और उसका प्रभाव धर्म की शरण में आये हुए अनेक आर्य्य भाइयों पर भी है जिससे कि खान पान को धर्म का एक विशेष अङ्ग समझने। आज मैं अपनी पूर्व प्रतिज्ञानुसार इसी की आलोचना में देना चाहता हूं जिससे पाठकों को ज्ञात होगा कि इस खान

पान सम्बन्धी विचार ने आर्य समाज को भी कितना डांवा डोल कर रखा है।

इस विषय की आलोचना करने के पूर्व मैं अपने विचार "भोजन विचार" नामक पुस्तक के विषय में प्रकट करना चाहता हूं। कई वर्ष हुए यह पुस्तक प्रकाशित हुई थी। इस पुस्तक के प्रणेता मथुरा निवासी पं० दामोदर प्रसाद शर्मा दान त्यागी महाशय हैं। मैं इस पुस्तक की पर्यालोचना में कभी प्रवृत्त न होता यदि उक्त पुस्तक के टाईटिल पेज पर प्रणेता के नाम के आगे प्रधान ओल्ड 'आर्य्य समाज मथुरा' लिखा हुआ न होता। क्योंकि प्रधान ओल्ड आर्य समाज के नाम से यह पुस्तक सर्व साधारण को खूब धोखा दे सकती है, अतएव यही सोच कर मुझे अपने विचार इस पुस्तक के विषय में प्रकट करने की इच्छा हुई है। आशा है कि दान त्यागी महाशय मुझे इस आलोचना के लिये क्षमा करेंगे?

पं० दामोदर प्रसाद शर्मा ने अपनी इस पुस्तक में केवल यही प्रमाणित करने की चेष्टा की है कि बाजार की, अन्य किसी व्यक्ति के हाथ का बना हुआ तथा किसी के साथ एक पङ्क्ति में बैठ कर भोजन करना उचित नहीं है। जब मैं युक्त प्रदेश की आर्य्य प्रतिनिधि सभा के मुख्य पत्र "आर्य्य मित्र" का सम्पादक था तब मैंने दान त्यागी महाशय को उक्त पुस्तक के सम्बन्ध में एक टिप्पणी "आर्य्य मित्र" में लिखी थी। उस टिप्पणी में मैंने कई शङ्काएं की थीं, परन्तु दुःख के साथ कहना पड़ता हैं कि आज तक उक्त महाशय ने मेरी शङ्काओं के निवारण करने की कृपा नहीं की। अतः एव लाचार होकर आज मुझको उक्त पुस्तक की पर्य्यालोचना में प्रवृत्त होना पड़ा है, जिससे प्रत्येक श्रद्धालु विज्ञ पाठक को ज्ञात होगा कि "भोजन विचार" सम्बन्धी आवश्यक प्रश्नों की किस भांति उपेक्षा की जा रही है?

"भोजन विचार" नामक पुस्तक के टाईटिल पेज

[१] सन् १९०७ में मथुरा आर्य्य समाज के सभासदों में पारस्परिक ... मच रही थी। उस समय मथुरा आर्य्य समाज की दशा सुधारने के लिये ... आर्य्य समाज स्थापित हुआ था। यह ओल्ड आर्य्य समाज सिर्फ एक सप्ताह ... था, "भोजन विचार" पुस्तक उसके कई महीने पीछे प्रकाशित हुई थी। ... दान त्यागी महाशय को प्रधान ओल्ड आर्य्य समाज छापने का इतना शौक बढ़ा ... इस पुस्तक के टाइटिलपेज पर छापने का लोभ न सम्हाल सके। लेखक

ओ३म् खब्रम्ह " के मोटे अक्षरों में " कृष्णवाक्य " अर्थात् एक श्लोक छपा है और पुनः वही कृष्णवाक्य पुस्तक के प्रथम पृष्ट में प्रकाशित है,। कृष्णवाक्य का अन्तिम पद यह है कि उच्छिष्टमपि चामेध्यं भोजनं तामसप्रियम् " यहां पर इस कृष्णवाक्य के उद्धृत करते समय दान त्यागी महाशय को यह विचारना आवश्यक था कि उच्छिष्ट अर्थात् एक रकाबी में अन्य लोगों के साथ भोजन करने का आन्दोलन नहीं है, किन्तु प्रश्न यह है कि भद्रलोक एक पङ्क्ति में बराबर बैठ कर भोजन कर लें तो कुछ बुराई नहीं है? इस विषय का ध्यान रख कर पुस्तक नहीं लिखी गयी है। पुस्तक की भूमिका जो " निवेदन " शीर्षक छपी है उसमें लिखा है कि " बाजार भोजन धर्म्म शास्त्रानुसार तथा युक्त युक्ति से महा अपवित्र होता है.........इसमें सन्देह नहीं कि कहीं कहीं बाज़ार का भोजन निकृष्ट होता है परन्तु यह बात नहीं है कि बाजार में सब जगह अपवित्र भोजन बनता हो। उन्होंने धर्मशास्त्र का कोई वाक्य भी बाजार के बने हुए भोजन करने के निषेध में उद्धृत नहीं किया है। यहां पर पुस्तक के आदि में मनुजी के "धृतिः क्षमा दमा स्तयं " श्लोक को उद्धृत कर के "पवित्रता=शुद्धता " ही को धर्म का मूलाधार समझा गया है । मैं समझता हूं कि मानसिक और शारीरिक पवित्रता=शुद्धता के विषय में किसी को आपत्ति नहीं है आपत्ति यह है कि वाह्य आडम्बर बहुत रच लेना लेकिन अन्तःकरण को शुद्ध नहीं रखना। धर्म सम्बन्ध में मन की शुद्धि की विशेष आवश्यकता है; दानत्यागी जी ने शारीरिक शुद्धि पर विशेष बल दिया है, यदि विचार पूर्वक देखा जाय तो उनकी वह शारीरिक शुद्धि ठीक वैसी ही है जैसा कि पौराणिकों में वाह्य आडम्बर प्रचलित हैं। कहने को तो उनको बाजार के अपवित्र भोजन से नफरत है परन्तु उज्ज्वल वस्त्र धारण करने की व्यवस्था दी है; यहां पर मैं दानत्यागी जी से पूछना चाहता हूँ कि उज्ज्वल वस्त्र धारण धोबी के यहां धुले हुए भी पहिनना उचित है या नहीं। क्योंकि जिन लोगों के विचार में बाजार के बने हुए पदार्थों का भोजन अपवित्र है, उन के मत में शायद धोबी के धूले हुए वस्त्र भी अपवित्र ही हो जाते होंगे।

भारतवर्ष में बाज़ार के बने हुए पदार्थों के खाने की प्रथा प्रचलित होने के विषय में पुस्तक के प्रणेता महाशय ने अपने अपूर्व ऐतिहासिक अनुसन्धान का यों परिचय दिया है—........ पहिले समय में तो बाज़ार में बनाये पदार्थ जैसे कि रोटी दाल, पूरी साग, लड्डु, पेड़े आदि बिकते थे, पर जब यवनों ने इस देश पर अधिकार किया..........और फिर हिन्दुओं को यवन बनाना चाहा या तो बल पूर्वक बाजारों में दाल चाभर (चावल ?) कढ़ी रोटी आदि बनाए हुए पदार्थों की दुकानें खुलवा दीं तो उस समय से कुछ एक मनुष्यों ने भयभीत होकर और कुछ मनुष्यों ने आलस्य के फन्दे में फंस कर भोजन करना (खाना) आरम्भ कर दिया। परन्तु जो मनुष्य यह समझते थे कि—

" तन धन धरती धर्म्म सुत मात पिता और प्रान।
एक धरम के साम्हने हैं सब तुच्छ समान॥

उन लोगों ने बाजार के अपवित्र भोजन को ग्रहण नहीं किया अर्थात् नहीं खाया और यही कारण है कि उन धर्म हठीलों में से कानकुब्ज, महाराष्ट्र और नागर आदि ब्राह्मण और कुछ चौबे भी बाजार के अपवित्र भोजनों से अब तक मुख मोड़े रहते हैं" यहां पर पाठकों को स्मरण रखना चाहिये कि मुसलमानों ने भारतवर्ष में बाजार के बने हुए भोजन के पदार्थों की प्रथा प्रचलित की है, इस विषय में कोई प्रमाण नहीं दिया है। मैं नहीं जानता कि यह कौन से तर्कशास्त्र का नियम है कि बिना प्रमाण ऐसी व्यर्थ की बातें लिखने का साहस करना ? क्या मुसलमानों के पहले भारतवर्ष में भोजन के बने हुए पदार्थ नहीं बिकते थे ? अगर पुस्तक प्रणेता महाशय अत्युक्ति से काम न लेकर इस विषय में विचार करेंगे तो उनको ज्ञात होगा कि भारतवर्ष में प्राचीन समय में भी आजकल की भांति भोजन की बनी हुई सामग्रियों की बिक्री होती थी। इस स्थल पर मेरी एक शङ्का यह है कि बाजार के अपवित्र भोजन से चौबे जी [दान त्यागी जी] का क्या तात्पर्य है ? क्योंकि कचौड़ी पूरी को अनेक लोग अपवित्र समझते हैं, दूध मलाई पेड़ा बर्फी गुलाब जामुन को पवित्र समझते हैं, इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि कानकुब्जों में बाजार की मिठाई चाहे

अन्न की बनी हुई हो चाहे दूध की सब लोग खाते हैं, यों तो महाराष्ट्री भोजनालयों में भोजन करते हैं, लेकिन पेड़ा बर्फी दूध की मिठाई जिस को फलाहारी बोलते हैं बिना किसी सङ्कोच के बाजार की बनी हुई खाते हैं। कज्जक, रेवड़ी [यह तिल की बनाई जाती हैं] तो प्रायः सब ही लोग खाते हैं। नहीं जानते तब ऐसी क्लिष्ट कल्पना की क्या आवश्यकता है ? इन जातियों के अतिरिक्त पुस्तक प्रणेता महाशय ने अपनी पुस्तक के ३० वें पृष्ठ में आर्यसमाज के भोजन विषयक विचारों के सम्बन्ध में प्रश्नोत्तर करते हुए लिखा है:-(१) श्रीमान् पं० भगवानदीनजी प्रधान आर्यसमाज मथुरा (२) श्रीमान् पं० कृष्णलालजी प्रधान आर्यसमाज, मथुरा (३) श्रीमान् पं० बाबूरामजी आचार्य मुड़सान निवासी (४) श्रीमान् पं० नन्दकिशोरदेव शर्मा और (५) श्रीमान् पं० प्रयागदत्तशर्मा यह सब लोग और इनके अतिरिक्त आप भी अनेक भद्र पुरुष हैं जो बाज़ारी अपवित्र भोजन नहीं करते। यहां पर ग्रन्थकर्त्ता महाशय को विचारना चाहिये था कि ऊपर जिन पांच भद्रजनों के नाम उल्लेख किये गये हैं वे किस जाति के हैं ? तीन तो उनमें से कानकुब्ज हैं, जिनके विषय में "आठ कनौजिया और नौ चुल्हे " वाली कहावत प्रचलित ही है। शेष दो नागर ब्राह्मण हैं जिनकी जाति कट्टरपन के लिये जगद्विख्यात है, होने पर भी " भोजन विचार " के लेखक महोदय अपनी कुतर्कमयी दृष्टि से न देखकर सूक्ष्म दृष्टि से अनुसन्धान करेंगे तो उनको पता लगेगा कि जिन जिन लोगों के नाम उन्हों ने बड़े फख्र के साथ लिखे हैं वे सब के सब बाजार की बनी हुई फलाहारी मिठाई, बर्फी वगैरह: खाते हैं। इच्छा न होने पर भी कहना पड़ता है कि इस बार ने मथुरा आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव के अवसर पर बाजार के बने हुए अपवित्र भोजन से परहेज़ करनेवाले दो एक व्यक्ति को बाजार की बनी हुई गुप्त रुप (पोशीदा तौर) से पूरी कचौड़ियां खिलाई हैं। मेरा अटल विश्वास है कि छुपलुक कर बाजार के अपवित्र भोजन (पूरी कचौड़ी खाने) करनेवालों को " भोजन विचार" के लेखक चौबे पण्डित दामोदरप्रसाद जी भलीभांति जानते होंगे।

" भोजन विचार " के लेखक महोदय " एक साथ अर्थात् एक जाति होकर एक पंगति में बैठकर " भोजन करने के भी पक्षपाती

नहीं हैं, क्योंकि उनका कथन है कि ईसाई लोग एक साथ एक मेज़ पर बैठकर खाते हैं परन्तु उनमें भी प्रेम नहीं पाया जाता। रोमन कैथोलिक और प्रोटस्टैंटे ने आपस में एक दूसरे के सहस्त्रों मनुष्यों को कतल कर डाला"। जरमन और फ्रांस का संग्राम तो अभी थोड़े दिन हुए, हुआ है और रूस में आजकल एक मुसलमानों के सुन्नी और शिया का पारस्परिक कलह का वर्णन करके प्रीति भोजन को निन्दनीय ठहराने की चेष्टा की है। उत्तर में निवेदन है कि धर्म सम्बन्धी देश सम्बन्धी मत भेद होने के कारण ईसाई, मुसलमानों में तथा अन्य जातियों में कुछ वैमनस्य हो जाना दूसरी बात है परन्तु एक पङ्क्ति में अलग अलग आसन पर बैठकर भोजन करने से प्रीति बढ़ती ही है। पुस्तक के लेखक महाशय ने रोमन कैथोलिक और प्रोटेस्टेंटों की शिया सुन्नी का व कौरव पाण्डवों का उदाहरण तो लिख दिया किन्तु इस बात का तनिक भी विचार नहीं किया कि विवाद का मूल कारण क्या है? यदि वे पङ्क्ति के भोजन को निन्दनीय न ठहरा कर इस विषय का विचार करते तो उनको ज्ञात हो जाता कि शिया, सुन्नी, रोमन कैथोलिक, प्रोटेस्टेंटों का धर्मसम्बन्धी मत भेद विवाद का मूल कारण है। जर्मन और फ्रांस की लड़ाई देश सम्बन्धी है, कौरव पाण्डवों का युद्ध भी अपने अधिकार प्राप्ति का है। मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि पङ्क्ति में बैठकर भोजन करने के कारण कदापि मन खराब नहीं होता है, पङ्क्ति की बात जाने दीजिये। पति और पत्नी से बढ़कर तो किसी में घनिष्ट सम्बन्ध नहीं हो सकता है, जिस तरह से दान त्यागी जी पङ्क्त में बैठकर भोजन करने को तिलाञ्जलि दिलाना चाहते हैं क्या वैसे ही अब पति पत्नी में मन खराब देखकर प्रत्येक मनुष्य को अभी से विवाह न करने की व्यवस्था देंगे, और तो और कहीं कहीं बाप बेटे में भी मुकदमे बाज़ी और लाठी बाजी होती है तब मेरी सम्मति में आपके मत देखते हुए सन्तान पैदा करना चाहिये या नहीं? अथवा जो सन्तान पैदा हो तो क्या उसका गला विवाद के भय से घोंट देना उचित है? यह युक्तियां ऐसे ही हैं जैसे कि कोई कहे खेती करें पर कोई हिरण न चर जाय। व्यापार करने विदेश को जायें पर रास्ते में जहाज़ न डूब जाय? भोजन तो करें पर कहीं अजीर्ण न हो जाय? ऐसी निरर्थक युक्तियों के न देने से चुप बैठे रहना

अच्छा है । विद्वजन इन निरर्थक युक्तियों को पढ़कर केवल अपने समय नष्ट के अतिरिक्त कोई लाभ नहीं उठा सकते हैं । महर्षि दयानन्द सरस्वती ने कहीं भी पङ्गत में बैठकर भोजन करने की मनाई नहीं की है ।

पुस्तक के ४४ वें पृष्ट में लिखा है कि सुनिये ! जब महर्षि दयानन्दजी कानपुर में थे तब एक दिन आपने श्रीमान् पं० हृदयनारायण कौल दत्तात्रेय से कहा था कि:—"तुम्हारे काश्मीरियों में भोजन अच्छा बनता है, अफसोस है और तो दर किनार लोग पाक भोजन बनाना भी भूल गये"। महर्षि दयानन्द के इन शब्दों को उद्धृत करके दानत्यागीजी टिप्पणी करते हैं कि क्या महर्षि के इन शब्दों से स्पष्ट विदित नहीं होता कि "द्विजों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य) को भी स्वयं (अपने हाथ से भोजन बनाना चाहिये ?) खूब !!! हज़ार बार सर खपाने पर भी समझमें नहीं आता कि स्वामीजी के ऊपर उद्धृत शब्दों में द्विजों को स्वयं भोजन बनाना चाहिये यह ध्वनि कहां से निकल रही है । महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में तो स्पष्ट शूद्रों के हाथ की बनी हुई रसोई खाने की आज्ञा दी है तब न मालूम लोगों को भ्रम में डालने की क्या आवश्यकता है ?

लेख बहुत बढ़ गया है, इस लिये पुस्तक की अन्यान्य बातों की आलोचना करने की इच्छा होने पर भी उनकी उपेक्षा करता हूं। अब इस लेख को समाप्त करते हुए केवल इतना ही निवेदन है कि दानत्यागी जी ने जो लोग अपने हाथ से बना हुआ भोजन नहीं करते हैं उनके विषय में बड़ा ही अनोखा परिणाम निकाला है। कहते हैं कि बहुधा मनुष्य आलस्य के वशीभूत होकर प्रत्येक पुरुष के हाथ की (चाहे वह दुराचारी ही क्यों न हो ?) बनी हुई रसोई (खाना) चाहे वह अपवित्र ही क्यों न हो खा लिया करते हैं........." महाराज ! ऐसा नहीं है अङ्गरेज़ों के समान तो कोई भी उद्योगी नहीं है पर वे अपने हाथ से बना कर नहीं खाते हैं। पञ्जाब के निवासी भी युक्त प्रदेश के लोगों से कहीं अधिक परिश्रमी होते हैं पर वे भी प्रायः दूसरों के हाथ का बना हुआ भोजन खाते हैं । सच पूछिये तो चूल्हे में घण्टों मुंड फूकने और घड़ियाल बजाने में मग्न रहने से ही इस देश की यह अधोगति हो रही है, सो आलस्यता का दोष लगाना सरासर मिथ्या भाषण करना है ।

चौबे जी ने अपनी पुस्तक के अन्त में काशी के पण्डितों की व्यवस्था के समान ही मथुरा के १३ सज्जनों के नाम लिख कर शतशः धन्यवाद दिया है। इस धन्यवाद का कारण यह है कि उन्होंने इस पुस्तक के लिखने में चौबेजी को बहुत सी बातें बतलाई। मुझे इन सज्जनों के नामों में मथुरा-आर्यसमाज के वर्त्तमान प्रधान और मंत्री बा० परमानन्दजी और बा० रमनलालजी का नाम देख कर अत्यन्त आश्चर्य हुआ है, दोनों सज्जनों के खान पान सम्बन्धी विचार मेरे से ही हैं। चौबेजी की भांति इन दोनों को खान पान सम्बन्धी शुद्धाशुद्ध का विचार नहीं है कि बाजार के पेड़ा बर्फी तो मजे से खालें और पूरी कचौरी से नफ़रत हो।-तब न मालूम इन दोनो महाशयों ने इस पुस्तक सम्बन्धी व्यवस्था क्यों दी है? अथवा जैसे बिना मेरी अनुमति के ही ग्रन्थकर्त्ता ने मेरा नाम सी सहायकों की नामावली में लिखने की कृपा की थी, पर विशेष आग्रह से पुस्तक में से मेरा नाम निकाल दिया, कदाचित् वैसे ही पुस्तक प्रणेता महाशय ने उक्त दोनों सज्जनों का नाम लिख दिया हो और उनकी हिम्मत अपना नाम पुस्तक में से कटवाने की न हुई हो।-अस्तु जो कुछ हो।

इतनी लम्बी समालोचना करने से मेरा तात्पर्य यही है कि खान पान सम्बन्धी सखरी निखरी कच्ची, पक्की रसोई धर्म का कदापि अङ्ग नहीं हो सकती है। मुझे भी भगवान दयानन्द के शब्दों में कहना पड़ता है कि यह सब पाखण्ड धूर्तों के चलाये हुए हैं। मुझे आशा है कि चौबे जी महाराज शान्तिपूर्वक इस विषय का विचार करेंगे कि इन खान पान सम्बन्धी रुकावटों ने इस देश की उन्नति में कौन कौन सी बाधाएँ उपस्थित नहीं की हैं? आगामी बार में "नवजीवन" के पाठकों की सेवा में हिन्दुओं की छूत छात ने आर्य्यसमाज को कितनी हानि पहुंचाई है इस विषय पर निवेदन करूंगा—

नन्दकुमार देव शर्मा

नोट,—यह लेख बहुत दिनों का लिखा पड़ा है। सम्भव है पुराना होने के कारण समयानुकूल न हो परन्तु नवजीवन का धर्म है कि जीर्ण कन्द्राओं पर जो जर्ज भूत हो कर गिरती जा रही हैं और प्रहार करता जावे। अब तो काशी के पण्डि भी छूतछात के भूत को लात मारने लगे। वह दिन दूर नहीं जब छूत छात को धर्म मानने वालों को अजायब घर में सुरक्षित रख छोड़ने की चेष्टा की जावेगी—

(सम्पादक)

दयानन्द जयन्ती

पुष्प माला

दूसरा फूल

उन सब चमकते हुए सितारों में जो बीसवीं शताब्दी विक्रमी में भारतवर्ष के अन्धकार परिपूर्ण आकाश में दिखाई देते थे स्वामी दयानन्द एक सूर्य्य था जिसकी दी हुई रोशनी से न केवल साधारण मनुष्यों के चित्त प्रफुल्लित होते हैं किन्तु जो बीसियों और चमकदार सय्यारों को आकाश और ज्योति और जीवन स्रोत प्रमाणित होते हैं। स्वामी दयानन्द केवल एक सितारा ने था परन्तु वह प्रकाश का एक केन्द्र था या यूं कहिए कि वह एक सेन्ट्रीफ्यूगल फोर्स था जो इस दुनियां में अन्य सितारों और सय्यारों के लिये प्रकाश का केन्द्र बनने के लिए आया था। आज उसको अपने शारीरिक स्वरूप में हमारी आंखों से पृथक हुए लगभग अट्ठाईस साल हुए हैं परन्तु हमने यथोचित उसके प्रकाश और ज्योति का अनुभव नहीं किया जो इस के द्वारा हम तक पहुंची है। सच तो यह है कि स्वामी दयानन्द की शखसियत को पूर्णतया अनुभव करने के लिये अभी तक देश में न तो दिल हैं न दिमाग। आर्य्य समाज में भी हमें ऐसे पुरुष अधिक संख्या में दिखाई नहीं देते जिन्हों ने स्वामी दयानन्द को यथार्थ समझा हो या जो उसको यथार्थ समझ कर उसके दिल और दिमाग को दूसरों तक पहुंचाने का साहस रखते हों। लोग उसको इस लिये सम्मान के योग्य समझते हैं कि वह आर्य्य समाज का प्रवर्तक था, वेदों का अनुवादक और टीकाकार था, सत्यार्थ प्रकाश का निर्माता था, अपने समय का एक बिल्कुल निर्भय, साहसी, और सच्चा धार्मिक और सामाजिक सुधारक था। संस्कृत का बड़ा भारी विद्वान था। अपने समय का एक अद्भुत वैयाकरणी था और बड़ा पूरा वाचाल था। परन्तु ऐसे लोग बहुत कम हैं जो उस की इस लिये प्रतिष्ठा करते हों कि वह इन सब के अतिरिक्त और इन सब बातों से अधिक एक सच्चा आर्य्य था। प्राचीन समय में जब कोई साधारण आदमी भी ऐसी बातें करता था जिसमें से कमज़ोरी टपकती हो तो लोग उसे ताने

की तरह यह कहते थे कि वह अनार्य्य पन का काम करता है, परन्तु बीसवीं शताब्दी विक्रमी में थोड़े ही आदमी ऐसे हुए हैं जिन के लिए हम ऐसे पवित्र नाम का प्रयोग कर सकें। स्वामी दयानन्द उन थोड़े महापुरुषों का शिरोमणि था।

बीसवीं शताब्दी विक्रमी में जितने महापुरुष आर्यवर्त्त के पब्लिक स्टेज पर आये उनमें से तीन विशेष रीति से प्रसिद्ध थे। अर्थात् राजा राम मोहन राय, स्वामी दयानन्द सरस्वती, और स्वामी विवेकानन्द। योग्यता के लिहाज़ से देश में और भी कई महापुरुष उत्पन्न हुए जो इन सब में से हर एक से बढ़कर थे। राजा साहब संस्कृत के ऐसे विद्वान थे कि हम उनको इस लिहाज से उन्नीसवीं शताब्दी के भारतीय लीडरों में से "मास्टर" की पदवी देंगे। इसी तरह स्वामी दयानन्द के गुरू स्वामी विरजानन्द स्यात् उन से योग्यता में बढ़े थे। स्वामी विवेकानन्दजी भी अपनी विद्या और योग्यता के लिहाज़ से अपने समय के अद्वितीय थे। आत्मिक ज्ञान में और सदाचार में महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर राजाराम मोहनराय से कहीं बढ़ कर थे। परमहंस रामकृष्ण का दर्जा आत्मिक ज्ञान में स्वामी विवेकानन्द से कहीं ऊंचा था। इन सब और ऐसे ही कतिपय अन्य महापुरुषों के अनुग्रह से हमारी गर्दनें झुकी हुई हैं। परन्तु इन सब बढ़ाईयों के होते हुए जो हमने उपरोक्त महात्माओं की लिखी हैं वह कार्य जो उन्होंने किये उसका प्रभाव इस देश के इतिहास और यहां के निवासियों के आचार पर बहुत गहरा और चिरस्थायी पड़ा है। हिन्दुओं की जातीय इमारत को नवजीवन प्रदान करने में जो भाग इन तीन महापुरुषों के सदाचार और उनकी शिक्षा ने लिया वह दूसरों की सेवा और उनके कामों से कहीं बढ़कर है। इन तीनों में से भी स्वामी दयानन्द का काम अति महान, उच्च और चिरस्थायी है। राजा राममोहन और स्वामी विवेकानन्दजी महाराज की बनाई हुई किताबें एक विदेशीय भाषा में हैं और उनके विचारों का प्रभाव अंग्रेज़ी पढ़े लिखों तक महदूद है। अंग्रेज़ी पढे लिखों के दायरे के बाहर राजा साहब और स्वामी विवेकानन्द की शिक्षा का चर्चा यदि है तो बहुत थोड़ा। परन्तु स्वामी दयानन्द की शिक्षा इस देश की प्राचीन और आज कल की भाषा में होने के कारण इतनी फैली है और फैल रही है कि उसका प्रभाव असीम है। कतिपय

महानुभावों की यह राय है कि स्वामी दयानन्द जी की शिक्षा एक तरफा और संकीर्ण है और उनके विचारानुसार यदि स्वामी दयानन्दजी अंग्रेज़ी पढ़े हुए होते तो उनके विचारों में से संकीर्णता के चिन्ह दूर हो जाते । मैं इस बात को मानता हूं कि भिन्न २ देशों के पर्य्यटन से और भिन्न २ भाषाओं के ज्ञान होने से मनुष्य के विचारों में थोड़ी विशालता और उसकी दृष्टि में एक प्रकार का प्रसार उत्पन्न हो जाता है जिसका प्रभाव उसके सदाचार और उसके कामों पर अवश्य पड़ता है परन्तु स्वामी दयानन्द की दशा में उनका किसी अन्य भाषा से अनभिज्ञ होना और सिवाय संस्कृत के और किसी भाषा से किञ्चित भी परिचित न होना उनके लिए प्रशंसा का हेतु और वैदिक सभ्यता और उनके लिये आदरणीय है । यद्यपि वैदिक सभ्यता को छोड़ कर दुनियां की और किसी सभ्यता का उनके सदाचार और उनकी शिक्षा पर प्रभाव न था, यद्यपि यह हिन्दोस्तान की चार दीवारी के बाहर कहीं नहीं गये, तथापि उनकी शिक्षा ऐसी विशाल और संकीर्ण भावों से रहित है और उनके विचार ऐसे उच्च, विशाल और सार्वभौमिक थे कि वह हमारी सभ्यता और हमारे प्राचीन साहित्य के लिये बहुत ही माननीय है । हम को भगवान बुद्ध देव के बाद कोई भी ऐसा पुरुष भारतवर्ष के इतिहास में नहीं मिलता जिसकी सामाजिक शिक्षा में इतनी गम्भीरता, विद्या और सच्चाई हो जैसी कि स्वामी दयानन्द की शिक्षा में पाई जाती है । हम शंकर स्वामी, रामानुज आदि भाष्य कर्त्ताओं और विद्वानों की विद्वता को मानते हैं परन्तु स्वामी दयानन्द की शिक्षा में जो सामाजिक उन्नति की पेशानी है उसका उनकी शिक्षा में अभाव है । प्राचीन शास्त्रकारों के पश्चात् कौन ऐसा रिफ़ार्मर हुआ है जिसने समाज के हर एक पहलू को अपनी शिक्षा में सम्मिलित किया हो और जिसने बच्चे से लेकर बूढ़े तक और स्त्री पुरुष नहीं २ वरन कुल मनुष्यमात्र के लिए क़ानून बनाया हो । स्वामी दयानन्द की शिक्षा तमाम पहलुओं से पूर्ण थी । कोई मनुष्य उसके विचारों से सहानुभूति रखे या न रखे परन्तु आवश्यक पब्लिक प्रश्नों की सूची में से वह कोई ऐसा प्रश्न नहीं बता सकता जिस पर स्वामी दयानन्द ने अपनी आत्मा का प्रकाश न डाला हो और जो उसकी रिफार्म

स्कीम से बाहर हो। इस पर खूबी यह है कि उसकी शिक्षा का ज्यादा हिस्सा वर्त्तमान समय की उच्च सामाजिक स्परिट के अनुसार हो। स्वामी दयानन्द की ख़ालिस आर्य्यन स्परिट को यदि वर्त्तमान समय के असीम साहित्य की कुञ्जी मिल जाती तो न मालूम वह हमारे लिये किन ख्यालातों के मैदान खोल देता परन्तु सच तो यह है कि उस दशा में उसको अपनी शान में किञ्चित मात्र भेद अवश्य हो जाता है। वर्त्तमान अवस्था में कम से कम कोई नहीं कह सकता कि उसने अपने ख्यालात पश्चिम से लिये हैं और पश्चिमीय सभ्यता के जामे को बुरी नहीं समझता! मैं पश्चिमीय शिक्षा की अच्छी बातों का शिरोधार्य समझता हूं और मुझे न केवल अच्छी बातों के मानने में कुछ हिचक नहीं है चाहे उसका सिखाने वाला पश्चिम का चाहे पूर्व का हो परन्तु मुझे यह भी स्वीकार करने में कुछ हिचक नहीं कि मैंने या हमने अमुक बात दूसरों से सीखा है। मैं सहर्ष यह बात स्वीकार करता हूं कि पश्चिम हमको बहुत कुछ सिखाता है और सीख रहे हैं और सीखना चाहिए परन्तु मेरी आत्मा यही कहती है कि स्वामी दयानन्द की प्रतिष्ठा इस बात से और भी अधिक बढ़ी हुई है कि उसने सिवाय अपने बाप दादा की सभ्यता और साहित्य के और किसी से कुछ नहीं सीखा। स्वामी दयानन्द के विषय में हम तो कम से कम यह कह सकते हैं कि उसका दिल, दिमाग खालिस आर्य्यन था। उसकी शिक्षा खालिस आर्य्यन थी और उनका सदाचार बिल्कुल निर्दोष था। हमारी राय में इस विशेषता से उसका दर्जा बहुत ऊंचा हो जाता है और हमको यह कहने में तनिक भी हिचक नहीं कि आर्य्य समाज के व्यवस्थापक की इस विवेकता पर हम को अभिमान है और समुचित अभिमान है और हम स्वामी दयानन्द के न केवल उपकारों के कारण उसका सम्मान करते हैं वरन इस विशेषता के कारण उनके चरणों पर अपना शिर झुकाते है।

शिव नारायण शुक्ल बी, ए,

लेदे की यात्रा

(श्रीयुत रामगोपाल मिश्र लिखित)

गताङ्क से आगे ।

हम में से कुछ लोगों ने सोचा यहां पड़े २ क्या करें चलें रामेश्वरम ही हो आवें । हम लोग चार आदमियों ने कमर बांधी । मैं मोटे सेठ Who is that black fellow and एक मास्टर असबाब औरों को सौंप एक एक पुलिन्दा बना चल खड़े हुए । गाड़ी पर एक मद्रासी से बात चीत होने लगी । उसने कहा कुम्बोकोनम देखने योग्य स्थान है । यहां क्या था। पुलिन्दा बगल में दबाया और कुम्बोकोनम ही पर झट पट नीचे आ गये । वेटिंगरूम में घुस गये, एक बड़े टब में किसी काम के लिये पानी भरा गया था सब के सब दिशा फरागत से छुटी पा पारी २ से उसी में डुबकियां लगाने लगे । जायें कहां स्टेशनमास्टर से अपनी राम कहानी कह सुनाई । वे विचारे बड़े अच्छे आदमी थे दिखाने फिराने को हम लोगों के साथ हो लिये । एक बैलों का तांगा किराये किया । यह ऊपर कम रहता है । मोटे सेठ तो भीतर खिसक रहे बस तांगा भर गया " Who is that black fellow " उनके टांगों के बीच में आ गये । स्टेशन मास्टर आगे जा बैठे, मास्टर साहब ढाई फुट के आदमी एक कोने में घुस गये । हम रहे लम्बे चौड़े खींच खांच हम भी उसी में रखे गये परन्तु सर उठावें तो ऊपर से छत बैठे, आगे को सर झुकावें तो पीठ में सेठ जी की पेट बैठे । अन्त में न रहा गया तो मैं जान पर खेल उतर ही पड़ा और चरणान २ चलना शुरू किया । मुझे देख और लोग भी " अजी वाह ! अजी वाह " करते उतर पड़े और चरणदास ही पर सवार होकर चलने की ठैरी ।

इसी वस्ती मे दो वहुत प्रसिद्ध मन्दिर हैं । एक शिवजी का और एक विष्णुजी का । विष्णुजी की मूर्त्ति वहुत बड़ी है । यहां बारहवें साल बड़ा ही भारी मेला होता है उसमें कम से कम तीन लाख आदमी जमा होते हैं । हम लोगों के जाने से कुछ मास पीछे वह मेला होनेवाला था और जगह २ रेल के स्टेशन बन रहे थे । यहां एक प्रसिद्ध ताल है और मन्दिर पुराने दक्षिणी ढंग के हैं । इनकी विचित्र बनावट होती है । कुछ इस देश के लोग भी वहां जाकर बस गये हैं। स्टेशन मास्टर साहब ने अपने घर का रस्ता पकड़ा । हम लोग एक

ब्राह्मण के यहां भोजन को पहुंचे। इस तरफ केवल दो जातें होती हैं। ब्राह्मण और नान ब्राह्मण (Non-Brahman) ब्राह्मण के हाथ का बनाया सब लोग खाते हैं। चौका आदि कुछ नहीं माना जाता। जहां एक आदमी खा गया वहां दूसरा बिना साफ किये भक्षण कर जाता है। हां, यदि शूद्र देख ले तो भोजन खराब हो जाय! यहां की रीति है कि बहुधा ब्राह्मण अपने यहां यात्रियों के भोजन का प्रबन्ध कर देते हैं यह एक प्रकार के हिन्दू होटल होते हैं। जहां कह देने पर भोजन तैयार रहिता है और ३ आना के हिसाब से प्रत्येक मनुष्य को भोजन का देना पड़ता है। हम लोग दाल तनिक उनके हिसाब से अधिक खाते थे इस से)॥ प्रत्येक मनुष्य जुरमाना पड़ता था। वहां दाल के स्थान पर चिन्ता पांडू पिया जाता है सो हम लोग पीते तो ठंडे हो पड़ जाते। अस्तु, भोजन के लिये एक ब्राह्मण के घर पहुंचे। हम लोगों के कह देने से भोजन बहुत सावधानी से बनाया गया था और स्थान वगैरः भी खूब साफ था। खैर, खाने को बैठे सब सामग्री आने भी न पाई थी कि मोटे सेठ ने भोग लगाना आरंभ कर दिया। मेरी तो पहिले रुचि ही न पड़ती थी पर कोई उपाय न देख धीरे २ खाने लगा। केवल बात यह थी कि स्त्रियां परोसने आईं सो भी लैंहिंगे दुपट्टे अङ्गिया चोली आदि वस्त्रों से लदे। सेठ जी को सूझी आओ चिन्ता पांडू चक्खें। मुंह में एक घूंट भरा, अब लगे आं, ओं, ओं, करके एक कुल्ला उसको भी कर मारा। अब इन बिचा की तो बोली निकलती न थी सब ने अपने २ पानी टटोला, देखा कि उबलता हुआ पानी पीने को रख दिया गया है। सब के सब चक्कर में आ गये। उस पानी को फेंक खाली गिलास की ओर इशारा किया। फिर वही उबलता पानी भर दिया गया, उसे फेंक ठंडा पानी मांगा परन्तु नसीब में वही लिखा था। हम लोगों ने जितनी बोलियां जानते थे सब ही बोल डालीं परन्तु उसकी समझ में एक न आई। अब सब को हंसी छूटी परन्तु मोटे सेठ के प्राणों पर बीत रही थी। वह मुंह बांधे इधर उधर देख रहे थे। बिचारे की आंखें निकली पड़ती थीं अन्त में न रहा तो घूंट गरम पानी ही का निगल गये। इतने में वह स्त्री दौड़ी गई ३, ४ को और बुला लाई; उन सब को देख हमें और भी हंसी छूटी। उधर उन्हों ने भी मुंह में कपड़ा ठूंस ठूंस हंसना प्रारम्भ किया। अब तो मेरी भी बुरी अवस्था थी। पर लुकना अवश्य पड़ा था न इधर आवे न उधर जाय। हम लोग कु

की ओर उङ्गली उठावें और वे लोग हां हां करके गरदन हिलावें। पानी की ओर इशारा करें और वे सब गरम पानी लेकर दौड़ें, अब एक बूढे लाल बुझक्कर बुलाये गये, उन्होंने आते ही आते सब के गिलासों में खूब उबलता हुआ पानी भर दिया और सब लड़कियों को मानों उनकी मूरखता के लिये धिक्कारने लगे। यह देख हम लोग हंसी के मारे लोटने लगे, लाल बुझक्कड़ जी मुंह बना सामने बैठ गये। एक बोला भाई चलो आप कुंवें से पानी भर लावें, जब वह उठा मुझे जाने क्या सूझ पड़ी कि संस्कृत का शब्द भी उगिल दें जी कड़ाकर गला थाम जल्दी से कह मारा "शीतल जल" अब तो सब की सब दौड़ पड़ीं और खूब ठण्डा पानी हंस २ के देने लगीं लाल बुझक्कड भी खड़े होकर अपनी बुद्धिमानी का परिचय गरज २ के देने लगे, काम बन गया, मोटे सेठ की जान बची।

खा पी हम लोग कुम्बोकोनम से तानजोर की गाड़ी पर चले, वहां पहुच असबाब वेटिंगरूम में छोड़ स्नानादि से छुट्टी पा एक गाड़ी पर नगर देखने चले, जहां के प्रसिद्ध मन्दिर की ओर पहिले मुंह उठ गया सो उधर ही को चल पड़े। यह मन्दिर भारतवर्ष बल्कि संसार भर में सब से बड़ा है। इसके नीचे खड़े होकर जो ऊपर चोटी कोई देखना चाहे तो इज्जत सर पर नहीं रुकती। मन्दिर बड़ाही मजबूत है। इसकी चोटी पर एक बड़ा पत्थर रक्खा हुआ है कहते हैं पांच मील को ढालू जमीन बनाकर यह पत्थर लुढ़का कर [illegible] जाया गया था। मन्दिर पर कुछ मूर्त्तियां हैं उनमें से एक मूर्त्ति एक अंग्रेज की भी है इससे पुजारी लोग कहते हैं कि बनते समय यह मालूम था कि यहां अंग्रेजों का भी राज्य होगा। जान पड़ता है यह बाद को बना दी गई है। मन्दिर के भीतर शिवजी का लिंग है ३, ४ आदमी हाथ से हाथ जोड़ के खड़े हों तो शायद वह लिंग को घेर सकें। इनकी परिक्रमा और आर्ती नीचे से भला कौन कर सकता है? इस कारण लिंग के चारों ओर एक छज्जा लगा है और सीढ़ी पर चढ़कर लोग उस छज्जे पर से परिक्रमा और आरती करते हैं। मन्दिर के बाहर एक बड़ा भारी नन्दी विराजमान हैं इतना बड़ा लिंग और ननूदिया और कहीं नहीं है। मन्दिर के चारों ओर डेढ [illegible] चौड़ी दीवार है इस पर ऊपर बन्दूक चलाने के लिये जैसे किलों पर होते हैं स्थान बने हुए हैं। भीतरी दीवार में भीतर की ओर १००, १२० के लगभग कोठरियां हैं अब उन सब में एक एक

लिंग रख दिया गया है। मैं समझता हूं कि पहिले यह सैनिकों के रहिने के स्थान होंगे और यह मन्दिर किले का काम देता होगा। इसका बड़ा घेरा है और जो खाई इसके तीन ओर बनी है वह मर्हट्टा डिच (Marhatta Ditch) जो अंग्रेजों ने मर्हट्टों से बचने के लिये बनवाई थी उससे कहीं अच्छी है। इस के फाटक में से अम्मारी सहित हाथी बड़ी सरलता से निकल सक्ता है बल्कि फिर भी उसके ऊपर तीन चार गज़ जगह रह जावेगी। शोक यह है कि इस मन्दिर की दशा अब बहुत बुरी है। पूरी मरमत नहीं होती। जब हम लोग पहुंचे तब यह बन्द पड़ा था। बड़ी कठिनाई से कुनूजीवाला आदमी मिला। खोला गया तो लिंग वाले कमरे से भड़भड़ा के बीसियों चिम गादड़ निकल भागे। उसके आगेवाले कमरे से कबूतरों की पलटन ने धावा किया। हमारे म स्टर स हवतो तनिक सा बच गये। चार पांच ने ताक कर इन्हीं के मुंह पर वाट की थी। चारों ओर से बास आ रही थी भीतर कुछ अन्धेरा भी था परन्तु पण्डा ने एक बड़ा भारी घी का चराग़ जला दिया। हम लोग जल्दी से परिक्रमा कर लम्बे हुए। मालूम हुआ यहां का प्रबन्ध वहां की रानी के सपुर्द है। हम लोगों ने रानी ही के महल पर चढाई की। यह छत्रपति शिवाजी का राज भवन बताया जाता है। कुछ तसवीरें और हथयार यहां रक्खे हैं। दीवारों पर राजाओं के चित्र बने हैं। महल बडा है परन्तु बुरी दशा में है। यहां एक तलवार है जिसको बताया जाता है कि शिवाजी के हाथ में रहा करती थी। रानी को कुछ गुजारा मिलता है। वह स्वयम् अपना प्रबन्ध नहीं कर सक्ती भला मन्दिर का क्या करेगी। उस दिन उनके यहां जलसा था, फौज उनकी कवाइद करने को तयार थी। कोई आधा दर्जन आदमी होंगे, बन्दूक मानों काली लाठी, किसी के कोट में बटन नहीं तो किसी की पतलून फटी है। किसी ने पेटी बान्धी है तो कोई ढीला है। किसी के सर पर पगड़ी आधी है तो किसी के दोनों पाओं में दो तरह के जूते हैं। हमको इतना समय न था जो उनकी कवाइद भी देख लेते हां अनुमान कर सक्ते थे। नगर देखते उसके एक कोने पर पहुंचे तो देखा कि एक बड़ा ऊंचा ज़ीना बना है और ऊपर कुछ रक्खा है. चढ गये तो देखा कि एक तोप का टुकड़ा है पहिरा आदि कुछ नहीं केवल एक लोहे का भट्ठा था। उसका मुंह कुछ न रहा होगा तो घेरे में तीन गज का तो होगा। हम लोगों ने कुछ देर उस पर बैठ कर

आराम किया। मैं तो लपक के चढ़ गया औरों को तो चढ़ना दुर्लभ हो गया। उस पर से नगर की शोभा देख हम लोग स्टेशन की तरफ चल दिये. तानजोर किसी समय में एक विशाल राज्य की राजधानी थी। कहते हैं कि इसके चारों कोनों पर ऐसी ही तोपें थीं, परन्तु अंग्रेजों ने तीन स्थानों की तोपों को तो नष्ट भ्रष्ट कर डाला है। केवल एक देखने के लिये रहने दी है। यह नगर इन्हीं तोपों के कारण अंग्रेजों को महा कठिनाई से मिला था। अब इस नगर में कुछ शोभा नहीं है जान पड़ता है अपनी दुर्दशा पर आंसू बहा रहा है।

तानजोर से तृचनापली की गाड़ी ली। स्टेसन पर वेटिंग रूम में सदा की भांति असबाब रख स्नानादि से छुट्टी पाई। सवेरे का सुहावना समय था। मैं स्टेशन पर टहिलने लगा। दुर्भाग्य से एक पुलिस के बागड़बिल्ले से मुट भीड़ हो गई। वह पूंछ बैंठा कहां से आते हो मैंने कहा काशी से। बोला, कितने दिन हुये ? मैंने कहा लग भग दस के हुये होंगे, बस आफत ही तो हो गई। उसने जाकर थाने में खबर करदी लाल पगड़ियों ने वेटिंग रूम घेर लिया। हम में से दो एक तो अपने समय को रोने लगे। किसी को याद आया जब वह बनारस से चले थे तभी छींक हुई थी। किसी ने खाली घड़ा देखा था, किसी ने कुछ और किसी ने कुछ। मैं बड़ा छटपटाया कि यह सब मुकी की चपत पोवेंगे। मुंशी जी को अकेले में ले जा कर पूछा कि यह मामला क्या है ? उन्हें ने कहा कि अपने सर्टीफिकेट दिखाइये। जब हम लोग मदरास की सरहद में घुसे थे सब का सर-टीफिकेट दिये गये थे उन पर तारीख और नाम लिखे थे जहां हों प्रति दिन वहां के डाक्टर साहेब को जाकर दिखाना पड़ता था कि हम को अभी ताऊन नहीं हुआ है। सरटीफिकेट मैंने उनके सामने रख दिये। देख भाल मुंशी जी नाक भौं चढ़ा बोले 'तो आप श्री रंगम जी के मन्दिर में नहीं जा सक्के'। मैंने कहा कारण. बोले कायदा है कि जब तक आप दो हफ्ते मदरास में न रहलें शहर में नहीं जा सक्के। आप ताऊन के घर से आते हैं" मैंने कहा "बस, इतना ही तो हम लोग लौट जावेंगे। परन्तु ताऊन के घर हम लोग आते तो हैं पर उस से बिना भद ही किये चले आये हैं. खैर, भोजन शहर में खा आवें इतनी तो आज्ञा दे दीजिये" मुंशी जी मुसलमान बोले "अच्छा ! इसमें चन्दा मुजाइका नहीं" एक पुलिस का

बागड़ बिल्ला संग हुआ और हम लोगों को भोजन करने को जाने की आज्ञा मिल गई। लाल पगड़ियां गायब हो गईं। अब तनिक जान में जान आई कि हवालात तो न भरना पड़ेगा। हमारे साथियों को सोचने से याद आने लगी कि छींक तो हुई थी पर वह रुक के चले थे। दूसरा बोला हां, मैं भी कोरा घड़ा देख कर हट गया था।

एक गाड़ी ले हम लोग नगर में घुसे। कान्सटेबिल अंग्रेजी खूब जानता था। उधर प्रायः सभी लोग अंगेज़ी बोलते हैं। हमारे गाड़ी वाले को भी उसमें थोड़ा सा दखल था। मैंने कान्सटेबिल से कहा 'भाई हम लोग इतनी दूर से आते हैं तो क्या प्रेशान ही हो कर यहां से लौट जायें' इधर सेठ अलग बिगड़ रहे थे कि क्या स्टेशन पर टहलने गये "Who is that black fellow" को तो पुलिस को देख कर बुखार ही आ गया था। मास्टर साहेब ने मौन व्रत धारण कर लिया था। कान्सटेबिल ने उत्तर दिया "नहीं मैं आप लोगों को दर्शन कराऊंगा" यह सुन सब ने फिर दांत काढ़ लिये। सेठ जी प्रसन्न हो कर्वट बदलने को उठ बैठे। गाड़ी जो उलटी सो सब के सब ऊन्धे मुंह नीचे आन पड़े। अब आनन्द में चोट वोट की थोड़ ही सूझती थी। फिर लद लिये और पाहिले श्री वेगम जी ही के मंन्दिर की ठहरी। यह दक्षिण का बड़ा प्रसिद्ध मंन्दिर है जगन्नाथ और रामेश्वरम के बीच ऐसा मन्दिर और दूसरा नहों है। यहां बिष्णु जी की एक बहुत बड़ी मूर्ति शेश नाग पर शयन कर रही है। मूर्ति हीरों और सोने से लदी है। मन्दिर बड़ी अच्छी दशा में है। कहा जाता है यहां की बड़ी आमदनी है। जिन दिनों हम लोग पहुंचे थे यहां मेला था और मन्दिर की शोभा बहुत बढ़ी हुई थी। एक स्थान पर दर्शन करने गये तो प्रत्येक मनुष्य से ॥) दर्शन कराई मांगा, नहीं तो कहीं द्वार नहीं खुलेंगे। हम ने अपने बागड़ बिल्ले की आवाज़ लगाई उसकी सूरत देखते ही द्वार झठ से खुल गया और जो महाशय मांगने आये थे उनको हम ने ढुंढवाया तौ भी न मिले, इसी प्रकार हर एक स्थान पर ॥) मांगे गये परन्तु फिर द्वार आप से आप खुल गये। जान पड़ता है पुलिस वालों से देवता लोग भी बहुत प्रसन्न हैं। पण्डों की इच्छा न रहने पर भी दर्शन दे ही देते हैं। यहां से हम लोग नगर को लौटे यह नदी के दूसरी ओर है। नगर के बीच में एक पहाड़ी है उसी के नीचे २ चारों ओर बस्ती है। इस पहाड़ी को काट कर ऊपर मन्दिर बनाया गया है और उसी प्रकार पहाड़ी

को काट कर नीचे से किनारों तक सीढ़ियां बनाई गई हैं। यहां से नगर का बड़ा अच्छा दृश्य है। यद्यपि मोटे आदमियों को ऊपर तक पहुंचना कठिन है परन्तु पहुंच कर बड़ा आनन्द उठावेंगे और कोई दशा हमारे मोटे सेठ की हुई। पुलिस वाले को डर लगा था कहीं पर लुढ़क न जावें नहीं तो सारी बात खुल जावेगी। हम लोग तो निश्चय हो रहे। वही बागड़ बिल्ला इनको परिश्रम से नीचे उतार के लाया। अब जी में सोचा आओ। जिस काम के लिये आये हैं वह भी कर ही डालें। भोजन कर करा स्टेशन पर जा पहुंचे। पुलिस-मैन से मैंने कहा 'आप अपना काम कर चुके मुंशी जी से बोल दीजिये हम लोग रवाना खा आये'। वह विचारा मुंह देखता वहीं खड़ा रहा। इतना कष्ट सहा उसका यह फल कहे तो किस से क्या कहे। हम लोगों ने तरस खा के २)उसको दे विदा किया और उस पर यह ताड़ना की कि खबरदार! ऐसा काम फिर न करना. अब की हम लोग छोड़ देते हैं। हां, वह तो गया परन्तु डर लगता था कहीं ऐसा न हो यह कोई उपद्रव उठावे इस से गाड़ी आते ही रामेश्वरम का विचार करते वहां से ट्रेन में घुस बैठे।

रामेश्वरम जाने को स्टीमर पर कुछ समुद्र का भाग उतरना पड़ता है। यहां पानी बहुत कम है इस कारण स्टीमर को चक्कर खा के जाना पड़ता है। थोड़ी थोड़ी दूरी पर भारतवर्ष से रामेश्वरम तक समुद्र में शिलायें निकली हुई हैं। इन में से बाज़े २ बहुत बड़ी २ हैं इसी से अनुमान किया जाता है कि किसी समय यहां पुल रहा होगा. इन्हीं शिलाओं पर पुल बना छोटे २ टापुओं पर होकर भारतवर्ष से लंका को रेल ले जाने का विचार हो रहा है। लग भग एक घंटे में स्टीमर उस पार पहुंचा। रास्ते में एक ज़मींदार से जान पहिचान कर ली थी उनसे कह रक्खा था कि हम लोग पण्डा नहीं करेंगे। भाग्यवश उनका एक मित्र पण्डा उसी स्टीमर से जा रहा था उन्होंने उससे हम लोगों को मिला दिया। बात यह ठैरी कि जब वह काशी गया यात्रा को आवें तो हम उसकी सहायता करें और यहां वह हमारी। संध्या हो गई थी रात्रि अंधेरी थी हम लोग उतरे, परन्तु कहीं गाड़ी का पता नहीं एक मड़य्या किनारे पर पड़ी थी सो भी केवल ऊपर से छाई हुई थी और सब लोग वहीं के वासी थे अपने २ घर का रास्ता पकड़ा। पण्डा महाशय आगे बढ़ गये अब केवल हम लोग उस मड़य्या में रह गये।

दिया बत्ती नाम को नहीं। चारों ओर वन अब समुद्र की घड़घड़ाहट बढ़ने लगी। पहिले तो मैं उसी के किनारे बालू पर लेटा २ बहार देखता रहा परन्तु जब उसमें तरंग बढ़ने लगीं तो डर के मारे मड़य्या में घुस गया। मदरास से चलते समय बहुत से हिन्दू बिस्कुट थैले में भर लिये थे । नमक सुलेमानी के मैनेजर हम लोगों के मित्र हैं विचारे ने एक बोतल दे दी थी। बस, बिस्कुट और नमक सुलेमानी ही पर विशेष कर एक सप्ताह तक खाता। अंधेरे में टटोल टटोल कर थैला और नमक ढूंढा। मास्टर बोले नमक हमको भी देना। सूझता तो था नहीं उनकी आंखों में नमक फेंक दिया। वह जो ज़ोर से चिल्लाये तो मैं सट पटा के उठ खड़ा हुआ। बोतल और थैला मेरे पैरों पर रक्खे थे उठते ही थैला तो बालू में और बोतल सेठ के पेट पर। खाने की कौन कहे, मैं भाग के मड़य्या के बाहर आया इतने में हवा ज़ोर से चल निकली सब के कान नाक मुंह में बालू भरने लगी। डर यह लगा था ऐसा न हो गाड़ी यहां तक आवे नहीं रास्ते ही से लौट जाय सोचा, चल चरण दास ही को कष्ट दें सो मोटे सेठ और असबाब को कौन लाये. इतने में बाहर से गाड़ी की लालटैन चमकी. मैं भय से उछलने कूदने लगा। साथी जो अभी तक बड़े क्रुद्ध थे मुझ से फिर प्रसन्न हो गये। गारड साहेब की लालटेन ले कपड़े लत्ते बिस्कुठादि बटोर और सेकन्ड क्लास में लद दिये। रामेश्वर पहुंचे उसी गाड़ी में सो रहे। सुना था यह सवेरे लौट के जायगी और इसी कारण सेकिन्ड क्लास में चले थे। अभी विस्तर बिछाया भी न था कि स्टेशन मास्टर तिकट२ करते पहुंचे। मैंने कहा 'बोलो मत' खुर२ करने लगो, पर वह कहां मानने वाला था। भीतर घुस ही तो पड़ा, मैं और सेठ जी ऊपर थे बाकी दो नीचे। स्टेशन मास्टर उन्हें छोड़ मेरी ओर झुका अब होने लगी चोंचों झोंझों। मैंने कहा देखो ! 'जाओ, स्टेशन मास्टर को भेज दो' वह बोला स्टेशन मास्टर मैं ही हूं ' मैंने कहा क्या बक्ते हो निकलो यहां से, कुली हो, धोका देना चाहते हो ' यथार्थ में वह काला इतना ही था बहुत बक झक हुई तो मैंने कहा ' नम्बर बोलो हम स्टेशन मास्टर साहेब से शिकायत करेंगे, तुम सोने में गड़बड़ डालते हो ' वह कुछ झेंप सा गया, मैं फिर लेट रहा। कुछ देर के बाद वह फिर

सोच सांच के बोला 'साहेब यह गाड़ी रिज़र्व होगी' इतने में बाबू अयोध्या दास गोरखपूर के बैरिस्टर जो गाड़ी रिज़र्व करना चाहते थे आ गये, हम लोग इनको खूब जानते थे, हम लोगों को देख यह तुरन्त लौट पड़े कि हम गाड़ी न रिज़र्व करायेंगे। उनकी आवाज़ सुनते ही सेठ जी धम से नीचे आ पड़े और हम लोग अपना पुलिन्दा दबाये गाड़ी के बाहर. अब और झगड़ा फैला अंत में हम सभों ने ज़बरदस्ती उन्हें गाड़ी में धकेल अपना रास्ता लिया स्टेशन मास्टर यह झगड़ा होते देख अपने कमरे में घुस गया। हम सब ने भी उसी के दर्वाजे पर डेरा डाला. सबेरा होते ही अपने पण्डा जी के साथ चल दिये।

रामेश्वरम् छोटा सा द्वीप है. इसके एक तरफ श्री शिव जी का मन्दिर है, कहते हैं यह स्थापना श्री रामचन्द्र जी के हाथ की की हुई है। ख़ास मन्दिर बहुत छोटा है। अब इसके इधर उधर बड़े २ मन्दिर बन रहे हैं। शिव जी का लिंग मन्दिर में नीचा पड़गया है और दूर ही से दर्शन करने दिये जाते हैं। केवल पण्डा लोग निकट जा सक्ते हैं। इसी के पास एक कुंवा है लोग उसमें स्नान करते और उसका जल लाते हैं। इस मन्दिर के चारों ओर जो परिक्रमा सी बनी है वैसी कहीं और नहीं है। वह देखने में बड़ी सुन्दर और बहुत बड़ी है मन्दिर की शोभा उसी से है. हम लोगों ने लछमण कुण्ड में स्नान किया और खा के वहां से लौट पड़े.

विचार आया चलो मदुरा देख लें, चल पड़े। स्टेशन पर उतर असबाब वेटिंग रूम में रक्खा। मैंने जल्दी के मारे सोचा चल के थर्ड क्लास के पाखाने में ही दिशा शौचय से निवर्त होलें। वहां जो पहुंचा तो उलटे पांवों भागा. एक बड़ा भारी हाता खींचा था. ज़मीन एक सी उसी में १०-१२ आदमी बैठे हैं. आपस में हस बोल रहे हैं और गड्डी पीते हैं। इधर जगह २ पर मिहतर भी साफ करता जाता है। नल बाहर लगा है सब के सब बाहर आकर आब दस्त लेते हैं। मैं जो आखें मीच के भागा सो बाहर मिहतर की डलिया ही पर आन पड़ा था बाल २ बच गया। उस दिन से ४-५ दिन तक खाना दुर्लभ हो गया। ख़ैर, गाड़ी से शहर यात्रा को निकले. यहां भी एक बहुत बड़ा मन्दिर है। उसमें चार बड़े २ बिशाल फाटक हैं। मन्दिर श्री विष्णु जी का है। धन दौलत से भरपूर है रत्न बहुत हैं.

यहां के मन्दिर के ऐसे खम्भे कहीं नहीं हैं लोग प्रायः इन्हीं को देख ने आते हैं । मन्दिर में बड़ी भीड़ भाड़ रहती है और सब दक्षिणी मन्दिरों में यही सब में अच्छी दशा में है। इस नगर में बड़ी चिहल पिहल है । बहुत से पुतली घर हैं और बड़ा अच्छा कपड़ा बनता है । प्रायः हाथ का काम होता है । एक मनोहर ताल के बीच में यहां बड़ा सुन्दर छोटा सा मन्दिर है । एक बर्गद का पेड़ यहां बहुत ही बड़ा है कहा जाता है कि भारतवर्ष में उसी का दूसरा नम्बर है । हम लोग पुतली घर आदि देख मदरास को चल दिये।

इधर की गाड़ियों में ड्योढ़ा दर्जा नहीं होता और गाड़ियां ऐसी होती हैं कि एक सिरे से दूसरे सिरे तक लैन साफ रहती है । रात का समय था । गाड़ी में कच्च फच्च बेहद थी । पटरियां तिहाई के बराबर होती हैं । अब हम लोग पहुंचे तमाम गाड़ी में ठट लगी थी ज़मीन पर भी लेट सो रहे थे । हम लोग चढ़ तो आये परन्तु बैठने का ठिकाना न था और कौन कहां है यह भी ख़बर न थी । एक काबुली महाशय टांग फैलाये आनन्द की नींद से सो रहे थे एक बेर मैंने उन से टक्कर खाई । आंखें खुलते ही मैंने चट बड़े अदब से सलाम कर मिजाज़ पुरसी की । बिचारे उठ के बैठ गये मैं भी बैठा । बोले मैंने आप को पहिचाना नहीं । मैंने कहा हां, ख्याल न रहा होगा । झठाके से मैंने उनके रोजगार का हाल पूछना आरम्भ किया कि अब कैसी बर्कत होती है क्या हाल है ? लगे वह रामकथा कहने इधर मुझे आई नींद सो मैं तो सो गया । मदरास में आंख खुली । सलाम करके चलता हुआ । स्टेशन पर फिर सब इकट्ठे हुये । अदयार को कूच किया बहुत दिनों से पूरी नींद नहीं मिली थी । ३-४ दिन बड़े आनन्द से कटे । एक ट्राम्ब आ रहा था । सब के सब दौड़ के उसके रुकने से पहिले ही चढ़ लिये। मैंने कहा मैं ही क्या रह जाऊं ? दौड़ ही तो पड़ा । परन्तु पहले का चढ़ा था नहीं बीच ही में लटक गया । लोगों ने शोर मचाया । ट्राम तुरन्त रोका तब लोगों ने खीच के हमें भीतर डाला सब विपत्ति से बचे नहीं यहां एक के दो हो गये होते ।

मदरास में अधिक शोभा नहीं है, बस्ती बड़ी है परन्तु मकान अच्छे नहीं हैं । लोग बहुत नेक और सच्चे होते हैं अदयार में आ नन्द से कुछ दिन बिता घर की याद आई । बनारस का कूच हुआ

यों त्यों कर स्टेशन पर पहुंचे । गाड़ी भी खेंचातानी से मिल ही गई, एक कमरे में हम लोग भर गये उसमें एक मदरासी और थे उन्होंने कहा यदि आपको कष्ट न हो तो आप दूसरी गाड़ी में चले जाइये । हम लोग असबाब खोल डालें, बहुत दूर का सफर है । आप बिगड़ के बोले " क्या हमने किराया नहीं दिया है जो " सब चुप रहे । अब गाड़ी चलने लगी मैं ऊपर चढ़ा और हैं हैं हैं करता हुआ उनके ऊपर भद से आन गिरा । इतने में एक और चढ़ा और हम लोगों के " देखना २ " करते २ उनके ऊपर लट्ठ से आ पड़ा उन्होंने फिर भी इस से मल न की तब मैंने कहा सेठ जी अब की आप चढ़के कूदिये देखिये तो बड़ा आनन्द आता है । अब तो वह ऊपर आया, कभी उठे और कभी बैठे, आपही आप बोल उठा मुझे अगले स्टेशन ही पर उतर जाना है सेठजी बोले, गाड़ी रुके तो मैं चढूं, स्टेशन आते ही वह कूदा सो वे पेंदी के लोटे की तरह लुढ़क गया । हम लोगों ने जो तालियां बजाना शुरू कीं सो वह नौ और दो ग्यारह हो तो गया ।

हम सब खाना लेना भूल गये थे, आसनसेल स्टेशन पर पहिले पहिले उसके दर्शन हुए अचार मिला सो अचार ही चट कर गये । मीठा आया सो मीठा ही उड़ा गये । इतने में पूरियां दिखाई दीं सब ने उसी को आ घेरा पैंक मोल ले तो दो बस खर्च लें कोई तरकारी निकाले तो कोई मिठाई उठावे, पूरी वाला पूरी छोड़ अलग जा खड़ा हुआ । हम ने कहा रोता क्यों है दाम ले लो उसका सब साफ कर गये पर भले आदमी ने दाम एक का डेढ़ लिया । यों ही दिया तोबा करते बनारस पहुंच ही तो गये । जान बची लाखों पाये ।

वालटेअर भारतवर्ष में तन्दुरुस्ती के ख्याल से सब में अच्छा माना जाता है । यह बड़ा ही सुन्दर स्थान है । समुद्र की शोभा वर्णनीय है । वह बहुत गहिरा और पानी किनारे ही पर बहुत है । उसके किनारे २ सड़क बनी है और इस सड़क के दूसरे एक बहुत नीची खाड़ी है । ६ बंगले बने हैं । समुद्र की घड़घड़ाहट २ हवा का चलना, हरे २ पेड़ों की शोभा आगे नीले समुद्र का चारों ओर बन इस स्थान को स्वर्ग बनाये देते हैं । यहां के हिन्दुस्तानियों के रहिने का स्थान विजीगापटम कहलाता है और

अंग्रेजों के रहने का वालेसर परन्तु वालटेअर में कुछ भारतवासियों के भी बंगले हैं। विजिगापटम हिन्दोस्तानी ढंग की वस्ती है और इसका दृश्य बहुत सुन्दर है। कुछ दक्षिण के नगरों की एक विचित्र शोभा है जो इस ओर नहीं पाई जाती।

रामगोपालमिश्र बलरामपुरी।

———:०:———

पूर्व का उज्ज्वल तारा अस्त होगया।

जापान का मिकेडो चल बसा।

अन्धकार परिपूर्ण रात्रि में पथिक आकाश की ओर आशा भरी दृष्टि से निहारता है। उसे अनेक टमटमाते तारे नज़र आते है परन्तु उसका मन प्रफुल्लित नहीं होता, अकस्मात इतिहास का कालिमा युक्त पृष्ट बदलता है, पूर्व से एक उज्ज्वल तारा क्रमशः उठता बढ़ता और आकाश के मध्य में आ पहुंचता है। सारे जगत की चकित दृष्टि उसके दिव्य प्रकाश की ओर पड़ती है। सहस्रों तारे जो अब तक अपनी कीर्ति और ज्योति को धारण किये अटल प्रतीत हो रहे थे लज्जा वश मुंह छिपाते और अस्त हो जाते हैं इस उज्ज्वल तारे के सामने कुछ ही और भाग्यशाली तारे ऐसे हैं जिन्हें साहश्य का गौरव प्राप्त है एक जगत उनके अस्तित्व को मानता हुआ भी पूर्व से प्रभव प्रभात के नायक की ओर निहार रहा है जगतरूपी रङ्गमञ्च पर कितने अभिनेता और अभीनेत्रीगण आये और अपना २ अभिनय पूर्ण कर तिरोभूत होगये परन्तु भूत और वर्तमान काल में जापान से विनिसृत मिकेडो के सदृश्य थोड़े ही ऐसे उज्ज्वल कीर्ति के अभिनेताओं का प्रार्दुभाव हुआ है। मिकेडो एक तारा था जो प्राच्य देश के अन्धकारमय जगत में प्रातःकाल के तारे के समान चमका एशियामात्र के लोगों की दृष्टि इस दिव्य प्रकाश के पुंज की ओर खिच गई। आओ पाठक! एक दृष्टि से इस महान आत्मा के जीवन पर ज़रा ध्यान दें।

(२)

छप्पन वर्ष व्यतीत हुए जब इस महान पुरुष ने जन्म लिया। जापान उस समय में मूर्खता, परस्पर के कलह तथा विदेशियों के आक्रमणों का क्षेत्र बन रहा था हां इस जर्जरीभूत जापानरूपी वि-

शाल भवन के मालिक एक ही जाति के लोग थे और वह एक ऐसे सम्राट को अपना नेता मानते थे जिसका खानदान गत सन् ईसा से ६६० वर्ष पूर्व से चला आता था। १८६८ में जब कि राजकुमार मटसो की आयु १६ ही वर्ष की थी इन्हें राजसिंहासन पर आरूढ़ किया गया एक वर्ष के अनन्तर एक समृद्धि शाली धनाड्य की पुत्री राजकुमारी हारो से सम्राट का विवाह हुआ। जापान उन दिनों वाह्य तथा अभ्यन्तरीय झगड़ों का पात्र बन रहा था। अमेरिकावालों ने एक इकरार नामा करवा लिया था जिसके द्वारा अन्य देशों के जहाज़ जापान में जाने और व्योपार करने में असमर्थ थे। सभी जातियों के प्रतिनिधि उसका ग्रास बनाने की चिन्ता कर रहे थे। इधर देश में शूगन लोग भिन्न २ स्थानों पर शक्तिमान बनकर सामहिक शक्ति का निरादर कर रहे थे। सम्राट मिकेडो ने सब से प्रथम यही कार्य किया कि भिन्न २ और अस्त व्यस्त हुई २ शक्तियों को एकत्रित किया। इतिहास के पृष्टों पर आत्म समर्पण के ऐसे थोड़े उदाहरण मिलते हैं जैसे कि इस प्रतिभाशाली सम्राट की प्रार्थना पर शूगन लोगों ने दिये। अनेकों ने अपनी सेना और धन सब सम्राट के पास भेज दिया और स्वयम अल्पवृति को लेना स्वीकार किया। जब अभ्यन्तरीय शक्ति द्वारा सम्राट मिकेडो तेज से अभिभूत होगये तो उन्हों ने उन तमाम उद्दण्ड व्यक्तियों को दण्ड देना आरम्भ किया जो देश की उन्नति के बाधक थे। घरेलू झगड़ों से निपट कर उन्हों ने विदेशियों से सन्धि करने और प्रत्यक जाति के लोगों के आने और व्योपार करने के आधकार प्रदान कर दिये।

(३)

सम्राट मिकेडो बड़े ही दीर्घदर्शी और प्रतिभाशाली थे उन्हों ने अनुभव किया कि जैसे खड़ा हुआ जल सड़ने लगता और बदबू देता है ऐसे ही हमारी स्थायी सभ्यता है। इस में उन्नतिशाली पाश्चात्य देशों को तीव्र गति का पैवन्द लगाना अभीष्ट है। इसी उद्देश्य से उन्हों ने २३ मार्च १८६८ को विदेशी राज्यों के दूतों को अपने यहां निमिन्त्रित किया और भिन्न २ विषयों पर उन से परामर्श लिया। इधर बिखरी हुई शक्ति एकत्रित हो चुकी थी, सम्राट ने जागीरदारों को राज्य के शासन में सम्मिलित कर लिया।

क़ानून का शोधन करवाया और सर्वसाधारण की उन्नति के उपायों पर बिचार करने के लिये प्रजा के प्रतिनिधियों को निर्वाचित करवाया। १८७२ में सब से पहिली रेलवे लाईन बनी। सेना विभाग को भी पश्चिमी ढङ्ग पर चला दिया, यहांतक कि पोशाक भी बदल दी गई। उस समय सम्राट का कथन हुआ करता था कि हम सत्यान्वेषी हैं यदि जापान की सारी बातें सच्ची नहीं तो जापान को सच्च जहां से मिलेगा. वह उसे तत्काल अपना लेगा। इन सारी नवीन बातों के प्रचार करने में सम्राट को बड़े २ क्लेश उठाने पड़े परन्तु विद्या के प्रचार के साथ २ सर्वसाधारण प्रगाढ़ श्रद्धा द्वारा सम्राट को साथ देने लगे, १८७६ और १८८४ इन आठ वर्षों में प्रजा ने ३ बार विद्रोह किया जिसे सम्राट ने प्रतिबार बुद्धिमता से शान्त किया १८८८ वर्तमान प्रजातन्त्र राज्य की घोषणा हुई। मिकेडो ने सभी विदेशी शक्तियों से प्रेम का व्यवहार रखा और अपने देश को उन्नति करने का समय प्रदान किया परन्तु सब से पहिले जब जापानी योधाओं ने रण विद्या में कुशल होने का परिचय दिया वह १८७४ सन् ने जब जापान के वीरों ने फारमसा के डाकुओं को नेस्त नाबूद कर दिया और वहां पर एक उपजाऊ भूमि तैय्यार कर दी। १९०५ में जापानी वीरों ने चीन की परितप्त भूमि में अपने कर्तव दिखलाये परन्तु १९०९ के आश्चर्य जनक युद्ध में जो दक्षता और कुशलता जापानी सेना ने दिखलाई उसका उदाहरण इतिहास में मिलना दुस्तर है जापानी रमणियों ने राजपूत देवियों और स्पार्टा की माता का सा दृश्य दिखला कर देश प्रेम का अनन्य परिचय दिया था। जहां बरी और बहरी फौज़ निपुण थी वहां राज्य के प्रत्येक विभाग में भी उन्नति हो रही थी। शिक्षा पर अतिशय बल दिया गया। स्त्रियों के लिये यथोचित शिक्षा का प्रबन्ध हुआ। कलाकौशल शिक्षा में तो जापान सब से आगे बाज़ी ले गया। सम्राट ने अपने सद्विचारों से पचास वर्ष के भीतर ही भीतर जापान को प्रथम श्रेणियों की जातियों में लाकर धर दिया। सम्राट महोदय का जीवन निष्कलङ्क था। इसी कारण प्रजा उसकी भक्ति पूर्वक पूजा करती थी। सम्राट के जीवन ने जापान में नवजीवन का संचार कर दिया आज कोई विभाग राज्य का ऐसा नहीं जहां कि नेता अन्य देशों के विद्वानों से पिछड़े हुए हैं। विद्या में, व्यापार में, और राज्यशासन में

जापान प्राच्य देशों के लिये प्रातःकाल के उज्ज्वल तारे के समान पूर्व में देदीप्यमान हो रहा है।

सम्राट मिकेडो ने महाराज महामना अशोक का अनुकरण किया। धर्माशोक ने यदि शिलाओं द्वारा उपदेश दिया था तो मिकेडो ने प्रति विषय पर राज्य की ओर से प्रजा के कल्याण के लिये विज्ञापन दिये हैं। शिक्षा के सम्बन्ध में राज्याज्ञा को मिकेडो ने इन रोचक शब्दों में कहा था।

"मेरी प्रजा, तुम अपने माता पिता का सत्कार करो, भाइयों से दया का व्यवहार करो, स्त्रियों से समानता और न्याय का आचरण करो, मित्रों से सच्ची मैत्री का प्रदर्शन करो. सभ्य, अभिवादन शील और कर्म खर्च करनेवाले बनो, अन्य व्यक्तियों से वैसा ही सद्व्यवहार करो जैसा कि तुम चाहते वह तुम से सद्व्यवहार करें। स्वाध्याय से कभी भी मन को उचाट न करो, अपने व्यवसाय में उन्नति करते हुए व्यापार की वृद्धि करो, अपनी मानसिक शक्तियों को उत्कृष्ट करो, आवश्यक्ता पड़ने पर देशभक्ति, वीरता पुरुषत्व और साहस के दिखलाने में पीछे मत हटो इस प्रकार अपने राज्य और जाति का सम्मान बढ़ाते हुए देश को समृद्धिशाली बनाने में हमारा हाथ बटाओ"।

जिस सम्राट के विशुद्ध और प्रदीप्त हृदय से ऐसे शुभ विचार निकल रहे हैं उस पितृ सदृश सम्राट की सेवा के लिये कौन अपने प्रिय प्राणों को न्यौछावर न करता जापान की प्रजा ने वस्तुतः सम्राट को पिता के तुल्य माना और पितृ स्नेह तथा प्रकाश के छाया तले रहकर अनन्य उत्साह से उन्नति करते हुए आज जापानी सब प्राच्यदेशों के आदर्श बन रहे हैं। जापान में निस्सन्देह पूर्व के तारा के अस्त होने पर दुख मनाया जा रहा है परन्तु वैसा ही दुख एशिया की वह जातियां भी अनुभव करेंगी जो इसी तारा के प्रकाश में उन्नति के पथ पर चलने को उद्यत हो रही थीं।

सामाजिक समाचार।

इन दिनों पंजाब में पतित जातियों के उद्धार का प्रशंसनीय कार्य भले प्रकार हो रहा है। मीरपुर ज़िला जेहलम तथा गुरदासपुर के ज़िलों में हजारों की संख्या में लोग आर्यसमाज की शरण में आते और वैदिक धर्म को ग्रहण करते चले जाते हैं जेहलम के

ज़िले में श्रीमान् महात्मा हंसराजजी अपने उपदेशकों तथा सहायकों के सङ्ग विराजमान हैं गत दीनानगर आर्यसमाज के उत्सव पर अनुमान तीन सौ पुरुष स्त्री आर्य समाज में सम्मिलित हुए उसके अनन्तर ३१ जूलाई को पण्डित रामभजदत्तजी चौधरी ने ६०० स्त्री पुरुषों को वैदिक धर्मी बनाया। बटाला आर्यसमाज के आने वाले उत्सव पर तीन चार हजार पुरुष और वैदिक धर्म को ग्रहण करेंगे। पंजाब में अछूत जातियों के सुधारने के लिये इस समय प्रायः सभी समाज अग्रसर हो रही हैं। हां कुछ ऐसे पुरुष अब भी मिलते हैं जो विरोध पर उद्यत होते हैं परन्तु उनका विरोध न तो चिरस्थायी और न सारगर्भित है अतएव वह विचारणीय भी नहीं। आशा रखना चाहिये कि यह प्रचण्ड अग्नि पंजाब से उठकर बङ्गाल मद्रास तथा अन्य प्रान्तों के अन्ध परम्परा के भद्दे विश्वास को शीघ्र ही भस्ममात कर देगी।

पण्डित गणपति जी शर्म्मा के स्मारक के लिये ज्वालापुर की महाविद्यालय सभा ने गणपति भवन बनवाने का निश्चय किया है। इस भवन पर अनुमान १०००० रुपये लगेंगे। साथ ही उक्त सभा ने उनके छोटे भाई श्यामलाल के पढ़ाने तथा उनकी वृद्धा माता को निबाहार्थ मासिक सहायता देने का विचार किया है। ऐसे शुभ कार्य्य में शीघ्रता ही करना उचित है।

मेघ उद्धार सभा स्यालकोटः—आर्य्य समाज स्यालकोट ने मेघों के उद्धार करने में एक प्रशंसनीय कार्य्य किया है। अब उन्हीं मेघों के सन्तानों को दस्तकारी सिखलाने के लिये स्यालकोट में ही एक सभा खोली गई है जिसका प्रथम उत्सव श्रीयुत्त राय ठाकुर दत्तजी के सभापतित्व में हुआ। मेघों की शिक्षा के लिये सभा ने आगामी वर्ष के लिये ९०००) रुपये का बजट पास किया है। इसी सम्बन्ध में पूजनीय ला. लाजपतरायजी ने हिन्दू एलिमेन्टरी एजूकेशन लीग फण्ड में से दो स्कूलों का खर्च देने की इच्छा प्रगट की है। इन स्कूलों में साधारण शिक्षा के अतिरिक्त वस्त्र बिनने और मेमारी के कार्य्य भी सिखलायें जायेंगे। यदि स्यालकोट के समान इस प्रान्त में आर्य्य पुरुष कुछ इस प्रकार का कार्य्य करें तो गवर्नमेन्ट को मुक्ति फौज का आश्रय न लेना पड़े।

Printed by Pt. Baijnath Jijja, Manager at the Tara Printing Works, Benares, and Published by Keshava Deva Shastri, Dasaswamedh, Benares City.

नवजीवन बुक डिपो काशी।

हमारे नवजीवन बुक डिपो में स्त्री शिक्षा की तथा अन्य उत्तम २ पुस्तकें विक्रयार्थ मंगाई गई हैं। अब ऐसा सुप्रबन्ध हो गया है कि मांग के साथ ही पुस्तकें तुरंत भेज दी जाती हैं। पाठक यह विचार रक्खें नवजीवन का जैसा धार्म्मिक तथा सामाजिक उद्देश्य है वैसी ही उत्तम २ पुस्तकें यहां से मिलती हैं। कुछ पुस्तकों का सूचीपत्र यहां दिया जाता है। ५) रुपये से अधिकके खरीदने वालों को उचित कमीशन भी दिया जाता है। जो लोग पुस्तकें मंगाना चाहते हैं वे निम्न लिखित पते से मंगावें:—

मैनेजर नवजीवन बुकडिपो काशी।

—:पुस्तकों का सूचीपत्र:—

पुस्तक	मूल्य
सीता चरित्र ५ भाग पृष्ठ ७०० के लगभग—	१॥=)
नारायणी शिक्षा—	१)
स्त्री सुबोधिनी	१)
नारी धर्म विचार १ भाग	॥)
... ... २ भाग	१)
महिला मंडल २ भाग	।॥)
रमणी पंचरत्न	।)
गर्भ रक्षा विधान	॥)
गर्भ रक्षा	=)
वनिता विनोद	१)
भारत की वीर तथा विदुषी स्त्रियां २ भाग	॥=)॥
सच्ची देवियां	।=)
चन्द्रकला सच्चा उपन्यास	।)
लक्ष्मी एक रोचक और शिक्षा प्रद उपन्यास	।)
रमणी रत्नमाला	।=)
... प्रकाश	१)
ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका	१।)
संस्कार विधि	॥)
महाबीर जी का जीवनचरित्र	१।)
महात्मा बुद्ध का जीवनचरित्र	।)
भीष्म का जीवनचरित्र	।)
वीर्य्य रक्षा	=)
उपदेश मंजरी	॥)
स्वामीजी का जीवन श्री रामविलास शारदाकृत	१॥)
धर्म शिक्षा १ भाग	।)
वीरबालक अभिमन्यु	≡)
हलदी घाटी की लड़ाई	=)
राणा प्रतापसिंह की वीरता	≡)
एकान्त वासी योगी	-)
भारत की वीर माताएं मूल्य	॥≡)
आर्य्यों का आत्मिक उत्सर्ग-	॥)
प्रोफेसर राममूर्ति की कसरतें	=)

और अन्य २ पुस्तकें। मंगाने का पता

मैनेजर नवजीवन बुकडिपो,

नवजीवन के नियम

(१) नवजीवन का वार्षिक मूल्य ३) रुपये मात्र है।
(२) प्रतिमास की २० तारीख़ को काशी से निकला करेगा
(३) नवजीवन में कोई अश्लील विज्ञापन न छपने पावेगा।
(४) विद्यार्थियों, छात्राओं, कन्या पाठशालाओं की अध्यापिकाओं और पुस्तकालयों से केवल २) रुपये वार्षिक मूल्य लिया जावेगा।
(५) प्रतिमास प्रकाश होने की तिथि के १० दिन के अन्दर अन्दर नवजीवन के न पहुंचने पर दूसरी कापी भेजी जावेगी, अन्यथा मूल्य देना पड़ेगा.

—:o:—

नवजीवन का उद्देश्य।

(१) वैदिक धर्म्म के प्रचारार्थ
(क) आर्य्य कुमारों तथा कुमारियों में नवीन जीवन का संचार करना
(ख) सामाजिक उन्नति के उपायों पर विचार करना।
(ग) आर्य्य जीवन की मर्यादा को स्थापित करने की चेष्टा करना।
(घ) महानुभावों के सच्चरितों पर विचार करना और
(ङ) उपयोगी संस्थाओं के वृतान्तों को सर्वसाधारण तक पहुंचाना।

No. A. 474 ...]   रजिस्टर्ड नं० ४७४

नवजीवन

Nawajiwan

सम्पादक—केशवदेवशास्त्री

विषय सूची ।

भाग ४ (सितम्बर १९१२) अङ्क ६

वार्षिक मूल्य ... ... ३) रु०

एक प्रति का मूल्य ... ... ।-)

नवजीवन के नियम

(१) नवजीवन का वार्षिक मूल्य ३) रुपये मात्र है।
(२) प्रतिमास की २० तारीख़ को काशी से निकला करेगा
(३) नवजीवन में कोई अश्लील विज्ञापन न छपने पावेगा।
(४) विद्यार्थियों, छात्राओं, कन्या पाठशालाओं की अध्यापिकाओं और पुस्तकालयों से केवल २) रुपये वार्षिक मूल्य लिया जावेगा।
(५) प्रतिमास प्रकाश होने की तिथि के १० दिन के अन्दर अन्दर नवजीवन के न पहुंचने पर दूसरी कापी भेजी जावेगी, अन्यथा मूल्य देना पड़ेगा.

—:o:—

नवजीवन का उद्देश्य।

(१) वैदिक धर्म्म के प्रचारार्थ
(क) आर्य्य कुमारों तथा कुमारियों में नवीन जीवन का संचार करना
(ख) सामाजिक उन्नति के उपायों पर विचार करना।
(ग) आर्य्य जीवन की मर्यादा को स्थापित करने की चेष्टा करना।
(घ) महानुभावों के सच्चरितों पर विचार करना और
(ङ) उपयोगी संस्थाओं के वृतान्तों को सर्वसाधारण तक पहुंचाना

ओ३म्

उदयति यदि भानुः पश्चिमे दिग्विभागे
प्रचलति यदि मेरुः शीततां याति वन्हिः ।
विकसति यदि पद्मं पर्वताग्रे शिलायां
न भवति पुनरुक्तं भाषितं सज्जनानाम् ॥

भाग ४. | सितम्बर, १९१२ | अङ्क ६

प्रार्थना ।

"तमेव विदित्वा अति मृत्युमेति"

भगवन् ! सूर्य्य ज्योति का एक बड़ा पुंज है । इतना बड़ा कि सारी वसुन्धरा से १३॥ लाख गुणा बड़ा है । इस सूर्य्य से ...शः बड़े और सूर्य्य हैं । उन सब को ज्योति प्रदान करने वाले ...प हैं । आप ही के प्रताप से यह सब सूर्य्य चमक रहे हैं । इस ...क सूर्य्य की विद्यमानता में मनुष्य पाप नहीं करते तो कैसा ...श्चर्य्य है कि सूर्य्यों के सूर्य्य ज्योति के केन्द्र और प्रकाश के ...ज अर्थात् आपकी विद्यमानता में मनुष्य पाप करें । भगवन् ! आप ...अपने दिव्य तेज का अनुभव करावें ताकि दिनों दिन बढ़ती हुई ...ा तथा भक्ति से सोते, उठते, बैठते, खाते, पीते आप का स्मरण ...ते हुए हम पापरूपी अंधकार के गढ़े में न गिरें । ओ३म् शम् ॥

———o———

उपदेश।

सुख और शान्ति कहां है ?

मैं एक विशालनगरी में गया। नगर वासियों की चहल बहल को देखा, लोग प्रसन्न बदन नज़र आये। मैं ने समझा कि समृद्धि देवी का यहां आधिराज्य है। यहां धनिक और रङ्क सभी खुश हैं परन्तु यह बाह्य आडम्बर था। मैं उच्च अट्टालिकाओं में गया। जहां बहुमूल्य सामग्री, अनेक परिचारक और परिचारिकाएं इतस्ततः दौड़ स्वामी की आज्ञापालन पर तत्पर थे परन्तु उन भवनों में नरम नरम सोफों पर नीन्द का अभाव, लोभ का प्रभाव और द्वेष अग्नि का ताप दीख पड़ा। मैं गरीबों की झोपड़ियों में पहुंचा परन्तु ममत्व और अहंकार वैमनस्य के अंकुरों को अंकुरित कर चुका था। मैं ने समझा कि जिन युवक और युवतियों के मुखों पर तेज की आभा है वही सुखी होंगे परन्तु उनके सीनों में बिषधर काम की तीव्र तरङ्गें मौजें मार रही थीं, न उन्हें रात्रि को निद्रा न दिन को चैन। मैं ने विद्यार्थी जीवन पर दृष्टिपात की। वह अपनी ही सृष्टि में लवलीन किसी से स्नेह, किसी से द्वेष, जीवन उच्च आकांक्षाओं की तरङ्गों से कम्पित और विचलित हुआ पाया। मैं घबरा गया, मन में सोचा क्या यह सब जगत दुखिया है? लोग बाहिर से स्वास्थ्य दिखलाई देते हैं उनके हृदय शान्त नहीं अस्तु, शान्ति की तलाश करनी चाहिये। मैं एक वीतराग संयमी के पास पहुंचा। उसकी समीपता ही शान्ति की सुरभी प्रदान करने लगी। मैं ने उस संयमी से वार्तालाप किया। उसने अपने संयम का भेद अभ्यास तथा वैराग बतलाया और कहा कि सुख तथा शान्ति जिसे ढूंढ़ने के लिये आपने इतना चक्कर लगाया आपको न मिली। यह बड़ी सुलभ वस्तुएं हैं परन्तु धर्म तथा कर्तव्य पालन करने वालों के पास सहसा आ जाती हैं। राजा हो अथवा रङ्क, विद्वान हो या मूर्ख, पुरुष हो अथवा स्त्री, पुण्यात्मा हो अथवा पापात्मा, यदि वह धर्म का पालन करें तो सुखी और शान्त हो जावें अन्यथा भटकना पड़ेगा, मुझे राज़ मिल गया और शान्त हो लौट आया।
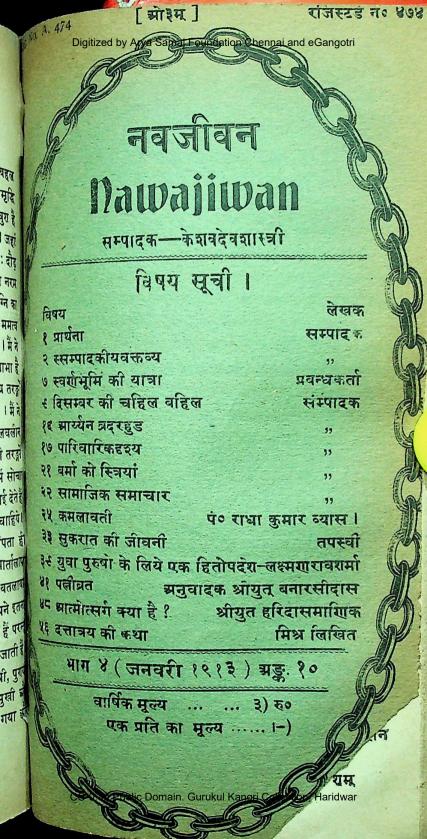
—o—

नवजीवन
Nawajiwan

सम्पादक—केशवदेवशास्त्री

विषय सूची।

भाग ४ (जनवरी १९१३) अङ्क. १०

वार्षिक मूल्य ... ... ३) रु०

एक प्रति का मूल्य ...... ।-)

कन्या गुरुकुल काशी।

मिर्ज़ापुर के जिले में पचरांव एक ग्राम है। इस स्थान में कई वर्ष हुए एक अच्छा आर्य्य समाज था, परन्तु वर्षों से वहां के लोग शिथिल होगये। गत ५ वर्ष का हमारा अनुभव बतलाता है कि दृढता से वैदिक धर्म के प्रचार में सहायता देने वाला पचरांव तथा चुनार में एक भी मनुष्य नहीं किन्तु हमें बडा आश्चर्य हुआ जब हमने श्रीमती सुमित्रा देवीजी की भेजी हुई अपील को देखा यही नहीं हमारा आश्चर्य्य और भी बढगया जब यह लिखा पाया कि कन्या गुरुकुल काशी में खुलेगा। काशी में आजतक कोई चर्चा नहीं. हम उन देवियों के सद्विचारों को मान की दृष्टि से देखते हैं परन्तु इस विज्ञापन को देख बलात् "किमाश्चर्य्यमतः परम्" यह शब्द निकलते हैं। आर्य्य पत्रों ने बडी उदारता से विज्ञापनों और अपीलों को छाप भी दिया और सम्भव भी है कि हाथरस के गुरुकुल के समान लोग विश्वास भी करलें परन्तु हमें खेद है कि जिस प्रान्त में इन देवियों ने काम करने के लिये स्थान ढूंढा हैं वहां का कोई भी प्रतिष्ठित पुरुष उन की स्कीम से परिचित नहीं। काशी में कन्या गुरुकुल खोलना चाहिये इस में हमें कुछ वक्तव्य नहीं परन्तु धन, विश्वास और योग्यता विना देवियों का यह साहस हमें तो अपरिहार्य्य नहीं ज्ञात होता, अत एव जब तक उस की व्यवस्था की पूर्ण बोध नहो हम ऐसे विद्यालय के सम्बन्ध में नवजीवन में कुछ भी मुद्रित करने के लिये उद्यत नहीं। काशी के पुरुषों में तो कोई भी इस स्कीम में अग्रसर नहीं हां यदि कोई "आर्य्यवनिता प्रतिनिधि सभा ब्रह्मावर्देश" हो और उस का मुख्य स्थान यू. पी. के प्रान्त मे मिर्ज़ापुर जिला में चुनार को तहसील के पचरांव नामी एक ग्राम में हो और संस्था को चलाने वाल देविये भारतवर्ष में अपनी योग्यता से घूमघाम कर धन ला सकें हों तो हम काशी निवासी इस संस्था का अवश्यमेव स्वागत करें परन्तु स्कीम का यहां ही खातमा नहीं होजाता उधर।

कन्या गुरुकुल, कीटगंज अल्लाहाबाद में खुल रहा है। ठाकुर गिरेन्द्रदेव ने इस दौड धूप में पीछे रहना उचित नहीं समझा। स्वयम लिखते है कि आर्य्यसमाज के प्रधान २ पुरुषों ने उन की स्कीम पर ध्यान नहीं दिया। कोई कैसे देता जब कि वह जानते कि यह कार्य्य न केवल दुस्तर है वरन परिणाम में हानिकर होगा

ओ३म्

उदयति यदि भानुः पश्चिमे दिग्विभागे
प्रचलति यदि मेरुः शीततां याति वन्हिः ।
विकसति यदि पद्मं पर्वताग्रे शिलायां
न भवति पुनरुक्तं भाषितं सज्जनानाम् ॥

भाग ४. | जनवरी, १९१२ | अङ्क १०

प्रार्थना ।

...नपाऽग्नेऽसि तन्वं मे पाहि आयुर्दाऽग्नेऽस्यायु र्मे देहि ।
...र्चोदाऽग्नेऽसि वर्चो मे देहि अग्नेयन्मे तन्वाऊनंतन्मेआपृण

परमात्मन् ! आज हम आप की वेदोक्त शिक्षा से कितने विमुख ...रहे हैं। हमारे चारों ओर निवृत्ति मार्ग का सुहावना गीत गाया ...रहा है। हम शारीरिकोन्नति के लिये, धन, मान और ऐश्वर्य ...प्राप्ति की चेष्टा करते हुए भी उसे निन्दित कर्म ठहराते हैं। ...ों में स्थान २ पर हमें शारीरिक, आत्मिक तथा सामाजिक ...ति का उपदेश मिलता है। आप प्रकाशस्वरूप हैं हमारे अज्ञान ...कार को दूर कीजिये और हमें नित्यप्रति अपनी नैसर्गिक ...यों से लाभ उठाने के योग्य बनाइये। हमारी आयु न्यून से न्यून ...सौ वर्ष की हो। हम स्वप्न में भी इस से पूर्व शरीर के त्यागने ...कल्पना न करें। हमें आप तेजस्वी तथा ओजस्वी बनावें ताकि ...आप की आज्ञाओं का पालन करते हुए इस सुन्दर और सुख- ...जगत को त्याग रूप से भोग सकें। परमात्मन् ! बल प्रदान ...ये कि हम अहर्निश आप के वेदोक्त पथ पर चल सकें।

ओ३म्

सम्पादकीय वक्तव्य ।

नवजीवन का पांचवां वर्ष

नवजीवन गत चार वर्ष से अपने निर्दिष्ट मार्ग पर चल रहा है। हमारे पास अनेक सज्जनों के प्रशंसा पूर्ण पत्र आये, अनेक नवयुवकों ने मुक्तकण्ठ से उन उत्साहवर्धक लेखों की उत्तमता को स्वीकार किया और अपने जीवन को एक शुभ मार्ग की ओर लगा दिया। कितनी देवियां हैं जो नवजीवन के पारिवारिक दृश्यों को पढ़ने के लिये उत्सुक रहती हैं, हां, कितने कुमार हैं जिन्हों ने अनन्य उत्साह से नवजीवन को पढ़ा है और अपने लिये उपयोगी समझा है। पाठकगण! यदि इन पत्रों में कुछ सार है, यदि आप समझते हैं कि नवजीवन की समाज को ज़रूरत है, यदि आर्य्य कुमारों का इसे आप पथप्रदर्शक बनाना चाहते हैं तो अब समय है कि आप अपने उत्साह को प्रगट करें, अन्यथा

कर्तव्य बिना मन्तव्य निस्सार है।

नवजीवन गत चार वर्षों में एक व्यक्ति का पत्र रहा है। सम्पादक नवजीवन को अनेक मित्रों ने प्रोत्साहित किया और ऐसे सज्जनों की भी न्यूनता न थी जो आर्थिक सहायता देने पर उद्यत थे परन्तु नवजीवन के व्यवस्थापिक ने इन सज्जनों को धन्यवाद दे कर सर्व प्रकार के खर्च का भार स्वयम उठाया। इस समय तक दो हज़ार से अधिक की हानि हो चुकी है और इसे सहर्ष पूर्ण कर दिया गया है। गत भारतवर्षीय आर्य्य कुमार परिषद पर नवजीवन के संचालक ने स्पष्ट सभा में वर्णन कर दिया था कि नवजीवन में अभी घाटा है इस लिये सभा इस के भार को उठाने के स्थान में जितना स्थान चाहे ले लिया करे। हमने इन गत वर्षों में अपने अनुग्रहाक ग्राहकों से किसी ओजस्विनी भाषा में ग्राहकों की वृद्धि के लिये अपील भी नहीं की और वर्तमान स्थिति में हम इसके प्रवन्ध को भी यथेष्ट उत्तम नहीं बना सके, ऐसी अवस्था में नवजीवन के पाठकों को यदि हम यह बतला दें कि नवजीवन का भविष्य आप पर निर्भर है तो अनुचित न होगा। जो सज्जन नवजीवन के उद्देश्यों से सहमत हैं वह कृपया विचारें कि केवल प्रशंसा युक्त पत्रों के लिखने से कुछ नहीं बनेगा। यदि वह नवजीवन का मङ्गल चाहते हैं तो कुछ कर दिखलावें और अब जब कि अप्रैल से नवीन वर्ष का प्रारम्भ होगा वह इसकी ग्राहक संख्या को बढ़ाने की ओर ध्यान दें क्योंकि—

सफलता का आधार

केवल मात्र उन्हीं पर होता है जो अनुभव करते हों। नवजीवन नवयुवकों और युवतियों के जीवनों में वैदिक ज्योति का संचार करना चाहता है। इन भावों को इसने दृढ़ता पूर्वक फैलाया। जिस भारतवर्षीय आर्य्य कुमार परिषद् का नवजात पौदा आज आर्य्य जगत के समक्ष उपस्थित है उसे सींचने में नवजीवन ने अग्रसर हो कार्य्य किया। जिन कुमारों और कुमारियों में ब्रह्मचर्य्य के उच्च आदर्श को फैलाने का इसने बीड़ा उठाया था, वह उसके पारिवारिक दृश्यों से ज्ञात हो सकेगा, इन और ऐसे ही पवित्रता के अन्य साधनों पर कार्य्य करते हुए भी नवजीवन के लिये कब सम्भव है कि वह उच्च पदवी को ग्रहण कर सके जब तक कि प्रत्येक पाठक यथाशक्ति उसे उपयोगी बनाने में सहायक न हो। हम इसे शक्ति भर उत्तम बनाने की चेष्टा कर सक्ते हैं परन्तु समाज संशोधन के कार्य्य में आगे बढ़ना दुस्तर है जब तक नवजीवन के हितैषी इसे न अपनावें! यदि ग्राहकों की संख्या अधिक होजावे तो इसे अधिक उपयोगी बनाने के लिये क्या कुछ नहीं हो सक्ता ?

प्रत्येक पाठक सहायक बन सक्ता है

इसी भाव का प्रचार करना हमें अभीष्ट है कि नवजीवन का प्रत्येक पाठक उस के लिये कार्य्य कर सक्ता है। प्रायः पाठक हमें लिखा करते हैं कि "नवजीवन सब कुमारों के हाथ में पहुंचाना चाहिये"। यह ठीक है, परन्तु कैसे कुमारों तक इसे पहुंचाया जासक्ता है, यदि जो इसे पढ़ते हैं वही औरों को पढाने या दिखलाने की चेष्टा न करें।

एक बार हमारे एक ग्राहक ने काशी में आकर हम से पूछा कि मैं ने कितने ही अपने परिचित युवकों के पास नवजीवन देखा है इस की ग्राहक संख्या अब तो हज़ारों तक पहुंच गई होगी और जब उसे हमने बतलाया कि नहीं, अभी तो सैकड़ों तक ही पहुंची है तो वह बहुत ही हैरान हुआ। हम जानते हैं कि आर्य्य भाषा भाषी सज्जनों में पांच सहस्र लोग अवश्य ऐसे मिलेंगे जिन्हें यदि नवजीवन के उद्देश्य और लेख दिखलाय जावें तो तत्काल वह इस के ग्राहक बन जावें। पाठकगण! क्या आप अपने मित्रों को नवजीवन दिखलाने में हमारी सहायता करेंगे? हम ने नवजीवन

को व्यापार की दृष्टि से नहीं चलाया और न हम ने निन्दित विज्ञापनों को कभी स्वीकार किया है। निस्सन्देह इस परिश्रम के प्रतिकार में हम आप की कुछ भी सहायता नहीं करसके, परन्तु यह कार्य्य सुजनता द्वारा ही निष्पादित हो सक्ता है।

सहायता करने के उपाय

सब से उत्तम उपाय तो यह है कि जो सज्जन अमली जीवन में प्रीति रखते हैं उन के पास आप नवजीवन का सन्देसा पहुंचावें अथवा हमारे पास ऐसे मित्रों की एक सूची भेजदें जिन्हें हम नवजीवन नमूनार्थ भेज सकें। इस प्रकार के नमूना प्रत्येक पुस्तकालय, पाठशाला तथा समाज वा सभा में भेजा जा सक्ता है! नवजीवन कुमारों तथा अध्यापिकाओं के लिये केवल २) रुपये वार्षिक मूल्य पर दिया जाता है। दूसरा उपाय अपने मित्रों को प्रेरणा करने का है, तीसरे जिन्हें शक्ति है वह गरीब विद्यार्थियों के नाम बिलादाम जारी करवासक्ते हैं। चौथे ऐसे स्थानों पर जहां कुछ सज्जन एकत्रित हों वहां नवजीवन के किसी रोचक लेख को पढकर सुनाने से और पांचवें स्वल्प मूल्य पर नवजीवन की ५, १०, २५, अथवा १०० प्रतियां खरीद कर सर्वसाधारण में बांटने से आप नवजिवन के पाठकों की संख्या बढा सक्ते हैं। इस में सन्देह नहीं कि जब जब सम्पादक नवजीवन ने ग्राहकों की वृद्धि के लिये नवजिवन के प्रेमियों से पार्थना की उसे कभी भी निराश नहीं होना पड़ा, परन्तु सम्पादक नवजीवन इस प्रणाली को अत्यन्त उपयोगी नहीं मानता और यही एक कारण है कि नवजीवन के कालमों में अधिक अपील भी नहीं हुई। अप्रैल मास से नवजीवन पांचवें वर्ष में पग रखेगा। हमें पूर्ण आशा है कि नवजीवन के प्रेमी इसके लेखों को दूर तक पहुंचाने की यथाशक्ति कोशिश करेंगे।

स्वर्ण-भूमि की यात्रा।

श्रीयुत भिषगाचार्य्य कविराज केशवदेव शास्त्री तथा स्वामी शिवानन्द जी १४ जनवरी को कुशल पूर्वक बर्मा देश की यात्रा को समाप्त कर काशी में लौट आये। प्राचीन इतिहास में बर्मा को स्वर्ण-भूमि और ईरावती नदी को स्वर्ण नदी के नाम से पुकारा जाता था, शास्त्रीजी ने वहां के जो रोचक समाचार सुनाये हैं

और जिन्हें वह शीघ्र ही लेख बद्ध करके नवजीवन के पाठकों के सामने रक्खेंगे, वह ऐसे मनोरंजक और शिक्षाप्रद हैं कि उन्हें पढ़ कर प्रत्येक पाठक लाभ उठावेगा। श्रीयुत स्वामी शिवानन्द जी ने अपने संकीर्तन से बर्मा निवासियों को आनन्दित किया। पूज्य शास्त्री जी ने रंगून, मेमियो, मान्डले, थाज़ी, मिंगे, टेगुनडाईन, ...र्टाला, जोविनगाओ, हंजदा आदि कई स्थानों में पहुंच कर वैदिक धर्म का सन्देसा पहुंचाया। आप ने २५ व्याख्यान अंग्रेज़ी भाषा में और २० हिन्दी में दिये। आप के व्याख्यानों में अंग्रेज़, ...र्मी, मद्रासी, बङ्गाली, पंजाबी, संयुक्तप्रन्त निवासी तथा अन्यान्य लोग भी सम्मिलित होते रहे। माराडले में बौधों की सभी ने आप को सादर निमन्त्रित किया था जहां कि आप ने Teachings of Lord Budha" इस विषय पर आङ्गल भाषा में व्याख्यान दिया था। रंगून में तीन व्याख्यान आङ्गल भाषा में Hindu Social Club ने करवाये, इसी प्रकार अपर बर्मा, लोअर बर्मा और कुछ ...न स्टेटस के भाग में घूम कर आप ने प्रचार किया। प्रचार के ...ङ्ग २ शास्त्री जी ने काशी के वेदविद्यालय तथा दयानन्द हाई स्कूल के लिये धन भी संग्रह किया जिसकी संख्या अनुमान सात हज़ार रुपये की है। बर्मा में अभी प्रचार की बड़ी न्यूनता है, आशा है कि जिस प्रकार रंगून समाज की प्रार्थना पर शास्त्री जी ने २½ मास पर्य्यन्त अपने कार्य्य को विश्राम दे और अनेक कष्ट उठाकर प्रचार किया है इसी प्रकार अन्य उत्साही आर्य्य पुरुष भी इस कार्य्य में आगे बढ़ेंगे। हमने सानुरोध शास्त्री जी से प्रार्थना की है कि ...ह बर्मा के समाचारों को क्रमशः नवजीवन में मुद्रित करें। इन ...खों के अतिरिक्त शास्त्री जी बर्मा पर दो पुस्तकें लिख रहें हैं जो सचित्र होंगी और जिन में बर्मा के वर्तमान बुद्धधर्म के प्रत्येक अङ्ग ...र तथा बर्मा निवासियों के सामाजिक जीवन पर प्रकाश डाला जावेगा। आशा है कि हिन्दी जानने वालों को इन पुस्तकों से अनेक नवीन विषयों का बोध होगा। प्रबन्धकर्ता—नवजीवन.

शिम्प्योदी

अर्थात् बर्मा में उपनयन संस्कार।

बर्मा में बुद्ध धर्म आज भी उसी रूप में विद्यमान है जिस में सहस्र वर्ष पहिले भारतवर्ष में उपस्थित था। आज भी वहां

कुमारों और कुमारियों का परिवर्तित रूप में उपनयन संस्कार होता है। कन्याएं तो सभी उपनीत नहीं होतीं, परन्तु कोई भी बर्मा-निवासी पुरुष ऐसा नहीं जिसका उपनयन संस्कार न हुआ हो। संस्कार की तिथि से बहुत दिन पहिले बालक को वह सारी विधियां बतलाई और सिखलाई जाती हैं जो उसे आचार्य्य के यहां करनी होंगी। उदाहरण के लिये पिसेन (गुरु) को कैसे सम्बोधन करना होगा, कैसे और किस प्रकार के वस्त्र पहिनने होंगे, कैसे खाना पीना होगा इत्यादि, क्योंकि बर्मा में भिक्षुओं के लिये प्रत्येक छोटी बड़ी क्रिया के लिये नियम निर्मित हैं। जिस दिन बालक का उपनयन होता है उस समय तक अपनी समर्थ के अनुसार बालक के माता पिता भिक्षुओं के लिये अनेक प्रकार की सामग्री इकट्ठी कर लेते हैं। धनाढ्य लोगों के घरों में से अथवा किसी थियेटरीकल कम्पनी के यहां से बहुमूल्य, सुन्दर और भड़कीले वस्त्र उपलब्ध किये जाते हैं और बालक को ऐसे सजाया जाता है मानो वह कोई राजकुमार है। सोने के आभूषण, ज़ंजीरें, और जवाहिरात उसके अलङ्कारों का प्रधान भाग बनते हैं। उसके सिर पर सुनहरी छाता किया जाता है और ऐसे ही अलंकृत घोड़े पर बालक को सवार करा कर ग्राम अथवा नगर के मुख्य २ बाज़ारों में घुमाया जाता है मानो वह साक्षात् भगवान बुधदेव हैं कि जिनका उपनयन होना है। कहते हैं कि कुछ वर्षों पहिले यह भी रिवाज था कि नगर में घूमने से पूर्व कुमार को रिश्तेदारों और पूजनीय वृद्धों के पास नम्रता पूर्वक नमस्कार कर आने के उद्देश्य से भेजा जाता था परन्तु अब यह बात नहीं रही। उन दिनों उपनयन के समय यदि सम्बन्धी धनाढ्य और सम्पत्तिशील होते थे तो वह पुष्कल धन बालक को देते और उसे आशिर्वाद देकर आचार्य्य के पास भेजते थे, परन्तु आजकल बालक माता पिता और उनके घनिष्ट मित्रों के पास जाता और उनसे धन स्वीकार करता है। इस नगर-कीर्तन में पुरुष स्त्रियां सभी सम्मिलित होती हैं। बाजा गाजा संग रहता है। जब बालक घर पहुंचता है तो एक बड़े सुसज्जित शामियाना में बिठलाया जाता है। बर्मा निवासी घण्टों में अत्युत्तम और सुसज्जित बांस का पण्डाल थोड़े से व्यय में बना लेते हैं और उन पर रंगीन तथा सुन्दर २ काग़ज़ और परदे लगा कर ऐसा

मनाते हैं कि मानो राज्यभवन बने हैं। इधर उसी पण्डाल के समीप ही पुष्कल सामग्री से ब्रह्मभोज की तय्यारी की जाती है जिस में सम्बन्धी, पूज्य, मित्र मन्डली और भिक्षु (आचार्य्य) तथा अनेक फूंगी सम्मिलित होते हैं, कारण यह कि वर्मा लोग विवाह, मृतक संस्कार तथा अन्य किसी भी कार्य्य में इतना धन नहीं खर्चते, जितना कि उपनयन संस्कार पर, इसी लिये बड़े समारोह से और शक्ति भर उत्साह से वह इस उत्सव को मनाते हैं। संस्कार के समय फूंगियों को प्रायः स्त्रियों के सम्मुख बिठाया जाता है जहां स्त्रियों को सामने बैठे देख कर वह पंखों को मुंह के सामने कर लेते हैं ताकि स्त्रियों की ओर ध्यान न जावे और अपने सूत्र ग्रन्थों में से पाठ पढ़ना आरम्भ कर देते हैं। इधर बालक के उत्तमोत्तम वस्त्र उतार दिये जाते हैं। एक सुफेद वस्त्र कटिप्रदेश पर पहिना दिया जाता है और उसके बाल काट कर उसकी माता तथा बड़ी भगिनी को दे दिये जाते हैं जो अपने बालों के साथ मिला कर रखती हैं या किसी मंदिर पर चढ़ा दिये जाते हैं। प्रायः स्त्रियां उनको अपनी वेणी के संग बांधतीं और वेणीशृङ्गार करती हैं क्योंकि वर्मा की रमणियों को बालों की रक्षा करने का बड़ा शौक होता है। इस समय घर के चार बड़े पुरुष एक सुफेद चादर को चारों कोनों से पकड़ कर खड़े हो जाते हैं और बालक उस वस्त्र पर सावधानी से सिर को झुकाता है। खूब सफाई से मुण्डन किया जाता है। कैंची में न आ सकने वाले लघु बाल चादर पर गिरते जाते हैं। तब उसके सिर को केसर से मल दिया जाता और कमुन्थी [एक छिलका होता है जिस से सिर की मैल धुल जाती है] केसर से सिर को धोया जाता है। तब उस बालक को सिर से पाओं तक नहलाया जाता और एक सुन्दर वस्त्र परिधान कराके वह फूंगी के समक्ष लाया जाता है। इधर पाठ की समाप्ति होती है। बालक गुठने टेक कर और हाथ जोड़ कर प्रार्थना करता है कि मुझे अपनी शरण में लीजिये। आचार्य्य के समीप हा माता पिता भिक्षुओं के वस्त्र तय्यार करके धर देते हैं, वस्त्रों के समीप ही भिक्षापात्र रख दिया जाता है, पात्र के साथ ही एक कमर के समान लम्बी पट्टी धर दी जाती है जिस में भिक्षापात्र बांधा जाता और पट्टी को बालक गले में लटका कर उठाता है।

आचार्य्य या फूंगी इन वस्तुओं को अपने हाथ से बालक के प्रति प्रदान करता है और उसे अपना शिष्य या शीं बनाना स्वीकार कर लेता है। बालक को भिक्षुओं के वस्त्र पहिनाये जाते हैं और जब फूंगी अपने चौं या बिहार को जाते हैं तो बालक को अपने संग ले जाते हैं। इस घड़ी से बालक का सम्बन्ध अपने माता पिता से कुछ काल के लिए अथवा सर्वदा के लिये टूट जाता है।

दूसरे दिन प्रातःकाल ६ बजे ही अन्य ब्रह्मचारियों या शींयों के संग २ एक कतार में वही बालक समीपवर्त्ती ग्रामों अथवा नगर में से भिक्षा मांगने के लिये निकलता है। बर्मा के बिहारों को चौं [Monasteries] कहते हैं और बिहार के प्रधान भिक्षु को फूंगी के पवित्र नाम से पुकारा जाता है। बर्मा में दुर्भाग्य वश संन्यास और ब्रह्मचर्य्य के आश्रमों को मिश्रित कर दिया गया है उन में भी दर्जे अवश्यमेव हैं। पहिले ब्रह्मचारी शीं बन कर उपनीत होता है। कुछ बुद्धिमान होने पर उसे पुनः दीक्षित किया जाता और पिसीं बनाया जाता है, पिसीं फूंगी भी कहलाते हैं। पिसीं पुनः दीक्षित होते और चिरकाल के परिश्रम के अनन्तर सय्या या थरा कहलाते हैं। इस के अनन्तर जब वह प्रान्त के फूंगियों के अधिपति की उपाधि धारण करते हैं तब उन्हें [गैं ऊट] की दीक्षा मिलती है और पांचवीं दीक्षा देश भर के फूंगियों के आचार्य्य की होती है जिसे सय्यादौ बनाया जाता है। उपनीत बालक शीं के कर्तव्य निम्न लिखित होते हैं। चौं के फूंगी की सेवा करना, नियत समय पर जल तथा अन्न लाकर फूंगी को देना, पान दान को यथोचित सम्भाल कर हर समय तय्यार रखना और जब कभी फूंगी चौं या आश्रम से कहीं बाहिर जावे तो उसके साथ जाना क्योंकि बर्मा के फूंगी रुपये को नहीं छूते, इन्हीं नव दीक्षित बालकों के हाथ में रुपया दिया जाता है। इनके समय का एक भाग पढ़ने लिखने में भी व्यतीत होता है। पाठ प्रणाली में त्रिशरण सूत्र और पांच शील को जो हमारे पांच यम हैं कण्ठाग्र करवाया जाता है। इन के अतिरिक्त उन्हें मध्याह्न काल के पीछे भोजन खाना, गाना, नाचना, बजाना, रुपये को हाथ लगाना और मुंह पर पौडर लगाना इन क्रियाओं से भी रोका जाता है॥

दिसम्बर की चहिल बहिल।

भारतवर्ष की वर्त्तमान जागृतावस्था को भली भांति जानने के लिये उन जातीय महासभाओं का परिज्ञान उपलब्ध करना चाहिये जो प्रायः वर्ष की समाप्ति पर देश भर में संगठित होती हैं। शिक्षित मण्डलों को बड़े दिनों में ही इतना अवकाश मिलता है कि वह अपने निज के कार्य्यों से छुट्टी पाकर देश हित के आवश्यक विषयों पर दृष्टि डाल सकें। इसी कारण प्रायः जातीय महासभाओं के उत्सव बड़े समारोह से इन्हीं बड़े दिनों में मनाये जाते हैं। हमारे पाठकों ने सविस्तर समाचार तो दैनिक पत्रों द्वारा पढ़ लिये होंगे। यहां हमें संक्षेपतः इन सभाओं पर कुछ आलोचना करनी अभीष्ट है—

जातीय महासभा—बांकेपुर।

इस महासभा का यह सताईसवां वार्षिकोत्सव था। १८८५ में सब से प्रथम इस का संगठन हुआ। अब की बार इस जातीय महासभा का उत्सव बिहार की राजधानी में था। कांग्रेस का पंडाल एक बड़े गोलाकार रूप में निर्माण किया गया जिसके २७ द्वार थे। २६ दिसम्बर से कार्य्यवाही आरम्भ हुई। प्रतिनिधियों की संख्या दो सौ से अधिक न होने के कारण सन्तोषजनक न थी। स्वागतकारिणी सभा के सभापति महानुभाव आनरेबल (नामदार) मिस्टर मजहरुलहक ने अपनी वक्तृता दी जिसमें अन्य आवश्यक विषयों के अतिरिक्त उस घोर अत्याचार का वर्णन था जो २३ दिसम्बर को देहली में हुआ। इस वक्तृता की समाप्ति पर श्रीयुत बा. सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी ने जातीय महासभा के सभापति का प्रस्ताव उपस्थित किया जिसमें आपने बतलाया कि मुसलमानों की वर्तमान आपत्ति को देख हिन्दुओं को दुख पहुंचा है और यह जातीय जीवन की दृढ़ता का एक प्रबल प्रमाण है। जातीय दृढ़ता बतला कर आप ने कांग्रेस की ओर ध्यान दिलाया और श्रीयुत मिस्टर मधोलकर जी को सभापति बनाने का प्रस्ताव उपस्थित करते हुए बतलाया कि आप सुप्रसिद्ध सुधारक हैं। जातीय महा-

सभा के उद्देश्यों से इन्हें पूर्णतया अनुराग रहा है। १८९० में मैं और श्रीयुत मधोलकर हम दोनों कांग्रेस की ओर से इंगलिस्तान में गये थे। इस प्रस्ताव का अनुमोदन आनरेबल मिस्टर गोखले जी ने किया और अपनी वक्तृता में सभापति महोदय की देशभक्ति, कला कौशल की उन्नति में अनुराग और सामाजिक सुधार में उनके अनन्य प्रेम का वर्णन किया। इस प्रस्ताव के समर्थन के लिये आनरेबल पं. मदनमोहन मालवीय मिस्टर सुबाराओ, ला. हरकिशण लाल, बाबू अम्बिका चरण मोजुमदार और राजकुमार टिकारी ने वक्तृताएं दीं। प्रधान सभा के चुने जाने पर मिस्टर मधोलकर ने अपना एड्रेस पढ़ा। प्रधान जी की वक्तृता के पश्चात् बा. सुरेन्द्रनाथ ने अपनी ओजस्विनी भाषा में देहली के बम्ब के सम्बन्ध में प्रथम प्रस्ताव उपस्थित किया। आपने श्रीमान् वायसराय के जीवन पर आघात पहुंचाने वाले बम्ब का वर्णन किया और इस जातीय महासभा की ओर से इस भयानक हत्या काण्ड पर त्रास और शोक प्रगट करते हुए कहा कि मुझे विश्वास है कि आप सभी मेरे साथ सहमत हैं। हमें लज्जित होना चाहिये कि यह घृणित उत्पात हिन्दुओं के उस पवित्र स्थान के समीप हुआ है जहां कि धर्मराज युधिष्ठिर की राजधानी थी। बङ्गाली वायसराय महोदय के अनुगृहीत हैं कि उन्होंने बङ्गविच्छेद को दूर किया। सारा भारतवर्ष बङ्गालियों की अशान्ति से अशान्त था। लार्ड हार्डिङ्ग ने क्रान्ति के इन भावों को दूर किया और सारे भारतवासियों के वह श्रद्धापात्र बने। बिहारियों को उन्होंने नवीन प्रान्त प्रदान किया। आपके समय में ही कौंसलों में सुधार हुआ। ऐसे महानुभाव और सत्पुरुष के जीवन पर वार करना कितने असह्य दुख का हेतु है। हम सभी भारतवासी परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि वह उन्हें शीघ्र नीरोग्य करें। इस प्रस्ताव का समर्थन मिस्टर वाचा, ला. लाजपतराय, मालवीय महोदय, मिस्टर सुबाराओ, मिस्टर इस्माईल आदि सज्जनों ने किया। इसके पश्चात् वृद्ध तथा श्रद्धेय दादाभाई नौरोजी का पत्र पढ़ कर सुनाया गया जिसमें आपने अपनी न आ सकने की असमर्थता तथा कांग्रेस के भावी मार्ग का वर्णन किया है। दूसरे दिन की कार्य्यवाही २७ के दोपहर को आरम्भ हुई। पहिला प्रस्ताव सभापति महोदय ने मिस्टर ह्यू

की मृत्यु पर शोक प्रगट करने का उपस्थित किया। दूसरा प्रस्ताव श्रद्धेय मिस्टर गोखले ने जनूबी अफ्रीका के भारतवासियों के कष्टों सम्बन्धी उपस्थित किया। आपने एक घण्टा पर्य्यन्त अपनी वक्तृता दी। इस वक्तृता ने उपस्थित सज्जनों के हृदयों को हिला दिया। जिस समय आप तीन पौण्ड वार्षिक टेक्स का वर्णन कर रहे थे जनता स्तब्ध होकर आप के आर्तनाद को श्रवण कर रही थी। आप ने एक ६० वर्ष की वृद्धा का वृतान्त सुनाया जिसे टेक्स न दे सकने के कारण ६ बार जेल में जाना पड़ा था। स्वयम वक्ता महोदय अपनी प्रबल अश्रुधारा को न रोक सके। श्रोता दुख से इन मर्मभेदी समाचारों को सुन रहे थे। आप ने मिस्टर गान्धी के आत्मसमर्पण का वृतान्त सुनाया और कहा कि मेरा तथा महात्मा गान्धी का विचार है कि अभी नवीन प्रवेश के विषय को वन्द करके उपस्थित भारतवासियों के लिये इन अधिकारों को प्राप्त करना अभीष्ट है।

(१) वह बिना किसी रोक के दक्षिण अफ्रीका से बाहर जा सकें और वापिस आ सकें (२) वह दक्षिण अफ्रीका के प्रत्येक प्रान्त में स्वतन्त्रता से आ जा सकें, (३) वह अपनी इच्छानुसार निवास कर सकें, (४) वह ज़मीन और जायदाद खरीद कर सकें, (५) बिना विघ्न वह व्यापार कर सकें, (६) उन्हें अपनी सन्तान की शिक्षा के लिये गवर्नमेन्ट से सहायता मिल सके, (७) उनके लिये विशेष वन्धन न हों, (८) उन्हें राजकीय सभाओं तथा म्युनिसिपलटियों में सम्मति देने का अधिकार मिले—(९) उन्हें राज्य सम्बन्धी नोकरियों के पाने का अधिकार मिल सके। भारत वासियों का यह कर्तव्य होना चाहिये कि वह अपने देश वासियों को सर्व प्रकार से सहायता प्रदान करें।

तीसरा प्रस्ताव आनरेबल मिस्टर सुबा राओ ने उपस्थित किया कि यह काङ्गरेस पबलिक सर्विस कमिशन के नियत करने पर अपना सन्तोष प्रगट करती है। इस महासभा को दुख है कि इस में भारतवासियों की संख्या न्यून है इत्यादि।

चौथा प्रस्ताव स्वदेशी व्रत को स्थिर रखने के लिये श्रीयुत बा० अम्बिकाचरण मोजुमदार ने उपस्थित किया।

तीसरे दिन म्युनिसिपलटियों के निर्वाचन सम्बन्धी प्रस्ताव

मिस्टर राओ ने उपस्थित किया। इसके पश्चात् बा० सुरेन्द्रनाथ जी ने प्रान्तों की स्वतन्त्रता सम्बन्धी प्रस्ताव उपस्थित किया। मिस्टर सिन्हा ने कौन्सलों के नियमों की तरमीम का प्रस्ताव उपस्थित किया। डाक्टर तेज बहादुर सपरु ने भिन्न २ निर्वाचन को दूर करने का प्रस्ताव उपस्थित किया। आनरेल मिस्टर नेहरु ने संयुक्त प्रान्त तथा पंजाब को लेजिस्लेटिव कौन्सलों के मिलने का प्रस्ताव उपस्थित किया। मिस्टर लण्डनी ने सन्ट्रल प्रोविन्सिस को लफटिनेन्ट गवर्नर दिया जावे इस विषय का प्रस्ताव उपस्थित किया, मिस्टर मधोलकर ने प्रस्ताव उपस्थित किया कि कौन्सलों में कानूनी मेम्बर भारत निवासी हुआ करें। मिस्टर सच्चेन्द्रनाथ ने प्रारम्भिक शिक्षा का प्रस्ताव उपस्थित किया। मिस्टर देवधर ने स्वास्थ्य रक्षा का प्रस्ताव पेश किया। इसके अतिरिक्त गवर्नमेण्ट के खर्च को घटाने, मदामी बन्दोबस्त स्थिर करने, भारतवासियों को फौज में उच्च पदों के प्रदान करने और हाईकोर्टों को गवर्नमेन्ट से सम्बन्ध रखने के प्रस्ताव पास हुए।

भविष्यत की कार्य्य प्रणाली के सम्बन्ध में निश्चय हुआ कि प्रतिनिधियों का निर्वाचन सभाओं द्वारा हुआ करे, उन की फीस २० के स्थान में १०) कर दी जावे। मिस्टर गोखले और सरविलयम वडेबर्ण की उपयोगी सेवा के लिये धन्यवाद दिया गया। इस जातीय महासभा का आगामी उत्सव कांची में होना निश्चित हुआ।

सोशल कान्फरेंस।

कांग्रेस के संग २ प्रतिवर्ष सोशल कान्फरेंस का भी उत्सव होता है। अब की बार २६ दिसम्बर को इस का भी वार्षिक संगठन हुआ। मिस्टर सच्चिदानन्द सिन्हा स्वागतकारिणी सभा के प्रधान थे। आप अपने समय पर न पहुंच सके इसलिये आप की वक्तृता को दूसरे एक सज्जन ने पढ़ कर सुना दिया। तब सभापति का निर्वाचन हुआ। सभापति पन्डित रामअवतार पाण्डेय एम० ए० नियुक्त हुए। आप ने अपनी वक्तृता में कई आवश्यक विषयों पर ध्यान दिया और बतलाया कि बाल विवाह, परदा, ज़ात पात के बन्धन और विवाहों पर अधिक खर्च की प्रणाली मध्यम काल से चली है। प्राचीन काल में यह निन्दित रस्में नहीं थीं। आपने समुद्र यात्रा

के प्रस्ताव का बलपूर्वक समर्थन किया और इस विषय पर अधिक बल दिया कि विधवाओं को पुनर्विवाह से जबरदस्ती न रोका जावे, परस्पर खानपान को उत्तम बतलाया। सभापति की वक्तृता के अनन्तर प्रस्ताव पास हुए। प्रायः सभी प्रस्ताव पूर्व वर्षों के समान थे। एक प्रस्ताव विशेष था और वह मिस्टर दादाभाई के प्रस्ताव को पुष्टि देने का था जो पास किया गया। सोशल कान्फरेन्स के इस अधिवेशन से संचालकों को शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये क्योंकि जिस कार्य्य की निष्पत्ति के लिये इस कान्फरेन्स का जन्म हुआ था उसे अब दूसरी सभाएं निष्पादन कर रही हैं इसलिये किसी नवीन और अत्यावश्यक सुधार पर ध्यान डाले बिना इस कान्फरेन्स का होना न होना समान सा है।

भारतवर्षीय मद्य निवारिणी महासभा।

कांग्रेस के साथ २ मादिक द्रव्यों का निषेध करने वाली सभा का भी अधिवेशन हुआ करता है। इस के सभापति कलकत्ता के सुप्रसिद्ध प्रतिनिधि आनरेबल डाक्टर सर्वाधिकारी थे। आपने अपनी वक्तृता में वर्णन किया कि भारत सचिव ने हमारे डेप्यूटेशन को सम्मान पूर्वक देखा है। हमें मादिक द्रव्यों के प्रचार को रोकने की चेष्टा करनी चाहिये। जो प्रस्ताव यहां उपस्थित किये जावें उनका उद्देश्य यह होना चाहिये कि मादिक द्रव्यों की बिक्री कम हो और लाईसन्सों की संख्या घटाई जावे (२) परामर्श देने वाली कमेटियों में हमारे देशियों की संख्या अधिक हो और तीसरे (३) ठेकों के नीलाम करने की प्रणाली दूर की जावे। टेम्प्रन्स सभाएं स्थान २ पर बनाई जावें। सभापति की वक्तृता के पश्चात् निम्न लिखित प्रस्ताव पास हुए (१) वाईसराय महोदय की सेवा में कान्फ्रेन्स का डेप्यूटेशन भेजा जावे (२) यह महासभा आङ्गल देश की टेम्प्रन्स एसोसीएशन की अनुगृहीत है और प्रार्थना करती है कि भारतवर्ष तथा सीलोन में इन बातों पर कार्य्य कराने की चेष्टा की जावे (क) गवर्नमेन्ट परामर्श लेने में पबलिक राय का ध्यान रखे (ख) नीलाम करके ठेके न दिये जावें (ग) माल के अफसरों के हाथ में आबकारी का कार्य्य न दिया जावे (३) कान्फरेन्स

को शोक है कि सीलोन गवर्नमेन्ट ने ताड़ी की बिक्री के लिये सुविधाएं पैदा कर दी हैं (४) कान्फ्रेन्स की सम्मति है कि समाजिक संस्थाओं तथा वकीलों के द्वारा मुसक्रात का प्रचार रोका जावे (५) यह कान्फरेन्स परामर्श करने की कमेटियों में नियत करने के लिये गवर्नमेन्ट को धन्यवाद देती है (६) नशों को रोकने के लिये यह सभा प्रार्थना करती है कि गवर्नमेन्ट स्कूलों में टेम्प्रन्स की किताबें जारी कर दें (७) रेलवे बोर्ड से प्रार्थना करती है कि मुसाफरों के आराम के लिये रेलवे के लोग ड्यूटी के समय शराब न पिया करें–इन प्रस्तावों के साथ सभा विसर्जन हुई।

कलाकौशल सम्बन्धी कान्फरेन्स।

कांग्रेस के साथ साथ चौथी कान्फरेन्स सनअत व हिरफत की हुआ करती हैं। अब की बार इस महासभा के सभापति लब्ध प्रतिष्ठा श्रीयुत ला. हरकिष्ण लाल जी थे। आप ने अपनी वक्तृता में वर्णन किया कि यह कान्फरेन्स सात बार हो चुकी है और इस सभा ने बहुत विषयों पर ध्यान भी दिया है। इस देश की आर्थिक दशा बहुत क्षीन है। देश बहुत दरिद्री है, पुरुष स्त्री और बच्चों की अवस्था बहुत पतित है। ३१½ करोड़ में से तीन चौथाई लोग केवल खेती बाड़ी द्वारा अपना जीवन व्यतीत करते हैं। इस देश में एक एकड़ प्रति व्यक्ति निर्धारित हो सक्ता है एक एकड़ पर मनुष्य का निर्वाह होना दुस्तर है तिस पर उसी से लोहार, तिरखान, धोबी, मोची और कुम्हारादि का व्यय है। हमारे देश में १० फीसदी लोग नगरों और कस्बों में रहते हैं। लाख से अधिक की संख्या केवल २० नगरों में हैं। भारतवर्ष की प्रति सैकड़ा आबादी देहात में है। १९१० में इन्कम टेक्स देने वालों की संख्या २७५९२३ थी। सेविङ्ग बेङ्को में अनुमान २० करोड़ रुपया था। देश के साधारण बेङ्कों में ११ करोड़ रुपये हैं। कलों कारखाने २१४६ हैं। रेलवे लाईन ३३ हज़ार मील है। जिस में ७९ यूरोपियन, ६५५४ यूरोशियन और ५२१७४१ देशी नौकर हैं। हमारे देश में धनोपार्जन के दो साधन हैं (१) खेती बाड़ी (२) व्यव साय। देश में कदापि धन की वृद्धि नहीं हो सक्ती यदि भारतवासी

धन संग्रह न करें, खेती को अधिक उपयोगी न बनावें और कला कौशल की वृद्धि न करें। खेती बाड़ी के पुराने तरीके पर चलते हुए भी भारतवर्ष अपने देश के अतिरिक्त अन्य देशों को अन्न देता है। और द्वीपों को सन्न और रूई पहुंचाता है। चावल, गेहूं, सरसों और अलसी करोड़ों मन प्रति वर्ष बाहिर जाते हैं। विपरीत इसके सौदागरों का माल और कपड़ा विदेश से यहां आता है। नवीन साधनों से हम अधिक धन उपार्जन कर सक्ते हैं। आगे चल कर आपने कुछ उपयोगी साधनों का वर्णन किया। इसके पश्चात् यथानियम कुछ प्रस्ताव पास हुए। सभा ने मिस्टर मधोलकरजी को ही मन्त्री के पद पर नियुक्त किया। कैसे दुख का विषय है कि ऐसे उपयोगी विषय पर भी देश के प्रतिष्ठित तथा शिक्षित सज्जनों का ध्यान कम ही है।

अन्य छोटी बड़ी सभाएं

दिसम्बर के अन्त में इन सभाओं पर जहां सहस्रों लोग एकत्र थे वहां अन्यान्य नगरों में भी सभाएं संगठित हो रही थीं। कलकत्ता में वैश्यमहासभा का अधिवेशन २९, ३० दिसम्बर को हुं। मध्य प्रान्त में महेशरी महासभा थी। आगरा में क्षत्रिय महासभा संगठित हो रही थी। कायस्थ महासभा का अधिवेशन कलकत्ता में रचाया जा रहा था। मुज़फरपुर में काश्मीर नरेश के सभापतित्व में क्षत्रिय राजपूत महासभा का १६ वां अधिवेशन बड़े समारोह से मनाया जा रहा था। इसी प्रकार प्रत्येक ज़ात के सदस्य इस दौड़ धूप में आगे बढ़ने की सिरतोड कोशिश कर रहे हैं। सरयूपारी महासभा ने काशी के सुप्रसिद्ध पण्डित महामहोपाध्याय पं० शिवकुमार शास्त्री जी को लाकर सभापति के आसन पर बिठा ही तो दिया। उक्त पंडित जी ने बाल विवाह का खण्डन और ब्रह्मचर्य्य का मण्डन किया, परन्तु क्या मजाल जो ब्रह्मचर्य्य के लिये आयु को निर्धारित कर सकें। कदाचित उनकी दृष्टि में सात नव वर्ष का बालक भी ब्रह्मचारी होता हो। खैर, कुछ हो तो सही। अब ब्रह्मचर्य्य पर बल दिया, आगे किसी सभा में तथा १६ वर्ष यह भी कह देंगे। बर्द्धान नरेश ने तो क्षत्रियों को आड़े हाथों लिया और जागृति के लिये प्रोत्साहित किया। इस प्रकार १९१२ का दिसम्बर अपनी झलक दिखला गया।

आर्य्यन ब्रादरहुड (Aryan Brotherhood)

पाठक बम्बई की इस सभा के समाचार पढ़ चुके हैं। अनुमान २५० स्त्री पुरुषों ने मिल कर ब्रह्मभोज किया था। इस ब्रह्मभोज ने बम्बई के लोगों को खूब हिला दिया। जनवरी का मास समाप्त होने पर आया और दो मास व्यतीत भी हो गये परन्तु हर सप्ताह समाचार आ रहे हैं कि अमुक सुधारक ने सिर मूछें मुण्डवा डाली, अमुक ने प्रायश्चित्त करवा लिया। व्यक्तियों को तो जाने दीजिये, सभाएँ और समाजें थर थर कांपने लगीं। अहमदाबाद की महाजन सभा ने तो लगते हाथ प्रस्ताव भी पास कर डाले, ज्ञात होता है कि समाज संशोधन की यह मात्रा बड़ी कड़वी थी। अब तक शक्कर से गलेफ कर गोली दी जाती थी परन्तु यह अजीर्ण शुभ लक्षणों का अग्रसर है। इस भूकम्प में अनेक घर गिर जावेंगे, अनेक व्यक्तियां दुर्बलता के कारण दब जावेंगे, अनेक सुधारकों के पोल खुल जावेंगे परन्तु सच्चे सज्जन पत्थर की चट्टान के सदृश दृढ़ खड़े रहेंगे उन्हें उचित है कि हर मास में एक ब्रह्मभोज कर डाला करें। हर बार नवीन लोगों को असली जीवन से प्रोत्साहित किया करें। काशी के ब्रह्मभोज का विरोध हुआ था और घोर विरोध हुआ था परन्तु उस सयम ब्रह्मभोज को इतना सर्वप्रिय बनाया गया था कि महीना में तीन २ बार ब्रह्मभोज हुए और हमें इसके महत्व का उस दिन बोध हुआ जब १९१० की प्रयागवाली सोशल कान्फरेंस के अवसर पर पूज्यपाद स्वामी नित्यानन्दजी तथा स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी के द्वारा एक सज्जन ने हमें कहला भेजा कि इस अवसर पर भी ब्रह्मभोज हो जावे और जो खर्च हो वह हमारी ओर से किया जावे। तदनुसार ३० दिसम्बर को २५० का भोज हुआ जिस में कच्ची पक्की और सभी ज़ातों के शिक्षित जन उपस्थित थे। भोज हुआ परन्तु किसी को भी विरोध करने का साहस नहीं पड़ा। यदि बम्बई के भाई, लोगों की इस दुर्बलता को देख कर लाभ न उठावें तो इस से अधिक लघुदृष्टि क्या हो सक्ती है। यह भोज तथा परस्पर विवाह यह दोनों प्रश्न जब तक हिन्दुओं के लिये कठिन प्रश्न है, हमारी जाति इन घुनों से बराबर पीड़ित हो खोखली होती जावेगी।

पारिवारिक दृश्य ।

नगरों से दूर उत्तर भारत के तराई प्रान्त में सय्यूं नदी के सुरम्य तट पर एक क्षत्रिय परिवार रहता है, इस परिवार में अन्य ग्रामीण लोगों के सदृश शिक्षा का नितान्त अभाव नहीं है। ठाकुर वीरसिंह जी स्वयम शिक्षित और विचारवान हैं। इन्हों ने अपने दोनों कुमारों को अङ्गरेजी शिक्षा के अलङ्कारों से विभूषित किया है। कुमार प्रयाग में रहते थे और सत्सङ्ग के सदुपयोग से इन के कर्णों में वैदिक धर्म का शान्ति दायक उपदेश पहुंचा। इन कुमारों ने अपने आचरणों द्वारा सारे परिवार में आर्य्य जीवन का प्रचार कर दिया। बड़े कुमार धीरेन्द्र ने अपनी भगिनी सुजाता को पढ़ने के लिये प्रोत्साहित किया। कुमारी सुजाता साधारण आर्य्य भाषा के ग्रन्थ पढ़ सकती थी, भाइयों की उच्च और अनुकरणीय अवस्था को देखकर उस ने उपयोगी ग्रन्थों के पढ़ने में अभिरुचि प्रगट की। धीरेन्द्र ने भी क्रमशः आर्य्य भाषा के पुस्तकालयों और पुस्तक भण्डारों में से उत्तमोत्तम ग्रन्थ लेकर सुजाता को पहुंचाये। राजपूत क्षत्रियों के उत्तेजिक ऐतहासिक ग्रन्थों से सुजाता को अधिक प्रेम होगया। क्षत्रिय रमणियों के दृश्य उस के कोमल हृदय-पट पर अङ्कित हो गये। कुमारी सुजाता की अवस्था अनुमान ... वर्ष की हो चुकी थी। सम्बन्ध समीपस्थ ग्राम के एक ठाकुर के ... निश्चित किया जा चुका था। जब जब विवाह की चर्चा होती ...रेन्द्र सुकुमारी सुजाता की बाल्यावस्था की ओर ध्यान दिलाकर ...ला देता था, परन्तु ठाकुर बीरसिंह जी ने अपनी पुत्री को अधिक ...युवी होता देख कर शीघ्र विवाह कर देना निश्चय कर दिया। ... के लोग विवाह की तय्यारियों में प्रवृत होगये। कुमारी सुजाता दुखसागर में ग़ोते खाने लगी। उसे एक विश्वासपात्र ... ज्ञात हो चुका था कि जिस क्षत्रिय कुमार से उस का पाणि-ग्रहण होने वाला है वह दुश्शील, विषयी और मूर्ख है। यद्यपि वह ... ग्रामों का मालिक है तथापि विद्यारूपी अलङ्कार से विभूषित ...होने के कारण वह सुजाता के हृदय का ग्राहक नहीं बन सक्ता। विवाह के समाचार चारों ओर फैल गये। सुजाता ने अपने भ्राता धीरेन्द्र को प्रयाग में पत्र लिखा और अपने भावों को जतलाकर परामर्श मांगा। धीरेन्द्र स्वयम इस विवाह के अनुकूल न था। उस ने

अनेक प्रकार से पिता को समझाया, परन्तु उन्हों ने एक न मानी। एक पत्र में कुमारी सुजाता ने लिखा कि मैं अन्य महात्माओं के सदृश घर से भागने को उद्यत नहीं हूं, हां, विवाह से एक सप्ताह पूर्व मैं अपने जीवन यात्रा की सन्ध्या के दिन आप को अन्तिम पत्र लिख दूंगी। धीरेन्द्र ने वह पत्र अपने पिता जी के पास भेज दिया। पत्र पहुंचते ही माता पिता ने घबरा कर धीरेन्द्र को तार दिया और घर बुलवा लिया। घर में जो कुलाहल मचा उस का वही पुरुष विचार कर सक्ते हैं जिन्हों ने ऐसे घोर संग्रामों को देखा हो। १९ दिसम्बर का दिन था, सायङ्काल हो रही थी कि उस परिवार में निम्नलिखित घटना दृष्टिगोचर हुई।

वीरसिंह—पुत्रि सुजाता ! तुम्हें अब जो कुछ कहना है, कहो, मैं नहीं चाहता कि तुम मेरे वंश का कुलाङ्गार बनो, पूर्वजों की कीर्ति को कलङ्कित करो॥

सुजाता—पिताजी ! मैं ने जो कुछ प्रार्थना करनी थी कर दी, फिर निवेदन करती हूं कि आप की आज्ञा को मैं सर्वथा शिरोधार्य्य करूंगी, परन्तु विवाह के विषय में मैं केवल अपने अधिकार का वर मांगती हूं। आप की अपार कृपा से मैं कुछ साक्षर हुई। मैं ने अपने पूर्वजों के वृतान्त पढ़े हैं। आप गुण, कर्म और स्वभाव देखे बिना प्रचलित रीत्यनुसार मेरा विवाह करना चाहते हैं। मैं इसे दुख-सागर समझती हूं और भयभीत हो पुनः २ प्रार्थना करती हूं......

धीरेन्द्र—पिताजी ! आप क्यों इतना आग्रह करते हैं। मैं ने आज एकान्त में बहुत कुछ पूछा है, सुजाता नहीं मानती, उस का विचार यह है कि या तो वर अच्छा हो अन्यथा यावज्जीवन मैं कुमारी रहूंगी। आप यदि मुझे आज्ञा दें तो मैं ठाकुर इन्द्रजीत सिंह को जाकर समझाऊं कदाचित वह अन्य किसी परिवार में विवाह करना स्वीकार कर लें और हम इस आने वाली आपत्ति से बच जावें।

वीरसिंह—(धीरेन्द्र की ओर देखकर) तुम्हारी सारी शरारत है। तुम नये आर्य्य समाजी बने हो। हम ने भी कई आर्य्यों को देखा है, सभी अपनी कन्याओं का विवाह छोटी आयु में कर देते हैं, तुम ऐसे बेहया और गुस्ताख़ पैदा हुए हो कि माता पिता की बात की ज़रा भी परवाह नहीं करते, तुम ने अपनी बहिन को भी निर्ल्लजा कर दिया है, पूछने पुछवाने की क्या ज़रूरत है? क्या तु

समझते हो कि इस नाता के छूट जाने पर मैं इलाका भर में मुंह दिखलाने के लायक रह जाऊंगा? तुम्हारी माता दिन रात रोती रहती है। वृद्धावस्था में तुम लोगों ने मुझे दुखी कर दिया, अच्छे थे वह राजपूत क्षत्रिय जो अपनी कन्याओं को जन्मते ही मार डालते थे।

सुजाता—पिताजी! आप दुखी क्यों होते हैं। सौभाग्य या दुर्भाग्य से मैं ऐसे कुल में उत्पन्न हुई जहां कन्याओं का मार डालना ही अनिन्दित कार्य समझा जाता है। आप आज्ञा दीजिये, मैं विष खालूं—कूए में गिर जाऊं, या अन्य किसी विधि से प्राण नाश करदूं, परन्तु जिसे कार्य्य को मैं अधर्म समझती हूं उसे कदापि न करूंगी। आप क्यों क्लेश मानते हैं, जिसे आप चाहते हैं वह वर मुझे स्वीकार नहीं, मैं उसकी कीर्ति सुन चुकी हूं। मैं विवाह के प्रयोजन को भी समझ सकी हूं, इसी लिये भ्राता जी को मैं ने सारा हार्दिकभाव बतला दिया है।

वीरसिंह—(दुखी होकर) मैं अब और कुछ नहीं सुनना चाहता। कन्याओं ने ही हमारी कीर्ति पर बट्टा लगाया है। यह आज की बात नहीं। जम्बूप्रान्त के राजपूतों में अब भी यही रिवाज है कि विवाह के पश्चात मृत्यु पर्यन्त कन्या का मुख नहीं देखते और न उन्हें अपने घर में आने देते हैं। यह विवाह तो मैं करके ही रहूंगा और फिर सुजाता को इन आंखों से कदापि न देखूंगा। मुझे क्या पता थी कि लिख पढ़कर लड़कियां ऐसी निर्लज्ज हो जाती हैं कि माता पिता की आज्ञा का ध्यान ही नहीं करतीं।

धीरेन्द्र—पिता जी! यह कैसा हृदय विदारक दृश्य है कि कन्या आपके चरण कमलों पर सिर रखकर ज़ार ज़ार रो रही है और आप उसे निर्लज्जा कहते और अन्य अपशब्दों से पुकारते हैं। हम मानते हैं कि माता पिता की आज्ञा शिरोधार्य होनी चाहिये परन्तु धर्म के आदेशों में, अधर्म में कदापि नहीं। मैंने बेशक बहिन को परामर्श दिया है और मैं भी नहीं चाहता कि उसका उसकी इच्छा के विरुद्ध विवाह हो। आप कलियुग कहें या नास्तिक जो आप चाहें कहें परन्तु समय में परिवर्तन आ रहा है। माता पिता के अनुचित दबाव के कारण कई वंश बिगड़ते जा रहे हैं। अभी थोड़े दिनों की बात है कि कलकत्ता के एक बड़े मारवाडी ने ऐसा किया था उनका वृतान्त भारतमित्र में छपा था। फर्म का नाम

नाथुराम रामकृष्ण पड़ता है। उसके मालिक लक्षाधीश सेठ गज्जानन्द खेमका हैं। उनका पुत्र रामकुमार खेमका केवल इसी लिये घर को छोड़ कर जापान और वहां से कहीं अन्यतर भाग गया है क्योंकि उसके पिता ने बलात् उसका विवाह करना चाहा। रामकुमार ने कई बार कहा कि मैं २४ वर्ष से पहिले विवाह न करूंगा. परन्तु पिता ने विवाह की तिथि निश्चित करदी और लड़के को धमकाया। रामकुमार ने गृहस्थ को बेड़ियां समझा और माता पिता को छोड़ कर विवाह के समय से पूर्व ही चल दिया। आज कल पंजाब, बङ्गाल, संयुक्त प्रान्त सभी प्रान्तों में कुमारों के विचार बदल रहे हैं। कुमारियां भी पढ़ कर अपने अधिकारों को सोचती हैं। मैं तो इस विवाह को अनिष्टकर समझता हूं।

सुजाता—भ्राताजी ! आप ने मेरे भावों को यथेष्ट बतला दिया। पिता जी मुझे बद्ध कर डालने की धमकी देते हैं। मैं सहर्ष अपना सिर झुकाती हूं। धर्म के लिये कुमार हकीकत राय ने मुझ से भी छोटी आयु में प्राण दिये थे। मैं ने माता जी को बहुत कुछ समझाया। स्वयम कहा और दूसरों से कहलवाया। यह तो मैं दृढ़ संकल्प कर चुकी हूं जो हो मैं इस स्थान पर तो विवाह न करूँगी। जिसे मेरा आत्मा स्वीकार नहीं करता वह कार्य्य मैं कदापि न करूंगी। जब तक मेरे समान दस बीस आर्य्य बालाएं अपने प्राणों पर खेल न जावेंगी, यह सुधार कदापि न होगा। मैं अकेले ही यह संकल्प नहीं कर रही और भी अनेक कुमारियां हैं जिन्हें बिना पूछे भेड़ बकरी के समान प्रदान कर दिया जाता है। मृत्यु से बढ़ कर तो भयावह कोई घटना नहीं, मैं अब उसके लिये भी तय्यार हूं। मैंने यह दृढ़ संकल्प कर लिया, परिणाम जो हो (यह कर सुजाता वहां से चली गई)।

सुजाता के उठ जाने पर धीरेन्द्र ने अपने माता पिता को समझाया कि आप लोग आग्रह न करें। समय परिवर्तनशील है। चारों ओर जागृति और विलक्षण जागृति के चिन्ह दिखाई देते हैं। कुमारियों को विवाह करने का पहिले भी अधिकार था। स्वयम्वर आखिर कितने क्षत्रियों के घरों में हुआ। गये गुज़रे ज़माने में भी संयोगता ने स्वयम्बर रीति से विवाह किया था। कुमार तथा कुमारियों में आर्य्य समाज ने जागृति उत्पन्न करदी है। अनमेल

विवाहों का फल यही होगा कि आर्य्यकुमारी के समान विवाह के अनन्तर दुखी होकर स्त्रियां जल मरेंगी। स्त्रियों की दृढ़ता तो प्रसिद्ध ही है। यदि आप आग्रह करेंगे तो सुजाता अपने प्राण दे देगी। मैंने खूब जांच करली है वह कदापि न मानेगी, इस परामर्श को माता पिता ने स्वीकार कर लिया। सम्बन्ध तोड़ दिया गया और कुमारी सुजाता के लिये गुण कर्म तथा स्वभावानुसार वर ढूंढने के लिये विज्ञापन दे दिया गया।

आर्य्य समाज के इतने बड़े दायरे में न जाने कितनी कुमारियां सुजाता के समान दुखों को अनुभव करती और पीड़ित हो रहीं होंगी परन्तु उनके हृदयरूपी स्थल में दृढ़ संकल्पों का अङ्कुर उत्पन्न नहीं हुआ और हो भी कैसे जब उन्हें उनके अधिकार बतलाए ही नहीं जाते" जब तक कुछ कुमारियां तपस्विनी नहीं बनतीं उनके दुखों की रात्रि लम्बायमान होती चली जायगी।

बर्मा की स्त्रियां।

नवजीवन के पाठक भली प्रकार से जानते होंगे कि इस देश में प्रायः स्त्रियों की दशा सन्तोष जनक नहीं। यहां लोग समझते हैं कि परमात्मा ने स्त्रियों को सर्वदा पुरुषों की दासी बना रहने के लिये उत्पन्न किया है। बर्मा के लोग ऐसा नहीं मानते। वहां पुरुष प्रायः दास बने रहते हैं। इस देश में पुत्र के उत्पन्न होने में प्रसन्नता और पुत्री के उत्पन्न होने पर दुख मनाया जाता है, बर्मा में पुत्रों की उत्पत्ति पर दुख और पुत्रियों की उत्पत्ति पर सुख मनाया जाता है। यहां लड़कों को उत्तमोत्तम वस्त्र तथा आभूषण मिलते हैं वहां कन्याओं को। यहां लड़के और उनके सम्बन्धी कन्या को चुनते और विवाह करते हैं वहां कन्या वर को चुनती है। यहां विवाह के पश्चात कन्या वर के घर आ जाती है वहां विवाह होने पर वर अपने माता पिता को जलाञ्जलि देकर कन्या के घर जा बसता है। यहां माता पिता की जायदाद पुत्रों को मिलती है वहां पुत्रियां ही जायदाद की वारिस या अधिकारिणी होती हैं। यहां पुरुष कमाते और स्त्रियां गृह कार्य करती हैं वहा स्त्रियां कमातीं और पुरुषों को लाकर खिलाती हैं। यहां सन्तान को पालना स्त्रियों का काम वहां खाना पकाना और बच्चों को खिलाना पुरुषों का काम है।

यहां पुरुष दुकानदार हैं वहां स्त्रियां दुकानदार हैं। यहां माता पिता पुत्रों की शिक्षा पर खर्च करने और कन्याओं की शिक्षा पर अधिक व्यय नहीं करते वहां प्रत्येक वर्मी जब कन्या को विद्योपार्जन के लिये मेतिला बनाकर आश्रम में भेजता है तो उसका खर्च देता है परन्तु पुत्रों को जब आश्रम में भेज दिया तो उसके लिये कुछ खर्च नहीं करता। इस प्रकार वर्मी समझते हैं कि स्त्रियां न केवल पुरुषों के बराबर हैं किन्तु पुरुषों से अधिक मान के योग्य और समाज के लिये अधिक उपयोगी हैं।

सामाजिक समाचार।

आर्य्य मित्र सभा फिरोजाबाद का प्रथम वार्षिकोत्सव तारीख ९-१० और ११ फरवरी सन् १९१३ तदनुसार माघ सुदी ३-४-५ सं १९६९ को विशेष समारोह के साथ मुहल्ला पुरानी मण्डी में होगा। नवयुवकों ने बड़े उत्साह से कई एक प्रतिष्ठित उपदेशकों तथा उपदेशिकाओं को निमन्त्रित किया है। देवियों के लिये प्रबन्ध पण्डाल बनाया गया है। आशा है कि समीपवर्ती आर्य्य कुमार नियत समय पर पहुंच कर फीरोजाबाद के आर्य्य पुरुषों तथा कुमारों का उत्साह बढ़ावेंगे।

आर्य्य कुमार सभा दानापुर कैम्प के उत्साही कुमार नित्यप्रति अपनी उपयोगी संस्था की वृद्धि में सचेष्ट हो रहे हैं। आगामी वर्ष के लिये निम्न लिखित अधिकारी निर्वाचित हुए। श्री देव धारीसिंह प्रधान, श्री गणेशलाल जी उपप्रधान, महा. केदारनाथ गुप्त मन्त्री, महा. रामप्रतापलाल उपमन्त्री, महा. सुन्दरलाल जी कोषाध्यक्ष और श्री रामप्रसादलाल जी पुस्तकाध्यक्ष नियुक्त हुए हैं।

आर्य्य समाज अलमोड़ा के पुरुषार्थी और उद्योगी सभासदों ने मन्दिर फण्ड के लिये अपील की है। अलमोड़ा के महत्व को पहाड़ निवासी सज्जन ही अनुभव कर सक्ते हैं। अधिकारी सज्जन सर्व साधारण से धन के लिये अपील करते हैं। मन्दिर के लिये ज़मीन की रजिस्टरी हो चुकी है। मन्दिर का कार्य्य आरम्भ होने में सज्जन धन द्वारा सहायता दे कर अधिकारियों के उत्साह को बढ़ावेंगे। पत्र व्यवहार श्री बिहारीलाल जी गुप्त मन्त्री आर्य्य समाज अलमोड़ा से करें।

दयानन्द एंगलो वैदिक हाई स्कूल अजमेर बड़ी सफलता से चल रहा है। इस समय वहां अंग्रेज़ी पढ़ाने वाले ११ अध्यापक हैं। जिन में से ४ ग्रेज्यूएट हैं। स्कूल कमेटी ने निश्चय किया है कि स्कूल के लिये एक सुपरिन्टेन्डन्ट रक्खा जावे जिसे १२५) मासिक वेतन दिया जावे–योग्यता:–अंग्रेज़ी में एम ए पास हो, ट्रेन्ड टीचर हो, शिक्षाविभाग का पूर्ण अनुभव हो, प्रवन्ध कर सकता हो और यदि आर्य्य सभासद हो तो तरजीह दी जावेगी। जो सज्जन इस संस्था में सुपरिन्टन्डेन्ट का कार्य्य कर सकें वह श्री मिट्ठनलाल जी वकील प्रधान स्कूल कमेटी से पत्र व्यवहार करें।

आर्य्य मन्डल बम्बई:–सामाजिक जीवन में आर्य्य पुरुषों की निर्बलताओं को जान कर बम्बई प्रान्त के कुछ उत्साही सज्जनों ने आर्य्य मन्डल स्थापित कर दिया है। इस का मुख्य उद्देश्य जात पात के बन्धनों को तोड़ कर परस्पर खानपान और गुण, कर्म तथा स्वभावानुसार विवाहों को प्रचलित करना है। आर्य्य समाज में इस उद्देश्य की पूर्त्ति के निमित्त कई संस्थाएं बनीं और मिट गईं परन्तु आर्य्य पुरुष अब तक निराश नहीं हुए, निराश ही क्यों किन्तु नवीन उत्साह से पुनः २ कार्य्य को उठाने में प्रवृत हैं। हां, नाम-करण नया होता है। हम मन्डल के उद्देश्यों से पूर्णतया सहमत हैं, किन्तु सेठ रणछोड़दास भवानजी तथा अन्य संचालकों से हम अनुरोध प्रार्थना करेंगे कि इस यज्ञ की यदि संस्थापना करनी है तो दो चार मनुष्यों की नहीं किन्तु शतशः मनुष्यों की बली चाहिये जो अहर्निश इसी कार्य्य के apostle बन कर काम करें। जब तक प्रति मास में ब्रह्मभोज न हों और वर्ष में अनेक गुण कर्म और स्वभावानुसार विवाह न हों वह विश्राम न लें। हिन्दू धर्म की नींव तो हिल चुकी परन्तु दृढ़ता वा बलपूर्वक कुठार से गिराने वालों की न्यूनता है तभी तो यह जर्जरीभूत भवन भयावह बन रहा है और प्रतिक्षण मनुष्यों को गिर कर कुचल डालने की चेष्टा में तत्पर है। आर्य्य मन्डल के उद्देश्यों को मानने के लिये हम जानते हैं सहस्रों मनुष्य तय्यार हैं परन्तु वार वार के गिरने के कारण आर्य्य पुरुषों को कुछ अविश्वास सा हो गया है—तिस पर भी साहसी सज्जन सभासद बन कर आगे बढ़ेंगे। चन्दा वार्षिक १), ६) और ३) रुपये हैं और फीस दाखला १) रुपये मात्र है। पत्र व्यवहार मन्त्री आर्य्य मन्डल बम्बई से करें।

लाहौर के दर्बार मासिक पत्र में "हितैषी" सम्पादक दरबार की आजखिनी लेखनी से एक लेख निकाला है जिस का विषय "पंजाब में तहरीक शुद्ध" है। सम्पादक महाशय के विचारों से हमें बहुत कुछ सहानुभूति है। नवजीवन के पाठकों के सामने यह विषय कई बार आचुका है इसलिये उल्लेख करना आवश्यक नहीं प्रतीत होता।

गुरुकुल काङ्गडी का वार्षिकोत्सव इस वर्ष बडे समारोह के साथ मनाया जायगा सरस्वती सम्मेलन के प्रतिरिक्त आर्य्य भाषा भाषियों के लिये एक बृहत सभा होगी जिस में माननीय पण्डित मदन मोहन मालवीय जी सभापति का आसन ग्रहण करेंगे। अलत जातियों के उद्धार के विषय पर एक और विराठ सभा होगी जिस में लोकमान्य लाला लाजपतराय जी ने सभापति बनना स्वीकार कर लिया है। संगीत सभा में श्रीमती देवी जी बम्बई से सम्मिलित होंगी, इन के प्रतिरिक्त उत्सव का प्रोग्राम भी कुछ कम रोचक नहीं होता। आशा है कि गुरुकुल सर्वसाधारण का प्रेम पात्र बनता हुआ जनता के एक बडे भाग को अपनी ओर प्राकर्षित कर सकेगा। प्रायुर्दिक विद्यालय का संकल्प और उपदेशक पाठशाला की स्कीम यह दोनों ऐसे सर्वप्रिय विषय हैं कि जिन की सफलता के लिये प्रत्येक आर्य्य को अग्रसर होना चाहिये-उत्सव १९ से २३ मार्च तक मनाया जायगा।

भारतवर्षीय आर्य्यकुमार परिषद् के उद्देश्य।

(१) आर्य्य कुमार सभाओं की वृद्धि तथा दृढ़ करना। (२) आवश्यकताके समय आर्य्यकुमारसभाओं की असाधारण कठिनाइयों को दूर करना तथा दुःसाध्य शंकाओं का सामाधानकरना। (३) वार्षिक सम्मेलन के लिये स्थान निर्धारित करना तथा प्रवन्ध करना। (४) अपनी सभाओं को नियमित रखना और उनका निरीक्षण करना। (५) आर्य्य कुमार सभाओं के वार्षिक विवरण मंगवाना। (६) अपने वार्षिक उन्नति सम्बन्धी विवरण प्रतिवर्ष प्रकाशित करना। (७) आर्य्य कुमारों की उन्नति के लिये एक समाचार पत्र निकालना। (८) आर्य्यकुमारों के लिये धार्मिक ग्रन्थों की परीक्षा नियत करना तथा कुमारों के वैदिक आचरण बनाने व हानिकारक प्रभाव के दूर करने के उपाय करना।

कमलावती ।

[श्रीयुत हरिदास माणिक के "राजपूतों की बहादुरी" नामी पुस्तक से लिया गया]

दीवारों से घिरा हुआ नाहरगढ़ का नगर चम्बल नदी के किनारे पर बसा हुआ था। जिसका आधा भाग नदी तट के ढालू स्थान और आधा सम भूमि पर था। ठीक इसी ढालू भूमि वाले प्रान्त में श्रीमान् राजा साहब का गढ़ था, जो कि शत्रुओं के आक्रमण के भय से भीतरी भाग में पुष्ट दीवारों और बाहरी भाग में नगर कोट से घिरा हुआ था। यह गढ़ इतना सुरक्षित समझा जाता था कि यहां आवश्यकता पड़ने पर १०००० हज़ार आदमी अपने प्राणों की रक्षा कर सकते थे। महाराज के इस गढ़ के बाहरी दीवार का बगल वाला स्थान रंनिवास था। यहां से प्रातःकाल के उदय होते हुये सूर्य भगवान की किरण नदी पार के पर्वतों के शिखर पर पड़ती हुई अत्यन्त मनोहर मालूम होती थी और जब वर्षा ऋतु में चम्बल नदी में जल रहता था तब सूर्यास्त होने के समय के लाल बादल जल का सोने और चांदी की धारा सा रंग धारण करना चित्त को अत्यन्त ही प्रफुल्लित करता था।

लग भग चार सौ (४००) वर्ष हुये एक दिन ज्येष्ठ मास में चंचल चित्त करनेवाली चटक चांदनी में श्रीमान् की एक प्राणाधार पुत्री कमलावती ने अन्तःपुर की खिड़की में से नदी की ओर देखा जो कि उन दिनों में उष्णकाल के प्रभाव से सूख गई थी।

राजकन्या ने नदी, पर्वतादि की शोभा निहारते २ ज्योंहीं पहाड़ के जड़ में दृष्टि डाला कि उन्हें वायु वेग में उड़ते हुए कुछ अग्नि-कण दृष्टिगोचर हुए। श्रीमती कमलावती देवी, यह लीला देखकर अत्यन्त आश्चर्यान्वित हुई परन्तु थोड़ी देर तक शोकसागर में गोते खाती हुई पुनः नदी-तट के वृक्षों की शोभा देखने लगीं। थोड़ी देर के बाद श्रीमती की दृष्टि अग्नि कण पर फिर पड़ी पर उन्होंने उसे जुगुनू समझा और बिना शंका समाधान किये ही वे अपनी शयन शय्या पर जा सोईं। यदि राजकुमारी को तनिक

भी मालूम होता कि इन चिनगारियों की मैं ही कारण हूं और उन्होंने यह) सब समाचार अपने पिता से कहा होता, तो यह निश्चय था कि वह केवल इतने ही से अपने पूज्य पिता के जन, धन, और आपत्तियों की रक्षा कर लिये होतीं।

परन्तु हा ! जो भवतव्यता होती है कदापि नहीं टलती। ये चिनगारियां मुसलमान बहादुरों के हुक्के पीने की थीं, जो बड़ी २ कठिनता से नदी तट के ऊबड़ खाबड़ मार्ग से सीढ़ी लगा कर महल के दीवार के पास बैठ कर विश्राम करते थे।

इन यवनों में से कुछ तो धन के लालच से आये थे, और कुछ यश-लाभ के उत्सुक हो चढ़ाई करना चाहते थे परन्तु फतहजङ्ग जो कि इनका सेनापति एक सुन्दर नवयुवक था राज कन्या कमलावती पर मुग्ध होकर आया था। फतहजङ्ग की यह अन्तरिक इच्छा थी कि चाहे अन्य सैनिक लूटपाट का सब धन ले लें और मुझे केवल कमलावती ही मिलै तो भी मैं अपने को धन पाने की अपेक्षा सहस्र गुना धनी समझूँगा। कमलावती के चन्द्रमा को भी लज्जित करने वाले मुख को जो एक बार देख पाता था वह उसी पर मुग्ध हो जाता था। फतहजंग की कमलावती को पाने की इच्छा इतनी दृढ़ हो गई थी कि उसको "मैं कौन हूं ?" "कहा हूं" तक की भी सुध न रही।

फतहजंग धीरे से अपने स्थान से खड़ा हुआ और अपने फौजी सिपाहियों से कहने लगा कि शेरों ! देखो मौक़ा हाथ से न जाने पावे। गोकि मैं इस बात को जानता हूं कि हम लोगों को निहायत तकलीफें उठानी पड़ैंगी क्योंकि राजपूत भी किसी से कम नहीं मगर याद रक्खो जब हम लोग इतनी तकलीफें गवारा कर यहां आही पहुँचे हैं तो अब कोई बड़ी बात नहीं है। बहादुरों ! सीढ़ी लगा कर फाँद चलो। फतहजंग के वीरता युक्त वाक्य मन्द स्वर में सुनते ही एक के बाद एक सिपाही कूद चले बात की बात म उन में से कुछ महल के भीतरी भाग में पहुँच कर आंगन में जा उपस्थित हुए। इन लोगों ने पहुँचते ही संतरी को मार गिराया। थोड़े ही देर में बाकी और भी सिपाही आ जिनकी संख्या लगभग २००० के रही होगी। जब उन्होंने देखा कि हम लोगों की सेना भरपूर है तब लूटना शुरू किया। लूट

कोलाहल ने और रण दुंदुभी ने महल में महा प्रलय मचा दिया और जो लोग सोए हुए थे एकाएक जाग पड़े। जिनका जिधर सुख था वे उधरही दौड़े। कोई नींद के झोंके में दीवारों से टकराता है तो कोई दीपक बाल कर टटोल कर कोठड़ी से निकल भागता है। कोई व्यग्र होकर चिल्लाता है तो कोई शत्रुओं के आने की सूचना दे चित्त को शान्त कर बाहर निकलने की अनुमति देता है। धीरे २ लगभग ५००० राजपूत आंगन में आ उपस्थित हुए और मार काट करने लगे। उन में से जो कि नवसिख योद्धा थे उनके हाथ में तलवार है तो ढाल नहीं, और ढाल है तो तलवार नहीं। परन्तु जो कि निपुण योद्धा थे और जिनकी अवस्था भी ५०, साठ वर्ष की वीरता पूर्वक लड़ने लगे। एक दूसरे की तलवार जिस समय टकराती थी दुर्गा के पैंजनी की सी झनाझन आवाज आती थी।

यद्यपि यवन लोगों की संख्या न्यून था तथापि वे व्यूह विद्या से ऐसे लड़ते थे कि राजपूतों के प्रत्येक तलवार की वार बचाते जाते थे। वीरों की परस्पर मार काट से रणस्थल के आंगन ने विचित्र रूप धारण किया। कहीं २ घायल वीर कहँरते थे तो कहीं पानी पानी २ चिल्लाते थे। इधर एक उठाने को कहता था तो उधर मारो मारने को कहता था। एक का हाथ कट गया है तो दूसरे का पेट फट गया है। इधर एक अपने हाथ के घाव को कपड़ा लपेट बांधता है तो उधर दूसरा तलवार के एकही वार से दो टुकड़ा कर डालता है। किसी के चोट ही में तलवार की आधी नोक टूट गई है, तो दूसरे की हिम्मत लड़ने से छूट गई है। कोई कायर तो चोट लगे ही गिर कर चिल्ला रहा है तो कोई वीर मूड़ कटने पर भी शत्रुओं को धूल में मिला रहा है। देखते २ राजपूतों का प्रभाव यवनों पर से उखड़ गया और राजपूत इधर उधर भाग कर प्राण बचाने लगे। इधर कोई बगल वाले मन्दिर में भागता है तो कोई दूसरा अपने को दरबार वाले कमरे में जा छिपाता है। इन भागने वाले सिपाहियों में से एक सिपाही जिस के सिर पर पीला साफा, और ललाट में त्रिपुण्ड, शरीर में पीले अंगरखे के ऊपर कमरबन्द, कमरबन्द में रत्नजटित म्यान में लटकती हुई तलवार और पैर में पीला पैजामा था अन्तःपुर की ओर भागा और जनाने जानेवाली सकड़ी सीढ़ी पर पैतरा बदल कर खड़ा हो गया। इस

वीर की आकृति ऐसी भव्य थी कि देखने ही से मालुम होता था कि यह भी अर्जुन की भांति शस्त्र विद्या में निपुण है। इस वीर की तरवार जिस समय चमकती थी उस समय यही शङ्का होती थी कि पृथ्वी पर बिजुली चमक रही है। इसकी ढाल ऐसी बड़ी थी कि एक समय में उसके पीछे दो आदमी छिप कर अपने को बचा सकते थे।

यवन वीर राजपूतों का पीछा करते हुये दरबार वाले कमरे में आये और कमरे के दीवारों के रत्न जटित बेल बूटों को देखकर मोहित हो गये। थोड़ी देर तक तो यवन लोगों को प्राचीन चित्र-कारी से आश्चर्य सागर में गोता मारना पड़ा परन्तु पुनः जब उन लोगों ने विचार किया तब उन्हें मालुम हुआ कि हिन्दू भी कला कौशल में सामान्य नहीं हैं। थोड़ी ही देर बाद मारकाट पुनः प्रारम्भ हुई और संगमरमर से जटित भूमि राजपूतों और यवनों के रक्त से लाल हो गई। उधर यवनों के दूसरे झुंड ने अन्तःपुर के बगल वाले राधा कृष्ण के मन्दिर पर आक्रमण किया और पंडो को मार कर मूर्ति को टुकड़े २ कर डाला। मूर्ति के टूटते ही भीतर से कई अमूल्य रत्न निकले जो यवनों के हाथ लगे।

यवनों के तीसरे झुंड ने सीढ़ी पर अड़े हुए वीर को मार कर अन्तःपुर में प्रवेश करना चाहा परन्तु कृतकार्य न हुए। उस राजपूत वीर ने तथा उसके सेनापतित्व में वहां जितने सिपाही थे, उन्होंने यवनों को पहिले थोड़ी दूर तक सीढ़ी पर आने दिया परन्तु फिर वे ऐसी चतुरता से उन पर झपटे कि भागते २ दो चार यवनों को प्राण पखेरू से हाथ धोना पड़ा।

थोड़ी देर के बाद यवन सेनापति फतहजंग ने बिगुल बजाई, क्षण मात्र में सब यवनवीर फतहजंग के पास जा आज्ञा की राह देखने लगे। युद्ध नियम के अनुसार अब उन्हें उचित था कि लूट का धन ले सीढ़ी लगा कर उतर भागते। क्योंकि अभी तक इन्होंने अन्तःपुर के आक्रमण के अतिरिक्त सब में सफलता पाई थी। इन्होने मूर्ति के तोड़ने से रत्न, आभूषण आदि इतने प्राप्त कर लिये थे कि इन्हें इस आक्रमण में एक घोर युद्ध की अपेक्षा कुछ कम आय नहीं हुई। इन यवनों के इस आक्रमण का उद्देश्य भी सिद्ध हो चुका था। किन्तु यदि इन में से किसी के मनोर्थ सिद्धि में कुछ त्रुटि रह

ई थी तो वह फतहजंग के मनोर्थ में थी । फतहजंग ने अपने इस आक्रमण का मुख्य उद्देश्य कमलावती के पाने का रक्खा था, परन्तु संयोग वश सब कार्य पूर्ण होने पर उसी में कसर रह गई। उस समय फतहजंग की सांप छछूंदर की सी गति थी । इधर तो लूट पाट के धन को लेकर सैनिकों के साथ जाना उचित था और उधर राजकुमारी के न मिलने से इसका हृदय संकुचित था।

यवन सेनापति ने अपने सैनिकों से वीरता पूर्वक सीढ़ी लगा कर उतर जाने की आज्ञा दी और आप स्वयं अकेले कमलावती के पाने की आशा में महल में रहने के लिये उद्यत हुआ । दुर्भाग्य वश इन यवनों के नदी की दीवार की ओर पहुंचने के पहिले ही उस स्थान में चंद राजपूत आ उपस्थित हो गये थे । राजपूतों ने यहां यह चतुरता की कि सीढ़ी के रक्षकों को इधर उधर छिपते २ भी मार डाला और उस स्थान में अपना अधिकार जमा लिया।

यवन लोग राजपूतों की इस चतुराई पर बड़े दुःखी हुए और किले के भीतर ही से जो कि अभी तक इन्हीं के अधिकार में था उनके आक्रमण से अपने को बचाने लगे । यवनों ने जब जान लिया कि अब राजपूत हम लोगों को किला के अंदर कैद करना चाहते हैं और किला पर अपना अधिकार जमाना चाहते हैं तब उन्होंने "मरता क्या न करता" के अनुसार अपने प्राण हथेली पर ले, किला पर से उनकी आती हुई सेना को मारने का निश्चय किया। देखते २ राजपूतों का शहर का शहर उमल पड़ा और थोड़ी ही देर में एक सुसज्जित राजपूती फौज किले के ठीक फाटक पर आ पहुंची । किला के भीतर अन्तःपुर के अतिरिक्त सब स्थानों में यवनों का स्थान था और अन्तःपुर और किले के बाहरी भागों में राजपूतों का अधिकार था । इस समय एक विचित्र घटना थी । इधर तो यवन किला पर अपना सत्व पाने के कारण विजयी कहला सकते थे तो उधर राजपूत यवनों को घेरे हुये विजयी कहला सकते थे। यों ही दोनों लड़ने वालों के दल आपस में "विजयी" और "पराजयी" का सम्बन्ध रखते थे।

फाटक पर के राजपूतों और यवनों में घोर संग्राम होना ही चाहता था कि राजा के एक दूत से और फतहजंग से मुलाकात हुई। राजदूत ने राजा साहब की बड़ी प्रशंसा की तब फतहजंग

ने कहा कि यदि द्वन्द युद्ध हो तब बड़ी अच्छी बात है! यदि राजा साहब स्वीकार करें तो वे एक अत्यन्त बलवान राजपूत को द्वन्द युद्ध के लिये भेजें। युद्ध का नियम यह होना चाहिये कि जो जीते वही कमलावती को प्राप्त करने का भागी हो। राजदूत ने यह बात जाकर राजा साहब को सुनाई और उन्हें प्रसन्नता और दुःख दोनो ही हुए। उन्हें प्रसन्नता तो इस बात की हुई कि उनकी इच्छा के अनुसार कमलावती का विवाह एक वीर से करने का अवकाश मिला, और उन्हें दुःख इस बात का हुआ कि फतहजंग नीच ने मेरी पुत्री को पाने पर दांत लगाया। फतहजंग की कमलावती से व्याह करने की इच्छा देख कर कुछ राजपूत क्रोध में भर उसे मारने को चले पर राजा साहब ने उन्हें उसकी वीरता की प्रशंसा कर शांत किया। राजा साहब ने द्वन्द युद्ध के लिये राजपूत वीर भेजना स्वीकार किया और उन्हों ने कहा कि यदि फतहजंग जीत जावें तो वह लूट का धन आभूषणादि लेकर प्रसन्नता पूर्वक चला जाय, और यदि राजपूत वीर जीते तो वह मुसलमानों के लूट का धन आभूषणादि लेले और उन्हें प्राण दान दे जाने दे।

दोनों ओर से द्वन्द युद्ध का नियम स्वीकृत हुआ और इधर राजपूत ने गंगाजी की और उधर फतहजंग ने कोरान की शपथ खा उस पर दृढ़ रहने का प्रण किया।

श्रीमान् राजा साहब ने द्वन्द्व युद्ध में लड़ने के लिये वीर का चुनाव करने के निमित्त एक बड़ी भारी सभा की जिस में की प्रायः सभी राजपूत उपस्थित थे। इधर कोई वीर तो ज़री का साफा बांधे हुए लाल पैजामा और अंगरखा पहिने हुए था तो उधर दूसरा बादले के वस्त्र से सिर से पैर तक सुशोभित था। किसी के माथे पर की कलगीं फरफराती थी तो दूसरे के कमर की तलवार खड़खड़ाती थी। किसी वीर के कमरे में हरी काचोंपी के म्यान में किरिच थी तो किसी के म्यान में लपालप करती हुई कटारी थी। प्रत्येक वीर ऐसे सुसज्जित थे कि देखने से मालूम होता था कि वे किसी स्वयम्वर में आये हैं। श्रीमान राजा साहब ने प्रत्येक वीर की वीरता पर ध्यान दिया और अन्त में रामसिंह नामक वीर को जो कि एक कोने में पीला साफा बांधे त्रिपुण्ड धारण किये साधारण वेश में बैठा हुआ था चुना। मैं इस बात को जानता हूं

कि हमारे पाठकगण इस वीर से भलीभांति परिचित न होंगे । यह वही वीर है जिसने अन्तःपुर की सीढ़ी पर खड़ा हो जनाने में एक यवन बच्चे को भी प्रवेश करने न दिया था ।

राजा साहब की आज्ञा पातेही रामसिंह ने खड़ा होकर श्रीमान् को तलवार से प्रणाम की और उनकी आज्ञा सिर पर चढ़ाई । बाकी अन्य वीर जो कि अत्यन्त सजबज कर आये थे बड़े लज्जित हुए और एक के बाद एक मुंह दबा कर चले गये ।

युद्ध का निर्द्धारित समय आते ही राजा साहब ने रामसिंह से तैयार होने को कहा और वह पीला जांघिया पहर, एक हाथ में ढाल और दूसरे हाथ में तलवार ले उनके सामने जा पहुंचा । राजा साहब ने उसे कुछ वीरता युक्त वाक्य कहे और वह उन्हें प्रणाम कर अपने से सब बड़ों के पैरों पर गिरने लगा । उधर फतह-जंग के ललकारते ही वह अखाड़े में जा पहुचा । और राजपूती शस्त्र विद्या दिखलाने लगा । इधर फतहजंग ने भी पैतरा बदलना शुरू किया और अपने शरीर को ऐंठ कर लोगों को दिखाना चाहा । अभी इधर पैतरा हो ही रहा था कि फतह जंग ने एका एक रामसिंह पर तलवार ऐसी मारी कि वह अपने प्राण से हाथ धो ही चुका था परन्तु रामसिंह ने भी उसे अपने तलवार ही पर रोकी और झनन आवाज से सभा गूंज उठी । फतह जंग की यह कपट-पूर्ण दुष्टता कमलावती से न देखा गया और उसने एक खिड़की में से युद्ध विद्या के अनुसार एक ऐसा तीर साध कर मारा कि फतह जंग के कलेजे में गंभीर घाव लगा । इस तीर के लगते ही प्रायः सभी मुसल्मान कनमना उठे और लड़ाई करने पर उद्यत हुए । इन मुसलमानों को क्रोधित देख राजपूत भी अपने स्थान से खड़े हो गये और म्यान में तलवार खड़खड़ाने लगे । राजा साहब ने इस हलचल को देख दोनों ओर वालों को शान्त किया और फतह जंग को विश्राम करने की आज्ञा दी । फतह जंग ने कहा कि यह तीर कमलावती के हाथ की आई है और मेरा मुख्य उद्देश्य उन्हीं के पाने का है इस कारण मैं इस तीर के घाव को घाव नहीं समझता किन्तु उसके प्रेम का पात्र समझता हूं । इस बात को सुन प्रायः सभी राजपूतों के हृदय में क्रोधाग्नि धधक पड़ी और अशान्ति मच गई । परन्तु राजा साहब के मुख से " सावधान "

शब्द निकलते ही सभी शान्त हो गये और लड़ाई पूर्ववत होने लगी। फतह जंग के पैतरों से मुसलमानों की युद्ध निपुणता और रामसिंह के तलवार चमकने से राजपूती शस्त्र दक्षता मालूम होती थी। इधर रामसिंह भी राजपूतों में सब से विशेष वीर था तो उधर फतह जंग भी यवनों में अत्यन्त ही बलवान् और धीर था। रामसिंह फतह जंग की अपेक्षा कुछ लंबा और पुष्ट था। उसके शरीर का बखतर चमाचम करते हुए लोहे का बना हुआ था। उसकी तलवार की मुठिया ऐसी रत्न जटित थी कि उसको हाथ में पकड़ने ही से मुट्ठी बैठजाती थी। उसकी ढाल ऐसी विचित्र थी कि उसके सम्मुख आंख नहीं ठहरती थी। पैंतरा बदलने से रामसिंह के मुख पर वीरता नांचती थी और व्यग्रता का लश मात्र भी न मालुम होता था।

इधर फतह जंग का भी मुख यद्यपि देखने में रामसिंह की अपेक्षा कुछ शौर्यता से दबा हुआ मालूम होता था तथापि इसके वस्त्र और शस्त्र देखने से किसी प्रकार सामान्य नहीं थे।

जिस समय लड़ाई हो रही थी कि इधर राजपूतों ने रामसिंह को मुष्टि प्रहार करने के लिये ललकारा। परन्तु रामसिंह के घूंसा मारने के पहिले फतह जंग ने ऐसा घूंसा मारा कि रामसिंह के नेत्रों में रक्त आ गये और क्रोधाग्नि भड़क उठी। इसके बाद थोड़ी देर तक घमासान युद्ध होती रही और देखने से कोई भी एक दूसरे से कम नहीं मालूम होता था। संयोग से फतह जंग का पैर फिसल गया और वह पृथ्वी पर गिरते २ सम्हल गया। थोड़ी ही देर में रामसिंह को भी एकाएक ऐसा धक्का लगा कि उसने पृथ्वी थाम ली और घूम कर फतह जंग को तलवार मारा। फतह जंग को बड़ी चोट आई। परन्तु अन्त में उसी की विजय बदी प्राप्त हुई और नियमानुसार उसने लूट का सब धन लेकर नाहरगढ़ को छोड़ना स्वीकार किया। और इधर रामसिंह भी फतहजंग की तलवार की चोट से चोटैला हो गया था। पर थोड़े ही दिन में वह आराम हो गया और उसका विवाह नाहरगढ़ की वीर क्षत्राणी कमलावती से हुआ।

राधाकुमार व्यास।

———o———

सुकरात की जीवनी ।
(मई-जून के अङ्क से आगे)

सुकरात । अच्छा, तो फिर यह भी तुम्हारा कहना हुआ कि 'पुण्य या धर्म का मतलब यह है कि देवताओं की खबरदारी करना' ।

युथी । बेशक ।

सुकरात । अच्छा, तो खबरदारी सब की एक ही तरह न होती है ? मतलब यह कि जिसकी खबरदारी की जाती है उस से उस को फायदा पहुँचना है, जैसे कि घोड़े की खबरदारी की जाय तो घोड़े को फायदा पहुँचेगा उसकी तरक्की होगी, अश्वपाल की विद्या का यही काम न है ? क्यों मैं ठीक कहता हूं कि ग़लत ?

युथी—हां, ठीकही तो है ।

सुकरात । उसी तरह से शिकारी के हुनर से कुत्तों को फायदा पहुँचता है उनकी तरक्की होती है और चौपायों को चरवाहे के हुनर से फायदा पहँचता है ? क्यों इसका उपयोग सब जगह एकही सा लाभकारी साबित होता है न ? कहीं ऐसा तो नहीं होता कि इस खबरदारी से, जिसकी खबरदारी की जाती है, उसे किसी तरह का कष्ट हो या नुकसान पहुँचे ।

युथी—नहीं जी, ऐसा भला क्योंकर हो सकता है ?

सुकरात—फायदा ही न पहुँचता है ?

युथी—बेशक ।

सुकरात—तो क्या 'धर्म्म' वह हुनर है, जिसके द्वारा हम देवताओं की खबरदारी करके उन्हें फायदा पहुँचाते हैं या उनकी तरक्की करते हैं ? तुम क्या यह बात मानते हो कि कोई पुण्य का काम करने से हम किसी देवता को सुधार देते हैं या पहले से उन को कुछ तरक्की कर देते हैं ?

युथी—नहीं बिलकुल नहीं ।

सुकरात—ठीक है, मुझे भी पूरा विश्वास है कि तुम ऐसा नहीं मानते, इसीलिये तो मैंने पूछा था कि "देवताओं के प्रति कर्तव्य" का तात्पर्य्य क्या है ? यह तात्पर्य्य तो हरगिज़ न होगा ।

युथी—बहुत ठीक ! मेरा यह तात्पर्य्य बिलकुल नहीं था ।

सुकरात—अच्छा, तो फिर क्या तात्पर्य्य था ? देवताओं के प्रति 'किस प्रकार के कर्तव्य' को पुण्य या धर्म्म कहा जाय ?

युथी—यही, जैसा कि गुलामों का अपने मालिक के प्रति जो कर्तव्य है।

सुकरात—ठीक, मैं समझ गया अर्थात यह देवताओं की एक गुलामी है या उनकी सेवा करना कहो।

युथी—बेशक।

सुकरात—अच्छा, अब तुम मुझे एक बात बतलाओ, जिस हुनर से डाकटर का काम निकलता है (या यों कहो कि जो हुनर उसकी सेवा करता है) उसका नतीजा क्या है ? क्यों नतीजा तो तनदुरस्ती ही न है ?

युथी—बेशक।

सुकरात—अच्छा ! और जो हुनर जहाज बनाने वाले की सेवा करता है या जिस हुनर से जहाज बनाने वाले का काम निकलता है, उससे क्या पैदा होता है ?

युथी—जहाज पैदा होता है या जहाज बनता है और क्या होगा ?

सुकरात—उसी प्रकार से मेमार (पेशराज) के हुनर का फल इमारत है, क्यों है न ?

युथी—है हीं।

सुकरात—अच्छा, तो मित्रवर ! अब यह बतलाइये कि देवताओं की सेवा करने का जो हुनर है उस से क्या पैदा होता है, कौन सा नतीजा निकलता है। तुम इस बात को ज़रूर जानते होगे, क्योंकि तुम कह चुके हो कि "मैं औरों से दैवी बातों में ज्यादः दखल रखता हूं"।

युथी—बेशक, रखता हूं।

सुकरात—वाह ! वाह ! फिर क्या कहना है, बस लगे हाथ बतला ही डालो कि वह "कौन सा नतीजा है जिसके पैदा करने व निकालने के लिए देवताओं को हमारी सेवा की जरूरत पड़ती है"।

युथी—बड़े बड़े उत्तम और श्रेष्ठ नतीजे हैं, इसके बहुत उत्तम फल हैं।

सुकरात—हां, ठीक वैसे ही बहुत से श्रेष्ट फल या नतीजे प

सेनापति द्वारा भी उपजाए जाते हैं अर्थात् एक सेनापति की कार्य्य-वाई द्वारा भी होते हैं, पर सब नतीजों का सिरताज तो युद्ध में विजय या जीत ही नहीं है? क्या मैं ठीक नहीं कहता हूं?

युथी—बेशक।

सुकरात—वैसेही मैं कह सकता हूं किसान भी बहुत से उत्तम फलों का कारण होता है, पर सब का सिरताज फल तो यही नहीं है कि वह धरती से अन्न पैदा कर देता है।

युथी—बहुत ठीक।

युथी—अच्छा, तो फिर देवता लोगों की कार्य्यवाई से जो बहुत से श्रेष्ठ फल पैदा होते हैं उनमें से सब का सिरताज, मुख्य या निचोड़ फल या परिणाम क्या है अर्थात् इस से कौन सा ख़ास प्रयोजन सिद्ध होता है।

युथी—अरे भाई, सुकरात! तुम से तो मैं अभी कह ही चुका हूं कि इन सब बातों का असली मर्म समझना हँसी खिलवाड़ नहीं है पर तो भी मैं तुम्हें एक आम बात बतलाए देता हूं, वह यह है कि "यदि किसी आदमी को यह निश्चय है कि मनसा, वाचा, कर्म्मणा उसकी प्रार्थना, यज्ञ आहुती, पूजा इत्यादि देवताओं को स्वीकार है, तो उस के यही कर्म्म 'पवित्र हुए; इससे यह फल होता है कि सर्व साधारण की भलाई बनी रहती, उनका कुशल क्षेम रक्षित रहता है, जैसे कि एक विशेष गृहस्थ की इससे भलाई होती है और उस पर दुःख नहीं आता, वह आपत्ति विपत से बचा रहता है, ठीक इसी से विपरीत जो क्रिया है वह 'अपवित्र' है, जो देवताओं को स्वीकार नहीं है और जिस के करने से नाना प्रकार के दुःख और आपत्ति प्राणियों पर आते हैं।

सुकरात—बहुत ठीक, इतने फेर फार करने की क्या ज़रूरत थी, तुम चाहते तो दोही बातों में मेरी बात का जवाब दे दिए होते, पर मैं देखता हूं कि तुम मुझे सिखाना नहीं चाहते; क्योंकि ठीक इसी मौके पर जब तुम यह बात कहा ही चाहते थे, जो मैं तुमसे कभी देर से पूछ रहा हूं, तुम चुप कर गए। अगर तुम कहते जाते तो अब तक कब मैं तुम से सीख लिए होता कि 'पवित्रता' क्या है। अच्छा तो मैं फिर से पूछता हूं, जिस तरफ तुम मुझे ले जाओगे, जाना पड़ेगा। खैर, तो तुम यह बतलाओ जब तुम 'पवित्र'

या 'पवित्रता' कहते हो तो उससे क्या मतलब समझते हो? इससे क्या यज्ञ प्रार्थना और पूजा की एक विद्या या विधि से मतलब नहीं है।

युथी—यही मतलब है।

सुकरात—यज्ञ का मतलब यही नहीं है कि देवताओं को कुछ देना और प्रार्थना का मतलब है कि उनसे कुछ मांगना, क्या यही है या और कुछ?

युथी—यही है।

सुकरात-तो क्या तुम्हारे कहने का तात्पर्य यह है कि "देवताओं से मांगने और देने की जो विधि या विद्या है वही पवित्रता या धर्म है?

युथी—और क्या? यह तात्पर्य तो है ही है। अब इतनी देर पर तुम मेरी बात समझे।

सुकरात—समझेंगे क्यों नहीं, जब मैं तुम्हारी विद्या बुद्धि से लाभ उठाने की ठान चुका हूं और उसी तरफ मन निविष्ट किए हुआ हूं, तो समझूंगा नहीं, खूब समझूंगा, तुम्हारी अदनी बात भी वृथा नहीं जाने दूंगा। खैर, अच्छा भाई साहिब यह तो बतलाओ कि वेदताओं की सेवा करना किसे कहते हैं क्यों यही उनको कुछ देना या उनसे कुछ मांगना यही न है?

युथी—यही है।

सुकरात—तो उनसे वही मांगना उचित होगा, जिसकी हमें ज़रूरत हो?

युथी—बेशक।

सुकरात—और उनको जिस बात की ज़रूरत हो, वही उनको देना भी उचित होगा? ऐसी चालाकी तो करनी है ही नहीं कि जिस आदमी को जिस चीज़ की ज़रूरत नहीं उसे बलात् वह चीज़ नज़र करनी।

युथी—नहीं ऐसा तो सर्वथा अनुचित है।

सुकरात—तो फिर तुम्हारे कहने मुताबिक 'पवित्रता' या 'धर्म' देवता और मनुष्यों के बीच एक प्रकार का व्यापार ठहरा।

युथी—खैर, जो कह लो।

सुकरात—नहीं भाई, जो क्या कह लें जो यथार्थ होगा, वही कहेंगे, पर यह मेरे समझ में नहीं आता कि हम लोगों से कुछ चीज़ें पाकर देवताओं को फायदा क्या पहुँचता है? हमें उनसे

चीज़ें मिलकर जो फ़ायदा पहुँचता है वह तो स्पष्ट ही है । जो कुछ अच्छी चीज़ें हैं, सब उन्हीं से मिली हैं । पर हमारे देने या दान से उन्हें कौन सा फायदा पहुँचता है ? क्या उनसे व्यापार करने में हमें इतना गहरा मुनाफा है कि सब अच्छी चीज़ें मिल जाती हैं और बदले में देना कुछ नहीं पड़ता ?

युथीफाइरन—वाह भाई सुकरात ! तुम्हारी भी अजीब समझ है, क्या हमारी भेंट से देवताओं को कुछ फायदा पहुंचता है ?

सुकरात—पर वह भेंट क्या है, जो हम देवताओं को देते हैं ?

युथीफाइरन—भेंट और क्या होगी, यही भक्ति और श्रद्धा, जैसा कि मैं पहले कह चुका हूं, जो देवताओं को सर्वथा स्वीकार है ।

सुकरात—अच्छा तो 'पवित्रता' देवताओं को सर्व्वथा स्वीकार है उससे उनको कुछ फायदा नहीं पहुँचता या यह उनको प्यारी नहीं है ?

युथी—वाह ! प्यारी क्यों नहीं है ? इससे बढ़ कर उन्हें और कोई वस्तु भी अधिक प्यारी नहीं है ।

सुकरात—अच्छा तो तात्पर्य्य यह निकला कि पवित्रता या धर्म वह वस्तु है जो देवताओं को प्यारी है" ।

युथी—बहुत ठीक ।

सुकरात—अब मैं क्या कहूं ? अब यदि मैं तुम्हें यह निश्चय करा दूं कि तुम जो दावा पेश करते हो या जो तर्क की विधि निर्देश करते हो वह एक जगह ठहरती नहीं, कभी इधर कभी उधर जाती रहती है अब तुम मुझे दाऊदयाल मत कहना, जब कि तुम खुद दाऊदयाल से बढ़ कर ऐसे चतुर हो कि तुम्हारी युक्तियां चक्र की तरह इधर उधर घूमती रहती हैं । देखो, हम लोग जहां से रवाना हुए थे फिर चक्र की तरह घूम कर वहीं आ पहुँचे, तुम्हें ज़रूर याद होगा कि यह बात हमलोगों में तय पा चुकी है कि "देवताओं को जो प्यारी है "और पवित्रता या धर्म्म" यह दोनों एक चीज़ नहीं हैं ! याद है कि भूल गए ?

युथी—खूब याद है ।

सुकरात—अच्छा ! तो अब तुम फिर वही कह रहे हो, कि "देवता जिसे प्यार करते हैं' वही 'पवित्र' है । देवता जिसे प्यार करते या देवताओं को जो प्रिय हो, चीज़ तो दोनों एकही न हुई ?

युथी—ज़रूर।

सुकरात—तो फिर, या तो हम लोगों का पहला निश्चय ग़लत था, और यदि गलत नहीं था तो अबका निश्चय ग़लत है

युथीफाइरन—ऐसा ही तो मालूम पड़ता है।

सुकरात—तो अब फिर नये सिरे से आरम्भ करना पड़ा और 'पवित्रता क्या है इसकी छान बीन करनी पड़ी। बिना इसका पूरा पता लगाए मैं हटने का नहीं। मुझे नालायक न समझ कर मेरे प्रश्न को खूब ध्यान देकर सुनिए और अबकी मुझे इसका यथार्थ मर्म समझा दीजिये, क्योंकि सिवाय आपके और इस बात का वेत्ता (जानकार) कोई नहीं है। अस्तु, तुम्हारें ऐसे वेदव्यास को पाकर अब मैं बिना सीखे, तुम्हें छोड़ने का नहीं। यह तो सर्व्वथा असम्भव है कि तुम बिना धर्म्म या अधर्म्म का मर्म समझे अपने विचारे बूढ़े बाप को, गुलाम के खून करने का अपराध लगाकर दंड दिलवाना चाहते हो, क्योंकि देवताओं के नाराज़ हो जाने का भी भय अवश्य ही होगा, क्योंकि यदि यह काम अधर्म्म का हुआ तो देवताओं की खफगी का ठिकाना नहीं रहेगा और लोकनिन्दा भी होगी पर मुझे निश्चय है कि 'तुम धर्म्म क्या है' और "अधर्म्म क्या है" यह ज़रुर ठीक ठीक जानते हो, अस्तु, कृपाकर मुझे बतला दो, और छिपावो मत, मुझे इस शिक्षा का दान करो।

युथीफाइरन—अच्छा, फिर कभी देखा जायगा। मुझे बड़ी देर हो गई अब जल्दी जाना है।

सुकरात—वाह जी, वाह ! यह खूब ! ऐसा न करो, मित्रवर तुम्हें ऐसा उचित नहीं है। मैं कितनी देर से आशा लगाए बैठा हूँ कि तुमसे 'धर्म्माधर्म्म' का मर्म समझ कर मेलीटस* से अपनी जान बचाऊंगा, और तुम मेरी सब आशाओं पर पानी फेर कर चले जाते हो। मैं मेलीटस से कहना चाहता था कि लो सुनो ! अब युथीफाइरन ने मुझे दैवी बातों का पूरा ज्ञान करा दिया है, अब मैं मूर्ख नहीं रहा कि देवताओं के बारे में मनमानी बातें बनाऊं या उनमें तरन्दाजी चलाऊं और इसी बुनियाद पर मैं उसे आगे के लिए एक बहुत आनन्द दायक जीवन की आशा दिलाने वाला था। [शेष फिर

* इसी शख्स ने सुकरात पर नास्तिकता का दोष आरोपन करके उसे प्राणदंड दिलवाया था।

युवा पुरुषों के लिये एक हितोपदेश.

(श्रीयु० लक्ष्मणाराव शर्मा लिखित)

कई उत्साही होवनहार युवकों को हमने यह प्रश्न करते हुए पाया है कि हम अपने लिये भविष्यत में कौन सा उद्यम स्वीकार करें और अपना जीवन किस प्रकार का रक्खें,

इस प्रश्न का उत्तर व्यक्ति विशेष को प्रथक प्रथक देना दुस्तर है, एक प्रसिद्ध इंग्लिश तत्ववेत्ता इस प्रश्न का उत्तर यूं देता है कि, whatever you are by nature, keep to it, never desert your line of talent. Be what nature intended you for and you will succeed.

इसका भावार्थ यह है कि जो तुम्हारा जन्म से स्वभाव गुण है उसीका अनुसरन करो, जिस मार्ग को तुम्हारा स्वभाव पसन्द करता है उसको छोड़ने का साहस कभी मत करो, अगर तुम अपने प्राकृतिक स्वभाव के अनुसार चलोगे तो निःसंशय तुम को यश प्राप्ति होगी, सब युवकों के सामान्य प्रश्न का यही संक्षिप्त उत्तर है। जिस मार्ग को तुम्हारा मन देवता स्वीकार करता है उसी मार्ग का ध्यान धरो, उस ही कार्य में तुम्हारी संगति होकर मनोवांछित सिद्धि प्राप्त होगी, जो कार्य तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध है उसमें सफलता और यश की अपेक्षा करना व्यर्थ है, जिस व्यवसाय के लिये तुम्हारा जन्मस्वभाव विरोधी है उसमें मग़ज़ मारने में व्यर्थ तन, मन, धन और समय का नाश करना है। एक शिल्पकार अपने स्वसिद्धि व्यवसाय को किसी लालच वश छोड़कर वकील बनना चाहे तो उसका परिणाम क्या होगा सो तुम ही सोच सक्ते हो। कई पुरुष औरों पर हुकूमत करना चाहते हैं परन्तु जबतक उनको खुद पर हुकूमत करना याद नहीं है क्या वे अपनी इस उचित इच्छा को कभी भी पूर्ण कर सक्ते हैं? कदापि नहीं। कोई २ जिस विषय का खुद को ज्ञान नहीं उसकी शिक्षा औरों को देनेका साहस करते हैं। कोई २ जिनकी स्वाभाविक बुद्धि साधारण मुनशी-यों के तुल्य है, धर्मोपदेशक होने का हौसला करते हैं क्या इनमें उनकी प्रतिष्ठा होना सम्भव है? कदापि नहीं।

तुमको अपने मन से ही बुद्धिवाद करके इस बात का निश्चय

कर लेना चाहिये कि कौन से व्यवसाय में हमारी बुद्धि और आत्मा प्रसन्न रहेगी, कौन से विषय में हमारे अन्तःकरण की अभिरुचि है, जिस विषय को तुम्हारी नैसर्गिक बुद्धि सहाय देगी उसी विषय में तुम्हारी पल २ में संगति होगी, उस ही व्यवसाय में उत्तेजना पूर्वक परिश्रम करने से यश और आनन्द का अनुभव करोगे। नाम-धारी राजे बहादुर बनने की अपेक्षा जूते साफ करने वाला नेपोलियन अथवा लकड़ी चीरने वाला अलेकसान्डर बनना उत्तम है। हाथी बन कर लकड़ी खाने से चयूटी बन कर शक्कर खाना श्रेष्ठ है, जिसको कानून का ज्ञान नहीं उसका वकील कहलाना निन्दास्पद है। कौन सा भी अनिन्दनीय व्यवसाय हो जिसको तुम्हारी प्रकृति और मन स्वीकार करती हो उसी में अपना सर्वस्व तन और मन लगा कर उन्नति करने से सहज गत्या धन की प्राप्ति होती जाती है, तुमको अपने स्वभावानुकूल निरन्तर परिश्रम करते रहना चाहिये। एक अमेरिकन लेखक लिखता है कि, " A man without employment is not a man अर्थात् निरुद्योगी मनुष्य मनुष्य नहीं है। मन भर हड्डियां और डेढ़ मन मांस के लोंथ से मनुष्य मनुष्य नहीं कहलाता, परन्तु वही लेखक कहता है कि, 'You must be a man doing man's business " निज कर्तव्य के पालन से ही मनुष्य मनुष्यत्व को प्राप्त होता है।

जब कभी तुम बे रोज़गार हो, जाओ उस समय कौन सामी लभ्यता का व्यवसाय, जिस में बुद्धि के मलीन होने की सम्भावना न हो, अंगिकार करने में हरकत नहीं है। थोड़ी सी बढ़ती अथवा कुछ ज्यादा कमाई के लालच से तुम अपना स्वाभाविक व्यवसाय न बदला करो क्योंकि उस में तुमको सुख नहीं होगा और तुम्हारी स्वाभाविक बुद्धि भी मलीन हो जायगी। अपना व्यवसाय पसन्द करते समय केवल इतना ही ध्यान रखना चाहिए कि वह व्यवसाय अपनी ज्ञान, बुद्धि और प्रकृति के अनुकूल है अथवा नहीं वही अमेरिकन लेखक लिखता है कि, " जग, तुमको फलां व्यवसायी बनो ऐसा नहीं कहता—तुम वकील, मुत्सद्दी, डाक्टर किसान, शास्त्रवेत्ता, तत्वज्ञानी उद्यमी, चाहे जो बनो, परन्तु जो मार्ग तुम स्वीकार करोगे उस में पूर्णता प्राप्त कर लेने का प्रयत्न करो यदि अपने व्यवसायों में तुम ने पूर्णता प्राप्त कर ली है तो

गा तुम्हारे लिये अपना हाथ बढ़ावेगा, परन्तु ढोंगी, मक्कार और आत्मश्लाघी मनुष्यों का जग तिरस्कार करता है।

जिस मार्ग को तुम ने पसन्द किया है उस में तुम्हारा हीनकुल में उत्पन्न होना, तुम्हारा जन्म स्थान, तुम्हारे वंश का धर्म, स्थिति रिवाज अथवा रीति, जिस में तुम छोटे से बड़े हो चुके हो, किसी तरह की रुकावट नहीं पहुंच सक्ती। जैसी तुम्हारी बुद्धि और इच्छा हो उस ही के अनुकूल उपरोक्त न्यूनताओं का बिलकुल ख्याल न करते हुए धृतकार्य में उन्नति करते चले जाओ। किसी भी सच्चाई के उद्योग में लोक निन्दा का ख्याल अपने अन्तःकरण में न पैदा होने दो और न अपने को उन हीनताओं का बली बनाओ।

प्रसिद्ध विद्वान रसेल साहब कहते हैं कि, किसी युवक मनुष्य को, जो निराधार है, अपना जीवनकार्य्य शुरू करने के लिये निम्न लिखित बातें ध्यान में रखनी ज़रूरी हैं।

प्रथम, कोई जीविका प्राप्त कर लेना, दूसरा अपना मुंह बन्द रखना, तीसरे चौकस रहना, चौथे ईमानदार बनना, पांचवां, अपने स्वामी के अन्दर यह भाव पैदा कर देना कि अगर यह मनुष्य हमको छोड़ के चला जावे तो हमारा नुकसान होगा और छटा सहन शील बनना। मनुष्य प्राणि हर हालत में सज्जन और प्रेम भाजन होने की शक्ति रखता है। जिस प्रकार घड़ी का टिक् टिक् आवाज़ हमको आने वाले समय की सूचना देता है, उसी तरह हम क्षण क्षण में उन्नति करते चले जाते हैं, यही विचार अपने मन में रखते हुए क्षण क्षण में अपनी बुद्धि और ताकत को बढ़ाते हुए जाओगे तो सब आनन्द और सन्मान तुम्हारे वश हो जावेंगे।

पत्नीवृत धर्म ❀

(अनुवादक श्रीयु० बनारसीदास)

—श्रीमती कुमारी विद्यावती सेठ लिखित—

पतिवृत धर्म की महिमा दिखलाने के लिये अनेकशः उदाहरण

---

* यह लेख श्रीमती कुमारी विद्यावती जी के वैदिक मेगज़ीन [*Vedic Magazine*] में लिखे हुए अंग्रेज़ी लेख का अनुवाद है। [अनुवादक]—

६

दिये जाचुके हैं। प्रायः सब आधुनिक और प्राचीन लेखक एक स्वर से पतिव्रत धर्म के गुणगान कर रहे हैं और उसके पालन करने के लिये दृढ़ता पूर्वक लिखते हैं परन्तु यह बड़ी विलक्षण बात ज्ञात होती है कि वे मनुष्य जिन्होंने कि "पतियों के प्रति पत्नियों का कर्तव्य" इस विषय पर बहुत कुछ लिखा है, एक उतने ही अपरिहार्य विषय "पत्नीव्रत धर्म" पर जिसका कि महत्व पहिले विषय से कुछ कम नहीं है, मौन साधे हुए बैठे हैं। यह एक ऐसा विषय है जिस पर कि भारतवर्ष के अशिक्षित और शिक्षित मनुष्य भी ध्यान नहीं देते।

या तो यह लेखक इसे स्वयं सिद्ध समझ बैठे हैं कि सब मनुष्य इतने धार्मिक, प्रमाद रहित, और इतने बुद्धिमान हैं कि उन्हें इस विषय की शिक्षा देने की कोई आवश्यकता ही नहीं, या उन्होंने पत्नीव्रत धर्म के विषय को इतना तुच्छ समझ लिया है कि वे पुरुषों का ध्यान उस ओर विशेषतः आकर्षित करना निरर्थक समझते हैं सो कहा नहीं जा सकता। इन लोगों का विचार कुछ ही क्यों न हो, परन्तु यह बात सब को अङ्गीकार करनी पड़ेगी कि वेद और स्मृतियों की आज्ञानुसार पति और पत्नी दोनों के कर्तव्य समान और तुल्य महत्व के हैं और पुरुषों की यह स्वार्थता और पक्षपात है कि वे अपने अधिकारों का तो प्रतिपादन करते हैं और दूसरों की ओर ध्यान भी नहीं देते। अब देखना चाहिये कि पतिव्रतधर्म के बारे में इन लेखकों के भाव कैसे हैं और फिर उसकी तुलना वेदों और स्मृतियों में जो कुछ लिखा है उससे करनी चाहिए। तुलसीदास जी लिखते हैं—

"वृद्ध रोग वश जड़ धन हीना। अंध बधिर क्रोधी अति दीना॥
ऐसेहु पति कर किय अपमाना। नारि पाव यमपुर दुःख नाना॥"

अर्थात् जो स्त्री अपने पति का अपमान करती हैं चाहे वह पति बूढ़ा, रोगयुक्त, मूर्ख, धनहीन, अंधा, बहिरा, दीन और क्रोधी ही क्यों न हो वह नर्क में नाना प्रकार के दुःख भोगती है; और कहा है—" सहज अपावन नारि पति सेवत शुभ गति लहहि" अर्थात् स्त्रियां स्वभाव से ही अशुद्ध हैं परन्तु पति की सेवा करने से वे गुणवती हो सकती हैं। आगे चल कर एक जगह लिखा है
" एकै धर्म एक व्रत नेमा। काय बचन मन पति पद प्रेमा॥" अर्थात्

स्त्री के लिये केवल एक धर्म है, एक व्रत और एक आज्ञा है वह यह कि अपने पति के चरणों में मनसा, वाचा, कर्मणा प्रीति करे। इसी की पुष्टि में श्रीमद्भागवत में लिखा है।

"दुश्शीलो दुर्भगो वृद्धो जड़ो रोग्यधनोपि वा।
पतिः स्त्रीभिर्न हातव्यो लोकेप्सुरभिरपातकी ॥"

जो स्त्री स्वर्ग जाना चाहती है उसे अपने पति को कदापि न छोड़ना चाहिये चाहे वह दुश्शील, अभागा, बूढ़ा, मूर्ख, निर्धन और रोगी ही क्यों न हो। एक जगह फिर लिखा है—

"भर्त्रैव योषितां तीर्थं तपोदानं व्रतं गुरुः।
तस्मात् सर्वात्मना नारी पतिसेवां समाचरेत् ॥"

पति ही पत्नी का सब कुछ है। पति ही उनका तीर्थ, तप, दान व्रत और गुरू है इसलिये स्त्री को अपने पति की सेवा पूरे मन से करनी चाहिये। इतना ही नहीं वरन् स्त्रियों का और भी कुछ कर्तव्य है।

अभिज्ञान शकुन्तला में कन्वऋषि शकुन्तला को विदा के समय शिक्षा देते हुए कहते हैं "………कुरु प्रियसखी वृत्तिं सपत्नीजने,
भर्तुविप्रकृतापि रोषणतया मास्मप्रतीपं गमः।
…………………………………………………
यान्त्येवं गृहणी पदं युवतयः वामा कुलस्याधयः ॥

अर्थात् अपनी सौतों में सखीभाव रखना। अपने पति के विरुद्ध कार्य कभी न करना, चाहे वह तुम्हारे साथ बुरा बर्ताव करे। यह मार्ग है जिस पर चल कर स्त्रियां गृहिणी पद को प्राप्त होती हैं और जो स्त्रियां इस पर नहीं चलतीं वे अपने कुल के नाश करने वाली होती हैं।

वैदिक मैगेज़ीन के भी किसी पिछले अङ्क के एक लेख में यह श्लोक लिखा हुआ था।

"दुःशीलः कामवृत्तो वा धनैर्वा परिवार्जितः।
स्त्रीणामार्य्य स्वाभावानां परमं दैवतं पतिः ॥"

अहा! क्या ही अच्छा होता यदि लेखक ने इसके बजाय निम्नलिखित पर भी ज़ोर देकर लिखा होता।

दुःश्शीलाऽशिक्षितापि स्यात् सौन्दर्येण विवर्जिता।
नृणामार्य स्वाभावानां पत्नी परम् देवता ॥

एक श्रेष्ठ पति के लिये स्त्री पूज्य और स्नेहास्पद है चाहे वह स्त्री दुश्शीला, कुरूपा और अशिक्षिता हो।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि पतिव्रत धर्म के वर्तमान भाव के पक्ष में बहुत कुछ विवेक और विचार पूर्वक कहा जासक्ता है, परन्तु उसके विरुद्ध जो कुछ कहा जासकता है वह केवल थोड़ाही है जो कि मुझे इस अवसर पर कहना है। क्या उपरोक्त उद्धृत वाक्यों से जो स्त्रियों को बलात् और नर्क की यातनाओं का भय दिला कर अपने पति की ओर प्रवृत्त कराते हैं, पुरुषों के आन्तरिक स्वार्थ निष्ठ भाव प्रगट नहीं होते? क्या "एकै धर्म एक व्रत नेमा" के पक्षपाती उन स्त्रियों को अनन्त दुःखों में नहीं डालते जिनके कि पति कपटी और दुष्ट हैं परन्तु इस विषय पर अधिक कहने के पहिले ही देखना चाहिये कि पत्नी और पति का क्या सम्बन्ध प्रायः समझा जाता है और यथार्थ में क्या होना उचित है। पति और पत्नी का सम्बन्ध बाधक और बध्य, स्वामी और भृत्य का सा नहीं परन्तु दो मित्रों जैसा है। दोनों की प्रकृति और स्वभाव एक से ही होने चाहियें और वे प्रेम से बँधे हुए और समान नियमों में सङ्गत होने चाहियें। यह बात हमें उन प्रतिज्ञाओं से प्रगट होती है जो विवाह के समय प्रत्येक को करनी पड़ती हैं। वहीं पर लिखा है

"गृभ्णामि ते सौभगत्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथासः।
भगो अर्य्यमा सविता पुरन्धिर्मह्यं त्वादुर्गार्हपत्याय देवाः॥
इहैवस्तं मावियौष्टं विश्वमायु र्व्यश्नुतम्।
क्रीड़न्तौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वेगृहे॥"

अर्थात् हम दोनों (पति और पत्नी) पाणिग्रहण संस्कार वैवाहिक जीवन सुखपूर्वक व्यतीत करने के लिये करते हैं। हम आजीवन एक दूसरे के दृढ़भक्त रहेंगे। परमात्मा को और देवों अर्थात् बुद्धिमान मनुष्यों को जिन्होंने हमें एक दूसरे को दिया हम साक्षी करते हैं, हम दोनों अपने पुत्र, पुत्रियों और पौत्रों साथ सुख पाते हुए रहेंगे। हम एक दूसरे का साथ कभी न छोड़ें और भी कहा है "ओं यदेतद्हृदयं तव तदस्तु हृदयं मम, यदिदं हृदयं मम तदस्तु हृदयं तव" अर्थात् पति और पत्नी एक दूसरे प्रतिज्ञा करते हैं "मेरा हृदय तुम्हारा हृदय है और तुम्हारा हृदय

मेरा है" यानी हम दोनों एक दूसरे से प्रीति करेंगे। एक जगह लिखा है:— "पत्नी त्वमासि धर्मणाहं गृहपतिस्तव, ममेयमस्तु पोष्या" पति कहता है "तू मेरी पत्नी है और मैं तेरा पति हूँ मैं जीवन पर्य्यन्त तेरा पालन पोषण करूंगा' मनु महाराज ने भी कहा है।

पूजनार्थं स्त्रियः सृष्टाः सन्तानार्थं च मानवाः।
तस्मात्साधारणो धर्मः श्रुतौ पत्न्या सहोदितः।

परमेश्वर ने स्त्रियाँ और पुरुष मनुष्य जाति की वृद्धि करने के लिये बनाये हैं इसलिये वेद में पत्नी और पति के कर्तव्य समान बतलाये हैं इसके अतिरिक्त वेद में स्त्रियों को अत्युत्तम पद प्रदान किया गया है। जो कि तुलसीदास जी की रामायण और महाभारत आदि पुस्तकों के दिये हुए दासी पद से बहुत ऊँचा है। मनु महाराज ने तो उन्हें "पूजार्हा" पूजा करने योग्य "गृहदीप्तयः" गृहदीपक इत्यादि लिखा है। स्त्रियों के कर्त्तव्यों के विषय में मनु जी लिखते हैं स्त्री को घरके काम काज में चतुर और सुशीला होना चाहिये। उसे अपने बालकों की रक्षा करनी चाहिये, शास्त्रोक्त कार्य्य करने चाहियें। घर का हिसाब किताब रखना भी उसका कर्त्तव्य है और उसे अपने पति और गुरुजनों की सेवा सुश्रूषा करनी उचित है।

वेद में भी लिखा है।

"सुमंगली प्रवरणी गृहाणां सुशेवा पत्येश्वसुराय शम्भूः।
स्योमा श्वश्र्वै प्रगृहान् विशेमान्
स्योना भव श्वसुरेभ्यः स्योना पत्ये गृहेभ्यः स्योना यै सवस्यै।
विशे स्योना पुष्टा यैषां भव॥

स्त्री का सब से मुख्य कर्त्तव्य केवल यही नहीं है कि अपने पति की सेवा करे और उसे प्रसन्न रक्खे किन्तु उसे अपने सास, ससुर आदि घरवालों की भी सेवा करना और उन्हें प्रसन्न रखना चाहिये। जहाँ पर स्त्रियों के यह कर्त्तव्य लिखे हैं वहाँ वेद और स्मृतियों में पुरुषों के भी मुख्य कर्त्तव्यों का वर्णन किया है। मनुजी ने कहा है "स्वदार निरतः सदा" पति को पत्नी से सदा प्रेमपूर्वक बर्ताव करना चाहिये। "एताः पतिभिर्देवरै स्तथा पूज्या भूषीयतव्याश्च" पति को पत्नी का यथोचित आदर करना चाहिये और उसे वस्त्राभूषण आदि बनवाने चाहियें। मनुजी ने और भी लिखा है।

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते, सर्वास्तत्राफला क्रियाः॥

जिस घर में स्त्रियों का आदर सत्कार किया जाता है वहां देवता वास करते हैं अर्थात् वह घर शान्ति, ऋद्धि सिद्धि आदि का निवास स्थान होता है पर जहां उनका मान नहीं होता वहां पर सब कार्य्य निष्फल होते हैं।

परन्तु आजकल हमारा समाज ऐसी शोचनीय दशा को प्राप्त होगया है कि कोई इस बात पर विचार ही नहीं करता कि विवाहित पुरुष किस प्रकार अपने जीवन को व्यतीत करते हैं। प्रायः वे अपने पारस्परिक कर्त्तव्यों से नितान्त अनभिज्ञ रहते हैं और यदि परमेश्वर की कृपा से चार छः पुरुष ऐसे भी होते हैं जो अपने कर्त्तव्यों के जानने का दावा रखते हैं वे भी अपने इस ज्ञान का उपयोग दैनिक कार्य्यों में नहीं करते। यह कर्त्तव्य उनके लिये नियमों की परिपाटी के समान प्लेटफार्म से धड़ाधड़ सुनाने के काम में आते हैं, बस, और कुछ नहीं। रही विचारी स्त्रियाँ उनकी क्या दशा होती है ?। वे प्रायः अशिक्षिता होती हैं और थोड़ी बहुत टूटी फूटी हिन्दी या कोई और भाषा जानती हैं और तुलसी रामायण और छोटी २ किताबें पढ़ सकती हैं। अगर उनके पति बहुत बुरे न हुए तो साधारणतः भले प्रकार से वे अपना जीवन व्यतीत करती हैं और जुगल जोड़ी सुखी समझी जाती है परन्तु यदि पति जी परमेश्वर के पूरे हुए और "दुःश्शीलोदुर्भगो" आदि कैसे ही हुए तो उन विचारी दीनात्माओं को क्या करना चाहिये ?। ऐसी दशा में भी वे "एक धर्म एक व्रतनेमा" के पथ पर चलना चाहती हैं। परन्तु हा! बहुत सी जगहों में तो उन्हें अपने पूज्य भर्ता के चरणों की सेवा करने का भी सौभाग्य प्राप्त नहीं होता और बहुत सी तो अपने पूज्य पति के शोक में मृत्युपद को प्राप्त होजाती हैं और बहुत सी पति के मुख देखने की लालसा में ही अपने दिन बिताती हैं। चाहे इसका कारण स्त्रियों का मूढ़ विश्वास और मूर्खता ही हो परन्तु इसमें उनका कुछ दोष नहीं है। पतिव्रत धर्म की थ्योरियां इसमें सन्देह नहीं कि बहुत अच्छी हैं परन्तु वही स्त्रियों की दुःखलीला और अवनति का हेतु हैं। पुरुषों ने इन सिद्धान्तों से बेजा लाभ उठाया है। मनुष्य प्रमाद रहित नहीं है, मनुष्य मात्र से

भूलचूक हुआ ही करती है और सुधार जब किया जावे तब अच्छा है।

परन्तु यह किसी पुरुष को न भूलना चाहिये कि यद्यपि रामायण और महाभारत इत्यादि में पत्नीव्रत धर्म के विषय में स्पष्ट-तया ज़ोर देकर नहीं कहा है, तथापि वे बहुत से अनुकरणीय उत्कृष्ट उदाहरणों से भरी पड़ी हैं। राजा दशरथ की दुरन्त कथा चिल्ला २ कर बतला रही है कि अनेक पत्नीव्रता कितनी हानिकारक है। यद्यपि महारानी कौशल्या सर्वोत्कृष्ट पत्नी थीं और राम सर्वोत्तम पुत्र थे तथापि राजा ने अपनी निर्बुद्धिता और मनोविकार से युवती रानी कैकयी की आज्ञानुसार रामचन्द्र को चौदह वर्ष के लिये वन भेज दिया जिससे न केवल अपने या अपने सारे कुटुम्ब के सुख का नाश किया वरन अपनी प्रजा को भी शोक विह्वल कर दिया। कौशल्या और राम से माता और पुत्र आजकल हैं ही नहीं लेकिन हां कैकयी सी स्त्रियों की कुछ कमी नहीं है। इसीलिये यदि आजकल के मनुष्य गृहसुख से वंचित रहें तो "किम् आश्च-र्यमतः परम्"। केवल पत्नी की साधुता गृह जीवन को शान्तिमय और कल्याणकारी बनाने के लिये अलं नहीं है। दूसरी बात जो ध्यान देने योग्य है वह यह है कि मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र जी ने पत्नीव्रत धर्म धारण किया, अगर वे चाहते तो रावण की भगिनी सूर्पणखा से विवाह कर लेते और इस प्रकार आगामि युद्ध का निवारण कर देते, परन्तु उन्हों ने यही कहकर "मेरे तो एक स्त्री है" उससे विवाह करने को मना करदिया। पुनः सीता परित्याग के पश्चात् वे दूसरा विवाह करसक्ते थे परन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया और सीता की हिरण्यमयी प्रतिकृति बनवाकर उसी के साथ अश्वमेध यज्ञ किया क्योंकि पति और पत्नी दोनों के बिना यज्ञ पूर्ण नहीं हो सकता। क्या प्रत्येक पुरुष का यह कर्त्तव्य नहीं है कि ऐसे ही आदर्श को अपने सामने रखकर जहांतक उससे वैसा ही आचरण करने का प्रयत्न करे? प्रत्येक पुरुष को रामचन्द्र जी के उदाहरण से शिक्षा लेनी चाहिये। क्या वेदों में पुरुषों के यथार्थ कर्त्तव्य ऐसे ही नहीं लिखे? क्या स्मृति इसकी पुष्टि नहीं करतीं? क्या सदाचार इसी के पक्ष में नहीं कहता? इसलिये किसी पुरुष को वेद की निम्न लिखित आज्ञा न भूलनी चाहिये।

इहेमाविन्द्र संनुद चक्रवाकेव दम्पती ।
प्रनयै नौ स्वस्तकौ विश्वमायु र्व्यश्नुताम् ॥

इस संसार में पति और पत्नी को चकवा और चकवी की तरह प्रेम सहित प्रजा करते हुए शान्तिपूर्वक आजीवन रहना चाहिये। गृह जीवन तभी सुखमय और कल्याणकारी होगा और सच्चे आदर्श गृह तभी बनेंगे । जब तक पुरुष अपना ध्यान इन ईश्वरीय आज्ञाओं पर विशेषतया न देंगे उनका जीवन शान्तिदायक और कृतार्थ नहीं हो सकता, किन्तु निष्फल ही रहेगा।

॥ इति ॥

आत्मोत्सर्ग क्या है ?

(What is self-Sacrifice)

(श्रीयुत हरिदास माणिक लिखित)

(सेपटेम्बर के अंक से आगे)

सच्चे आत्मोत्सर्ग का उदाहरण भारतवर्ष के इतिहास में अनेक स्थानों में मिलता है। एक समय की बात है कि जिस समय चित्तौर में विक्रमादित्य का राज्य था उस समय एक दासी ने सच्चे आत्मोत्सर्ग का परिचय दिया है। विक्रमादित्य के पुत्र राना उदय सिंह अभी बहुत ही छोटे थे कि दासी पुत्र वनवीर ने स्वयं राजगद्दी पर बैठना चाहा। वह इसी घात में लगा हुआ था कि किस दिन अवसर हाथ लगे और उदयसिंह की इतिश्री कर डालूं। एक दिन दैवात् पन्ना धाय उदयसिंह की रक्षा कर रही थी कि सहसा रनिवास में रोने का कोलाहल सुनाई पड़ा। पन्ना ने समझा कि आज अवश्य ही कुछ उपद्रव हुआ है। वह इसी प्रकार सोच रही थी कि सहसा राजमहल से नावू आता हुआ दिखाई पड़ा। धाय के पूछने पर उसने सब कारण बता दिया। पन्ना ने तुरन्त उदयसिंह को एक टोकरे में रख कर राजमहल से बाहर कर दिया और अपने बच्चे को उदयसिंह के खाट पर सुला दिया। थोड़ी देर में उसने देखा कि वनवीर हाथों में ढाल तलवार लिये आ पहुंचा। वनवीर ने आकर पूछा—"उदयसिंह कहां है", पन्ना ने अंगुली से खाट

की ओर संकेत कर कहा—"वह सो रहा है"। निर्दयी वनवीर ने एक तलवार ऐसी मारी कि बिचारा बालक दो टुकड़े हो गया और एक चीख मार कर सुरपुर सिधारा। पन्ना धाय की यह अनुपम वीरता तथा आत्मोत्सर्ग भारतवर्ष के इतिहास में एक ही है। फिर इसके अतिरिक्त रानी कलावती ने जिस प्रकार अपने प्राणपति की रक्षा की है वह बड़ाही मनोहर तथा अपूर्व है। मध्यदेश के राजा कर्णसिंह जिस समय अलाउद्दीन से लड़ते २ घायल हुए हैं उस समय यद्यपि रानी कलावती ने लड़ाई में कई बार अपने पति की रक्षा की पर अन्त में एक ज़हर बुझाई तलवार ऐसी लगी कि उनका बचना कठिन ही नहीं वरन असम्भव था। हज़ारों वैद्य ज्योतिषी आए पर किसी से कोई उपाय न बन पड़ा अन्त में वैद्यों ने सोच विचार कर एक उपाय यह बताया कि यदि कोई एक व्यक्ति चोट की जगह का रक्त चूस ले तो कर्णसिंह बच जांय ऐसे अवसर पर रानी ने स्वयं विषयुक्त चोट को चूस लिया। वह स्वयं तो बीमार पड़ गई पर राजा कर्णसिंह अच्छे होने लगे। अन्त में दो ही चार दिन के बाद रानी कलावती मर गईं और कर्णसिंह अच्छे हो गये। रानी कलावती धन्य थीं जिसने अपने प्राण प्यारे पति के लिए दिये। इसी प्रकार वीर क्षत्रानी जौहरबाई ने भी अपना प्राण अपने पुत्र को बचाने में दिया था।

धर्म बलिदान के आत्मोत्सर्ग तो भारतवर्ष के इतिहास में अनेकों हैं। मराठों तथा सिखों का धर्म के लिये कैसा सच्चा आत्मोत्सर्ग था यह कौन नहीं जानता। गुरुगोविंद सिंह के दोनों लड़के तथा हकीकत राय की वीरता युक्त धर्म के लिए प्राण देना क्या भारत के लिये गौरव की बात है। धन्य थी इन आर्यों की माताएं जिन्हों ने ऐसे सन्तान पैदा किये जिनके नाम अभी तक चले आते हैं। आत्मोत्सर्ग के लिये यह कोई आवश्यक बात नहीं है कि वह ऐतिहासिक हों तथा राजा रानी वा किसी बड़े पुरुषों ही द्वारा किये जांय। सच्चे आत्मोत्सर्ग का पूरा परिचय एक मामूली गृह में भी मिलता है। एक निर्धन पुरुष दिनभर मेहनत करता है और केवल इसी लिये कि वह सन्ध्या समय अपने बालकों को एक मुट्ठी दाना तो दे सके। यह मेरे आंख की देखी बातें है कि एक दिन जब मैं स्कूल जा रहा था तो एक भिक्षुक परिवार मिर्जापुर की ओर से आकर धर्म-

शाला में ठहरा। इन भिक्षुकों को मैंने पहले पहल देखा। पूछने पर विदित हुआ कि मिर्जापुर में उनको खाने का बहुत कष्ट था इसी कारण वे सब काशी ऐसे तीर्थ में आये हैं जहां उन्हें एक समय भोजन भली प्रकार मिल जायगा।

अभागा परिवार इसी धर्मशाला में रहने लगा। कभी माता नगर से भीख मांग कर लाती और कभी पिता दो चार पैसे ले आता। अभागे परिवार की संख्या छः थी। एक तो माता पिता दूसरे चार छोटे २ बालक। सन्ध्या समय जब मैं फुटबाल खेलने जाया करता, रोज़ उनकी दशा पर विचार करता। बिचारे भूखे बालक जब अपने पिता को सन्ध्या समय अपने पास देखते तो मारे प्रसन्नता के फूले न समाते तीन चार बालक जब पिता के पैर तथा हाथ और कमर को जब पकड़ कर रोटी वा दाना मांगते तो बड़ाही करुणा जनक दृश्य दिखाई पड़ता था। जिस दिन पिता को दो चार पैसे मिल जाते उस दिन तो कुशल ही कुशल पर जिस दिन कुछ न मिलता उस दिन अपने बच्चों को चुमकार कर किसी प्रकार किसी बहाने से फुसलाते। उस समय माता तथा पिता के चेहरे पर देखनेसे यही मालूम होता था कि मानो वे अपने भाग्य को धिक्कार कर मनही मन कुछ सोच रहे हैं। जिस दिन दो चार मुट्ठी दाने मिल जाते उस दिन बच्चों ही को खिला कर माता पिता भूखे रह जाते। यदि वास्तविक में पूछा जाय तो सच्चा स्वार्थ त्याग तथा आत्मोत्सर्ग यही कहलाता है। अन्य स्वार्थत्यागी तथा आत्मोत्सर्गकारी तो अल्पही काल के लिए कष्ट सहते हैं पर गृहस्थाश्रम में इस अभागे परिवार की तरह रह कर नित्य कष्ट सहन करना यही बड़ी भारी बात है। अस्तु, वह अभागा परिवार उसी धर्मशाला में कुछ दिन रहा। उनकी हीनावस्था देख मैंने उन बच्चों को लेने की इच्छा प्रगट की और भली भांति उन्हें समझा कर कहा कि मैं इनके लालन पालन तथा शिक्षा का पूरा ध्यान रक्खूंगा पर सन्तान के प्रेम के वश होकर पिता ने स्वीकार न किया। बालकगण दिन ब दिन कृशतन तथा तन छीन मन मलीन होते जाते थे। माता पिता दोनोंहीं निशदिन शोक में मुरझा गये। एक दिन की बात है कि पिता तथा माता को कुछ भी भिक्षा नहीं मिली। इस रात में सारा परिवार भूखा रह गया माता को दो मुट्ठी चावल किसी ने दिये थे उसे उसने बच्चों को

खिला दिया। एक प्रकार से सारा परिवार रात भर भूखा रह गया। दूसरे दिन प्रातःकाल होते २ माता पिता भूख की पीड़ा से मर गये। बिचारे अनाथ बालक इधर उधर छटपटाने लगे। आठ बजते २ चार बालकों में से दो बड़े लड़के भी भूख की पीड़ा से मर गये। रहे दो, उनमें से एक लड़की तो कुछ बड़ी थी और एक छोटा बालक आठ महीने का अपनी मृत माता के स्तन से दूध पीने की चेष्टा कर रहा था। दस बजे के करीब जब मैं कालिज जा रहा था इस भयानक दृश्य को देख कर मेरे रोंगटे खड़े हो गये। मन में नाना प्रकार के विचार उठने लगे। हा भारतवर्ष! तेरे वीर सन्तानों की यह दशा केवल एक टुकड़े रोटी के लिये हो रही है. चौतरे पर माता पिता तथा उसी के नीचे ठीक सड़क के कोने पर लड़की भी मरी पड़ी थी। छोटा बालक भी अर्द्ध मृतक सा हो रहा था। इस हृदय विदारक दृश्य को देख कर मुझ से वहां खड़ा न रहा गया, पर फिर मन में यह विचार कर कि इनका कुछ बन्दोबस्त करना चाहिये, कालिज से छुट्टी लेकर मैं फिर स्थान पहुंचा। साथ में मिस्टर एरंडल भी थे। इस भयानक दृश्य को देख कर वे भी कांप गये और तुरंत पांच रुपये निकाल कर दिये कि उसका सब बन्दोबस्त करो।

मैंने पुलिस चौकी में खबर देकर उनके मृतक शरीर को उठाया और आठ महीने के बालक को उठा कर अस्पताल में उसके दवा दारू का बन्दोबस्त कराया, पर यह अभागा बालक भी दो दिन रह कर मर गया। हा रे अभागे भारतवर्ष तेरे बच्चों के लिये अब धन्वन्तरी वैद्य तथा आचार्यों का कुछ भी बन्दोबस्त नहीं है। पाठक गण! इस परिवार के मुखिया माता पिता का आत्मोत्सर्ग विचारणीय है कि आप न खाकर बच्चों को खिलाया और स्वयं मर कर अपना कर्तव्य पालन किया। इस प्रकार की घटनाएं न जाने कितनी होती हैं। गृहस्थाश्रम में न जाने कितने आत्मोत्सर्गकारी बनने की आवश्यकता पड़ती है पर इसका विचार बहुतही कम लोग करते हैं। हमारी सम्मति में आत्मोत्सर्ग करने का पहिला पाठ सबके पहिले गृह में ही सीखा जाता है।

आत्मोत्सर्ग संसार के कार्य के प्रत्येक विभाग में हो सकता है। उदाहरण के लिये शिक्षा विभाग तथा जाति उन्नति ही लीजिए।

इसमें जिस प्रकार [१] लाला हंसराज, [२] लाला देवराज, [३] लाला ज्योतिः स्वरूप, [४] महात्मा मुंशीराम, [५] मिस्टर ऐन्ड्रूज, [६] पण्डित इकबाल नारायन गुरूटू, [७] प्रो० टैलङ्ग तथा, [८] पं० मदनमोहन मालवीय ने जो किया है सो सराहनीय है। [१] लाला हंसराज ने जिस स्वार्थ त्याग से लाहौर के डी. ए. वी. कालिज की उन्नति तथा आर्यसमाज की उन्नति में दत्त चित्त हो काम किया उसकी समता कौन कर सकता है। लाला साहिब के विषय में समाचार पत्रों में जो कुछ निकला है वह यों है-"लाला हंसराज ने २६ वर्ष पर्यन्त डी, ए, वी, कालिज लाहौर में अवैतनिक प्रिन्सपल रह कर आर्य सन्तान के सन्मुख आत्म समर्पण और दृढ़ता का उदाहरण उपास्थित किया है और जिनका अब विचार यह है कि धर्म के प्रचारार्थ अपने शेष जीवन को समर्पित करें। [२] लाला देवराज ने जिस स्वार्थ त्याग से कन्या महा विद्यालय जालन्धर को स्थापित कर निश दिन उसकी उन्नति करते रहे सो परम प्रशंसनीय है। कई हज़ार बालिकाओं तथा उन देवियों की शिक्षा पर ध्यान रख कर उन्हें विदुषी बनाना-कि भारत की प्राचीन बीरा तथा सुशीला स्त्रियों की न्याईं वे अपना जीवन व्यतीत कर सकें—यह इन्हीं का काम था। किसी भारी विद्वान का कथन है कि—"धन्य हैं वे पुरुष जो जाति की माताओं को सुयोग्य बनाते हैं क्योंकि माता ही से शूर वीर बालक उत्पन्न होते हैं। [३] लाला ज्योतिःस्वरूप जी ने भी आर्यमहिलाओं के लिये जो काम देहरादुन में जारी कर रक्खा है वह सराहनीय है। इनकी धर्म-पत्नी श्री मती महादेवीजी भी जिस स्वार्थ त्याग से कन्या पाठशाला के लिये काम करती हैं उसकी समता भारतवर्ष में कोई नहीं कर सकता। रात दिन पाठशाला की उन्नति में दत्तचित्त हो काम करना यह किसी साधारण नर नारी का काम नहीं है। सन् १९१२ ई० के मार्च तथा अप्रैल और मई महीने की गर्मियों में स्वास्थ्य सुधारने के हेतु मुझे इनके यहां रहने का अवकाश मिला था। उन दिनों में उनके काम को देख कर मैं अति आश्चर्यान्वित हुआ। वे धनी रहने पर भी कन्या आश्रम में नित्य जाती थीं और उन लड़कियों के लालन का पूरा ध्यान रखती थीं जो कि उनको सौंपी गई थीं। कभी २ तो बीमार लड़कियों के लिये इन्हें रात २ भर जागना

पड़ता था। आश्रम की लड़कियां इनको अपने घर की माता से भी विशेष प्रेम करती हैं। एक दिन की बात है जब मैं सन्ध्या समय कन्या पाठशाला देखने गया था उस समय वहां जा कर देखा कि आप स्वयं खड़ी होकर जौ तथा अरहर के दाल के पेड़ों को कटवा रही हैं। पूछने पर कि बहूजी आप क्यों इतना कष्ट सहन कर रही हैं उत्तर मिला कि "पाठशाला के अगल बगल सब स्कूल की जगह है, इसमें मैंने जौ तथा अरहर इत्यादिक इस वास्ते बोआ रक्खा है कि उनसे जो कुछ पैदा होगा वह उन अनाथ बालिकाओं के लिये होगा जो कि आश्रम में पाली जाती हैं।" इतना सुन कर मेरे रोंगटे खड़े हो गये और मनही मन में विचार करने लगा कि हे भगवान! इतनी धनी स्त्री रहने पर महादेवी जी इतना कष्ट सहन कर उन अनाथ बालिकाओं के लिये परिश्रम कर रही हैं।" मैंने कहा फिर आप स्वयं क्यों कष्ट सहन कर रही हैं—उत्तर में उन्होंने धीरे से कहा इस वास्ते कि जब तुम लोगों की स्त्रियां आवें तो वे मेम साहिब हो न बनी रहें वरन भारत की प्राचीन महिलाओं की न्याईं इस विद्या को स्वयं सीखें, करें और करावें। आश्रम की कन्याएं जब यहां से पढ़ कर निकलें तब वे भी इसी प्रकार उद्यम शीला होकर काम करें न कि आलसी और प्रमादी हों। इस उत्तर को सुन कर चित्त प्रसन्न हुआ और मुझे फ्लोरेन्स नाइटेंगेल का ख्याल आया जिसने कि क्रीमिया की लड़ाई में दुखियों के निमित्त नाना प्रकार के अच्छे२ उपाय किये थे। मन ही मन सराहने लगा, देवि! तुम धन्य हो यदि तुम्हारी समता फ्लोरेन्स नाइटेंगेल से की जाय तो अच्छा है। महादेवीजी के पति लाला ज्योतिःस्वरूप जी भी उद्यम तथा परिश्रम के साथ कन्या पाठशाला के लिये तन,मन,धन तीनों से उद्योग तो करते ही हैं पर साथ ही डी. ए. वी. स्कूल देहरादून के लिये भी नितान्त भ्रमण तथा उद्योग किया करते हैं। आप बालकों तथा बालिकाओं पर कैसा प्रेम रखते हैं उसका एक उदाहरण प्रत्यक्ष अपनी आंखों से देखा हुआ लिखता हूं एक दिन मैं, लाला ज्योतिःस्वरूप तथा उनके दो तीन मित्रों के साथ सन्ध्या समय टहलने के लिये निकला, पास ही मोटर गाड़ी खड़ी थी मोटर पर बाबू साहिब चढ़ ही रहे थे कि सहसा पड़ोस की एक लड़की सामने उदास खड़ी मालूम पड़ी। वे तुरंत गाड़ी

से उतर कर उसके पास गये और उससे पूछा तुम उदास क्यों हो-उसने कुछ जवाब न दिया। फिर प्रेम से पूछने पर उसने कहा खलने के लिये मेरा कोई साथी: नहीं है। वे तुरंत उसको अपने घर ले गये और अपनी लड़कियों के संग कर दिया और उस से कहा कि अगर तुम यहां आकर खेला करोगी तो रोज़ मिठाई मिलेगी। वह लड़की फिर रोज आकर खेलती और प्रसन्न रहती। मेरे पूछने पर कि आपको इन छोटी लड़कियों के लिये इतनी चिन्ता रहती है? उन्होंने जवाब दिया-माणिकजी! यही तो हम भारी भूल करते हैं जो छोटे २ बच्चों के दिल की बात जानने को कोशिश नहीं करते, हमारा बर्ताव और काम ऐसा अच्छा होना चाहिए जिससे लड़के स्वयं आकर अपनी ज़रूरतों को अपने बड़ों से कहें। लाला साहिब बड़े ही परिश्रमी तथा उद्यमशील हैं। वे गर्मी के दिनों में भी कन्या पाठशाला तथा दयानन्द हाईस्कूल का इतना काम करते हैं कि देखनेवाले दङ्ग रह जाते हैं। यह मेरे सामने की बात है कि एक दिन एक पुरुष ने एक तोड़ा सामने रख कर कहा बाबू जी! मेरे मुकद्दमे के लिये केवल दो दिन बाकी हैं यदि आप इसे स्वीकार करें तो हमारा काम बन जाय। उन्होंने नम्रता से उत्तर दिया हमारा यह कस्द है कि जब तक कन्या पाठशाला के लिए एक लाख न जमा कर लूंगा तब तक वकालत न करूंगा। आप मेहरबानी करके किसी दूसरे वकील से ठीक कर लीजिए वह पुरुष इस प्रकार स्पष्ट उत्तर पाकर प्रसन्नता पूर्वक चला गया। ईश्वर करे भारत माता की कोख में ऐसे ही परिश्रमी जन जन्म ग्रहण करे। (४) महात्मा मुंशीराम ने भारत की प्राचीन प्रथा के अनुसार हरिद्वार ऐसे सुन्दर स्थान में गुरुकुल खोल कर जो उपकार किया है सो किसी भारतवासी से छिपा नहीं है। जिस समय गुरुकुल खुला है उस समय हमारी दशा और स्थिति कैसी थी। वर्तमान समय के नये बाबू गुरुकुल का नाम सुन कर हंसते थे। उनका केवल यही कहना था कि-अजी! अब वह वक्त गया हम लोग हाथ में लाठी लिये, नंगे पैर केवल एक धोती पहिरे पेड़ों के नीचे पढ़ें और ऊपर से तुर्रा यह कि मीठा मिश्री शहद तथा मांस इत्यादि का सेवन न करो। भला यह कैसे हो सकता है और एक बात तो भूल ही गये कि छाता भी न लगावो।" इसी प्रकार

बातें नये रोशनी वालों के मुख से सुनाही करते थे। पर इन सब
तों का कुछ भी विचार न कर महात्माजी ने जिस परिश्रम तथा
योग से गुरुकुल स्थापित किया सो सराहनीय है । गर्मी और
ड़े का कुछ भी विचार न कर नित्य गुरुकुल की उन्नति के लिये
चित्त हो काम करना यह महात्माजी का ही काम है। अंग्रेज़ी में
कहावत है कि " It is very difficult to break the ice"
र्थात् किसी कठिन काम का शुरु कर देना बड़ा कठिन है। महात्मा
ने इस काम को ऐसे समय में उठाया जबकि प्राचीन प्रथा के
नुसार पाठशाला खोले जाने के नाम पर लोग हंसते थे गुरुकुल
बालक भी अंग्रेज़ी स्कूल में पढ़ने वाले बालकों की अपेक्षा कहीं
शील, सुशील तथा परोपकारी हैं। एक दिन की बात है, जब कि
गुरुकुल उत्सव देखने गया था दैवात् गुरुकुल के एक हमारे
ने चतुर्थ श्रेणी के ब्रह्मचारियों को क्रिकेट खेलाने को कहा—
स्वयं खेलाड़ी था इसलिये मैंने तुरंत उसे स्वीकार कर लिया।
ह्मचारियों को बुलाकर मैंने स्तम्भ (विकेट) इत्यादि गड़वा दिया,
र उन्हें ठीक २ स्थान पर खड़ा करा गेंदे खिलाने लगा । करीब
घंटे खेलने के बाद एक लड़के को चोट आगई और उसके हाथ
रक्त बहने लगा । अपने साथी के हाथ से रक्त बहते देख एक
सरे ब्रह्मचारी ने अपनी धोती फाड़ कर एक छोटा सा कपड़ा
ाला और उसके अंगुलियों में बांध दिया बालक ने ऐसी शीघ्रता
वेदना से बांधा कि मानो उसी को चोट लगी है । इस
ता को देख कर चित्त प्रसन्न हुआ और मनही मन में विचार
ने लगा कि यह बालक उनसे कहीं अच्छे तथा भारत माता के
काम करने वाले निकलेंगे बनिस्बत उन लड़कों के जो अंग्रेज़ी
ों में खेलते वक्त हाकी स्टिक तथा फुटबाल इत्यादि में मारा
करते हैं। ऐसा विचार कर मैंने तुरंत उस ब्रह्मचारी से पूछा
" तुमने इस प्रकार तो धोती फाड़ दी पर तुम्हारे आचार्य
होंगे तब ?" ब्रह्मचारी ने तुरत उत्तर दिया "मैंने अपनी
अच्छे काम के लिये फाड़ी है। फिर यह तो हमारा भाई ही है।
विश्वास है कि इस उत्तर से हमारे आचार्य कभी भी दण्ड न
छोटे बालक के मुख से ऐसा उत्तर सुन कर मेरा चित्त बड़ा
हुआ और मैं तुरन्त उसे प्रोफेसर राममूर्ति का व्यायाम

नामी पुस्तक इनाम देने लगा। बालक ने उत्तर दिया हमारी श्रेणी में १४ ब्रह्मचारी हैं यदि उन्हें भी मिलेगा तब तो मैं लूंगा अन्यथा नहीं। मैंने दूसरे दिन १४ पुस्तकें भेज दीं। महात्मा जी के खोले हुए गुरुकुल में पढ़ने वाले ब्रह्मचारियों का ऐसा वर्ताव देख कर चित्त प्रसन्न हुआ।

इसी प्रकार शिक्षा देने के लिये जिस प्रकार हिन्दू विश्वविद्यालय स्थापनार्थ प्रयाग के पं० मदनमोहन मालवीय उद्योग कर रहे हैं सो प्रशंसनीय है। मालवीय जी का हिन्दू जाति मात्र के लिये यह उद्योग तथा आचरण परिश्रम और आत्मोत्सर्ग को कौन भारतवासी नहीं जानता। भारतवर्ष के नगर २ ग्राम २ में धन के लिये प्रार्थना करते हुए नित्य भ्रमण करना, भोजनादि ठीक समय पर न मिलने से रुग्नावस्था में गर्मी के दिनों में लुह को सहन करते, नाना प्रकार का दुख झेलते, कष्ट उठाते जिस प्रकार मालवीय जी विश्वविद्यालय के लिये काम कर रहे हैं उसकी प्रशंसा सभी भारतवासी कर रहे हैं। इसी तरह मुसलमानों में आगा खां भी मुसलमानी विश्वविद्यालय के जिस प्रकार स्वार्थ रहित हो उद्योग कर रहे हैं सो सराहनीय हैं। सर आग़ा खां ने भी न जाने कितने ही जगह भ्रमण कर अपने विश्वविद्यालय के लिये पचासों लाख रुपया तहसीला है। ईश्वर करे वह दिन आवे जब हमारे मुसलमान भाई भी शिक्षित होकर हमारा साथ दें। तभी आग़ा खां साहिब का यह आत्मोत्सर्ग और परिश्रम सफल हो।

(क्रमशः)

दत्तात्रय की कथा।

("मिश्र" लिखित)

दो०—अत्रि ऋषी के पुत्रवर, दत्तात्रेयी नाम।
प्रथम अवस्थहिं ते भयो, ज्ञान बुद्धि को धाम ॥ १॥
जान्यो विद्या ब्रह्म अरु, अन्तर जड़ चैतन्य।
निज आचरण पवित्र करि, ईश्वर भक्ति अनन्य ॥ २॥
धर्म हेतु अति कष्ट सहि, करि उपदेश पवित्र।
पाप निवारण हित किये, जस यश करें सुमित्र ॥ ३॥

गंगा तट पर ध्यान युत, थे इक दिवस ऋषीश ।
मग्न ब्रह्म आनन्द में, जानि सर्व गति ईश ॥ ४ ॥
ताहि समय विद्वान तर, आयो एक नरेश ।
कियो प्रश्न गम्भीर पद, कारण नाहिं मलेश ? ॥ ५ ॥
बुद्धि लह्यो केहि ठांव महं, विचरो बाल प्रकार ।
रज तम अरु फल चारि में, प्रवृत सकल संसार ॥ ६ ॥
तू अति धर्म धुरीन नर, विद्वद् वरुस सुजान ।
सम पियूष तव वचन ऋषि, क्यों रह जड़हिं समान ॥ ७ ॥

——— (शेष फिर)

भारतवर्षीय आर्य्यकुमार परिषद् ।

भारतवर्षीय आर्य्य कुमार परिषद् की अन्तरंग सभा का प्रथम बैठक गुरूकुल वृन्दावन भूमि में ३० दिसम्बर १९११ प्रातःकाल ८ बजे संगठित हुई, निम्न लिखित महाशय उपस्थित थे ।

१ बा० घासीराम जी २ बा० गंगाप्रसाद जी ३ ब्रह्म-० हरिश्चन्द्र जी ४ बा० मदनमोहन सेठ जी ५ बा० अलखमुरारी जी ६ डा० श्यामस्वरूप जी ७ बा० रामकिशोर जी ८ बा० चरणदास जी ।

बा० अलखमुरारी जी के प्रस्ताव पर सर्वसम्मति से निश्चय हुआ कि बा० घासीराम जी इस अधिवेशन के प्रधान हों ।

प्रथम विषय आर्य्यकुमार सभाओं के आये हुए प्रवेश पत्रों की स्वीकृति का पेश होकर निश्चय हुआ कि जो सभाएं एक वर्ष से कम की हैं उन के प्रवेशपत्र एक वर्ष की पूर्त्ति पर स्वीकार किये जावें । आर्य्य कुमार सभा शाहजहांपूर तथा बहरायच के प्रवेश पत्र एक वर्ष के लिए विदूनदशांश के स्वीकार हुए । बाकी आये हुये पत्र स्वीकर किये जावें । दूसरा विषय कुमार सभाओं के व्याख्यान दाताओं की एक सूची बनाने का पेश हुआ-

निश्चय हुआ कि कोई सूची बनाने की आवश्यक्ता नहीं, किन्तु-

(क) पोलीटिकल विषयों पर व्याख्यान या वादानुवाद न हो सके-(ख) आर्य्य कुमार सभाओं के सभासदों, आर्य्य समाज के सभासदों तथा उपदेशकों के व्याख्यान हो सकेंगे-

(ग) धार्मिक विषयों को छोड़कर विद्या, विज्ञान तथा अन्य विषय सम्बन्धी व्याख्यान अन्य महाशयों के भी हो सकेंगे ।

बा० गंगा प्रसाद जी ने प्रधान पद से अपना त्यागपत्र उपस्थित किया, निश्चय हुआ कि त्यागपत्र स्वीकार किया जावे। उनके स्थान में सर्व सम्मति से बा० घासी रामजी प्रधान नियत हुए।

(३) नवजीवन के खरीदने का विषय पेश होकर निश्चय हुआ कि सम्पादक महाशय तथा मालिक पत्र से प्रार्थना की जावे कि वह बिला मूल्य के ही इसको परिषद् को दान दे दें—

(४) आर्य्यकुमार सभाओं को परिषद् में प्रविष्ट कराने का विषय पेश हुआ और निश्चय हुआ कि इसके लिये सभाओं के पास प्रार्थनापत्र भेजे जावें और अन्तरंग सभा परिषद् के सभासदों से भी प्रार्थना की जावे कि वह भी इसमें कोशिश करें—

(५) आर्य्यकुमारों को " शारीरिक उन्नति के विचार का पथ दिखलाने का विषय पेश होकर निश्चय हुआ कि आर्य्यकुमार सभाओं को सूचना दी जावे कि अपने बजट का कुछ भाग इस तरफ भी खर्च करें और अपनी सभा में एक हेल्थ रजिस्टर रखें जिसमें अपने सभासदों की शारीरिक अवस्था लिखा करें और उसकी रिपोर्ट कार्य्यालय परिषद् को मासिक भेजा करें—रजिस्टर का नमूना और रिपोर्ट का तरीका भी सभाओं को भेजा जावे—

(६) प्रतिनिधि सभाओं की सेवा में कुमार सभाओं के तथा परिषद् के नियम विचारार्थ भेजने का विषय पेश हो कर निश्चय हुआ कि मन्त्री ऐसा करें।

(७) प्रसिद्ध व्याख्यानदाताओं से कुमार सभाओ में व्याख्यान देने के लिये प्रार्थना करने का विषय पेश होकर निश्चय हुआ कि मंत्री इस का प्रबन्ध करें—

प्रधान आर्य्य कुमार सभा सहारनपुर का पत्र पढ़ा गया नि-श्चय हुआ कि यदि ला० परभूराम किसी आर्य्य समाज के सभा-सद हों या हो जावें और यदि मन्त्री जी अन्य चन्दे से रुपया जमा कर लें तो ला० परभूराम जी व्याख्यान दे सक्ते हैं और महा मन्त्री उन के सफ़र खर्च के लिये ७५) तक ख़र्च कर सक्ते हैं।

प्रधान महाशय को धन्यवाद देने के पश्चात सभा विसर्जन हुई

अलख मुरारी, महामन्त्री
भारत वर्षीय आर्य्य कुमार परिषद् सहारनपुर.

वेदविद्यालय और दयानन्द हाईस्कूल काशी

के लिये चन्दा देने वाले

बर्मा निवासी महोदयों की नामावली.

पहिली किस्त.

नाम	पता	दान
राय बहादुर भगवानदास	२ मुग़ल स्ट्रीट रंगून	१०१)
एस रेडियर	३२ स्ट्रीट रंगून	२००)
सेठ नेतराम राम बख़्श	२ मुगल स्ट्रीट रंगून	१००)
" एस० वी० नियोगी	२६ स्ट्रीट "	१०१)
" अमरचन्द माधो जी	" "	१०१)
" धारसी नानजी कंपनी	" "	५१)
सिन्धी सभा मार्फत	मर्चेन्ट स्ट्रीट "	१०१)
महाशय रूपचन्द तलवार	आर्य्य समाज "	३०)
सेठ सूर्य्यमल घनश्यामदास	मर्चेन्ट स्ट्रीट "	३०)
पं० राम किशोर अवस्थी	" "	२५)
मिस्टर० ए० एम० पिलेज	एडवर्ड स्ट्रीट "	२५)
श्रीयुत०एस०एस० हालकर	प्रधान आर्य्य समाज "	५०)
सेठ मूलजी धारसी	मुगल स्ट्रीट	२५)
डाक्टर टी० एस राजन	मुगल स्ट्रीट	२५)
An admirer	" "	२५)
डाक्टर हरिश्चन्द्र	फालोअर हस्पीटल रंगून	२०)
सहायक मन्त्री	आर्य्यसमाज रंगून खर्चमध्ये	१०)
ठाकुरधनदासपीहलाददास	मर्चेन्ट स्ट्रीट रंगून	२१)
ला० राम सरन दास	छावनी रंगून	१५)
ठा० रघुवीरसिंह	जमादार ग्राहम कम्पनी	६७)

सिरदार गोपाल सिंह	ठीकदार पीगू	५)
श्री० वी० पी० मेहता	ज्यूलर० मुगल स्ट्रीट रंगून	१५)
मिस्टर महराज जी	जनरल हास्पीटल, ,,	१५)
श्रीयुत द्वारका प्रसाद	२५ स्ट्रीट, रंगून	१०)
,, मदन मोहन जी	सराफ ,, ,,	१२)
,, शिवप्रसाद जी	सराफ ,, ,,	१०)
उदयरायजी	,, ,, ,,	१०)
महाशय खदेरिन	,, ,,	२)
,, जय श्री	,, ,,	१)
एक सभ्य	,, ,,	२)
महा० लच्छनदास	क्लाथ मार्किट रंगून	५)
,, शिवनारायण	,,	२)
,, जगरनाथ अवस्थी	,,	५)
,, देवीप्रसादजी.	,,	५)
पं० जसवन्तलाल	फ्रेज़र स्ट्रीट रंगून०	१)
महा० रामभरोसे	,,	१)
,, बैजनाथ	,,	१)
,, बिहारी जी	,,	१)
,, जगरनाथ	,,	२)
,, मखन	,,	१)
,, बेलीराम हलवाई	,,	५)
,, जी० कृष्णमूर्त्ति	आर्य्य समाज	५)
,, महा० देसराजजी	स० पोस्ट मास्टर रंगून०	५)
,, उग्रसेनजी.	४२ स्ट्रीट रंगून	१०)
महा० सोहनलाल	ओवरसियर रंगून	५)
सि. कर्तारासिंहजी	,, रंगून०	५)
डा. मेलारामजी	जनरल हास्पीटल	१०)
महा० के. के. शाह.	डलहौज़ी स्ट्रीट	१०)
,, एस. एस. शाह.	,,	१०)
सेठ निर्भयरामजीवन	कम्पनी २६ स्ट्रीट रंगून	१०)
,, किशोरीलालकन्हयालाल	मुगल स्ट्रीट रंगून	१०)
श्री. सीतारामजी.	इन्सपेकर रंगून	२५)

डा. सरन दासजी	(दूसरीबार) छावनीरंगून	५)
श्री. के. डी. आचार्य्यजी.	३२ स्ट्रीट रंगून	१०)
श्री. निरंजनदासमोतीराम	पोस्ट आफिस रंगून	१०)
महा. लच्छमनदास	किमिन डाईन	१)
,, एस. सिंगाराम	आर्य्य समाज रंगून	५)
,, नृपतसिहजी	,,	२)
,, हरिहरसिंहजी	,,	२)
डा० गुरुदत्तसरीन	,,	१०)
महा० रामचन्दजी	,,	५)
,, गुप्तारामजी.	,,	२)
डा० डाक्टर गंगारामजी	बी० स्ट्रीट माण्डले	५०)
,, आत्माराम जी	रेलवे स्टेशन ,,	५०)
सेठहरदनदासपीहलाददास	बाजार ,,	२१)
,, मोहराम	मारकीट ,,	१०)
,, सीतलसिंह	,, ,,	१०)
,, रूपामल	,, ,,	१०)
,, जीवनमल	,, ,,	१५)
महा० डा० हरनारायन	,, ,,	३)
,, हजूरामल	,, ,,	५)
,, किशनदास	,, ,,	५)
,, गङ्गाराम	,, ,,	५)
,, रामजीमल	,, ,,	३)
,, चिवलाल	,, ,,	५)
,, लच्छीरामजी	,, ,,	१)
,, गोपीचन्द	,, ,,	१)
,, रामधन	,, ,,	३)
,, भगवानदास	,, ,,	१)
,, गुरुमुखसिंह	,, ,,	१)
,, तेजूमल	,, ,,	२)
,, लालचन्द	,, ,,	२)
,, सुर्य्यबली दुबे	,, ,,	२)
अन्य ५ सज्जन	,, ,,	६)

महा० लक्ष्मणदासजी	आर्यसमाज, ,,	१५)
,, मुन्शीरामजी	,, ,,	१०)
,, देवीदयाल	,, ,,	१०)
,, मिलखीराम	,, ,,	१५)
,, जे० सी० चेटर्जी	,, ,,	१०)
गुप्तदान	,, ,,	१०)
महा० विशेशरलाल	बी० रोड ,,	२)
,, नाथुराम हलवाइ	,, ,,	१२)
श्री० मेघजी परमानन्द	गुजराती ज्यूलर मण्डेल	५)
,, प्रभुभाई मोहनलाल	,, ,, ,,	१०)
,, विठलदास रामचन्द	,, ,, ,,	२)
श्रीमती धनदेवीजी	मार्फत श्रीलक्ष्मणदास ,,	५)
,, के० के० राय	बी० रोड माण्डेल	५)
डाक्टर आई कुमारन	मार्फत डा० मंगारामजी	२५)
महा० हरिचन्दजी	सराफ माण्डेल	१०)
डा० पी० जे० नारायण	बी० रोड ,,	५)
महा० कालासिंहजी	,, ,, ,,	१)
,, रामलालजी	,, ,, ,,	१)
,, दयाभाई	,,	५)
श्री० मुन्शीरामजी	ओवरसियर मिंगे	२५)
,, रामस्वामी पिल्ले	रेलवे आफिस ,,	५)
,, भगतरामजी	ओवर सियर ,,	५।)
,, भगतराम गोपालराम	मिंगे	२)
,, लच्छमनसिंहजी	,,	२)
,, एस० करेगं	,,	१५)
,, एच० सी० शर्मा	सुपरवाईजर मिंगे	१०)
,, हरगोपालजी	मिंगे	६)
,, भगवानजी	,,	१)
,, सांवलीप्रशाद	,,	१)
,, खेडो	,,	१)
,, गैनबी भगत	,,	२)
एस० एल० बोस	ओवर सियर	३)

के० के० मित्र	,,	३)
डाक्टर पिल्ले	हस्पताल मिंगें	५)
महा० श्रीराम	,,	१)
,, जमनादासजी	सब ओवर सियर मेंमियों	२०)
,, सालिग्रामजी	,, ,,	३०)
बख्शी गोपीचन्दजी	सपलाई एजन्ट ,,	३०)
महाशय रामसरुपजी	वेजीटबेल मर्चेन्ट ,,	१०)
मिस्टर यिन चौङ्ग	चीनी ठेकेदार ,,	१०)
डाक्टर मजहरअली	,,	२)
ला० सान्तींसिह	,,	२)
,, मानिकसिंह	,,	२)
ला० वृन्दावन जी	ठेकेदार लपडान	५०)
ला० गोविन्द रामजी	हास्पीटल ,,	२०)
मिस्टर० ए० पी० ओकला	वर्मा वकील	१५)
ला० गोपालदास जी	रेलवे क्लार्क लपडान	१०)
मिस्टर मुडलयर	,, ,,	१०)
मिस्टर पी० टी एस० पिल्ले	मिनाङ्ग	१५)
श्रीयुत फकीर जी	लेपडान	२)
,, एल० एन० तिवाड़ी	,,	२)
श्रीमती जमादारिन	,,	॥)
खां काले खां	,,	१)
सरदार शेरसिंह जी	,,	२।)
,, नैपालसिंह	,,	२)
,, वसावा सिंह	,,	२)
,, भोला सिंह	,,	४)
,, गंगा सिंह	,,	५)
भगवान दीन	,,	५)
,, नौबत सिंह	,,	५)
,, जागेश्वर तिवाड़ी	,,	३)
राम सेवक	,,	२)
माता बदल	,,	१॥)
शिवचरन	,,	१)

,, नागेश्वर गरुक	,,	
डा. सुन्दरसिंहजी रायबहादुर	हस्पताल जोबिनगाम्	१०)
मि० फिरोज़ खां पी. ड. आई	,,	१००)
सेठ भजनलाल केदारनाथ	मारकीट जोबिनगाम्	२५)
,, मनसुखलाल लच्छमी	नारायण ,,	१२॥)
,, भागीरथदास रामेश्वर	,,	१२॥)
,, रामेश्वर	,,	१२॥)
,, सूर्य्यमल हनुमानबख्श	७) इस में से केदारनाथके हैं	१२॥)
,, फतेहचन्द गटी लाल	,,	१२॥)
,, घासी राम धर्मराज	,,	१२॥)
,, हनुमान ब० रंगूटा	,,	१२॥)
मिस्टर डे,	जोबिन गाम्	५)
बी. ए. चिकलिङ्गम्	,, ,,	४॥।=)
Mr. W. Rainford	सक्रेटरी	२०)
महा० नेकीचन्द जी तक्की	स्टेशन मास्टर	३०)
महा० त्रिलोकी चन्दजी	ओवर सियर कालावस्ती	१५)
One Rupee Book	From No 3226—3250	२५)
ला. हाकिमसिंह जी	ठेकेदार-मेमियो	१०)
डा. मुल्कराजसिंह जी	हस्पताल—"	१०)
महा. ब्रह्मया जी	,,	१०)
कमिसरियट के दफ्तर से	,,	११=)
मार्फत महाशय लछमणदास जी	मारडले	१४॥)
योग		२५३७=)

गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर।

ज्वालापुर में नहर के किनारे रेवले सड़क के पास अत्यन्त मनोरम भूमि में एक विद्यालय ५ वर्ष से स्थापित है जो प्राची[न] आदर्श पर चलाया जा रहा है, वहां इस समय ८० ब्रह्मचारी प[ढ़] रहे है। किसी किस्म की फीस या शुल्क किसी से नहीं ली जा[ती] भोजन वस्त्र पुस्तक आदि सब विद्यालय की ओर से दिये जा[ते] है, संस्कृत के अच्छे २ विद्वान् उसके संचालक और व्यवस्थाप[क] हैं। विद्यालय एक रजिस्टर्ड सभा के आधीन है, जिसके सैकड़[ों] सभासद् और सहायक हैं महाविद्यालय अपने ढंग का केवल ए[क]

...विद्यालय है। प्रत्येक वैदिकधर्मी आर्य और संस्कृतानुरागी प्राची-...ताभिमानी भारतवर्षी सज्जन का कर्त्तव्य है कि तन मन धन, से ...यथाशक्ति विद्यालय की सहायता करे। उक्त विद्यालय का वार्षिक ...त्सव होली के अवसर पर प्रति वर्ष होता है और अपूर्व समारोह ...से होता है। हरिद्वार जानेवाले यात्रियों को एक बार महाविद्याल ...अवश्य देखना चाहिये।

भीमसेन शर्मा
मंत्री० म० वि० सभा

निवेदन
सेठ सीताराम रईस आरा
प्रधान महाविद्यालय सभा।

माणिक ग्रन्थमाला।

[सम्पादक प्रो० कालीदास माणिक और हरिदास माणिक]

माणिक ग्रन्थमाला को निकले आज एक वर्ष पूरा होगया। ...म उन महाशयों के बहुत ही अनुगृहीत हैं जिन्हों ने कि ऐतिहासिक ...पुस्तकों के प्रचार में मेरी सहायता की है। कितने सज्जनों ने स्वयं ग्राहक होकर तथा औरों को भी बनाकर सहायता की है। कितने ...इतिहास प्रेमियों ने पुस्तकें बराबर मंगा कर हमारा उत्साह ...बढ़ाया है हम इसके लिये उनके बहुत ही अनुगृहीत हैं। इस ...वर्ष में यदि १००० ग्राहक हो जांय तो हमारा कार्य निर्विघ्न चले ...क्योंकि अच्छी २ पुस्तकों का प्रकाशित होना ग्राहकों की संख्या पर ...निर्भर है। अब इस साल (१९१३) ग्रन्थमाला में करीब २ यही ग्रन्थ ...प्रकाशित होंगे

[१] राजपूतों की बहादुरी पाहिला भाग [सचित्र]
[२] भारत की प्राचीन झलक वा आर्यों का आत्मोत्सर्ग [तीसरा भाग]
[४] स्वास्थ्य और स्वभाव
[३] संयोगता-हरण-नाटक
[५] राणा प्रतापसिंह की वीरता [दो भाग]
[६] **टर्की-इटली संग्राम** छप रहा है-जो पहिले नाम पुस्तक ...वालों मे लिखायेगें उनसे आधा दाम केवल ॥) लिया जायगा।

पत्र व्यवहार का पता—
मनेजर-माणिक ग्रन्थमाला-काशी

Printed by Pt. Baijnath Jijja Manager, at the Tara Printing Works, Benares, and Published by Keshava Deva Shastri, Dasaswamedh, Benares City.

Reg. No. A. 474 [ओ३म्] रजिस्टर्ड नं० ४७४

नवजीवन
Nawajiwan

सम्पादक—केशवदेवशास्त्री

विषय सूची।

चित्र-बर्मा की मेतिलाएं व बर्मा परिवार

भाग ४ (फरवरी १९१३) अङ्क ११

वार्षिक मूल्य ... ... ३) रु०
एक प्रति का मूल्य ...... ।-)

नवजीवन के नियम

(१) नवजीवन का वार्षिक मूल्य ३) रुपये मात्र है।

(२) प्रतिमास की २० तारीख़ को काशी से निकला करेगा

(३) नवजीवन में कोई अश्लील विज्ञापन न छपने पावेगा।

(४) विद्यार्थियों, छात्राओं, कन्या पाठशालाओं की अध्यापिकाओं और पुस्तकालयों से केवल २) रुपये वार्षिक मूल्य लिया जावेगा।

(५) प्रतिमास प्रकाश होने की तिथि के १० दिन के अन्दर अन्यथा नवजीवन के न पहुंचने पर दूसरी कापी भेजी जावेगी, अन्यथा मूल्य देना पड़ेगा।

नवजीवन का उद्देश्य।

(१) वैदिक धर्म्म के प्रचारार्थ।

(क) आर्य्य कुमारों तथा कुमारियों में नवीन जीवन का संचार करना।

(ख) सामाजिक उन्नति के उपायों पर विचार करना।

(ग) आर्य्य जीवन की मर्यादा को स्थापित करने की चेष्टा करना।

(घ) महानुभावों के सच्चरितों पर विचार करना और

(ङ) उपयोगी संस्थाओं के वृतान्तों को सर्वसाधारण तक पहुंचाना।

❋ ऋतुचर्य्या ❋

यह पुस्तक प्रत्येक नरनारी को अपने घर में रखनी चाहिये क्यों शरीर की रक्षा के बिना कोई भी संसार का सुख नहीं भोग सकता शरीर के स्वास्थ्य पर ऋतुओं के परिवर्तन से जो घटनायें होतीं जिनसे मनुष्य भीषण रोगों में ग्रस्त हो जाता है ये सब बातें गाचार्य कविराज केशवदेव शास्त्री जी ने बड़े परिश्रम और भव से इस पुस्तक में दर्शाई हैं। ऋतु वर्णन, द्रव्य विज्ञान, के द्रव्य, ऋतुओं में परिवर्तन, आहार्य्य द्रव्य, विषम भोजन का पथ्यापथ्य, फलों और आहार आदि विषयों का वर्णन किया गया पुस्तक अच्छे मोटे कागज़ और सुन्दर टाईप में छपी है। १) मात्र।

मिलने का पता—मैनेजर
नवजीवन काशी।

मेकटोला के एक बर्मन परिवार का दृश्य

ओ३म्

नवजीवन ।

उदयति यदि भानुः पश्चिमे दिग्विभागे
प्रचलति यदि मेरुः शीततां याति वन्हिः ।
विकसति यदि पद्मं पर्वताग्रे शिलायां
न भवति पुनरुक्तं भाषितं सज्जनानाम् ॥

भाग ४. } फरवरी, १९१३ { अङ्क ११

प्रार्थना ।

यस्ते गंधः पुष्करमाविवेश यं संजभ्रुः सूर्याया विवाहे ।
अमर्त्या पृथिवि गन्धमग्रे तेन मा सुरभिंकृणु,
मा नो द्विक्षत कञ्चन ॥

माता पृथिवि ! आप के तत्वों में अनन्त ज्ञान भरा है, जिस प्रकार सूर्योदय होने पर वायु कमलों की सुगन्धी को चहों ओर फैलाता ऐसे ही ज्ञानरूपी सूर्योदय होने पर विद्वान लोग भौतिक त्वों के विज्ञान को फैलाकर हमारे आत्माओं को सुगन्धित और वित्र करें। हम सारे ही इस अनन्त सृष्टि के भंडार के अधिकारी । हम में से कोई भी एक दूसरे से द्वेष न करे । विपरीत इसके दूसरे साथ प्रेम और स्नेह हो और सभा, समाज के लिये हितकारी । भगवन् ! आपके प्रदान किये तत्वों में अनेक विद्याओं के बीज कारित हैं । आप हमें मेधा प्रदान करें जिससे हम मानवी शक्तियों विखेरने के स्थान में निरोध करना सीखें और सभी नर नारी के दिव्य विज्ञान से विभूषित होकर एक दूसरे की सहायता ते हुए आपकी आज्ञाओं का पालन कर सकें । ओं शम् ॥

सम्पादकीय वक्तव्य ।

कन्या गुरुकुल कीटगंज अल्लाहाबाद—जनवरी मास के नवजीवन में कन्यागुरुकुल पर जो नोट निकला है, उस पर श्री गिरेन्द्रदेव जी ने नवजीवन में छपने के लिये एक लेख भेजा है। हम उन्हें उत्तर देने से पूर्व ही बतला देना चाहते हैं कि नवजीवन व्यक्तिगत झगड़ों मे नहीं पड़ता। रहा, गुरुकुल सम्बन्धी हमारा विचार-हम कन्या गुरुकुल की स्कीम को श्रेयस्कर और अत्यन्त उपयोगी मानते हैं, परन्तु संचालकों के जीवन तथा सभा के प्रतिष्ठित सदस्यों की ख्याति पर ही ऐसी स्कीमों की सफलता का आधार होता है। हमें स्वयम न ठाकुर गिरेन्द्रदेव जी की स्कीम पर विश्वास है और न वनिता आर्य्य प्रतिनिधि सभा ब्रह्मर्षिदेश की स्कीम पर। हमने अनधिकार चेष्टा से इस विषय पर लेख नहीं लिखा। हमें शोक है कि उपयोगी उपकरणों के अभाव में हमारे पुरुषार्थी भाइयों को हाथरस के कन्या गुरुकुल से भी शिक्षा नहीं मिली। अस्तु, जहां हम स्त्रीशिक्षा और कन्या गुरुकुलों के शुभचिन्तक हैं वहां जिन व्यक्तियों पर हमें सन्देह हो अथवा जहां कि संचालकों को अपनी सेवा से पबलिक का विश्वास उपलब्ध करने का अभी अवसर न मिला हो वहां हमारा धर्म्म है कि हम अपने विचार सर्वसाधारण के समक्ष उपस्थित करदें। इसी सद्भाव से हमने नोट लिखा था और इसी लिये हम ने उसे हितकर नहीं बतलाया था।

संन्यासियों की भर्ती:—काशी संन्यासियों की अधिक संख्या के लिये प्रसिद्ध ही है। गत मास में तीन आर्य्य विद्यार्थी वंचक साधुओं के चकमे में पड़ कर संन्यासी होगये। गवर्नमेन्ट की ओर से कोई सुप्रबन्ध नहीं। काशी में प्रायः साधु विद्यार्थियों को फंसाते, उत्तमोत्तम वस्त्रों तथा जायदाद का लोभ दिखला मूंड लेते हैं और जब चोटी कटवा लेते हैं तब उन विद्यार्थियों से सेवा करवाते हैं। गत दिनों में काशी में इसकी बड़ी चर्चा थी। यहां अनेक साधु विद्यार्थियों को फंसाने की चेष्टा करते रहते हैं और बाल्यावस्था में ही संन्यास देकर उनके जीवनों को नष्ट भ्रष्ट कर देते हैं। जो आर्य्य पुरुष काशी में किसी विद्यार्थी को भेजे उन्हें इन बातों का ध्यान कर लेना उचित है। जो लोग ५५ लाख साधुओं का सुधार

चाहते हैं उन्हें बालकों को बचाने का भी ध्यान रखना चाहिये। गत मास में ब्रह्मदत्त, यशवन्त और वल्लभ भाई यह तीन विद्यार्थी किसी जयानन्द तीर्थ नामो साधु के बहकाने से संन्यासी बने हैं।

वेदरत्नविद्यालय—मुस्तफापुर (दानापुर) अन्य गुरुकुलों के समान बिहार के पुरुषार्थी भाई दानापुर के समीपवर्ती वेदरत्न विद्यालय की उन्नति में सचेष्ट हैं। इस वर्ष गुरुकुल कांगड़ी–महाविद्यालय ज्वालापुर और वेद रत्न विद्यालय दानापुर तीनों स्थानों के उत्सव एक ही तिथियों में होंगे। गुरुकुल कांगड़ी के सरस्वती सम्मेलन के समान मुस्तफापुर में भी सरस्वती सम्मेलन होगा जिस में बिहार प्रान्त के ४० संस्कृतज्ञ परिडत आमन्त्रित किये गये हैं। क्या ही उत्तम होता यदि इन संस्थाओं के उत्सव भिन्न २ तिथियों पर होते और इन संस्थाओं के संचालकों के हृदयों में परस्पर एक दूसरे के व्यवहार में प्रेम का स्रोत प्रवाहित होता।

भारती-भवन—पुस्तकालय--फ़ीरोज़ाबादः—फ़ीरोज़ाबाद जिला आगरा के गत उत्सव में हमें सम्मिलित होने का अवसर मिला। फ़ीरोज़ाबाद व्यवसाय के लिये एक उत्तम स्थान है। यहां की चूड़ियों के कारखाने और ग्लास बनाने के साधन एक उत्साह वर्धक दृश्य को उपस्थित करते हैं। यहां हमने भारती भवन पुस्तकालय को देखा। आर्य्य कुमारों ने वस्तुतः इस नगर की जनता पर इस पुस्तकालय द्वारा बड़ा ही उपकार किया है। यदि आर्य्य कुमार सभाएं ऐसे पुस्तकालय ही खोल कर स्वाध्याय के लिये आर्य्य कुमारों तथा सर्व साधारण को सुअवसर प्रदान कर दें तो कुछ कम उपकार न हो। भवन में ७५ सभासद हैं और उनसे ...) मासिक की आय होती है। नगर से इस वर्ष में २५८|||)॥ के दाम की पुस्तकें दान में प्राप्त हुईं और बाहर के दानियों ने ४४) रुपये के मूल्य की ९७ पुस्तकें भेजीं। भवन ने ५७१ पुस्तकें ४२१||-)॥ रुपये में खरीदें। वर्ष के अन्त में भवन के पुस्तकालय में ७२४||) की १०२५ पुस्तकें उपस्थित थीं। जिस कार्य्य को चैत्र शुक्ल १ संवत् १९९८ को उठाया गया हो और १५ मास के अन्दर २ कुछ आर्य्य कुमारों के पुरुषार्थ से इतना कार्य्य हुआ हो उसे हम एक असाधारण सफलता न कहें तो क्या कहें। सामयिक पत्रों में से ... विना मूल्य, ११ आधे मूल्य पर, ... पूरे मूल्य पर और १

पूर मूल्य पर आती है। भवन की आय व्यय का व्योरा भी सन्तोष जनक है । ६६३॥।=)॥। की आय हुई और ४४६॥)। ४४६॥)। का व्यय हुआ । शेष १०८।)॥ भवन के कोष में उपस्थित हैं। हम साग्रह आर्यकुमार सभाओं के अधिकारियों से निवेदन करेंगे कि वह फीरोजाबाद आर्यमित्र सभा के कुमारों के प्रशंसनीय उद्योग को देखें और अपने २ स्थानों पर जहां उपयोगी पुस्तकालय न हों ऐसे पुस्तकालयों को खोलकर सर्वसाधारण को उनसे लाभ उठाने का अवसर दें और स्वयम निष्कामभावेन उसमें कुछ काल सेवा किया करें। हमें विश्वास रखना चाहिये कि जहां फीरोजाबाद के कुमार इस वर्ष द्विगुणित उत्साह से कार्य को बढ़ावेंगे वहां अन्यकुमार उनसे शिक्षा लेकर इस क्षेत्र में उपस्थित होंगे।

वर्मा में भेतिला जीवन।

बर्मा बुधधर्म का केन्द्र माना जाता है। बुध धर्म्म ने स्त्रियों को स्वतन्त्रता प्रदान की, या यूं कहिये कि न्यूनाधिक बुध धर्म की उन्नति में स्त्रियों ने अग्रसर हो कार्य्य किया॥ महात्मा बुद्धदेव जिस समय भारतवर्ष में उत्पन्न हुए थे उन दिनों स्त्री जाति का बड़ा अनादर होता था, स्वयम भगवान बुद्ध ने जब गौतमी प्रजापति तथा उनकी साथी अन्य देवियां दीक्षित होने को गई थीं भिक्षुणी बनाने से इन्कार कर दिया था और आदेश दिया था कि वह सुफेद वस्त्र पहिना करें। परन्तु प्रजापति गौतमी और यशोधरा ने दृढता दिखलाई, यह देवियां पुनः दूसरे वर्ष महात्मा बुद्ध की शरण में गईं, इन के पाओं नंगे थे, हाथ में भिक्षा पात्र लिया हुआ था और दृढ संकल्प कर चुकी थीं कि हम संन्यास लेकर स्त्री जाति का उद्धार करेंगी। भगवान बुद्धदेव ने आनन्द को सम्बोधन करके कहा-" बुद्ध पक्षपात से शून्य होते हैं, उन के लिये पुरुष और स्त्री समान हैं अत एव स्त्रियां भी पुरुषों के समान संन्यास धारण कर सक्ती हैं"। इस शिक्षानुसार पुरुष यदि भिक्षु बनकर उपदेश करते थे तो स्त्रियां भिक्षुणी बनकर स्त्रियों में उपदेश दिया करतीं और उन्हें पढ़ाती थीं। सङ्घमित्रा तथा मालिनी जैसी भिक्षुणियों ही ने लङ्का और भारतवर्ष में स्त्रियों का उद्धार किया था। बर्मा में इन भिक्षुणी दावियों को मातिका के नाम से पुकारते हैं। जैसे वहां

ब्रह्मचर्य्य और सन्यासाश्रम को पुरुषों के लिये मिला सा दिया है वैसे ही स्त्रियों को भी चाहे वह ब्रह्मचारिणी हों चाहे संन्यास धारण किये हों दोनों को मेतिला कहते हैं। बालकों के समान कन्याओं का भी वहां उपनयन होता है। कन्याओं का उपनयन पितृकुल में नहीं होता और न वहां ठाठ का समान इकट्ठा किया जाता है, वरन आचर्य्य कुल या चौं में एक विशेष स्थान पर जो इसी अभिप्राय से बनाया जाता है संस्कार किया जाता है। कन्या के सम्बन्धी तथा माता पिता उस स्थान पर जमा होते हैं। संस्कार के लिये तिथि निश्चित की जाती है। शिरूप्योदी संस्कार किया जाती है। कन्या का मुण्डन होता है उसे दीक्षा दी जाती है और इस दीक्षा के अनन्तर मेतिला बन चौं में रहने लग जाती है। वर्मा के प्रसिद्ध २ स्थानों में इन ब्रह्मचारिणियों के लिये चौं (बिहार) बने हुए हैं। सभी मकान लकड़ी के हैं। इन्हें हम बोर्डिंग कह सक्ते हैं। प्रायः एक एक कमरे में स्थान के अनुसार चार पांच या अधिक मेतिलाएं रहती हैं। रंगूनइङ्ग और थेडो के आश्रमों में इन की संख्या अधिक है। प्रत्येक ऐसे आश्रम में एक बडा फूंगी रहता है जो उन का प्रबन्ध करता और उन के लिये उत्तरदाता होता है। कन्याएं प्रायः सात आठ या उस से भी न्यून आयु में मेतिला बनती हैं। कभी २ बड़ी आयु की युवतियां और वृद्धास्त्रियां भी आकर मेतिला बन जाती हैं। आश्रम में प्रायः ७ से लेकर ८०, ९० वर्ष की स्त्रियां मिलतीं हैं। प्रत्येक मेतिला समय २ पर मुण्डन कराती रहती हैं। उन के सिरों पर बाल नहीं रहते। इस से लड़कों के सदृश उन की आकृति दिखाई देती है। दीक्षा के समय वह उन बालों को भी जिन्हें वर्मा स्त्रियां अत्यन्त स्नेह से पालती हैं फाया (बुद्ध की मूर्ति) पर न्योच्छावर कर देती हैं और प्रण करती हैं कि आज से हम शृङ्गार को त्याग कर धर्म के पथ पर चलेंगी। प्रत्येक आश्रम में फाया के भवन के चारों ओर दीवार पर लम्बे २ काले केशों के गुच्छे लटकते दिखाई देते हैं। कहीं २ तो उन केशों के गुच्छों पर मेतिलाओं के नाम भी लिखे रहते हैं। इन आश्रमों में प्रायः दिनचर्य्या वैसे ही मनायी जाती है जैसे कि फूङ्गियों के चौं में"

आहार का प्रबन्ध

बर्मा लोग अपनी पुत्रियों को मेतिला और पुत्रों को फूंगी बनाते हैं। पुत्रों का उपनयन संस्कार घर में कराते हैं और पुत्रियों का उपनयन उनके भविष्यत के आश्रम में होता है। पुत्रों के खानपान के लिये बर्मी लोग विशेष धन नहीं देते क्योंकि वह दीक्षा के दूसरे दिन से ही भिक्षा मांगना आरम्भ कर देते हैं, परन्तु कन्याओं या मेतिलाओं के लिये आहारादि का प्रबन्ध आश्रमों में ही होता है। माता पिता खानपान की सामग्री अथवा १०) रु० मासिक आश्रम में पहुंचा देते हैं। आश्रमों में कोई हिसाब किताब या क्लार्क नहीं रहता। सारा कार्य्य धार्मिक विश्वास पर चलता है। जिनकी पुत्रियां पढ़ती हैं वह अवश्यमेव सामग्री अथवा रुपये मासिक भेज देते हैं। न हों तो उद्धार लेकर भेजेंगे परन्तु कन्याओं का निरन्तर ध्यान रखेंगे। आश्रम में प्रायः उत्तम से उत्तम फल, खानपान का समान, मोमबती, कपड़े और कम्बलादि लोग स्वयम पहुंचाते रहते हैं। फूंगी चौं का भण्डार भरा रहता है। मेतिलाएं भी फूंगियों के समान दोपहिर के १२ बजे से पूर्व खाना खाती हैं! भोजन के लिये वहां कोई पाकशाला नहीं होती, प्रत्येक विभाग की एक बड़ी मेतिला बालिकाओं के सङ्ग २ रहती है। वह छोटी मेतिलाओं की सहायता से भोजन बनातीं हैं और आपस में मिलकर खालेतीं हैं। समय २ पर फलादि भी उन्हें मिल जाते हैं। आश्रम के भण्डार में से उन्हें निश्चित अथवा अभिवांछित सामग्री मिल जाती है। धन अथवा आहार की वस्तुएँ जो कुछ माता पिता अथवा संबन्धी भेजते हैं वह सब आश्रम के अध्यक्ष के पास जाती हैं, मेतिलाएं खयम अपने पास कुछ नहीं रखतीं।

वस्त्रादि आवश्यक सामग्री।

मेतिलाओं के निवास स्थान में प्रत्येक के लिये एक एक चटाई और बिस्तरा रहता है। हर एक को एक एक जूता (जो पादुका के सदृश होता है) मिलता है। पहिनने के लिये धोती, कुर्ता और चादर यह तीन वस्त्र दिये जाते हैं। इन्हें हलके से बादामी रङ्ग में रङ्ग लिया जाता है। दूर से सुफेद ही ज्ञात होते हैं। हर मेतिला के पास एक छ... रहता है। प्रायः सभी मेतिलाएं फाया (बुद्ध

की छोटी २ मूर्तियां अपने २ स्थान में सजा कर रखती हैं क्योंकि वह फाया को भोग लगाकर पीच्छे स्वयम खाती हैं। कुछ बांस के बर्तन, रुमाल और तोलिये रहते हैं। इन के अतिरिक्त उन के पास अपनी २ पाठ्य पुस्तकें, स्लेटें और लिखने का सामान रहता है। निवास स्थान के बाहिर बरामदे में पानी पीने का घड़ा और उस के पास बांस का वर्तन धरा रहता है। मेतिलाएं अपने २ आश्रम को बडा स्वच्छ रखती हैं। हर एक वस्तु अपने निर्धारित स्थान पर रखी रहती है। उन की सहायता के लिये प्रायः इन आश्रमों में वृद्धा गृहस्थ की स्त्रियों भी उपस्थित रहती हैं जो पापों को धोने के लिये उन के लिये मार्जन और मेतिलाओं की सेवा को ही प्रायश्चित मानती हैं। आश्रमों में प्रत्येक कार्य्य के लिये समय नियत होता है। अवकाश के समय में वह स्नान करतीं अथवा अपने २ वस्त्रों को स्वयम धो कर साफ कर लिया करती हैं।

मेतिलाओं की दिनचर्य्या।

फूंगियों के समान मेतिलाओं को भी ठीक ४ बजे उठ जाना होता है। आवश्यक कार्य्यों से निपट कर ५ बजे पर्य्यन्त सभी मेतिलाएं पूजा के स्थान पर इकट्ठी होती हैं। भारतवर्ष और बर्मा की पूजा में बड़ा अन्तर है। वहां भगवान बुद्धदेव की स्वर्णमण्डित बड़ी मूर्ति के सामने अनुमान ३, ४ गज के फासले पर मेतिलाएं बैठती हैं। सामने की कत्तार में छोटी मेतिलाएं और पीछे की कतारों में बडी बैठती हैं। पूजा का स्थान बडा हाल होता है। एक किनारे पर आने जाने का रास्ता रहता है। कतार में बडी सभ्यता से १०, १२, अथवा १५ तक मेतिलाएं बैठती हैं। प्रत्येक पीछे वाली कतार में भी इतनी ही संख्या होती है। वृद्धा तथा गृहिणियां यदि हों तो वह सब से पीच्छे जाकर बैठती हैं। मूर्ति के समीप मच्छरदानी और उत्तमोतम वस्त्रों से अलकृंत एक पलङ्ग फूंगी के लिये बिच्छा रहता है। जब सब मेतिलाएं नियमित रीति से बैठ जाती हैं तब सूचना मिलने पर प्रधान फूंगी आता है और उस के आदेश पर त्रिशरण सूत्र तथा स्तोत्र पढ़े जाते हैं। सभी की दृष्टि मूर्ति पर रहती है। हाथ जोडकर तथा नम्रता पूर्वक प्रणाम किया जाता है। पूजा की समाप्ति पर वहीं अपने स्थान पर बैठे २ फूंगी कुछ उपदेश देता है। मेतिलाओं की शिक्षा अधिकांश धर्म्म

ग्रन्थों में होती और उन्हें गृहस्थ में जाने से घृणा दिलाई जाती है। पूजा के पश्चात प्रातराशी खाने को मिलता है और मेतिलाएं कुछ देर के लिये इधर उधर घूमतीं अथवा बात चीत करती हैं। ठीक ७ बजे घन्टी बजने पर वह सब अपने २ निर्धारित स्थान पर विद्योपार्जन के लिये एकत्रित होती हैं पाठशाला का स्थान भी प्रायः बांस वा लकड़ी का ही होता है। एक फूंगी जो शिक्षित होता है, श्रेणी में अध्यापनार्थ आजाता है। वह मेतिलाओं से १२ हाथ दूर बैठता है और शिक्षा प्रदान करता है। ९ बजे घन्टी बजती और सब मेतिलाएं अपने २ स्थान पर पहुंच जाती हैं और भोजनादि का प्रबन्ध करती हैं। परस्पर के प्रेम तथा सहायता के कारण उन्हें यह कार्य्य अति सुगम प्रतीत होता है। कोई पानी लाती, कोई आग जलाती, कोई भात पकाती और कोई ऊपर का कार्य्य करती है। खा पी कर ११ बजे वह निवृत होजाती हैं और २ बजे पर्य्यन्त विश्राम करतीं अथवा पाठ को कण्ठाग्र करती हैं। दो बजे से ५ बजे पर्य्यन्त फिर पाठ होता है। ५ बजे से ६ बजे तक विश्राम। सायङ्काल के ६ बजे फिर सायङ्काल की पूजा आरम्भ होती है और प्रायः ८ बजे पर्य्यन्त वह उपासना उपदेश और गाथा श्रवण करने में समय व्यतीत करती हैं। ८ बजे पुनः एक दूसरे से मिलने अथवा अपने २ निवास स्थान में चली जाती हैं और १० बजे अथवा उस से भी पहिले सो जाती हैं। शीत प्रधान देश न होने के कारण वह फूस, बांसों, या लकड़ी के मकानों में निर्वाह करती हैं।

उन्हें खाने पीने की सामग्री की चिन्ता नहीं होती। आश्रम का प्रधान फूंगी सर्व प्रकार से प्रबन्ध करता, उनके परस्पर के झगड़ों (अत्यन्त कम होते हैं) को निपटाता, पढ़ाने का प्रबन्ध करना और अन्य आवश्यक सामग्री पहुंचाने का ध्यान रखता है इनका स्वास्थ्य उत्तम होता है। नगरों में जाने का न इन्हें अवकाश मिलता है और न वैराग की शिक्षा के कारण उन में इच्छा ही उत्पन्न होती है। युवावस्था में माता पिता तथा सम्बन्धी यदि खुश कर के ले जावें तब आश्रम को छोड़ती हैं अन्यथा आश्रम ही में रहती हैं मेतिलाओं का वह पुराणा क्रम कि शिक्षा प्राप्त कर स्थान २ पर जाकर उपदेश दें अब अति न्यून हो गया है। सहस्रों नारियें आश्रमों में इन के दर्शन करने आतीं और अपने जीवन को पवित्र मानती हैं।

थेडो मेतिलाचों की मेतिलाएं

धर्मशिक्षा

(जूलाई के अङ्क से आगे)

अफ़्रीका के निर्जन बनों में घूमता हुआ अमीन पाशा अपने कर्मचारियों से प्रथक होगया। लोगों ने विश्वास कर लिया कि उसका देहान्त होगया है। दूसरे वर्ष जब उसकी सेना मध्य अफ्रीका में कष्ट उठा रही थी उन्हें एक विचित्र करुणा का दृश्य ज्ञात हुआ। देशियों के एक समुदाय को गुलामों की तजारत करनेवालों के एजेन्टों ने पकड़ा हुआ था, वह उन्हें बहुत सन्ताप पहुंचा रहे थे और ज़ंजीरों से बांध कर उन्हें खेंचते थे। ऐसी दुर्दशा में उन्हें चेचक निकली और यह अन्यायी लोग इन दुखियों को निर्जन बन में निस्सहाय छोड़कर भाग गये। अमीन पाशा ने अपने नौकरों को आगे भेज दिया और स्वयम उनकी सेवा शुश्रूषा के लिये उन रोगियों के पास रह गया। उसकी कृपा से अनेक जानें बच गईं, वह स्वयम भी रोगियों में रहकर रोगी होगया, परन्तु उस ने दुखियों के दुख को कम करने में पूर्ण यत्न किया।

क्या कभी आपने किसी टेढ़े वृक्ष को देखा है? देखिये, कैसे यह बढ़ता है, यद्यपि यह टेढ़ा और कुरूप वृक्ष है। वायु चली और वह एक बीज इस भूमि में वपन कर गई जहां यह वृक्ष खड़ा है। इसके चारों ओर वृक्ष हैं। दीवार ने इसे पनपने नहीं दिया, परन्तु यह प्रकाश की उपलब्धि के लिये बराबर सचेष्ट रहा है। कहीं से यह मुड़ गया, कहीं से झुक गया, परन्तु रुकावटों की उपस्थिति में भी यह दृढ़वृक्ष बराबर ऊपर की ओर ही को उठा, बढ़ा और उत्कृष्ट वृक्ष बन गया। इस के पत्ते अन्य वृक्षों के सुहावने पत्तों के समान हरित और कोमल हैं और परमात्मा के नियमों के अनुकूल यह भी रस का आस्वादन करता और जगत को अपने पत्तों से शोभायमान करता है। इसी वृक्ष के समान हम अपने चारों ओर ऐसे दुखिया मनुष्यों को पाते हैं जो अपने कर्मों के कारण प्रशंसनीय स्थान में उत्पन्न नहीं हुए, जो जन्म से दुखी हैं परन्तु उनकी आकृति हमारे समान है। उन में भी परमात्मा ने अनेक मानसिक शक्तियां दी हैं जिन्हें यदि उत्कृष्ट किया जावे तो वे महापुरुष बन सक्ते हैं। वह निस्सन्देह हमारे करुणा के पात्र

हैं और हमारी सहायता से वह दुखों और सन्तापों से सहसा बच सक्ते हैं। हम अपने बल से उन्हें सहारा देकर उठा सक्ते हैं, उन्हें जगदाधार का प्रकाश दिखला सक्ते हैं, उन्हें उच्च जीवन की ओर लेजा सक्ते हैं। इस से बलवान की शक्तियां जहां परिस्फुटित और विकसित होती हैं, वहां दुर्बलों को उठने, अपनी अवस्था को सम्भालने और ऊर्द्धगति की ओर चलने का आश्रय मिलता है। यही कारण है कि करुणा के प्रदर्शनार्थ संसार के प्रत्येक धर्म या मज़हब में दान की महिमा का विस्तार किया गया है।

दान का महात्म्य।

परमात्मा सब से बड़ा दानी है। उस ने संसार की सब से बहुमूल्य वस्तुएं प्राणीमात्र को अधिकता से प्रदान कर रखी हैं। वायु, जल, अग्नि के बिना हम जी ही नहीं सक्ते परन्तु इन वस्तुओं का कुछ दाम ही नहीं। यह सर्वत्र सुविधा से प्राप्त हैं और हो सक्ती हैं। इन वस्तुओं की मनुष्यों को ही नहीं किन्तु मनुष्येतर योनियों को भी अत्यन्त आवश्यक्ता है। वह दयामय स्रष्टा इन पदार्थों को प्रत्येक के प्रति दान करता है। राजा हो या रङ्क, विद्वान हो या मूर्ख, ब्राह्मण हो या चाण्डाल कोई भी इन उपयोगी पदार्थों से वंचित नहीं। मनुष्य अल्पज्ञ है, वह संस्कारों का पुतला है। वह कृतज्ञ और कृतघ्न में विचार करता है, परन्तु परमात्मा का ध्यान सब के लिये समान है। क्या कभी आप ने घोड़ों को जल पीने के लिये नदी पर जाते देखा है ? वह किसी निर्मल जलाशय या नदी के जल में घुसते हैं, प्रसन्नता पूर्वक स्वादु जल को पान करते हैं और वहीं मुड़कर अपने पाओं से उस शान्त और विशुद्ध जल को गँदला करदेते हैं। शुद्ध जल को पान करने का वह यही फल जलाशय या नदी को देते हैं, परन्तु नदी का व्यवहार कैसा प्रशंसनीय होता है। वह तत्काल ही उस गँदले जल या कीचड को बहा कर ले जाती और उस स्थान पर फिर निर्मल और विशुद्ध जल को पहुँचाती है ताकि वही घोड़ा या अन्य कोई प्राणी अपनी प्यास को बुझासके। ऐसा ही मनुष्य को करना चाहिये। यदि मनुष्य के पवित्र हृदय में दान करने की निर्मल शक्ति का स्वादु स्रोत प्रवाहित हो रहा हो, तो वह निरन्तर और स्वतः ही वेग से बहेगा; चाहे उस से लाभ-उठाने वाले कृतज्ञ हों अथवा कृतघ्न हों;

जैसे वह कृषिकर मूर्ख कहलाता है जो ऋतु से पूर्व ही अपने बीज को वपन करता है इसी प्रकार दानी को भी हम मूर्ख ही कहेंगे जो देश, काल और पात्र को देखे विना दान देना आरम्भ कर देता है। भारतवर्ष में आज भी धर्म के नाम पर करोड़ों रुपयों का दान हो रहा है, परन्तु देश, काल और पात्र को देखे विना देने से संसार में पाप बढ़ रहा है। जिस देश में दान प्रणाली का सुधार हो गया वह देश सभ्यता के उच्चैस्तम शिखर पर जा पहुंचता है। करुणा का वास्तविक रूप वही श्रेष्ट है जहां पतितों का उद्धार हो और दुखियों के दुखों का ह्रास हो। मनुष्य अधिदैविक, आध्यात्मिक और आधिभौतिक तीन प्रकार की व्याधियों से पीड़ित हो रहे हैं, हमें उनके तीनों प्रकार के क्लेशों को दूर करना है। इस व्याधि को दूर करने में वही समर्थ होसक्ते हैं जो स्वयम इन रहस्यों को जानते हों और जिनके मन में अपने मंगल और दूसरों की सहायता करने की शुद्धाग्नि प्रज्वलित हो चुकी है। दान क्यों किया जावे? यह प्रश्न प्रायः उठाया जाता है, हम कहते हैं दूसरों के कल्याण या दुख को कम करने और अपने मंगल के लिये दान करना चाहिये। जिन्हें परोपकार के उच्चभाव अपील नहीं करते उन्हें अपने मंगल के लिये दान करना अभीष्ट होगा। हम सुन्दर वस्त्र पहिनते, अपने शरीर को सुदृश्य बनाते, उत्तम मकानों को तय्यार करते, चित्रों से स्थान को अलंकृत करते और ऐसी ही अन्य अनेक वस्तुओं पर व्यय करते हैं, आखिर यह सब किस लिये केवल इसी लिये कि समाज में अन्य व्यक्तियों से हमारा मान अधिक हो, हम सभ्य श्रेणी में प्रतिष्ठित माने जावें और हमारा जनता में सन्मान तथा आदर हो, तो क्या दान करना हमारे लिये मंगल कारक न होगा? हम एक दरिद्री परिवार के दुःख को घटाते, एक प्यासे और बिभूक्षित को जीवित करते, एक निराश्रय विद्यार्थी को सहारा देकर जीवन के उच्चपथ पर चलाते हैं, अथवा एक दुखित व्यापारी को धन देकर ईमानदारी से व्यापार करने को प्रोत्साहित करते हैं तो क्या इन कार्य्यों से हम अपने आप को अधिक माननीय नहीं बनाते, निस्सन्देह यह और ऐसे ही अनेक दान के उत्तम कार्य्य हमारे लिये सच्चे सन्मान के पथप्रदर्शक बनते हैं और यह मान, यह आदर चिरस्थायी भी

होता है। पहिले उपकरणों द्वारा जो हमें समाज में आदर मिलता है वह दूसरों के विचारों का फल है परन्तु यह आदर हमारे अपने हृदय के प्रवाहित स्रोत की एक सुरभित छटा है। विचारें तो ज्ञात होगा कि जो धन दान में नहीं जाता वह कलङ्क का हेतु बनता है। बादशाह आसवेल्ड के सम्बन्ध में बतलाया जाता है कि एक दिन जब वह भोजन करने लगा था, तो उसके कानों में दरिद्रियों का आर्तनाद पहुंचा। पूछने पर पता लगा कि बाहर भीख मांगने वाले दरिद्री खड़े हैं उसने उसी समय भृत्य को आज्ञा दी कि अन्न और वह तमाम बर्तन जो मुझे दिये गये हैं— भिखारी लोगों में इसी समय बांट दिये जावें। उसने मौखिक करुणा का भाव नहीं जतलाया, उसने अन्य लोगों के समान यह भी नहीं कहा कि परमात्मा तुम्हारी रक्षा करें या परमात्मा तुम्हें सुखी करें, किन्तु जो कुछ उस समय उसके पास था दे दिया। हमारे शास्त्रों में दान का बड़ा माहात्म्य लिखा है। प्रातः स्मरणीय महाराज हरिश्चन्द्र के दान की कथा किस भारत निवासी को ज्ञात नहीं। राज्य पाट छोड़ा, आत्मीय बन्धुओं से वियोग हुआ, चाण्डाल की सेवा की परन्तु दान दिया और वचन को पूरा किया। राजा करण की दन्तकथा कितनी सुप्रसिद्ध है। शब्द चाहे कितने करुणा रस से परिपूर्ण हों वह नग्न पुरुषों के नंग को दूर नहीं कर सक्के, चाहे कैसे मृदुता से परिप्लुत हों वह भूख की क्षुधाग्नि को शान्त नहीं कर सक्के, चाहे कितने उत्साह वर्द्धक हों, वह शीत से पीड़ित पुरुष को उष्णता प्रदान नहीं कर सक्के, चाहे कितने स्निग्ध हों, वह व्रणों का शल्य नहीं कर सक्के, चाहे कैसे स्पष्ट और स्वतन्त्र हों वह पुरुषों को मुक्त और रोगियों को नीरोग्य नहीं कर सक्के। करुणा का भाव मन्तव्य में नहीं कर्त्तव्य में निहित है। करुणा के प्रदर्शन से हम दूसरों को ऊर्द्ध गति की ओर लाना चाहते हैं। हम दुखियों के दुखों को कम करना चाहते हैं और अपनी निहित शक्तियों को उत्कृष्ट बनाना चाहते हैं। यह सत्य है कि कष्टों के बिना कोई मनुष्य उठ नहीं सक्ता। तप ही मनुष्य के लिये प्रधान साधन है। तप द्वारा कठिन से कठिन कार्यों में सिद्धि प्राप्त होती है। अशान्त समुद्र और प्रचण्ड वायु ही मल्लाहों के बल को बढ़ाता है। पक्षी की तीव्र गति को रोकने वाली

कोई वस्तु वायुमण्डल तथा आकाश में हो सकती है तो वह वायु ही है परन्तु यदि आकाश में से वायु को निकाल लेवें खला में पक्षी को उड़ावें तो क्षण भर के लिये भी नहीं उड़ गा। जो तत्व वेग पूर्वक उड़ने में बाधक है वही साधक भी है, कितने संस्कारी मनुष्य हैं जो उच्च भावों को धारण करते भी अपनी शक्तियों का स्वयम विकास कर सकें। थोड़े से से हताश होकर वह मनुष्य जीवन को व्यर्थ गंवाते और र तो आत्म हत्या तक कर बैठते हैं। कितने आत्मा हैं जिन्हें मीकि के सदृश समय पर उपदेश मिल गया और उनका जीवन र गया। कितने मनुष्यों ने दूसरों के अन्धकार को मिटाने के अपने ज्ञानरूपी दीपक से उनके दीपकों को प्रज्वलित कर या। मनुष्यों में अनेक उत्तमोत्तम शक्तियां विद्यमान हैं जिन्हें दि थोड़ा सा आश्रय या सहारा मिल जावे तो किसी भी अवस्था विकसित होकर संसार का भला कर सकती हैं। यदि वही क्तियां विश्रामावस्था में हों तो न केवल उन मनुष्यों का कल्याण होता किन्तु जाति या देश भी अवनति की अतिहीन दशा को न होता है। हमने इस देश के लोगों को मूर्ख रक्खा और स्वार्थ उनके आत्माओं को विकसित नहीं होने दिया फल यह हुआ सारा देश दरिद्री होगया। विपरीत इसके जहां विद्यारूपी दिया गया और दरिद्री से दरिद्री पर करुणा की वृष्टि हुई व्यक्तियां सुधर गईं और देश भी उन्नति के उच्च शिखर जा पहुंचा। एक ओर भारतवर्ष का कूली ।) कमाता है तो का कूली ४) रुपये कमाता है। यह संयोग वश नहीं किन्तु अपने कर्म्मों का फल है।

संसार में क्रिया और प्रतिक्रिया सर्वत्र दृष्टिगोचर होती हैं। ा से बाह्य मङ्गल के अतिरिक्त हमारा आत्मिक मङ्गल भी है। एक बार अमरीका के बनों में वहां के निवासियों ने गोरों स्ती पर आक्रमण किया, अनेक लोगों को बद्ध कर दिया और कर ले गये। उनके सङ्ग एक स्त्री थी जिसने एक गौरांग को बचा लिया और सुरक्षित घर ले आई। यह बालक बच्चों में खेलता रहा। इसका आहार व्यवहार भी वैसा गया, हां, कुछ रंग में अवश्य अन्तर था। कई वर्षों के अन- गोरों ने उस युवक को देखा और पकड़ कर वापिस लाये।

वह इंगलैण्ड में पहुंचा। विद्या प्राप्त की और मिशनरी बन कर फिर अमरीका में पहुंचा और सहस्रों मनुष्यों को विद्या दान देने में कृतकार्य्य हुआ। करुणा के भावों द्वारा मनुष्यों को सुधारने की विधि निम्न लिखित दृष्टान्त से स्पष्ट हो जायगी। फाराडे एक बड़ा प्रसिद्ध वैज्ञानिक हुआ है, इनके रसायनगृह में एक भृत्य कार्य्य कर रहा था। अकस्मात उसके हाथ से चान्दी का एक ग्लास गिर गया और वह तेज़ाब के कुण्ड में जा पड़ा। उसके देखते देखते ग्लास तेज़ाब में हल हो गया। उसने निकालने की बड़ी कोशिश की, परन्तु वह न मिला। प्रश्न उपस्थित हुआ कि क्या कभी वह ग्लास अब मिलेगा। वैज्ञानिक फाराडे जब भीतर आया तो भृत्य ने अपनी मूर्खता और ग्लास के गिर कर गुम हो जाने का वृतान्त सुनाया। फाराडे ने कुछ औषधियां तेज़ाब में छोड़ दीं और तत्काल चांदी के बारीक २ अंश पृथक होगये। उसने उन्हें निकाल लिया और एक स्वर्णकार के पास भेज कर पुनः चांदी का ग्लास बनवा लिया। इसी प्रकार लाखों नवयुवक पाप के जीवन में गिर कर अपने मनुष्यत्व तक को गँवा बैठते हैं। यदि उन पर करुणा की दृष्टि की जावे, उन्हें दुख के अपवित्र जीवन से निकाल कर बाहर लाया जावे और उन में उत्तम संस्कारों का संचार किया जावे तो वह पुनः सुधर सकते और उत्तम कर्मों तथा सदाचार द्वारा अपने जीवन को उपयोगी बना सकते हैं। जीवन को उत्तम बनाना कठिन कार्य्य है, हां, बिगाड़ना अति सुगम है। आज कल बहुत से नवयुवक पाठशालाओं में अपने आप को तबाह कर देते हैं। उनके माता पिता समझते हैं कि पढ़ने और अधिक मेहनत करने का फल है, परन्तु अज्ञान वश वह नहीं समझते कि बालक सृष्टि नियम के विरुद्ध चलता और अपने बल वीर्य्य को स्वयम नाश कर रहा है। वह गुमराह है और कुसंगति में पड़ गया है। उसका मुख कमल मुरझा जाता, आंखें बैठ जातीं, रङ्ग स्याह पड़ जाता और सारे शरीर में सुस्ती और आकृति में भीरुपन के लक्षण दृष्टिगोचर होने लगते हैं। यह लक्षण ही कह रहे हैं कि नौजवान किसी आवश्यक नियम का भङ्ग कर रहा है। वह छिप कर अपना नाश करता है। तिस पर भी उसके अज्ञानी मित्र और सम्बन्धी कहते हैं कि अधिक मेहनत के कारण दुर्बल होता जा

है। कैसा भद्दा और निरार्थिक परिणाम है? वह नवयुवक अपने जीवन के स्निग्ध स्रोत को शुष्क कर रहा है और थोड़े ही काल में मट्टी में मिल जावेगा। उसकी मानसिक तथा शारीरिक शक्तियां निर्मूल होती जा रही हैं परन्तु उसके अज्ञानरूपी अन्धकार को मिटानेवाला प्रकाश नहीं मिलता। इस प्रकार कोटिशः विद्यार्थी दुखित हो अपने जीवन को मलयामेट कर रहे हैं। सज्जनों का कर्तव्य है कि वह इन दीन दुखियों पर करुणा करें और उन्हें कुसंगति से हटा सत्सङ्ग के मार्ग पर चला दें। स्वयम पवित्र बन इन अपवित्र आत्माओं का सुधार करें। प्राचीन साहित्य में एक गाथा मिलती है। एक साधु किसी पर्वत की गुफा में रहता था। वह रात दिन प्रार्थना करता, व्रत रखता और तप किया करता था ताकि उसका जीवन शुद्ध हो और वह मुक्ति का भागी बने। एक रात उस ने विचार किया कि यदि मुझे किसी ऐसे सच्चरित्र महात्मा के दर्शन हो जावें जो मुझ से उन्नत और पवित्र हो तो मैं उसका सत्सङ्ग करूं और उसके पुनीत चरणों में बैठकर शिक्षा ग्रहण करूं। एक महात्मा ने उसे बतलाया कि अमुक भिक्षु ऐसा है जो तुम्हारा उद्धार कर सक्ता है। वह खोजता २ उस भिक्षु के पास पहुंचा। देखता क्या है कि वह भिक्षु बड़ा दरिद्री है और घर घर भीख मांगकर जीवन यात्रा को व्यतीत कर रहा है। साधु ने समीप जा कर पूछा। महात्मन्! आपने कौन सा साधन किया जिससे आप परमात्मा के प्यारे और कृपापात्र बन गये। महात्मा ने उत्तर दिया 'ऐसी न करो, महाराज! मैंने तो ऐसा कोई भी कार्य नहीं किया और न मैं इस योग्य हूं कि आप से साधु मेरे आगे सिर झुकावें। दर दर घूमता हूं। लोगों को गाकर सुनाता, उनके मनों को बहलाता और अन्न लेकर चला आता हूं।' साधु ने पूछा, कि यदि आपने कोई प्रशंसनीय कार्य नहीं किया तो आपकी ख्याति कैसे हुई और आप भिक्षु क्यों बने? महात्मा ने उत्तर दिया, कि मैं धनी था, एक दिन एक दुखित और पीड़ित स्त्री को देखा जो घबराकर और भयभीत हो इधर उधर भागती फिरती थी क्योंकि उसके पुत्र और पति ऋण के कारण बिक चुके थे। उसका कोई भी संरक्षक न था, वह स्वयम अतीव सुन्दरी थी और घबराकर ऐसे जा रही थी मानों उसका रोम २ सुरक्षित स्थान

पाने के निमित प्रार्थना कर रहा है। मैं उसे अपने गृह में ले आया, उसकी रक्षा की और जो कुछ सम्पत्ति मेरे पास थी उसे ऋण से मुक्त कराने के लिये दे दी। उसके पुत्र और पति छूट गये और वह सुखपूर्वक अपने गृहस्थ धर्म को पालने लगे। यह एक ऐसा साधारण कार्य था जो कोई भी कर सक्ता था। वृद्ध साधु की आंखों में आंसू भर आये और कहने लगा "कि मैं ऐसा खराब मनुष्य हूं कि मैंने अपने जीवन में इतना भला कोई भी कार्य नहीं किया"। करुणा के भावों में ही कर्म योग की उपयोगी शिक्षा मिलती है। वस्तुतः यश के जीवन के सामने धन और सम्पत्ति निकम्मी वस्तुएं बन जाती हैं और इसी द्वारा मनुष्य सर्व साधारण का प्रेमपात्र और विश्वास का भाजन हो जाता है।

वेस्ट वर्जिनीया में एक बार यात्रा करते हुए एक मनुष्य किसी गृहस्थी के घर पहुंचा और अपने तथा अपने साथियों के लिये भोजन मांगा। जब खा चुका तो उसने कीमत देनी चाहा। गृहिणी ने कहा कि केवल इस मेहरबानी के कार्य के लिये धन के स्वीकार करने में हमें लज्जा होती है, हम नहीं लेंगे। उसने मूल्य देने पर बहुत आग्रह किया। तब उसे देवी ने उत्तर दिया, "यदि आप हमें पतित न मानें तो हम केवल एक शिलङ्ग आप से लेना स्वीकार कर लेंगे और वह भी इस लिये कि हम सिक्के को कभी २ देख सकें क्योंकि इस गृह में एक वर्ष से कोई भी सिक्का नहीं आया" दया के भावों से प्रेरित होकर दरिद्री मनुष्य भी जब करुणा के सद्भावों को धारण कर सक्ता है तो फिर धनि और मानी पुरुषों को तो कहना ही क्या। हमारे देश में फलगू नदी के समान अनेक स्थान और नदियां हैं कि जिनका जल बालू के नीचे प्रवाहित हो रहा है। इसी प्रकार अनेक धनी मानी हैं जो अपने दान को छिपकर दे रहे हैं। फलगू का पानी यद्यपि दृष्टिगोचर नहीं होता परन्तु कोई इन्कार नहीं कर सक्ता कि यह उसी अंतर्निहित जल का प्रभाव है कि नदी के दोनों ओर हरे भरे खेत नज़र आते हैं, इसी प्रकार लाखों दुखिया नर नारी इस प्रकार के गुप्त दान से पल रहे हैं परन्तु प्रश्न है तो यह कि क्या इसे अधिक उपयोगी नहीं बनाया जा सकता?

दुखियों पर करुणा प्रगट करने के अनेक अवसर हमे मिलते

है। हमारा आत्मा हमें सर्वदा सूचित करता रहता है। हम चाहे ध्यान करें या न करें। रोगी हों अथवा नीरोगी, सुखी हों अथवा दुखी, धनी हों अथवा दरिद्री हर समय यह सच्चा सेवक हमें ही करुणा के भावों को दिखलाने के लिये सूचना देता रहता है। यदि हम किसी गहरे गड्ढे में पत्थर फेंकें तो आकर्षण शक्ति के नियमों के अनुसार वह शीघ्र २ नीचे जाती है। यदि पहले सेकण्ड में १६ फीट जाता है तो दूसरे सेकण्ड में ४८ फीट नीचे जायगा, तीसरे सेकण्ड में इस की गति १४४ फीट हो जावेगी और ज्यों २ नीचे जावेगा यह गति बढ़ती ही जावेगी। ठीक इसी नियम के अनुसार यदि दया और करुणा के भावों का बीज हमारे हृदय में अंकुरित होजावे तो जहां प्रथम उसकी गति मन्द होगी ज्यों २ वह बढ़ेगा यह गति तीव्रतर और तीव्रतम होती जाती है और हमारे अन्दर उच्च भाव उत्पन्न होते जाते हैं। हां, आकर्षण शक्ति यदि नीचे की ओर खैंचती है तो करुणा शक्ति हमारे आचरणों को ऊपर की ओर ले जावेगी। आवश्यक्ता है तो यह कि हम देश, काल और पात्र को देखें। यह अवस्था सर्वदा हमारे समीप रहती है। परमात्मा ने सारा जगत ही हमारे निमित्त बनाया है। उसकी समग्र शक्तियां प्रयोग में लाई जाने के लिये मनुष्यों की प्रतीक्षा करती हैं। आवश्यक्ता है कि हम पहिले यह देखें कि जगत में किस वस्तु की ज़रूरत है और फिर उसकी पूर्ति के लिये चेष्टा करें। कल्पना करो कि हमारे देश में विद्या के प्रचार की आवश्यक्ता है। ६० फी सदी जनता अज्ञान ग्रसित हैं। कुमार तथा कुमारियां इस देश में विद्या भूषणों से वञ्चित हो अपना जन्म निरर्थक गँवा रहे हैं। अतः इन्हें शिक्षित बनाना अथवा उन बन्धनों को दूर करना उचित जो विद्या में प्रतिबन्धक बन रहे हैं। करोड़ों रुपया देश का दान जाता है। यदि यह दान विद्यावृद्धि में व्यय हो तो देश भर का कल्याण हो। एक द्वीप में एक बार अंग्रेज़ों की फौज गई। वहां नितान्त शिक्षा का अभाव था। एक दयालु सिपाही के मन में करुणा भाव उत्पन्न हुए। उसने एक द्वीप निवासी को इस शर्त पर पढ़ाना स्वीकार किया कि वह पढ़कर दूसरे को पढ़ा दे और दूसरे प्रतिज्ञा करावे कि वह एक और को पढ़ा दे। गुलामों के मालिक उस पढ़नेवाले पुरुष को कई बार कोड़ों से पीटा और पढ़ने तथा

पढ़ाने से रोका परन्तु वह दृढ़ रहा।

वहां से उस सिपाही की तबदीली दूसरे द्वीप में होगई, उसने वहां भी यही कार्य्य किया और जब गुलामों की तजारत निषिद्ध होगई तो ज्ञात हुआ कि उस दयावान सिपाही के द्वारा ६०० मनुष्य पढ़ने लिखने के योग्य बन गये थे क्योंकि एक ईसाइयों की सभा ने पढ़े लिखों में अंजील बांटी और शिक्षित पुरुषों की गणना कर ली थी। जब एक सिपाही थोड़े वर्षों में ६०० मनुष्यों को शिक्षित बना सक्ता है तो यदि इस देश के ५२ लाख साधु और लाखों शिक्षित सज्जन तथा पण्डित चेष्टा करें तो अपने देश को क्यों न शिक्षित बना डालें, परन्तु दुख है तो यह कि लोगों के वज्रादपि कठोर हृदय में करुणा धर्म का अंकुर कुम्हलाया हुआ है और देश में सदाचार निर्माण की नींव बहुत कच्ची और अस्थिर है। सुप्रसिद्ध विद्वान लेके ने लिखा है कि सब से प्रथम हस्पताल फेब्याल नाम्नी देवी ने चतुर्थ शताब्दि में खुलवाया था। हमारे देश में तो अशोक के समय में अनेक अस्वास्थ्यपाल विद्यमान थे और अब यदि चिकित्सा तथा दुखियों के दुख दूर करने वालों की गणना की जाती है तो जाहन हावर्ड और मिस फ्लारन्स नाईटिङ्गेल का नाम परोपकारी पुरुषों की श्रेणी में देदीप्यमान हो रहे हैं। जिस क्रीमिया वार में देवी नाईटिङ्गेल ने रोगियों की सेवा की उस युद्ध के सेनापतियों के नामों तक से लोग अपरिचित हैं परन्तु करुणा की देवी का शुभ नाम आज संसार मात्र में उज्ज्वल तारे के समान चमक रहा है। उस की विद्यमानता में सिपाहियों के आधे क्लेश दूर हो गये थे। इस देवी के बतलाए हुए मार्ग पर आज जगत की सभी सभ्य समाजों ने (Red cross society) के समान सभाएं बनाई हुई हैं। करुणा की इस साक्षात देवी ने दुखियों के क्लेशों को दूर करने के निमित्त जो प्रकाश दिखलाया उसके नीचे आज लाखों देवियां कार्य्य करने पर उद्यत हो रही हैं। जेनरल बूथ की मुक्ति फौज करुणा रस को धारण किये हुए जगत भर में माधुर्य्य की वृष्टि कर रही है। जगत के इतिहास में ऐसे नर नारियों के वृतान्त भी मिलते हैं जिन्हों ने करुणा के कारण अपने प्राणों तक को न्योछावर कर दिया। पारलीमेन्ट में जब इंग्लेण्ड के प्रधान अमात्य मिस्टर ग्लेडस्टन ने राजकुमारी एलिस

की मृत्यु का वर्णन किया, कौन पाषाण हृदय था जो कम्पित न हो गया हो। राजकुमारी का सुकुमार बालक डिफथीरिया के रोगसे आक्रान्त हुआ। डाक्टरों ने राजकुमारी को समझाया कि बालक के विषैले सांस के समीप मत जाना। बच्चा तीव्र ज्वर के कारण सन्निपात से उछल रहा था, ममता की मारी माता ने दुखी बालक को अपनी गोद में उठाया और उसके गरमी से धधकते हुए माथे को चूम लिया। बालक ने अपने बाहू माता के गले में डाल दिये और करुणा भरे शब्दों से कहा, "माता! मुझे प्यार करो!" माता उस करुणा रस के सामने डाक्टरों की शिक्षा का विस्मरण कर गई और बच्चे से प्रेम करने लगी। उसने अपने होंठों को बच्चे के उष्ण मुख पर धर दियां और अपने प्राण खो दिये। करुणा का इस से उच्च दृश्य क्या हो सक्ता है? जगत में ऐसी ही शुभ व्यक्तियों के चरित्र स्थायी रहते हैं। जब क्रीमियां के युद्ध के पश्चात लार्ड स्ट्रेटफोर्ड ने लन्डन में एक भोज दिया तो वहां यह प्रस्ताव उपस्थित हुआ कि हर एक व्यक्ति एक काग़ज़ पर उस व्यक्ति का नाम लिखे जिसने उसके विचारानुसार सब से अधिक उपयोगी सेवा की हो। जब स्लिप पढ़े गये तो हर एक ने कुमारी फ्लारन्स नाईटिङ्गेल का शुभ नाम लिखा था।

जब कभी कोई यात्री हिमालय पर्वत के पुनीत शिखरों पर जाता है और उस समय ध्यान करता है जब सूर्य्य अस्त होगया हो, सन्ध्या और तदनन्तर अन्धकार आरम्भ हो चुका हो, उस समय नन्दा देवी जैसी चोटियां अन्धकारमय जगत में भी उठी हुई प्रतीत होती हैं और तिरोभूत सूर्य्य के प्रकाश में से कुछ द्युति को ग्रहण कर उसका विस्तार करती हैं, उसकी गुलाबी प्रभा जिसका वर्णन अत्यन्त दुस्तर है ऐसी चमकती है मानों वह आनन्द के केन्द्र का द्वार बनी है। इसी प्रकार मनुष्यों के जीवन में जीवन रूपी सूर्य्य के अस्त होने के समय उपकार के संस्कार दिव्य प्रकाश को धारण करके जीवन के अत्यन्त अन्धकार युक्त कर्मों के दरम्यान देदीप्यमान होकर अपनी उत्तम ज्योति का विस्तार करते हैं और जब अन्य सब कर्म विस्मरण हो जाते हैं तो यही संस्कार दिव्य रूप चमकते और मृत्यु रूपी रात्रि के आने के भय को नितान्त दूर कर देते हैं। इस प्रकार दुखियों पर करुणा करने से हम अपने

अन्दर धर्म के उच्च भावों का संचार कर सक्ते हैं, परन्तु सुखी, तथा दुखी मनुष्यों के अतिरिक्त पुण्यात्मा तथा पापात्मा पुरुष भी हमें मिलते हैं उनसे कैसे व्यवहार करना चाहिये इसे आगे बतलाते हैं।

मुदता-सदाचार निर्माण का तीसरा साधन।

पुण्य कर्मों से ही मुदत्ता (Happiness) की प्राप्ति होती है। इस का आधार अभिरुचि है न कि वस्तु विशेष। हमें मुदत्ता, प्रसन्नता या आनन्द की परीक्षा उस समय होती है जब किसी अभीष्ट को उपलब्ध करलेते हैं न कि उन वस्तुओं के प्राप्त करने से जिसे दूसरे अभीष्ट समझते हों। मुदत्ता कोई ऐसा भाव नहीं जिस की कि हम खोज करें। हमें उचित है कि हम शुभ कर्म करें मुदता के उत्तम भाव स्वयम उपजेंगे। यदि शुभ कर्मों के करने से मुदत्ता, सुख या आनन्द मिले तो हमारा जीवन मधुर बन जायेगा, यदि न प्राप्त हो तब भी जीवन सह्य होगा न कि कटु, क्योंकि हमारे अन्दर पुण्य कर्म करने के संस्कार उपस्थित हैं और वह हमारे जीवन को कदापि असह्य न होने देंगे इस रहस्य मय जीवन में आनन्द केवल परमात्मा के दत्त पदार्थों में नहीं मिलता किन्तु इन अनन्त पदार्थों से ऊपर पदार्थों के स्रष्टा को अनुभव करने में वास्तविक आनन्द है क्योंकि वह स्वयम आनन्द का केन्द्र है। मनुष्य जब परमात्मा को अपना लेवे तो जगत के समग्र पदार्थ उस की सेवा में उपस्थित होजाते हैं। परमात्मा प्रेम का केन्द्र है अतएव उसे प्रेम करना, उस की सृष्टि के प्रत्येक जीव जन्तु से प्रेम करना मानों उसे प्रेम करना है और जो व्यक्ति प्रेम करता अथवा प्रेम का पात्र बनता है सच्चा आनन्द उसी के भाग्य में होता है। एक विद्वान ने कहा है कि पवित्र बनने में ही आनन्द है। जो आनन्द के केन्द्र हैं वह पवित्र हैं और जो आनन्द का पात्र बनना चाहता है उसे भी पाहिले पवित्र जीवन बनाना चाहिये। यूनान के सुप्रसिद्ध विद्वान प्लुटार्क ने लिखा है कि मुदता की वह अवस्था सब से उत्तम है जब हमारे पास व्यर्थ की अधिक वस्तुयें न हों और जिन वस्तुओं की अत्यन्त आवश्यकता

है उन का अभाव न हो। मनुष्य का शरीर इस ब्रह्माण्ड की अनुकृति है। जो रचना इस जगत की है वही रचना हमारे शरीर में विद्यमान है। आओ, इस मनुष्य देह की अद्भुत रचना पर दृष्टि डालें। जो अन्न का ग्रास हम खाते हैं, उसे हम दांतों से काटते, पीसते और पट्ठों से मुहं के अन्दर ले जाते हैं। इस में पांच स्राव मिलते हैं तब जाकर रस बनता है। आंतों में लाखों चूसने वाले बारीक २ कुल्ली इस रस को चूसते और सावधानी से एक रक्त की लाल नदी में गिराते जाते हैं। वह रक्त की नदी हृदय रूपी कुण्ड में आती, फेफड़ों की शुद्ध वायु से शुद्ध होती और फिर पवित्र होकर मनुष्य देह में घूमती है। बीसों कारखाने स्थानों में उपस्थित हैं और वह उस ग्रास के रस की प्रतीक्षा कर रहे हैं। ज्यों ही वह रस उनके पास पहुँचता है, वह जादू के समान अपना भाग लेकर उसे परिवर्तित रूप में परिणत कर देते हैं। कहीं हड्डियां बनने लगती हैं, कहीं पेशियां बन जाती हैं, कहीं आम रस बनता है और कहीं पित्त बन जाता है, कहीं नसें बनतीं और कहीं दिमाग की शिराएं निर्मित हो जाती हैं। हम उस क्रम को समझ ही नहीं सक्ते कि जिस से ग्रास का भाग पेशी में पहुंचता और पेशी ही बन जाता है। अथवा दिमाग में पहुँचता और विचार शक्ति में परिणत हो जाता है,यद्यपि हम उस समग्र रचना से परिचित नहीं तथापि इतना हम अवश्यमेव जानते हैं कि अन्न के अभाव से जब क्षुधा हो जहां शरीर शिथिल पड़ जाता है,बल की न्यूनता प्रतीत होती है वहां दिमाग भी काम करने से विमुख होजाता है और हम यह भी जानते हैं कि यदि हम ध्यानपूर्वक उत्तम आहार न खावें अथवा सावधानता पूर्वक न खावें या जब तक हम अपना तथा शरीर के द्वारा उत्तम पाचनशक्ति को न रख सकें तब तक हम महापुरुषों के समान महान कार्य्यों के सम्पादन करने के भी योग्य नहीं हो सक्ते। परमात्मा ने निस्सन्देह हमें आश्चर्य्य जनक कला प्रदान की है। विचारिये! कि किस प्रकार का वह यन्त्र होगा जो गन्दे जल के तालाब को शुद्ध करके ऐसा निर्मल और पवित्र बनादे कि वह फिर पीने के काम में लाया जा सके और वह भी सेकंडों में। मनुष्य शरीर रूपी अद्भुतकला तो ऐसी निर्मित हुई है। स्याह और मलिन रक्त कि जिस में पेशियों

की भस्म और खराब हुए दिमाग के खानि की मेल पड़ी है वह हमारे फेफड़े में आकर पहुंचता है, प्राणों द्वारा शुद्ध वायु को हम भीतर पहुँचाते और वह इसे शुद्ध, चमकीला और लालवर्ण का रक्त बना देता है। इस रक्त की नदी में चलने वाले रक्त की प्रत्येक बून्द के अन्दर लाखों कीटांश रहते हैं इसी बून्द की रचना में हमारे जीवन की सफलता अथवा निष्फलता के रहस्य गुप्त रहते हैं। इन्हीं में हमारे जीवन की उच्चता की सामग्री विद्यमान है। हां, यहां ही हमारी आशाएं, हमारे भय, हमारा उत्साह, हमारा भरिुपन, हमारा तेज, हमारा पराक्रम, हमारी शिथिलता और हमारा बल, हमारा स्वास्थ्य और हमारे रोग उपस्थित रहते हैं। इसी खून की बून्द में से हमारी नसें, हमारी हड्डियां, हमारा दिमाग, हमारे स्वरूप और हमारे कुरूप उपजते हैं। इसी बिन्दु में सज्जनता अथवा दुर्जनता के भाव निहित हैं। इसी के द्वारा पापी और पुण्यात्मा मनुष्यों के संस्कारों का आविर्भाव होता है। जब यह अवस्था है तो कितना आवश्यक है कि हम शारीरिक उन्नति के नियमों को समझें और उनके अनुकूल अपने आचरण बनावें। परमात्मा उसी को अमूल्य पदार्थ प्रदान करते हैं जो उनका प्रयोग करना जानता है। सृष्टि के भण्डार में अनन्त सामग्री है। वह प्रत्येक को आज्ञा देता है कि जितनी आवश्यकता हो उतनी वस्तु को ले लो, परन्तु जो उन्हें प्रयोग में नहीं लाता परमात्मा उनके पास उन वस्तुओं को नहीं रहने देते। यदि आप भारतवर्ष के नांगों के समान हाथ को उठाय रक्खें और उसका प्रयोग महीनों नहीं बर्षों तक न करें तो हाथ के पट्ठे नहीं बनेंगे और हाथ सूख जावेगा। हां, यदि फिर विचार पूर्वक उसी हाथ को प्रयोग में लाया जावे तो सृष्टि नियमों द्वारा जो वस्तु छिन गई थी वह फिर मिल जाती और हाथ पैर के पट्ठे आ जाते हैं। यदि हम इसी प्रकार अपने मन को बेकार छोड़ दें या दिन रात सुस्त पड़े रहें तो हमारे शिर में से दिमाग का अस्तित्व ही जाता रहेगा, कारण यह कि हम उसे प्रयोग में नहीं लाए। लोहार एक हाथ को प्रयोग में लाता है वह हाथ उसका मोटा हो जाता है परन्तु दूसरा छोटा हो जाता है। आप चाहें तो अपनी सारी शक्ति किसी एक शक्ति को उत्कृष्ट बनाने में लगा दें, परन्तु ध्यान रहे कि दूसरी शक्तियां

...प्रकार अवश्यमेव शिथिल पड़ जावेंगी।

...तोपनिषद् में जहां परमात्मा को साक्षात् करने की विधि ...लाई है वहां जतलाया है कि "स यदा तेजसा अभिभूत:" कि ...मनुष्य तेज से अभिभूत होता है तभी वह आत्मा के अस्तित्व ...अनुभव कर सक्ता है। आपने फोटोग्राफर को देखा होगा। उस ...कैमरा के आगे जो शीशा होता है उसे (lens.) लेन्स कहते हैं। ...शीशे के मध्य भाग में बाहर की किरणें एकत्रित होती हैं। ...अनन्त किरणों को पाकर एक मध्यवर्त्ती स्थान में से ...ज़रता है। अन्दर जब किरणें एक मरकज़ से गुज़रती हैं उस ...समय एकत्रित हो जाने के कारण उनमें बड़ा तेज उत्पन्न होता है। ...किरणें फिर फैलतीं हैं और अन्दर के मसाले वाली प्लेट ...पड़ कर उन्हें याथातथ्य वही रूप और चेष्टा के संस्कार ...पहुंचाती हैं जो बाहर थे। यही फोटोग्राफी का रहस्य है। लेन्स ...किरणों को एक मरकज़ पर लाने की शक्ति विद्यमान है और ...जिस हुनर से यह कार्य्य सम्पादित होता है उसका नाम फोटो-...ग्राफी है। ठीक इसी प्रकार मनुष्य में बाहर की शक्तियों को ...एकाग्र करने की शक्ति विद्यमान है और जिस हुनर से शक्तियों या ...वृत्तियों को एकाग्र किया जाता है उसी का नाम योग फिलासफी है। ...योग शास्त्र की बताई हुई विधि के अनुसार जब मनुष्य अपने ...होने वाले सारे तेज को समेट लेता और एक मरकज़ अथवा ...स्थान पर समाधि लगाता है तब वह तेज से अभिभूत हो जाता ...है जिस विषय का अनुभव या साक्षात करना चाहता है कर ...सकता है। जब मनुष्य इस शक्ति को समान अंश में प्रयोग में लाता ...है तो उसकी आत्मिक, मानसिक और शारीरिक शक्तियां उत्कृष्ट ...होती हैं। जब वह किसी एक शक्ति पर ध्यान देता है तो दूसरी ...शक्तियां मन्द पड़ जाती हैं जिन्होंने प्रोफ़ेसर राममूर्त्ति के समान ...अपनी शक्तियों को शारीरिकोन्नति में लगा दिया उन से आप ...महापुरुषों की सी आत्मिकोन्नति की आशा कदापि नहीं रख ...सकते। स्वास्थ्य, बल और आयु यह सब अटल नियमों पर निर्भर ...हैं। प्रथम तो हमारे माता पिता और दूसरे दर्जे पर स्वयम हम ...इनके लिये उत्तरदाता हैं। महात्मा सेनिका ने क्या उत्तम कहा ...है परमात्मा ने हमें चिरकाल तक जीने के योग्य बनाया है, परन्तु

हम अपने जीवनों को स्वयम अल्प कालीन बना देते हैं। हम नित्यप्रति प्रातः और सायङ्काल सौ वर्ष पर्य्यन्त जीने और अदीन रह कर जीने की प्रार्थना करते हैं, परन्तु कितने हैं जो वस्तुतः अपने जीवनों को नैसर्गिक नियमों के अनुकूल चलाते और सौ वर्ष पर्य्यन्त जीवित रहते हैं। आप उस मनुष्य को क्या कहेंगे जिसके हाथ में एक सुन्दर और अद्भुत घड़ी है जो शीत और उष्णता को बतलाती है और जिसे उसने सड़क के किनारे धूली और वृष्टि में नंगा रख दिया है ? आप उस गृहस्थी को क्या कहेंगे जिसने अपने मकानों के द्वारों को खुला छोड़ दिया है और उसमें धूली वा वृष्टि, चोर और डाकू बेखटके अन्दर आ सक्ते हैं ?

परमात्मा ने हमारे शरीर को टाईमपीस के सदृश निर्माण कर दिया है और उस में चाबी भी लगादी है कि सौ वर्ष पर्य्यन्त चलती रहे या यों समझो कि तैल, दीपक और बत्ती रख कर दीपक को जला दिया जिसकी बत्ती और तैल नियम पूर्वक जलाने और हर प्रकार से सुरक्षित रखने पर दीपक अनुमान सौ वर्ष पर्य्यन्त जल सक्ता है। इस घड़ी को ऐसा निर्माण किया है कि इस की ऊष्णता गरमी की गरमी से या सरदी के शीत से आधी डिग्री भी न बढ़ने पावे चाहे हम हिमालय पर्वत की शीत में रहें अथवा बीकानेर की मरु भूमि में निवास करें। यदि ज़रा भी धूल भीतर चली जावे इस घड़ी में बेचैनी उत्पन्न होजावे। तिस पर भी हम सभी प्रकार की मैल इस पर जमने देते हैं। इस शरीर रूपी मशीन में वायु प्रवेश के लिये २५ मीलों के रोम हैं, परन्तु स्नान द्वारा हम उन्हें शुद्ध रखने की परवाह तक नहीं करते। हम शरीर के पुरज़ों को तैल भी नहीं देते ताकि वह तर रहें। जैसे शरीर की रक्षा के लिये हम इन साधनों पर ध्यान नहीं देते ऐसे ही आत्मिक जगत की अवस्था है। जो पुरुष अपनी आत्मिक शक्तियों का प्रयोग नहीं लाते उन की मानसिक शक्तियां कभी उत्कृष्ट नहीं हो सकतीं। वह धनाढ्य पुरुष जो ऐश्वर्य्य का जविन व्यतीत करना चाहते हैं और मानसिक शक्तियों की वृद्धि के लिये सचेष्ट नहीं होते उन के दिमाग मुरझा जाते हैं। जो सृष्टि कर्म के विपरीत जायेगा उसे अवश्य कष्ट होगा चाहे वह लक्षाधीशाही क्यों न हो। आजकल तलब धनिक पुरुषों को आत्मिक जीवन का आनन्द प्राप्त नहीं

...ा। "कार्य्य करो, अथवा भूखा मरो" यही सृष्टि के प्रतिपृष्ठ ...अङ्कित है। जो विद्योपार्जन में अभ्यास न करेगा उसे आत्मिक ...आ रहेगी। जो सदाचार निर्माण में तपस्वी जीवन नहीं बनायेगा ...आनन्द न मिलेगा। जो शारीरिक श्रम न करेगा चाहे उसके ...कितना धन क्यों न हो उसे शुद्ध भूख न लगेगी और अन्न के ...ने का आनन्द भी न आयेगा। जिस व्यक्ति ने अपनी शक्तियों ...विषय भोग में लगा दिया, जिसके मन, वचन और कर्म में ...वित्र विचारों का समावेश है उस का दिमाग़ बिगड़ जाता है, ...के सद्विचार मुरझा जाते हैं और उस का आत्मा पतितावस्था ...गिर जाता है। जब थकान का भाव उत्पन्न होगया तो मान लो ...कहीं डर की सम्भावना है। जब हम थके हुए मन या शरीर ...उत्साह जनक अथवा पौष्टिक वस्तुओं से कार्य्य सम्पादन के ...से प्रोत्साहित करते हैं तो समझ लो कि सब कुछ नष्ट प्राय: ...कितने दुख का विषय है कि हम लोग जीवन को निरर्थक ...रहे हैं। समय इतना अमूल्य है कि करोड़ों रुपयों के बदले ...एक मिनट भी नहीं मिल सक्ता, उसी बहुमूल्य समय को ...जल के समान व्यर्थ फैंक रहे हैं। जीवन को बुलबुले के समान ...निरर्थक समझ रहे हैं। कोई भी मनुष्य ऐसा नहीं मिलता ...ने अपना अमूल्य समय व्यर्थ न खोया हो। कदाचित ही कोई ...ष्य मिलेगा जिसने सावधानता से १०० वर्ष या अधिक भी ...न हो जीवन व्यतीत किया हो। यदि इन्हें मनुष्य शरीर की ...चित्र रचना का पूरा २ बोध होता, यदि उस शरीर की रचना ...जिस का सौन्दर्य्य अवर्णनीय है, यह पहचानते तो वह ...शरीर को इस प्रकार से व्यर्थ विषयों में न गंवाते। वह इस के ...स्रोत को भोगों द्वारा न सुखा देते अथवा असावधानी से ...न खो बैठते। क्या जीवन इतनी सस्ती वस्तु है कि मनुष्य इसे ...वधानी से फैंकें अथवा इस का तिरस्कार करें। जिन्हों ने इसे ...जन्म में सम्भाल कर रखा और कुसंस्कारों तथा व्यसनों ...सुरक्षित किया उन्हें इस जन्म में उत्तम जामा मिला। उनके ...बलवान, शुद्ध और पुनीत हुए, वह ऐसे संस्कारी जीव ...उन्हें संसार के विषय और पाप एक बाल भर भी हिला नहीं ...। शास्त्रों की परिभाषा में उन्हें पुण्य आत्मा कहा जाता है।

यह किसी देश विशेष या समय विशेष में उत्पन्न नहीं होते। हर समय और हर देश में महापुरुषों का आविर्भाव होता है। यही पुण्यात्मा सज्जन समाज के प्रियात्मा (Conscience) कहलाते हैं। वह सर्व साधारण से ऊंचे और ऊपर रहते हैं। उन्हें आप समुद्रों के ज्योति स्तम्भ समझिये जो भूले भटके पथिकों को मार्ग दिखलाते हैं। मनुष्य इन पुण्यात्माओं के जीवन को ईर्षा की दृष्टि से देखते हैं या श्रद्धापूर्वक उन के सद्गुणों के अनुकरण करने में प्रवृत्त होते हैं। सदाचार निर्माण का यह एक तीसरा अङ्ग है कि हम पुण्यात्मा महापुरुषों के जीवन को देख कर आनन्द मनावें। वस्तुतः सदाचार निर्माण में अभिरुचि उत्पन्न करने और अनवद्य कर्मों द्वारा उच्च जीवन प्राप्त करने के लिये पुण्यात्माओं का अनुकरण करना ही मुख्य साधन है। ऐसे अनुकरण का उद्देश्य यह है कि उन नर नारियों को जो किसी आदर्श के विना इधर उधर तितर बितर फिरते हैं सदाचार निर्माण के पथ पर नियुक्त किया जावे। उन उत्साह हीन पुरुषों की जो विफलमनोरथ हो निराश हो बैठे हैं निहित शक्तियों को उच्च उद्देश्यों द्वारा उत्कृष्ट किया जावे और उन सज्जनों में जो अपना मार्ग स्वपुरुषार्थ से बना रहे हैं एक दृढ़संकल्प की शक्ति का संचार किया जावे। नवयुवकों के लिये इस से बढ़ कर कोई भी रोचक विषय नहीं जो उन के रक्त को साहस के जीवन के लिये प्रेरणा कर सके, हां, जो उन के जीवन को उच्च आदर्श की ओर ले जासके। यह एक बड़ा भारी जादू है कि उन्हें महात्माओं के जीवन समझाये जावें। यद्यपि ऋषि मुनियों या प्राचीन वीरों की जीवनियां अति प्राचीन हो चुकी हैं तिस पर भी नवयुवकों के लिये वह वैसी ही रोचक और शिक्षाप्रद हैं जैसे कि उन के सामने विद्यमान हों। जूलियस सीज़र सर्वदा सिकन्दर और अन्य योधाओं के चरित्र पढ़ा करता था। नैपोलियन के सिरहाने सिकन्दर तथा जूलियस सीज़र के चरित्र उपस्थित रहते थे। नवयुवकों को अहर्निश जीवन, अधिक जीवन और उत्तम जीवन की आकांक्षा बनी रहती है। पुण्यात्माओं ने कैसे तप किया, कैसे दरिद्रता से वह ऊंचे बने, किस प्रकार से राजपाठ से उन्हें वैराग्य उत्पन्न हुआ, किस प्रकार से उन्होंने जीवनयात्रा को आरम्भ किया, उन्हें क्या २

पड़े, दुःखों और क्लेशों में सफलता के प्राप्त करने से पूर्व कितनी देर प्रतीक्षा करनी पड़ी, कैसे उन्होंने प्रतिबन्धकों विजय प्राप्त की और कैसे उनका मनोरथ सफल हुआ, यह ऐसे ही अन्य उत्तेजिक विषय नवयुवकों में नवीन जीवन संचार कर सक्ते हैं और उन्हें उच्च उद्देश्यों में नियुक्त कर हैं। हमारे विचार में प्रत्येक युवक जो सदाचार निर्माण के इन नों पर चलेगा वह इस जगत में अपने उद्देश्यों में सफलता पा सकेगा। तपस्वी आत्माओं के मार्ग में कोई भी रुकावट नहीं जो स्थिर रह सके। जिनके हृदय में विद्योपार्जन का संकल्प हो गया उन्हें दरिद्रता आदि कोई भी बाधक कारण नहीं सक्ते। भारतवर्ष में यह दन्त कथा प्रसिद्ध है कि षिक दर्शन जैसी गूढ फलासफी का जन्मदाता महर्षि कणाद द्री था। वह कणों पर अथवा चबीना जैसे क्षुद्र सम्पति पर न यात्रा को व्यतीत किया करता था। सम्भावना का तो ार ही क्या इस देश के ब्रह्मवेत्ता ब्राह्मण वह कहलाते थे कि के गृह में आज के लिये अन्न है कल के लिये है ही नहीं तो नवयुवक ऐसा दरिद्री होगा जो विद्यार्थी जीवन व्यतीत के लिये एक दिन के लिये अन्न का प्रबन्ध नहीं कर सक्ता? एक दिन के लिये है तो उसे चिन्ता क्या क्योंकि अनेक त्मा ऐसे ही अभ्यासी हो गुज़रे हैं। उसे मुदता के शुद्ध से विचारना चाहिये कि मैं उनके प्रशंसनीय जीवन का रण करने लगा हूं। इतिहास बतलाता है कि जिनके अन्दर संस्कारों का बीज बोया गया वह निर्धन होने, हीन कुल में होने, अङ्ग विहीन तथा चक्षुविहीन होने पर भी अपने यों में कृतकृत्य हुए। जिस मनुष्य ने पुण्यात्माओं का र करना सीख लिया और उनके सत्सङ्ग से अपने अन्दर ार निर्माण के भावों को समावेश करने का संकल्प कर , वह विरोध और आपत्तियों में से अपना मार्ग चीरता हुआ के सम्मुख आकर उपस्थित होता है। वह समझता है कि के लिये जो क्लेश और कष्ट हैं वही उसके बल की वृद्धि में साधक बन रहे हैं। हमारा विश्वास है कि पुण्यात्मा के से जो भी उत्तम आचरण द्वारा हम भला काम करेंगे

वह अपने समय पर फूले और फलेगा और साधन करने वाले को प्रत्येक शुभ कर्म करने पर सफलता का दर्शन होने लगेगा। हम चाहते हैं कि सदाचार निर्माण के उच्च आदर्श द्वारा हम नवयुवकों में उच्च आकांक्षाएं (aspirations) भर दें, उन्हें समझावें कि परोपकार के जीवन में केवल धन कमाने और ऐश्वर्यों के भोगने से कहीं बढ़ कर आनन्द मिलता है और यही गुप्त भेद है जो महात्माओं को इतना बे परवाह बना देता है कि चक्रवर्ती तक की परवाह नहीं करते । उन्हें सिखलावें कि मनुष्य लक्षाधीश भी हो जावे, परन्तु सदाचारी नहीं तो वह अपने जीवन में सफलता को प्राप्त नहीं कर सक्ता। उन्हें बतलावें कि वेद हमें शिक्षा देता है, और हम नित्यम्प्रति प्रार्थना करते हैं कि परमात्मन् ! आप सत हैं हमें भी सत्ता प्रदान कीजिये, आप चैतन्य हैं हमें भी ज्ञानेन्द्रियों द्वारा चैतनता या ज्ञान प्रदान कीजिये, आप आनन्द स्वरूप हैं, हमें भी कण्ठ द्वारा आनन्द रस का आस्वादन करने के समर्थ बनाइये (हमारी सरस्वती रूपी वाणी आनन्द दिला सक्ती है) आप महान हैं, हमारे हृदय को महान् बनाइये (उच्च आकांक्षाएं हमारे जीवन में उत्पन्न हों) आप सारे संसार की जननी हैं हमारे अन्दर जो जननशक्ति है उसे आप पवित्र बनाने में हमें समर्थ करें ताकि हम अपनी नैसर्गिक शक्तियों का विनाश न करें । आप दुष्टों को दण्ड देते हैं हमें भी आप इस योग्य बनावें कि कोई भी व्यक्ति हमारे मार्ग में बाधक न हो आप सत्य स्वरुप हैं हमारे अन्दर शुद्ध विज्ञान का संचार कीजिये कि हम अपने दिमाग को शुद्ध और पवित्र बनाते हुए अपने शरीर तथा मन से यथोचित कार्य्य ले सकें । पुण्यात्मा नर नारियों के जीवन ही हमें उठा सक्ते हैं । उनके अध्ययन तथा सत्सङ्ग से अनन्त मनुष्यों ने जीवन ग्रहण किया और उस प्रवाहित माधुर्य्य की धारा से अब भी जीवन पाकर नवयुवक सदाचार निर्माण में प्रवृत हो सक्ते हैं। यूनान के देव जानस ने अपने सम्प्रदाय के सदस्यों के लिये जो नियम निर्माण किये थे उन में से कुछ नीचे लिखे जाते हैं। "उस का शरीर बलवान और तेजस्वी होना चाहिये, वह प्रसन्न वदन रहे और दरिद्रता के होते हुए भी शुद्ध हो और दूसरों को आकर्षण करने की शक्ति रखता हो, उस में बुद्धि और योग्यता

और शीघ्र समझने और वादी को उत्तर दे सकने की शक्ति हो, उस का आत्मा सूर्य्य की प्रभा के समान साफ सुथरा हो, वह शुद्ध और पवित्र हृदय के साथ सो सके, और उस से भी अधिक पवित्र भावों को धारण किये हुए विस्तरे से उठे, लोगों की निन्दा और अपवाद पर पत्थर के समान बन जावे मानों उस ने श्रवण ही नहीं किया और वह सर्व प्रकार की वासनाओं तथा भयों को अपने पाओं के नीचे धर कर कुचल दे।" ऐसे नियमों के पालने वाले मनुष्यों में से ही एक देवजानिस था जिस के पास सम्राट सिकन्दर मिलने गया था। जब सिकन्दर उस के पास पहुंचा तो उसके अमात्यों ने देवजानिस से कहा कि सिकन्दर की आज्ञा हुई है कि जो कुछ आप चाहें मांगें। देवजानिस ने उत्तर दिया कि आप ज़रा धूप छोड़ कर एक ओर हट जावें। सिकन्दर इस दरिद्रता पर ऐसे उच्च भाव को देखकर चकित होगया और कहने लगा कि यदि मैं सिकन्दर न होता तो अवश्य देवजानिस बन जाता।

पुण्यात्माओं के उच्च जीवन का भेद केवल उन की वृतियों के निरोध में निहित है। वह अपनी बिखरी हुइ शाक्तियों को एकाग्र करते हैं और तेजस्वी बन जाते हैं। वैज्ञानिकों ने परिमाण द्वारा विचार किया है कि यदि उतनी सूर्य्य की शक्ति को एक स्थान पर एकत्रित कर लिया जावे जो ५० मील की धूप में मिलती है तो उस शक्ति से संसार भर के कारखाने चलाये जासक्ते हैं। पद्मों हार्स पावर की शक्ति मिल जाती हैं। खर्बों विद्युल्लता के वोल्ट की शक्ति उपलब्ध हो जाती है परन्तु बिखरी हुई धूप में शक्ति नहीं कि आग जला सके। यदि सूर्य्य की किरणों को बड़े लेन्स में से गुजारकर संग मरमर के पत्थर पर डाला जावे तो वह पिघलने लग जावे, या एक हीरे के समान कठिन पत्थर को पिघलाकर बुखारात बना डाले। संसार में अनेक मनुष्य हैं जिन में योग्यता है, परन्तु उन की शक्तियों की रश्मियां इधर उधर बिखर रही हैं, वह उन्हें एक स्थान पर एकाग्र (focus) नहीं करसक्ते या उन्हें एक उद्देश्य में लगा नहीं सक्ते। जो सब कार्य्यों में दक्ष बनना चाहते हैं वह प्रायः दुर्बल रहते हैं क्योंकि वह अपनी शक्तियों को एक स्थान पर एकत्रित नहीं कर सक्ते और यही एक अन्तरनिहित

भेद है कि क्यों एक मनुष्य किसी कार्य्य में सफलता और वैसेही दूसरे मनुष्य को निष्फलता प्राप्त होती है। उन की विद्या अधिक होती है, वह नेक दिल भी रखते हैं, उन में उच्च आकांक्षाएं भी विद्यमान हैं परन्तु जीवन भर में वह किसी भी विचार को सफलता पूर्वक सम्पादन नहीं कर सके परन्तु हां, जो देव जानस कलवी के से पुण्यात्मा अपनी शक्तियों को एकाग्र रखते हैं, उन्हें किसी भी कार्य्य में निराशा का मलिन मुख नहीं देखना पड़ता और इस लिये ऐसे पुण्यात्माओं के जीवन नवयुवकों तथा सदाचार निर्माण के जिज्ञासुओं के लिये अनुकरणीय बन जाते हैं।

भारतवर्ष में सुधार

[५]

आर्य्य समाज ।

(श्री. प. मन्नन द्विवेदी गुजपुरी लिखित)।

आर्य्य समाज भारतवर्ष में सुधार की पांचवीं कोशिश है। ब्रह्मोसमाज के बाद आर्यसमाज कायम हुआ। जब स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी ने इस देश के जगाने का बीड़ा उठाया उस वक्त ब्रह्मोसमाज अपना काम कर रहा था। स्वामीजी ने राममोहनराय के धर्म पर विचार किया और उस को गौर से देखा। कहना नहीं होगा कि स्वामी जी को नया मत निकालने का बिलकुल शौक नहीं था और अगर मुमकिन होता तो आप अपना तन, मन, धन ब्रह्मोसमाज को देकर वहीं काम करते। एक बड़े प्रतिष्ठित विद्वान् मुझ से कहते थे कि आर्यसमाज के जन्म के पहले उन्हों ने स्वामी जी को ब्रह्मोसमाज के प्लेटफार्म पर से बोलते सुना था, लेकिन स्वा. दयानंदजी जितनी बातें चाहते थे उन में से सिर्फ आधी ब्रह्मोसमाज में पाई जाती थीं। ब्रह्मोसमाज विद्वानों के तर्क बितर्क पर सब मज़हबों से अधिक अड़ सकता है लेकिन अनपढ़ और थोड़ी विद्या के लोगों के लिये इसमें बहुत कम मसाला है। इसी वजह से ब्रह्मोसमाज केवल गिने चुने पढ़े लोगों में फैलकर रह गया। लेकिन महर्षि दयानंद सरस्वती को सर्वव्यापी मजहब बनाना था।

उनको एक ऐसा विशाल बहुरंगी मन्दिर तैयार करना था जहां बड़े से बड़ा और छोटे से छोटा आदमी अपनी विद्या और बुद्धि के मुताबिक पाखण्डों से दूर हटकर अपनी आत्मा को शान्ति दे सके। इन विचारों में आर्यसमाज की उत्पत्ति हुई। कहना नहीं होगा कि जिस उद्देश्य से आर्यसमाज की नींव पड़ी थी उसकी बहुत कुछ पूर्ति होगई और हो रही है। आर्यसमाजियों की संख्या लाखों तक पहुंच गई है। यों तो आर्यसमाज ने बहुत से धार्मिक और विद्या सम्बन्धी कार्य किये हैं लेकिन मेरा यह लेख एक तरह से सिर्फ सुधार से सम्बन्ध रखता है उसे दृष्टि से देखने पर भी आर्यसमाज ने बहुत काम किया है।

(१) धार्मिक सुधार में आर्यसमाज ने मूर्तिपूजा का कम किया, मृतकों के श्राद्ध को भी कम किया, एक ईश्वर की पूजा का प्रचार किया. ऐसी ही और भी बहुत सी बातें हैं।

(२) सामाजिक सुधार में आर्य्य समाज ने ज़ात पात के बन्धन को कमज़ोर किया, परदा को हटाया, बाल विवाह और बहु विवाह को रोका, विधवा विवाह का प्रचार किया, छुआछूत को हटाया, स्त्रियों को बराबरी का दर्जा दिया।

इस तरह आप देखेंगे कि कई लाख हिन्दू जो अपने को आर्य्य कहते हैं साधारण अनपढ़ हिन्दुओं से और कहीं २ तो पढ़ों से भी अधिक सुधरे मिलेंगे। यह तो हुआ आर्य्य समाज से प्रत्यक्ष लाभ, इस से अप्रत्यक्ष लाभ यह हुआ कि दूसरे हिन्दुओं पर भी आर्य्य समाज का असर पड़ा। अब सनातनी भी गले में सालिगराम की मूर्ति लटका कर नहीं घूमते हैं। स्त्री शिक्षा में भी रामायण और महाभारत पढ़ाने को कहते हैं। काशी के बड़े २ पण्डित भी खुली सभाओं में वेद पाठ करते हैं और शूद्रों के कान खुले रहते हैं। ऐसी ही और भी बातें हैं। क्या यह सब आर्य्य समाज का प्रभाव नहीं है?

आर्य्य समाज ने एक बड़ी होशियारी का काम यह किया है कि अपने विशाल हिन्दू जाति को छोड़ा नहीं है। हिन्दुओं में मिल कर उनके साथ २ चल कर काम करने की वजह से आर्य्य समाज ने इतनी सफलता प्राप्त की है। मर्दुमशुमारी की रिपोर्ट देखने से

पता चलता है कि आर्य्य समाजियों की संख्या दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ रही है। सन १८९१ की मर्दुमशुमारी में १००० में ५ आर्य्य थे। सन १९०१ की मर्दुमशुमारी में १००० में १४ हुए और सन् १९११ की मर्दुमशुमारी में बढ़ कर १००० में २८ होगये। इस तरह गत २० वर्षों में आर्य्यों की संख्या ४६४-७ फीसदी बढ़ गई। एक काम तो आर्य्य समाज ने यह किया लेकिन यह काम उतने महत्व का नहीं है, क्योंकि जो लोग आज कल संसार की गति को ग़ौर से देख रहे हैं उनको लाचार होकर कहना पड़ता है कि अब यह परिवर्तन (Conversion) के दिन नहीं हैं।

ईसाई हों या मुसलमान, बौद्ध हों या आर्य्य उनको यह आशा छोड़ देनी होगी कि सारी दुनिया एक रोज़ एक मज़हब को मानने लगेगी। ऐसा होना असम्भव है। अगर किसी रोज़ ऐसा होगा तो उसी रोज़ प्रलय भी होगी। जब दुनिया के लोगों के विचार कठपुतलियों की तरह बिल्कुल एक सांचे में ढल जायंगे, जब तर्क, वितर्क, शंका समाधान सभी दुनियां से लोप हो जायेंगे, जब वेद शास्त्रों को छोड़ कर कोई पुस्तक नहीं रहने पावेगी, जब अभिज्ञान शाकुन्तल, रोमियोज्यूलियट ऐसे साहित्य रत्न के पढ़ने वालों पर धर्म विद्रोह का दफा चलाया जायेगा जब उन देशों में जहां मांस से ही पेट भरता है वहां भी अहिंसा परमोधर्मः की घोषणा की जायगी, जब किसी के मरने जीने के लिये धर्म नहीं छोड़ा जायगा, जब ग्रीनलैंड की असभ्य भूमि में देवभाषा के तद्धितांत बोले जायंगे, जब क्रिश्चियेनिटी का दम भरने वाला योरुप और इस्लाम पर मरने वाले टर्की और पारस सब क्रास और चांद से अलविदा कर बैठेंगे, जब कुस्तुन्तुनिया हो जायगी पँ० रामावतार शर्म्मा की कंसुतन्तुपुर, जब हाजी, काज़ी, और नमाज़ियों के बखुरदार बे तराशे कठिन वैदिक श्लोकों पर टसुयें बहावेंगे, तबही एक मत होना सम्भव है।

किसी प्रतिभाशाली वक्ता के व्याख्यान सुनने के दो चार मिन्ट तक जोश में आकर चाहे हम भी कह दें कि रोम के बड़े गिरजे पर "ओं" का झण्डा फहरायगा लेकिन ज़रा समझ कर सोचने से हंसी आती है? फिर आर्य्यसमाज ने वास्तव में कौन सा बड़ा काम किया है और भविष्य में उसको क्या करना चाहिये?

आर्य्य-मित्र-सभा फिरोज़ाबाद (आगरा) का प्रथम वार्षिकोत्सव

परम पिता परमात्मा का कोटिशः धन्यवाद है कि उसकी अपार कृपा से आर्य्य-मित्र-सभा फीरोज़ाबाद का प्रथम वार्षिकोत्सव असाधारण सफलता से समाप्त हुआ, जिसके सविस्तार समाचार आज सर्वसाधारण की सेवा में उपस्थित किये जाते हैं।

अभी इस सभा को स्थापित हुए पूरे १४ मास भी नहीं बीते हैं किन्तु फिर भी अपने सहायकों के द्वारा उत्साहित किये जाने पर इस उत्सव के करने में हम सफल मनोरथ हुए हैं। ३ मास के लगभग हुए कि हमने इस उत्सव के करने का विचार किया था। उस समय हमें आशा नहीं थी कि हम सफल मनोरथ होसकेंगे क्योंकि न तो हमारे पास पर्य्याप्त साधन ही उपस्थित थे और न हम में यह योग्यता थी कि हम इतने बड़े उत्सव का सुप्रबन्ध कर सकते, किन्तु हम उस जगत नियन्ता, सर्वरक्षक, जगदीश्वर को बारंबार धन्यवाद करते हैं कि जिस की महती कृपा ही से हम इस उत्सव को सफलता पूर्वक समाप्त कर सके हैं।

उत्सव ९, १०, ११ फरवरी को बड़े समारोह के साथ मनाया गया। इस समय हमारे प्रसिद्ध २ वक्ता, संन्यासी, महात्मा और देवियां पधारी थीं। पूज्यपाद श्रीस्वामी दर्शनानन्द सरस्वती, पूज्यपाद श्रीस्वामी परमानन्दजी सरस्वती, पूज्यपाद भिषगाचार्य्य कविराज श्रीपंडित केशवदेवजी शास्त्री, श्री० पं० निरंजनदेवजी, श्री पं० रामचन्द्रजी शास्त्री, श्री पं० गोपीचन्द्रजी, श्री० पं० गंगा विष्णुजी, श्री पं० दुर्गादत्तजी, श्री० बा० पूर्णचन्द्र जी, श्रीमती पंडिता कुमारी लज्जावती देवी क० म० वि० की अन्य ३ कन्याओं सहित, श्रीमती पंडिता सत्यवतीदेवीजी, भजनोपदेशक महाशयों में ठाकुर [illegible]सिंहजी, मा० जगदम्बा प्रसादजी अपनी २ मण्डलियों सहित और फतहगढ़ की भजन मण्डली यह तीनों मण्डलियां उपस्थित थीं। ९ तारीख को २॥ बजे से नगरकीर्तन आरंभ हुआ और रात्री के ९ बजे तक नगर के प्रसिद्ध २ रास्तों से होकर वापिस पण्डाल में आया। तीनों मण्डलियों के साथ वक्ता महाशयों के उपदेश भी होते जाते थे। श्री पं० गोपीचन्दजी के उपदेश और प्रसिद्ध

भजनीक ठाकुर नत्थासिंहजी के भजनों का प्रभाव सर्व साधारण पर अत्यन्त लाभकारी सिद्ध हुआ । पं० गोपीचन्दजी के जोशीले व्याख्यान अत्यन्त प्रभावशाली थे ।

१० को प्रातःकाल सभा के मंत्री का यज्ञोपवीत संस्कार होना था, इसलिए प्रातःकाल ही से उसकी तैय्यारियां आरंभ हुई। श्रीमान् पूज्यपाद भिषगाचार्य्य कविराज श्रीपंडित केशवदेवजी शास्त्री ने मंत्री को यज्ञोपवीत दिया, जिसके पश्चात उन का एक सारगर्भित उपदेश संस्कारों के महत्व पर हुआ, जिसके प्रभाव को शायद यहां की पबलिक देर तक विस्मरण न कर सकेगी। मंत्री ने ५) आपको गुरुदक्षिणा स्वरूप में भेंट दिये जोकि आप ने उसी समय वेद प्रचारार्थ दान कर दिये। पश्चात क० म० वि० की चारों कन्याओं ने मिलकर हारमोनियम पर भक्तशिरोमणि कवीरदास जी का एक शिक्षा पूर्ण भजन गान किया। आगन्तुक महाशयों का मिष्टान्न से सत्कार किये जाने पर प्रातःकाल की कार्यवाही समाप्त हुई।

दो पहिर के ११॥ बजे से २॥ बजे तक दूसरे पंडाल में महिला सम्मिति का अधिवेशन हुआ जिसमें प्रधान वक्ता श्रीमती पण्डिता कुमारी लज्जावती देवीजी और पंडिता देवी सत्यवती जी इन्सपेक्टरिस गर्लस स्कूल आगरा थीं। यह प्रथम ही अवसर था कि फीरोज़ाबाद में विशेष कर अपनी माताओं के लिये सभा ने व्याख्यानों का प्रबन्ध किया था।

तीसरे पहिर को ३ बजे से भजन आरम्भ हुये और पूज्यपाद श्री पं० केशवदेवजी शास्त्री प्रधान निर्वाचित हुये। आपकी प्रधानता में सब से प्रथम श्रीस्वामी परमानन्दजी सरस्वती ने ईश्वरोपासना की ओर एक सूक्ष्म सा उपदेश दिया, पुनः श्री पं० गंगा विष्णुजी उपदेशक क० म० वि० जालन्धर का व्याख्यान हुआ। आपके पश्चात श्रीस्वामी दर्शनानन्दजी सरस्वती का तथा उत्तम प्रभावशाली उपदेश हुआ। पुनः मन्त्री ने सभा के प्रथम वर्ष का कार्य विवरण पढ़ सुनाया जो कि छपा हुआ था।

ठीक समय पर ज्यों ही मन्त्री रिपोर्ट पढ़ने को खड़ा हुआ इन्द्रदेव ने जल छिड़क कर आशीर्वाद दिया और साथ ही स्वयम रुखसत होगये, ताकि कुमारों के उत्सव में विघ्न पड़ने का भय न रहे। रिपोर्ट के पढ़े जाने के पश्चात भजन होकर श्रीमती पंडिता कुमारी

लज्जावतीजी का व्याख्यान "भारत उन्नति के कण्टक" विषय पर अति प्रभावशाली हुआ। कुमारी पंडिताजी जैसी प्रसिद्ध व्याख्यात्री देवीजी के व्याख्यान के लिये यह बतलाने की आवश्यकता नहीं है कि आप का व्याख्यान कितना प्रभावशाली था। यह प्रथम अवसर था कि हम ने एक देवी को पवलिक प्लेटफार्म पर इतनी गम्भीरता से बोलते देखा। आप के मर्मभेदी व्याख्यान के पश्चात सन्ध्या के लिये अवकाश दिया गया था जिसमें कि प्लेटफार्म से ४ पंडितों के सन्ध्या उच्चारन करने पर सर्व साधारण ने आनन्द पूर्वक मिलकर सन्ध्या की। पुनः श्रीमान् पं० केशवदेवजी शास्त्री महोदय का "आर्य जीवन" पर मेजिक लेनटर्न द्वारा एक अति मनोरञ्जक और शिक्षाप्रद व्याख्यान हुआ। इस व्याख्यान के सुनने के लिये सर्व साधारण बड़े लालायित हो रहे थे। डेढ़ घंटे तक शास्त्रीजी ने रामायण के विशेष २ स्थल लेनटर्न द्वारा स्पष्ट रीति से दिखलाकर आदर्श आर्यजीवन पर बहुत ही सारगर्भित उपदेश दिया। इस उपदेश के साथ ही आज का उत्सव समाप्त हुआ।

११ तारीख को बसन्त का शुभ दिन था। इन्द्र महाराज ने प्रातः काल ही से दर्शन दे रखे थे। आज उस "आर्य-कन्या पाठशाला" का प्रारम्भिकोत्सव होना था जिसके लिये कुमारों ने देर से कठिन परिश्रम किया हुआ था। प्रातःकाल कन्या पाठशाला भवन में हवन के पश्चात भजन हुए। श्रीमती पंडिता कुमारी लज्जावती देवी ने उपस्थित कन्याओं को मिठाई और ऋषि दयानन्द का एक २ चित्र वितरण किया। पश्चात पण्डाल में श्री पं० निरंजनदेवजी उपदेशक आर्यप्रतिनिधि सभा यु. पी. का प्रभावशाली व्याख्यान "हमारा उत्थान कैसे हो सकता है" विषय पर हुआ और भजन होकर प्रातःकाल की कार्यवाई समाप्त हुई।

आज इन्द्रदेवकी कृपा विशेष रूप से ज्ञात होती थी, इस लिये सर्व साधारण में चिन्ता बढ़ रही थी कि आज उत्सव की कार्यवाही का अन्तिम भाग कैसे समाप्त होगा। देवियों के लिये तो कन्या पाठशाला भवन में प्रबन्ध कर दिया गया था। जहां उन्होंने आनन्द से अपनी कार्यावाही समाप्त की। १० तारीख को उन्हें समय न मिला थी इसलिये आज उन्हों ने उसकी भी कमी पूरी कर और ११॥ बजे से ४ बजे तक आनन्द पूर्वक अपनी कार्यावाही

करती रहीं । इन्द्र महाराज बर बर कृपा करते रहे, किन्तु फिर भी उत्सुक देवियां आईं और नियत समय तक उपस्थित रहीं । आज चूंकि कन्या पाठशाला की अपील होनी थी इस लिये माताओं ने भी अपनी हितचिन्तकता का परिचय देना आवश्यक समझ करही श्रीमती पंडिता सत्यवती देवीजी के अपील करने पर यथाशक्ति सहायता की । साथ साथ ही उन्हों ने एक स्त्री समाज की भी स्थापना करली जिसके अधिकारियों आदि का भी नियमानुसार निर्वाचन होगया । माताओं में इस उत्साह को अवलोकन कर हम कुमारों का ढारस बंधा है कि अब हमारी उन्नति के कराटकों में नियूनता अवश्य होगी ।

इधर ४ बजते ही इन्द्र नारायणजी विशेष कृपा करनी उचित न समझ कर छाया रूप से ठहर गये । हमारी मायूसी दूर हुई और खुशी २ व्याख्यानों का प्रबन्ध होने लगा । भजनों के अनन्तर आज भी पं० केशवदेवजी शास्त्री ही की प्रधानता में कार्यवाही आरम्भ हुई । सब से प्रथम पं० रामचन्द्रजी शास्त्री का भाषण हुआ । आपके पश्चात् पं० वैद्यमित्रजी शर्मा ने एक भजन कहा और बा० पुर्णचन्द्र जी बी० ए० का सारगर्भित व्याख्यान हुआ । पुनः श्री० स्वामी दर्शनानन्दजी प्लेटफार्म पर आये और आप ने एक शिक्षापूर्ण उपदेश दिया । आपके पश्चात् पं० दुर्गादत्तजी शर्मा न्यायतीर्थ भूतपूर्व उपदेशक महाशय ने अपना भाष्ण आरम्भ किया । आपके व्याख्यान का विषय था " एकान्त वाद और अनेकान्त वाद अर्थात्" जैन धर्म और वैदिकधर्म का मुकाबला । आपका विषय बहुत गूढ़ था किन्तु शोक है कि समय प्राप्त न होने के कारण आपको अपना पूर्वपक्ष ही बिना समाप्त किये विश्राम लेना पड़ा । पश्चात् सन्ध्या आदि से निवृत्त होने के लिये एक घंटे का अवकाश दिया गया । पुनः ठीक ७॥ बजे भजन आरम्भ होगये । ८ बजते २ पराडाल खचाखच भर गया था । कल १० तारीख को भी हाज़िरी कुछ कम नहीं थी, किन्तु आज तो अधिकांश महाशयों को खड़े होने का भी स्थान नहीं मिला जानने और देखनेवाले महाशय कहते हैं कि इतनी उपस्थिति यहां पहले कभी उत्सवों में नहीं हुई थी । ८। बजे पं० गोपीचन्द्रजी शिमला निवासी का प्रभावशाली व्याख्यान आरम्भ हुआ । आप से हमने उत्तमोत्तम शिक्षाएं ग्रहण की हैं । आपके व्याख्यान के पश्चात्

श्रीमती पंडिता कुमारी लज्जावती देवीजी प्लेटफार्म पर आईं। आपके प्लेटफार्म पर आते ही पण्डाल करतलध्वनि से गूंज उठा। आपका एक व्याख्यान कल होचुका था। आज कल से द्विगुण उपस्थिति थी। आज पंडिताजी कन्या पाठशाला के लिये अपील करने के लिये प्लेटफार्म पर आई थीं। आप ने पूरे एक घंटे तक जिस गम्भीरता, विद्वत्ता और योग्यता से भाषण किया वह केवल आपही का भाग था। आपका एक २ शब्द मर्मभेदी और हृदयविदारक था। आपने प्रथम कन्या महाविद्यालय जालन्धर के उस महान् और अद्वितीय काम की सुन्दर व्याख्या की जो कि वह आजतक कर चुका है, पश्चात आप ने बड़े ही मर्मभेदी और योग्यता तथा गम्भीरता पूर्ण शब्दों में कन्या पाठशाला फीरोज़ाबाद के लिये अपील की। आप की योग्यता, विद्वत्ता और व्याख्यान शक्ति को वही लोग भले प्रकार समझ सकते हैं जिन्हों ने आपको कभी बोलते हुए सुना और देखा है। आपका भाषण कुछ ऐसा प्रभावशाली था कि यहां के अधिकांश जन आयु पर्यन्त उसे नहीं भूलेंगे। बाल, वृद्ध, शिक्षित और अशिक्षित, प्रेमी और विरोधी गरज़ेकि प्रत्येक नर और नारी आप की व्याख्यान शक्ति की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा कर रहे हैं। फिरोजाबाद निवासी आप के प्रभावशाली व्याख्यान को सुननेवाले स्त्री शिक्षा और आर्यसमाज के कट्टर विरोधियों के मुख से हम यह सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुये कि "भाई कन्याओं को अवश्य पढ़ाना चाहिये" हमारा मनोरथ सफल होगया और इस समय हम परमदेव परमात्मा को हार्दिक धन्यवाद कर रहे हैं।

आप के व्याख्यान के पश्चात धन संग्रह होना आरम्भ हुआ। देर तक प्रतीक्षा करने पर भी जब वायदों और नक़द का जोड़ किया गया तो वह १७५) रुपया से अधिक नहीं था। इतनी strong अपील और यह धन हमारी उदासीनता के लिये पर्याप्त से कहीं अधिक साधन था, किन्तु यहां भी हमारी निरबलता हमारे रास्ते में हानिकारक सिद्ध हुई। हमने शोक से सुना कि यहां के प्रसिद्ध धनाढ्य धन देने में संकोच करते हैं क्योंकि उन्हें विश्वास नहीं कि पाठशाला चल भी सकेगी। हमारी तसल्ली होगई और हमने सहायता की लिस्ट तत्काल बन्द कर दी। दानी महाशयों में श्रीमान् प्रजापतजी चतुर्वेदी और बा० राजकिशोरजी हैं जिन्होंने ५१) और

२५)देने की उदारता दिखला कर आशा दिलाई है कि आप महाशय कार्य देखने पर पाठशाला के संरक्षक बनकर हमारे उत्साह को बढ़ावेंगे। पं० गोपीचन्द्रजी शिमला निवासी का हम किन शब्दों में धन्यवाद करें, आप ने १५) अपील में देने के सिवाय भविष्य में बहुत कुछ सहायता करने का वचन दिया है। श्रीमती राधादेवीजी धर्म-पत्नी मा० शंकरदयालजी प्लीडर आगरा के हम अत्यन्त कृतज्ञ हैं जिन्होंने हमारे निमन्त्रण को स्वीकार करके ऐसी अवस्था में भी यहां पधारने का कष्ट उठाया जब कि उनको रोगग्रस्त होने के कारण उठने बैठने तक में कष्ट होता था। निश्चय ही आपका धर्म भावं, उदारता और हितचिन्तकता प्रशंसनीय और अनुकरणीय हैं। अपील में आपने २७) रुपया नक़द पाठशाला की सहायतार्थ दान-दिये। हमें आप से भविष्य में बहुत आशाएं हैं। आप अपनी उदारता का परिचय देने का कोई समय जाने नहीं देती हैं। गत गुरुकुल वृन्दाबन के उत्सव पर आप प्रशंसनीय उदारता दिखला चुकी हैं।

अपील के पश्चात सामयिक प्रधान पूजनीय श्री पं० केशवदेव जी शास्त्री का व्याख्यान आरंभ हुआ। आपका महत्वपूर्ण और सारगर्भित व्याख्यान आप के पांडित्य, विद्वत्ता और आपके गम्भीर विचारों का प्रत्यक्ष प्रमाण था। वह अमूल्य शिक्षाओं से पूर्ण था। आप ने आर्य्यसमाज के काम का सूक्ष्म किन्तु अद्वितीय फोटो खींचते हुए साथ २ ही कुमारों द्वारा स्थापित सभाओं की आवश्यकता दर्शाई। आर्य्यसमाजों को कुमार सभाओं का संरक्षक और पथ प्रदर्शक बनने की प्रेरणा करते हुए आप ने कुमारों को समाजों के साथ विनीत भाव से बर्तने की आज्ञा दी। आपका व्याख्यान निश्चय ही अद्वितीय था। इस उत्सव को असाधारण सफलता से समाप्त करानेवाले आज के ही यह ३ प्रभावशाली व्याख्यान थे। शास्त्री जी के व्याख्यान के पश्चात् क. म० वि० की चारों कन्याओं ने मिलकर हारमोनियम पर एक सुन्दर भजन गाया। नगर भर में उपरोक्त तीनों विद्वत्तापूर्ण व्याख्यानों की धूम मची हुई है। घर २ उत्सव की चर्चा होरही है। कोई पाठशाला को दृढ़ करके कुमारीजी के सदृश देवी बनाने की चिन्ता कर रहा है। स्त्रियां स्त्री समाज द्वारा योग्य बनने की चिन्ता में निमग्न हैं। इधर कुमारों के नये उत्साह से ज्ञात नहीं वह क्या २

विचार रहे ह । जैसी कि आशा की जा रही है ज्ञात नहीं यह उत्सव क्या २ नतीजे उत्पन्न करेगा । शीघ्रही हमें इस उत्सव के फलों का परिचय मिलेगा ऐसी पूर्ण आशा है । बलपति ! बल प्रदान करें कि हम नवोत्साही अपनी प्रतिज्ञाओं पर दृढ रहसकें और वेदों के बतलाए हुए पथ पर श्रद्धा से चलकर मुख्योद्देश्य को प्राप्त कर सकें ।

देवियों के भजन के पश्चात सभा के मंत्री ने परमदेव परमात्मा, ब्रिटिशराज्य और अपने मेहमानों तथा पबलिक का धन्यवाद किया पश्चात १ भजन हुआ और सभा की प्रथम वार्षिकोत्सव सानन्द समाप्त हो गया ।

महानुभाव ! उत्सव समाप्त होगया, किन्तु हमारे सामने कई कड़ी कठिनाइयां उपस्थित हैं । इस उत्सव में भी बड़ी २ कठिनाइएं पड़ीं जिनके कारण हम किसी बात का भी कोई सुप्रवन्ध भी नहीं करसके किन्तु आशा है कि यदि इन कठिनाइओं का सामना करते हुए तब जीवित रहे तो संभव है कि हम अगले उत्सव को और भी अधिक कामयाब बना सकेंगे तथा अन्य भी वांछित उपायों द्वारा आगामी वर्ष में सेवा कर सकेंगे ।

इस उत्सव में सहायता देने के लिये हम सर्वसाधारण और उन महाशयों के अत्यंत कृतज्ञ हैं जिन्होंने हमें उदारता पूर्वक सहायता देकर हमारे उत्साह को बढ़ाया है । स्थानीय श्रीमान् सेठ कन्हैयालाल जी, श्रीमान् ला० पिटनलाल जी, श्रीमान् सुदर्शनलाल जी चतुर्वेदी, श्रीमान् कमलापत जी चतुर्वेदी, श्रीमान् हज़ारीलाल जी चतुर्वेदी, श्रीमान् राजकिशोर जी, श्रीमान् बोहिरे आशारामजी, श्रीमान् मिरज़ा खैराती वेग साहिब खां साहिब, रफीउद्दीन खां साहिब, क़ाज़ी हकीम यूसुफ अली खां साहिब, श्रीमान् मु० नारायण स्वरूप जी, श्रीमान् ला० खियालीरामजी, श्रीमान् दाऊदियालू लक्ष्मी नारायण जी, श्रीमान् बोहरे रामचन्द्जी, श्रीमान् बोहरे ...लाल पन्नालाल जी, श्रीमान् नंदराम मूलचंदजी, इत्यादि । विशेष कर कृतज्ञ हम श्रीमान् सेठ कन्हैयालाल जी और बा० राजकिशोर जी के हैं । सेठजी ने हमारी सहायता अपने मूल्यवान् सामानों को मांगे देकर की थी और विशाल मकान उपदेशक महोदयों के निवासार्थ उदारता पूर्वक देकर हमारी बड़ी कठिनाई दूर की थी ।

बाहरी। हम सब से अधिक कृतज्ञ पूजनीय लाला देवराजजी के हैं जिन्हों ने पंडिताजी को भेजकर निश्चय ही हमारा बहुत उत्साह बढ़ाया। पाठशाला का प्रारंभ हम ने केवल आप ही से पुष्कल सहायता के प्राप्त होने के प्रण तथा आशा से किया है। हमें पूर्ण निश्चय है कि आप हम बालकों की अवश्य पूर्ण रूपेण सहायता करते और समय २ पर उचित परामर्श भी अवश्य देते रहेंगे। द्वितीय कृतज्ञ हम श्रीमान् मु० नारायण प्रसादजी मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल वृन्दावन तथा अधिष्ठाता उपदेश विभाग यु० पी० के हैं। हमें विशेष रूप से आप के दयापात्र होने का सौभाग्य प्राप्त है। हम ने आज तक जब कभी आप से किसी भी प्रकार की सहायता के लिये प्रार्थना की है आपने अवश्य स्वीकार की है। इस उत्सव में आपने एक बहुत बड़ी कृपा की है जिसके लिये हम आपके अत्यन्त कृतज्ञ हैं। हम आप से सर्वदा ऐसी ही कृपा दृष्टि बनाय रखने की पूर्ण आशा करते हैं। तृतीय हम अत्यन्त कृतज्ञ श्री० गोपीचन्दजी शिमला निवासी के हैं। आपके कहे हुए शब्दों से हमें पूर्ण निश्चय है कि आप भविष्य में भी हमारी अवश्यमेव सहायता करेंगे। उत्सव के पश्चात आप ट्रेन में सवार होते २ हमें पूर्ण विश्वास दिला गये हैं कि आप किसी प्रकार से हताश न हों। आप हमारी हर प्रकार की सहायता अवश्य करेंगे। हमें फीरोज़ाबाद के धनाढ्य और प्रतिष्ठित महोदयों से पूर्ण आशा है कि वह हमारी अवश्य सहायता करके हमारे नवीन उत्साह को बढ़ावेंगे ताकि हमें पवित्र वैदिक धर्म्म की कुछ सेवा करने की योग्यता प्राप्त कर सकें, हां हमें पूर्ण आशा है कि आप महाशय कन्या पाठशाला और पुस्तकालय के "संरक्षक" बनकर और सभा पर विशेष कृपा दृष्टि रखकर हमारे उत्साह को अवश्य बढ़ाते रहेंगे ताकि भविष्य में हम वैदिक धर्म्म की कुछ सेवा कर सकें। सेवा हम करेंगे, सहायता केवल आप करते चल देखें फिर यह मंद अवस्था कैसे दूर नहीं होती है। क्या पाठशाला को इस वर्ष में सुदृढ़ करदेना आवश्यक नहीं है? पुस्तकालय को भी शीघ्र आरंभ करदेने का विचार है। नाईटस्कूल और अस्पर्शीय जातियों की शिक्षा तथा आरंभिक शिक्षा के लिये भी प्रबन्ध विचारा जा रहा है। केवल आप की उदारतापूर्वक सहायता की देर है।

चरण सेवक, द्वारिका प्रसाद
मंत्री आर्य्य-मित्र-सभा फ़ीरोज़ाबाद (आगरा)

(दत्तात्रय की कथा)

[गतांक से आगे]

छप्पय—मधुर वचन तें दियो महात्मा वर उत्तर सुन ।
चौबिस गुरू सुजान कियों राजन मन महं गुन ॥ ८ ॥
तिन तें लै बुधि जीवन मुक्त होय जग माहीं ।
विचरों रहहुं स्वतन्त्र, हर्ष शंका कछु नाहीं ॥ ९ ॥
पृथ्वी, वायु, अकाश, अग्नि, जल, हरिण, कबूतर ।
सूरज, चन्द्र, समुद्र, चील, हाथी अति सुन्दर ॥ १० ॥
मधवा, भंवर, पतङ्ग, मीन, बालक, कुमारी ।
गणिका, अजगर, भृंगि, इषुक, मकड़ी, गरुड़ारी ॥ ११ ॥
इन कर हूं हों शिष्य पाय शिक्षा अति नीकी ।
इन्द्रिय निग्रह लक्ष भोग आशा सब फीकी ॥ १२ ॥
जिन तें जो सिख लह्यो आज स्पष्ट बताऊं ।
कारण निज जड़त्व कर राजन् तुमहिं सुनाऊं ॥ १३ ॥
(१) छिति अति दुष्ट व्रती पापिन तें जाति दबाई ।
क्षमा धारि रहि जाय करे नहिं और उपाई ॥ १४ ॥
खाय अधम को लात रत्न प्रतिदिन वह देवै ।
क्षमा तितिक्षा रखे समय निष्काम सों सेवै ॥ १५ ॥
(२) तजै न उच्च सुभाव वायु आकाश प्राण प्रद ।
दे जगजीवन दान मान इच्छुक नाहीं मद ॥ १६ ॥
करि इन्द्रिय अरु मनहिं योगिजन लखि याको वश ।
त्यागि भोग संसार लहैं उत्तम जीवन यश ॥ १७ ॥
(३) नहिं भींगै जल सों नहिं सूरज सके तपाई ।
है अकाश सर्वत्र न संयुत नहिं बिलगाई ॥ १८ ॥

सोरठा—
(४) मल युत समिधा आय, पड़ै अग्नि में जोहि समय ।
अति उज्ज्वलित दिखाय, धन्य वन्हि तव तेज जग ॥ १९ ॥
तपसीजन जग बीच, ले शिक्षा यातें सुघर ।
जो व्यवहारिक नीच, करें शुद्ध तेहि शक्ति सों ॥ २० ॥
(५) शीतल नीर सुभाव, ठंडक औ निर्मल करे ।
तातें सिख लै राव, करु पवित्र उपदेश सों ॥ २१ ॥
(६) घटै बढ़ै नहिं चन्द, केवल भ्रम अज्ञानता ।

रहे सदा निर्द्वन्द, न्यूनाधिक हो विम्ब रवि। २२॥
तिमि आत्मा व्यवहार, नहिं सुख दुख अरु मरण है।
जानहु ताहि बिचार, यह प्रसंग अति गूढ़ सुन। २३॥

(७) जिमि जल लेय दिनेश, दे वृष्टी करि जगत कर।
यह व्यवहार हमेश, पै अभिमान न कछुक हिय॥ २४॥
तिमि योगी जन पाय, विद्या शिक्षा हुनर जो।
सब कहं देयं सिखाय, तजि अभिमान औ कृपिणता॥२५॥

(८) जग कुटुम्ब के नेह, फंसे कबूतर * दुक नहीं।
तिमि तजि चिन्ता देह, करें भलाई सन्त जो॥ २६॥

चौपाई—

(९) इन्द्रिन सुख लगि करैं अधर्म्मा।
यहिते नीच और नहिं कर्म्मा॥ २७॥
अजगर तें सिख लेहु सुजाना।
पेट लागि क्यों कर मनमाना॥ २८॥

(१०) नहिं सूखे नहिं बढ़े जलेशा।
ग्रीषम पावस पाइ हमेशा॥ २६॥
तिमि सुख दुःख विज्ञ सम जानैं।
द्वेष घमण्ड न ईर्षा मानैं॥ ३०॥

(११) तृष्णा बश है मृत्यु बुलाई।
जरैं पतङ्ग रूप लखि जाई॥ ३१॥
जो नर कनक नारि लखि फाँसिहैं।
सम पतङ्ग निश्चय सो नसिहैं॥ ३२॥

(अपूर्ण)
"मिश्र"

---

* कबूतर की कथा--कहते हैं कि किसी वन में एक वृक्ष के ऊपर कबूतरों का जोड़ा रहता था, उन दोनों पक्षियों का परस्पर बड़ा स्नेह था। जिन वस्तुओं को कबूतरी चाहा करती थी कष्ट से भी लाकर कबूतर उसको दिया करता था। एक दिन जब उनके बच्चे हो गये तो बाल क्रीड़ा से वे बहुत प्रसन्न होने लगे। एक दिन चिड़ीमार ने बच्चों को फंसा लिया। कबूतरी यह वृत्तान्त देख चिल्लाने लगी और विलाप करती हुई स्वयं भी फँस गई। अन्त में पुत्र और स्त्री के वियोग से दुखी हो कबूतर भी स्वयं फँस कर मर गया। इसी प्रकार जो लोग विशेष स्नेह करते हैं वे आत्महत्या के पाप को भी कर डालते हैं॥

उद्योग और श्रम।

प्रिय पाठक गण ! आज हम भारतवर्ष में जिस ओर देखते हैं आलस्य का ज़ोर है। सब ने तक़दीर को बड़ा मान रक्खा है। उद्यम और उद्योग की ओर किसी का ध्यान तक नहीं है। कोई कुछ कहता है, कोई कुछ परन्तु आप में जो कुरीति पड़ गई है उसकी ओर कोई दृष्टि नहीं डालता। प्यारो ! भारत की अवनति का कारण यहां के लोगों का अपरिश्रमी और अनुद्योगी होना है।

ईश्वर ने संसार में मनुष्य को श्रम करने के लिये बनाया है, क्योंकि ठाली बैठे रहने से उसका कोई काम नहीं चल सक्ता। यदि सामने उत्तमोत्तम भोजन लाकर रख दिये जायें तो उनके देखने से भूख दूर न होगी, किन्तु खाने से, खाना भी एक (काम) श्रम है। बड़े शोक की बात है कि जीव जन्तु तक श्रम और उद्योग करें परन्तु मनुष्य चुप चाप बैठा रहे, देखो, शहद की मक्खी कितना उद्योगी जीव है और कितना उद्योग और श्रम करती है। श्रम से बढ़कर संसार में मनुष्य का और कोई सच्चा मित्र नहीं। श्रम करने से सुख मिलता है, चित्त प्रसन्न रहता है और कुसंगति से भी बचाव होता है। आज तक जितने मनुष्य और देश प्रसिद्ध हुए हैं उन्होंने श्रम और उद्योग के हेतु ही जगत में नाम पाया है। देखिये, शिवाजी का बाप एक साधारण पुरुष था जो चाकरी (नोकरी) करता था परन्तु शिवाजी ने श्रम और उद्योग ही से इतनी उन्नति की कि अब तक समस्त देश उसके गुण गा रहा है। अमरीका और छोटे से देश जापान ने श्रम और उद्योग से जो उन्नति अल्पकाल में की है वह किसी से छिपी नहीं है।

पूर्व समय में भारत देश सर्वोत्तम था, परन्तु अब बिलकुल उस के प्रतिकूल है इसका मुख्य कारण यही है कि पहिले इस देश-वासी परिश्रमी और उद्योगी थे, अपने श्रम और उद्योग से उन्होंने नाना प्रकार के पदार्थ बनाये थे। हा शोक! हा शोक!! कभी तो इस देश की यह दशा थी कि यहां की शिल्प आदि विद्या को देख और उसका हाल सुनकर सब चकित होते थे।

महमूद ग़ज़नवी जब इस देश में आया तब यहां के नगरों की चमक दमक और बनावट को देखकर उसके दिल में आया कि "मैं अपने देश में जाकर अपनी राजधानी को इन नगरों के समान करूं"

[मखज़न उलुम पुस्तक ८ नं० ११] में लिखा है कि भारत वर्ष का बना रूई का कपड़ा-ऐसा प्रसिद्ध और उपमा के योग्य है कि इस की बनावट तथा उत्तमता की बराबरी अभी तक अन्य देश के निवासी नहीं कर सके हैं और रेशम का उत्पन्न (पैदा) करना और उस से नाना प्रकार की वस्तुएं बनाना भारत निवासी प्राचीन समय से ही जानते थे। सुनहरी, रुपहरी, किमख़ाब, ज़रबफ्त इत्यादि शायद इन्हीं की कारीगरी से निकली हुई हैं और इन कपड़ों पर रङ्गों की चमक दमक तथा मज़बूती में अभी तक यूरूपियों ने भारत निवासियों की बराबरी नहीं की है। इसके सिवा और भी कई प्रकार की कारीगरी ऐसी हैं जिनको प्राचीन समय से इस देश के लोग अच्छी तरह से जानते थे, परन्तु न्याय तो यह है कि इन लोगों ने विशेष दृष्टि चालाकी पर कम और बुद्धि-वृद्धि पर अधिक रक्खी थी। मुसलमान-राज्य के होने से इन की वह बुद्धि-वृद्धि नाश को प्राप्त होने लगी; यहां तक कि यदि भारतीय पुस्तकें न होतीं तो इन सब बातों की (साक्षी) गवाही भी न मिलती और ऊर्द्ध लिखित बातें अंधेरे में ही रह जातीं जिस से प्राचीन समय के प्रकाश का पता भी मिलना कठिन पड़ जाता

हिस्ट्री आफ मेडिसन मिस्टर वाईस साहब पत्रा १२ में लिखा है कि आर्य्य लोग सुन्दर तथा बुद्धिमान दृढ़ होते थे। वैदिक समय में आर्य्य लोग प्रायः प्रत्येक शिल्प को जानते थे। घड़ी व प्याला तथा तीर, बाण, तलवार और जिरहबक्तर इत्यादि बनाते थे, परन्तु आज इस देश की यह गति है कि वह लोग जो इसी भारतवर्ष से वस्त्र मँगा कर शरीर ढाँपते थे आज इसी देश के वासियों के हाथ करोड़ों रुपयों का कपड़ा बेचते हैं। शीशे आदि के नाना प्रकार के पदार्थ बेच कर भारत वासियों के मन हरण किया करते हैं। प्यारो! अब न्यायाधीश पंचमजार्ज के राज्य का सूर्य्य निकल आया है, इस गाढ़ निद्रा से उठो और सोचो कि अन्य देशों ने कितनी उन्नति की है और कर रहे हैं। प्रारब्ध (तक़दीर) का विचार तज कर उद्योग और उद्यम की सीढ़ी पर चढ़ो तब ही तुमको उन्नति की छत मिलेगी ॥ इति ॥

देवदत्त शर्मा छतारी,
जि० बुलन्दशहर।

मालिनी

के धार्मिक जीवन ने ५००० हृदयों को हिला दिया।

भारतवर्ष के इतिहास में महात्मा बुद्धदेव का समय स्वर्ण के अक्षरों से लिखने योग्य समय था। वह स्त्री जाति जो चारवाकों के समय में पुराणा वस्त्र और फटा जूता बन चुकी थी उसका पुनरुद्धार हुआ। महात्मा बुद्धदेव ने विद्युल्लता के समान जीवन ज्योति का विस्तार किया। ज्योति का संचार होना था कि मृत प्रायः हृदयों में भी प्राणों का संचार हो गया। जीवन को उच्च बनाने की शिक्षा ऐसी मनोहारिणी थी कि शतशः वह कुमारियां जो सम्पत्तिशील तथा समृद्धिशील कुलों में उत्पन्न हुई थीं निर्वाण की प्राप्ति के लिये तथा स्त्री जाति के सुधार के लिये तत्पर होगई। इन देवियों ने स्वाध्याय, दान और धर्म के साधनों का अवलम्बन किया। यश तथा नाम की प्रसिद्धि के भावों के बिना ही यह देवियां धर्म का सन्देसा लेकर बाहिर निकलीं। दृढ़संकल्प तथा अथक उत्साह से कार्य्य करने में उद्यत होकर उन्हों ने किन्हीं भी प्रतिबन्धकों की परवाह नहीं की और ऐसे पवित्र जीवन की झलक दिखाई कि जिसके सामने पराक्रमी तथा वीर पुरुषों ने भी सिर झुका दिया। इन देवियों में काशीराज क्षत्रिय कुलोद्भव महाराज ...हीं क्रकी की राजदुलारी मालिनी कुमारीभी थी। सुकुमारी मालिनी ने बाल्यावस्था से ही बौद्ध धर्म में अपना अनुराग प्रगट करना शुरू किया। उस की प्रबल इच्छा के सामने कोई भी प्रतिबन्धक न ...। उसने अल्प काल में ही बौधधर्म के मुख्य २ ग्रन्थों का अध्ययन कर लिया। एक दिन बौध भिक्षुओं को निमन्त्रण देकर उसने बहुत कुछ दान दिया। जब लोगों को ज्ञात हुआ तो ब्राह्मणों ने महाराज क्रकी के पास जा कर कहा कि राजकुमारी का यह व्यवहार अनुचित है और उसे विश्वास दिलाया कि राजकुमारी के इस निन्दनीय व्यवहार के कारण राज्यनैतिक भय है। महाराज ने ब्राह्मणों की शिक्षा को स्वीकार किया और राजकुमारी को बौध धर्म के त्याग देने का परामर्श दिया। जब कुमारी मालिनी ने न माना तो उसे राज्य से बहिष्कृत कर दिया गया। कुमारी ने बिना किसी ...नो इज्जत के राज्याज्ञा को शिरोधार्य्य किया और राजभवन से

निकल पड़ी। एक सप्ताह भी व्यतीत न हुआ था कि इस षोडश वर्ष की सुकुमारी ने अपनी अद्भुत वक्तृता शक्ति तथा धर्म में सच्चे अनुराग के कारण काशी में तहलका मचा दिया और अपनी विचित्र आकर्षण शक्ति से काशी के ५००० नर नारियों को बुद्ध-मतानुयायी बना दिया। उसने एक ओर तो काशी की पाण्डित मण्डली को शास्त्रार्थ के लिये आह्वान किया दूसरी ओर अपनी विद्वता से सहस्रों मनुष्यों के सन्देहों को दूर कर उन में धर्म के लिये श्रद्धा के भावों का अंकुर उत्पन्न कर दिया। महाराज काशी नरेश ने अपनी पुत्री की कीर्ति तथा असाधारण ख्याति को सुन कर आदर तथा सन्मान पूर्वक राज्यभवन में निमंत्रित किया। मालिनी ने एक विहार बनवाया जिस में १०००० भिक्षुणियां रह कर विद्याध्ययन कर सकें और स्वयम उनकी अधिष्ठात्री बनी। उसने उनके हृदयों में धार्मिकाग्नि का संचार किया और उनके मनों को प्रेम की मृदु ज्योति से कोमलतम बना दिया। उस समय से सारनाथ की प्रसिद्धि हुई और धर्म के जिज्ञासुओं तथा आत्मिक बल के प्यासों के लिये केन्द्र बन गया। मन्दिरों और उच्च अट्टालिकाओं का निर्माण होने लग गया और धर्म के दीपकों को हाथ में धारण करने वाली सहस्रों प्रेम की साक्षात मूर्तियां और प्रचारिकाएं इस काशी नगरी से निकल कर देश देशान्तरों तथा द्वीप द्वीपान्तरों में फैल गईं। धन्य थी वह राजदुलारी मालिनी जिस की आहुति से यह यज्ञाग्नि प्रचण्ड हुई। धन्य वह काशी नरेश जिसने राज्य के वैभव को बनाने की नियत से आत्मा के विरुद्ध राजकुमारी को बाज़ारों में खड़े होकर उपदेश करने पर बाध्य किया। कुमारी मालिनि! जब तक काशी विद्या का केन्द्र बना है, जब तक सारनाथ की पवित्र भूमि को यात्री देखने आते रहेंगे, हां, जब तक उस पुनीत भूमि पर प्राकृतिक दृश्य के चिन्ह विद्यमान रहेंगे तब तक आप की अमिट कीर्ति को जगत के ऐतिहासिक बराबर लिखते चले जावेंगे।

इच्छनी कुमारी।

[श्रीयुत हरिदास माणिक लिखित]

जिस समय प्रतापी पृथ्वीराज दिल्ली में राज्य कर रहे थे, उसी समय आबूगढ़ में सलष पंवार नामी राजा राज्य करता था। इसकी

लडकियां और एक पुत्र थे। कन्याओं का नाम मन्दोदरी और इच्छनी कुमारी था, और पुत्र का नाम जैतराव था। सलष राजा ने अपनी मन्दोदरी नाम्नी पुत्री का विवाह गुजरात के राजा भीमदेव से कर दिया था। अभी इच्छनी कुमारी कुमारी थी। इच्छनी के रूप रंग की प्रशंसा चारों ओर फैल रही थी। यही भनक भोला राय भीमदेव के कानों में भी पड़ी। आबू से जो स्त्रियां मन्दोदरी के साथ २ दासी बन कर आई थीं वे और भी इच्छनी की प्रशंसा किया करती थीं। अस्तु, भीमदेव कामातुर हो रात दिन इच्छनी की चिन्ता में निमग्न रहता था। एक दिन मन्दोदरी की पुरोहितिन ने कहा—"हे भीमदेव इच्छनी मानो, अप्सरा होकर इस पृथ्वी पर आई है तुम उसका अवश्य पाणि ग्रहण करो। देखो, उसके लिये कतिपय राजा लोग लालायित हो रहे हैं। उसके सुन्दर केश संवारने के लिये हज़ारों दासियां प्रतिपल प्रति क्षण उपस्थित रहा करती हैं। हे भीम-देव! तुम किसी न किसी प्रकार अवश्य ही उसका पाणिग्रहण कर अपना जन्म सफल करो।" पुरोहितानी की ऐसी बातों को सुन कर भीमदेव के लार टपक पड़े, अब वह इसी चिन्ता में पड़ा कि किस प्रकार इच्छनी कुमारी से भेंट हो। कुछ दिनों के पश्चात् भोलाराय ने सलष पंवार को एक पत्र लिखा जिसका आशय यह था—"हे मान-नीय श्वसुर आप हमारी एक विन्ती स्वीकार करें क्योंकि इस विन्ती के स्वीकार करने ही में आपका कुशल है। आपकी इच्छनी कुमारी जो दूसरी कन्या है उसे हमें ही समर्पण करें और इस सम्बन्ध को अपना अहोभाग्य समझें। यदि ऐसा न करेंगे तो आपको परिवार नष्ट भृष्ट कर देंगे। हमारी प्रभावशाली सेना आपके गढ़ को छार छार कर देगी और हम बलात्कार से आपकी कन्या का पाणिग्रहण करेगें। अपने प्रधान को ऐसा पत्र देकर भीमदेव ने विदा किया। थोड़े दिनों में जब प्रधान सलष पंवार के दरबार में पहुंचा उस समय सलष पंवार ने अपने दामाद के यहां का प्रधान जान बड़ा आदर सत्कार किया और उसे बड़े २ सरदारों में बैठने को स्थान दिया। थोड़ी देर तक बात होने के बाद प्रधान ने अवसर पा भीमदेव का वह पत्र सलष पंवार को दे दिया। सलष ने उस पत्र को देखा और थोड़ी देर तक मौनव्रत धारण कर प्रधान से बोले। "हे प्रधान! तुम स्वयं इस पर विचार

कर सकते हो कि मैं इस विषय में कहां तक हस्ताक्षेप कर सकता हूं
कन्यां ने दिल्लीश्वर पृथ्वीराजही को अपना भविष्य प्राणाधार बनाना
निश्चित कर लिया है। अब यह उसकी इच्छा पर है कि वह उस
विचार को तोड़कर भीमदेव से सम्बन्ध करे। मैं समझता हूं कि
वह कभी भी इसको स्वीकार नहीं करेगी। तुम टुक धीरज धरो
मैं अभी उसे सभा में बुलाता हूं, तुम स्वयं उससे प्रश्न कर उसके
विचार को जान लो।

(२)

इतना कह कर सलष पंवार ने अपनी कन्या को भरी सभा
में बुलाया। थोड़ी देर में कन्या सभा में उपस्थित हुई। कन्या ने
नियम पूर्वक सब को प्रणाम कर कहा "हे पिताजी!
आपने हमें इस अवसर पर क्यों बुलाया है, क्या मेरे लिये
कोई और आवश्यक कार्य तो नहीं आ पड़ा, वा युद्ध का विषय
तो नहीं छिड़ गया है, हे पिता! क्या हमें भी युद्ध में
चलना होगा।" इसपर सलष पंवार ने उत्तर दिया कि-"हे पुत्रि!
तुम ध्यान दे कर सुनो, न तो कोई आवश्यक कार्य है और न कोई
युद्ध विषयक बात है—"तुम्हारी बहिन के पति भीमदेव ने यह
पत्र लिखा है (पत्र देता है) जिसका सारांश यह है कि वह तुमसे
विवाह करना चाहता हैं। हे कुमारी! तुम इस पर विचार कर उत्तर
दो, मैंने तुम्हारे निश्चित पति के विषय में भी कह दिया है। हे बेटी!
तुम स्वयं इस पर विचार करने के योग्य हो इस कारण समझ
बूझ कर उत्तर दो।" कन्या ने अपने पिता की बातों को ध्यान
पूर्वक सुना और थोड़ी देर तक चुप रह कर कहा-"हे पिताजी!
आप हमारे पिता हैं और इस सभा में विचार शील मंत्री भी उप-
स्थित हैं, आप ही लोग इस पर विचार करें कि अपने पूर्व
निश्चित विचार को छोड़कर हमें भीमदेव के साथ विवाह करना युक्ति
संगत है वा पृथ्वीराज के साथ। मैं पृथ्वीराज की वीरता, सहनशीलता
और चतुरता पर मुग्ध हूं. मेरा प्राणाधार वही है और मैं उन्हीं से
विवाह करूंगी। हे पिता! मेरा यह दृढ़संकल्प है।" कन्या के
मुख से ऐसी बात सुनकर प्रधान अवाक् सा रह गया। फिर
उसने ठहर कर कहा—"हे सुन्दरी! तुम किस भूल में पड़ी हो
और क्या भीमदेव का प्रताप तुम्हें विदित नहीं है? जिस समय

भोलाराय भीमदेव का दलबल चलता है उस समय पृथ्वी भय-भीत हो कांपती है। उसके सामने देश देशान्तर के लोग झूमत हैं। यह वही प्रतापी भीमदेव है जिसने वघेलों को जीता, और वघेलों को हराकर तीन तेरह कर डाला। ब्रह्मा ने उस वीर को स्वयं अपने कर कमलों से बनाया है।" प्रधान की बातों को सुनकर इच्छनी ने कहा—"हे वीरवर! तुम मुझ से उसके प्रताप की क्यों वृथा प्रशंसा करते हो यह तो मन माने की बात है मेरा मन मकरन्द उसी पृथ्वीराज में लिप्त है, मैं उसी से विवाह करना चाहती हूं। हे प्रधानजी! तुम भीमदेव से जाकर कहो कि हे भीमदेव! किसी के साथ बलात्कार से विवाह नहीं करना चाहिये क्योंकि यदि मेरा स्वभाव तुम्हारे स्वभाव के विरुद्ध हुआ तो सिवाय जन्म भर के दुख के और कुछ हाथ नहीं आवेगा। कन्या से इतनी बातें सुन कर प्रधान चुप रहा और लाई हुई वस्तुओं को भेंट कर जाना ही चाहता था कि सलष पंवार ने नम्रता पूर्वक कहा कि "हे प्रधान जी! तुम भीमदेव से मेरी ओर से विनती कर कहियो कि इस सम्बन्ध के करने में मैं असमर्थ हूं। कन्या का संकल्प पृथ्वीराज से हो चुका है, इस कारण इस विषय में मैं हस्ताक्षेप नहीं कर सकता। सलष राय से इस प्रकार का उत्तर पाय प्रधानजी दरबार से चले गये। प्रधान के जाने के पश्चात सलष ने इच्छनी को भी बहुत समझाया पर उसने एक न मानी वरन विनती कर कहा—"हे पिता! आप ऐसी ही शिक्षा देते हैं जिससे मेरा जीवन नष्ट हो। मैं पृथ्वीराज की वीरता पर मुग्ध हूं। सिवाय उनके, मैं और किसी को वर नहीं चुन सकती। इस उत्तर के पाने के बाद राजा ने सभा को विसर्जन कर दिया।

(३)

दूसरे दिन गृह जाते समय प्रधान दरबार में विदा लेने आया और जाते समय कहा कि हे—"राजन् तुम यह उचित कार्य नहीं कर रहे हो, भीमदेव का प्रताप अखण्ड है वह बड़ा ही बलशाली है, इसका परिणाम ठीक नहीं होगा अब मैं जाता हूं।" इस पर जैत-सी ने तलवार निकाल कर कहा—"हे प्रधान जी! तुम्हारा राजा बड़ा घमंडी है, उसे स्वतन्त्र बनने का बड़ा गर्व है, उसको अभी क्षत्रियों

से काम नहीं पड़ा है। जिस समय क्षत्रियों से काम पड़ जायगा उस समय उसकी सब बाईं पच जायगी। वह पाखंड से बल बढ़ा कर अपने को अजर अमर मानता है यह सर्वथा उसकी भूल है। इस पर भीमदेव के भेजे हुए प्रधान ने कहा-" हे जैतराव! तुम अभी बालक हो इस कारण भीमदेव के बल को नहीं जानते हो, वह क्षण मात्र में पुंगलगढ़, आबू गढ़ी पर और अजमेर इत्यादि बिना प्रयास ही ले सकता है। हे बालक! यदि भीमदेव रूठ जायगा तो मारवाड़ की नौ कोटि प्रजा की रक्षा करने वाला कोई नहीं दीख पड़ेगा।" इस पर राजा सलष ने उत्तर दिया-"हे प्रधान जी! किसी बात का घमंड करना व्यर्थ है। हमारी सहायता ईश्वर करेगा।" सलष से इस प्रकार की बातें सुनकर भीमदेव का प्रधान सभा से उठ कर चला गया। उसके चले जाने के पश्चात् जैतराव और सलष ने युद्ध की तैयारी कर दी और पृथ्वीराज के पास भी इच्छनी के संकल्प का विवरण कहला भेजा इधर भीमदेव ने प्रधान से सब विवरण सुन कर आक्रमण की तैयारी कर दी। उसने तुरंत सिंध, सोरठ, कच्छ इत्यादि अपने अधीनस्थ राजाओं को बुला भेजा और एक विशाल सेना ले आबूगढ़ की ओर चला। जाते समय उसने पृथ्वीराज के पास भी एक पत्र भेज दिया जिसका आशय यह था कि तुम सलष पंवार की कन्या से कभी भी सम्बन्ध न करना वह हमारा परम शत्रु है। मैं उसे उसकी उद्दण्डता का फल चखाने जाता हूं। आबूगढ़ पहुंच कर भोला राय भीमदेव ने अपना पड़ाव डाल दिया, और आक्रमण का विचार करने लगा। उसकी सेना ने ठीक आबूगढ़ के दक्षिण मार्ग पर आक्रमण किया। इधर सलष राय अपने मुख्य २ सेनापतियों को लेकर गढ़ की रक्षा कर रहा था। युद्ध आरम्भ हुआ, दोनों पक्ष के सहस्रों वीर हताहत हुये। खेमकरन खंघार वीरसिंह जरासिंह इत्यादिक बड़ी वीरता से लड़ते २ काम आये। आबूगढ़ पर भीमदेव ने अपनी विजय पताका गाड़ दी। ऐसे विकट समय में सलषराय को चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार सूझने लगा। " उसने कहा अब नहीं, अब लुटिया डूबी" इतना कह कर उसने इच्छनी से कहा-'बेटी! अब यदि तू ने भीमदेव को अपना भावी पति स्वीकार कर लिया होता तो आज यह दशा देखने में न आती, हाय! आज आबूगढ़ की प्रजा एक अनाथ दीन दुखिया की नाईं दुख उठा रही है और मुझ पापी से कुछ बन नहीं पड़ता

नकी रक्षा करूं।" बेटी ने समझा कर कहा–"पिताजी! आप घब-
राइये मत, कुछ युक्ति से काम लीजिये, मैं अपनी सखियों के साथ
साथ पुरुष वेष धारण करती हूं और सपरिवार यहां से निकल
भागती हूं, वर्तमान समय में किसी प्रकार अपनी रक्षा की जाय फिर
जब दिन फिरेंगें तब देखा जायगा।" बेटी की यह युक्ति पिता को बहुत
पसन्द आई और वैसा ही किया। सलष पंवार कुछ सैनिकों को ले
सपरिवार गढ़ से निकल भागे और एक निकटवर्ती जन शून्य स्थान में
छुप कर अपनी रक्षा की। इच्छनी कुमारी भी पिता के साथ
ही साथ रही।

आबूगढ़ पर विजय पताका फहराने के बाद भीमदेव ने पृथ्वीराज
को इस कलह का जड़ जान उस पर आक्रमण करना निश्चय
किया। ऐसा सोच विचार कर उसने शहाबुद्दीन की सहायता
चाही। उसने शीघ्र ही मकवाना नामी पुरुष को शहाबुद्दीन गोरी के
पास भेजा पर उसने उसका इस प्रकार तिरस्कार किया कि–"तू
जाकर भीमदेव से कह दे कि मैं स्वयं काफिरों का सत्यानाश करूंगा,
मैं खुरासान रहूंगा वरना दर बदर फिरता रहूंगा, अरे
नादान एलची! दाब, तलवार और इल्म दौलत साझे में नहीं होती,
पहले ही उस पिथौरा को नेस्त नाबूद करूंगा और पीछे भीमदेव को
इस शमशीर का मजा चखाऊंगा।" बादशाह के इस उत्तर से मक-
वाना से भी न रहा गया। उसने कहा–"ऐसे ईरानी कुरानी फिरकों
को हम भारतवासी बायें हाथ की चुटकी से मल देते हैं, भारतवर्ष
में पैर रक्खो तब इसका स्वाद चक्खोगे वरनः इसी जगह बैठे २ क्य
बकते हो।" दूत से ऐसा उत्तर सुनकर शहाबुद्दीन से न रहा गया
उसे मारने को तलवार म्यान से खींच ली और चाहता था कि उस
का मस्तक उसके धड़ से अलग करता पर लोगों ने यह कह कर
कि दूत को नहीं मारना चाहिये रोक दिया। इस अपमान से मकवाना
ने भी अपना क्षत्रियत्व रूप प्रकट किया और तलवार खींच कर दो
सवारों को साफ ही कर दिया। हेजम और हुजाब नामी दो बड़े
सरदार मारे गये साथ मकवाना भी मारा गया। जब मकवाना
के मारे जाने की सूचना भीमदेव को मिली तब उसने क्रोधित हो
गोरी पर चढ़ाई करना निश्चित किया और एक विशाल सेना लेकर
गजनी की ओर कूच ही करना चाहता था कि कई एक अपशकुन हुए।

इस अनर्थकारी अपशकुन से भीमदेव ने शहाबुद्दीन पर न चढ़ाई कर पृथ्वीराज ही पर चढ़ाई करना ठीक समझा। इस समय पृथ्वीराज नागौर में विराजमान थे। पृथ्वीराज ने और पांच छः हज़ार सेना दिल्ली से मंगा ली। इस प्रकार दस बारह हज़ार सेना सनद्ध कर पृथ्वीराज शहाबुद्दीन की ओर बढ़े और कैमास को नागौर में छोड़ दिया। नागौर में कैमास ने सेना बद्ध की और कई प्रकार का व्यूह रच कर बैठ रहा। भीमदेव ने भी अपनी सेना सजा कर आक्रमण किया। इस युद्ध का विवरण पृथ्वीराज रासौ में विचित्र प्रकार से दिया है-"आनन्द विक्रम सं० ११९४ अष्टमी को चन्द्रोदय होने पर आधी रात के समय पुनः युद्ध आरम्भ हुआ। इधर से कैमास का सैन्य समूह सजधज कर चला उधर से भीमदेव की प्रचण्ड सेना आई। इस युद्ध में कैमास की सेना का सेनापति चामुण्डराय था जिसने अपने बाहुबल का अद्वितीय पराक्रम प्रकट किया। इक-तीस हज़ार भीमदेव की सेना और बीस हज़ार कैमास की सेना, इस वीर का अद्वितीय पराक्रम देखकर चकित थी। बड़े २ शूरवीर इसकी वीरता की सराहना करते थे। मोहनसिंह परिहार, नाहरराय, निड्डुर राव, पज्जूनराय इत्यादि सामन्त भी शत्रु की सेना को कृषी की भांति काट रहे थे। पृथ्वीराज की तरफ से चामुण्डराय, जैतसी बड़गुज्जर रामराय, कन्हचौहान, प्रसंगराय खीची, चन्द पुण्डीर, मदनसिंह, मारु देवराजबग्गरी सलष देवराज का भाई और पुत्र, निड्डुर वीरसिंह आदि वीर अपनी २ सेना सहित कैमास के साथ थे। भीमदेव की तरफ से सारंगदेव, नरसिंह और वीरसिंह आदि सरदार, भीमदेव की ओर से ससैन्य प्रस्तुत थे। उस धुंधुली रात में उक्त वीरों का तेज, तलवारों की चमक बड़ी ही भली मालूम देती थी। जिस सवार पर उनका वार पड़ता था वह दो टुकड़े हो जाता था। मतवाले हाथियों को सहज विदीर्ण करने वाली असिधारा से वह वीर अपने २ शत्रुओं के दल समूह को, काई सा फाड़ रहे थे शत्रुओं से दबाया हुआ भीम देव, यद्यपि बड़े सोच विचार में व्यस्त था पर तौ भी अपनी सेना के उत्साह लिये मतवाले हाथी पर सवार, क्रोध से आंख लाल २ किये युद्ध में प्रस्तुत था। रामराय बडगुज्जर की आंख उस पर पड़ गई। वह सेना को काटता हुआ वहां आ पहुंचा और भीमदेव के हाथी

को, उसने एक ऐसा हाथ मारा कि वह ढोल सा ढुलक गया और भीमदेव पृथ्वी पर गिर कर लोट पोट हो गया जिससे उसकी क्रोधाग्नि बड़ी वेग से प्रज्वलित हो उठी और वह तुरंत दूसरे हाथी पर सवार होकर जीवन की आशा छोड़ कैमास का प्राण लेना ठान उस पर झपटा । जहां राजा वहांही फौज । भीमदेव की फौज राजा को कैमास की तरफ बढ़ते देख कर उसी ओर झुक पड़ी उधर भीमदेव और इधर चामुण्डराय और कैमास दोनों अपने २ स्वामि के कार्य के लिये प्राण को तुच्छ जान कर हथियार चलाने लगे । क्षण मात्र में वह वीर रस करुणारस मिश्रित दीख पड़ने लगा पांच घड़ी पर्यंत बड़ा ही घोर युद्ध होता रहा । अन्त में भीमदेव की सेना भाग गई और पृथ्वीराज की जय हुई दोनों तरफ की १६००० फौज मारी गई, तेरह हजार भीमदेव के तरफ की ओर तीन हजार कैमास के ओर की। पृथ्वीराज के तरफ के राव परिहार माहन मल्लीन महीराव सहदेव इत्यादि वीर सरदार काम आये । आबू पर पृथ्वीराज का राज्य स्थापित हुआ और जैतसिंह पंवार वहां का सूबेदार नियत किया गया।

अपने पूर्व राज्य पर पुनः अपना अधिकार देख जैतसी फूला न समाया और एक भारी सभा कर कैमास को मान से सन्मानित किया और एक जागीर दी पर कैमास ने उसे स्वीकार न किया वरन उत्तर में यही कहा कि जब तक तन में प्राण है तब तक यह शरीर पृथ्वीराज का है। इस पर जैतसी ने बहुत समझाया पर कैमास ! ने जागीर स्वीकार कर वीरों की विधवाओं को बांट दिया । इच्छनी कुमारी ने भी कैमास की प्रशंसा कर कहा-" हे धीर कैमास जब महाराजाधिराज पृथ्वीराज के सेनापति ऐसे हैं तो स्वयं श्रीमान् कैसे होंगे। हे वीर ! तुम उनका वर्णन करो। तिस पर कैमास ने कहा—"हे सुन्दरी वह वीर बड़ा ही पराक्रमी और शब्दवेधी बाण मारनेवाला है। वह सात लोहे के तवों को बेध सकता है और अचूक बाण मारता है। रंग रूप में तो साक्षात् मानो इन्द्र है । वीरता में अद्वितीय और पराक्रम में अपूर्व है । हे कुमारी ! वह तुम्हारे योग्य है। धन्य तुम्हारे भाग्य जो तुम ऐसे भावी पति पर दृढ़ हो "। इतना कह कैमास ने बड़ी सी वस्तुएं इच्छनी कुमारी की भेंट कीं। दासी ने भेंट को लिया फिर इच्छनी कुमारी ने कहा-" हे वीर ! मैं वास्तविक में

महाराज से बड़ी लज्जित हूं कि मुझ तुच्छ हीन दीन के लिये अन्न-दाताजी ने इतना कष्ट उठाया पर अब कष्ट कब सफल होगा। आजकल पृथ्वीराज कहां हैं। दिल्ली ही में हैं वा किसी विकट युद्ध में व्यस्त हैं।"

कैमास ने उत्तर दिया कि—"इस समय पृथ्वीराज कुछ सेना के सहित शहाबुद्दीन की ओर झुके हैं। इस बात को सुन कर आबू-राज सलष पंवार के पुत्र ने भी इस विकट समय में पृथ्वीराज की सहायता करनी उचित समझा। उसने तुरंत कुछ सेना ले सांरुड की ओर कूच किया। कुछ भाग का परिचालन जैतसी ने किया और पिछले भाग पर स्वयं इच्छनी कुमारी भी रही। यद्यपि इच्छनी कुमारी को कुछ लोगों ने मना भी किया। पर उसने यही उत्तर दिया कि जिसके लिये यह सब कांड भया है जब वही युद्ध में व्यस्त है तब मैं किस प्रकार सुख शैय्या पर निद्रा लूं। अस्तु, इच्छनी कुमारी भी साथ २ चली। इस युद्ध का वृतान्त रासो हमें इस प्रकार देता है। "पृथ्वीराज केवल पन्द्रह हज़ार सिपाहियों की चुनी हुई सेना लेकर सारुंडपुर की ओर बढ़े। पांच सौ सिपाहियों सहित लोहाना सेना के आगे रहता और पांच हजार सेना सहित पृथ्वीराज सेना के मध्य में रहता। इस प्रकार से कूच करके वे दिल्ली से तीन दिन में सारुंडपुर के पास जा पहुँचे। यह खबर जब शहाबुद्दीन को लगी तो उसने भी खुरासान खां रुस्तम खां फिरोज खां इत्यादि अपने २ मुख्य सेनापतियों को बुला कर युद्ध की तैय्यारी करने की आज्ञा दी और युद्ध के लिये प्रस्तुत फौज के बीच में खड़े होकर उसने कहना आरम्भ किया, " बार बार की हार की अबकी कसर निकाल लेनी चाहिये, अबकी बार की तुम्हारी वीरता यही है कि बाजी हाथ से न जाने पावे।" उधर रात व्यतीत होते ही चहुआन भी बढ़ आए। पूर्व से चहुआन और पश्चिम से शहाबुद्दीन की सेना की मुट्ठ भेड़ हुई। शहाबुद्दीन की ओर से खुरासानी सेना हरावल में थी। वे लोग पृथ्वीराज की थोड़ी सी सेना देख कर बड़े वेग से झपटे परन्तु लोहाना ने उन्हें सहज ही मार भगाया। सलष पंवार का पुत्र जैतसी चौहान के फौजी निशान की रक्षा पर दृढ़ था। वीर पृथ्वीराज की थोड़ी सी सेना असंख्य यवन दल में घुस कर उसी में खिल्लत मिल्लत हो गई और उसने

ऐसे विकट पराक्रम से युद्ध किया कि अखण्ड धूल आच्छादित हो जाने के कारण आकाश नहीं सूझ पड़ता था। जब इस प्रकार विकट मार हो रही थी तो वीर कन्ह चौहान भी कैमास का साथ छोड़ कर ससैन्य सारुंड पुर में आ पहुंचा और उसने युद्ध होते देख कर चढ़ी सवारी धावा कर दिया । अद्वितीय वीर कन्ह चौहान उस अगम्य यवन सेना में इस प्रकार धँस पड़ा, जैसे सुन्दर २ फूलों से आच्छादित स्वच्छ जल वाले गहरे सरोवर में मतवाला हाथी पैठ पड़े । वह यवन सेना के बड़े २ मुख्य सरदार और शूर वीरों को कमल नाल की नाईं तोड़ २ कर मरोड़ने लगा। दोनों ओर के सेनापति सरदार स्वामि धर्म धारण किए हुए बड़ी वीरता से युद्ध कर रहे थे। इसी समय पृथ्वीराज के पुरोहित गुरुराम ने यवन सेना पर एक पत्र लिख कर बाण द्वारा चलाया जिसके बल से समस्त यवन-सेना मोहित सी होकर युद्ध करने में शिथिलता करने लगी। यह देख कर इधर से भी हाजी खां, काजी खां ने भी चेतना मन्त्र चलाया जिससे यवन सेना की मोह निद्रा भंग हो गई और दोनों दल पुनः पूर्ववत् लड़ने लगे। पृथ्वीराज की सेना बराबर यवन दल को छिन्न भिन्न करती हुई शहाबुद्दीन के सन्निकट पहुंचने लगी। यह देख कर शहाबुद्दीन ने घोड़े को छोड़ कर हाथी की सवारी की तब शहाबुद्दीन का एक पासवान मुसाहिब मारूफ खां कहा कि अब क्या किया जाय। काजी ने भी पराक्रमहीन होकर तस बीह हाथ से छोड़ दी है। यह सुन खुरासान खां अन्यान्य सरदार सहित बादशाह के निकट आ गया और चारों ओर से घेर कर उसकी रक्षा करने लगा। भगवान चन्द्रदेव के समान वीर पृथ्वीराज तारों के मध्य में स्थित नक्षत्रों के समान तेजोमय अपनी वीर सेना सहित आगे बढ़ता ही जाता था। इस समय सलष पंवार का पुत्र जैतसी हरावल में था। पन्द्रह बीस हजार सेना का तीन लाख सेना से मुकाबला करना भी तो सहज नहीं है, इसी जैतराव के ऊपर बड़ी भीड़ पड़ रही थी। परन्तु वीर जैतराव इसकी तनिक भी परवाह न करके अपने धर्म कार्य में तन मन से प्रवृत था। जब जैतराव एक बड़े टेढ़े मौके पर फंस गया तब पृथ्वीराज ने आकर उसकी सहायता की जिसके लिए जैतराव बड़ा कृतज्ञ हुआ और इस से उसका साहस बढ़ा कि उसने अपने अद्वितीय पराक्रम

से यवन सेना का मुंह मोड़ दिया। एक ओर इच्छनी कुमारी भी साग पात की नाईं यवनों को काट रही थी। उसकी अनुपम वीरता देख कर पृथ्वीराज ने पूछा कि—"हे जैतराव! यह कौन सुवीरा अप्सरा की नाईं इधर उधर तलवार लिए घूम रही है अहा! इसकी सुन्दरता और वीरता पर मेरा मन मुग्ध हो रहा है। जैतराव ने उत्तर दिया—"धर्मावतार! यह मेरी बहिन इच्छनी है इसी के लिये यह सब काण्ड हो रहा है। इस पर पृथ्वीराज के हर्ष की सीमा न रही। दूसरी ओर युद्ध करते २ इच्छनी ने कई दल को परास्त किया जिससे समस्त यवन सेना भाग निकली। पृथ्वीराज ने लूट करते २ उसका पीछा किया और सलष के पुत्र जैतराव ने उसको बन्दी कर लिया। बन्दी करने पर इच्छनी भी दूसरी ओर से आ धमकी और कड़क कर कहने लगी—"हे ईरानी कुरानी के मतानुयायियो! तुम्हे इस प्रकार अन्याय के साथ युद्ध करते लज्जा नहीं आती। तुमने बारबार पृथ्वीराज से हार पाई पर अभी तक टेक नहीं छोड़ा। हे वीर! इस भारतवर्ष पर तुम्हारी दाल नहीं गल सकती। उन्हीं जङ्गलों में जाकर आस पास की भूमियों पर तलवार के जोर से कुरानी मजहब फैलावो पर यहां पर वह नहीं हो सकती। तुम यह जान रक्खो कि जब तक एक भी क्षत्रिय का बच्चा जीवित है तुम्हारा काम न होने देगा। अब दिल्ली गमन करो और वहां बन्दी होकर कुछ दिन भारतवर्ष की भी हवा खावो। " यह कह कर इच्छनी ने भी दो तरफ से उसकी सेना को घेर लिया। शहाबुद्दीन ने नम्रभाव से कहा कि "ऐ बहादुर औरत तुम जो कुछ कहो सब फबता है।" यह कह कर जैतराव से कहा कि—"बहादुर क्षत्रियो! अब फौज को न काटो और मुझे कैद करके ले चलो।" जैतराव ने बन्दी कर तुरंत पृथ्वीराज के सम्मुख लाकर उपस्थित किया। शहाबुद्दीन ने तीन वार जमीन चूम कर पृथ्वीराज से कहा दीन दुनिया के मालिक पिथौरा! मैं तुम्हारी इतायत कबूल करता हूं,अब मैं या मेरी कौम कभी भी तुम्हारे खिलाफ हथियार न उठावेगी। इस बार मेरे ऊपर एतकाद रक्खो और कुरानशरीफ की कसम खाकर कहता हूं कि मैं अब हरगिज़ हिन्दुस्तान पर चढ़ाई न करूंगा।"पृथ्वीराज ने कहा"हे यवनराज! तुम इसी प्रकार की प्रतिज्ञा प्रायः किया करते हो पर किसी पर दृढ़ नहीं रहते। मैं

कई बार तुम्हें बन्दी किया और छोड़ दिया, पर तुमने हमारे इस दयायुक्त विचार पर कुछ भी ध्यान न दिया, बल्कि उल्टे ही अवसर पा पा कर जब हमें सेना रहित पाया तब २ आक्रमण कर बन्दी करने की चेष्टा की, कहो! तुम्हारे संग अब क्या वर्ताव किया जाय। तुम्हें पुनः छोड़ दिया जाय वा अब इसी भारतवर्ष की हवा खाना स्वीकार करते हो। (शेष फिर)

साधु स्वधर्म प्रचारिणी सभा, काशी।

अनुमान दो मास से काशी के कतिपय उत्साही संन्यासियों ने एक सभा खोली है जिस का नाम साधु स्वधर्म प्रचारिणी सभा काशी है। इस सभा में प्रत्येक पूर्णिमा तथा अमावस्य को अधिवेशन होता है। अनुमान २५ सभासद बन चुके हैं। गत अधिवेशन में छोटे बड़े लग भग ६७ उपस्थित थे। तारकेश्वर के महन्त ने गत अधिवेशन में बलपूर्वक सभा में उपदेश दिया था कि बाल्यावस्था में कुमारों को संन्यासी नहीं बनाना चाहिये॥ स्वामी रामनन्दजी मन्त्री सभा सूचित करते हैं कि एक पुस्तकालय भी खोल दिया गया है जिस में उपयोगी पुस्तकें और समाचार पत्र रहेंगे। काशी के लिये यह सौभाग्य का विषय है कि सहस्रों साधु तथा संन्यासियों की बिखरी हुई शक्तियों को एकत्रित करने के लिये यह सभा स्थापित हुई है। इस के उद्देश्य निम्न लिखित हैं।

सभा के उद्देश्य

(१) परस्पर प्रेम की वृद्धि करना।

(२) वेद उपनिषद् दर्शनादि सत् शास्त्रों का पढ़ना पढ़ाना।

(३) यथासमय पक्षपात रहित होकर प्राणीमात्र को सदाचार वा सद्धर्म का सदुपदेश करना।

(४) ईश्वर रचित सृष्टि की सेवा करते हुये कालक्षेप करना और दूसरों की भलाई में अपना जीवन व्यतीत करना,

(५ बुद्धि नाशक किसी भी मादक वस्तु का ग्रहण न करना।

(६) सत् धर्म पर स्वयं चलने का प्रयत्न करना और दूसरों को चलाने का यत्न कराना

(७) सदा निःस्वार्थ वृत्ति से निरभिमान पूर्वक सत्य, मधुर, और प्रिय मितभाषी होने की स्वयं कोशिश करना और दूसरों को तत्पर लाने का परिश्रम करना

(८) दुराग्रह को त्यागकर लक्षण, प्रमाणसिद्ध पदार्थाव लम्बी और सद्ग्राही होना।

स्वामी रामानन्द मंत्री.

(३२ पृष्ठ से आगे)

इसके उत्तर में यही कहना पड़ेगा कि आर्य्य समाज ने अप्रत्यक्ष रीति से कुल हिन्दू जाति में जो सुधार किये हैं और करेगा वही वास्तविक महत्व का काम है। जिस में आर्य के गुण हों वही आर्य्य है चाहे वह आर्य्यसमाज का मेम्बर हो या अंजुमनइस्लाम का। आर्य्य (हिन्दू) धर्म में विशेषता यह है कि वह ईसाई और मुसलमानी मज़हब की तरह ऐतिहासिक नहीं है। ईसाई मज़हब का कुल दारमदार ईसा पर है और मुसलमानी मज़हब मुहम्मद पर निर्भर है। अगर ईसा और मुहम्मद बुरे साबित होजायें तो उनके मज़हब भी बुरे साबित हुए बैठे हैं, लेकिन हमारे मज़हब की हालत यह नहीं है। अगर रामकृष्ण, शंकर और दयानंद ने कोई पाप किया तो उनका पाप उनके सिर।

सत्य और धर्म अच्छी चीज़ें हैं। "सत्यंवद, धर्मचर" यही हमारा मज़हब है जो तीनों लोक और तीनों काल में ठीक है। ऐसी दशा में एक उदार धर्म का अनुयायी होकर हमको अपना मज़हब हवनकुंड और भजनमंडली में महदूद नहीं करना चाहिये। अगर हमारा यही हौसला है कि दुनिया भर में हमारे विचार फैलें तो वह भी हो सकता है, लेकिन वह सिर्फ इस अर्थ में हो सकता है कि आर्य्य विचारों का प्रभाव दुनिया पर पड़े न कि इस अर्थ में कि सारी दुनिया संध्या, हमारी संस्कृत और वैदिक संध्या करने लगे। लेख बढ़ गया इसलिये अब दो चार बातें और लिखकर खतम करूंगा। आर्यसमाज की तरक्की के लिये निम्नलिखित तीन बातों पर गौर करना बहुत ज़रूरी है (१) आर्यसमाज का गवनमेंट से सम्बन्ध और बर्ताव (२) आर्य्यसमाज का मुसलमान और ईसाई इत्यादि मज़हबों से बर्ताव (३) आर्यसमाज का हिन्दू धर्म से बर्ताव।

(१) अफसोस की बात है कि कुछ दिन हुए, आर्य्यसमाज की तरफ से गवर्नमेंट को कुछ सन्देह होगया था। कुछ तो आर्य

समाज के दुश्मनों ने गवर्नमेंट के कान भरे थे और कुछ आर्यसमाज ने भी अपनी असली हालत गवर्नमेंट को बताने में आलस्य किया था, लेकिन जिन लोगों का ख्याल है कि सरकार अब भी आर्य समाज को राजनैतिक सभा समझती है वह प्रतिष्ठित कर्मचारियों की निम्नलिखित राय को पढ़ें।

माननीय आर० बर्न साहेब लिखते हैं " यह ठीक है कि आर्य लोग राजनैतिक भी हैं लेकिन यह कहना कि वह आर्य होने की वजह से राजनैतिक हैं ठीक नहीं माना जा सकता है"

गत मर्दुमशुमारी के सुपरिन्टेन्डेन्ट मिस्टर इ० ए० एच० ब्लन्ट साहेब, का मत है कि

"आर्य्यसमाज में राजनैतिक पुरुष हैं, लेकिन इस से यह नतीजा निकालना असम्भव है कि आर्य्यसमाज राजनैतिक सभा है। हर्ष की बात है कि अफसरों ने समझदारी से काम लिया है। दो और लापरवाहियों से आर्य समाज को सचेत रहना चाहिये।

(१) पहिली बात उपदेशकों से सम्बन्ध रखती है। ब्लन्ट साहेब ने बहुत ठीक लिखा है कि बहुत से लोग आर्यसमाज के उपदेशक नहीं हैं लेकिन मौका पड़ने पर अपने को आर्यसमाज का उपदेशक कह देते हैं और उनके अनाप शनाप बातों का असर आर्यसमाज पर पड़ता है। उसी साहेब ने यह भी ठीक लिखा है कि बहुत से उपदेशक स्वामी दयानन्दजी की गूढ़ फिलासफी का समझना और समझाना मुशकिल जानकर नौजवान विद्यार्थियों को खुश करनेवाली कोई भी बात कह बैठते हैं। मैं कुछ उपदेशकों को जानता हूं जिनको मैं कभी आर्यसमाज के प्लेटफार्म पर देखता हूं और कभी सनातनधर्म सभा में, कभी स्वदेशी मीटिंग में बोल रहे हैं और कभी विदेशी शक्कर पर पुस्तकें छपा छपा कर बेचते हैं। आर्यसमाज को ऐसे लोगों से खबरदार रहना चाहिये। महर्षि दयानन्द का धर्मवृत्त, वशिष्ठ और व्यास का प्रतिपादित सत्य धर्म आर्यसमाज को सौंपा गया है। खबरदार, कहीं आपकी लापरवाही से उसको नुकसान न पंहुचे।

दूसरी लापरवाही भजनों और भजन मण्डलियों के सम्बन्ध होती है। करताल पर जो कुछ आया, गा दिया, किताब में जो कुछ आया छाप दिया। इस विषय में बहुत सचेत रहना चाहिये

क्योंकि आपके बिना विचारे एक काम कर देने से सम्भव है कि गुरुकुल का नाम बदनाम हो। डी० ए० वी० कालेज को अङ्गुली दिखलाई जाय।

(२) दूसरा सम्बन्ध आर्यसमाज का ईसाई और मुसलमान मज़हब से है। इस में कोई शक नहीं है कि आर्यसमाज की ओर से लिखा पढ़ी में अधिक कोमल शब्दों का व्यवहार होना चाहिये। आप कहेंगे कि मुसलमान और ईसाई मज़हब ने क्या उठा छोड़ा है? उत्तर में यही कहना है कि दूसरों की बुरी आदत मत सीखिये और सब से बढ़कर बात तो यह है कि आप आर्य हैं।

(३) तीसरा सम्बन्ध आर्यसमाज का सनातनधर्म या हिन्दू-धर्म के दूसरे अङ्गों से है। कहना नहीं होगा कि सनातनधर्म आर्य-समाज और बौद्धधर्म तक एक ही विशाल वैदिक धर्म के भिन्न २ स्वरूप हैं। इसलिये आपस में इनका बर्ताव बिलकुल भैयाचारे का होना चाहिये। परस्पर इनका खण्डन मण्डन भी वैसा ही होना चाहिये जैसा भाई भाई को प्रेम से समझाता है, लेकिन इस देश के अभाग्य से ऐसा बहुत कम हुआ है। आप विद्या, वयो वृद्ध पंडितों को पोप कहकर पुकारते हैं और जवाब में आप भी पोप और असुर बनते हैं। आप अवतारों को गाली देते हैं और उधर से निराकार महाराज और स्वामी दयानन्दजी की खबर ली जाती है। मैं गोरखपुर कालेज में पढ़ता था, महामण्डल के एक उपदेशकजी पधारे थे, मैंने अपने आंखों से देखा था कि उपदेशक महाराज ईसाई उपदेशकों का वेद के खण्डन करने की युक्ति बतलाते थे। सन् १६११ ई० की मर्दुमशुमारी की रिपोर्ट में मैंने पढ़ा था कि एक कहत में एक हिन्दू बच्चा एक मुसलमानिन बेवा के दरवाजे पर पड़ा मिला। बेवा उसको ले जाकर पालने लगी। जब आर्यसमाज को मालूम हुआ तो उसने बच्चे को मांगा। उस जगह के हिन्दुओं ने एक सभा करके एक मत होकर कहा कि मुसलमानिन को बच्चा देना अच्छा है लेकिन आर्यसमाज को देना अच्छा नहीं है। यह घटना २० करोड़ शिखा सूत्रधारी के लिये लज्जा तथा महाशोक की बात है। मेरे एक मित्र ने बनारस संस्कृत कालेज से संस्कृत की प्रथमा परीक्षा को उत्तीर्ण किया था लेकिन कोई आजी-विका नहीं मिली। आखिरकार मेरे पास आये ...

और कहने लगे। "मित्र, अब तो बड़ा कष्ट हो रहा है कोई आजीविका दीजिये" मैंने कहा—"मित्र, अखबारों में अकसर आर्यसमाज की ओर से पण्डितों की मांग रहती है, क्या आप वहां जा सकेंगे ?"

आप थोड़ी देर तक सोचते रहे और बोले—"नहीं मित्र ! पयः पानं भुजंगानां केवलम् विषवर्धनम्" ऐसी बातों पर अधिक टीका टिप्पणी करने से दुख होता है। कहना यही है कि अब हमको सावधान होजाना चाहिये।

आर्य्यसमाजी और दयानन्दी।

अभी तक तो मैंने आर्यसमाज का बाहरी लोगों से सम्बन्ध बतलाया है। अब आर्यसमाज के अन्दर का रिश्ता देखना है। कहना नहीं होगा कि कभी २ आर्यसमाजी लोग सिद्धान्तों के ऊपर उलझ जाते हैं, लेकिन मेरी राय में आर्यसमाज के जन्मदाता ने इस तरह उलझने का मौका ही नहीं दिया है। अगर मुझे आर्य्यसमाज पर कुछ बोलने का अधिकार होता तो मैं कहता कि जब तक मनुष्य आर्य्यसमाज के १० नियमों को मानता है तब तक वह आर्य्य-समाजी है चाहे वह स्वामी दयानंद जी से मत भेद ही क्यों न रखता हो। दयानंदी बनने में स्वामीजी का अनुयायी बनना ज़रूरी है, लेकिन आर्य्यसमाजी बनने में ऐसी ज़रूरत नहीं है। दयानंदी और आर्यसमाजी में वही सम्बन्ध है जो बेसेन्टाईन और थियासोफिस्ट में है। कुछ सज्जन ऐसे हैं जो थियासोफिस्ट हैं लेकिन मिसेज़ बेसेन्ट से सहमत नहीं हैं। आर्यसमाज के नियम सचमुच ही बड़े उदार हैं। इन्हीं दश नियमों वाला आर्यसमाज अवश्य चिरस्थायी और दिगन्तव्यापी होगा। चौथे और दशवें नियम में आर्यसमाज को अजर और अमर करने वाले मसाले भर दिये गये हैं। दशवां नियम तो अंगरेज़ी फिलासफर मिल की लिबर्टी के एक प्रसिद्ध वाक्य का अनुवाद है। तीसरे को छोड़कर बाकी सब नियमों को दुनियां के सब समझदार आदमी मानते हैं। तीसरा नियम भी स्वामी जी ने बहुत बचा के लिखा है।

"वेद सत्य विद्याओं का पुस्तक है, वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना आर्यों का परमधर्म है"। ज़रा ग़ौर से देखिये नियम यहांतक नहीं भी कहता है कि वेद ईश्वरकृत हैं।

वेद ज्योतिष, आत्मज्ञान, गणित, रेखा गणित आदि सत्य विद्याओं की पुस्तक है। आर्य लोग विद्वान होते हैं। ऐसे लोक परलोक हितकारी विद्याओं की पुस्तक उनको ज़रूर पढ़नी चाहिये। ऐसे उदार नियमों पर धर्म ज्यादे दिन तक ठहर सकता है

अन्त में लेख समाप्त करते हुए मैं यह कह देना ज़रूरी समझता हूं कि आर्यसमाज ने बड़ा काम किया है और करेगा। परमात्मा इसकी रक्षा करे * !

मन्नन द्विवेदी गजपुरी।

———o———

ब्राह्मण भेद विध्वंसक मण्डली:—भारतवर्ष की वर्त्तमान गति प्रकाश तथा अन्धकार के दोनों पक्षों को धारण कर हमारे सामने उपस्थित हो रही है। जहां जातीय सभाओं में कुछ उन्नति करने की सामग्री मिलती है वहां हानि भी अत्यन्त हो रही है। गत सरयूपारी महासभा के उत्सव में जब प्रश्न उठाया गया कि अमुक आर्य्य समाजी यहां विद्यमान है और वह सभा में विधवा विवाह का प्रश्न उपस्थित किया चाहता है तो एक अधिकारी ने बड़े ज़ोर से उठ कर कहा कि हमारी सभा में एक भी आर्य्य नहीं। तभी तो सभापति काशी के महामहोपाध्याय पण्डित शिवकुमार जी शास्त्री ने ब्रह्मचर्य का प्रचार किया, परन्तु शास्त्रीजी जहां बाल विवाह का निषेध कर गये, जहां कुमारों और कुमारियों के लिये ब्रह्मचर्य्य धारण कराने का आदेश दे गये वहां उन में इतना आत्मिक बल भी नहीं था कि वह १६ और २५ वर्ष के ब्रह्मचर्य को ही बतला देते। लोगों ने इसको विपरीत समझा और मान लिया कि यतः पण्डित जी की कुल में ६ वर्ष के ब्रह्मचर्य्य का विधान मिलता है अतएव ६ वर्ष के बालकों को ब्रह्मचारी बना कर गृहस्थाश्रम में प्रविष्ट करा देना चाहिये। इसी प्रकार जातीय सभाओं द्वारा उपकार के स्थान में अपकार बहुत हो रहा है। अब गया

---

* नोट:-यह लेख हमारे मित्र श्रीयुत्त पूज्यनीय पण्डित मन्नन द्विवेदी बी. ए. गजपुरी ने लिखा है। हम यद्यपि आप के प्रत्येक भाव से सहमत नहीं तिसपर भी इस लेख को "भारतवर्ष में सुधार" नामी लेख माला में स्थान दिया गया है। जो आर्य्य सज्जन इस लेख के अनुकूल अथवा प्रतिकूल लिखना चाहें उनके लिये नवजीवन के कालम खुले हैं (सम्पादक, नवजीवन)

निवासी श्री बजरङ्गदत्त शर्म्माजी विज्ञापन वितरण कर चेष्टा कर रहे हैं कि ब्राह्मणों के भेद को विध्वन्स कर दिया जावे, परन्तु क्या वह बलिया की सभा के समान १६ आने सनातन धर्म्मी ब्राह्मणों के अन्दर से भेद दूर करना चाहते हैं। यदि यही विचार है तो वह उस समय तक प्रतीक्षा करें कि जब तक वैदिकधर्म का सन्देसा प्रत्येक गृह में नहीं पहुंचता।

भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद्

विदित हो कि आर्यकुमार परिषद सहारनपुर ने नवजीवन पत्र के स्वामी से निश्चय कर लिया है कि १६ पेज नवजीवन के आर्यकुमार सभाओं के लिये रखे जावेंगे जिन में केवल आर्यकुमार सभाओं का वृतान्त रहा करेगा और नवजीवन पत्र केवल २) साल में भेजा जाया करेगा। अतः आप लोग अपनी आर्यकुमार सभाओं के समाचार नवजीवन पत्र काशी के पते से भेज दिया करें। सब आर्यकुमार सभाओं को उचित है कि प्रत्येक आर्यकुमारसभा नवजीवन पत्र को अवश्य मँगाया करे क्योंकि यह उनका मुख्य पत्र होगा। इस पत्र की ग्राहक संख्या बढ़ाने में अत्यन्त परिश्रम करना चाहिये। नवजीवन की अधिक संख्या बढाना आर्यकुमार सभाओं की शक्ति का बढ़ाना है।

अलखमुरारी बी० ए० एल० एल० बी०
महामन्त्री भारतवर्षीय आर्यकुमारपरिषद् सहारनपुर.

सामाजिक समाचार।

आर्यधर्म परिषद् अहमदाबाद, बम्बई प्रान्त की प्रतिनिधि का अधिवेशन तथा आर्य्यधर्म परिषद् का संगठन इस वर्ष श्री अहमदाबाद नगर में होगा। पुरुषार्थी वहां के आर्य पुरुष परिषद् को जो २२, २३ और २४ मार्च को होगा बड़े समारोह से मनाने की चेष्टा कर रहे हैं।

दयानन्द हाईस्कूल काशी के स्थायी भवन के लिये स्थान को लेने का प्रबन्ध किया जा रहा है। स्थान के मिल जाने पर काशी आर्यसमाज का उत्सव तथा हाई स्कूल के बुनियादी पत्थर रखने के लिये उत्सव की तिथियां निश्चित होंगी।

स्कूल मिडिल तक रेकिगनाइज़ हो चुका है। हाई डिपार्टमेन्ट खोलने का प्रबन्ध आगामी जूलाई में किया जावेगा।

हिन्दू विश्वविद्यालय का डेप्यूटेशन—बम्बई प्रान्त में कार्य्य कररहा है। इस समय तक अनुमान ८० लाख रुपयों का वायदा हो चुका है जिनमें से २१ लाख के करीब कोष में आभी चुके हैं। मालवीयजी ने ४ करोड़ की अपील की है। कार्य उत्साह से हो रहा है। सफलता की पूरी आशा है।

संयुक्त प्रांतीय आर्यकुमार सभाओं:--में से अधिकांश सभाओं ने अपना सम्बन्ध भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद के साथ जोड़ लिया है परन्तु पंजाब की बहुत थोड़ी ऐसी कुमार सभाएं हैं जिन्हों ने इस ओर ध्यान दिया है। क्या कुमार सभाओं को संगति के गुणों के बतलाने की आवश्तक्ता है जो अलग थलग पड़ा रहना स्वीकार करती हैं।

श्रीयुत महाशय मदनमोहन सेट एम० ए० एल० एल० बी० मन्त्री संयुक्त प्रान्त आर्य प्रतिनिधि सभा ने जो गश्ती पत्र समाज के नाम भेजा है वह इस योग्य है कि प्रत्येक आर्य पुरुष उस पर विचार करें। हमारे विचार में मन्त्री महोदय बड़ा उपकार करेंगे यदि समाजों को वह ऐसे नियम बनाकर भेजें कि जिनके द्वारा समाजों को स्थानीय अफसरों से पत्र व्यवहार करने में सुविधा हो और वह अपने २ अधिकारों को सुरक्षित रख सकें।

विज्ञापन।

नवजीवन

——:o:——

गत वर्ष के नवजीवन की सजिल्द किताब तय्यार हो गई है । अनुमान ७५० पृष्ठ की पुस्तक भिन्न २ विषयों से अलङ्कृत है । मूल्य नवीन ग्राहकों के लिये केवल २) रु० मात्र । शीघ्र मंगवावें, क्योंकि थोड़ी सी कापियां तय्यार हुई हैं ।

भारत की वीर माताएं

पं. ललिता प्रसाद जी द्वारा संगृहीत । २७० पृष्ठ की पुस्तक । भिन्न भिन्न स्थान की वीर माताओं के वृतान्त । मूल्य केवल ॥≡) मात्र ।

मिलने का पता–प्रबन्धकर्त्ता नवजीवन ।

Printed by Pt. Baijnath jijja Manager, at the Tara Printing Works, Benares and Published by Keshava Deva Shastri, Dasashwamedh, Benares City.

No. A. 474 [ओ३म्] रजिस्टर्ड नं० ४७४

नवजीवन

Nawajiwan

सम्पादक—केशवदेवशास्त्री

विषय सूची ।

भाग ४ (मार्च १९१३) अङ्क १२

इस आन्तिम अङ्क के साथ नवजीवन का चौथा वर्ष समाप्त होता है ।

वार्षिक मूल्य ... ... ३) रु०

एक प्रति का मूल्य ...... ।-)

कन्या गुरुकुल काशी ।

जिन सज्जनों ने कन्या गुरुकुल काशी के सम्बन्ध में हम से प्रश्नों द्वारा पूछा था उन्हें हम श्रीमती गयादेवी जी के पत्र की ओर ध्यान दिलाते हैं । कन्या गुरुकुल केवल पण्डित इन्द्रदत्त जी की स्कीम है जो कभी कम्पनी खोल कर और पांच २ रुपये के हिस्से बेच कर और कभी मेस्मेरेज़म का व्यापार करके कुल चलाना चाहता है । अच्छा होता इन्द्रदत्त ऐसी स्कीम खोल कर आर्य्य पब्लिक को कष्ट में न डालता । अस्तु, उत्सव तो होगा १८, १९ मई को परन्तु काशी में किसी को ज्ञात तक नहीं कि यह कन्या गुरुकुल क्या है । हम केवल श्रीमती गयादेवी जी का पत्र छाप कर सर्वसाधारण को सूचना देते हैं कि कोई सज्जन अपनी कन्याओं को न लावें—

श्रीमती गयादेवीजी का पत्र

श्रीमान् सम्पादक नवजीवन, काशी ।

महाशयजी—नमस्ते !

जो विज्ञापन कन्या गुरुकुल काशी के सम्बन्ध में जिस का उत्सव १८, १९ व २० मई १९१३ नियत की गई थी निकला है वह नोटिस पण्डित इन्द्रदत्त जी ने मेरे नाम से निकलवाये हैं । उन नोटिसों के अनुकूल आज तक कोई प्रबन्ध ठीक नहीं किया गया है । इस कारण उपरोक्त तिथियों पर उत्सव होने की कोई सम्भावना नहीं है । कृपया आप सर्वसाधारण को सूचित करदें जिस से किसी को व्यर्थ कष्ट न सहना पड़े । अन्य पत्र सम्पादकों से भी प्रार्थना है कि इस पत्र को छाप कर कृतार्थ करें ।

कृपाकांक्षिणी

गया बाई प्रधानी ।

बांस का फाटक—काशी

निरामिष भोजन ।

कलकत्ता आर्य्य समाज के मन्त्री महाशय टेकचन्द जी उस व्यक्ति को ५०) रुपये पुरस्कारार्थ देंगे जो १५ जुलाई तक "निरामिष भोजन" के विषय पर वेदादि सत् शास्त्रों के प्रमाणों से एक ऐसा उत्तम ग्रन्थ लिखेगा जो १०० पृष्ठ से अधिक और ... पृष्ठ से न्यून न हो । लेख १५ जुलाई तक प्रबन्धकर्त्ता नवजीवन कार्यालय के नाम पहुंच जाने चाहियें ।

ओ३म्

उदयति यदि भानुः पश्चिमे दिग्विभागे
प्रचलति यदि मेरुः शीततां याति वन्हिः।
विकसति यदि पद्मं पर्वताग्रे शिलायां
न भवति पुनरुक्तं भाषितं सज्जनानाम्॥

भाग ४. | मार्च, १९१३ | अङ्क १२

प्रार्थना।

श्रद्धयाग्निः समिध्यते श्रद्धया हूयते हविः।
श्रद्धां भगस्य मूर्धनि वचसा वेदयामसि॥

भगवन्! आप हमें वेद द्वारा आदेश देते हैं कि सत्य में श्रद्धा रखो, यह कितने महत्व का विषय है परन्तु मनुष्य श्रद्धा की शक्ति से वंचित प्रतीत होते हैं। जिस वैज्ञानिक को विज्ञान के किसी सिद्धान्त में विश्वास हो गया वह उसे कदापि नहीं छोड़ता। श्रद्धा के वशीभूत होकर जगत के भौतिक पदार्थ अपने २ कार्य्य कर रहे हैं परन्तु हमारे संशयात्मा हृदय हमें श्रद्धा के अभाव के कारण अविद्या और अज्ञान में गिराते और नष्टप्राय कर देते हैं। यह मानते हुए भी कि "संशयात्मा विनश्यति" हम इस पाश में फंसे हैं और मुक्त होने की चेष्टा नहीं करते। भगवन्! हमारे तुच्छ हृदयों में श्रद्धा की ज्वाला को प्रदीप्त कीजिये ताकि सन्मार्ग पर अहर्निश चलते हुए हम अपना कल्याण कर सकें और अपने आप को उच्चकोटि का मनुष्य बना सकें।

ओ३म् शम्।

उपदेश ।

श्रद्धां भगस्य मूर्धनि वचसा वेदयामसि ।

घनघोर काली घटा में एक मनुष्य अपने उखड़ते हुए पाओं को आगे बढ़ाय चला जाता है । विद्युत की चमक, बादलों की गर्ज और वृष्टि का भय यद्यपि उसके हृदय को कम्पायमान कर रहा है तथापि उसे विश्वास है, उसे दृढ़ श्रद्धा है कि मेरे अन्दर बल है और मैं इन कठिनाइयों को चीरता हुआ अपने अभीष्ट उद्देश्य पर पहुंच सक्ता हूं । निर्जन बन में शेर की चिंघाड़ और तूफान की भयावह गति बलवान से बलवान हृदय को स्थगित कर देती है, नाना प्रकार के भय और ऊंची नीची चटानें पाओं को डगमगा देती हैं परन्तु श्रद्धावान पथिक आनन्द पूर्वक बनों और निर्जन बनों को चीरता हुआ अपने मार्ग को खोजता है और उस समय तक विश्राम नहीं करता जब तक कि अपने अभीष्ट को पा नहीं लेता । पर्वत की तलेटी में भूला हुआ पथिक देखता है कि रात्रि पड़ गई, ऊपर घने घास में सर्पों के चलने की मन्द २ गति का बोध होता है, स्थान २ पर कांटे शरीर को कलनी बना रहे हैं, प्रचण्ड वायु चार कदम आगे चलें तो आठ कदम पीछे फेंक रही है, अन्धकार में मार्ग का पत्ता तक नहीं, पहाड़ की उत्तराई में पगडण्डी भी १०, २० पग ले जाकर निराश्रय छोड़ देती है, नीचे भयानक गढा प्रतीत होता है, ऊपर चढ़ने को न मार्ग है और न विश्रामार्थ स्थान है परन्तु पथिक के हृदय में श्रद्धा और बलवती श्रद्धा विद्यमान है जो उसे आगे बढ़ाने और धैर्य्य को धारण करने का आश्रय दे रही है । वह आगे बढ़ता है और अपने अभीष्ट उद्देश्य को प्राप्त करता है । परमात्मा के नियम सत्य पर स्थिर हैं उन में श्रद्धा का होना अनिवार्य्य विषय होना चाहिए । मनुष्य चाहे सहस्रों उद्देश्य रखता हो परन्तु यदि उन में से प्रत्येक पर उस का दृढ़ विश्वास नहीं तो वह बालु की नीव पर खड़ा है । आपत्ति के झोंके उसे डगमगा देंगे, हिला देंगे, हां गिरा देंगे, इसी लिये धार्मिक उन्नति कथन द्वारा नहीं किन्तु कर्त्तव्य कर्मों द्वारा होती है । जिनका मन्तव्य और कर्त्तव्य एक नहीं वह कदापि उन्नति नहीं कर सक्के । जिन्हें परमात्मा पर दृढ़ विश्वास है, जिन्हें सत्य पर

भक्ति तथा श्रद्धा है उनके विश्वास को कोई भी भौतिक पदार्थ हिला नहीं सका और यदि पाठक ! आप विचार करेंगे तो आप को पता लगेगा कि संसार में महापुरुष वही बने कि जिन के हृदय में अगाध विश्वास और प्रगाढ़ श्रद्धा काम कर रही थी। उनका उद्देश्य महान था। परमात्मा से ज्योति को उपलब्ध कर और हृदय में श्रद्धा के उच्च भावों को धारण करके वह आगे बढ़े और अपने उद्देश्यों में सफल मनोरथ हुए।

सम्पादकीय वक्तव्य।

गुरुकुल काङ्गड़ी का ग्यारहवां वार्षिकोत्सव बड़ी सफलता से [illegible] मास की २०—२४ तक मनाया गया। जनता की उपस्थिति इस उपयोगी विद्यालय की सर्वप्रियता का प्रत्यक्ष प्रमाण है। उत्तमोत्तम उपदेशों के अतिरिक्त सरस्वती सम्मेलन, आर्य्य-भाषा सम्मेलन, अछूत जातियों के लिये सम्मेलन, आयुर्वेदिक सम्मेलन तथा संगीत सम्मेलनादि उपयोगी संस्थाओं ने लोगों को इन आवश्यक विषयों पर विचार करने का अवसर प्रदान किया। उत्सव के अवसर तक अनुमान ८० हज़ार रुपया चन्दा एकत्रित हुआ। प्रतिज्ञाएं इनके अतिरिक्त हैं। हम संचालकों को उनके अनन्य उत्साह और अनन्य सफलता के लिये हार्दिक धन्यवाद देते हैं।

महाविद्यालय ज्वालापुर का उत्सव।

गुरुकुल काङ्गड़ी के संग २ ज्वालापुर महाविद्यालय का भी उत्सव समारोह से मनाया गया। यहां भी बहुत से प्रतिष्ठित सज्जन सुशोभित थे। उपदेश भी शिक्षाप्रद थे। चन्दा अनुमान [illegible]३००० एकत्रित हुआ।

आर्य्य धर्म परिषद अहमदाबाद।

जिन दिनों गुरुकुल काङ्गड़ी, ज्वालापुर महाविद्यालय, वेदरत्न विद्यालय दानापुर आदि के प्रसिद्ध २ उत्सव मनाये जा रहे थे उन्हीं दिनों बम्बई प्रान्त की ओर से अहमदाबाद में आर्य्य धर्म परिषद का संगठन था। गुजरात, कच्छ और काठियावाड़ की समाजों के बहुत से उत्साही पुरुष और देवियां इस परिषद में

सम्मिलित होने के लिये आईं। आर्य्य महिला मण्डल की देवियों ने दो दिन तक सन्ध्या और हवन कर के अहमदाबाद की प्रजा को उत्साहित किया। श्रोतृवर्ग की संख्या जो सात आठ हज़ार तक पहुंचती थी जतलाती थी कि आर्य्य समाज के प्रवर्तक के प्रान्त में भी धर्माग्नि के प्रज्वलित होने के शुभ चिन्ह दिखाई देते हैं।

आर्य्य कुमार लाज काशी।

काशी में थियासोफिस्ट लोगों का प्रचार देखकर कुछ आर्य्य कुमारों ने हिन्दू कालिज के उन श्रद्धालु विद्यार्थियों के कान में पवित्र वैदिक धर्म्म का नाद पहुंचाने के लिये थियोसाफिकल सोसाईटी के इण्डियन सेकशन में आज्ञा लेकर प्रति वृहस्पति वार को उपदेश कराने का प्रबन्ध किया है। प्रायः व्याख्यान मूर्ति पूजा के खण्डन, अवतार वाद के खण्डन और गुरुडम के विरुद्ध हुआ करते हैं। इस प्रकार के व्याख्यानों की आवश्यक्ता कुछ वही लोग अनुभव कर सक्ते हैं जिन्हें यह ज्ञात है कि हिन्दू कालेज में सुकुमार बालकों को मुण्डन के कितने साधन काम कर रहे हैं। आर्य्य समाज के सभासद जहां थियोसोफी का सभासद बनना अपना अपमान समझते हैं वहां कुछ आर्य्य कुमारों ने थियासो- फिकल सभा में प्रविष्ट होकर वैदिक धर्म्म को निर्भयता से प्रचार कर अपने आर्य्यत्व का परिचय दिया है।

मिसज़ ऐनी बेसन्ट का मुकदम्मा।

पाठक इस समय तक जान चुके होंगे कि इस सुप्रसिद्ध अभियोग का फैसला हो गया है। मिसज़ ऐनी बेसन्ट को दोनों बालकों को उनके पिता के हवाले कर देने की आज्ञा मिली है। इस अभियोग में न्यायाधीश ने मिस्टर लेडबीटर को Immoral बद इखलाक और कुमारों में मिलने के लिये "अयोग्य" सिद्ध किया है। प्रायः गुप्त सभाओं में ऐसी २ भयानक लीलाएं मिलती हैं। आर्य्य समाज इस प्रकार की गुप्त सभाओं को प्रजा के लिये न केवल हितकर नहीं मानता परन्तु स्पष्टतया हानिकारक जानता है। इस के अतिरिक्त जो भयावह गुरुडम के निन्दनीय भाव इस सभा में काम कर रहे हैं उन का जितना प्रतिवाद किया जावे उतना ही भारत प्रजा के लिये श्रेयस्कर होगा।

MEMORANDUM OF ASSOCIATION

AND RULES OF

The Veda Vidyalaya & Dayanand High School, BENARES

MEMORANDUM OF ASSOCIATION.

1 The name of the society is "Veda Vidyalaya and Dayanand High School."

2 The objects of the society are—

(*a*) To open and maintain a Veda Vidyalaya in order to impart education in the Vedic learning on the lines of the Arya Samaj;

(*b*) To open and maintain a High English School in order to impart secular and religious education;

(*c*) To open and maintain a Vedic Ashram or Boarding House for the accommodation of students in general and to look after their moral and religious life;

(*p*) To found scholarships and stipends to help and encourage students and to train Upadeshaks;

(*e*) To hold and manage funds and properties raised for the above object or objects;

(*f*) To purchase, acquire, on lease, by exchange or on hire or in gift or otherwise, any moveable or immoveable property for the above objects;

(*g*) To sell, improve, manage, give on lease any of the properties of the society, and,

(*h*) To do all such things as are incidental or conducive to the attainment of the above objects or any of them.

3. The names, addresses and occupations of the members of the Society called the Trustees, who are the governing body of the Society, are as follows:—

1. THE HON. BABU MOTI CHAND, *Zemindar* and *Banker*, *Benares City.*
2. RAI KRISHNA JI, *Banker* and *Zemindar*, *Benares City.*
3. RAO VAIJNATH DAS SHAPURI, *Banker* and *Zemindar*, *Benares City.*
4. BABU MEWA LAL, *Zemindar and Banker*, *Allahabad*,
5. SETH PURUSHOTTAM DAS, *Merchant*, *Mirzapur.*
6. BABU JWALA PRASAD, M. A., *Deputy Collector*, *Mirzapur.*
7. BABU GANGA PRASAD, M. A., *Sub-Divisionol Officer*, *Deoria* (*Gorakhpur*).
8. BABU GORAKH PRASAD, PLEADER, *Gorakhpur.*
9. BABU RAM NATH SHAH, *Zemindar and Banker*, *Jaunpur.*
10. PANDIT KESHAVA DEVA SHASTRI, *Kaviraj*, *Dasaswamedh*, *Benares City.*
11. PANDIT RAM NARAYAN MISRA, *Head Master*, *Harishchandra High School*, *Benares City.*
12. BABU SHIVA PRASAD GUPTA. *Zemindar and Banker*, *Benares City.*
13. DR. AMARNATH BANERJI, *Medical Practitioner* *Chowk*, *Benares City.*
14. BABU MAHADEVA PRASAD, *Merchant*, *Sarai Hara* *Benares City.*
15. BABU DINDAYAL SAHU, *Mahajan and Honorary Magistrate*, *Deogaon*, *Azamgarh.*
16. BABU GAURI SANKAR PRASAD, *Vakil*, *Benares City.*
17. MEHTA KRISHNA RAM, *Pleader*, *Benares City.*
18. BABU PRATAP NARAIN, *Vakil*, *Jaunpur.*
19. BABU RĀS BIHARI LAL (KHAKI,) *Reis*, *Siwan.*
20. BABU MULCHAND, *Sub-Overseer*, *Benares Cantt.*
21. THAKUR KHUSHAL SINGH, *Zemindar*, *Khalispur*, *District Jaunpur.*

SIGNATURES.	WITNESSES.
1. A. N. Banerji.	1. Banke Bihari Lal.
2. Ram Narayan Misra.	2. R. K. Jha.
3. Shiva Prasad Gupta.	3. Goverdhan Das.
4. Keshavadeva Shastri.	4. Indra Jit.
5. Vaijnath Das Shapuri.	5. Amar Nath.
6. Gauri Shankar Prasad.	6. } Alopi Prasad.
7. Krishna Ram.	7. }

RULES

4. The Board of Trustees, which shall be the governing body of the Society shall consist of not less than fifteen persons who shall hold office for life or until they resign.

5. The board shall have power to elect new Trustees.

6. The board shall, in order to carry on the management of the institution or institutions elect a Managing Committee, consisting of, including the Secretary and the Head Master, eleven members. A member of the Managing Committee need not be a member of the Board of Trustees.

7. The Board shall elect from among its members the following office bearers :—

(*a*) One President.
(*b*) Two-Vice Presidents.
(*c*) One Secretary.
(*d*) One or more Joint and Assistant Secretaries as necessity requires.

8. The President, the Vice-Presidents and the Secretary shall hold office for five years unless they or any of them resigns or the Board thinks fit to elect some other person in their stead before the expiry of the term.

9. There shall be at least one general meeting of the Trustees every year in the month of Ashwin or on such date

as the Managing Committee may fix.

10 The President and the Secretary themselves or at the written request of five trustees or any five members themselves, in case the Secretary does not comply, may call an extraordinary meeting of the Board for any special purpose.

11. The President or in his absence one of the Vice-Presidents shall preside at the meetings of the Board and shall have a casting vote in the case of a tie.

12. In the absence of the President and the Vice-Presidents the members present shall elect one of them to preside at the meeting who shall have all the rights of the President for the meeting.

13. The notice of the meeting shall be circulated at least fifteen days before the meeting to all the members with the agenda of business, but in case of an adjourned meeting no limit of time need be observed.

14. The decision of the Board on all the points raised shall be by a majority of votes.

15. Proposals to be put forth before any meeting shall be sent to the Secretary at least a week before the meeting, but the Chairman of the meeting may allow a member to bring forth a proposal at the meeting when it is of an urgent nature.

16. The quorum of a meeting of the Board shall be five but in an adjourned meeting no quorum would be necessary.

17. There shall be no voting by proxy but written opinion when called for by the Board may be sent in by the members, and each such opinion will in the absence of the member count for a vote on that point.

18 .The Secretary of the Board shall be a member and the Secretary of the managing Committee and the rest of the members shall be elected at the annual meeting every year. The Head Master of the school shall be ex-officio member of the Managing Committee, and the remaining members shall be elected one-third every year by rotation.

19. The Managing Committee shall elect its own

President and a Vice-President and may appoint one or more Joint or Assistant Secretaries as it thinks necessary.

20. The Managing Committee shall ordinarily meet once every month but meetings may be called oftener as occasion requires or when at least three members call upon the Secretary to do so.

21. Three members shall form a quorum for the meetings of the Managing Committee, but in an adjourned meeting there shall be no necessity of a quorum for the disposal of business.

22. For the purpose of the meetings of the Managing Committee rules 11, 12, 14 and 17 shall apply *mutatis mutandis.*

23. The duties of the Managing Committee shall be.

(*a*) To receive and collect all sums subscribed or donated and invest and spend the same, all investments being in the name of the society;

(*b*) To examine and sanction or disallow as the case may be, estimates of expenditure;

(*c*) To keep such accounts as the Board may require and to produce them at the meetings of the Board;

(*d*) To decide up to what standard or standards the institution or Institutions of the society shall teach the students;

(*e*) To appoint, dismiss and exercise a general control over the staff of the institution or institutions of the society;

(*f*) To fix the pay, emoluments and privileges of such staff;

(*g*) To appoint a Sub-committee to look after the special institutions or branches of the society;

(*h*) To frame rules for the guidance of the staff or relating to the management of the institutions opened by the Board; and

(*i*) Generally to administer the affairs of the

institutions referred to, and the properties held by the socitey.

24. All moneys payable to the society shall be received by and receipts granted by any one of the Secretaries.

25. The securities and uninvested funds of the society shall be kept with the Benares Bank, Limited, Benares, or such other Bank or Banks as the Board may resolve from time to time.

26. Cheques drawn against the funds shall be signed by the President or one of the Vice-Presidents or by the Secretary. For the purpose of effecting the sale of Government securities, or transfer of any other property held by the society, when such sale or transfer has been sanctioned by the Board, the President or a Vice-President and the Secretary for the time being shall be competent to sign and execute such endorsements and deeds of transfer as may be necessary for effecting such sale or transfer.

27. The Board may make, alter, modify or repeal these and any other rules and bye-laws framed by it from time to time as it may deem necessary.

28. The expenditure of the Managing Committee shall be limited within the yearly budget submitted to and sanctioned by the Board at its annual meeting. A copy of the budget shall be supplied to every Trustee and the members of the Managing Committee.

29. The Managing Committee shall submit an annual report of the work done by it and in the institutions under it.

30. A member of the Managing Committee resident in Benares not attending six consecutive meetings, or a non-resident member not attending for twelve consecutive meetings without sufficient reason to be notified to the Committee shall vacate his seat but will be eligible for re-election. The Secretary shall give two months' previous notice to a member likely to be affected by the above provision before this rule is brought into operation.

31. Any Trustee or member of the Managing Committee doing anything against the interests and objects of the Society shall be liable to be removed from the membership by at least two-thirds of the whole number of members either present in person or by proxy.

32. A copy of the proceedings of the Board of Trustees shall be sent to all the Trustees.

पारिवारिक दृश्य ।

अवध प्रान्त में गोन्डा एक अच्छी बस्ती है। यह स्थान एक रियासती राज्य का मुख्य स्थान है। किसी समय भगवान बुद्धदेव के शिष्यों ने इस प्रान्त में धर्मध्वजा को आरोपित किया हुआ था। यहां वैदिक धर्म का प्रचार नहीं और यदि है भी तो अति न्यून परन्तु कुछ साहसी और उद्योगी कुमार यहां विद्यमान हैं। उनके द्वारा आज नगर भर में धर्म चर्चा फैल रही है। उन्हों ने एक कुमारी को भयानक गढे में गिरने से बचा लिया। आओ, पाठक! एक परिवार की देवियों के विचारों पर ध्यान दें। फरवरी का महीना है। शीतल २ मन्द वायु चल रही है। मकान के बरामदे में दो देवियां एक कुमार के साथ विवाद कर रही हैं। कुमार उन्हें सप्रेम, सानुरोध, साग्रह और सविचार समझाने की चेष्टा कर रहा है परन्तु प्रियम्वदा का समझना दुस्तर सा प्रतीत होता है।

प्रियम्वदा :—गोविन्द! देखो, तुम्हारी कितनी बदनामी हुई। जहां देखो, लोग तुम्हारी निन्दा कर रहे हैं 'तुम्हें अपशब्द कहते हैं और तुम्हारे आचरणों पर आक्षेप कर रहे हैं। तुम्हें क्या लेना था मुफ्त के झगड़े में जा फंसे।

गोविन्द :—माताजी! क्या आपको विश्वास हो सक्ता है कि मैं ने जो विरोध किया या करवाया यह किसी प्रकार की बद-नियती के कारण था, बात यह है हम लोग अपना धर्म समझते हैं कि गिरते को उठावें, डूबते को बचावें और कुरीतियों को कम करने का यत्न करें। इसी लिये मैं ने यह सब कुछ किया और सुना। लोग शीघ्रही सत्य को समझ जावेंगे।

सावित्री :—माताजी! यह इतना विवाद क्यों बढ़ा। उसकी माता जो चाहती कर लेती। उसका पिता भी तो जीता है और मैं सुनती हूं कि कन्या भी युवती और पढ़ी लिखी थी।

गोविन्द :—सावित्रजी! ज्ञात होता है कि आपको पूरे २ समाचार मालूम नहीं हुए। सुनिये! मैं बतलाता हूं। यहां एक बड़े प्रतिष्ठित और विद्वान पण्डित महाबीर प्रसाद जी रहते थे। उनकी दो कन्याएं हैं। मृत्यु के समय। उनकी स्त्री की

अवस्था अनुमान २५ वर्ष की थी। अनाथ बालिकाओं की माता ने अपने आपको निराश्रित पाकर पुनर्विवाह कर लिया। बड़ी कन्या यशोधा रूपवती तथा विदुषी है। उसकी आयु भी १६, १७ वर्ष की हो चुकी है। मात पिछले दिनों में बीमार पड़ी। रोग बढ़ता गया। जब वह आसन्नमृत्यु हुई तो चर्चा होने लगी कि प्रथम तो दोनों कन्याओं का नहीं तो बडी कुमारी यशोदा देवी का कन्यादान अवश्य हो जाना चाहिये। इधर रोगाक्रान्ता माता जीवन की घड़ियों को काट रही है उधर विवाह की तय्यारी होने लगी। तत्काल एक १५ वर्ष के अनपढ़ और अनघड़ कुमार को चुना गया और विवाह रचाने की सामग्री इकट्ठी होने लगा। कुमारी यशोदा किंकर्त्तव्यविमूढ बनकर सोचने लगी। उससे किसी ने पूछा तक नहीं। चारों ओर से कन्यादान के फल और माहात्म्य का वर्णन होने लगा। कुमारी ने इस भयानक अवस्था को अपने लिये असह्य समझा और परिवार की वृद्धा स्त्रिों द्वार कहला भेजा कि मैं इस प्रकार के विवाह को पसन्द नहीं करती किन्तु उसका तिरस्कार हुआ। उसके विचारों को उपहासापद समझा गया और इधर उधर की बातों से टाल दिया गया। विवाह की तय्यारी हुई। यशोदा ने साहस किया। व्यर्थ की लज्जा को दूर कर उस ने स्पष्ट कहना प्रारम्भ किया कि मैं कदापि ऐसे विवाह पर उद्यत नहीं हूं। मैं विष खा कर आज ही प्राणान्त कर दूंगी परन्तु एक अयोग्य का पाणिग्रहण न करुंगा। स्त्रियों ने उसे निर्लज्जा कहा, अनादर और अपमान किया। उसके मुंह को बन्द लगाने की चेष्टा की परन्तु कुमारी ने रुद्र रूप का धारण किया। लोगों में चर्चा फैली। सम्बन्धी इकठ्ठे हुए। कुमारी का एक सम्बन्धी हमारा मित्र था। उसके द्वारा हम ने कुमारी की रक्षा करने का विचार प्रगट किया और येन केन प्रकारेण कुमारी के पास जा पहुंचे। उसे दृढ़ पाया। हमने भी उसका उत्साह बढ़ाया और इस सोर उत्पात का फल यह हुआ कि यह [illegible]

प्रियम्वदा :—खैर, यह तो हुआ, परन्तु क्या लोगों को सुना, वह क्या कह रहे हैं। लोगों को भी जाने दीजिये, मां बाप को अधिकार भी तो है कि वह कन्याओं का जैसे चाहें विवाह करें। तुम नये रोशनी वाले सभी जगहों पर गड़बड़ मचाते हो।

गोविन्द :—माताजी ! यही तो विचारणीय विषय है कि क्या माता पिता को कन्यादान करने का अधिकार है या नहीं ? हम समाज की श्रृंखला को तोड़ते हैं। हम कन्याओं और कुमारों को भड़काते हैं। हम उन्हें माता पिता की आज्ञा न मानने पर प्रोत्साहित करते हैं। यह प्रश्न तभी तक उठेंगे जब तक लोगों ने धर्माधर्म में विवेचना करना नहीं सीखा। शास्त्रों में ऐसी आज्ञा नहीं मिलती कि पुत्रियों या कन्याओं को पशुओं के समान बांध कर दान दिया जावे। आजकल बड़े २ घरानों में भी यही भाव उपस्थित रहता है कि कन्यादान किया जावे। भला पुत्रों का दान क्यों न हो। यदि कन्यादान के वही अर्थ हैं जो पुत्र के विवाह से निकलते हैं तब बलात्कार गुण, कर्म और स्वभाव को देखे बिना माता पिता ऐसा अत्याचार क्यों करते हैं। हम लोग नवीन रोशनी वाले अभी तक बहुत थोड़ा प्रभाव डाल सके हैं। पौराणिक संस्कारों ने आर्य्य परिवारों में भी उन्नति करने में बाधा डाल रखा है।

सावित्री :—माताजी ! तब आर्य्य लोग तो गुण, कर्म और स्वभावानुसार अपनी कन्याओं का विवाह करते होंगे और उनके हां तो कन्यादान नहीं होता होगा ?

गोविन्द :—बहिनजी ! हां, कुछ वीर पुरुष तो अवश्य ऐसे मिलते हैं जो धर्मानुसार चलते और पुत्र तथा पुत्रियों को समान दृष्टि से देखते हैं।

सावित्री:-तब आर्य्यों और हिन्दुओं के विवाहों मे फर्क क्या हुआ ?

गोविन्द:-कुच्छ भी नहीं। वह लोग जो पुराने लकीर पर चलते हैं, वह कन्याओं को पढ़ाते नहीं, इसी लिये कन्याएं अपना भाग्य समझ कर दुखों को सहतीं, मार पीट खातीं और रो धो कर चुप होजाती हैं परन्तु इस प्रकार के आर्य्य

कन्याओं की दशा तो और भी शोचनीय हो रही है। माता पिता उन्हें पढ़ाते हैं, उन्हें आंखें मिल जाती हैं, वह ऊंच नीच को पहिचानतीं और जीवन रूपी रथ के मार्ग के गढों को देखती हैं तब उन्हें बलात्कार गढों में धकेल दिया जाता है। जहां जाकर वह अपना जीवन कटु पाकर आत्महत्या करलेतीं अथवा दुखसागर में डूबकर आंखों को खो बैठती हैं।

प्रियम्बदाः—तभी तो पुराने लोगों ने कन्याओं के विवाह का समय १०, १२ वर्ष लिखा है। बड़ी आयु की होकर यशोदा के समान निर्लज्जा होजाती हैं।

गोविन्द :—माताजी ! शास्त्रकारों ने कन्याओं के विवाह का समय १६ वर्ष से कम का नहीं बतलाया वरन उपदेश तो यह है कि कुमारियां ब्रह्मचारिणी बनकर, विद्या पढ़कर, जब युवावस्था को प्राप्त हों तभी विवाह का नाम लें और तब भी इच्छा होने पर अनेक वरों में से गुण, कर्म और स्वभावानुसार उत्तम से उत्तम वर को पाकर उससे विवाह करें। यही पुराने स्वयम्बर की रीति थी परन्तु पुराणों के समय में कन्याओं के विवाह का काल १४, १२, १०, ८ और ६ वर्ष तक घटा दिया गया। उन वे जवानों का अधिकार छीन लिया, उन्हें अन्धकार में रख छोड़ा, तभी तो इस प्रकाश में भी परदा और बाल विवाह प्रचलित हैं। अस्तु, माताजी ! यह कथन मिथ्या है कि कुमारियों का विवाह छोटी आयु में कर देना शास्त्र सम्मत है। हां, जब तक कन्याओं में जीवन नहीं तब तक कन्याएं और पढ़ी लिखी कन्याएं भी माता पिता की अनुचित आज्ञाओं को शिरोधार्य कर विवाह करती जावेंगी तब तक सुधार न होगा। आर्य्य समाज के सिद्धान्त प्रशंसनीय हैं। व्यक्तियों की दुर्बलताओं को देख कर तो मेरा कलेजा भी कम्पित होता है परन्तु कहीं २ इस नभोमण्डल में उज्वल तारे भी हैं जो प्रकाश दे रहे हैं। उन्हीं के आश्रय और आर्य्य जीवन को देखकर मैं ने यशोदा कोबचाने का साहस किया।उसका विवाह क्या था, यह आप स्वयम् जानती हैं। लोग निन्दा

करें परन्तु सच्चे हृदय से आप दोनों बतलावें कि ऐसी कुमारियों की रक्षा के लिये क्या कोई और उपाय था और क्या मैंने बुरा काम किया। अस्तु, आर्यों में त्रुटियां हैं, परन्तु वह कन्यादान को एक निंदित भाव समझते हैं। वह कन्याओं की इच्छा बिना और गुण, कर्म तथा स्वभावानुसार उत्तम वर मिले बिना उनका विवाह नहीं करते। वह स्त्रियों में दासत्व तथा पर्दे के भावों को नीचता के चिन्ह मानते हैं किन्तु अधिकांश आर्य्य भी ऐसे ही हैं जो पुराने बन्धनों के दास, ज़ात पात को मानने वाले और कन्यादान के महात्म्य को सहने वाले हैं। आर्य्य पुरुषों में अनेक ऐसे निन्दित और जघन्य कर्मों को देख कर हृदय विदीर्ण होता है। मैं सच्चे हृदय से आर्य्य बनना चाहता हूं परन्तु व्यक्तियों की निर्बलताएं समाज को बदनाम और कलङ्कित कर रही हैं। यह तो हमारी नीति के विरुद्ध है कि व्यक्ति गत झगड़ों में उलझें परन्तु अभी दो मास भी व्यतीत नहीं हुए कि इस प्रान्त में एक दुर्घटना ऐसी हुई है जिसे सुन कर वज्रादपि कठोर हृदय भी द्रवीभूत हो जावे और वह जघन्य विवाह एक ऐसी कुमारी का हुआ है जो सच्चे शब्दों में एक आर्य्य बाला कहला सक्ती थी।

सावित्री:—भ्राता जी! वह कौन थी? किस की कन्या थी, किस ने विवाह करवाया और कैसा विवाह हुआ। सब कुछ बतलावें।

गोविन्द:—बहिन जी! अभी दो मास व्यतीत नहीं हुए कि सुकुमारी भामती को नरक की भट्टी में झोंक दिया गया। यह सुकुमारी एक ऐसे आर्य्य की पुत्री है जिस ने कदाचित सैकड़ों विवाह वैदिक रीत्यनुसार करवाये होंगे यह कुमारी एक ऐसे विद्यालय में पढ़ी और मिडिल पास किया जो आर्य्यों का मुख्य विद्यालय कहलाता है। आयु भी १५ वर्ष की थी। गुण भी अनेक थे। विवाह योग्य कन्या को देख कर पिता माता ने अपनी बिरादरी में एक २८ वर्ष का ऐसा वर ढूंढ़ा जिस की प्रथम स्त्री मर चुकी थी, विवाह निश्चित हो गया। आर्य्य समाज के प्रतिष्ठित पंडित और दो एक नेता श्रीमती भामती के वैदिक विवाह में सम्मिलित होने के लिये पहुंचे। वर और कन्या पक्ष वालों में विवाह की

पद्धति पर विवाद हो पड़ा। गणेश पूजा न हुई। वरपक्ष वालों ने असन्तुष्ट और क्रोधित होकर तत्काल एक अन्य कन्या के संग वर का विवाह कर दिया। निराश मण्डली घर को लौटी परन्तु कन्या की माता ने कन्यादान करना अत्यन्त आवश्यक समझा–किसी न किसी प्रकार से उसी वर के साथ फिर सन्धि की गई। दे दिला कर उसे प्रसन्न किया गया और एक मास के अन्दर २ भामती का विवाह भी उसी वर के साथ कर दिया गया। वर ने एक ही साथ दो विवाह कर लिये और वह आर्य्य पुरुष इस जघन्य कार्य्य द्वारा अपनी बुद्धि के अनुसार वैदिक विवाह करके घर को लौट आये।

श्रीमती प्रियम्वदा और सावित्री जी ने गोबिन्द की प्रशंसा की और ठण्डे सांस लेते हुए तीनो वहां से उठकर अपने २ कार्य्य मे जा लगे।

बड़ोदा राज्य की कौंसल में एक अछूत सज्जनः बड़ोदा राज्य में अस्पर्श्य जातियों के सुधार के लिये महाराज बड़ोदा नरेश ने जो उद्योग किया था उसका शुभ परिणाम अब निकलने लगा है। महाराज ने इन छोटी जातियों को उच्च शिक्षा प्रदान करने के लिये कई छात्रवृत्तियां दी हैं उनमें से एक शिक्षित सज्जन जिनका शुभ नाम श्री शिवराम जयरामजी है अब कौंसिल के सदस्य नियत हुए हैं। पुराने जात पांत के मानने वाले इस नवीन बिचार को देखकर घबरा उठे हैं जहां महाराज की उदारता प्रशंसनीय है वहां प्रत्येक भारत नियासी की सहानुभूति इस कठिनाई को भी ऐसे ही दूर कर देगी जैसे कि अन्य कठिनाइयों का परिणाम हुआ है। अस्पर्श्य जातियों में जागृति के चिन्हों में यह एक साधारण चिन्ह है।

काशी आर्य्य समाज

का तृतीय वार्षिकोत्सव।

आगामी १८,१६,२० जुलाई को बड़े समारोह से मनाया जायगा। इसी अवसर पर दयानन्द स्कूल का वार्षिकोत्सव और दयानन्द स्कूल भवन की नीव स्थापित की जायगी। आर्य्य कुमार सभा काशी का उत्सव भी साथही मनाया जायगा। आशा की जाती है कि बहुत से प्रतिष्ठित और लोकमान्य सज्जन इस अवसर पर उपस्थित होकर इस केन्द्रस्थान में वैदिक धर्म का प्रचार करेंगे।

पुण्यात्माओं के जीवन से लाभ उठाने के लिये प्राचीन काल में ईरान में यह नियम था कि राजकुमारों की शिक्षा के लिये राज्य भर में से सब से उत्तम चार पुरुष चुने जाते थे। बुद्धि को उत्कृष्ट करने के लिये मेधावी पुरुष (२) वीरता सिखलाने के लिये शूर पुरुष (३) मानसिक शक्तियों की उन्नति के लिये न्यायकारी और (४) आत्म शक्तियों की उन्नति के लिये उस पुण्यात्मा को चुना जाता था जिसने अपने आप को जीत लिया हो। पुण्यात्माओं के जीवन को देखकर वज्रादपि कठोर हृदय भी द्रवीभूत होजाता है और उस के मन में मुदता के भाव उत्पन्न होजाते हैं। जब अलसीबियाडास ने अपने मित्र सुक्रात से पूछा कि आप अपनी क्रूर स्वभाव वाली भार्या के कटू बचनों को कैसे सहते हैं तो सुक्रात ने मुसकरा कर कहा, कि मुझे किञ्चन्मात्र भी विचार नहीं होता। सुक्रात की स्त्री ज़ेनथिप अति क्रूर और चंचल प्रकृति की स्त्री थी। एक बार सुक्रात को बड़ा बुरा भला कहा और जब सर्वप्रकार की कटूक्ति को सुन कर सुक्रात घर के बाहिर चला गया और द्वार पर जाकर बैठ गया तो उस के शान्त और गम्भीर व्यवहार ने ज़ेनथिप को इतना क्रोधित कर दिया कि वह घर के ऊपर छत पर चढ़ गई और पानी का भरा हुआ घड़ा सुक्रात पर गिरा दिया। इस पर सुक्रात हँस पड़ा और कहने लगा कि "जब इतनी गर्ज हुई तो अवश्य दृष्टि पड़नीही चाहिये थी," सुक्रात के समान जो पुरुष क्रोध को वशीभूत करले और इन कुशब्दों का तनिक भी ध्यान न करे उस पुण्यात्मा के जीवन से संसार में कितना अतुलनीय प्रकाश फैल सक्ता है। ऐसे महात्मा किसी जाति विशेष की सम्पति नहीं होते। वरन् संसारमात्र उनके जीवन के उच्च आदर्श को देखकर प्रसन्न होता है। प्रसन्नता के स्थान में जहां पुण्यात्माओं के लिये ईर्षा का भाव उत्पन्न हो गया वहां मानों सदाचार रूपी ज़ंजीर की चार कड़ियों में से एक कड़ी कमज़ोर हो गई। ज़ंजीर की शक्ति कमज़ोर कड़ी से ही जानी जाती है।

सदाचार का बल दुर्बल रूपि छिद्र से पहिचाना जाता है। उस नवयुवक की दशा कितनी शोचनीय है जो सदाचार तथा उच्च भावों से जगत को वश में करने का विचार करके उठता है परन्तु दूसरे महात्माओं के पुण्यजीवन तथा कीर्ति को देखकर सहन नहीं करसक्ता। इस प्रकार की दुर्बलता भी एक प्रकार का व्यसन है। जितना मनुष्य व्यसनों का दास बनता जाता है उतना ही वह अपना मूल्य न्यून करता जाता है। आत्मविश्वास चरित्र का प्रधान चिन्ह है और आत्मविश्वास के लिये तीव्र ज्योति के उन केन्द्रों को देखना जो आत्म विश्वास की साक्षात मूर्तियां हैं कितनी प्रसन्नता का कारण हो सक्ता है। वस्तुतः सच्चा वीर पुरुष वही है जिसने अपनी वासनाओं को जीत लिया, जिसने विषयों में से मन की बृतियों को हटा कर अपने उद्देश्य विशेष में लगा दिया और जिसने जगत को जीतने से पूर्व अपने आप को जीत लिया। किसी ने सत्य कहा है जो अपने आप को जीत लेता है, जिसने अपनी वासनाओं, विषयों तथा भयों पर विजय पा ली है वह चक्रवर्ती महाराज से भी उत्तम है। मनुष्य देह कितना सुन्दर और कैसा दिव्य धाम है जिसने इस देह को धारण कर उन पुण्यात्माओं का अनुकरण नहीं किया जो उस के जीवन को ऊर्द्धगति की ओर ले जा सके हैं उस की अवस्था उस मनुष्य के समान है जो कल्पित स्वर्ग में प्रविष्ट होने के लिये आया, स्वर्ग का द्वार एक था और असंख्य योनियों के लिये गोलाकार दीवार पर भिन्न २ चिन्ह बने हुये थे जिज्ञासु आज्ञा पाकर स्वर्ग के द्वार को ढूंढ़ने के लिये दीवार को टटोलने लगा, चिर काल पर्य्यन्त दीवार को पकड़ते २ चलता रहा, जब द्वार के समीप पहुंचा उसे कान को खुजलाने की आवश्यकता पड़ी, पाओं से चलता गया—हाथ से खुजलाता गया और द्वार छूट गया। स्वर्ग किसी स्थान विशेष का नाम नहीं। इस अनन्त सृष्टि में मनुष्य को बड़ी कठिनाई से मनुष्य शरीर प्राप्त

होता है और यदि पाता भी है तो किसी विषय का दास बनकर उस अमूल्य प्राप्त वस्तु को भी फिर खो बैठता है। सदाचार ही मनुष्य को उच्च बनाता है। सदाचारी पुरुष समाज या जनता के धर्मात्मा (conscience) होते हैं। नियमों का पालन सदाचारी पुरुषों के आचरणों द्वारा होता है न कि पुलिस की सजा द्वारा। सदाचारी पुरुषों के जीवन ही किसी देश, जाति या राज्य की दृढ़ता का प्रबल प्रमाण हैं। पातालदेश के ऋषि अमर्सन ने कहा है कि सभ्यता का सच्चा निकर्ष न तो जनसंख्या है, न उच्चाटालिकाओं वाली नगरियां हैं और न देश की उपज है, वरन सभ्यता का रहस्य इस में है कि उस देश या जाति ने किसी प्रकार की उच्च कोटि के सदाचारी मनुष्य उत्पन्न किये हैं। जिन पुण्यात्माओं ने अपनी दृढ़ता के समक्ष सांसारिक पदार्थों को तुच्छ माना उनके जीवन की पवित्रता जो निद्रा की अवस्था में है उज्जागृत होकर जब हम पवित्र बन जावें तो हमारे आत्मा में आल्हाद के संस्कारों को उत्पन्न करती है। एक बार स्पेन में एक मूर अपने दालान म टहल रहा था कि एक भयभीत स्पेन का सिपाही उस के पास आया और पाओं पर गिर पड़ा उसने अतिभाव स प्रार्थना की कि लोग मुझे बद्ध करडालने के लिये पीछे भागे चले आरहे हैं, आप मुझे किसी सुरक्षित स्थान में रखें और बचावें। सभ्य मूर ने उसकी करुणा पूर्ण दशा पर दया की और उसे अपने एक कमरे में बन्दकर दिया इतने में वह मूर भी आ पहुंचा और वह एक उसके मुर्दा की लाश को ले आये जो गृहस्वामी का एकलौता पुत्र था। मूर ने वृतान्त से पहिचान लिया कि जिस व्यक्ति को उसने सुरक्षित स्थान में बन्द किया है उसी ने पुत्र का बद्ध किया है। उसने अपने दुःख को दबा लिया और शान्त रहा। रात्रि के समय में जब कि निरन्तर एकान्त स्थान था उसने द्वार को खोला और उसे बादीगृह से बाहर आनेवाले मनुष्य को सम्बोधन करके कहा "हे ईसाई! जिस व्यक्ति को तुमने बद्ध किया है वह मेरा एकलौता पुत्र था, परन्तु मैंने तुम्हारी रक्षा करने का दृढ़ संकल्प कर लिया था और मैं घोर से घोर द्वेषी तथा शत्रु के साथ भी जो प्रतिज्ञा की है उसे भङ्ग करने का विरोधी हूं अतएव जब तक रात्रि का अन्धेरा तुम्हें छिपा रहा है तुम यहां से भाग कर चले जाओ, तुम्हारे हाथ रक्त

बहाने से अपवित्र हो चुके हैं. परन्तु परमात्मा न्यायकारी है और मैं नम्रता पूर्वक उसका अनुगृहीत हूं कि मेरी दृढ़ता में अन्तर नहीं आया और यह कि न्याय करना मैं ने परमात्मा पर छोड़ दिया है"। पुराय आत्माओं की पवित्रता उनके सदाचार पर है। जैसे एक तारा आकाश पर देदीप्यमान हो अस्त हो जाता है और शताब्दियों पर्य्यन्त उसका दिव्य प्रकाश मनुष्यों को प्रकाशित करता रहता है इसी प्रकार यद्यपि पुरायात्मा पुरुष मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं, तथापि उनका वह प्रकाश जिसे वह अपने पीछे सदाचार द्वारा छोड़ जाते हैं मनुष्यों के पथ को निरन्तर प्रकाशित करता रहता है। पुरायात्मा स्वयम भी तो बड़े क्लेश उठा कर पुराय के भाजन बनते हैं। जिन व्यक्तियों का संसार आदर करता है, जो सदाचार के कारण निर्धन होने पर भी आनन्द में मग्न रहते हैं, जिन्हें संसार के ऐश्वर्य्य की ज़रा भी परवाह नहीं वह स्वयम भी तो कर्तव्यपरायण होते हैं और जगत उन की कर्तव्यपरायणता को देख तथा सुनकर सर्वदा प्रसन्न होता है। पम्पियाई के खराडरों को खोदते समय जो सन ७९ के भूकम्प के कारण मलिया मेट हो चुका था, मजदूरों को एक रोमन सिपाही का पिञ्जर मिला जो नगर के एक द्वार पर द्वारपाल के कार्य्य पर नियुक्त था। विद्वान बुलवर ने लिखा है कि जब कुछदेर के लिये वायु शान्त हुआ, नगर के द्वार की दीप्ति दिखाई देने लगी। त्रासित और भयभीत मनुष्य द्वार की ओर बढ़े। वह द्वार पर पहुंचे और द्वारपाल को अपने कर्तव्य पर कटिबद्ध पाया। उसके दृढ़ मुख और टोपी पर बिजली गिरी परन्तु इस भयानक दशा में भी वह क्लान्त नहीं हुआ। वह अपने स्थान पर निश्चल और सीधा खड़ा रहा। वह समीप की एक चट्टान में जाकर छिप सक्ता और भयानक मृत्यु के चङ्गुल से बच सक्ता था, परन्तु उसने मृत्यु का दुःख सहा और आज्ञा के बिना अपना स्थान छोड़ना उचित नहीं समझा। सदाचारी और पुरायात्मा सदाचारी पुरुष उस अन्धे के समान विषय रूपी घनघोर काली घटा से साधारण पुरुषों को निकाल ले जाते हैं जिनको आंखें हैं और जो अन्धेरी में देख नहीं सक्ते। प्रज्ञाचक्षु मनुष्य चक्षुविहीन होने के कारण अपने अनुभव द्वारा प्रत्येक मार्ग को जानता है और उसके लिये दिन अथवा रात्रि समान है, परन्तु जो पुरुष प्रकाश में आंखों

को काम में लाता रहता है, घनघोर काली घटा वा तूफान के समय वह मार्ग को नहीं पहिचान सक्ता। सत्य की अन्वेषणा तथा सदाचार निर्माण के कार्य्य में एक ही से अटल नियम काम करते दिखाई देते हैं। यह सत्य है कि साधारण कारणों से विचित्र और अद्भुत परिणाम निकला करते हैं, परन्तु एक व्यवसायी पुरुष ही अमूल्य मोतियों को पा सक्ता है जो अहर्निश मोतियों की खोज में रहता है। ठीक इसी प्रकार सदाचारी और पुण्यात्मा पुरुषों को वही जिज्ञासु पा सक्ता है जो उन्हें देख कर मोद मनावे और अहर्निश उनके साथ सत्सङ्ग करने तथा उनके उच्च जीवन से लाभ उठाने पर उद्यत रहता हो। पुण्यात्माओं के सत्सङ्ग से जिस मनुष्य ने अपने मन की स्थिति को उच्चैस्तम बना लिया है और जिसने अपने विचारों के भवन को इतना सुदृढ़ और स्थिर कर लिया है कि जिसे भय तथा आशाएं हिला तक नहीं सक्तीं जिसके संकल्प दृढ़ बन चुके हैं, जिसके शान्त चित्त को द्वेषी तथा अहङ्कारियों के विचारों की प्रबल वायु क्षुभित नहीं कर सक्ती, उसका स्थान अत्यन्त दृढ स्थान है, जिस स्थान से बैठे हुए असंख्य दुर्बल मनुष्यों को वह दया की दृष्टि से देखता है और स्वयम् पुण्यात्माओं के जीवन चरित्रों, उन के कीर्तिस्तम्भों तथा उनके असीम तप को बार बार पढ़ और देख कर मुदता के भावों से परिपूर्ण हो जाता है।

उपेक्षा—सदाचार निर्माण का चौथा साधन।

संसार में जहां सुखी, दुखी और पुण्यात्मा मिलते हैं वहां पापात्मा मनुष्य भी पाये जाते हैं। इनके संस्कार अहर्निश के दुर्व्यसनों और बुरी कामनाओं के कारण मलिन होते हैं। संसार में विचरते हुए अपने चहुंओर सुन्दर जगत को देखते हुए भी वह पाप के गढ़े में गिरते जाते हैं। अकारण लोगों को दुख पहुंचाना उनका मुख्य काम हो जाता है। कोई भी बुरा काम ऐसा नहीं जिस के करने में उन्हें संकोच हो। जिस पाप के करने में प्रथम उन्हें शङ्का और लज्जा के भाव सिताते हैं अब उसे वह निःशङ्क करते हैं। संसार में रहते हुए भले मनुष्यों को भी इन से बर्ताव करना पड़ता है। महात्मा ज़ेवियर के समान सज्जन पुरुष उन्हें पाप के दलदल से बचाना चाहते हैं, परन्तु वह उसका उत्तर गाली देने.

मुंह पर थूकने और उलटा पत्थर फेंकने में देते हैं। महात्मा उन्हें दुर्व्यसनों के गढ़े से बाहिर निकालना चाहता है, परन्तु यह अपने हितचिन्तक के जीवन का ही नष्ट करने पर उतारु हो पड़ते हैं। एक बार एक खाड़ी में कोई जहाज़ मुरम्मत के लिये खड़ा था। समुद्र की प्रबल लहरें उठने लगीं, जहाज पानी के धक्के से स्वस्थान में घुस गया। लोगों ने भयभीत होकर शोर करना आरम्भ किया। एक एक करके सभी मनुष्य वहां से भाग कर निकल गये, परन्तु एक पुरुष जहाज में रह गया। रास्ता कट गया। रस्सियों और ज़ंजीरों द्वारा जहाज को हिलाया गया, परन्तु वह न हिला। बढ़ती हुई लहरों ने जहाज़ को डुबा दिया। हजारों मनुष्य तट पर खड़े ठंडे सांस लेने लगे। उस पुरुष को बचाने का कोई भी उपाय दृष्टिगोचर न हुआ। समुद्र क्षण २ में बढ़ता गया। उसकी छाती और गरदन तक पानी चढ़ आया। देखते २ मुंह पर जल पहुंचा। अन्तिम लहिर ने सर्वदा के लिये उसे लोगों के दृष्टि से तिरोहित करके अपनी गोद में ले लिया। पापी मनुष्यों की प्रायः यही अवस्था होती है, वह संसार के लोग से पाप और दुराचार के कारण वियुक्त हो जाते हैं। सभी सज्जन सच्चे हृदय से उस के मङ्गल का कामना करते हैं। देखते देखते वह पापों की वेगवती लहिरों में उलझ जाता है और यद्यपि सहस्र मनुष्य उसे बचाने की इच्छा करते हैं तथापि वह कुसंस्कारों में व्यग्र हो उस समय तक डूबता जाता है जबतक कि मृत्यु उसे अपनी गोद में लेकर विश्राम नहीं देती। ऐसे पापात्मा मनुष्य केवल अपने जीवन को ही कलूषित या कलङ्कित नहीं करते, किन्तु दूसरों को भी शान्ति पूर्वक बैठने नहीं देते। उनका कुलाहल शान्त आत्माओं को भी अशान्त बना देता है, परन्तु हमें यहां यह विचार करना है कि सदाचारी मनुष्यों का व्यवहार इन पुरुषों से कैसा होना चाहिये। यदि हम सदाचार निर्माण के लिये भला कर्म करते हैं तो दूसरे लोग हमारे कामों को देखकर छिद्रान्वेषण करते हैं। जिस प्रकार एक विद्वान विद्या के बल से विष से भी लाभ उठा लेता है इसी प्रकार उनके छिद्रान्वेषण से भी हम लाभ उठा सक्ते हैं। यदि वह हम पर मिथ्या दोषारोपन करते हैं तो हमें हंस देना चाहिये। यदि वस्तुतः हमारे दोषों को जानकर वह अपवाद करते हैं तो हमें अपनी त्रुटियों को दूर करना चाहिये। उनका दोषारोपन करना

हमारे लिये दोनों अवस्थाओं में हितकर है। जगत में कोई भी महापुरुष नहीं हुआ जिस पर लोगों ने मिथ्या दोषारोपन न किये हों। प्रातः स्मरणीय भगवान बुद्धदेव पर व्यभिचार का दोष लगाया गया था, परन्तु पापियों की चाल लोगों को ज्ञात हो गई और वह पूर्णिमा के चन्द्रमा के तुल्य निष्कलङ्क बने रहे। बाल-ब्रह्मचारी तपस्वी भगवान दयानन्द सरस्वती जैसे महापुरुष के पास मङ्गलामुखी को भेजकर उनके आचरणों पर आक्रमण किया गया, परन्तु इन महापुरुषों की महानता इसी में थी कि वह अपने उद्देश्य पर कटिबद्ध रहें और पापात्माओं से उपेक्षा करें। दुर्जन सर्वदा सज्जनों की परीक्षा लिया करते हैं। उन्हें आप उस कौए के तुल्य समझें जो अनेक उत्तमोत्तम रसों को पाकर भी मल की ओर झुकता है, उन्हें आप मच्छर के समान समझें जो बार २ कान में आकर ध्वनि करता और सताता है। एक स्थान पर बिच्छू अधिक थे। किसी सज्जन पुरुष ने उन से बचने के लिये अपना बिस्त्रा पानी के अन्दर लगा लिया, बिच्छुओं ने बिस्त्रे पर जाना दुस्तर जानकर एक विचित्र उपाय निकाला, वह छत पर चढ गये। एक बिच्छू लटकने लगा, दूसरा उसके साथ मिलकर नीचे झुक गया, इसी प्रकार तीसरा, चौथा, पांचवां क्रमशः लटकने लगे, यहां तक कि बिस्त्रे पर जा पहुंचे। ठीक यही अवस्था पापात्मा पुरुषों की होती है। एक व्यक्ति कानाफूसी करने लगता है। दूसरा उस बात को अन्य पुरुषों को बताता है जैसे कि वस्तुतः सत्य हो, तीसरा उस चलती हुई बात को सुनकर उस सज्जन पर दोषारोपण कर देता है. चौथा उसे सत्य मान लेता है। इस सज्जन पुरुष का शुभ नाम जिसे उपार्जन करने में वर्षों लगते हैं एक क्षण में बिगाड़ दिया जाता है और ऐसी रीति से दूषित किया जाता है कि यह जानना भी कठिन हो जाता है कि बदनाम करनेवाला पुरुष कौन है। सज्जन पुरुष जानते हैं कि यदि दोषारोपन करनेवाले निरन्तर उन्हें दूषित करते रहें तो उनकी कीर्ति कांचन के समान सत्य के सूर्य के सामने और भी उज्ज्वल होगी। जैसे सुन्दर कुन्दन और मैले कुन्दन में अन्तर होता है, उनका मूल्य तो समान होता है, परन्तु मैले कुन्दन का कुछ काल पर्य्यन्त चलाव रुक जाता है, इसी प्रकार उस सज्जन के सम्बन्ध में जिसपर पापात्मा मिथ्या दोषा-

रोपन करते हैं कुछ देर के लिये सन्देह उत्पन्न होजाता है। समाज ऐसे पापात्माओं के आचरणों को इस भाव से सहन कर लेता है क्योंकि प्रायः मनुष्य न्यूनाधिक इस दोष के भागी बनते हैं। हां, जिन की प्रवृत्ति सदाचार निर्माण की ओर लग रही है वह इस दोष से सुरक्षित रहते हैं। उचित तो यह है कि न केवल अपवाद को न उठाया जाय, वरन उसे सुनना भी नहीं चाहिये। इस प्रकार के अपवाद में पापात्मा पुरुषों को सुख सा प्रतीत होता है, परन्तु यह सुख, यह खुशी उस तूफान के सदृश है जो ग्रीष्म ऋतु में बड़े वेग से आता, गर्जता और बिला वृष्टि किये ही एक क्षण मात्र के अन्दर दूर चला जाता है। मनुष्यों में पुण्यात्मा और पापात्माओं की परीक्षा हम सुविधा से कर सक्ते हैं। यदि हम एक तिनके को वायु में फेंक दें तो तत्काल वायु की गति का बोध हो सक्ता है, परन्तु यदि पत्थर को फेंकें तो यह जानना दुस्तर हो जायगा कि वायु किस दिशा से चल रहा है। अपवाद की बातों का तिनके के सदृश दुर्जनों पर शीघ्र प्रभाव पड़ सक्ता है, परन्तु संयमी सदाचारी तथा अभ्यासी सज्जन जगत के अपवाद को सुनकर भी विचलित नहीं होते और दृढ़ बने रहते हैं। प्रायः लोग पाप की शक्ति से अपरिचित होते हैं। पाप को अग्नि समझिये जिसकी चिङ्गारी नगरों और बनों उपबनों को भस्मसात कर देती है। जहाज की लकड़ी के एक क्षुद्र सुराख में से जैसे अनन्त संख्या में जल भर आता है इसी प्रकार जिस आत्मा में एक पाप का समावेश होजाता है वहां अनन्त पाप क्रमशः अन्दर घुस आते हैं और आत्मा को कलङ्कित कर देते हैं। जगत में बड़ी से बड़ी शक्तियों का विध्वंस हो सक्ता है, परन्तु पाप का विध्वंस करना अति दुस्तर है। च्यूंटियां हाथी को मार सक्ती हैं, एक शब्द जाति भर की शान्ति को नष्ट भ्रष्ट कर सक्ता है, एक चिङ्गारी गगनारोही अट्टालिकाओं को भस्मीभूत कर सक्ती है, परन्तु जिस पाप के भाव का एक बार आत्मा में समावेश होगया वह इतना प्रबल बन कर स्थित हो जाता है कि निरन्तर श्रम तथा अभ्यास करने पर भी उस पाप को निर्मूल करना अत्यन्त कठिन हो जाता है। पाप के कितने भयानक परिणाम हैं। पाप ही हमारे गृहस्थ रूपी सुखों की दीप्ति को बुझा देता और स्वर्ग को नरक धाम बना देता है। पाप ही वाद्य की स्वरों

को तोड़ता और सामवेद के गायन के स्थान में आर्तनाद को उठाता है। पाप ही तलवार को नंगा करवाता और मनुष्यों की हत्या करवाता है । पाप ही इस पवित्र भूमण्डल में निरपराधी पुरुषों को पृथिवी की आन्तें खोल कर सर्वदा के लिये सुलाता है। पाप ही के कारण से असंख्य दुःख होते, अनाथ और विधवाओं की करुणा भरी आहों से आकाश प्रतिध्वनित होता है, पाप के कारण ही भय और विलाप के दृश्य दृष्टिगोचर होते और दुख और मृत्यु का क्लेश उपस्थित होता है । यदि हमारे हृदयों में पाप को स्थान न मिले तो यह कभी न मुरझावे वरन दिव्य पुष्पों के समान खिल कर जगत को सुगन्धी और असाधारण रूप का अनुभव करने का सुख प्रदान करे ॥

वैदिक धर्म का आदर्श महान् है । जैसे कोई बोता है वैसे ही फल पाता है । जैसे कोई कार्य करता है वैसा ही फल पाता है। यह हो नहीं सक्ता कि बिला बुरा कर्म किये मनुष्य के आत्मा पापा संस्कारों से दूषित हों, परन्तु भय, शङ्का और लज्जा के संस्कारों की विद्यमानता में भी जब मनुष्य पाप कर बैठता है तो उस के लिये कोई मुआफी या क्षमा नहीं । जब पाप होगया, जब कुसंस्कारों से हृदय पर मलिन संस्कार पड़ गयेतो उनके दाग़ों को धोने के लिये प्रशान्त महासागर का जल भी पर्य्याप्त नहीं । शताब्दियों का काल भी उस अमिट संस्कार को मिटा नहीं सक्ता । पश्चाताप के आंसू उसे वापिस नहीं ला सक्ते । कोई देवता या पराक्रमी पुरुष उस पाप के भाव को हलका नहीं कर सक्ता। पाप हो चुका उसका फल भोगना ही पड़ेगा । जो मनुष्य इस अनिवार्य्य सिद्धान्त को जानता है उसका हृदय पाप से भागता है। वह अनुभव करता है कि जो पापात्मा उसे दुखाते या सिताते हैं यदि उनका वह सामना करे, यदि वह शठं प्रति शठं कुर्यात् के नियम को मानेगा तो उसका अपना पवित्रात्मा भी पीड़ित और दूषित होगा। मल और कीचड़ में पत्थर फेंकने से अवश्य छींटें पड़ेंगी । दुरात्मा पुरुषों में पाप के संस्कार संचित रहते हैं, उनका संग करने अथवा उनके विषय का पुनः २ विचार करने से इस पाप रूपी राक्षस को देखते और उसका चिन्तन करते हैं । उसके भयावह स्वरूप का सहन करते हैं और क्रमशः हम स्वयम भी उसके पाश में बद्ध हो जाते

हैं। अपने आप को सुरक्षित रखने के लिये अत्यावश्यक है कि हम सावधान रहें। सावधानता जीवन की ज्योति है। अन्धकार युक्त घनघोर काली रात्रि में उस जहाज के लिये जो चट्टान के समीप पंहुचता अथवा भयानक तट पर आता है जैसे ज्योति स्तम्भ होता है, जैसे घटा से परिपूर्ण रात्रि में पथिक के लिये मिशाल होती है, जैसे खान के खोदने वाले के लिये लेम्प कार्य्य करता है ऐसे ही सावधानता मनुष्य के लिये ज्योति का कार्य्य करती हैं। पुण्यात्माओं के लिये यही सावधानता ही पाप के संस्कारों से सुरक्षित रखती है। वह अपने चित्त के प्रसादन के लिये अनेक साधनों को प्रयोग में लाते हैं। वह अनुभव करते हैं कि व्यक्तियों की उन्नति अथवा समाजों की रक्षा के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि मन को इतना उन्नत किया जावे कि जगत के सौन्दर्य्य को जानने और सत्य के अन्वेषण करने में तत्पर हो। इस रीति से मन उन तमाम व्यसनों, कुसंस्कारों और दुर्विचारों से बच जाता है जो उस के गिराने का हेतु बनते हैं। मन की उन्नति के लिये यह आवश्यक है कि वह अप्राप्त वस्तु की सिद्धि के लिये सचेष्ट हो। मनुष्य तभी अपने महत्व को जान सक्ता है जब मन साधारण विषयों से ऊपर होकर उच्च आदर्श और पवित्र संस्कारों का ध्यान करे। यदि इस प्रकार से मानवी शक्तियां उन्नत और उज्जागृत होती जावें तो हमारी समग्र शक्तियां आत्मिकोन्नति की ओर झुक जावेंगी और जो वस्तुएं भी मनुष्य को विषयों तथा भोगों में ले जाने वाली होंगी मन उन सब से दूर भागेगा। वस्तुतः जो संस्कार हमें पवित्र जीवन की ओर ले जाते हैं और जिनके द्वारा हमारे प्रियात्मा की प्रसन्नता होती है वह हमारे जीवन को अवश्यमेव उन्नति के पथ पर चला देंगे। स्वभाव से हमारा मन निरन्तर उन्नति की चेष्टा करता है। वह क्रमशः ऊर्द्धगति की ओर जाता है। उन्नति के पथ में अवश्य अनेक प्रकार के कष्ट उठाने पड़ते हैं और अन्तिम आदर्श दृष्टिगोचर भी नहीं होता। यह आदर्श महान है मनुष्य इसे कभी भी प्राप्त नहीं कर सक्ता क्योंकि वह अल्पज्ञ है परन्तु यह श्रम अवश्यमेव फलीभूत होता है। जब एक बार मन गति सन्मार्ग पर चल पड़ती है तो एक सत्य दूसरे सत्य खोज निकालता है। हमारे ज्ञान के कोष की दिनों दिन वृद्धि होती

है। हमारा आत्मा अहर्निश उन्नत और विकासित होता जाता है। परन्तु परमात्मा की सृष्टि समाप्त होने में नहीं आती। मनुष्य समग्र ज्ञान को प्राप्त नहीं कर सका, परन्तु जितना ज्ञान और विज्ञान बढ़ता है, उतनी ही मान्सिक शक्तियां विकसित हो सच्चा आनन्द प्रदान करती हैं। गीता में भगवान कृष्ण ने अर्जुन को इसी चंचल मन को वश में करने के लिये एक मनोहर उपदेश दिया है और इस शिक्षा को निष्काम धर्म के उच्च आदर्श पर जाकर समाप्त किया है। जिसने अपने मन को सुरक्षित बना लिया उसने आनन्द को उपलब्ध करने का गुप्त रहस्य जान लिया। मन की तो अपनी सृष्टि ही विचित्र है। जगत में जितने दुःख उत्पन्न होते हैं वह हमारे मन से ही उठते हैं। कल्पना करो कि दो नवयुवक भारतनिवासी विलायत से शिक्षा पाकर देश को लौट कर आ रहे थे। एक बैरिस्टर बना और दूसरा डाक्टर। वह दोनों देश को लौटे। मार्ग में दुर्भाग्यवश बैरिस्टर का देहान्त हो गया दूसरे मित्र डाक्टर ने अपने पिता को तार द्वारा सूचना दी कि आपका अमुक पुत्र जो डाक्टरी की परीक्षा से उतीर्ण हो कर विलायत से घर को जा रहा था दुर्भाग्य वश उसका मार्ग में देहान्त होगया और मृतपुरुष के पिता को लिख दिया कि आपका पुत्र अमुक तिथि को बम्बई पहुंचेगा। इस समाचार के सुनते ही जिस पुरुष का पुत्र वस्तुतः मर चुका था उसके घर में आनन्द और खुशी के सामान इकट्ठे हो गये और जिसका पुत्र वस्तुतः जीता था वहां मातम का दृश्य उपस्थित हो गया। यह क्यों, केवल इस लिये कि उन पुरुषों की मान्सिक सृष्टि में सुख तथा दुख के भाव उत्पन्न होगये किन्तु जिस मनुष्य ने अपने मन को उन्नत कर लिया है और जिस की मान्सिक सृष्टि में क्षोभ उत्पन्न नहीं होसक्ता वह आपत्तियों के आने पर भी दृढ़ बना रहता है। यह दृढ़ता मनुष्य में तब ही आता है जब वह प्रत्येक कर्म को duty कर्त्तव्य कर्म समझ कर करे और भगवान कृष्ण की उस शिक्षा को सोते, उठते, बैठते सदा स्मरण रखे

कर्मण्येव अधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।

हमारा अधिकार काम करने में है न कि उसके फल को पाने देखने में। फल का दाता परमात्मा है। यदि हम अपने सत्पथ

पर चलते जावें और अपने कर्तव्य का ध्यान करें तो कोई भी क्षोभ को उत्पन्न करनेवाला संस्कार हमारे मन को चलायमान नहीं कर सक्ता। प्रायः लोग इस विचार को न जानने के कारण पाप के गढ़ों में गिरे रहते हैं। वह अपनी अतुल्य मनुष्य देह को जो एक दिव्य धाम है पापों से अपवित्र कर देते हैं और सदाचारी बनने के स्थान में पापात्मा बन जाते हैं। सदाचारी पुरुष के लिये संसार की प्रत्येक वस्तु सहायक बन जाती है। एक बार बड़ा भूकम्प आया। समुद्र के तट पर एक सुरम्य नगरी में लोग सहस्रों की संख्यां में उपस्थित थे। एक मनुष्य दुर्ग के ऊपर वाली दीवार पर खड़ा देख रहा था। उस के देखते देखते उमड़ा हुआ समुद्र आगे बढ़ा। मिनटों में नगर भर को तबाह कर दिया। बच्चे, वृद्ध और स्त्रियां सभी मृत्यु की गोद में चली गईं, परन्तु जिस समुद्र ने नगरी और उस की उच्च अट्टालिकाओं को नष्ट भ्रष्ट कर दिया था, जिस समुद्र ने गगनारोही दुर्ग में जल को प्लावित कर दिया था, समुद्र की लहरों ने उसी दुर्ग में एक नौका ला फैंकी। वह व्यक्ति उस नौका में बैठ गया और उसके प्राण बच गये। इसी प्रकार इस संसार में जहां अनेक प्रलोभनाओं के भूकम्प आते रहते हैं, जहां कुसंस्कारों के अथाह समुद्र में सभी आत्मा बहते जाते हैं, वहां वह सदाचारी पुरुष जो इन विषयों, कुसंस्कारों तथा दुर्व्यसनों से दूर रहता है जो ब्रह्मचर्य तथा तप के बल से ऊंचा चढ़ कर मनुष्यों को पापों और दुखों में प्लावित देखता है वह पुण्य रूपी नौका पर चढ़ कर अपने आत्मा को बचा लेता है। यह एक विचित्र पहेली है कि अपने चहुं ओर पापियों और उनके बुरे परिणामों को देखते हुए भी मनुष्य पुण्य जीवन की ओर नहीं झुकते। पाप के जीवन का परिचय उस समय मिलता है जब कि पापी आसन्नमृत्यु हो। उस समय जीवन भर के दुष्कर्म भयानक रूपों को धारण करते हैं और उन्हें जानकर वह दुखी होता है। उसके आस पास अनेक उत्तम उपकरण विद्यमान हैं, परन्तु उसे पाप के भयानक दृश्य पीड़ित करते जाते हैं। उस के मन में डराने वाले भाव उठते हैं। न तो वह विषय अब उसे सुख दे सक्के, न सम्बन्धी बचा सक्के और न ही परमात्मा की सत्ता से उसे शान्ति मिलती है क्योंकि वह अनुभव करता है कि पाप का फल अवश्यमेव मिलेगा। हज़ारों

प्रकार के भय उसे ग्रसित करते हैं। वह उस के विचारों को घेरते हैं। वह पीड़ित होता, रोता और चिल्लाता है। वह मृत्यु से दूर भागना चाहता है, परन्तु जानता है कि मृत्यु के चँङ्गुल में से बचना असम्भव है। उसके अशान्त आत्मा से ज्ञात होता है कि उसकी मान्सिक शक्तियां पापों से कलूषित हो चुकी हैं। वह ठण्डे श्वास लेता है। लोग नहीं समझते कि पापों के संस्कार उसे पीड़ित कर रहे हैं अथवा वियोग के भाव उसे चलायमान कर रहे हैं। वह क्लेश में प्राण त्यागता और अपने आप को न्यायकारी परमात्मा के न्याय पर छोड़ देता है। विपरीत इसके जगत में जितने महात्मा हुए हैं मृत्यु के समय पर उनकी आत्मा आह्लाद से परिपूर्ण थी। धर्म पर बलिदान होने वालों ने हंसते २ प्राण दे दिये और उफ तक न की। यह क्यों? इस लिये कि उनका आत्मा सदाचार के कारण जीवन में ही उन्नत हो चुका था। वेद में बतलाया है कि "ब्रह्मचर्य्येण तपसा देवाः मृत्यु-मुपा-घ्नत" ब्रह्मचर्य्य और तप के बल से विद्वान लोग मृत्यु पर भी विजय पा लेते हैं। यही एक रहस्य है जिसके कारण सदाचारी पुरुषों को मृत्यु के समय में न केवल क्लेश नहीं होता वरन असाधारण प्रसन्नता का भाव दृष्टि-गोचर होता है। महापुरुषों के जीवन उनकी मृत्यु से पहिचाने जाते हैं। वह जानते हैं कि परमात्मा के नियम अटल हैं। उसकी इच्छा पूर्ण होगी। हमारे समक्ष में जितने पदार्थ हैं वह सब नाशवान हैं। नगर, देश और जातियां भी एक समय में विनाश को प्राप्त हो जाती हैं। जगत परिवर्तनशील है, तब क्या वह सर्वदा के लिये स्थिर रहने का विचार कर सकता है? हमारा शरीर स्थायी नहीं। जितने हम से पूर्व उत्पन्न हुए उन्हें शरीर त्यागना पड़ा। महाभारत में महाराज युधिष्ठिर और यक्ष का सम्वाद मिलता है। उस में बतलाया है कि सब से आश्चर्य्य की वार्ता तो यह है कि लोग मर रहे हैं और हम अपने आपको अमर जीवित माने हुए बैठे हैं। सम्पत्तिशाली तथा महापुरुष, राजा और रङ्क, कीर्त्तिमान और पापी सभी इस मार्ग के पथिक हैं। जब हमारी मृत्यु होगी उसी क्षण में सहस्रों अन्य मनुष्यों की भी मृत्यु होगी, तब क्या मरना कोई भयानक बात है? क्योंकि यह सृष्टि का नियम है। वसन्त में वृक्षों के पत्ते गिरते हैं या पक्के फल जैसे पककर वृक्षों से गिर पड़ते हैं इसी प्रकार हमारे शरीर की अवस्था

है। हां, अनेक मनुष्यों के शरीर पापों के कारण अपरिपक्व अवस्था में भी गिर जाते हैं। जीवन का मूल्य दिनों से नहीं गिना जाता किन्तु उन कार्यों से मूल्य पड़ता है जिन्हें मनुष्य सम्पादन करते हैं। जो लोग सदाचार द्वारा अपनी शारीरिक तथा मानसिक शक्तियों को उत्कृष्ट करते और एक एक चण भले कार्य्य में लगाते हैं उन्हें अल्पायु की कभी शिकायत ही नहीं होती। हम १०० वर्ष तक निरन्तर सुख और उत्तम स्वास्थ्य के साथ जी सकते हैं। इतने समय में हम कितना कार्य्य कर सके हैं इस का कुछ वही ध्यान कर सके हैं जिन्हें ज्ञात है कि समय का क्या मूल्य है। चक्रवर्ती राजा भी राज्य के बदले एक मिनट नहीं खरीद सक्ता। जब समय इतना अमूल्य है तो वह पुरुष कितनी भूल करते हैं जो अपने सदाचार को उन्नत नहीं करते अथवा जो अहर्निश दूसरों के अपगुणों का विचार करते और पापात्माओं के पापों का ध्यान करते हैं। हमें सुखी, दुखी, पुण्यात्मा और पापात्मा चारों प्रकार के मनुष्य मिलेंगे—सुखियों से मैत्री, दुखियों पर करुणा, पुण्यात्माओं को देख कर जहां मुदता का भाव उत्पन्न होना चाहिये वहां पापात्माओं से हमें उपेक्षा करनी अभीष्ट है। जहां इस प्रकार का जीवन उनके लिये शिक्षाप्रद होगा वहां हमारा अपना कल्याण भी होगा। हमें उन के बुरे संस्कारों से हानि न पहुंचेगी और हम निरन्तर अपनी उन्नति के पथ पर चलते हुए अमूल्य समय का सदुपयोग कर सकेंगे। उन्हें सुधारना हमारा कर्त्तव्य है, परन्तु हमें कोई भी ऐसा कार्य्य न करना चाहिये जो हमारे सदाचार निर्माण के काम में विघ्न उपस्थित कर सके।

परिशिष्ट।

ऊपर बतलाया गया है कि सदाचार निर्माण की ज़ंजीर में चार कड़ियां हैं। इन में से किसी एक के दुर्बल हो जाने से सदाचार की नींव भी दुर्बल हो जाती है। प्राचीन काल से लेकर वर्तमान काल के प्रायः सभी विद्वानों ने एक स्वर से सदाचार निर्माण पर बलपूर्वक लिखा है। भगवान मनुजी लिखते हैं।

अभिवादयेद् वृद्धांश्च दद्याच्चैवासनं स्वकम्।
कृताञ्जलिरुपासीत गच्छतः पृष्ठतोऽन्वियात्॥४-१५

जो जिज्ञासु आचार्य्य अथवा विद्वान से शिक्षा ग्रहण करना चाहता है उसे चाहिये कि वृद्धों को नम्रता पूर्वक नमस्ते करे, अपना आसन छोड़ उनको बिठलावे, हाथ जोड़ कर उनका सत्कार करे और जब वह चलें तो उनके पीछे २ चलें। यह विनय और नम्रता के भाव मनुष्य में श्रद्धा को उत्पन्न करते हैं और बिना श्रद्धा महापुरुषों के जीवन से शिक्षा ग्रहण करना दुस्तर है। क्योंकि

आचाराल्लभते ह्यायुराचारादीप्सिताः प्रजाः।
आचाराद्धनमक्षय्यमाचारो हन्त्यलक्षणम् ॥

सदाचारी पुरुष ही चिरकाल पर्य्यन्त आयु पा सक्ता है। सदाचारी पुरुष को ही मन मानी सन्तान मिलती है। सदाचार द्वारा ही अक्षय धन प्राप्त होता और सदाचार ही दुर्गुणों को मिटा देता है।

सर्वलक्षण हीनोऽपि यः सदाचारवान्नरः।
श्रद्धानोऽनुसूयश्च शतं वर्षाणि जीवति ॥

जिस मनुष्य में सौन्दर्य्यादि उत्तम गुण न भी हों किन्तु सदाचारी हो, श्रद्धावान हो और किसी से द्वेष न रखने वाला हो तो वह आनन्द पूर्वक एक सौ वर्ष पर्य्यन्त जीता है।

हमारे शास्त्रों में जहां सौ वर्ष या इस से भी अधिक जीने के विषय पर विचार किया गया है वहां बतलाया है कि जीने के लिये त्रिष्टम्भ या तीन स्तून हैं। जैसे तीन पाओं की Triangle होती है इसी प्रकार जीवन है। ब्रह्मचर्य्य, आहार और निद्रा यह खम्बे हैं। जो सदाचारी नहीं वह ब्रह्मचारी नहीं हो सक्ता और जो ब्रह्मचारी है वह न भोगी होगा और न रोगी। ब्रह्मचारी अमोघवीर्य होता और मनोवांछित सन्तान उत्पन्न कर सक्ता है। जिसका आहार शुद्ध है वह सदाचारी है। तामसिक अथवा राजसिक आहार खाने वाला सदाचारी नहीं हो सक्ता। उसे विषयाग्नि दग्ध करती है और वह बुरी वासनाओं का दास बन जाता है। जो सदाचारी नहीं उसे गाढ़ निद्रा नहीं आ सक्ती और जिसे विशुद्ध निद्रा नहीं आती उसका शरीर सुदृढ़ और स्वास्थ्य नहीं हो सक्ता। इस प्रकार देखने से ज्ञात होता है कि ब्रह्मचर्य्य—आहार और निद्रा द्वारा जहां हम सौ वर्ष तक जीवित रह सक्ते हैं वहां दूसरे

शब्दों में सदाचारी बन कर हम इन साधनों का अवलम्बन कर सके हैं। सच्चा आनन्द भी तो सदाचार के जीवन में मिलता है। कविवर पोप ने लिखा है।

Know then the truth, enough of man to know
Virtue alone is happiness below—Pope.

मनुष्य को जानना चाहो या सत्य को देखना चाहो तो निश्चित जान लो कि आनन्द तो सदाचार के ही जीवन में मिलता है। महात्मा जार्ज मेकडानलड ने लिखा है कि एक दुर्ग में एक वृद्ध और उसका पुत्र दो पुरुष रहते थे। दुर्ग उसका अपना था परन्तु दरिद्रता के कारण उन्हें बड़ा कष्ट था। उसी दुर्ग में उनके पूर्वजों का बहुत सा धन कहीं अन्तरनिहित पड़ा था, किन्तु उन्हें कुछ भी ज्ञात नहीं था। यद्यपि वह एक बड़ी सम्पत्ति के स्वामी थे तथापि वह बिभूच्चित हो कष्ट उठा रहे थे, इसी प्रकार मनुष्य की अवस्था है। यद्यपि परमात्मा ने अनन्त सृष्टि उसके लिये निर्माण की है और आदेश भी दिया है कि "तेन त्यक्तेन भुंजीथाः" कि इस सृष्टि को भोगो तुम्हारे ही लिये है, हां, त्याग रूप से भोगना, परन्तु अविद्या वश मनुष्य पीड़ित होता और ठोकरें खाता है। मनुष्य अनन्त शक्तियों का केन्द्र है, वह धन, मान, प्रतिष्ठा और भोगों में सुख ढूंढ़ता है, परन्तु उसे निराश होना पड़ता है। सुख सदाचार के जीवन में है। सदाचार से ही उस की शक्तियां विकसित होती हैं। सदाचार को आप ज्योति समझिये कि जिस के ताप से फूल खिलते और पृथिवी के फल मधुर रस को धारण कर परिपक्व हो जाते हैं। विपरीत इसके जो मनुष्य उदासीन है, जो चंचल और दुखी है, जो अपनी महानता, आत्मा की सत्ता और अपने आप को दिव्य धाम का स्वामी नहीं मानता, जिसे अपनी शक्तियों का विश्वास नहीं और जिस के जीवन का कोई उद्देश्य नहीं वह सांसारिक झगड़ों में उलझेगा, अहंकार के पाश में बद्ध हो जायगा और आत्मिक जीवन को खो बैठेगा। संसार को स्वर्ग और नरक बनाना हमारे अपने ही आधीन है। जो मनुष्य सौन्दर्य्य को पसन्द करता और खोजता है उसे जगत में सौन्दर्य्य ही सौन्दर्य्य प्रतीत होता है। यदि उस के अपने आत्मा में राग अलापा जा रहा है तो उसे जगत की प्रत्येक वस्तु में राग मिलेगा। एक ही स्थान

पर दो मनुष्य मिलते हैं । दोनों एक ही काम करते हैं परन्तु दोनों के विचार भिन्न २ होते हैं । प्रातः काल के समय में दो भिन्न ठण्डी २ वायु का सेवन करते हैं, एक को जुकाम लग जाता है दूसरा आनन्द पूर्वक सैर से लौटता है । जिसे जुकाम लगा है उस के पेट में विकार पूर्व ही से विद्यमान था, शीतल वायु ने उसे उभार दिया इसी प्रकार जिस के मन में क्लेश उठते हैं, उस के मन में पूर्व ही से मनो विकार विद्यमान हैं । जैसे परोपकार में जीवन और स्वार्थ में मृत्यु है वैसे ही सदाचार में जीवन और दुराचार में मृत्यु है। जीवन के लिये आवश्यक है कि आप जिस कार्य्य को करें हंसी खुशी से करें । दुखी और शोकग्रस्त मनुष्य को कोई पसन्द नहीं करता । मित्र मृत पुरुष के घर पर आते और शोक प्रगट करके चले जाते हैं परन्तु मृत्यु के गृह में कोई व्यक्ति भी रहना पसन्द नहीं करता। प्राचीन समय की एक कहानी है कि किसी राजा का एक इक-लौता पुत्र था । राजा को पुत्र से अति प्रेम था और अहर्निश उसे प्रसन्न रखने की चेष्टा किया करता था । बालक के लिये चढ़ने को घोड़े, रहने के लिये सुन्दर और सुसज्जित मकान, चित्र, पुस्तकें, खिलौने, साथी, अध्यापक और अन्य उपयोगी उपकरण सभी वस्तुएं उपस्थित कर दीं, किन्तु बालक के मुख पर सर्वदा तेवड़ी चढ़ी रहती थी और हर समय वह किसी अप्राप्त वस्तु की खोज में लगा रहता था । उसे कभी शान्त न मिलती थी । एक बार किसी महात्मा ने उस बालक के मानसिक रोग का निदान किया और राजा की प्रार्थना पर उस की चिकित्सा का भार अपने ऊपर ले लिया । महात्मा बालक को एकान्त में ले गया । उस ने एक पत्र पर कुछ लिख दिया और बालक को कहा कि दीपक के सामने रख कर पढ़ना । जब बालक ने पढ़ा तो उसे ज्ञात हुआ कि वह महात्मा उपदेश लिख गये हैं जिस का अर्थ यह है कि "प्रत्येक दिन कुछ उपकार का कार्य्य किया करो "। बालक ने इस शिक्षा को मान लिया और उपकार के जीवन पर तत्पर हो गया और एक आनन्द वदन प्रसन्न मुख वाला राजकुमारन गया । जो मनुष्य विषयों में खुशी ढूंढना चाहते हैं वह कभी भी प्राप्त नहीं कर सक्ते । उन्हें पता नहीं 'कि स्वर्ग तो हमारे अपने अन्दर विद्यमान है', वह कहीं और नहीं । न वह धन में है, न पृथिवी में और न यश में

मिलता है । स्वार्थी को तो वह कभी मिलेगा ही नहीं और न दुराचारी पुरुष ही उस का साक्षात कर सक्ता है । सदाचार निर्माण का कठिन कार्य्य राग विद्या के समान है. अभ्यास से हम अहर्निश उन्नति करते हैं ।

हां, सूर्य्य का दिव्य प्रकाश ही फूलों को विकसित करता है न कि अन्धकार युक्त बादल जो खिलने वाले फूलों की पंखड़ियों को भी मुरझा देता है । इन्जीनियर मकान बनाने से पूर्व मकान का चित्र बना लेता है । हम सभी हर समय अपने जीवन के नकशे या चित्र बनाते रहते हैं और बिगाड़ कर फिर नवीन बनाने की आशा पर पुरानों को फेंकते जाते हैं परन्तु निपुण इंजीनियर ऐसा नहीं करता । जब सोच विचार कर चित्र (Plan) बना लेता है तब समग्र शक्तियों को उस प्लैन के मुताबिक मकान बनाने में लगा देता है । हम यदि जीवन का उद्देश्य बना लेवें और तदनुसार अपनी शक्तियों को उसमें नियुक्त कर दें तो सफलता हाथ बांधे सामने खड़ी होजावे । इसके विपरीत जब मनुष्य के सामने कोई उद्देश्य न हो तो वह डावांडोल रहता है । मनुष्य प्रलोभनाओं में फँस जाते हैं । उनके सामने "एक बार देखें तो सही" का निन्दित भाव उत्पन्न होता है । वह पाप के रस का आस्वादन करना चाहते हैं । प्रथम तो उन्हें एक साधारण बात ज्ञात होती है कि शराब का स्वाद तो ले देखें । यह प्रथम परिचय उस दुर्व्यसन से परिज्ञान पैदा करा देता है और चिरकाल के अभ्यास से मनुष्य उस विषय का ही दास बन जाता है । जो मनुष्य वस्तुतः सर्प की विष से ही भय करता है वह सर्प के समीप कभी नहीं जायगा । इसी प्रकार जो मनुष्य प्रलोभनाओं से अपने आचरणों को सुरक्षित रखना चाहता है वह प्रलोभनाओं से भी अपने आप को बचावेगा । बाल्यावस्था से सदाचार निर्माण का अभ्यास बच्चों पर डालना चाहिये । अजायब घरों में ऐसी शिलाएं मिलती हैं जिन पर वृष्टि पड़ने के निशान हैं । इन्हें सहस्रों वर्ष व्यतीत होगये हैं, वृष्टि की बूंदें पत्थर पर पड़ीं उस पर धूली के कारण निशान पड़ गये, शताब्दियां व्यतीत हो गईं धूली भी पत्थर में परिणत होगई, निशान दृढ़ होगये और अब रहेंगे, यही अवस्था संस्कारों की है । हमारे आत्मा पर नवीन विचारों के चिन्ह पड़ते हैं, वह उन्हें सुरक्षित रख लेते हैं । उन्हें

अपना बना लेते हैं और सर्वदा के लिये उन विचारों को सुरक्षित रख छोड़ते हैं। प्रायः हम देखते हैं कि पुरुषों के मुख में से बोल चाल में गाली निकल जाती है। यह क्यों? वह नहीं चाहते कि मुख अपवित्र हो परन्तु संस्कारों की प्रबलता ऐसी है कि बिना जाने भी गालियां निकल जाती हैं। जो पाप आप ने किया है वह आप का मित्र बन सर्वदा सामने आ खड़ा होगा, जहां आप जावेंगे वहां ही मार्ग में छाया रूप से उसे अपने सामने पावेंगे। वह जीवन भर के लिये आप के गले पड़ गया और सर्वदा के लिये चिमटा रहेगा। क्या आप पाप करते हुए भी अपने आपको स्वतन्त्र कह सक्ते हैं, कदापि नहीं। आप उस पाप के दास हैं जो आप ने किया है। अभ्यास में बड़ी शक्ति है जिन्हों ने सदाचार निर्माण का अभ्यास कर लिया वह मनुष्य बन गये। आर्य्य पुरुष असत्य नहीं बोलते, सत्य बोलने का अभ्यास उन में इतना सुदृढ़ हो जाता है कि सत्य बोलना मानों उन का स्वभाव है। यह आवश्यक है कि बाल्यावस्था ही से सदाचार निर्माण की शिक्षा दी जावे, भले हों या बुरे संस्कारों का फल अवश्य मिलता है। देवी पैंडोरा ने एक बार सुक्रात से कहा कि मैं तुम्हारे शिष्यों को तुम से पृथक कर सक्ती हूं। सुक्रात ने उत्तर दिया कि हो सक्ता है क्यों कि मैं उन्हें ऊंचे और कठिन मार्ग (सदाचार) की ओर ले जाता हूं और तुम नीचे उन्हें सुगम मार्ग की ओर लेजाओगी। एक विद्वान ने कहा है।

We scatter seeds with careless hands,
And dream we ne'er shall see them more;
But for a thousand years their fruits appear,
In weeds that mar the land.

अर्थात्–हम बीजों को असावधानी से बिखेरते हैं और कह देते हैं कि अब कभी न देखेंगे, परन्तु सहस्त्रों वर्षों के पश्चात् वह फलते और पृथिवी को कण्टकमय बना देते हैं। यही अवस्था हमारे कर्मों की है छोटे से छोटा बुरा कर्म भी अमिट बनकर हमारे जीवन को दुःखमय बना देता है, अतएव यह आवश्यक विषय है कि हम सदाचार निर्माण की ओर ध्यान दें और इन चारों साधनों को अपने जीवन में परिणत करदें। ओं शम्"

भारत की जागती हुई आत्मा

किसी जाति वा देश की उन्नति उस समय तक दृढ़ और चिर-स्थाई नहीं हो सक्ती जबतक कि उन्नति की लहर का प्रभाव जाति के समस्त व्यवहारों पर न पड़े। सच्च तो यह है कि किसी जाति को उसी समय जीवित समझना चाहिये जब उस जाति की अन्तरात्मा जाग उठे। तब ही जातीय जीवन जाति के उन सब विविध व्यवहारों में अपना विकाश दिखलाता है जिन व्यवहारों द्वारा मनुष्य अपने भीतर की व्यापक आत्मा के बल और आनन्द को प्रकट करने की चेष्टा करता है। सच्चे आनन्द का प्राप्त करना ही इस जीवन का मुख्य उद्देश्य है। आनन्द ही की प्राप्ति के लिये जीव जन्म और मरण के इस विचित्र और अद्भुत लीला में प्रवेश करता है तथा जीवन के विविध व्यवहारों में अपनी आत्मा की ज्योति का प्रकाश करने से ही मनुष्य इस आनन्द को अनुभव कर सक्ता है। यही कारण है कि कोई दो मनुष्य अथवा दो जाति एक सी नहीं होतीं। निस्सन्देह कई गुण ऐसे हैं जो कई मनुष्यों में पाये जाते हैं चाहे वह किसी जाति के भी क्यों न हों, इन्हीं को मनुष्य जाति की सामान्य प्रकृति कहते हैं परन्तु इसके अतिरिक्त प्रत्येक जाति में अपने स्वभाव के अनुसार विशेष गुण भी रहते हैं। संसार की विविध जाति वा समस्त मनुष्य जाति सामान्य प्रकृति की ही वृद्धि से संतुष्ट नहीं होतीं किन्तु प्रत्येक जाति अपने २ विशेष गुणों तथा अपने स्वाभाविक धर्म का विकाश भी चाहती है और इन्हीं की वृद्धि की लालसा करती है। जिस जाति के निज गुणों का विकास नहीं होता अथवा जो जाति अपने स्वाभाविक धर्म के पूरा नहीं कर सक्ती और स्वयं अपने सामर्थ्य को बढ़ा नहीं सकी वह जाति अवश्य मृत्यु को प्राप्त होती है इन सब से स्पष्ट है कि किसी जातीय आन्दोलन की जीवन शक्ति की परीक्षा दो प्रकार से हो सक्ती है। यदि वह आन्दोलन विदेशियों वा किसी अन्य जाति के अनुसरण करने के लिये है वा विदेशियों का चलाया हुआ है अथवा प्रेरित है तो कुछ समय के लिये उसमें सफलता होती हुई भी क्या न दीख पड़े किन्तु अन्त में वह आन्दोलन उस जाति को निष्फलता और मृत्यु की ओर ही लेजाता है। ठीक यही दशा यूरोप के प्राचीन जातियों की हुई थी, जबकि रोम की सभ्यता और रोम का सुख सौख्य

भोगने की इच्छा से उन जातियों ने अपनी २ स्वतन्त्रता स्वाभाविक धर्म को त्याग दिया था। आज वे जातियां संसार से मिट चुकीं। इसके विपरीति यदि किसी जातीय आन्दोलन की प्रत्येक शाखा पर उस जाति के विशेष गुणों तथा उसके स्वाभाविक धर्म का ठप्पा लगा हुआ हो और उस आन्दोलन की प्रत्येक उभरती हुई लहर में जातीय धर्म का ही प्रकाश होता हुआ दीख पड़े तो समझना चाहिये कि वह जाति जीती जागती और उन्नति करती है। उस जाति के राजनैतिक, सामाजिक और मानसिक व्यवहारों और संस्थाओं में चाहे कैसेही परिवर्तन क्यों न हों, जाति के जीवित रहने और उन्नति करने में कोई भी सन्देह नहीं हो सक्ता।

ईसा की १९ वीं शताब्दी में भारतवर्ष के अनेक उन्नत और शिक्षित लोग निज धर्म और निज स्वरूप को भूलकर हर बात में विदेशियों का ही अनुसरण करने लग गये थे। इन लोगों के सब व्यवहार मिथ्या थे। क्योंकि वे लोग यूरोप के लोगों के चाल ढाल तथा आचरण को भारतवर्ष में प्रचलित कर देनाही अपना मुख्य उद्देश्य समझते थे, वे लोग भगवद्गीता के इन गूढ़ वाक्यों को भूल गये थे।

श्रेयान् स्वधर्मो विगुणः पर धर्मात् स्वनुष्ठितात्।
स्वधर्मे निधने श्रेयः पर धर्मो भयावहः॥

अर्थात् "अपना धर्म चाहे विगुण भी क्यों न हो दूसरे उत्तम प्रकार से किये हुये धर्म से उसे सर्वदा श्रेष्ठ ही समझना चाहिये, अपने धर्म का पालन वा उसकी रक्षा करने में मर जाना भी अच्छा है किन्तु दूसरे के धर्म पर चलना भयानक है।" कारण यह है कि गीता के वाक्य के अनुसार यदि निज धर्म का पालन करते हुये मनुष्य के प्राण भी जाते रहें तो फिर उसका परिश्रम उसी धर्म में होता है किन्तु विदेशियों की चाल ढाल रीति का अनुसरण करने में यदि सफलता भी हो तो उस सफलता को सफलता के साथ आत्महत्या ही समझना चाहिये। यदि भारत वासी अपने सब प्रकार के व्यवहारों में यूरोप के लोगों का ही अनुसरण करने लग जाते तो इस का परिणाम यह होता कि हम अपनी अध्यात्मिक योग्यता, अपना मानसिक बल, अपनी जातीय स्थिति तथा अपने बाहु बल से अपना उद्धार करने की शक्ति को सर्वदा के लिये खो बैठते।

पृथ्वी की अन्य जातियों में यह शोक मय दृश्य देखा जा चुका है किन्तु यदि भारत में ऐसा ही होता तो हिन्दू जाति के इस प्रकार नष्ट हो जाने या बह जाने का यह नया उदाहरण पहिले से कहीं अधिक भयानक और शोक दायक होता।

पाठक ! आओ धार्मिक जगत की दशा का जो उस समय में इस के अतिरिक्त बड़ी भयानक थी अवलोकन करें। इस में सन्देह नहीं कि पंजाब और बंगाल के धार्मिक समाजों और स्वदेशी आन्दोलनों और महाराष्ट्र के राजनैतिक आन्दोलनों में कुछ जान थी और यह आत्मा अभ्यांतरिक धारा में प्रवाहित हो रही थी और इनके कार्यों के कारणों पर ध्यान देने से जो कि परदेशी वस्तु तथा परदेशियों से घृणा ही करने के लिये था तभी तक दृढ़ और चिरस्थाई समझा जाता था जब तक कि उनके छोटे २ मनोरथ पूर्ण न हो जायें और आज प्रत्यक्ष देख लीजिये कि वंगभंग के एकांग होते ही सब रंग भंग हो गये, परन्तु उस समय भारत में मतान्तरों की भयंकर प्रज्वलित अग्नि जल रही थी। गौतम कणाद की सन्तान कहानेवाले वेदों को बच्चों का बलबलाना कह कर वैदिक धर्म को न जानते हुये मुख मोड़ कर ईसाई बन रहे थे। भारत सन्तान की क्षति हो रही थी। यों तो कीड़े और घुन के रूप में आर्य्य जाति को विनाश करने वाले कर ही रहे थे परन्तु दो बड़े भारी ग्राह विकराल मुँह फैलाये हुये आर्य्य सन्तान को ग्रसने के लिये उद्यत थे और अवसर की ताक में थे कि जब मौक़ा पावें झट निगले। जिस तरह ऋषि सन्तान की क्षति हो रही थी उसका वृतान्त अत्यन्त भयानक था और यदि वही चाल उसकी रहती तो आर्य्य जाति के नष्ट होने के प्रायः गिने दिन ही शेष रह जाते। यदि वह चाल अपनी दौड़ बता देती तो कहना ही क्या था। वर्णाश्रम का नाम निशान मिट चुका था। धार्मिक जगत में महा भयानक घोर अन्धेरा छाया हुआ था भारत के धार्मिक नभो मंडल में काली घटा छायी थी। यज्ञ हवन का नाम निशान मिट चुका था। राष्ट्रीय यश का झंडा एकदम स्वदेश का मुख काला कर रहा था और भारत पुत्रों को स्वदेश और स्वजाति का कुछ भी ध्यान न था हिन्दी जो कि एक मात्र आज राष्ट्र भाषा बन रही है उन दिनों में उर्दू और अंग्रेज़ी को छोड़ प्रायः सभी लोग इस से नाक सिकोड़ रहे थे यहां तक कि मरी हुई भाषा कही जाती थी। विचारने का विषय है कि जिस जाति

की भाषा की मृत्यु होचुकी क्या वह जाति जीती कही जा सक्ती है? कदापि नहीं। हम सब अभी इसी विचार में थे कि लोग हमारी जाति का नाम मरी हुई जाति (Dead nation) कहने लगे। यह सत्य प्रतीत होता है जब कि उपरोक्त घटनाएं भारत में घट चुकी हों अर्थात् जैसे एक मनुष्य के सब अंग कट गये हों तो उसका जीना बिल्कुल असम्भव है, वैसे ही जब वर्णाश्रम नष्ट हो चुका और इसके चारों अंग सच्चे गुण कर्म स्वभाव वाले ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र टुकड़े २ होगये, नहीं इस दशा में भारत को जीता जागता कहने का साहस नहीं होता अर्थात् भारत वर्ष मुर्दे की शक्ल में परिणत हो गया था। इस घोर अंधकार में भारत डूब रहा था। भारत भानु का पता नहीं था। देश भर में उस अंधकार ने हाहाकार मचा रक्खा था। इतने बड़े भारी अंधकार के लिये एक छोटी सी धीमी बत्ती मथुरा में जलती थी और उस बत्ती से प्रकाश पाने वाली मुक्तात्मा गुजरात के एक सौभाग्यवती माता के गोदी में पल रही थी और उस आत्मा के योग की वृत्ति नर्बदा के तट और हिमालय की कन्दराओं में विचर रही थी। वह महान् आत्मा जिसने इस अद्भुत दृश्य को देख कर सारे परिवार, धन धान्य, सुख सौख्य को त्याग कर वैराग्य को धारण किया वह पाठकों को भली भांति स्मरण होगा। वह महान् आत्मा वैराग्य धारण करने के पश्चात् विद्याध्ययन योगाभ्यास और भारत के प्राचीन दशा को वर्तमान से तुलना करते हुए और वर्तमान की दशा को देखा आंखों से रुधिराश्रु बहाते हुए विद्या प्राप्ति की इच्छा से मथुरा में आकर उस बूझते हुए दीपक (अर्थात् श्री महर्षि स्वामी विरजानन्द बालब्रह्मचारी) से प्रकाश पा प्रकाशित हो आनन्द में मग्न हो गया। गुरु अनुशासन पा वह जगत का सच्चा हितैषी देश सेवा के इस परम मार्ग में आया। वह धर्मवीर इस कार्यक्षेत्र में प्रवृत हुआ। भारत से असत्य के भाव को दूर करने का विचार किया और शुभ दिन में हरिद्वार के कुम्भ के मेले में 'पाखण्ड खण्डिनी पताका' गाड़ कर उपदेश देना प्रारम्भ किया और भूमंडल को इस बात का परिचय दिया कि रत्नगर्भा भारत भूखे पुत्रों में अभी जान वर्तमान है और भारत का छिपा हुआ वैदिक सूर्य्य उदय हो गया। अब सारे भूमंडल के अन्धेरे का सत्यानाश हो जायगा। उसी दिन धार्मिक जगत

के अन्दर भारत की जागती हुई आत्मा का समावेश हुआ और वह जागती हुई आत्मा महर्षि दयानन्द सरस्वती ऐसा सुधारक सदुपदेशक पाय अधिक उन्नति करती हुई देखी गई और यह आशा उदय होने लगी कि भारतोदय होगा। उस वैदिक धर्म के सच्चे सेवक ने इस भयंकर अंधकार को दूर करने के लिये वैदिक सूर्य्य का पता दिया और घर २ जाकर प्रत्येक भारतवासी को जगाने लगा। उसी समय से लोगों की रुचि सत्य धर्म की ओर बढ़ी और सभ्य जगत ने उस बाल ब्रह्मचारी के दिखाये हुये सत्य मार्ग को पसन्द किया और केवल हार्दिक सहानुभुति ही नहीं प्रगट की किन्तु उस भूले हुये सत्य धर्म को पहिचान उस पर आनन्द पूर्वक चलना प्रारम्भ किया। क्रमशः पाश्चात्य सभ्यता, रीति रस्म, चाल ढाल और उर्दू की ओर से लोगों की रुचि का ह्रास होने लगा और प्राचीन सभ्यता और प्राकृतिक भाषा की ओर रुचि बढ़ने लगी। लोगों के अन्दर एकता का भाव उत्पन्न होने लगा और चारों ओर सभायें समाजें बनने लगीं। सभ्य जगत के मनुष्य एक शृंखली में बद्ध होने लगे। देश के अग्रगण्य सज्जनों ने प्रजा की भलाई के लिये अनेक गुरुकुल, कालेज स्कूल, विद्यालय अनाथालय और नाना प्रकार की प्रजा हितकारी संस्थाओं का खोलना आरम्भ किया और विशेष कर विद्यालयों को दान देने में उदारता दिखाना प्रारम्भ किया। कुरीतियों को त्याग शुभरीतियों को ग्रहण करने लगे। देश की भलाई के उपाय सोचने लगे और भारत में उसी समय नइ जागृति का अविष्कार हुआ। आज प्रत्यक्ष देखने में आता है कि उस बाल ब्रह्मचारी के सद्भावों से बीज ने कैसी हरियाली दिखाई है और फल फूल कर देश के हित करने में सफलता प्राप्त की है। यह उसी सुधारक के सुधार का प्रत्यक्ष फल है जो कि भारत में उन्नति का चिन्ह कहा जाता है आज अनेकों जातीय उपकारिणी महा सभाएं और उनकी शाखा सभायें अनेकों कानफ्रेंस, कांग्रेस, समाज, समिति भारत वर्ष में होरही हैं या हुई हैं और उसी के नियमों और सिद्धान्तों को लेकर कार्य्य करती और उन्नति करती हुई दिखाई देती हैं। उसी जागृती का यह फल है कि यदि हम एक सुयोग्य नव युवक के कमरे में जाकर उसकी दीवारों पर एक बार दृष्टि लेजाते हैं तो महात्माओं के उत्तम चित्र दीवारों में लगे देखने में आते हैं और उन

चित्रों से यह ज्ञात होता है कि वे महात्मा मुझे सिखाते हैं कि भारत के नवयुवको भारत की दशा देख हतोत्साह न होना। यह संसार चक्र है। एक समय भारत की सभ्यता का सूर्य्य आधे आकाश में था उस के बाद मिश्र वालों की बारी आई और मिश्र का भी अधः पतन हुआ। रोम की सभ्यता जगी और युनानियों ने रूमियों से सभ्यता सीख सभ्य बन अपनी सभ्यता का परिचय दिया। इस के बाद यूरोप का चमकता हुआ तारा आधे आकाश में आया इसको देख-कर अमेरिका ने भी अपनी सभ्यता का सितारा आकाश में स्थित किया। यह ज्ञात कर यदि दूसरी ओर के चित्रों को देखते हैं तो विदित होता है कि वह महात्मा हाथ उठाये इशारा करते हैं कि देखो! पूर्व की ओर से एक चमकता हुआ तारा दृष्टि गोचर हो रहा है अभी तक वह आधे आसमान में तो नहीं आया परन्तु उस की चमक बड़ी तेज़ है। पाठक! वह जापान नामी तारा अर्धाकाश में स्थित होना चाहता है। सोया हुआ चीन भी अब झिलमिला उठा है, देखें क्या करता है, परन्तु रात के चार बज गये हैं लोग जाग रहे हैं पूर्व से प्रकाश की लालिमा दृष्टि गोचर हो रही है और भारत भानु के आने की सूचना दे रही है तब तक कमरे की तीसरे ओर के चित्रों पर दृष्टि जाती है और एक महात्मा यह सूचना देते हैं कि अब भारत भानु का प्रकाश होने चाहता है उस के सामने यह सारे सितारे फीके पड़ जांयगे। मित्रो! आज कल की सभाओं, वार्षिकोत्सवों में कुमार कुमारियों स्त्री पुरुषों का उत्साह देख उपरोक्त आशा सत्य प्रतीत होती है और भारत की जागती हुई आत्मा पूर्ण रूप से उन्नति करती प्रतीत होती है। भारत की उन्नति के बोझ को भविष्य में अपने सिर पर उठाने वाले भारतीय नवयुवक कर्त्तव्यपरायण, धर्म वीर, बन मलिन स्वार्थ का चादर खोल उस प्रकाश को आदर के साथ लेकर परमार्थ में लग जायें तो फिर अति शीघ्र एक बार भारत भी चमक जावे और अपनी प्राचीन सभ्यता के उच्च शिखर पर जा पहुंचे।

वीरेन्द्र विद्यार्थी।
काशी

आर्य्यों के कर्तव्य

मैं कोटिशः हार्दिक धन्यवाद देता हूं उस निराकार सृष्टिकर्ता परमात्मा को जिसकी महती कृपा से श्रेष्ठ पुरुषों (आर्य्यों) के हृदय में वेदों के महत्व को जानने एवं उसके सदू उपदेशों के मानने मनाने का सच्चा मान प्राप्त हुआ है। यद्यपि आर्य्य पुरुष अपने कर्तव्यों को समझ रहे हैं, तथापि सांसारिक प्रलोभनाओं में आकर्षित होकर कभी२ अपने कर्तव्यों से च्युत होने लगते हैं। प्रथम तो मैं आप से यह प्रार्थना करता हूं कि आप अपनी प्रतिज्ञा का पालन कीजिये और सच्चे कर्तव्य पालक हुजिये। यद्यपि आपने बहुत कुछ कर दिखाया है और आपको अपने कार्य्यों में सफली होते देखकर प्रत्येक मतानुयायी चकित हो रहा है तो भी मैं साहस के साथ कहता हूं कि यदि आर्य्य लोग सच्चे कर्तव्य परायण बनें, कथन का त्याग कर काम में लगें और आपस के वैमनस्य को परित्याग करें और लोक उपकारक महोप-श्री १०८ स्वामी दयानन्द सरस्वती के (सर्वाणि भूतानि मित्रस्य चक्षुषा) इस मन्त्र पर ध्यान देकर इसके आशय को समझें कि वह महात्मा इस मन्त्र द्वारा हमलोगों को परस्पर प्रेम करने को बताते हैं, जिसके प्रबल प्रभाव से केवल आर्य्यावर्त ही नहीं बल्कि समग्र भूमण्डल पर वेदों की पवित्र शिक्षा का अंकुर मनुष्य मात्र के चित्ताङ्कित होगया है और होता जायगा। भ्रातृगण! गो आप ने बहुतेरे गुरुकुल, बहुत सी कन्या पाठशालाएं एवं कन्या गुरुकुल, विद्यालय, महाविद्यालय तथा कालिज इत्यादि खोले हैं, सब कुछ किये, परन्तु शोक के साथ प्रकाशित करना पड़ता है कि जिन कुसंस्कारों यानी कुरीतियों के होते हुए हमारे अबोध भाइयों को सुधरना अति कठिन है उन में आप ने सन्तोष जनक अर्थात आशातीत परिश्रम नहीं किया। मैं आप का ध्यान इधर आकर्षित करना चाहता हूं कि भारतवर्ष के कुसंस्कारों के नाश करने में आप की सफलता कहां तक हुइ है।

आर्य्य भाइयो! १ मूर्ति पूजा २ बाल विवाह ३ विधवा विवाह ४ श्राद्धकर्म ५ व्यर्थ दान ६ छुताछुत इत्यादि इत्यादि अवगुण जाल निन्दित अशुभ कर्म विकराल को आपने अभी तक नहीं रोका, यहां तक कि एक ईश्वर की उपासना अभी तक यहां स्थापित नहीं

हुई। कुछ काल पूर्व की काल्पित बातों को हमारे भाई धर्म आमन
माना कर रहे हैं। महाशय गण ! मेरी प्रार्थना कर्तव्य परायणता
पर है अतः मैं पुनः आपका ध्यान इधर दिलाता हूं और आप के
कर्तव्यों को पुनः आपके सन्मुख उपस्थित करता हूं।

आपलोगों के अनेक कर्तव्यों में से एक महान् कर्तव्य यह
भी है कि इस पवित्र भारत भूमि में अज्ञान के राज्य को अर्थात्
अज्ञान रूपी अन्धकार को जहां तक हो विनाश करने का पूर्ण प्रयत्न
करना चाहिये। इस कार्य्य में आर्य्यों की तरफ से शिथिलता देखते
हैं। यद्यपि इसके वास्ते भी प्रबन्ध है तथापि कार्य्य बड़ीही
शिथिलता से होता है। यदि आप ध्यान से देखेंगे तो स्वयम ज्ञात
होजायगा, न तो पूर्व वत् वेद प्रचार ही होता है और न शास्त्रार्थही।
भिन्न २ मतानुयायियों को अन्धकार फैलाने का पूरा अवसर
मिलता है।

उदाहरणार्थ बलिया को लीजिये

जो आपके कार्य्य में शिथिलता का प्रत्यक्ष प्रमाण है। यहां आज
तक आर्य्य प्रतिनिधि सभा संयुक्त यू० पी० के स्वतन्त्र हो कोई
उपदेशक नहीं आये। पूज्यपाद देशसुधारक, संन्यासी महात्मा भी
आजतक आने की कृपा नहीं किये। शोक के साथ प्रकाशित करना
पड़ता है कि इसी कारण यहां आजतक समाज स्थापितही नहीं है।
हालांकि यह प्रान्त यू. पी के अन्तर्गत है और सरहदी ज़िला है।

दूसरी शोक जनक बात यह है कि इस प्रान्त के वासियों में
बहुधा पढ़े लिखे भी वेद मत के नाम से परिचित नहीं हैं।
हालां कि इस ज़िले में जातीय सभाएं बड़े उत्साह से कार्य्य
कर रही हैं। गत दिसम्बर मास में सरयूपारी ब्राह्मणों की महा-
सभा का वार्षिक अधिवेशन यहीं हुआ था जिसके सभापति काशी
के पं० शिवकुमार जी थे, जिन्होंने ६ और १२ वर्ष के पुत्र पुत्री के
विवाह करने को बताया। तत्पश्चात् गत जनवरी में क्षत्रियों की सभा
हुई थी जिस में यहां के क्षत्रियगण पूरा पुरूषार्थ दिखाते हुये एक
हाई स्कूल और बोर्डिंग हाउस के लिये उसी वक्त दान किये। लेख
बढ़ गया अतः अब दो चार बातें कहकर खतम करूंगा।

आप उस चक्रवर्ती राजा की प्रजा हैं कि जिसके राज में कभी
सूर्यास्त नहीं होता, सर्वदा दिन ही रहता है हमारे महाराज ऐसे

न्यायाधीश हैं कि जिनके सुराज्य में बाघ और अजा एक साथ चरते और जल पीते हैं, किसी को चूँ करने या आंख उठाने का साहस नहीं है ऐसे न्याय परायण महाराज पंचम जार्ज के राज्य में आप प्रचार न कर सकें कितना आश्चर्य्य है ।

भाइयो ! यह समय आलस्य करने का नहीं है, आप शीघ्र कटिबद्ध होजाइये। सच्चे आर्य्य बनिये, आडम्बर त्यागिये, सच्चा धर्म सेवक बनिये, सदा वेद प्रचारक बनिये, सच्चे दिल से भारत के कुसंस्कारों के मिटाने का प्रयत्न कीजिये। प्रत्येक मत, और प्रत्येक जाति के लोग उन्नति के शिखर पर पहुंचने के लिये यत्न कर रहे हैं। आप भी शीघ्र सचेत होकर कार्य्य क्षेत्र में सच्चे कर्तव्य परायण बनिये। वेद का डंका बजाकर सब के कानों तक वेद मन्त्र पहुंचाइये। जो लोग यह कहते हैं कि अमुक स्थान पर वेद मत होना असम्भव है उनको कहने दीजिये। आप कल की आशा छोड़ अपना कार्य्य दत्त चित्त होकर कीजिये। यदि आपका कार्य्य होता रहा तो फल अवश्यही मिलेगा। अवश्यही वेद का सूर्य्य भूमण्डल में रोशन होगा। आप अपने कार्य्य से साबित कर दें कि हम सच्चे कर्तव्य परायण हैं।

बलदेव सिंह वर्म्मा
बड़ागांव, बलिया।

विद्यालय की होरी।

आज खेलहु सब आई होरी मोद बढ़ाई ॥
सीतल मन्द समीर बहत पुहपन आभा सरसाई।
नवरसाल मृदु-कुसुम-अङ्कुरित शोभित हिय प्रमुदाई ॥
प्रकृति देवि छवि निरखि निरन्तर नयन न जात अघाई।
भक्ति-भाव सञ्चरित हृदयबिच महिमा प्रभु मन भाई ॥
मिलहु परस्पर प्रीति भाव सों वैर द्वेष बिसराई।
भ्रातृ-स्नेह गुलाल लगावहु प्रेम-अबीर उड़ाई ॥
कर सद्भाव लेहु पिचकारी शिक्षा-रंग बरसाई।
वेदोन्नति-ध्वनि करहु घोर पुनि कीरत भारत गाई ॥

हिन्दु विश्वविद्यालय मिल करि यज्ञ रचावहु आई।
निज २ शक्ति दान आहुति सब डारहु हिय हरषाई॥
उन्नति-धूम उठै चहुँ ओरा आनँद गन्ध बहाई।
ज्ञान अगनि दीपित वहु ह्वै है हिंदू-अँधियार नशाई॥
नर नारी आवहु सब देखहु कैसो फाग सुहाई।
शिक्षा रंग काशी बिच बरसत विद्या-यज्ञ रचाई॥

(माधुरी)

गुरुकुल में लाट साहिब।

(सद्धर्म प्रचारक से उद्धृत)

आजकल संयुक्त प्रान्त के सिर पर एक ऐसा शासक विद्यमान है जिसकी हार्दिक सहानुभूति और संरक्षता से इस प्रान्त को बहुत कुछ लाभ प्राप्त होने की आशा है। सरजेम्स मेस्टन का प्रजा प्रेम, इनका विद्या प्रेम, भारत के प्रान्तीय शासकों के लिये दृष्टान्त स्वरूप है। अनेक सरकारी आदमियों से मिल जुल कर तथा गुरुकुल के विषय में उन से सुनकर आपने गुरुकुल के विषय में अपनी उत्सुकता प्रकाशित की। गुरुकुल वासियों को और क्या चाहिये था। उन्हों ने संयुक्त प्रान्त के लाट साहिब सरजेम्स मेस्टन को सादर और सप्रेम निमन्त्रण दिया। लाट साहिब ने अत्यन्त उदारता के साथ गुरुकुल वासियों का निमन्त्रण स्वीकार किया। ६ मार्च के शुभ दिन मध्याह्नोत्तर दो बजे लाट साहिब के आने की सूचना गुरुकुल वासियों को दी गई थी। गुरुकुल में इस शुभागमन के लिये क्या २ तैयारियां की गई थीं, इन्हें वे लोग ही जान सकते हैं जो इस समय गुरुकुल में उपस्थित थे। इस स्वागत के सामान में चाहे राजवैभव न था किन्तु गुरुकुल वासियों के हृदय का सच्चा भाव ही इस नवीन स्वागत में सार था। गुरुकुल झण्डे के ऐन आगे गुरुकुल की उठी हुई तलैटी के मुख पर एक शानदार दरवाज़ा बनाया गया था। दरवाज़े को मन्त्रों तथा स्वागत सूचक वाक्यों से खूब सजाया था। दरवाज़ा देखने से इलाहाबाद की प्रदर्शिनी का दृश्य साह्मने उपस्थित हो जाता था। सारी श्रेणियों को मन्त्रों तथा शुभ वाक्यों से सजाया गया था। बरामदों में बन्दनवार लहरा रहे थे। कालिज के अगले सुन्दर भाग में एक शामियाना सभा के लिये लगाया गया

था, जिसकी शोभा यद्यपि राजसी न थी तथापि हृदय को आकर्षण करनेवाली थी।

आगमन।

लगभग चार बजे सांयकाल लाट साहिब के हाथी गुरुकुल में घूमते हुए दिखलाई देने लगे। नये बनाये हुए द्वार पर गुरुकुल के मुख्याधिष्ठाता श्रीमहात्मा मुंशीरामजी ने सब महोपाध्यायों तथा गुरुकुल के स्नातकों सहित लाट साहिब का स्वागत किया। उसी समय पंक्तिबद्ध ब्रह्मचारियों ने नमस्ते तथा तालियों से आपका अभिनन्दन किया। वहां से लाट साहिब पैदल होगये। ब्रह्मचारियों के चमकदार और हंसते हुए मुखड़ों को देखकर लाट साहिब का दिल अत्यन्त प्रसन्न हो रहा था और आप ब्रह्मचारियों में से गुज़रते हुए बड़े सौजन्य के साथ ब्रह्मचारियों की नमस्ते का उत्तर देते जाते थे। लाट साहिब के साथ उनके प्राईवेट सेक्रेटरी मिस्टर बर्न, रुड़की के ज्वाइण्ट मेजिस्ट्रेट मिस्टर होवर्ट, सहारनपुर के तथा बिजनौर के मेजिस्ट्रेट आदि अनेक सज्जन विद्यमान थे। पहले निश्चय था कि सर जेम्स मेस्टन के साथ उनकी सहधर्मिणी भी आवेंगी किन्तु शारीरिक अस्वस्थता के कारण वह न आसकीं।

विद्यालय देखते हुए लाट साहिब को मुख्याधिष्ठाताजी जब भूमि पर ब्रह्मचारियों द्वारा बनाये हुए भारतवर्ष के चित्र के पास ले गये, तो आपने उसे देखते ही अपने सेक्रेटरी मिस्टर बर्न को कहा कि "क्या ही अच्छा होता यदि हमें भी अपने पूर्व जीवन में इसी क्रियात्मिक प्रकार से भूगोल पढ़ाया जाता।" चित्र में दिल्ली के ऊपर ब्रिटिश सरकार का झण्डा लगा हुआ था और गुरुकुल के स्थान पर और मोरवी पर ओ३म् के झण्डे थे। जब लाट साहिब को दिल्ली दिखला कर कहा गया कि "यह आपकी राजधानी है" तो आपने गुरुकुल के झण्डे की ओर इशारा करके कहा कि "यह आप लोगों की राजधानी है" इसी प्रकार के दृश्यों से आनन्दित होते हुए आप भोजन भंडार में गये। यहां पर एक दृश्य उपस्थित हुआ जिसने दर्शकों को बहुत उत्साहित किया। आप को इशारे के तौर पर कहा गया कि अन्दर चमड़े का बूट जाना कठिन है। दूसरी वार निवेदन करना आवश्यक नहीं हुआ। लाट साहिब ने एकदम अपने बूट जुदा कर दिये। नौकर उनके बूट उतारने लगा तो उन्होंने उसे

...दिया और इस प्रकार सारी की सारी मण्डली नंगे पांव ...डार में प्रविष्ट हुई ।

आश्रम देखकर लाट साहिब को मुख्याधिष्ठाताजी महा...द्यालय में लाये । सब से प्रथम गणित के महोपाध्याय की श्रेणी ...आपने विद्यार्थियों की शिक्षा को देखा । गणित के अतिरिक्त ...प ने वनस्पति शास्त्र की शिक्षा को विशेष ध्यान से देखा । जब ...ट साहिब को बतलाया गया कि वनस्पति शास्त्र की सारी शिक्षा ...र्य भाषा द्वारा ही दी जाती है तो आप बड़े आश्चर्यान्वित हुए ...र प्रो० सिन्हाजी की हिन्दी केमिष्ट्री, वनस्पति शास्त्र, विद्युतशास्त्र ...एक २ प्रति आप ने सानन्द स्वीकार की । अर्थ शास्त्र और इति...स की श्रेणी में आप बहुत देर तक ठहरे और ब्रह्मचारियों के ...क्षण का निरीक्षण किया । दर्शन शास्त्र की श्रेणी में पं० तुलसी...मजी मिश्र एम० ए० से आप की भेंट हुई । पण्डितजी को देखकर ...प ने पंडितजी के साथ पूर्व परिचय दिखलाया और दर्शन के पाठ ...देर तक सुना । इस के पीछे लाट साहिब रसायन भवन में पधारे ...र ब्रह्मचारियों के परीक्षण देखे । ब्रह्मचारियों ने एक तांबे के ...पात्र पर लेडी मेस्टन का नाम खुदवा कर और विज्ञान के परी...ण द्वारा उस पर सुनहरी पत्री चढा कर लेडी मेस्टन के लिये ...ट साहिब को भेंट किया । इस भेंट को लाट साहिब ने बहुत ...न्यवाद पूर्वक ग्रहण किया ।

महाविद्यालय दिखलाने के पश्चात् सारी दर्शक मण्डली को ...ध पान के लिये बिठलाया गया । गुरुकुल के स्वादु दुग्ध में ...स्सी मिलाकर लाट साहिब के सामने रक्खा गया । आपने चाय ...अपेक्षा भी अधिक रुचि के साथ उसका पान किया । कुछ फल, ...ाई और गुरुकुल के बने हुए पकौड़े भी उन्हों ने बड़े चाव से ...ए । दुग्ध पान में मुख्याधिष्ठाताजी ने भी भाग लिया । प्रोफेसर ...देव और श्रीमदनमोहन सेठ ने भोजन बर्ताया, दुग्ध पान बड़े ...नन्द से समाप्त हुआ ।

उसके पीछे सारी मण्डली सभा भवन में प्रविष्ट हुई । सारे ब्रह्म...रियों ने खड़े होकर फिर से स्वागत किया । सारे अध्यापक तथा ...पाध्यायगण पीत दुकूल धारण किये चारों ओर बैठे हुए थे । ...कों के समूह से पण्डाल सुशोभित था । सब से ऊपर वेदी पर

एक शाही कुर्सी थी जिस पर सरजेम्स मेस्टन विराजमान थे। प्रारम्भ में स्नातक पंडित हरिश्चन्द्रजी ने संस्कृत का अभिनन्दनपत्र पढ़ा जो आगामी अङ्क में दिया जायगा और जिसका आर्य भाषानुवाद यहां दिया गया है। संस्कृत का अभिनन्दनपत्र पढ़े जाने पर श्री मुख्याधिष्ठाताजी ने उसका इंग्लिश अनुवाद पढ़कर सुनाया। अभिनन्दन के अनन्तर लाट साहिब अभिनन्दन का उत्तर देने के लिये खड़े हुए एवं रोचक तालियों से आपका स्वागत किया गया। आपने जो उत्तर दिया वह नीचे दिया जाता है।

"मुझे शोक है कि मैं उस भाषा में उत्तर नहीं देसका जिस में अभिनन्दन पत्र दियागया है संध्या की छाया गहरी हो रही है। आपके प्रेमयुक्त निमन्त्रण और स्वागत के लिये मैं आपको हार्दिक धन्यवाद देता हूं। हरिद्वार आने के समय कई कारणों से मैंने गुरुकुल देखने का निश्चय किया। गुरुकुल एक अत्यन्त अपूर्व तथा मनोरंजक परीक्षण है जो इन प्रान्तों में और वस्तुतः सारे भारतवर्ष में किया जा रहा है और मैं उस जन समुदाय से भी मिलना चाहता था जिसे सरकारी—कागज़ों में अनन्त खतरों का कारण बताया जाता है। इस का सब से अच्छा उत्तर यही था कि इसे मैं अपने आप देखता। इस आश्चर्यजनक मनोरंजक तथा उत्तेजक संख्या को देखने के लिये आना मेरे लिये बड़ा सन्तोषदायक सिद्ध हुआ है। यहां अपने कर्तव्य पालन में तत्पर तपस्वियों का एक समुदाय देखने में आता है जो प्राचीन ऋषियों की प्रणाली को वर्तमान वैज्ञानिक रीति के साथ मिला कर वस्तुतः गुज़ारे पर परमार्थ का काम कर रहे हैं। यहां के विद्यार्थी पुष्ट शरीर, आज्ञाकारी, सच्चे राजभक्त, कार्य परायण वा असाधारण तथा प्रसन्न हैं। तथा इनका अच्छी तरह पालन पोषण किया जाता है। एक बात मैंने यहां और भी देखी है। मुझे शोक है कि जहां दौर्भाग्य वश हमारे स्कूलों और कालिजों में तीन के पीछे एक विद्यार्थी के ऐनक लगी होती है वहां गुरुकुल में २० पीछे एक के ऐनक लगी है।

मैं ऐसे स्थान में राजनैतिक पहलू के विषय में कुछ नहीं कहना चाहता, जहां राजनैतिक बातों से मतलब ही नहीं है। यदि इससे अधिक मुझे खोज करनी होगी या कुछ कहना होगा तो मैं आप के

सम्मानित मुख्याधिष्ठाता के साथ बात चीत करूंगा, जिन्होंने कृपा-पूर्वक अगले मास लखनऊ में मुझे मिलने की प्रतिज्ञा की है। अब मुझे कुछ अधिक कहना नहीं है। एक बार फिर मैं आपके वास्तविक और अकृत्रिम स्वागत और आतिथ्य के लिये धन्यवाद देता हूं।"

एक डिब्बे में बन्द करके यह अभिनन्दनपत्र लाट साहिब के भेंट किया गया। यह कहना आवश्यक नहीं है कि इस उत्तर से सब गुरुकुल वासी अत्यन्त प्रसन्न हुए। निबन्ध गुरुकुल के लेखाध्यापक पं० गौरी शङ्कर जी भट्ट का लिखा हुआ था। लेख से लाट साहब बहुत प्रसन्न हुए और लेखक से मिलने का विचार प्रकट किया। पंडितजी की लाट साहिब से भेंट हुई। जब महाविद्यालय की ऊपर की छत पर लेजाकर आपको गङ्गा, पर्वत और गुरुकुल का दृश्य दिख-लाया गया तो अकस्मात आपके मुखसे यह शब्द निकले कि जीवन में मैंने जिन सुन्दर दृश्यों को देखा है उन सब में से उत्तम दृश्य यह है। गुरूकुल के दृश्यों से आप बहुत ही मोहित हुए।

सभा के पीछे महा विद्यालयाश्रम देखने के लिये सारी मण्ड-ली गई। सायंकाल अधिक होजाने के कारण लाट साहिब खेलें न देख सके और अत्यन्त प्रसन्नता और हर्ष के साथ सब से मिलते हुए हाथी पर चढ कर हरिद्वार की ओर प्रस्थान किया। गुरुकुल की ओर से लाट साहिब को आर्य समाज की पुस्तकें और गुरुकुल द्वारा प्रकाशित पुस्तकें भी भेंट की गईं।

तिब्बत में बुधधर्म्म।

अनुमान १३०० वर्ष व्यतीत हुए कि तिब्बत के बौधमतावलम्बी राजा स्रांगसन गम्पू ने भारतवर्ष के तत्कालीन प्रचलित धर्म के आधार पर पहले पहल वहां बुद्धधर्म का प्रचार किया। उस समय तिब्बत में बान मत का प्रचार था। यह मत जिन व भूतों की पूजा और अन्य अनेक कल्पित बातों के आधार पर स्थित था। इस मत में अनेक गुह्य रीतियों का प्रचार था जो कदाचित बाम मार्ग से मिलती जुलती हों। इन दिनों में भारतवर्ष में श्रीनागार्जुन तथा अश्वघोष द्वारा महायन स्कूल के सिद्धान्तों का प्रादुर्भाव हो चुका था। तिब्बत में बौद्धधर्म पहुंचते ही बान मत के साथ मिला दिया गया और महायन बौधधर्म का तिब्बत एक केन्द्र सा बन गया। यहां

से ही चीन, जापान तथा कोरिया में यह मत फैला। बान मत जहां जीवन को उत्तम बनाने तथा ऐश्वर्यों द्वारा संसार को भोगने की शिक्षा प्रदान करता था वहां बौधधर्म ने निर्वान का आदर्श उपस्थित कर लोगों को निवृति मार्ग की शिक्षा दी। उक्त राजा की मृत्यु के अनुमान एक सौ वर्ष पीछे महाराज त्रिसांग दूचण ने भारतवर्ष में से उज्जयिनी निवासी पण्डित पद्मसंभव को तिब्बत में निमन्त्रित किया जहां वह ४६ वर्ष पर्य्यन्त धार्मिक ग्रन्थों का अनुवाद करता रहा। दुर्भाग्य वश उस ने तान्त्रिक पूजा को जो भारतवर्ष में प्रचलित थी तिब्बत में प्रचरित करा दिया और उसका नाम मन्त्रायणिक बौधधर्म रखा। अब तिब्बत में इस प्रकार की पूजा को प्राचीन प्रणाली कहा जाता है। मन्त्रायणिक बौध अपने को नगाक लूपा और शर्मन लोग अपने को सूत्रायणिक बौध कहने लग गये। आज कल तिब्बत में मन्त्रायणिक तथा सूत्रायणिक दो प्रकार के लामा पाये जाते हैं। पूर्वोक्त भारततर्ष के गुसाइयों की तरह विवाह करते सन्तानोत्पत्ति करते और तिस पर भी लामा कहलाते हैं परन्तु सूत्रायणिक लामा लोग ब्रह्मचारी और सन्यासियों के समान रहते हैं। इस के ३०० वर्ष बाद भारतवर्ष से एक और पण्डित तिब्बत पहुंचे—इनका शुभ नाम अतीसा था। इन्हों ने बुधधर्म में कुछ संशोधन किया। इनके समय में ही वह राजधर्म बना और अब तक उसी रूप को धारण किये हुए है। इन लामा लोगों में निम्न लिखित साधनों का प्रचार है। धर्म के चार साधनों अर्थात् मैत्री, करुणा, मुदिता तथा उपेक्षा का जीवन में धारण करना (२) धर्म के आठ मार्गों का अवलम्बन तथा भिक्षुओं के लिये जो २५३ नियम बतलाये हैं उनका अनुशलिन करना।

निंग-मापा (लामा) महोदय धारणा और समाधि द्वारा बुद्धि की प्राप्ति के निमित्त चेष्टा करते हैं और महानिर्वान को अपना लक्ष्य बनाते हैं। सूत्रायणिक लामों का आदर्श भिन्न प्रकार का है वह समाधि द्वारा उस अवस्था की कामना करते हैं जिसे प्राज्ञावस्था कहते हैं और जिस में इन्द्रियों के विषय नष्टप्राय होजाते हैं। इस अवस्था में प्रत्येक जिज्ञासु बुद्ध बन जाता और प्रत्येक वस्तु का ज्ञान उपलब्ध कर लेता है।! दूसरे शब्दों में बुद्धि को प्राप्त करना और अज्ञान तथा अविद्या का विध्वन्स करना ही लक्ष्य माना

जाता है। इसे वह तीन अवस्थाओं में विभक्त करते हैं (१) धर्म काय २) सम्भोग और (३) निर्माण। पहिली अवस्था में निर्वाण तथा संसार का याथातथ्य ज्ञान प्राप्त होना बतलाया जाता है। दूसरी अवस्था में एक व्यक्ति में ही सभी उत्तम गुणों का समावेश होना बतलाया है और तीसरी वह अवस्था है कि जिस में मनुष्य सृष्टि का आदर्श रूप आत्मा बन जाता है। इस अवस्था द्वारा कहा जाता है कि संसार की वह समग्र शक्तियां जो जगत को चलायमान कर रही हैं वही एक लघुप्रति के रूप में मनुष्य देह में विद्यमान रहती हैं और मनुष्य वस्तुतः ब्रह्माण्ड की एक मिनीयेचर (mineature copy) प्रति हो जाता है।

इसके अतिरिक्त वह आत्मा की ५ अवस्थाओं को मानते हैं और प्रत्येक जिज्ञासु को इन अवस्थाओं में से गुज़र कर बुद्ध होने का सौभाग्य प्राप्त होता है।

...रे स्कूल के लामा लोग ५ के स्थान में १३ अवस्थाएं मानते हैं। साधनशील मनुष्य प्रथमावस्था में ही अपने आप को प्रसन्न चित्त बना लेता है और यदि वह प्रथम की ६ अवस्थाओं को पार कर ले और अर्हत्त पदवी का पात्र बन जावे तो वह सांसारिक विषयों में कदापि पतित नहीं हो सक्ता। इन लामों का विचार है कि जब जिज्ञासु आठवीं अवस्था को प्राप्त कर लेता है तो उसमें प्रतिदिन १००० अवतारों को धारण करने की शक्ति उत्पन्न हो जाती है और इन द्वारा वह संसार के लिये अधिक कल्याणकारी बन जाता है। मन्त्रायणिक बौधों में बौधिसत्व, स्वामी, योगी, सिद्ध-...र, महात्मा और परमहंस आदि नाम पाये जाते हैं। प्रायः महात्माओं के यह नाम अब भी भारतवर्ष में प्रसिद्ध हैं और इसी ... में तिब्बत में इन भावों का प्रवेश हुआ है। इन के साधन भी ...यन, धारणा, ध्यान और समाधि के नाम से पुकारे जाते हैं। ...और शाक्त लोगों के विचार तिब्बत में किसी न किसी रूप में ...द्यमान हैं। यदि शाक्त सम्प्रदाय और तान्त्रिक बौध मत में ...तर ढूंढना चाहें तो कदाचित गूढ़ अन्वेषणा द्वारा ही ज्ञात ...सके। वस्तुतः बौध धर्म की शिक्षा जो त्रिपिटक में मिलती है ...बौधधर्म रूपी वृक्ष के तीन तनों अर्थात् विनय, सूत्र और ...भिधान में है। सूत्र, मन्त्र, ध्यान, धारणा और साधन इस वृक्ष के पत्ते

और बुद्धि की प्राप्ति ही इसका स्वादु फल है । तिब्बत में इस प्रकार के मन्त्रायण और सूत्रायण दोनों स्कूलों के प्रचारक मन्त्र, धारणा, साधन और समाधि को अभीष्ट वस्तु की प्राप्ति का हेतु मानते हैं। अब इन साधनों में भी चार डिग्रियां मानी गई हैं। (१) क्रिया (२) उपा (३) योग और (४) अनुत्तरा ॥ इन चारों डिग्रियों द्वारा मनुष्य समाधि को प्राप्त कर सक्ता है। समाधि आनन्द को प्राप्त करने में सहायक बनती है और आनन्द-बदन आत्मा दुखों से निजात पाकर बुद्ध बन जाता है। समाधि में मनुष्य की मानसिक शक्तियां उज्जागृत और विशुद्ध हो जाती हैं, वृद्धि को प्राप्त होतीं और ओज को धारण करती हैं। समाधि को आप मान्सिक शक्तियों का सरोवर समझिये कि जहां सब मल धुल जाती और जैसे कुण्ड में जल शुद्ध होता है इसी प्रकार ज्ञान और विद्यारूपी (Filter) द्वारा अज्ञान और अविद्या का मैल धुल जाता है और मन में श्रद्धा, उत्साह और पवित्रता के उच्च भावों का समावेश हो जाता है । मन समाधि द्वारा फैलता, पवित्र बनता और बल को धारण करता है। यह एक (Crucible) का कार्य्य करता है जहां कि अहंकार के भाव प्रथम दब जाते और अन्त में नाश को प्राप्त होते हैं । इसी अवस्था में योगी जगत की घटनाओं को जानता, और साधनशील दूसरों के आन्तरिक भावों को पढ़ता और अन्य मनुष्यों के हृदयों पर प्रभाव डालता है । प्रत्येक लामा को इन चार अवस्थावों में से गुज़रना पड़ता है। प्रथम वह कुछ दैविक शक्तियों के निमित्त अपने आप को नियुक्त करता है। वह शक्तियां पुरुष तथा स्त्री दोनों रूपों में मानी जाती हैं, जैसे मंजूसरी, अवलोकितेश्वर, बज्रपाणि, तारा, लक्ष्मी, सरस्वती इत्यादि। तब उसे मद्य मांस के सेवन को छोड़ देना पड़ता है यहां तक कि दूध, मक्खन, मूली, प्याज़ लहसुन और खुम्भादि को भी त्यागना होता है। [शेष फिर]

मनोविज्ञान के खेल ।

मनोविज्ञान कोई ऐसा शब्द नहीं है जिससे तुरन्त मन बहलाने वाली या लाभदायक वस्तु का अनुमान हो । लोग कहते हैं कि अमेरिका के एक अच्छे मनोविज्ञान के जानने वाले प्रोफेसर

स ने जिनकी मृत्यु पर अभी तक शोक मनाया जाता है एकबार ने छात्रों से यह कहा था " कदाचित तुम लोग मुझ से यह पूछो इस मनोहर विद्या से संसार को वस्तुतः क्या लाभ होगा तो मैं यही सकता हूं कि कुछ नहीं " परन्तु मनोविज्ञान की सहायता वा और आयुर्वेद में लेने के प्रयत्नों को न लिखकर मैं इतना ही गा कि एक अमेरिका के प्रोफेसर डाक्टर डिल स्काट (Dr. ill Scott) ने इसके सिद्धान्तों द्वारा विज्ञापनों की सफलता द्ध की है। कुछ रंग दूसरों से अधिक खुलते हैं। इस सिद्धान्त आश्रय नकशों में पहाड़ी और घाटी में भेद दिखाने में लिया है और कार्पेन्टर साहबको 'Mental Physiology' में इस य की भारी मूर्खता को हटाने के लिये पूरा मसाला मिल सकता किन्तु इस लेख का अभिप्राय शुद्ध विज्ञान के फलदायक होने प्रमाण देना नहीं है। हां, पुस्तकों से कुछ लेखों को लेकर ल यह दिखलाना है कि मनोविज्ञान से भी जब कुछ न करना तो जी बहिल सकता है।

उदाहरण के लिये कागज़ का टुकड़ा और एक कोई सिक्का लीजिए। कागज़ पर एक चिन्ह बनाकर और कागज़ को ऐसे कर जिससे चिन्ह दाहिने आंख के ठीक सामने आवे बांई आंख करके दाहिनी आंख के चिन्हपर देखिए। खुली आंख को चिन्ह जमाए हुए सिक्के को हाथ से दाहिने ओर तिरछे या कुछ ड़ा नीचे की ओर हिलाइये तो तुरन्त आंख की ओर होजावेगी तु फिर जब ऊपर या आगे किया जायगा तो दिखाइ देने लगेगा। ही बांइ आंख से भी उसके सामने की वस्तु नहीं दिखाई देगी। रण यह कि प्रकाश का प्रभाव चक्षुतन्तु (optic nerve) पर जो आंख का मस्तिष्क से सम्बन्ध करती है ऐसे सूक्ष्म यंत्र द्वारा ता है कि जिसमें जहां वह तन्तु अक्षिगोलक में प्रवेश करता है वहां कुछ त्रुटि है। यह स्थान दोनों आंखों में नाक की ओर होता है और श के आंखों में पुतली द्वारा प्रवेश करने के कारण जो प्रकाश स्थान पर पड़ता है और जिसके विषय में हम अन्धे हैं (जैसा ऊपर के उदाहरण से ज्ञात होता है) जब हम दाहिनी

° क्वीन्स कालिज बनारस के फिलासफी के अध्यापक प्रोफेसर मलेवनी के वरी १९१३ के हिन्दुस्तान रिव्यू के एक लेख का अनुवाद।

आंख से देखते हैं तो दाहिने ओर से और जब बाईं आंख से देखते हैं तो बाईं ओर से आता है। एक आंख दूसरे की त्रुटि को पूरा करती रहती है और आंखें भी बराबर घूमा करती हैं इसीसे हमारा ध्यान इस अन्धेपन पर नहीं जाता। एक आंख को किसी वस्तु पर जमा कर देखने से भी हम को इस अन्धेपन का पता नहीं लगता क्योंकि पास की वस्तु का आकार उस भाग में आजाता है जो हम नहीं देखते। इसी से बहुत ही थोड़े लोग इस बात को जानते हैं कि सचमुच हम कुछ कुछ दोनों आंखों के अन्धे हैं।

यों तो आंखों में कुछ अन्तर होने के कारण देखी हुई वस्तु का समान संस्कार नहीं होता और जब ऐसा होता है तो वस्तु चिपटी दिखाई देती है जैसे सूर्य्य और चाँद जिनकी दूरता आंखों से उनके अन्तर की अपेक्षा बहुत है जब हम उनको देखते हैं तो हमारी आंखें समांतर (Parallel) होजाती हैं। ऐसा ही फल इस प्रयोग से भी होगा। एकही तरह के दो सिक्कों को सम वस्तु पर एक ही लकीर में एकही प्रकार से रखकर और एक मटर की छीमी को लेकर उसकी नोक को दोनों सिक्कों के बीच से उसी पर आंख जमाए अपनी ओर ऊपर को उठाइये तो जब बांई आंख को दाहिने सिक्के से सम्बन्ध करने वाली लकीर दाहिनी आंख को बांए सिक्के से सम्बन्ध करने वाली लकीर को काटेगी तो ऐसा ज्ञात होगा कि दोनों सिक्कों के बीच में आकर एक तीसरे सिक्के को जन्म दिया; इस नये सिक्के का जन्म उन दो सम संस्कारों के मेल से होता है जो दाहिनी आंख पर बांए सिक्के का और बाईं आंख पर दाहिने सिक्के का पड़ता है, और जो दाहिने और बाएँ ओर सिक्के दिखाई देंगे वे दाहिने सिक्के का दाहिनी आंख पर और बांए सिक्के का बाईं आंख पर पड़ना प्रकाश के फल हैं। यह खेल अच्छी तरह तब तक नहीं होता जबतक कि दोनों आंखें तुली नहीं रहतीं और जिसका होना प्रायः दुस्तर है।

अपने सामने के दृश्य का दोनों आंखों पर भिन्न संस्कार होने के कारण वस्तु ठोस या चिपटी दिखाई देती है। अपनी अंगुली पर सीधे दीवार की ओर खड़ीकर एक आंख से देखने से वह दीवार ही पर मालूम होगी, तो भी यदि किसी भीतरी या देसे दृश्य का कि जिसमें ऊंचाई गहराई इत्यादि अच्छी तरह

लूम होती हो फोटो लेकर एक आंख को बंद करके दूसरी आंख अच्छी तरह देखिए तो दृश्य का चिपटापन जाता रहेगा। उसमें बाई और चौड़ाई के अतिरिक्त एक तीसरी बात दूरी आजाती । यदि एक काग़ज़ का चोंगा बनाकर उसमें से ऐसे देखें कि टो को छोड़कर आस पास की कोई वस्तु आंख के सामने न वे तो और ही अच्छा दिखाई देगा । एक आंख से दूरी नहीं खाई देती और न तो वह चिपटापन ही जो दोनों आंखों से देखने मालूम होता है। एक फोटो के चित्र में रंग के हलके और गहरे न के कारण ऐसा मालूम होगा कि हम सचमुच एक दृश्य अपने सामने देख रहे हैं। अलग २ दोनों आंखों से देखने से दृश्य भिन्न भिन्न होजाते हैं। किसी से एक वस्तु को पहिले एक आंख फिर दूसरी से देखकर छूने को कहिए तो देखिए क्या दिल्लगी ती है। एक काग़ज़ का चोंगा बनाकर और उसे बांए हाथ में कर उसमें से दाहिने आंख से देखिए तो मालूम होगा कि आप र आंख में से देखते है ।

हम लोग यह तो जानते हैं कि किसी वस्तु के स्थान की वस्था बदलने से उसके कई दृश्य होते हैं, परन्तु यह बहुत ही म लोग जानते होंगे कि उसकी बड़ाई छोटाई में भी अन्तर हो- ता है। कदाचित स्त्रियां इसके विषय में पुरुषों से अधिक नती हैं। " मोटी स्त्रियों को चारखाना पहिने नहीं देखते और तो लम्बी स्त्रियों को सीधी धारी का कपड़ा पहने " (डिल काट) अंग्रेज़ी S अक्षर को या ४ के अङ्क को घुमाकर देखिए तो के नीचे भागों की बड़ाई छोटाई में पहिले की अपेक्षा बड़ा तर होगा, अथवा दो बराबर लकीरें खींचिए और एक दोनों नारों पर ऐसी छोटी भीतरी तिर्छी लकीर खींचिए कि <—१—> समें वह एक ऐसे तीर का स्वरूप धारण कर ले <—२—> सके दोनों नोकों पर शिखा हों। दूसरी लकीर के किनारे पर उलटी बाहर की ओर छोटी तिर्छी लकीरें खींचिए।

दूसरी लकीर पहिली से बड़ी ज्ञात होगी । ऐसा क्यों होता है हीं कह सकते। फिर दो बराबर लकीरें बिन्दु द्वारा बनाइए। हिली को वैसेही छोड़कर............१ दूसरी के विन्दुओं के च बीच एक एक बिन्दु और रख दीजिए तो दूसरी पहिली से

बड़ी मालूम होगी । इसमें पहिली की अपेक्षा बिन्दु अधिक होजाने से पहिली को देखने के परिश्रम की अपेक्षा इस को देखने में परिश्रम अधिक होने के कारण ऐसा मालूम होता है कि हमने पहिले की अपेक्षा बड़ी वस्तु देखी है। इसी प्रकार मध्यान्ह का सूर्य्य उदय या अस्त होने के समय के अपेक्षा छोटा प्रतीत होता है । मध्यान्ह में जब हम ऊपर की ओर देखते हैं तो कोई वस्तु हमारी आंखों और सूर्य्य के बचि नहीं आती परन्तु अस्त या उदय के समय हमारी आंखों और सूर्य्य के बीच पृथ्वी या समुद्र आजाता है इसीसे पृथ्वी या समुद्र पर की बहुत सी चीजें और समुद्र की लहर में चमकते हुए प्रकाश के बिन्दु ऊपर के उदाहरण में लकीर के बीच के बिन्दुओं की तरह दृष्टि को अधिक परिश्रम देते हैं । हम ने देखा था कि लकीर में बीच वाले बिन्दुओं का प्रभाव लकीर के परिमाण पर पड़ा यह हम लोगों का अनुभव है कि जो दूर की वस्तु बड़ी दिखाई देती है वह सचमुच बहुत बड़ी होती है। कदाचित् ऐसा ही हो कि इस अनुभव का प्रभाव हम पर इतना पड़ता हो कि जिससे अस्त होते समय सूर्य्य बहुत ही बड़ा ज्ञात होता है। मध्यान्ह का सूर्य्य बिल्कुल उलटे कारणों से छोटा प्रतीत होता है ।

आगे के खेल मांसपेशी पर संकल्प शक्ति (will power) के प्रभाव के अतिरिक्त ध्यानशक्ति (thought power) के प्रभाव पर अधिक निर्भर हैं । एक सोने की अंगूठी को आदमी के बाल में बांधकर एक चांदी के चिम्मच पर यदि कोई पुरुष लटकावे तो अंगूठी चिम्मच के लम्बाई में हिलेगी और यदि कोई स्त्री करे तो चिम्मच के चौड़ाई में हिलेगी। फिर अंगूठी को एक ऐसी वस्तु के पास लटकाइए कि जिससे छू जाने से शब्द हो। कुछ प्रतीक्षा करने के बाद अंगूठी अपने आप ही हिलने लगेगी और समय के अनुसार घंटी बजावेगी । हमारी संकल्पशक्ति के प्रभाव के अतिरिक्त हमारे विचारों का प्रभाव भी मांसपेशी पर पड़ता है । सोचिए कि अंगूठी ऐसे हिले वह वैसे ही अपने आप हिलने लगेगी परन्तु यदि ऐसा ही है तो बाल और सोने चांदी की क्या आवश्यकता ? सच्च तो यह है कि इनकी आवश्यकता कुछ नहीं है। इनका फल केवल यही है कि इस विचित्रता में मनुष्य का विश्वास जल्दी हो जावे और अंगूठी थामनेवाले के विचार या समझ के अनुसार हिलेगी। वस्तु

अंगूठी की चाल न तो इन वस्तुओं ही पर और न तो थामने वालों ही पर निर्भर है। एक बटन भी एक अंगूठी का काम देगा। वह भी थामनेवाले के विचार के अनुसार चलेगा। अपनी कुंजियों के गुच्छे ही को उस की ज़ंजीर के सहारे लटकाइए तो आप के विना परिश्रम ही वह आपके विचार के अनुसार सीधा या चक्कर में हिलेगा। केवल आवश्यक्ता इतना ही है कि आप चाल या घंटी के समय विचार के अतिरिक्त चाल या घंटी पर ध्यान रक्खें जिससे आपके आंखों या कानों को उस चाल या घंटी का अनुभव हो जिसको आप अपनी इच्छा के विना उत्पन्न करते हैं। इसी प्रकार प्लानचेट की लिखाई, दूसरे के विचारों को जानने का और टेबल का हिलाना होता है। फैरेडे ने (Faraday) टेबल के हिलाने के विषय में एक सहल उपाय द्वारा इस बात का प्रमाण दिया है। दो छोटे लकड़ी के टुकड़ों को लेकर एक के ऊपर दूसरे को रखकर दोनों के बीच में दोनो किनारों पर एक एक रूल रख के रबड़ के बन्धनों से बांध दिया। एक लम्बी पतल नोकदार गावदुम लकड़ी (pointer) को भी इस प्रकार लगा दिया जिस से यह मालूम हो कि ऊपर वाली लकड़ी या नीचे वाली लकड़ी पहिले हिली। इस यंत्र को टेबल हिलाने वाले के हाथ के नीचे टेबल पर रख दिया। ऐसी दशा में यदि टेबल हिलाने वाले के हाथ के कारण टेबल न हिलता होगा तो नीचेवाली लकड़ी पहिले हिलेगी नहीं तो ऊपर वाली। ऐसा हुआ कि जब जब टेबल हिला पाँइन्टर ने यही सूचना दी कि ऊपर वाली ही लकड़ी जिसका सम्बन्ध टेबल हिलाने वाले के हाथ से था पहिले हिली। दूसरे प्रयोग में जिस में चार आदमियों से एक आदमी का ऊपर उठाया जाना बहुत ही सहज हो जाता है यदि वे पांचों एक साथ ही गहरी सांस लेते वर्जिल के (Virgil) कथनानुसार "वे ऐसा कर सकते हैं क्योंकि वे समझते हैं कि वे ऐसा कर सकेंगे" उठाए गए आदमी की सांस केवल वही काम करती है जो चिम्मच वाले प्रयोग में सोना और चांदी करते हैं अर्थात् केवल पांचों आदमियों के मन में यह विश्वास बैठा देना कि वे इस खेल को कर सकते हैं। यह भी हो सकता है कि उठाने वालों का गहरी सांस लेने से खेल पर ध्यान जमे।

अन्त में छूने के दो खेल लिखता हूं। एक या दो या अधिक

अंगुलियों से किसी को इस प्रकार छुइये कि वह यह न देख सके कि आप ने उसे कै अंगुलियों से छुआ है तब पूछिए कि वह बतावे आपने उसे कै अंगुलियों से छुआ। बड़ी और बीच वाली अंगुली को एक दूसरे पर करके उनसे अपनी नाक पकड़िए और देखिए कि आपकी नाक तो कहीं दोहरी नहीं हो गई।

विश्वेश्वर प्रसाद

मातृशक्ति।

परमात्मा ने मनुष्य को चाहे वह स्त्री हो वा पुरुष जन्म के साथ ही साथ तीन शक्तियां प्रदान की हैं बुद्धि सम्बन्धी, शरीर सम्बन्धी और नीति धर्म अथवा आचरण सम्बन्धी। इन तीनों शक्तियों के साथ २ उन्नति करने को शिक्षा कहते हैं अर्थात् शिक्षा वह है जिस से बुद्धि की वृद्धि, शरीर की पुष्टि और आचरण की शुद्धि हो। प्रत्येक स्त्री वा पुरुष के मुख्य तीन विभाग हैं, शरीर मन और आत्मा। बालक उत्पत्ति के समय बहुत छोटा होता है परन्तु पालन पोषण करने से उसका शरीर दिन प्रति दिन बढ़ता और पुष्ट होता जाता है यहां तक कि वही बालक जो जन्म के समय असमर्थ होने के कारण अपने जीवन के लिये दूसरों के आश्रित था रोने के अतिरिक्त और कुछ हिम्मत नहीं रखता था ऐसा लम्बा चौड़ा हृष्टपुष्ट हो जाता है कि दूसरे छोटे२ बालकों का पालन पोषण कर सकता है। यदि उस के शरीर का भली भांति पालन पोषण नहीं होता तो युवावस्था में अति खिन्न और दुर्बल रहता है और यदि उसकी रक्षा ही न की जाती तो वह बाल्य अवस्था में ही नष्ट हो जाता। यही दशा मन की भी है जैसे जन्म के समय शरीर निर्बल और कोमल होता है वैसे ही मन भी निर्बल होता है, जैसे खाने पीने से शरीर की पुष्टि होती है उसी प्रकार वैज्ञानिक प्रसाद से मन की सन्तुष्टि होती है। जिस प्रकार बहुत अथवा कच्चा भोजन करने से शरीर में रोग उत्पन्न होते हैं वैसे ही अत्याचार वा दुर्विचार वा दुर्व्यसनों से मन में भी रोग उत्पन्न हो जाता है। जैसे इष्ट अनिष्ट साधनों से मन सुरक्षित वा विकारी हो सक्ता है इसी प्रकार आत्मा भी गुण दोषों के संसर्ग से बलवान वा पतित होता रहता है। शास्त्र-वेत्ता महर्षियों ने जीवात्मा की मीमांसा करते हुये अनेक स्थलों पर

कहा है कि—जीवात्मा स्वरूपतः न स्त्री है, न पुरुष है, न नपुंसक है किन्तु जैसा २ शरीर धारण करता है वैसा २ माना कहा जाता है।

यदि स्त्री जाति की शारीरिक बनावट पर आयुर्वेदिक व्यवस्था से विचार किया जावे तो प्रत्यक्ष सिद्ध है कि पांचों ज्ञान इन्द्रियां, अन्तःकरण चतुष्टय, विज्ञानमय आदि कोष, मस्तिष्क, स्मृति सुषुम्णादिनाडियां इत्यादि वे सब अङ्ग तथा साधन स्त्री शरीर में विश्वम्भर ने प्रदान किये हैं जो शिक्षा प्राप्ति के लिये पुरुषों के शरीर में पाये जाते हैं।

धन, परिवार, शरीर, सदाचार और आत्मिक बल की रक्षा और वृद्धि करना पुरुष को उतना ही आवश्यक है जितना कि स्त्री को। यदि सुशिक्षित पुरुष शिक्षा के प्रमाण से उपरोक्त रक्षा और वृद्धि के पुरुषार्थ में सुगमता से कृतकार्य हो सक्ता है तो उसी सफलता के लिये स्त्री जाति के लिये भी शिक्षा अवश्य एकमात्र साधन माना कहा जावेगा। निस्सन्देह सुशिक्षित स्त्रियां उपरोक्त सब ऐश्वर्यों की रक्षा और वृद्धि करने में पुरुषों की अपेक्षा अधिक उपयोगी होती हैं। जिन घरों में अयोग्य बुद्धिहीना मूर्खा स्त्रियों की रक्षा में धन, सन्तान, आरोग्यता, प्रबन्ध दिया जावे वे गृहस्तियां अवश्य नष्ट भ्रष्ट होंगी। इसके अतिरिक्त सुशिक्षा से सुभूषित महिलाएं अपने अनुभव विचार विवेक संकल्पों से गृहस्थ जीवन के सम्पूर्ण ऐश्वर्यों को प्राप्त करने, उनको सुरक्षित रखने और उनकी वृद्धि करने में निस्सन्देह फलवती हुई, होती हैं और होंगी।

संसार के इतिहास ने पूर्ण रीति से सिद्ध कर दिया है कि संसार की प्रत्येक जाति में आदर्श पुरुषों को आदर्श माताओं ही ने उत्पन्न किया है। विरक्त हों वा वैज्ञानिक, शूरवीर हों अथवा तपस्वी, उनके उस असाधारण शक्ति के संस्कार असाधारण शक्तिशाली माताओं के गोद में ही आविर्भूत होते हैं। माता के मन में अगर सद्विचार विराजमान हैं तो वह अपने बालकों के कोमल हृदयों को विद्या और सचाई से भर देती हैं और अपने सदाचार से उनके अन्दर पवित्र जीवन का संचार करती हैं। माता के शब्द बच्चों के लिये कानून हैं। आंख की झपक ही से वह आज्ञा पालन पर तत्पर होते हैं इत्यादि मानों से सिद्ध होता है कि पुरुष समाज की उच्च वा नीच गति के संस्कार माताओं की योग्यता अयोग्यता पर निर्भर हैं।

मातृशक्ति की उपासिका।

समालोचना

श्रुति संगीतकम्-श्रीयुत महाशय गिरधरलाल घाट कूपर निवासी ने इस अमूल्य ग्रन्थ का संग्रह किया है। सुन्दर आर्ट पेपर के ८० पृष्ठों में पुस्तक रचयिता ने वेद मन्त्रों के उत्तम आशयों को दर्शाया है। स्थान २ पर चित्रों द्वारा वैदिक मन्त्रों को सजीव बना दिया है। संस्कृत के मन्त्रों के साथ २ अंग्रेज़ी अनुवाद तथा अंग्रेज़ी शब्दों में मन्त्र के भाव को स्पष्ट किया है। प्रार्थना शील नवयुवक इस गुटका से बहुत कुछ लाभ उठा सक्ते हैं। मूल्य केवल ॥) मात्र है। मिलने का पता-कन्या विद्यालय-घाट कूपर-जी-आई. पी. रेलवे

जयन्त-लेखक श्री गणपति कृष्ण गुर्जर। महाकवि शेक्सपियर के अत्यन्त रोचक, शिक्षाप्रद तथा मनोरजंक नाटक हैम्लेट को जिन्हों ने अंग्रेज़ी भाषा द्वारा पढ़ा है वह भली भांति कवि कल्पना की सृष्टि का अनुभव कर सक्ते हैं। जयन्त उसी हैम्लेट के आधार पर लिखा गया है। गुर्जर महोदय ने इस भावपूर्ण नाटक को स्वदेशी वस्त्र पहिनाने में निपुणता से कार्य्य किया है। भाषा सरस है। मूल्य १) मिलने का पत्ता, ग्रन्थ प्रकाशक समिति-काशी।

सुलभ व्याकरण-हिन्दी भाषा का यह सरल तथा सुलभ व्याकरण है, जिसे पं० कन्हैयालाल उपाध्याय ने हिन्दी की चौथी और पांचवीं कक्षा के उपयोगार्थ बनाया है। बालकों के लिये कई ऐसे उपयोगी नियम लिख दिये हैं जिन से वह हिन्दी को सहसा शुद्ध लिख सकें। मूल्य केवल।) मात्र है। मिलने का पत्ता-द्विवेदी ब्रादर्स-खेतवाडी बम्बई।

काव्य सन्ध्या-पं० राधाकृष्ण त्रिपाठी-रीडर उन्नाव प्रणीत। पण्डित राधाकृष्ण त्रिपाठी प्रधान आर्य्य समाज उन्नाव ने सर्व साधारण पर इस ग्रन्थ के रचने में बड़ा उपकार किया है। बालक को आकर्षण करने के लिये सन्ध्या मन्त्रों के अर्थ सरल कविता में कवि ने परिणत कर दिये हैं जिसे सुविधा से बालक तथा बालिकाएँ कण्ठाग्र कर सक्ती हैं। आर्य्य परिवारों में ऐसे सुन्दर ग्रन्थों का प्रचार होना लाभदायक है। उत्तम कागज़ पर ४४ पृष्ठ पर यह ग्रन्थ छपा है। मूल्य केवल ≡) मात्र। मिलने का पता-ग्रन्थकर्त्ता॥

महाराष्ट्र रहस्य । लेखक-महाशय लक्ष्मण नारायण गर्दे। यह लघु पुस्तक उन लेखों का संग्रह है जो एक बार भारतमित्र में छपे थे। लेखक ने वैज्ञानिक रीत्यनुसार उन आवश्यक कारणों को वर्णन किया है जिन्हों ने महाराष्ट्र जाति को उच्च जाति बनाया था। भाषा ओजस्विनी और मधुर है। मूल्य ≡) ग्रन्थ प्रकाशक समिति काशी में मिलेगी।

——*——

सामाजिक समाचार।

आर्य्य समाज काशी का वार्षिकोत्सव।

आगामी १८-१९ और २० जुलाई को समारोह से मनाया जायगा।

——*——

अन्य सामाजिक उत्सव

नाम समाज।	तारीख।
आर्य्य समाज भूड बरेली	३०, ३१, मई व १ जून
आर्य्य समाज हाथरस	४, ५ और ६ मई
उएवा ज़िला जौनपुर	१३, १४ और १५ जून
आर्य्य कुमार सभा मेड	७, ८ मई
,, ,, गाज़ियाबाद	१७, १८ और १९ मई

महाशय नन्हेलाल मुरलीधर मन्त्री गुरुकुल होशंगाबाद सूचना देते हैं कि गुरुकुल मध्य प्रदेश का वार्षिकोत्सव आगामी २५, २६ और २७ एप्रिल को होगा।

आर्य्य कुमार सभा सीवान के अधिकारी आगामी वर्ष के लिये निम्न लिखित निर्वाचित हुए। श्री वैद्यनाथ प्रसाद बी० ए० प्रधान, महेन्द्र प्रसाद जी उपप्रधान, महाशय जगन्नारायण जी मन्त्री, बा. रामनारायण प्रसाद जी उपमन्त्री, महाशय रघुनाथ प्रसाद पुस्तकाध्यक्ष। बद्रीनाथजी कोषाध्यक्ष

श्री दयानन्द अनाथालय अजमेर का वार्षिकोत्सव २७, २८ और २९ एप्रिल को अनाथालय के ... में होगा जिसमें अन्य

उपयोगी विषयों के अतिरिक्त अनाथों की उन्नति के विषय पर भी विचार किया जावेगा ।

बम्बई से महाशय अयोध्या प्रसाद जी शर्म्मा लिखते हैं कि बम्बई के प्रसिद्ध आगरा निवासी पं० रमेश्वरानन्द जी वैद्य की धर्मपत्नी श्रीमती सावित्री देवीजी की अकाल मृत्यु होगई । संस्कार वेदोक्त रीत्यनुसार हुआ । देवी जी गुजराती और हिन्दी भाषा की विदुषी थीं । आप ने मृत्यु के समय गुरुकुल बृन्दावन को ५००) रु० और अन्य संस्थाओं को भी दान दिया । ब्राह्मणों के पहुंचने पर आप ने कहा कि मुझे बैतरणी पार करने की आवश्यक्ता नहीं । हां, गाओं की रक्षा चाहते हो तो दो गाय कसाईयों से मूल्य लेकर किसी पिंजरापोल में पहुंचादो, चुनांचे ६१) में दो गाय लेकर ब्यावर (राजपूताना) की गौशाला में भिजवादी गई । श्रीमती सावित्री देवी जैसी विदुषी देवी के वियोग से जहां उन के पति को दुख पहुंचा वहां आर्य्य पुरुषों को भी इस असामयिक मृत्यु से रंज हुआ है ।

महाशय शिवचरण लाल विद्यार्थी बरेली कालिज १ कन्या की विद्या के निमित्त १) मासिक की बृत्ति के लिये नवजीवन पत्र द्वारा किसी दानी महोदय से प्रार्थना करते हैं जो देना उचित समझें उन से पत्र व्यवहार करें ।

फीरोजाबाद भारती भवन के प्रबन्धकर्त्ता महाशय चिरंजीलाल जी सूचित करते हैं कि यह भवन आर्य्य मित्र सभा की ओर से नहीं खुला है किन्तु एक वर्ष पूर्व से खुला है । भवन का सम्बन्ध किसी सम्प्रदाय से नहीं हां, कई आर्य्यकुमार इस में कार्य्य अवश्य करते हैं ।

———

नवजीवन बुक डिपो, काशी ।

इस पुस्तकालय में उपयोगी पुस्तकों का बहुत कुछ संग्रह किया गया है । स्त्री शिक्षा सम्बन्धी पुस्तकें विशेष रूप से इकट्ठी की जारही हैं । प्रसिद्ध २ पुस्तकों की नामावली नीचे दी जाती है । ५) रुपये की तथा अधिक पुस्तकों के खरीदने वालों को उचित कमीशन दिया जाता है ।

प्रबन्धकर्ता नवजीवन

सं०	नाम पुस्तक	ग्रन्थ कर्त्ता	मू०
१	धर्म शिक्षा प्रथम भाग	पं० केशवदेव शास्त्री	।)
२	द्वितीय ,,	,,	।=)
३	वैदिक विवाहादर्श	श्री० आत्मारामजी	१)
४	नारायणी शिक्षा	मु० चिम्मनलाल वैश्य	१।)
५	सीता चरित्र प्रथम भाग	मुं० दयाराम साहब	।=)
६	,, द्वितीय भाग	,,	।=)
७	,, तृतीय भाग	,,	।=)
८	,, चतुर्थ भाग	,,	।=)
९	,, पंचम भाग	,,	।=)
	स्त्री सुबोधिनी प्रथम भाग	मन्नुलाल गुप्त	।)
	,, द्वि० ,,	,,	।)
	,, तृ० ,,	,,	।)
३	,, च० ,,	,,	।)
४	,, पं० ,,	,,	।)
५	बाला बोधिनी प्रथम भाग	मन्नूलाल गुप्त	-)
६	,, द्वि० ,,	,,	=)॥
७	,, तृ० ,,	,,	।)॥
८	,, च० ,,	,,	।=)
९	,, पं० ,,	,,	।)
	वैधव्य विध्वंसन चंपू	कविरत्न श्रीमदखिलानन्दजी	॥)
१	उपदेश मञ्जरी हिन्दी		॥)
२	बुन्देलखन्ड केशरी दो भाग	कुँवर कन्हैयाजू	॥।)
३	गृहस्थ-चरित्र	कुंवर हनुमंतासिंह	।)
४	गर्भ रक्षा विधान	श्री यशोदा देवी जी	॥)
५	भारतवर्ष की सच्ची देवियां	पं. ललिता प्रसाद शर्म्मा	।=)
६	छत्रपति शिवाजीका जीवन चरित्र	श्री ज्वालादत्त शर्म्मा	॥)
७	भुवन कुमरी	श्री विश्वम्भर दयाल गुप्त	।)
८	बाल विवाह कैसे चला	श्रीयुत केशवदेव शास्त्री	-)॥
९	लक्ष्मी	पं. ओंकारनाथ बाजपेयी	।)

सं०	नाम पुस्तक	ग्रन्थ कर्त्ता	मूल्य
३०	शान्ता	,,	॥)
३१	यमुना बाई	स्वा. अनुभवानन्द	=)
३२	ऋतु चर्य्या	श्रीकेशवदेवशास्त्री	१)
३३	भारत महिलामंडल प्रथम वा द्वितीय भाग	कुंवर हनुमंतसिंह	।=)
		,,	।=)
३४	गृहिणी कर्त्तव्य दीपिका	ठाकुरपूर्णसिंह वर्म्मा	।=)
३५	महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का जीवन चरित्र	श्री रामबिलास शारदा	१॥)
३६	आर्य्योंका आत्मोत्सर्ग२ भाग	हरिदास माणिक	
३७	स्त्री हितोपदेश	श्री द्वारका प्रसाद अत्तार	।=)
३८	कन्या पत्र दर्पण	पं. ओंकारनाथ बाजपेयी	-)
३९	मेवाड का उद्धार कर्त्ता	हरिदास माणिक	=)
४०	वीर्य्य रक्षा	चिम्मनलाल वैश्य	=)
४१	हनुमान चालीसा	बाबू हनुमान प्रसाद जी	=)
४२	अभिमन्यु चरित्र	कुं० हनुमन्त सिंह	≡)
४३	मन आनन्द भजनावली	श्री द्वारिका प्रसाद अत्तार	=)
४४	संगीतरत्न संग्रह प्र० खं०	सूर्यपाल शर्मा	=)
४५	मादक वस्तु निषेध	पं० देवदित्त द्विवेदी	।-)
४६	,, द्रव्य खंडन	पं० देवीदत शर्मा	=)
४७	कपटी मित्र	मुं० लज्जा राम शर्मा	≡)
४८	हल्दीघाटी की लड़ाई	हरिदास माणिक	=)
४९	काव्य कुसुमोद्यान	कर्ण कवि	॥)
५०	वालाख्यो पन्यास	पं. रामजी लाल शर्मा	॥)
५१	रमणी पंचरत्न	गोपाल प्रसाद शर्मा	।)
५२	प्रेम धारा	चिम्मन लाल वैश्य	॥=)
५३	वेद शास्त्र तालिका	हनुमान प्रसाद शर्मा	।≡)
५४	भारत की वीर और विदुषी		
५५	स्त्रियां प्रथम भाग द्वितीय भाग	ललिता प्रसाद शर्मा	।=) =)॥

सं०	नाम पुस्तक	ग्रन्थ कर्त्ता	मू०
५६	रानाप्रतापसिंह का वीरता	हरिदास माणिक	≡)
५७	राना सांगा और बाबर	,,	=)
५८	धर्मापली के वीर	विश्वनाथ शर्म्मा	|=)
५९	तेजसिंह शतक भजन	चौ० तेजसिंहजी	|-)||
६०	बालनीति शिक्षा १ला भाग	बा० रामजीदास वैश्य	|)
६१	छंदः सूत्रम्	पं० अखिलानन्द शर्म्मा	|||)
६२	स्त्री भजन भंडार चारों भाग		|=)
६३	भारत की प्राचीन झलक	हरिदास माणिक	||)
	दूसरा भाग	हरिदास मा०	||)
६४	सच्चा पति प्रेम	यशोदा देवी	|)
६५	महाभारत सार	कुं० हनुमंतसिंह	२)
६७	संगीतरत्न प्रकाश प्र० भाग	द्वारका प्रसाद	३)
६८	,, द्वि० भाग	,,	-)||
६९	,, तृ० भाग	,,	-)
७०	,, च० भाग	,,	=)
७१	,, पं० भाग	,,	≡)
७२	फौन्टेन हेड आफ रेलिजन	बा० गंगा प्रसाद	|||)
७३	बाल भारत	सूर्यकुँअर वर्मा	||)
७४	माता का पुत्री को उपदेश	कुं० हनुमंतसिंह	=)
७५	ईश्वरभक्ति विषयक व्या०	पं० गणपति शर्मा	=)

मिलने का पता—प्रकाशकर्त्ता ...जी

नवजीवन के नियम

(१) नवजीवन का वार्षिक मूल्य ३) रुपये मात्र है।

(२) प्रतिमास की २० तारीख़ को काशी से निकला करेगा

(३) नवजीवन में कोई अश्लील विज्ञापन न छपने पावेगा।

(४) विद्यार्थियों, छात्राओं, कन्या पाठशालाओं की अध्यापिकाओं और पुस्तकालयों से केवल २) रुपये वार्षिक मूल्य लिया जावेगा।

(५) प्रतिमास प्रकाश होने की तिथि के १० दिन के अन्दर अन्दर नवजीवन के न पहुंचने पर दूसरी कापी भेजी जावेगी, अन्यथा मूल्य देना पड़ेगा।

नवजीवन

गत वर्ष के नवजीवन की सजिल्द किताब तय्यार हो गई है। अनुमान ७५० पृष्ठ की पुस्तक भिन्न २ विषयों से अलङ्कृत है। मूल्य नवीन ग्राहकों के लिये केवल २) रु० मात्र। शीघ्र मंगवावें, क्योंकि थोड़ी सी कापियां तय्यार हुई हैं।

एक बार अवश्य पढ़िये।

बनारस का बना हुआ हर क़िस्म का माल जैसे रेशमी साड़ी ज़री की व[illegible]ी, पीताम्बर, चद्दर ज़नाना व मरदाना, डुपट्टा (सेल्हा) साफा सादे व ज़री के काम के।

काशीसिल्क के थान, मेरठ की व बनारसी पक्के काम की टोपियां, जर्मन सिलवर, पीतल, एल्मोनियम के बरतन नक्सी व सादे व जर्मन सिलवर, पीतल के हर क़िस्म के ज़ेवरात सुनहरे व रुपहले, सुरती की गोलियां, सूंघने व पीने का तम्बाखू, हर तरह के लकड़ी व हाथी दांत के खिलौने, टिकुली, बिन्दी, ईंगुर सेंदुर वगैरह हमारे यहां से किफायत भाव से भेजे जाते हैं।

हर चीज़ का भाव जानने के लिये)॥ का टिकट भेजकर हमारा बड़ा सूचीपत्र मंगाकर देखो।

पता—महादेवप्रसाद एण्ड एम० पी० आर्य्य,
जनरल मरचेन्ट एण्ड सप्लायर,
सराय हड़हा, बनारस सिटी।

५४
५५

[illegible] Pt. Baijnath Jijja Manager, at the Tara Printing Works, Benares.
[Pub]lished by Keshava Deva Shastri, Dasaswamedh, Benares City.